भट्टाचार्योपाह्व श्रीकृष्णानन्दागमवागीशप्रणीत:

बृहत्तन्त्रसार:

भाषाटीकाविभूषित:

भाषाटीकाकार:
कपिलदेवनारायण:
स्वरूपावस्थित:

चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन
वाराणसी

भट्टाचार्योपाह्वश्रीकृष्णानन्दागमवागीशप्रणीतः

बृहत्तन्त्रसारः

भाषाटीकाविभूषितः

(प्रथमो भागः * प्रथमद्वितीयपरिच्छेदात्मकः)

॥ श्रीः ॥

चौखम्बा सुरभारती ग्रन्थमाला

४३

भट्टाचार्योपाह्वश्रीकृष्णानन्दागमवागीशप्रणीतः

बृहत्तन्त्रसारः

भाषाटीकाविभूषितः

(प्रथमो भागः * प्रथमद्वितीयपरिच्छेदात्मकः)

भाषाटीकाकारः

स्वरूपावस्थित श्रीकपिलदेवनारायण

चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन

वाराणसी

प्रकाशक

चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन

(भारतीय संस्कृति एवं साहित्य के प्रकाशक तथा वितरक)
के. 37/117 गोपालमन्दिर लेन
पो. बा. नं. 1129, वाराणसी 221001
दूरभाष : (0542)2335263

प्रथम संस्करण 2007
मूल्य : 1500.00 (1-2 भाग सम्पूर्ण)

अन्य प्राप्तिस्थान

चौखम्बा पब्लिशिंग हाउस

4697/2, भू-तल (ग्राउण्ड फ्लोर)
गली नं. 21-ए, अंसारी रोड
दरियागंज, नई दिल्ली 110002
दूरभाष : (011)32996391 फैक्स: (011)23286537
ई-मेल : chaukhamba_neeraj@yahoo.com

चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान

38 यू.ए. बंगलो रोड, जवाहर नगर
पो. बा. नं. 2113
दिल्ली 110007
दूरभाष : (011)23856391

चौखम्बा विद्याभवन

चौक (बैंक ऑफ बड़ोदा भवन के पीछे)
पो. बा. नं. 1069, वाराणसी 221001
दूरभाष : (0542)2420404

मुद्रक

डीलक्स ऑफसेट प्रिंटर्स, दिल्ली-

भूमिका

श्रीकृष्णानन्द भट्टाचार्य 'आगमवागीश' द्वारा प्रणीत तन्त्रशास्त्र का महनीय ग्रन्थ 'वृहत् तन्त्रसार' तन्त्रवाङ्मय का सर्वमान्य प्रामाणिक ग्रन्थ है। 'वृहत् तन्त्र-सार' का सामान्य अर्थ 'तन्त्रों का विस्तृत सार' होता है। ग्रन्थकर्त्ता के उपाधिरूप से प्रयुक्त 'आगमवागीश' का शाब्दिक अर्थ 'आगमों का स्वामी' है। सारांश यह है कि सभी आगमों के ज्ञाता श्रीकृष्णानन्द भट्टाचार्य ने तन्त्रों के सार का विस्तृत संकलन कर उसे मूर्त्त स्वरूप प्रदान करते हुये ग्रन्थ का नाम 'वृहत् तन्त्रसार' रक्खा है। सर्वप्रथम यहाँ दो शब्द विचारणीय हैं—'तन्त्र' और 'आगम'।

संस्कृत साहित्य में 'तन्त्र' शब्द के अनेक अर्थ होते हैं; किन्तु यहाँ पर 'तन्यते विस्तार्यते ज्ञानं इति तन्त्रम्' यही अर्थ मान्य है। 'तन्त्र' शब्द 'तनु विस्तारे' धातु से 'ष्ट्रन्' प्रत्यय का योग होकर निष्पन्न होता है। 'तन्' धातु का अर्थ 'विस्तार करना' एवं 'त्र' का अर्थ 'रक्षा करना' होता है। आशय यह है कि 'तन्त्र' उस ज्ञान का विस्तार करता है, जो मनुष्यों का रक्षाकारक है। 'कामिकागम' में कहा गया है कि तन्त्रशास्त्र तत्त्व और मन्त्रसहित अपार विषयों का विस्तार करता है एवं जीवन की रक्षा करता है; इसीलिये इसे 'तन्त्र' अभिधान से अभिहित किया जाता है—

तनोति विपुलानर्थान् तत्त्वमन्त्रसमन्वितान्।
त्राणं च कुरुते यस्मात्तन्त्रमित्यभिधीयते।।

संस्कृत भाषा में 'तन्त्र' शब्द अतीव व्यापक अर्थ को अपने-आप में समाहित किये हुये है। 'वाचस्पति अभिधान' और 'शब्दकल्पद्रुम' में इसे व्याख्यायित करते हुये इस प्रकार कहा गया है—

कुटुम्बभरणादि कृत्य, सिद्धान्त, ओषधप्रधान वेदपरिच्छेद, वेदशाखाहेतु, उभयार्थक प्रयोग, इतिकर्तव्यता, तन्तुवाय, राष्ट्रपरछन्दानुगमन, स्वराष्ट्रचिन्ता, प्रबन्ध, शपथ, धन, गृह, वयन-साधन कुल शिवाद्युक्त शास्त्रव्यवहार व नियम।

शास्त्रमात्र को 'तन्त्र' कहते हैं—ऐसा 'मातृकाभेद' तन्त्र में कहा गया है। ज्योतिष के अंशविशेष को भी 'तन्त्र' शब्द से जाना जाता है। आचार्य वराहमिहिर ने कहा भी है—

स्मन्देऽस्मिन् गणितेन या ग्रहगतिस्तन्त्राभिधाना त्वसौ।

'सांख्यकारिका' के अनुसार सांख्य दर्शन को 'तन्त्र' कहते हैं। आचार्य शंकर तन्त्र-नामक स्मृतिग्रन्थ का उल्लेख करते हुये कहते हैं—

स्मृतिश्च तन्त्राख्या परमर्षिप्रणीता शिष्टपरिगृहीता।

'सुश्रुतसंहिता' में आयुर्वेदशास्त्र की तन्त्ररूप में चर्चा की गई है—'इत्यष्टाङ्गमिदं तन्त्र-

मादिदेवप्रकाशितं शिवादिप्रोक्तं तन्त्रम्'।

जिस तन्त्र में शक्ति की साधना इत्यादि का वर्णन होता है, वह शिवादि प्रोक्त है; उसे तन्त्रशास्त्र भी कहते हैं। जो सिद्ध ऋषिकथित हैं, उन्हें 'वाराहीतन्त्र' में अलग से उपतन्त्र कहा गया है—

सिद्धोक्तान्युपतन्त्राणि कपिलोक्तानि यानि च।
अद्भुतानि च एतानि जैमिन्युक्तानि यानि च।।
पुलस्त्यो भार्गवः सिद्धो याज्ञवल्क्यो भृगुस्तथा।
शुक्रो वृहस्पतिश्चैव अन्ये ये मुनिसत्तमाः।।
एभिर्प्रणीतान्यन्यानि उपतन्त्राणि यानि च।
विसंख्यातानि नान्यत्र धर्मविद्भिर्महात्मभिः।।
सारात्सारतराण्येव संख्यातानि निबोधत।।

तन्त्रशास्त्र साधनशास्त्र है। तन्त्रज्ञों का मानना है कि ऋषि साधनशास्त्र के रचयिता नहीं होते; अपितु वे तो मात्र स्मरण करने वाले होते हैं। तन्त्रतत्त्व में लिखा है कि जैसे राजदरबार के सदस्य राजनीति के रचयिता नहीं होते; बल्कि उसके ज्ञातामात्र होते हैं, वैसे ही तत्त्वदर्शी ऋषि भी किसी साधनशास्त्र के रचयिता नहीं होते; बल्कि मात्र उसके स्मारक होते हैं। ऐसी स्थिति में तन्त्र को उपतन्त्र कहना सर्वसम्मत नहीं कहा जा सकता। अगस्त्यसंहिता, सनत्कुमारसंहिता, गौतमीय तन्त्र आदि वैष्णवतन्त्रों के ऋषिप्रोक्त होने पर भी कौलमार्ग में इन्हें 'तन्त्र' आख्या प्रदान की गई है।

तन्त्रशास्त्र के तीन मुख्य विभाग हैं—आगम, यामल एवं तन्त्र। 'मातृकाभेद-तन्त्र' में कहा भी है—तन्त्रशास्त्रं तु प्रधानतस्त्रिधा विभक्तं, आगम-यामल-तन्त्रभेदतः।

आगम, निगम, यामल, तन्त्र, संहिता आदि को सामान्यतः समानार्थक माना जाता है, तथापि इनमें परस्पर अन्तर है।

इस प्रकार अब तक 'तन्त्र' शब्द पर सामान्य रूप से विचार किया गया। तन्त्र शब्द के सामान्य अर्थ को ज्ञात करने के पश्चात् 'आगम' शब्द से परिचित होना भी आवश्यक है; यतः वृहत् तन्त्रसार के संकलनकर्ता श्रीकृष्णानन्द भट्टाचार्य को 'आगमवागीश' की उपाधि से विभूषित किया गया है। आगमवागीश होकर ही इन्होंने तन्त्रों के सार का संग्रह किया है। इससे विदित होता है कि आगम का ज्ञाता तन्त्रशास्त्र का भी ज्ञाता होता है।

'विश्वसारतन्त्र' के अनुसार जिसमें सृष्टि-प्रलय, देवतार्चन, मन्त्रसाधन, पुरश्चरण, षट्कर्म और चतुर्विध ध्यानयोग—इन सात विषयों का वर्णन किया गया हो, उसे 'आगम' के नाम से जाना जाता है। कहा भी है—

सृष्टिश्च प्रलयश्चैव देवतानां यथार्चनम्। साधनञ्च सर्वेषां पुरश्चरणमेव च।।
षट्कर्मसाधनं चैव ध्यानयोगश्चतुर्विधः। सप्तभिर्लक्षणैर्युक्तमागमं तद् विदुर्बुधाः।।

'कुलार्णवतन्त्र' के अनुसार जिसमें आचार-वर्णन, दिव्य गति-प्राप्तिविधान और आगमतत्त्व का कथन किया गया हो, उसे आगम कहा जाता है। यथा—

आचारकथनाद् दिव्यगतिप्राप्तिविधानत:। महात्मतत्त्वं कथनादागम: कथित: प्रिये।।

'रुद्रयामल' के अनुसार शिव के मुख से निकल कर पार्वती के मुख में जाने वाले विष्णुमत को आगम कहते हैं अर्थात् आगतं, गतं और मतं—इन तीन शब्दों के प्रथमाक्षर—आ + ग + म—को मिलाकर 'आगम' शब्द निष्पन्न होता है—

आगतं शिववक्त्रेभ्यो गतं च गिरिजामुखे। मतं श्रीवासुदेवस्य तस्मादागम उच्यते।।

स्पष्ट है कि तन्त्र के तीन विभाग—तन्त्र, आगम और यामल हैं। वेदों के समान ही तन्त्रसाहित्य भी भूतकाल में बहुत ही विस्तृत कलेवर से सम्पन्न था। तन्त्रग्रन्थ में कहा भी गया है—

सप्तसप्तसहस्राणि संख्यातानि मनीषिभि:।

इसके अनुसार प्राचीन काल में चौदह सौ तन्त्रग्रन्थ प्रचलन में थे। स्पष्ट है कि किसी समय में तन्त्रों का विशाल साहित्य उपलब्ध था, जो शनै:-शनै: लुप्त होते-होते वर्तमान में अत्यन्त ही सीमित संख्या में दृगोचर होते हैं।

इन तन्त्रों को कई विभागों में विभाजित किया गया है। दर्शन के आधार पर इनके तीन विभाग—द्वैतविमर्श, अद्वैतविमर्श और द्वैताद्वैत हैं। देवताभेद से इनके प्रमुख छ: भेद हैं—१. वैष्णवतन्त्र, २. शैवतन्त्र, ३. शाक्ततन्त्र, ४. गाणपत्यतन्त्र, ५. बौद्धतन्त्र और ६. जैनतन्त्र। अवान्तर भेदोपभेदों के कारण इनमें भी कई शाखा-प्रशाखायें बनी हुई हैं।

व्यवहार में वैष्णवतन्त्र को 'संहिता', शैवतन्त्र को 'आगम' एवं शाक्ततन्त्र को 'तन्त्र' नाम से जाना जाता है। इसीलिये लोक में तन्त्र शब्द का सामान्य अर्थ 'शाक्त आगमों की साधना-पद्धति' माना जाता है। हमारा विवेच्य ग्रन्थ बृहत्तन्त्रसार है, जिसके संकलनकर्ता श्रीकृष्णानन्द आगमवागीश हैं। इसलिये हम शाक्त तन्त्र पर ही विचार करेंगे।

'सौन्दर्यलहरी' के टीकाकार लक्ष्मीधर ने त्रिपुरोपासना के तीन मतों की चर्चा की है, जिनमें पहला कौलमत, दूसरा मिश्रमत और तीसरा समयिमत है। नित्याषोडशिकार्णव में कौलमत के चौंसठ आगम उल्लिखित हैं, जिनमें महामाया शम्बर आदि पठित हैं।

मिश्रमतानुयायियों में आठ आगम प्रचलित हैं, जिनमें चन्द्रकला आदि आते हैं और समयिमतानुयायी शुभागमपञ्चक को अङ्गीकार करते हैं, जिनमें वसिष्ठ, सनक, शुक, सनन्दन और सनत्कुमार—इन पाँच मुनियों की संहितायें अङ्गीकृत हैं।

कतिपय ग्रन्थों को भूमण्डल के आधार पर भी वर्गीकृत किया गया है। इनमें पहला रथक्रान्त, दूसरा विष्णुक्रान्त और तीसरा अश्वक्रान्त है। शक्तिसंगमतन्त्र के अनुसार विन्ध्य पर्वत से चीन तक का क्षेत्र 'रथक्रान्त' कहा गया है।

विन्ध्य पर्वत से दक्षिण में कन्याकुमारी तक का विस्तृत भूभाग 'अश्वक्रान्त' के

अभिधान से अभिहित है एवं विष्णुक्रान्त का विस्तार करतोया-दिनाजपुर में यवद्वीप तक कहा गया है।

इन सभी में चौंसठ-चौंसठ तन्त्रों के हिसाब से कुल एक सौ बानवे तन्त्र कहे गये हैं, जिनमें से कुछ तो वर्त्तमान में उपलब्ध हैं; लेकिन अधिकांश कालविक्षेपानुसार लुप्त हो जाने के फलस्वरूप अनुपलब्ध ही हैं।

आगमतत्त्वविलास में अन्य चौंसठ तन्त्रों का भी उल्लेख मिलता है। इनके अतिरिक्त तन्त्र के और भी तिरासी नाम 'मत्स्यसूक्त, कुलसूक्त, डामर' आदि हैं। 'महासिद्धिसारस्वत' में महासिद्धीश्वर आदि तन्त्रों के नाम आते हैं।

उपर्युक्त के अतिरिक्त कुछ अन्य तन्त्र भी हैं; जैसे—आगमसार, आगमचन्द्रिका, जपरहस्य आदि। वाराही तन्त्र में जिन तन्त्रों का उल्लेख किया गया है, उनकी श्लोकसंख्या भी अंकित है। वेद, आरण्यक, उपनिषद्, ब्राह्मण में भी शक्तिसाहित्य उपलब्ध है।

पुराणों में देवीभागवत, मार्कण्डेय, कालिका, ब्रह्माण्ड, कूर्म पुराण में शक्तिसाहित्य की प्रचुरता है। श्रीशंकराचार्य के सौन्दर्यलहरी आदि, गौडपाद के सुभगोदय आदि, लक्ष्मणदेशिक के शारदातिलक आदि तन्त्रग्रन्थ ही हैं। श्रीकृष्णानन्द के बाद के भी बहुत से तन्त्रग्रन्थ है। श्रीकृष्णानन्द का पूर्ववर्ती जो विशाल तन्त्रसाहित्य है, उसमें से सभी का सारसंग्रह करना कथमपि सम्भव नहीं है; फिर भी बृहत् तन्त्रसार का सारसंग्रह सर्वतोभावेन सराहनीय एवं श्लाघनीय है।

प्रसङ्गवशात् बृहत् तन्त्रसार के विषयों पर एक विहंगम दृष्टिपात करना भी आवश्यक हैं। यह ग्रन्थ परिशिष्ट के अतिरिक्त कुल पाँच परिच्छेदों में विभक्त है। ग्रन्थ के विशाल आकार को देखते हुये प्रकृत संस्करण को दो भागों में विभाजित किया गया है, जिसमें से प्रथम भाग में प्रारम्भ से द्वितीय परिच्छेद तक को गुम्फित किया गया है एवं द्वितीय भाग में अवशिष्ट तृतीय परिच्छेद से प्रारम्भ कर परिशिष्ट तक के विषय गुम्फित हैं। यहाँ प्रथम भाग से सम्बद्ध विषयों का संक्षेप में विवेचन किया जा रहा है, जो इस प्रकार है—

प्रथम परिच्छेद—प्रथम परिच्छेद में मङ्गलाचरण के उपरान्त गुरु और शिष्य के लक्षणों के साथ-साथ उनके कर्तव्याकर्त्तव्य का भी वर्णन किया गया है। दीक्षा से सम्बन्धित आवश्यक विषय इसमें निबद्ध हैं। मन्त्र से सम्बन्धित विषय भी गुम्फित हैं। दीक्षास्थान और दीक्षाकाल का निर्णय भी इस प्रथम परिच्छेद में ही किया गया है। माला पर विचार किया गया है। आसन और पुरश्चरण के सम्बन्ध में विचार किया गया है। जप के बारे में भी विचार किया गया है। जपपूजन के लिये मण्डलनिर्माण के विषय भी इसमें निबद्ध हैं।

द्वितीय परिच्छेद—द्वितीय परिच्छेद में पूजापद्धति, सन्ध्या, स्नानविधि, बहुत से

देवताओं के गायत्री मन्त्र, विविध न्यास और मन्त्र उल्लिखित हैं। अनेक देवियों के मन्त्रों में भुवनेश्वरी, अन्नपूर्णा, त्रिपुरा, त्वरिता, नित्या, वज्रप्रस्तारिणी, दुर्गा, महिषमर्दिनी, जयदुर्गा, शूलिनी, वागीश्वरी, पारिजातसरस्वती आदि के मन्त्र प्रमुख हैं।

अनेक देवों के मन्त्रों में गणेश, महागणेश, हेरम्ब, हरिद्रागणेश आदि के मन्त्र गुम्फित हैं। देवियों में लक्ष्मी, महालक्ष्मी के मन्त्र हैं। देवों में सूर्य, विष्णु, राम, कृष्ण, बालगोपाल, वासुदेव, लक्ष्मीनारायण, दधिवामन, हयग्रीव, नृसिंह, हरिहर, वराह के मन्त्र उल्लिखित हैं। शिव, मृत्युञ्जय, क्षेत्रपाल, बटुकभैरव, भैरवी, त्रिपुरभैरवी, सम्पत्प्रदा भैरवी, कौलेशभैरवी, सकलसिद्धिदा भैरवी, भय-विध्वंसिनी भैरवी, चैतन्यभैरवी, कामेश्वरी भैरवी, षट्कूटा भैरवी, नित्या भैरवी, रुद्रभैरवी, भुवनेश्वरी भैरवी के मन्त्र हैं। त्रिपुरा बाला के कई मन्त्र एवं अन्नपूर्णा भैरवी के मन्त्र हैं। श्रीविद्या और इसके मन्त्रान्तर, परिभाषिकी, षोडशी, महाषोडशी, बीजावली षोडशी, श्रीविद्याविशेषपद्धति आदि के मन्त्र हैं। प्रचण्डचण्डिका के मन्त्र-मन्त्रान्तर, श्यामा के मन्त्र-मन्त्रान्तर एवं गुह्यकाली एवं भद्रकाली के मन्त्र भी इसमें समाहित हैं। तारामन्त्र, वीरसाधनविधि, चण्डोग्रशूलपाणिमन्त्र, मातंगी, उच्छिष्ट चाण्डालिनी, धूमावती, भद्रकाली, उच्छिष्ट गणेश, धनदा, श्मशानकाली और बगलामुखी के मन्त्र भी इस द्वितीय परिच्छेद में ही निबद्ध हैं।

ग्रन्थकार एवं उनका बृहत्तन्त्रसार

प्रस्तुत ग्रन्थ बृहत् तन्त्रसार के संकलन और सम्पादनकर्त्ता श्री कृष्णानन्द भट्टाचार्य आगमवागीश और साधकचूड़ामणि हैं। लगभग पाँच सौ वर्ष पहले इनका प्रादुर्भाव तन्त्र की साधना-भूमि बंगाल प्रान्त में हुआ था।

इस ग्रन्थ की रचना का हेतु बताते हुए इन्होंने ग्रन्थ के अन्त में कहा है कि हे माते! वेद और अन्यान्य शास्त्रों के विपरीत अर्थ के कारण आपके अर्चन का लोप होते देखकर शास्त्र के कठिन और गूढ़ अर्थ को मैंने स्पष्ट किया है। इसमें जो त्रुटियाँ हुई हों, उसके लिये क्षमा करें। हे माते! मैंने मोहग्रस्त बुद्धि से तन्त्र के गुप्त से गुप्त विषयों को भी प्रकट किया है। हे दयानिधे! इसमें जो अपराध हुआ है, उसे क्षमा करें; क्योंकि पापियों पर क्रोध करना उचित नहीं है।

इनका यह कथन है कि तन्त्र के गुप्त से गुप्त विषयों को इन्होंने प्रकट किया है, यह अंशतः ही ठीक कहा जा सकता है; क्योंकि उन सभी विषयों को इन्होंने कूट सांकेतिक भाषा में प्रकट किया है, जो कि प्रकट होते हुये भी अप्रकट के ही समान है। सम्भवतः मन्त्रों को दुरुपयोग से बचाने के लिये ही इन्होंने ऐसा किया है। यही प्रक्रिया अन्य सभी तन्त्रों में भी अंगीकृत है।

साधना-विज्ञान का महत्त्वपूर्ण विषय तन्त्र है। तन्त्रशास्त्रविद् जीवन की कठिन से कठिन समस्याओं का भी समाधान करने में सक्षम होते हैं। तन्त्रशास्त्र इतना विशाल है कि समस्याओं का समाधान ढूँढ़ने में कुशल तान्त्रिकों को भी कठिनाई होती है। ऐसी

परिस्थिति में श्री कृष्णानन्द भट्टाचार्य ने जनसाधारण और साधकों की सुविधा के लिये उपलब्ध तन्त्रग्रन्थों से उपयोगी विषयों का संग्रह किया। आगमवागीश द्वारा जिस अवधि में यह महनीय कार्य सम्पन्न किया गया होगा, उस समय न तो छपे हुए तन्त्रग्रन्थ रहे होंगे और न ही तन्त्रग्रन्थों का कोई समृद्ध पुस्तकालय ही रहा होगा। वारहीतन्त्र आदि ग्रन्थों में उल्लिखित अधिकांश तन्त्र या तो पूर्णत: या अंशत: आज भी लुप्त हैं। ऐसी परिस्थिति में उनका यह कार्य अतीव सराहनीय माना जाता है। बृहत् तन्त्रसार अपने नाम के अनुरूप ही सम्पूर्ण तन्त्रवाङ्मय का सर्वप्रामाणिक सार प्रस्तुत करता है।

इनके पहले काश्मीरी विद्वान् अभिनवगुप्त ने भी तन्त्रों के सार का संग्रह अपने 'तन्त्रसार' नामक ग्रन्थ में किया है। दाक्षिणात्य विद्वान् सुब्रह्मण्यम् के ग्रन्थ का नाम भी तन्त्रसार है। इनके अतिरिक्त सिद्धनाथ, मुकुन्दलाल, रामभद्र और रामानन्द तीर्थ के ग्रन्थ भी तन्त्रसार नाम से जाने जाते हैं; किन्तु श्री कृष्णानन्द आगमवागीशकृत प्रस्तुत 'बृहत् तन्त्रसार' ग्रन्थ स्वयं में अनुपम है।

श्री कृष्णानन्द भट्टाचार्य बंगाली थे, इसलिये उन्होंने बंगला भाषा में ही इस ग्रन्थ का प्रणयन किया है। सर्वप्रथम 'नवभारत पब्लिशर्स' कलकत्ता द्वारा इसका प्रकाशन बंगला लिपि में किया गया था। इस विशाल ग्रन्थ को विद्वानों ने इतना सम्मान दिया कि इसके सात अन्य संस्करण अबतक प्रकाशित हो चुके हैं। तन्त्रशास्त्र के अनेक परवर्ती ग्रन्थों में भी इसके उद्धरण उपलब्ध होते हैं। मन्त्रमहार्णव में इसके प्रचुर उद्धरण मिलते हैं।

इस ग्रन्थ में जितने देवी-देवताओं के साधना-विधानों का वर्णन है, उतने किसी दूसरे ग्रन्थ में एकत्र नहीं मिलते। इसमें षट्कर्म, वीरसाधन एवं शवसाधन पर भी विस्तृत विवेचन उपलब्ध है। इसमें अन्य विषयों के समान ही सिद्धिदायक बहुत से स्तोत्रों और कवचों को भी संकलित किया गया है।

प्रकृत संस्करण

देवभाषा संस्कृत और देवनागरी लिपि में इसका प्रथम प्रकाशन सम्भवत: सन् १९८५ में प्राच्य प्रकाशन, वाराणसी द्वारा किया गया; जो कि अतिशय महत्त्वपूर्ण होते हुये भी लिप्यन्तरीकरण-जन्य दोषों से मुक्त नहीं था। इस ग्रन्थ को राष्ट्रभाषा हिन्दी में अनुवादित कराकर मूलपाठ को भी यथासम्भव सम्पादित करते हुये वर्त्तमान स्वरूप में इसका प्रकाशन चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी के द्वारा किया जा रहा है; क्योंकि इससे मूल लेखक श्रीकृष्णानन्द आगमवागीश के उद्देश्य की पूर्ति राष्ट्रभाषा और राष्ट्र-बन्धुओं की सेवा एवं जगदम्बा की आराधना-अर्चना में वृद्धि से ही सम्भव हो सकेगी। इस महनीय ग्रन्थ को सर्वजन-सुलभ भाषा में अनूदित कराकर तन्त्र-पिपासुओं की पिपासा का शमन करने हेतु प्रकाशक श्री नवनीत दास जी गुप्त सर्वतोभावेन धन्यवादार्ह हैं।

वसन्तपञ्चमी, २०६३ **स्वरूपावस्थित श्री कपिलदेवनारायण**

विषयानुक्रमणी

प्रथमः परिच्छेदः

द्वितीयः परिच्छेदः

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
प्रचण्डचण्डिकामन्त्राः	५५७
प्रचण्डचण्डिकापूजाप्रयोगः	५५९
प्रचण्डचण्डिकापूजायन्त्रम्	५६४
छिन्नमस्तायाः मन्त्रान्तरम्	५७०
छिन्नमस्तायाः मन्त्रान्तरम्	५७२
छिन्नमस्तायाः मन्त्रान्तरम्	५७४
श्यामाप्रकरणम्	५७६
श्यामामन्त्राः	५७६
श्यामापूजापद्धतिः	५७७
श्यामायाः मन्त्रभेदाः	५९५
श्यामायाः मन्त्रान्तरम्	५९६
गुह्यकाली	६०४
भद्रकालीमन्त्राः	६०६
तारामन्त्राः	६०९
तारापूजाप्रयोगः	६१४

विषयाः	पृष्ठाङ्काः
ताराबलिदानविधिः	६४३
तारामन्त्रजपविधिः	६४३
तारामन्त्रभेदाः	६४६
तारायाः मन्त्रान्तरम्	६४८
वीरसाधनम्	६५२
शवसाधनम्	६६०
चण्डोग्रशूलपाणिमन्त्राः	६७०
मातङ्गीमन्त्रः	६७३
उच्छिष्टचाण्डालिनी-मन्त्राः	६७५
धूमावतीमन्त्राः	६७९
भद्रकालीमन्त्रः	६८३
उच्छिष्टगणेशमन्त्रः	६८४
धनदामन्त्रः	६८८
श्मशानकालीमन्त्रः	६९३
बगलामुखीमन्त्रः	६९६
बगलामुखीपूजनयन्त्रम्	६९९

यन्त्रानुक्रमणी

श्रीकृष्णानन्दवागीशभट्टाचार्यप्रणीतः

बृहत्तन्त्रसारः

(प्रथम-द्वितीयपरिच्छेदात्मको प्रथमो भागः)
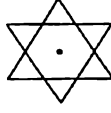
पाठकों के लिये सर्वतोभावेन ध्यातव्य है कि सुयोग्य गुरु की अनुज्ञा एवं निर्देश प्राप्त किये विना मात्र स्वविवेक से ग्रन्थ का अध्ययन कर किसी भी मन्त्र का प्रयोगात्मक अनुष्ठान न करें। स्वयम्भू प्रयोगों से होने वाले किसी भी दुष्परिणाम का उत्तरदायित्व स्वयं अनुष्ठाता का ही होगा, इसके लिये लेखक अथवा प्रकाशक किसी भी प्रकार से उत्तरदायी नहीं होगा।
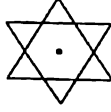
॥ श्रीः ॥

श्रीकृष्णानन्दवागीशभट्टाचार्यप्रणीतः

बृहत्तन्त्रसारः

भाषाटीकासमन्वितः

प्रथमः परिच्छेदः

मङ्गलाचरणं ग्रन्थसूचना च

नत्वा कृष्णपदद्वन्द्वं ब्रह्मादिसुरवन्दितम् ।
गुरुञ्च ज्ञानदातारं कृष्णानन्देन धीमता ॥
तत्तद्ग्रन्थगताद्वाक्यान्नानार्थं प्रतिपद्य च ॥
सौकर्यार्थञ्च संक्षेपात्तन्त्रसारः प्रतन्यते ।
उच्यते प्रथमं तन्त्र लक्षणं गुरुशिष्ययोः ॥

मंगलाचरण और ग्रन्थ-सूचना—ब्रह्मादि देवताओं के द्वारा वन्दित श्रीकृष्ण के चरणयुगल में नमस्कार करके ज्ञानदाता श्रीगुरु को प्रणामपूर्वक बुद्धिमान मैं कृष्णानन्द नाना तन्त्रग्रन्थों में प्रतिपादित वाक्यों के अर्थ-वैविध्य को सुगम करने के उद्देश्य से संक्षेप में तन्त्रसार ग्रन्थ की रचना करता हूँ। इसके प्रथम तन्त्र में गुरु-शिष्य के लक्षणों का वर्णन करता हूँ।

गुरुलक्षणम्

शान्तो दान्तः कुलीनश्च विनीतः शुद्धवेशवान् ।
शुद्धाचारः सुप्रतिष्ठः शुचिर्दक्षः सुबुद्धिमान् ।
आश्रमी ध्याननिष्ठश्च तन्त्रमन्त्रविशारदः ॥
निग्रहानुग्रहे शक्तो गुरुरित्यभिधीयते ॥

आगमसंहितायाम्—

उद्धर्त्तुञ्चैव संहर्त्तु समर्थो ब्राह्मणोत्तमः ।
तपस्वी सत्यवादी च गृहस्थो गुरुरुच्यते ।।

गुरु के लक्षण—गुरु को शान्त, दान्त, कुलीन, विनीत, शुद्ध वेष-सम्पन्न, विशुद्धाचार, सुप्रतिष्ठ, पवित्र स्वभाव, कार्य-दक्ष, खूब बुद्धिमान, आश्रमी, ध्याननिष्ठ, तन्त्रमन्त्र-विशारद, निग्रहानुग्रह में समर्थ होना चाहिये। इन गुणों से सम्पन्न व्यक्ति ही गुरुरूप में मान्य है। आगम-संहिता के अनुसार मन्त्र-दानादि द्वारा उद्धार और शापादि द्वारा विनाश करने में समर्थ, तपस्वी, सत्यवादी और गृहस्थ ब्राह्मण को ही गुरु बनाना चाहिये।

गुरुमाहात्म्यम

ज्ञानार्णवे—

गुरौ मानुषबुद्धिन्तु मन्त्रे चाक्षरबुद्धिकम् ।
प्रतिमासु शिलाबुद्धिं कुर्वाणो नरकं व्रजेत् ।।
जन्महेतू हि पितरौ पूजनीयौ प्रयत्नतः ।
गुरुर्विशेषतः पूज्यो धर्माधर्मप्रदर्शकः ।।
गुरुः पिता गुरुर्माता गुरुर्देवो गुरुर्गतिः ।
शिवे रुष्टे गुरुस्त्राता गुरौ रुष्टे न कश्चन ।।
गुरोर्हितं प्रकर्त्तव्यं वाङ्मनःकायकर्मभिः ।
अहिताचरणाद्देवि विष्ठायां जायते कृमिः ।।
शरीरदः पिता देवि ज्ञानदो गुरुरेव च ।
गुरोर्गुरुतरो नास्ति संसारे दुःखसागरे ।।
यस्य वक्त्राद्विनिर्यातं पूर्णब्रह्ममयं वपुः ।
तारयेन्नात्र सन्देहो नरकार्णवतो ध्रुवम् ।।
मन्त्रत्यागाद्भवेन् मृत्युर्गुरुत्यागाद्दरिद्रता ।
गुरुमन्त्रपरित्यागाद्रौरवं नरकं व्रजेत् ।।
गुरौ सन्निहिते यस्तु पूजयेदन्यदेवताः ।
स याति नरकं घोरं सा पूजा विफला भवेत् ।।

गुरु-माहात्म्य—ज्ञानार्णव के अनुसार गुरु को मनुष्य, मन्त्र को अक्षर और प्रतिमा को शिला समझने वाला नरकगामी होता है। जन्मदाता होने से माता-पिता पूज्य हैं, यह सत्य है; किन्तु धर्माधर्म दिखाने वाला गुरु उनसे भी अधिक पूज्य है। गुरु ही पिता-माता-देवता और एकमात्र शरण हैं। शिव के रुष्ट होने पर गुरु बचा सकता है; परन्तु गुरु के रुष्ट होने पर कोई नहीं बचा सकता। शरीर, मन, वचन और कर्म से गुरु का हित करना

चाहिये। उनका अनिष्ट करने से विष्टा का कीड़ा होना पड़ता है। पिता शरीरदाता है, किन्तु गुरु ज्ञानदाता है। दुःखमय संसार-सागर में गुरु से श्रेष्ठ कोई नहीं है। गुरुमुख से निकला हुआ शब्दमय पूर्ण ब्रह्म निश्चय ही नरक से बचाता है। मन्त्र-त्याग से मृत्यु, गुरु-त्याग से दरिद्रता और गुरु तथा मन्त्र दोनों के त्याग से नरकगामी होना पड़ता है। गुरु के सन्निहित रहने पर जो अन्य देवता का पूजन करता है, उसे घोर नरक में जाना पड़ता है और उसकी पूजा निष्फल होती है।

श्रीक्रमे—

उत्पादकब्रह्मदात्रोर्गरीयान्ब्रह्मदः पिता।
तस्मान्मन्येत सततं पितुरप्यधिकं गुरुम् ॥
गुरुवद् गुरुपुत्रेषु गुरुवत्तत्सुतादिषु।
गुरुवत्पूजनं कार्यं तोषणं वाक्यपालनम्।
गुरुवद्भजनं कार्यं सर्वदा गुरुसन्ततौ ॥

श्रीक्रम के अनुसार ब्रह्ममन्त्र-दाता गुरु शरीरदाता पिता से श्रेष्ठ है। इसलिये निरन्तर पिता से अधिक गुरु सम्मान के योग्य है। गुरु के पुत्र और पौत्रों के प्रति भी गुरुवत् पूज्यभाव रखना चाहिये। इनका पूजन भी गुरु के समान करना चाहिये। उन्हें सन्तुष्ट करना चाहिये और उनके वचनों का पालन करना चाहिये। गुरु की सन्तानों का भजन सदैव करना चाहिये।

निगमकल्पद्रुमे—

अविद्यो वा सविद्यो वा गुरुरेव च दैवतम्।
अमार्गस्थोऽपि मार्गस्थो गुरुरेव सदागतिः ॥
आयान्तमग्रतो गच्छेद्गच्छन्तं तमनुव्रजेत्।
आसने शयने वाऽपि न तिष्ठेदग्रतो गुरोः।
अनुज्ञां प्राप्य तिष्ठेत्तु नैवं शापमवाप्नुयात् ॥

निगमकल्पद्रुम के अनुसार विद्यावान अथवा विद्याविहीन गुरु देवता के समान होता है। अमार्गी या समार्गी दोनों प्रकार के गुरु ही सदैव सद्गति-प्रदायक होते हैं। गुरु को आता देखकर आगे जाकर स्वागत करना चाहिये। जाता देख उनके पीछे-पीछे चले; किन्तु उन्हें बैठा या सोया देखकर उनके सामने न बैठे। गुरु की अनुमति प्राप्त होने पर ही बैठना चाहिये; अन्यथा शाप प्राप्त होता है।

तथा क्रियासारे—

गुरुर्माता पिता स्वामी बान्धवः सुहृदः शिवः।
इत्याधाय मनो नित्यं भजेत् सर्वात्मना गुरुम् ॥

क्रियासार के अनुसार गुरु ही माता-पिता, स्वामी, बान्धव, सुहृद् और शिव हैं—ऐसा विचार रखकर मन में नित्य गुरु का भजन सर्वात्मभाव से करना चाहिये।

निन्द्यगुरुलक्षणम्

क्रियासारसमुच्चये—

श्वित्री चैव गलत्कुष्ठी नेत्ररोगी च वामनः ।
कुनखी श्यावदन्तश्च स्त्रीजितश्चाधिकाङ्गकः ॥
हीनाङ्गः कपटी रोगी बह्वाशी बहुजल्पकः ।
एतैर्दोषैर्विहीनो यः स गुरुः शिष्यसम्मतः ॥

निन्द्य गुरु-लक्षण—क्रियासारसमुच्चय के अनुसार श्वेत कुष्ठी, गलित कुष्ठी, नेत्ररोगी, वामन, खराब नख वाले, काले दाँतों वाले, स्त्रीजित, अधिकांगी; जैसे—छः अंगुली वाले, हीनांग; जैसे—कम अंगुली वाले, कपटी, रोगी, पेटू, बहुत बोलने वाले को गुरु नहीं बनाना चाहिये। इन दोषों से विनिर्मुक्त व्यक्ति को ही शिष्य गुरु बनावे।

यामले—

अभिशप्तमपुत्रश्च कदर्यं कितवं तथा ।
क्रियाहीनं शठञ्चापि वामनं गुरुनिन्दकम् ॥
जलरक्तविकारश्च वर्जयेन्मतिमान् सदा ।
सदा मत्सरसंयुक्तं गुरुं तन्त्रेण वर्जयेत् ॥

यामल के अनुसार अभिशप्त, अपुत्री, कृपण, धूर्त्त, क्रियाहीन, शठ, वामन, गुरुनिन्दक, जल-रक्तविकारयुक्त व्यक्ति को बुद्धिमान गुरु न बनावे। ईष्यालु व्यक्ति को भी तन्त्रमार्ग में गुरु नहीं बनाना चाहिये।

वैशम्पायनसंहितायाम्—

अपुत्रो मृतपुत्रश्च कुष्ठी च वामनस्तथा ।
इत्याद्यपि बोध्यमिति ।

वैशम्पायनसंहिता के अनुसार पुत्रहीन या जिसके पुत्र मर गये हों, कोढ़ी, वामन, इत्यादि को भी गुरु नहीं बनाना चाहिये।

शिष्यलक्षणम्

शान्तो विनीतः शुद्धात्मा श्रद्धावान् धारणक्षमः ।
समर्थश्च कुलीनश्च प्राज्ञः सच्चरितो यतिः ॥
एवमादिगुणैर्युक्तः शिष्यो भवति नान्यथा ।

अन्यच्च—

पुण्यवान् धार्मिकः शुद्धो गुरुभक्तो जितेन्द्रियः ।

शिष्यः योग्यो भवेत् सो हि दानध्यानपरायणः ॥

शिष्य-लक्षण—शान्त, विनीत, शुद्धात्मा, श्रद्धालु, मेधावी, कार्यदक्ष, कुलीन, प्रज्ञावान, सच्चरित्र, यति आदि गुणों से जो युक्त हो, उसे ही शिष्य बनाना चाहिये; अन्यथा शिष्य न बनावे। इसके अतिरिक्त पुण्यवान, धार्मिक, शुद्ध, गुरुभक्त, जितेन्द्रिय, दान-ध्यान-परायण मनुष्य ही शिष्य बनाने के योग्य होता है।

निषिद्धशिष्यलक्षणम्

पापिने क्रूरचेष्टाय शठाय कृपणाय च।
दीनायाचारशून्याय यन्त्रद्वेषपराय च॥
निन्दकाय च मूर्खाय तीर्थद्वेषपराय च।
गुरुभक्तिविहीनाय न देया मलिनाय च॥

निषिद्ध शिष्य-लक्षण—पापी, क्रूरकर्मा, शठ, कंजूस, दीन, आचारशून्य, यन्त्रद्वेषी, निन्दक, मूर्ख, तीर्थद्वेषी, गुरुभक्ति-विहीन और गन्दे वेष-भूषा वाले को मन्त्रोपदेश नहीं देना चाहिये।

आगमसारे—

अलसाः मलिनाः क्लिन्नाः दाम्भिकाः कृपणास्तथा।
दरिद्रा रोगिणो रुष्टा रागिणो भोगलालसाः॥
असूयमत्सरग्रस्ताः सदा परुषवादिनः।
अन्यायोपार्जितधनाः परदाररताश्च ये॥
विदुषां वैरिणश्चैव त्याज्याः पण्डितमानिनः।
भ्रष्टाचाराश्च ये कष्टवृत्तयः पिशुनाः खलाः॥
बह्वाशिनः क्रूरचेष्टाः दुरात्मानश्च निन्दिताः।
इत्येवमादयोऽन्येऽपि पापिष्ठाः पुरुषाधमाः।
एवम्भूताः परित्याज्याः शिष्यत्वेनोपकल्पिताः॥

आगमसार के अनुसार जो आलसी, मलिन, क्लिन्न, दम्भी, कृपण, दरिद्र, रोगी, रूठा हुआ, अनुरागी, भोग-लालसी, दूसरों में दोषद्रष्टा, ईर्ष्यालु, सदैव कटुभाषी, अन्याय से उपार्जित धन वाला, परदाररत, विद्वानों का वैरी हो, साथ ही मान्य पण्डित का त्याग कर देना चाहिये अर्थात् शिष्य नहीं बनाना चाहिये।

जो आचारहीन हो, कष्ट से धनोपार्जन करता हो, चुगलखोर हो, नीच हो, बहुत खाने वाला हो, क्रूर चेष्टा वाला हो, दुरात्मा, निन्दित हो, पापी पुरुषाधम हो, उसका भी त्याग कर देना चाहिये अर्थात् उसे शिष्य नहीं बनाना चाहिये।

अथ गुरुताशिष्यताविधिः गुरुसन्निधौ कर्त्तव्याकर्त्तव्यनिरूपणञ्च—

गुरुता शिष्यता वापि तयोर्वत्सरवासतः ।

गुरु-शिष्यसम्बन्ध कर्त्तव्याकर्तव्य निरूपण—गुरु और शिष्य एक वर्ष तक साथ रहे, फिर परीक्षा करके गुरु या शिष्य बनावें।

तथा चोक्तं सारसंग्रहे—

सद्गुरुः स्वाश्रितं शिष्यं वर्षमेकं परीक्षयेत् ।

स्वप्ने तु न कालनियमः;'स्वप्ने तु नियमो न ही'ति नारदवचनात् । तत्रैव—

राज्ञि चामात्यजो दोषः पत्नीपापं स्वभर्त्तरि ।
तथा शिष्यार्जितं पापं गुरुः प्राप्नोति निश्चितम् ॥
वर्षैकेण भवेद्योग्यो विप्रो गुणसमन्वितः ।
वर्षद्वयेन राजन्यो वैश्यस्तु वत्सरैस्त्रिभिः ।
चतुर्भिर्वत्सरैः शूद्रः कथिता शिष्ययोग्यता ॥

सारसंग्रह के अनुसार गुरु शिष्य को अपने आश्रय में एक वर्ष तक रखकर उसकी परीक्षा करे। स्वप्न में प्राप्त मन्त्र के लिये कोई कालनियम नहीं है। नारद मुनि के वचन हैं कि स्वप्न में प्राप्त मन्त्र के लिये कोई नियम नहीं है। जैसे मन्त्रीकृत दोष राजा को और पत्नीकृत पाप पति को लगता है, वैसे ही शिष्य के द्वारा अर्जित पाप निश्चय ही गुरु को लगता है।

ब्राह्मण एक वर्ष, क्षत्रिय दो वर्ष, वैश्य तीन वर्ष और शूद्र चार वर्ष तक गुरु के साथ रहे तब उसमें शिष्य की योग्यता आती है।

ताराप्रदीपे—

आगमोक्तविधानेन कलौ देवान् यजेत्सुधीः ।
न हि देवाः प्रसीदन्ति कलौ चान्यविधानतः ॥

तथा—

कृते श्रुत्युक्तमार्गः स्यात्त्रेतायां स्मृतिसम्भवः ।
द्वापरे तु पुराणोक्तः कलावागमसम्मतः ॥
अशुद्धाः शूद्रकर्माणो ब्राह्मणाः कलिसम्भवाः ।
तेषामागममार्गेण सिद्धिर्न श्रौतवर्त्मना ॥
मन्त्राणां देवता ज्ञेया देवता गुरुरूपिणी ।
तेषां भिदा न कर्त्तव्या यदीच्छेच्छुभमात्मनः ॥

ताराप्रदीप के अनुसार कलियुग में आगमोक्त विधान से विद्वान् देवता का अर्चन करे।

कलियुग में दूसरे विधान से देवता प्रसन्न नहीं होते। सतयुग में वैदिक मार्ग से, त्रेतायुग में स्मार्तविधान से, द्वापर में पुराणों में वर्णित मार्ग से और कलियुग में आगमोक्त मार्ग से साधना सफल होती है। कलियुग में ब्राह्मण शूद्र कर्मों से अशुद्ध रहते हैं; इसलिये आगमोक्त मार्ग से ही उन्हें सिद्धि मिलती है, वैदिक मार्ग से सिद्धि नहीं मिलती। मन्त्राक्षरों को देवतास्वरूप माने। देवता को गुरुरूप में देखे। अतः मन्त्र, देवता और गुरु—इन तीनों में भेद नहीं करना चाहिये। भेद करने से शुभता प्राप्त नहीं होती है।

देव्यागमे शिववाक्यम्—

गुरुशय्यासनं यानं पादुकोपानत्पीठकम्।
स्नानोदकं तथा च्छायां लङ्घनं नैव कारयेत्॥
गुरोरग्रे पृथक् पूजामौद्धत्यञ्च विवर्जयेत्।
दीक्षाव्याख्यां प्रभुत्वञ्च गुरोरग्रे परित्यजेत्॥

देव्यागम में शिवजी के वचन हैं कि गुरु की शय्या, आसन, वाहन, पादुका, उपानह, पादपीठ, स्नानजल और छाया को न लाँघे। गुरु के सामने अन्य की पूजा, औद्धत्य, दीक्षाशास्त्र की व्याख्या और प्रभुत्व का प्रदर्शन न करे।

रुद्रयामले—

ऋणदानं तथाऽऽदानं वस्तूनां क्रयविक्रयम्।
न कुर्याद्गुरुणा सार्द्धं शिष्यो भूत्वा कदाचन॥

रुद्रयामल में लिखा है कि शिष्य को गुरु से ऋण का आदान-प्रदान या क्रय-विक्रय नहीं करना चाहिये।

गुरुशब्दार्थः

तन्त्रार्णवे—

गकारः सिद्धिदः प्रोक्तो रेफः पापस्य दाहकः।
उकारः शम्भुरित्युक्तस्त्रितयात्माः गुरुः परः॥
गकाराज्ज्ञानसम्पत्ति रेफः पापस्य दाहकः।
उकाराच्छिवतादात्म्यं दद्यादिति गुरुः स्मृतः॥
गुशब्दस्त्वन्धकारः स्याद्रुशब्दस्तन्निरोधकः।
अन्धकारनिरोधित्वाद् गुरुरित्यभिधीयते॥

गुरु शब्द का अर्थ—तन्त्रार्णव के अनुसार 'ग' सिद्धिदाता, रेफ पापदाहक एवं 'उ' स्वयं शिव है। यह त्रितयात्मक गुरु सर्वश्रेष्ठ है। अथवा 'ग' ज्ञान और सम्पत्तिप्रद, रेफ पापदाहक और 'उ' शिवस्वरूपत्वप्रद है। अथवा 'गु' माने अन्धकार एवं 'रु' माने उसे दूर करने वाला अर्थात् गुरु माने अन्धकार को दूर करने वाला।

आश्रमादिभेदेन गुरुनिर्णय: दूरत्वादूरत्वभेदेन गुरुं प्रति कर्तव्यञ्च

कुलचूडामणौ—

उदासीनो ह्युदासीनां वनस्थो वनवासिनः ।
यतीनाञ्च यतिः प्रोक्तो गृहस्थानां गुरुर्गृही ।।
वैष्णवे वैष्णवो ग्राह्यः शैवे शैवस्तथा पुनः ।
शक्तिके त्रितयं विद्याद्दीक्षास्वामी न संशयः ।।

गुरुरपि गृहस्थ एव कुलार्णवे—

सर्वशास्त्रार्थवेत्ता च गृहस्थो गुरुरुच्यते ।।

तथा च कल्पे—

कलत्रपुत्रवान् विप्रो दयालुः सर्वसम्मतः ।
दैवे पित्रेऽरिमित्रे च गृहस्थो देशिको भवेत् ।।

कुलचूडामणौ—

पिता माता तथा भ्राता पितृव्यो मातुलस्तथा ।
येनोपदिष्टस्तन्त्रेऽस्मिन् तं गुरुं समुपासयेत् ।।
न च बालो न वृद्धश्च न खञ्जो न कृशस्तथा ।

इति हयशीर्षात् ।

आश्रमादिभेद से गुरुनिर्णय एवं गुरु के प्रति शिष्य का कर्तव्य—कुलचूड़ामणि के अनुसार उदासीन का उदासीन, वनवासी का वनवासी, यति का यति और गृहस्थ का गृहस्थ ही गुरु होना चाहिये। वैष्णव का वैष्णव, शैव का शैव ही गुरु होना चाहिये। किन्तु शक्तिदीक्षा में शाक्त, वैष्णव और शैव तीनों दीक्षाकर्ता हो सकते हैं, इसमें कोई संशय नहीं है।

कल्प के अनुसार पत्नी-पुत्र से युक्त दयालु विप्र; जो देवता, पितर, शत्रु-मित्र मे समभाव रखता हो और जो गृहस्थ हो, वही देशिक अर्थात् गुरु होने के योग्य है। कुलचूड़ामणि के अनुसार जो विप्र अपने पिता-माता-भ्राता-चाचा-मामा से उपदिष्ट हो, उसी को गुरु बनाना चाहिये।

हयशीर्ष के अनुसार न बालक, न वृद्ध, न गंजा और न जो दुबला हो, उसी को गुरु बनाना चाहिये।

तथा च नित्यानन्दे—

गुरुं न मर्त्यं बुध्येत यदि बुध्येत तस्य तु ।
न कदाचिद्भवेत् सिद्धिर्न मन्त्रैर्दैवपूजनैः ।।

तथा—

एकाग्रमस्थितः शिष्यस्त्रिसन्ध्यं प्रणमेद्‌गुरुम्।
क्रोशमात्रस्थितो भूत्वा गुरुं प्रतिदिनं नमेत्॥
अर्धयोजनतः शिष्यः प्रणमेत् पञ्चपर्वसु।
एकयोजनमारभ्य योजनद्वादशावधि॥
दूरदेशस्थितः शिष्यो भक्त्या तत्सन्निधिं गतः।
तत्र योजनसंख्योक्तमासेन प्रणमेद् गुरुम्॥
यदि दूरे च चार्वङ्गि! स्वगुरोर्नगरं भवेत्।
वर्षे वर्षे च कर्त्तव्यं गुरोश्चरणवन्दनम्॥

एतच्च एकधा दक्षिणायने एकधा उत्तरायणे कर्त्तव्यम्।

शिष्य-कर्तव्य—नित्यानन्द के अनुसार गुरु को मर्त्य न समझे। यदि उसे मर्त्य समझता है तो उस शिष्य को सिद्धि कभी नही मिलती। उसका मन्त्रदेवतापूजन निष्फल होता है।

एकाग्र मन से शिष्य गुरु को तीनों सन्ध्याओं (प्रातः, मध्याह्न, दोपहर) में प्रणाम करे। गुरु से एक कोश की दूरी पर स्थित शिष्य प्रतिदिन गुरु को प्रणाम करे। आधा योजन अर्थात् दो कोश की दूरी पर स्थित शिष्य पाँचों पर्वों में अर्थात् अष्टमी, चतुर्दशी, अमावस्या, पूर्णिमा और संक्रान्ति में गुरु को प्रणाम करे। एक योजन से बारह योजन के भीतर हो तो योजनसंख्यक महीनों के बाद गुरु के निकट जाकर शिष्य प्रणाम करे। यदि इससे भी अधिक दूर गुरु का निवास हो तो वर्ष में दो बार—एक बार उत्तरायण में और एक बार दक्षिणायन में जाकर गुरुदेव को प्रणाम करना चाहिये।

पित्रादितो दीक्षानिषेधः

योगिनीतन्त्रे—

पितुर्मन्त्रं न गृह्णीयात्तथा मातामहस्य च।
सोदरस्य कनिष्ठस्य वैरिपक्षाश्रितस्य वा॥

पिता आदि से दीक्षा का निषेध—योगिनीतन्त्र के अनुसार पिता से, नाना से, सहोदर अनुज से और शत्रु-पक्ष के आश्रित से मन्त्र-ग्रहण न करे।

गणेशविमर्शिण्याम्—

यतेर्दीक्षा पितुर्दीक्षा दीक्षा च वनवासिनः।
विविक्ताश्रमिणो दीक्षा न सा कल्याणदायिका॥

गणेशविमर्शिनी के अनुसार पति से, पिता से, वनवासी से और विविक्ताश्रमी से दीक्षा लेना कल्याणकारक नहीं होता।

रुद्रयामले—

न पत्नीं दीक्षयेद्भर्त्ता न पिता दीक्षयेत् सुताम्।
न पुत्रश्च तथा भ्राता भ्रातरं न च दीक्षयेत्॥
सिद्धमन्त्रो यदि पतिस्तदा पत्नीं स दीक्षयेत्।
शक्तित्वेन वरारोहे न च सा पुत्रिका भवेत्॥

इत्यादिनिषेधवचनादेभ्यो मन्त्रं न गृह्णीयात् इत्यर्थः। इदन्तु सिद्धेतरविषयम्। सिद्धमन्त्रे न दूष्यतीति वचनात्।

यतेरपि दीक्षोक्ता शक्तियामले—

तीर्थाचारयुतो मन्त्री ज्ञानवान् सुसमाहितः।
नित्यनिष्ठो यतिः ख्यातो गुरुः स्याद्भौतिकेऽपि च॥

रुद्रयामल के अनुसार पति पत्नी को, पिता पुत्र और कन्या को एवं भाई सहोदर का दीक्षा न प्रदान करे। पति यदि मन्त्रसिद्ध हो तो वह पत्नी को दीक्षा दे सकता है; किन्तु पत्नी के प्रति पुत्रिकावत् व्यवहार न करे। पत्नी को शक्ति के रूप में ग्रहण करे। इसके अनुसार मन्त्रग्रहण का निषेध है।

यह निषेध सिद्धेतर मन्त्रों के लिये है। सिद्ध मन्त्रों में यह दोष नही लगता। शक्तियामल के अनुसार यति से भी दीक्षा ग्राह्य है। यदि यति तीर्थाचार से युक्त मन्त्रज्ञ हो, सुसमाहित ज्ञानी हो, नित्यनिष्ठ विख्यात हो। ऐसा गुरु भी योग्य होता है।

तथा च सिद्धयामले—

यदि भाग्यवशेनैव सिद्धिविद्यां लभेत् प्रिये।
तदैव तान्तु दीक्षेत त्यक्त्वा गुरुविचारणम्॥

तथा—

प्रमादाच्च तथाऽज्ञानात् पितुर्दीक्षां समाचरेत्।
प्रायश्चित्तं ततः कृत्वा पुनर्दीक्षां समाचरेत्॥

पितुरित्युपलक्षणम् तथा मातामहादीनामपि। प्रायश्चित्तन्तु अयुतसावित्रीजपः सर्वत्र दर्शनात्।

सिद्धयामल के अनुसार यदि भाग्यवश सिद्ध विद्या प्राप्त हो तब विना गुरु-विचार के दीक्षा ग्राह्य है। यदि प्रमादवश या अज्ञानतावश पिता पुत्र को दीक्षा देता है तो पुत्र प्रायश्चित्त करके फिर से दीक्षा ग्रहण करे।

यहाँ पिता उपलक्षणमात्र है। मातामह आदि से भी दीक्षा ग्रहण करने के बाद दस हजार गायत्री-जप से प्रायश्चित्त करना चाहिये।

शङ्खः—

दशसाहस्त्यजापेन सर्वकल्मषनाशिनी।

तथा मत्स्यसूक्ते—

निर्वीर्यश्च पितुर्मन्त्रं शैवे शाक्ते न दूष्यति।

इति वचनं कौलिकमन्त्रदीक्षापरम्। अत्र हेतुः योगिनीतन्त्रे—शक्त्यादि-विद्यामधिकृत्य दीक्षानिषेधात् (तथा च विष्णुमन्त्रस्तु पित्रादिभ्यो गृहीतव्यः इत्यर्थः)। यद्वा शाक्ते तारादिविद्यायां मत्स्यसूक्ते तामधिकृत्य तथाप्रतिपादनात्। तथा च—निजकुलतिलकाय ज्येष्ठपुत्राय दद्यादित्यादि।

शङ्ख के अनुसार भी दस हजार गायत्री-जप से सभी कल्मषों का विनाश होता है। मत्स्यसूक्त के मत से पिता से प्राप्त निर्वीर्य मन्त्र शैवों और शाक्तों के लिये दोषयुक्त नहीं होते। कौलिक मन्त्र दीक्षा के वचन श्रेष्ठ हैं। इसका कारण योगिनीतन्त्र के वचन हैं कि कौलिक मार्ग में पिता से भी विष्णुमन्त्र की दीक्षा ग्राह्य है।

मत्स्यसूक्त के अनुसार तारा आदि विद्याओं के मन्त्र पिता आदि से भी ग्राह्य हैं। पिता अपने कुलतिलक ज्येष्ठ पुत्र को मन्त्र की दीक्षा दे सकता है।

श्रीक्रमेऽपि—

मनुर्विमृश्य दातव्यो ज्येष्ठपुत्राय धीमते।

महातीर्थे उपरागे सति सर्वत्र न दोषः। तथा च विष्णुमन्त्रमधिकृत्य—

साधु पृष्टं त्वया विप्र वक्ष्यामि सकलन्तव।
ब्रह्मणा कथितं पूर्वं वसिष्ठाय महात्मने॥
वसिष्ठोऽपि स्वपुत्राय मत्पित्रे दत्तवान् स्वयम्।
प्रसन्नहृदयः स्वच्छः पिता मे करुणानिधिः॥
कुरुक्षेत्रे महातीर्थे सूर्यपर्वणि दत्तवान्।

इत्यादि वैशम्पायनसंहितायां शौनकं प्रति व्यासवचनम्।

श्रीक्रम के मत से महातीर्थ और ग्रहणकाल में अपने ज्येष्ठ पुत्र को मन्त्र देने में कोई दोष नहीं है। विष्णुमन्त्र में अधिकृत्यता के बारे कथन है कि तुम्हारा प्रश्न उत्तम है, हे विप्र ! मैं तुझे सब कुछ बतलाता हूँ। पूर्व काल में महात्मा वशिष्ठ से ब्रह्मा ने कहा था अर्थात् मन्त्र दिया था।

ब्रह्मा से प्राप्त मन्त्र को वशिष्ठ ने भी स्वयं ही अपने पुत्र को दिया था। प्रसन्न-हृदय मेरे पिता ने भी करुणावश सूर्यग्रहण के समय कुरुक्षेत्र के महातीर्थ में मुझे मन्त्र दिया था। वैशम्यायनसंहिता में शौनक से व्यास ने इस प्रकार कहा था।

योगिनीतन्त्रे—

निर्वीर्यञ्च पितुर्मन्त्रं तथा मातामहस्य च।
स्वप्नलब्धं स्त्रिया दत्तं संस्कारेणैव शुध्यति॥

यत्तु—

साध्वी चैव सदाचारा गुरुभक्ता जितेन्द्रिया।
सर्वमन्त्रार्थतत्त्वज्ञा सुशीला पूजने रता।
गुरुयोग्या भवेत्सा हि विधवा परिवर्जिता।
स्त्रियो दीक्षा शुभा प्रोक्ता मातुश्चाष्टगुणाः स्मृताः॥

इदन्तु गुरोरुपासितमन्त्रपरम्।

योगिनीतन्त्र के अनुसार पिता और मातामह से प्राप्त निर्वीर्य मन्त्र तथा स्वप्नलब्ध और स्त्रीप्रदत्त मन्त्र भी संस्कारित होने पर शुद्ध हो जाते हैं। गुरुरूप से निर्दिष्ट स्त्री भी गुरु हो सकती है; यदि वह साध्वी, सदाचारिणी, गुरु की भक्तिन, इन्द्रियों को वशीभूत रखने वाली, सभी मन्त्रार्थतत्त्वों को जानने वाली, सुशीला, सदा पूजा में लगी रहती हो; किन्तु ऐसी विधवा गुरु नहीं हो सकती। स्त्री-गुरु से दीक्षा लेने से शुभ फल मिलता है। माता से उपासित मन्त्र की दीक्षा मिलने पर वह अठगुना अधिक फलदायी होती है। इस प्रकार से प्राप्त गुरुमन्त्र श्रेष्ठ होते हैं।

तथा भैरवीतन्त्रे—

स्वीयमन्त्रोपदेशे तु न कुर्याद् गुरुचिन्तनम्।

मातुरित्युपासितेऽष्टगुणम्। अनुपासिते शुभफलदमित्यर्थः। सिद्धमन्त्रविषयं वा इति केचित्। वस्तुतस्तु योगिनीतन्त्रे स्त्रीपदं विधवापरं एकवाक्यताबलात्।

विधवायाः सुतादेशात् कन्यायाः पितुराज्ञया।
नाधिकारो यतो नार्य्याः सधवा भर्त्तुराज्ञया॥

नाधिकार इति स्वातन्त्र्येणाधिकारस्य।

स्त्रीणां गर्भवतीनाञ्च दीक्षायां नैव दूषणम्।
न कुर्याद्दशमे मासि कृत्वा च नारकी भवेत्॥

भैरवीतन्त्र के मत से अपने द्वारा उपासित मन्त्र की दीक्षा लेने के समय गुरु-विचार नहीं करना चाहिये। माता के द्वारा उपासित मन्त्र अठगुणा अधिक फलप्रद होता है। सिद्ध मन्त्र भी इतने ही फलप्रद होते हैं। योगिनीतन्त्र के मत से वस्तुस्थिति यह है कि विधवा स्त्री से मन्त्रदीक्षा नहीं लेनी चाहिये। स्त्री-गुरुओं में विधवा अपने पुत्र की अनुमति से, कुमारी कन्या अपने पिता की आज्ञा से और विवाहिता अपने पति की अनुमति से मन्त्रदीक्षा

देने की अधिकारिणी होती है। स्वतन्त्र रूप से नारियों को मन्त्रदीक्षा देने का अधिकार नहीं है। गर्भवती स्त्री से दीक्षा लेने में दोष नहीं है; किन्तु दसवें महीने में दीक्षा लेने से नरक होता है।

स्वप्नलब्धमन्त्रे यदि सद्गुरुं प्राप्नोति तदा तत एव तन्मन्त्रं गृह्णीयात्, न चेत् जलपूर्णकलशे गुरोः प्राणप्रतिष्ठां विधाय वटपत्रे कुंकुमेन लिखितं मन्त्रं तत्कलशे प्रक्षिप्य उत्तोल्य मन्त्रं गृह्णीयादित्यर्थः। तथाहि—

स्वप्नलब्धे च कलशे गुरोः प्राणान् निवेशयेत् ॥

वटपत्रे कुंकुमेन लिखित्वा ग्रहणे शुभम्।
ततः सिद्धिमवाप्नोति चान्यथा विफलं भवेत्।

इदन्तु सद्गुरोरभावे तस्मादेव मन्त्रं गृह्णीयात्। 'स्वप्ने तु नियमो न ही'ति नारदवचनात्। तत्र सिद्धादिनियमो नास्ति।

स्वप्नलब्ध मन्त्र यदि सद्गुरु से प्राप्त हो तो उसे ग्रहण करना चाहिये। सद्गुरु का अभाव होने पर जलपूर्ण कलश में गुरु की प्राणप्रतिष्ठा करके वटपत्र पर कुंकुम से मन्त्र लिखे और उस कलश के जल में इस पत्र को डाल दे। फिर उक्त वटपत्र-सहित मन्त्र को ऊपर उठाते हुए स्वयं उस मन्त्र को ग्रहण करे। इससे मन्त्र की सिद्धि होती है; अन्यथा वह निष्फल रहता है। नारद के अनुसार स्वप्नलब्ध मन्त्र में कोई नियम नहीं है। इसमें सिद्धादि विषय विचारणीय नहीं हैं।

तथा विद्याधराचार्यधृतं जाबालवचनम्—

मध्यदेशकुरुक्षेत्र-नट-कोङ्कणसम्भवाः ।
अन्तर्वेदिप्रतिष्ठाना आवन्त्याश्च गुरूत्तमाः ॥

मध्यदेश आर्यावर्त्तः ।

गौडाः शाल्वाः सुराश्चैव मागधाः केरलास्तथा।
कोशलाश्च दशार्णाश्च गुरवः सप्त मध्यमाः ॥
कर्णाटनर्मदाराष्ट्रकच्छतीरोद्भवास्तथा ।
कालिन्दाश्च कलम्बाश्च काम्बोजाश्चाधमा मताः ॥

विद्याधराचार्य द्वारा कथित जाबाल के वचनों के अनुसार मध्य देश, कुरुक्षेत्र, नट, कोंकण, सम्भूत, अन्तर्वेदि प्रतिष्ठित और अवन्ति के गुरु श्रेष्ठ होते हैं। गौड़देशीय, शाल्वदेशीय, सौराष्ट्रदेशीय, मगधदेशीय, केरलदेशीय, कोशलदेशीय, दशार्णदेशीय कुल सात देशीय गुरु मध्यम माने गये हैं। कर्णाटक, नर्मदा, राष्ट्रकच्छ-तटसम्भूत, कलिन्द, कलम्ब और काम्बोज देशीय गुरु अधम माने गये हैं।

दीक्षाविचारादिनिर्णयः

दीक्षां विना जपस्य दुष्टत्वात् प्रथमं सा निरूप्यते—

दिव्यं ज्ञानं यतो दद्यात् कुर्यात्पापस्य संक्षयम् ।
तस्माद्दीक्षेति सा प्रोक्ता मुनिभिस्तन्त्रवेदिभिः ॥

सर्वाश्रमेषु दीक्षाया आवश्यकत्वम् । तथा च—

दीक्षामूलं जपं सर्वं दीक्षामूलं परं तपः ।
दीक्षामाश्रित्य निवसेद्यत्र कुत्राश्रमे वसन् ॥
अदीक्षिता ये कुर्वन्ति जपपूजादिकाः क्रियाः ।
न भवन्ति प्रिये तेषां शिलायामुप्तबीजवत् ॥
देवि दीक्षाविहीनस्य न सिद्धिर्न च सद्गतिः ।
तस्मात् सर्वप्रयत्नेन गुरुणा दीक्षितो भवेत् ॥
अदीक्षितोऽपि मरणे रौरवं नरकं व्रजेत् ।
अदीक्षितस्य मरणे पिशाचत्वं न मुञ्चति ।
तस्माद्दीक्षां प्रयत्नेन सदा कुर्वीत तान्त्रिकात् ॥

तथा च नवरत्नेश्वरे—

सर्वासामपि दीक्षाणां मुक्तिः फलमखण्डितम् ।
अविरोधाद्भवन्त्येव प्रासङ्गिक्यस्तु भुक्तयः ॥
उपपातकलक्षाणि महापातककोटयः ।
क्षणाद्दहति देवेशि दीक्षा हि विधिना कृता ॥
कल्ये दृष्ट्वा तु मन्त्रं वै यो गृह्णाति नराधमः ।
मन्वन्तरसहस्रेषु निष्कृतिर्नैव जायते ॥
नादीक्षितस्य कार्यं स्यात्तपोभिर्नियमैर्व्रतैः ।
न तीर्थगमनेनाऽपि न च शारीरयन्त्रणैः ॥

मत्स्यसूक्ते—

अदीक्षितानां मर्त्यानां दोषं शृणु वरानने! ।
अन्नं विष्ठासमं तस्य जलं मूत्रसमं स्मृतम् ।
तत्कृतं तस्य वा श्राद्धं सर्वं याति ह्यधोगतिम् ॥

ततः—

सद्गुरोराहिता दीक्षा सर्वकर्माणि साधयेत् ।

दीक्षा-विचार—दीक्षा के विना मन्त्रजप दूषित होता है। दीक्षा से दिव्य ज्ञान का

लाभ और पापों का नाश होता है। इसी से इसका नाम दीक्षा है; क्योंकि जप-तप आदि का मूल दीक्षा ही है। अत: किसी भी आश्रम में रहने वाले मनुष्य को दीक्षा का आश्रय लेना ही पड़ता है। अदीक्षित की जप-पूजादि क्रिया पत्थर पर बीज बोने के समान व्यर्थ होती है। दीक्षाविहीन को न तो सद्गति मिलती है और न ही सिद्धि। अत: सभी को गुरु से दीक्षा प्राप्त करनी चाहिये। अदीक्षितों को मरणोपरान्त रौरव नरक में दु:ख भोगना पड़ता है। अदीक्षित को मृत्यु के वाद पिशाचत्व से मुक्ति नहीं मिलती; इसीलिये यत्नपूर्वक तान्त्रिक दीक्षा लेना परम कर्तव्य है।

नवरत्नेश्वर के मत से सभी प्रकार की दीक्षा से मुक्ति मिलती है; साथ ही भोग भी सम्पन्न होता है। विधिपूर्वक दीक्षा लेने से असंख्य पाप तुरन्त भस्म हो जाते हैं। गुरु के पास न जाकर जो ग्रन्थ देखकर जप करता है, उसकी एक हजार मन्वन्तर तक सद्गति नहीं होती है। अदीक्षित व्यक्ति का कोई भी कार्य; यथा—तपस्या, व्रत, नियम आदि तीर्थयात्रा एवं शारीरिक श्रम से सिद्ध नहीं होता। अदीक्षित के द्वारा एवं अदीक्षित के लिये किया गया श्राद्ध निष्फल होता है; क्योंकि अदीक्षित का अन्न विष्टा के समान और जल मूत्र के समान होता है। अदीक्षित के द्वारा किये गये श्राद्ध से पितरों को अधोगति मिलती है। इसलिये सद्गुरु से दीक्षा लेना परमावश्यक है। दीक्षा लेकर ही सभी कर्मों का साधन करना चाहिये।

शूद्रस्य निषिद्धमन्त्रा:

तन्त्रान्तरे—

प्रणवाद्यं न दातव्यं मन्त्रं शूद्राय सर्वथा।
आत्ममन्त्रं गुरोर्मन्त्रं मन्त्रञ्च जपसंज्ञकम्॥
स्वाहाप्रणवसंयुक्तं शूद्रे मन्त्रं ददद्द्विज:।
शूद्रो निरयमाप्नोति ब्राह्मणो यात्यधोगतिम्॥

शूद्रों के लिये निषिद्ध मन्त्र—प्रणव और प्रणवयुक्त मन्त्र शूद्र को प्रदान न करे। जो ब्राह्मण आत्ममन्त्र, गुरुमन्त्र, अजपा मन्त्र हंस, स्वाहा और प्रणवयुक्त मन्त्र शूद्र को देता है, उसकी अधोगति होती है। उसके साथ शूद्र भी नरकगामी होता है।

श्रुतिरपि—सावित्रीं प्रणवं यजुर्लक्ष्मीं स्त्रीशूद्रो यदि जानीयात्स मृतोऽधोगच्छति।

श्रुति के अनुसार वैदिक गायत्री, प्रणव एवं लक्ष्मीमन्त्र (श्रीं) स्त्री और शूद्र के लिये निषिद्ध हैं।

विशेषमाह वाराहीये—

गोपालस्य मनुर्देयो महेशस्य च पादजे।

तत्पत्न्याश्चापि सूर्यस्य गणेशस्य मनुस्तथा।
एषां दीक्षाधिकारी स्यादन्यथा पापभाग्भवेत्॥

वाराहीतन्त्र में लिखा है कि शूद्र को गोपाल, महेश्वर, दुर्गा, सूर्य और गणेश के मन्त्रों को ग्रहण करने का ही अधिकार है। अन्य मन्त्र उनके लिये निषिद्ध हैं। अन्य मन्त्र ग्रहण से पापभाजन होना पड़ता है।

मन्त्राणां सिद्धादिविचार:

तत्राप्यनुकूलं मन्त्रं दीक्षयेत्।
मननात्त्रायते यस्मात्तस्मान्मन्त्रः प्रकीर्त्तितः॥

तथा च—
स्वताराराशिकोष्ठानामनुकूलान् भजेन्मनून्॥

मन्त्रों का सिद्धादि विचार—जिन मन्त्रों को ग्रहण करने का अधिकार हो, उन्हीं में से अनुकूल मन्त्र ग्रहण करना चाहिये। मन्त्र के मनन, स्मरण, उच्चारण से संसार से उद्धार होता है। इसी से इसे मन्त्र कहते हैं। अपनी राशिकोष्ठ नाम के अनुकूल मन्त्र का जप करना चाहिये।

सिद्धसारस्वते—
नृसिंहार्कवराहाणां प्रासादप्रणवस्य च।
सपिण्डाक्षरमन्त्राणां सिद्धादीन्नैव शोधयेत्॥

सिद्धसारस्वत में लिखा है कि नृसिंह, सूर्य, वराह के मन्त्र और प्रासाद बीज हौं, प्रणव एवं कूटमन्त्र अर्थात् ठ्रौं बीजघटित मन्त्र के सम्बन्ध में सिद्धादि विचार नहीं करना चाहिये।

वाराहीतन्त्रे—
ताराचक्रं राशिचक्रं नामचक्रं तथैव च।
तत्र चेत्सगुणो मन्त्रो नान्यच्चक्रं विचिन्तयेत्॥
इति तु प्रधानतया बोद्धव्यम्। तथा च—
धनिमन्त्रं न गृह्णीयादकुलञ्च तथैव च।
इत्यादौ तथादर्शनात्तत्तच्चक्रविचारस्यावश्यकत्वात् प्रथमं तन्निरूप्यते—
स्वप्नलब्धे स्त्रिया दत्ते मालामन्त्रे च त्र्यक्षरे।
काली-तारामणौ मन्त्री तथा छिन्नमनावपि।
वैदिकेषु च सर्वेषु सिद्धादीन्नैव शोधयेत्॥
मालामन्त्रस्तु वाराहीये—

विंशत्यर्णाधिका मन्त्रा मालामन्त्राः प्रकीर्त्तिताः ।
नपुंसकस्य मन्त्रस्य सिद्धादीन्नैव शोधयेत् ॥
हंसस्याष्टाक्षरस्यापि तथा पञ्चाक्षरस्य च ।
एकद्वित्र्यादिबीजस्य सिद्धादीन्नैव शोधयेत् ॥

तथा—

एकाक्षरस्य मन्त्रस्य मालामन्त्रस्य पार्वति ।
वैदिकस्य च मन्त्रस्य सिद्धादीन्नैव शोधयेत् ॥
पुंमन्त्रा हुंफडन्ताः स्युर्द्विठान्तास्तु स्त्रियो मताः ।
नपुंसका नमोऽन्ताः स्युरित्युक्ता मनवस्त्रिधा ।
एतच्छून्या महाविद्या महाशब्देन नीयते ॥

वाराहीतन्त्र के अनुसार सगुण मन्त्रों के सम्बन्ध में ताराचक्र, राशि-चक्र और नामचक्र (ऋणी-धनीचक्र) का विचार करना चाहिये। धनी और अकुल मन्त्र ग्रहणीय नहीं हैं। अत: ऋणी-धनी तथा कुलाकुल चक्र का विचार आवश्यक है। स्वप्न में प्राप्त मन्त्र, स्त्री-गुरु से प्राप्त मन्त्र, त्र्यक्षर मन्त्र, काली मन्त्र, तारा मन्त्र, छिन्नमस्तिका मन्त्र और सभी प्रकार के वैदिक मन्त्रों के विषय में सिद्धादि विचार नहीं करना चाहिये। जिस मन्त्र के अन्त में 'हूँ फट्' होता है, वह पुरुषमन्त्र होता है। जिसके अन्त में 'स्वाहा' रहता है, उसे स्त्रीमन्त्र कहते हैं। जिसके अन्त में नम: हो, उसे नपुंसक मन्त्र कहते हैं। 'महाविद्या' इन सबसे रहित होता है। इसी से उसे महामाया कहा जाता है।

मालिनीविजये—

अथ वक्ष्याम्यहं या या महाविद्या महीतले ।
दोषजालैरसंस्पृष्टास्ताः सर्वा हि फलैः सह ॥
काली नीला महादुर्गा त्वरिता छिन्नमस्तका ।
वाग्वादिनी चान्नपूर्णा तथा प्रत्यङ्गिरा पुनः ॥
कामाख्यावासिनी बाला मातङ्गी शैलवासिनी ।
इत्याद्याः सकला देव्याः कलौ पूर्णफलप्रदाः ॥
सिद्धमन्त्रतया नात्र युगसेवापरिश्रमः ।
तथा चैता महाविद्याः कलिदोषान्न बाधिताः ॥

मालिनीविजय तन्त्र के अनुसार काली, तारा, षोडशी, भुवनेश्वरी, भैरवी, छिन्नमस्तिका, धूमावती, बगला, मातंगी और कमला—इन दश महाविद्याओं के मन्त्र ग्रहण करने के समय सिद्धादि विचार, नक्षत्र-चक्रादि विचार, कालादि शोधन और अरि-विचार की

आवश्यकता नहीं हैं। ये सिद्ध विद्यायें हैं। इनकी उपासना से कुछ भी असाध्य नहीं रहता। इनके अतिरिक्त महादुर्गा, त्वरिता, वाग्वादिनी, अन्नपूर्णा, प्रत्यंगिरा, कामाख्या, बाला, शैलवासिनी के मन्त्र कलियुग में पूर्ण फलप्रदायक हैं। ये भी सिद्ध मन्त्र हैं। इनमें कलिदोष बाधक नहीं होता। इनके लिये युगनियम नहीं हैं।

तथा च मुण्डमालातन्त्रे—

काली तारा महाविद्या षोडशी भुवनेश्वरी।
भैरवी छिन्नमस्ता च विद्या धूमावती तथा॥
वगला सिद्धविद्या च मातङ्गी कमलात्मिका।
एता दश महाविद्याः सिद्धविद्याः प्रकीर्त्तिताः॥
नात्र सिद्धाद्यपेक्षास्ति नक्षत्रादिविचारणा।
कालादिशोधनं नास्ति नारिमित्रादिदूषणम्॥
सिद्धिविद्यातया नात्र युगसेवापरिश्रमः।
नास्ति किञ्चिन्महादेवि दुःखसाध्यं कदाचन॥

इत्यादि वचनादेषु विचारो नास्ति। वस्तुतस्तु इदं प्रशंसापरम्। सर्वत्र विचार-स्यावश्यकत्वं दुरदृष्टवशात् कदाचिद्वैरिमन्त्रस्य स्वप्नादौ प्राप्त्या तद्दोषस्य दृष्टत्वादिति साम्प्रदायिकाः।

मुण्डमालातन्त्र के मत से काली, तारा, षोडशी, भुवनेश्वरी, भैरवी, छिन्नमस्ता, धूमावती, बगला, मातंगी और कमला के मन्त्रों में सिद्धादि, नक्षत्र-चक्रादि विचार, कालादि शोधन आदि विचार नहीं करना चाहिये। ये सिद्ध विद्यायें हैं। इनकी उपासना पूर्ण फलप्रद होती है।

साम्प्रदायिकों के मत से उक्त वचन को प्रशंसापरक मानकर सभी मन्त्रों के सम्बन्ध में मन्त्रविचार करना चाहिये। उदाहरणार्थ स्वप्न में प्राप्त मन्त्र के लिये विचार अनावश्यक है; परन्तु दुर्दैव होने से स्वप्न में शत्रुमन्त्र भी प्राप्त हो सकता है। अतएव मन्त्रविचार सर्वत्र अपेक्षित है।

कुलाकुलचक्रम्

कुलाकुलस्य भेदं हि वक्ष्यामि मन्त्रिणामिह।

तथा निबन्धे—

वाय्वग्निभूजलाकाशाः पञ्चाशल्लिपयः क्रमात्।
पञ्चह्रस्वाः पञ्चदीर्घा विन्द्वन्ताः सन्धिसम्भवाः।
कादयः पञ्चशः यक्षलसहान्ताः प्रकीर्त्तिताः॥

तथा च—अ आ ए क च ट त प य षाः मारुताः। इ ई ऐ ख छ ठ थ फ र क्षा आग्नेयाः। उ ऊ ओ ग ज ड द ब ल ळाः पार्थिवाः। ऋ ॠ औ घ झ ढ ध भ व सा वारुणाः। ऌ ॡ अं ङ ञ ण न म श हा नाभसाः।

साधकस्याक्षरं पूर्वं मन्त्रस्यापि तदक्षरम्।
यद्येकभूतदैवत्यं जानीयात् स्वकुलं हितम्॥
भौमस्य वारुणं मित्रं आग्नेयस्यापि मारुतम्।
मारुते पार्थिवानाञ्च आग्नेयञ्चाम्भसां रिपुः॥
पार्थिवानाञ्चेति चकारात् आग्नेयं पार्थिवानां रिपुः।
नाभसं सर्वमित्रं स्याद्विरुद्धं नैव शीलयेत्॥

तथा च रुद्रयामले—

पार्थिवे वारुणं मित्रं तैजसं शत्रुरीरितम्।
ऐन्द्रवारुणयोः शत्रुर्मारुतः परिकीर्त्तितः।

इति राघवभट्टधृतवचनात् जलमारुतयोः शत्रुता।

मित्रे सिद्धिः समाख्याता उदासीने न किञ्चन।
मृत्युर्व्याधिरमित्रे च स्वकुले सिद्धिरुत्तमा॥

कुलाकुल चक्र—इस श्लोक के अनुसार कुलाकुल चक्र निम्न प्रकार का है। इस चक्र के अनुसार यदि मन्त्र लेने वाले के नाम का पहला अक्षर और लिये जाने वाले मन्त्र का पहला अक्षर एक ही भूत के हों अर्थात एक ही कोष्ठ में हों तो उस मन्त्र को 'स्वकुल'; अन्यथा 'अकुल' समझा जाता है।

कुलाकुल चक्र

वायु	अग्नि	भूमि	जल	आकाश
अ आ	इ ई	उ ऊ	ऋ ॠ	ऌ ॡ
ए	ऐ	ओ	औ	अं
क	ख	ग	घ	ङ
च	छ	ज	झ	ञ
ट	ठ	ड	ढ	ण
त	थ	द	ध	न
प	फ	ब	भ	म
य	र	ल	व	श
ष	क्ष	ल	स	ह

स्वकुल का मन्त्र शुभ होता है। एक भूत न होकर यदि उपर्युक्त दोनों अक्षर परस्पर मित्र हों तो भी वह मन्त्र शुभ समझना चाहिये। मित्र-शत्रु की पहचान के लिये यह स्मरणीय है कि जलवर्ण, आकाशवर्ण के और वायुवर्ण अग्निवर्ण के मित्र हैं। वायुवर्ण भूवर्ण के और अग्निवर्ण जलवर्ण तथा भूवर्ण के शत्रु हैं। आकाश-वर्ण सब वर्णों का मित्र है।

रुद्रयामल के अनुसार जलवर्ण भूवर्ण का मित्र है और वायुवर्ण का शत्रु है। मित्रवर्ण होने से सिद्धि की प्राप्ति होती है और शत्रुवर्ण होने से व्याधि तथा मृत्यु होती है। उदासीन होने से कुछ नहीं होता। इसे पूर्ण रूप से समझने के लिये एक उदाहरण दिया जा रहा

है। रमेश को ईशान मन्त्र लेना है। उपासक के नाम का पहला अक्षर 'र' है और मन्त्र का पहला अक्षर 'ई' है। ये दोनों 'र' और 'ई' अग्नि के कोष्ठक में है। अतः एक भूत हुए। रमेश के लिये ईशान मन्त्र स्वकुल अर्थात् शुभ है। इसी प्रकार यदि रमेश को 'हर' मन्त्र लेना हो तो 'र' का दैवत अग्नि है और 'ह' का आकाश। ये दोनों भूत परस्पर मित्र हैं। इसलिये रमेश हरमन्त्र भी ले सकता है।

राशिचक्रम्

यथा आगमकल्पद्रुमे—

रेखाद्वयं पूर्वपरेण कुर्यात्तन्मध्यतो याम्यकुवेरभेदात्।
एकैकमीशाननिशाकरे तु हुताशवाय्वोर्विलिखेत्ततोऽर्णान् ॥
वेदाग्निवह्नियुगलश्रवणाक्षिसंख्यान् पञ्चेषुवाणशरपञ्चचतुष्टयार्णान्।
मेषादितः प्रविलिखेत्सकलास्तु वर्णान् कन्यागतान् प्रविलिखेदथ पादिवर्णान् ॥

शारदायाम्—

बालं गौरं खुरं शोनं शमीशोभेति राशिषु।
क्रमेण भेदिता वर्णाः कन्यायां शादयः स्मृताः ॥

तेन अ आ इ ई मेषः। उ ऊ ऋ वृषः। ॠ ऌ ॡ मिथुनम्। ए ऐ कर्कटः। ओ औ सिंहः। अं अः श ष स ह ल क्षः कन्या। कवर्गस्तुला। चवर्गो वृश्चिकः। टवर्गो धनुः। तवर्गो मकरः। पवर्गः कुम्भः। यवर्गो मीनः। स्वराशीनामनुकूलं मन्त्रं भजेत्। तथा च 'स्वताराराशिकोष्ठानामनुकूलान् भजेन्मनूनि'ति नारदवचनात्।

राशीनां शुद्धता ज्ञेया त्यजेच्छक्रं मृतिं व्ययम्।
स्वराशेर्मन्त्रराश्यन्तं गणनीयं विचक्षणैः ॥

यदा तु स्वराशेरज्ञानं तदा साधकनामाद्यक्षरसम्बन्धिनं राशिं गृहीत्वा गणयेत्। नारायणीये—

अज्ञाते राशिनक्षत्रे नामाद्यक्षरदर्शनात्।
साध्यस्याक्षरराश्यन्तं गणयेत् साधकाक्षरात् ॥

इति रामार्चनचन्द्रिकाधृतत्वाच्च।

तन्त्रराजे—

तेन मन्त्राद्यवर्णेन नाम्नश्चाद्यक्षरेण च।
गणयेद्यदि षष्ठं वाप्यष्टमं द्वादशन्तु वा।
रिपुर्मन्त्राद्यवर्णः स्यात्तेन तस्याहितं भवेत् ॥

रामार्चनचन्द्रिकायाम्—

एकपञ्चनवबान्धवाः स्मृता द्वौ च षष्ठदशमाश्च सेवकाः ।
वह्निरुद्रमुनयस्तु पोषका द्वादशाष्टचतुरस्तु घातकाः ।।

चतुरस्तु घातका इति विष्णुविषयम्। रामार्चनचन्द्रिकाधृतत्वाच्च शक्त्यादौ षष्ठं वर्जनीयम्;

षष्ठाष्टमद्वादशानि वर्जनीयानि यत्नतः ।

इति वचनात् तन्त्रराजधृतत्वाच्च । तन्त्रान्तरे द्वादशराशीनामियं संज्ञा नामानुरूपं फलम्—

लग्नं धनं भ्रातृबन्धुपुत्रशत्रुकलत्रकम् ।
मरणं धर्मकर्मायव्यया द्वादशराशयः ।।
नामानुरूपमेतेषां शुभाशुभफलं लभेत् ।

वैष्णवे तु बन्धुस्थाने शत्रुः शत्रुस्थाने बन्धुरिति पाठः।

लग्ने सिद्धिस्तथा नित्यं धने धनसमृद्धिदम् ।
भ्रातरि भ्रातृवृद्धिः स्याद्बान्धवे बान्धवप्रियः ।।
पुत्रे पुत्रविवृद्धिः स्याच्छत्रौ शत्रुविवर्द्धनम् ।
कलत्रे मध्यमा प्रोक्ता मरणे मरणं भवेत् ।।
धर्मे धर्मविवृद्धिः स्यात्सिद्धिदः कर्मसंस्थितः ।
आये च धनसम्पत्तिर्व्यये च सञ्चितव्ययः ।।

राशिचक्र—आगमकल्पद्रुमोक्त श्लोक के अनुसार राशिचक्र निम्न प्रकार का होता है—

वृष उ ऊ ऋ मिथुन ऋ ऌ ॡ	मेष अ आ इ ई	मीन य र ल व क्ष कुम्भ प फ ब भ म
कर्क ए ऐ	**राशिचक्र**	मकर त थ द ध न
सिंह ओ औ कन्या अं अः श ष स ह	तुला क ख ग घ ङ	धनु ट ठ ड ढ ण वृश्चिक ञ च छ ज झ

अपनी राशि के नामाक्षर के अनुकूल राशि के मन्त्र की उपासना करनी चाहियें और

अपने नक्षत्रराशि कोष्ठ के नामानुकूल मन्त्र लेना चाहिये, ऐसा नारद का वचन है। इस चक्र से पहले मन्त्र की राशि निश्चित करे। यदि अपनी जन्मराशि ज्ञात न हो तो अपने पुकारनाम के प्रथम अक्षर से अपनी राशि निश्चित करे। फिर अपनी राशि से मन्त्र की राशि तक गिनकर फलाफल जान लेना चाहिये।

तन्त्रराजतन्त्र के अनुसार यदि मन्त्रराशि अपनी राशि से छठे, आठवें या बारहवें पड़े तो उसे शत्रु-मन्त्र माना जाता है। उसे लेने से अमंगल होता है। यदि पहले, पाँचवें या नवें पड़े तो उसे शुभ माना जाता है। तीसरे, सातवें, ग्यारहवें होने से पुष्टिदायक होता है। चौथे, आठवें और बारहवें होने से घातक माना जाता है।

तन्त्रान्तर में लिखा है कि बारह राशियों के नाम के अनुसार ही उनका फल होता है। कुण्डली में बारह भाव के नाम लग्न, तन, धन, भ्रातृ, मातृ, पुत्र, शत्रु, कलत्र, मृत्यु, धर्म, कर्म, आय, व्यय हैं। इनके नाम के अनुसार शुभाशुभ फल प्राप्त होते हैं। लग्न में सिद्धि, धन में धन-वृद्धि, भ्रातृ में भ्रातृ-वृद्धि, बन्धुस्थान में बन्धुस्नेह प्राप्त होता है। पुत्रस्थान से पुत्रप्राप्ति होती है। शत्रुस्थान से शत्रुवृद्धि होती है। पत्नी-स्थान मध्यम माना गया है। मरणस्थान से मृत्यु होती है। धर्मस्थान से धर्म में वृद्धि होती है। कर्मस्थान में कर्म में सिद्धि होती है। आयस्थान से धन-सम्पत्ति मिलती है। व्ययस्थान में सञ्चित द्रव्य का व्यय होता है।

नक्षत्रचक्रम्

अ आ अश्विनी देवः। इ भरणी मानुषः। ई उ ऊ कृत्तिका राक्षसः। ऋ ॠ ऌ ॡ रोहिणी मानुषः। ए मृगशिरो देवः। ऐ आर्द्रा मानुषः। ओ औ पुनर्वसुर्देवः। क पुष्यो देवः। ख ग अश्लेषा राक्षसः। घ ङ मघा राक्षसः। च पूर्वफल्गुनी मानुषः। छ ज उत्तरफल्गुनी मानुषः। झ ञ हस्तो देवः। ट ठ चित्रा राक्षसः। ड स्वाती देवः। ढ ण विशाखा राक्षसः। त थ द अनुराधा देवः। ध ज्येष्ठा राक्षसः। न प फ मूलो राक्षसः। ब पूर्वाषाढा मानुषः। भ उत्तराषाढा मानुषः। म श्रवणा देवः। य र धनिष्ठा राक्षसः। ल शतभिषा राक्षसः। व श पूर्वभाद्रपदा मानुषः। ष स ह उत्तरभाद्रपदा मानुषः। अं अः ल क्ष रेवती देवः। वृहच्छ्रीक्रमे—

उत्तराद्दक्षिणाग्रां तु रेखां कुर्याच्चतुष्टयीम् ॥
दशरेखाः पश्चिमाग्राः कर्त्तव्या वीरवन्दिते।
अश्विन्यादिक्रमेणैव विलिखेत्तारकाः पुनः ॥
अकारादिक्षकारान्तान् द्विचन्द्रवह्निवेदकान्।
भूमीन्दुनेत्रचन्द्राक्षिण अश्लेषान्तं खगौ प्रिये ॥
द्विभूनेत्र-ऽनेत्रयुग्मांश्चेन्दुनेत्राग्निचन्द्रकान् ।

मघादिज्येष्ठापर्यन्तं द्वितीयं नवतारकम् ॥
वह्निभूमीन्दुचन्द्रांश्च युग्मेन्दुनेत्रवह्निकान् ।
वेदेन भेदितान् वर्णान् रेवत्यंशगतान् क्रमात् ॥

तथा च निबन्धे—

पूर्वोत्तरत्रयञ्चैव भरण्यार्द्राथ रोहिणी ।
इमानि मानुषान्याहुर्नक्षत्राणि मनीषिणः ॥
ज्येष्ठा-शतभिषा-मूला-धनिष्ठाश्लेषकृत्तिकाः ।
चित्रा-मघा-विशाखाः स्युस्तारा राक्षसदेवताः ॥
अश्विनी रेवती पुष्या स्वाती हस्ता पुनर्वसुः ।
अनुराधा मृगशिरा श्रवणा देवतारकाः ॥

तथा—

स्वजातौ परमा प्रीतिर्मध्यमा भिन्नजातिषु ।
रक्षोमानुषयोर्नाशो वैरं दानवदेवयोः ॥
जन्म-सम्पद्विपत्क्षेम-प्रत्यरिः साधको वधः ।
मित्रं परममित्रञ्च जन्मादीनि पुनः पुनः ॥

जन्मतृतीयपञ्चमसप्तमानि नक्षत्राणि वर्जनीयानि।

तथा च राघवभट्टः—

रसाष्टनवभद्राणि युगयुग्मगतानि च ।
इतराणि न भद्राणि तत्त्याज्यानि मनीषिणा ॥

इत्यादि। तत्र स्वनक्षत्रादेव नक्षत्रं गणनीयम्। स्वनक्षत्राज्ञाने स्वनामाद्यक्षर-सम्बन्धिनक्षत्रादेव नक्षत्रं गणनीयम्। पिङ्गलातन्त्रे—

प्रकटं यस्य जन्मर्क्षं तस्य जन्मर्क्षतो भवेत् ।
प्रनष्टं जन्मभं यस्य तस्य नामर्क्षतो भवेत् ॥

इति वचनात्। तथा च—

प्रादक्षिण्येन गणयेत् साधकाद्यक्षरात् सुधीः ।

इति वचनात्। प्रकारान्तरं निबन्धे—

प्रापालाभात् पटुप्राह्यं रुद्रस्याद्रिरुरुः करम् ।
लोकलोपपटुप्रायः खलो घो भेषु भेदिताः ॥
पक्षैकत्र्यब्धिरूपावनिभुजशशियुग्मेन्दुपक्षाः ।
युग्मैकद्वियुग्मनेत्रेन्दुपक्षाग्निचन्द्रकान् ॥

त्रयशशिभूरेकपक्षेन्दुनेत्राग्निवेदाः ।
वर्णाः क्रमात् स्वराश्यन्त्यौ रेवत्यंशगतावुभौ ।।
जप्तुर्नक्षत्रादथ परिगणयेत् जन्म-सम्पत्क्रमेण सुधीः। इति वचनात्।

नक्षत्रचक्र—नक्षत्रचक्र से विचार करते समय मन्त्र लेने वाले का जन्मनक्षत्र और मन्त्र का पहला अक्षर जिस कोष्ठ में हो, उसमें स्थित नक्षत्र को लेकर गणना करे। यदि जन्मनक्षत्र ज्ञात न हो तो नाम के पहले अक्षर से अपना नक्षत्र निश्चित कर ले तब गणना करे। बृहच्छ्रीक्रम एवं निबन्ध-वचन के अनुसार नक्षत्र चक्र निम्न प्रकार का होता है—

नक्षत्रचक्र

अश्विनी	भरणी	कृतिका	रोहिणी	मृगसिरा	आर्द्रा	पुनर्वसु	पुष्य	आश्लेषा
अ आ	ई	ई उ ऊ	ऋॠऌॡ	ए	ऐ	ओ औ	क	ख ग
देव	नर	राक्षस	नर	देव	नर	देव	देव	राक्षस
मघा	पूर्वा फा.	उ. फा.	हस्त	चित्रा	स्वाती	विशाखा	अनुराधा	ज्येष्ठा
घ ङ	च	छ ज	झ ञ	ट ठ	ड	ढ ण	त थ द	ध
राक्षस	नर	नर	देव	राक्षस	देव	राक्षस	देव	राक्षस
मूल	पूर्वाषा.	उतराषा.	श्रवण	धनिष्ठा	शतभिषा	पूर्वाभाद्रपद	उत्तराभाद्र	रेवती
न प फ	ब	भ	म	य र	ल	व श	ष स ह	लक्षअंअः
राक्षस	नर	नर	देव	राक्षस	राक्षस	नर	नर	देव

अपनी जाति से परम प्रीति होती है। भिन्न जाति से प्रीति मध्यम होती है। राक्षस और मनुष्य से विनाश होता है। राक्षस और देवगण से शत्रुता होती है। अतः मनुष्यगण के लिये मनुष्यगण का मन्त्र श्रेष्ठ होता है। देवगण का मन्त्र भी उत्तम होता है; किन्तु राक्षसगण का मन्त्र घातक होता है। देवगण के लिये मनुष्यगण का मन्त्र मध्यम होता है। राक्षसगण का मन्त्र शत्रु होता है। राक्षसगण के लिये केवल राक्षसगण का मन्त्र ही ठीक होता है। इस प्रकार विचार कर अपने नक्षत्र से मन्त्र के नक्षत्र तक गिने। गणना का फल निम्न प्रकार का होता है—

१, १०, १९ हो तो जन्म।
२, ११, २० हो तो सम्पत्।
३, १२, २१ हो तो विपत्।
४, १३, २२ हो तो क्षेम।
५, १४, २३ हो तो प्रत्यरि।
६, १५, २४ हो तो साधक।
७, १६, २५ हो तो वध।
८, १७, २६ हो तो मित्र।
९, १८, २७ हो तो परममित्र।

अकथहचक्रम्

चतुरस्रे लिखेद्वर्णान् चतुःकोष्ठसमन्विते ।
चतुःकोष्ठे चतुश्चतुकोष्ठे षोडश कोष्ठ इति यावत् । विश्वसारे—

चतुरस्रं लिखेत् कोष्ठं चतुःकोष्ठसमन्वितम् ।
पुनश्चतुष्कं तत्रापि लिखेद्धीमान् क्रमेण तु ।

ततः षोडशकोष्ठेषु अकारादिवर्णान् प्रादक्षिण्येन लिखेत्। तत्र क्रमः—
इन्द्वग्नि-रुद्र-नव-नेत्र-युगार्क-दिक्षु-ऋत्वष्ट-षोडश-चतुर्दशभौतिकेषु ।
पातालपञ्चदशवह्निहिमांशुकोष्ठे वर्णाल्लिखेल्लिपिभवान् क्रमशस्तु धीमान् ॥

नामाद्यक्षरमारभ्य यावन्मन्त्रादिमाक्षरम् ।
चतुर्भिः कोष्ठैरेकैकमिति कोष्ठचतुष्टयम् ॥
पुनः कोष्ठग-कोष्ठेषु सव्यतो नाम्न आदितः ।
सिद्धः साध्यः सुसिद्धोऽरिः क्रमाज्ज्ञेया विचक्षणैः ॥

सव्यतो दक्षिणतः ।

कल्पद्रुमे—

पूर्वापरायतं कृत्वा पञ्चसूत्रं प्रकल्पयेत् ।
तथैव दक्षिणोदीच्यक्रमेण पञ्चसूत्रकम् ।
यथा षोडशकोष्ठानि सम्पद्यन्ते तथा लिखेत् ॥

विश्वसारे—

अकारादि-हकारान्तं मूलात्कोष्ठादितः सुधीः ।
दक्षिणावर्त्तयोगेन कोष्ठे वर्णान् लिखेत्सुधीः ।
येनैव लेखनं कुर्यात्तेनैव गणनं स्मृतम् ॥
सिद्धः साध्यः सुसिद्धोऽरिः क्रमाज्ज्ञेयो विचक्षणैः ।
सिद्धः सिध्यति कालेन साध्यस्तु जपहोमतः ।
सुसिद्धो ग्रहणादेव रिपुर्मूलं निकृन्तति ॥

तन्त्रान्तरे—

सिद्धार्णा बान्धवा प्रोक्ताः साध्यास्तु सेवकाः स्मृताः ।
सुसिद्धाः पोषकाः ज्ञेयाः शत्रवो घातकाः स्मृताः ॥
जपेन बन्धुः सिद्धः स्यात् सेवकोऽधिकसेवया ।
पुष्णाति पोषकोऽभीष्टं घातको नाशयेद् ध्रुवम् ॥
सिद्धसिद्धो यथोक्तेन द्विगुणात् सिद्धसाध्यकः ।

सिद्धः सुसिद्धोऽर्द्धजपात् सिद्धारिर्हन्ति बान्धवान् ॥
साध्यसिद्धो द्विगुणकः साध्यसाध्यो निरर्थकः ।
तत्सुसिद्धो द्विगुणजपात् साध्यारिर्हन्ति गोत्रजान् ॥
सुसिद्धसिद्धोऽर्द्धजपात्तत्साध्यो द्विगुणाधिकात् ।
तत्सुसिद्धो ग्रहादेव सुसिद्धोऽरिः स्वगोत्रहा ॥
अरिसिद्धः सुतान् हन्यादरिसाध्यस्तु कन्यकाः ।
तत्सुसिद्धस्तु पत्नीघ्नस्तदरिर्हन्ति साधकम् ॥

अकथहचक्र—अकथह चक्र निम्न प्रकार का होता है। यह चक्र अकडम अक्षर से प्रारम्भ होता है; अत: इसका नाम अकडम चक्र है। यह चक्र सोलह कोष्ठकों का होता है, जिसमें १, ३, ११, ९, २, ४, १२, १०, ६, ८, १६, १४, ५, ७, १५ एवं १३वें कोष्ठक में क्रमशः मातृकावर्णों को लिखा जाता है। इस चक्र का स्वरूप नीचे अंकित चित्र में प्रदर्शित है—

अकथह चक्र

१ अकथह	२ उ ड व	३ आ ख द	४ ऊ च फ
५ ओ ड व	६ ऌ झ म	७ औ ढ श	८ ॡ ञ य
९ ई घ न	१० ऋ ज भ	११ इ ग ध	१२ ऋ छ ब
१३ अः त स	१४ ऐ ड ल	१५ अं ण स	१६ ए ट र

इस चक्र में नाम के प्रथम अक्षर से मन्त्र के प्रथम अक्षर तक क्रमशः १ सिद्ध, २ साध्य, ३ सुसिद्ध एवं ४ अरि माना जाता है।

जिन ४ कोष्ठकों में साधक के नाम का प्रथमाक्षर हो, उन्हें सिद्धचतुष्टय कहा जाता है। प्रदक्षिणक्रम से उससे अगले ४ कोष्ठकों को साध्यचतुष्टय कहते हैं। उससे अगले चार कोष्ठकों को सुसिद्धचतुष्टय और अन्तिम चार कोष्ठकों को शत्रुचतुष्टय कहते हैं।

यदि साधक तथा मन्त्र इन दोनों के प्रथमाक्षर एक ही कोष्ठक में हों तो मन्त्र सिद्ध कहलाता है। साधक के नाम के प्रथमाक्षर वाले कोष्ठक से दूसरे में मन्त्र का प्रथमाक्षर हो तो सिद्धसाध्य कहा जाता है। उससे तीसरे में हो तो सिद्धसुसिद्ध और उससे चौथे कोष्ठक में मन्त्राक्षर हो तो मन्त्र को सिद्धारि कहते हैं।

नाम के प्रथमाक्षर वाले चार कोष्ठकों से अग्रिम कोष्ठकों में मन्त्र का प्रथमाक्षर हो तो जिस कोष्ठक में नामाक्षर हो, उसकी पंक्ति वाले कोष्ठक से प्रारम्भ करके पूर्ववत् गिनती करनी चाहिये। यहाँ प्रथम कोष्ठक में मन्त्राक्षर हो तो साध्यसिद्ध, द्वितीय कोष्ठक में हो तो साध्यसाध्य, तृतीय में हो तो साध्यसुसिद्ध एवं चतुर्थ कोष्ठक में हो तो मन्त्र को साध्यशत्रु समझा जाता है।

इसी भाँति यदि तीसरे तथा चौथे ४-४ कोष्ठकों में मन्त्र का प्रथमाक्षर हो तो पूर्वोक्त रीति से विचार करना चाहिये। तीसरे ४ कोष्ठकों के पहले, दूसरे, तीसरे एवं चौथे कोष्ठक में मन्त्राक्षर होने से क्रमशः सुसिद्धसिद्ध, सुसिद्धसाध्य, सुसिद्धसुसिद्ध तथा सुसिद्धशत्रु कहा जाता है। चौथे चारो कोष्ठकों के पहले, दूसरे, तीसरे तथा चौथे कोष्ठक में मन्त्राक्षर होने पर मन्त्र क्रमशः अरिसिद्ध, अरिसाध्य, अरिसुसिद्ध एवं अरिअरि कहा जाता है। इसके उपरान्त मन्त्र का विचार निम्न प्रकार से करना चाहिये—

सिद्ध अरि का प्रभाव—

१. सिद्धसिद्ध मन्त्र यथोक्त समय में अर्थात् निर्धारित संख्या में जप करने से सिद्ध होता है। सिद्धसाध्य उससे दूने समय में अर्थात् दूनी संख्या में जप से सिद्ध होते हैं। सिद्धसुसिद्ध मन्त्र निर्धारित संख्या से आधा जप करने में सिद्ध होता है; परन्तु सिद्धारि मन्त्र बान्धवों का नाशक होता है; अतः त्याज्य है।

२. साध्यसिद्ध दूनी संख्या में जप करने से सिद्ध होता है। साध्यसाध्य मन्त्र निरर्थक होता है। इससे कोई फल प्राप्त नहीं होता है। साध्यसुसिद्ध मन्त्र भी दूनी संख्या में जप करने से सिद्ध होता है; परन्तु साध्यारि मन्त्र अपने गोत्र के लोगों का नाशक होता है; अतः त्याज्य है।

३. सुसिद्धसिद्ध मन्त्र आधी संख्या में जप करने से, सुसिद्धसाध्य दूनी संख्या में जप करने से तथा सुसिद्धसुसिद्ध मन्त्र दीक्षामात्र से सिद्ध हो जाता है; परन्तु सुसिद्धारि मन्त्र कुटुम्बियों को नष्ट करता है; अतः त्याज्य है।

४. अरिसिद्ध मन्त्र पुत्र की, अरिसाध्य कन्या की, अरिसुसिद्ध पत्नी की तथा अरि-अरि मन्त्र स्वयं साधक की मृत्यु का कारण बनता है। अतः ऐसे मन्त्र सर्वथा त्याज्य हैं। उदाहरणस्वरूप देवदत्त कोई ऐसा मन्त्र ग्रहण करता है, जिसका प्रथमाक्षर 'ऐ' है।

उक्त चक्र में देवदत्त के नाम का प्रथमाक्षर 'द' दूसरे कोष्ठक में पड़ता है तथा मन्त्र का प्रथमाक्षर ऐ चौदहवें कोष्ठ में पड़ता है। इस प्रकार देवदत्त के नामाक्षर से मन्त्र प्रथमाक्षर सुसिद्धचतुष्टय के चतुर्थ कोष्ठक में पड़ेगी। अतः सुसिद्धारि होने से यह मन्त्र देवदत्त के लिये त्याज्य है।

तन्त्रान्तर के अनुसार सिद्धमन्त्र बान्धव कहलाता है। साध्यमन्त्र को सेवक माना जाता है। सुसिद्ध को पोषक माना जाता है। अरिमन्त्र घातक होता है।

जप से बन्धु सिद्ध होता है। अधिक सेवा से सेवक सिद्ध होता है। पोषक मन्त्र पुष्टि प्रदान करता है। घातक मन्त्र निश्चित रूप से विनाश करता है।

अथ वैरिमन्त्रपरित्यागप्रमाणमाह तन्त्रे—

गवां क्षीरे द्रोणमिते जपेन्मन्त्रशताष्टकम्।
पीत्वा क्षीरं जले तद्वत् समुच्चार्य त्यजेत्तथा।
अनेनैव विधानेन वैरिमन्त्राद् विमुच्यते॥
अरिमन्त्रं विदित्वा तु न पुनः प्रजपेच्च तत्।
सन्त्यज्य तद् देवतायास्तस्या अन्यं भजेन्मनुम्॥

द्रोणपरिमाणं यथा तन्त्रान्तरे—

पलद्वयन्तु प्रसृतिः कुडवं तच्चतुष्टयम्।
चतुर्भिः कुडवैः प्रस्थः प्रस्थाश्चत्वार आढकम्।
चतुर्भिराढकैर्द्रोणः कथितो मानवेदिभिः॥

प्रकारान्तरमाह रुद्रयामले—

वटपत्रे लिखित्वारिमन्त्रं स्रोतसि निक्षिपेत्।
एवं मन्त्रविमुक्तिः स्यादित्याह भगवान् शिवः॥

वैरिमन्त्र का त्याग—एक द्रोण गाय के दूध को १०८ मन्त्रजप से मन्त्रित करे। थोड़ा दूध पीकर शेष दूध को जल में छोड़ दे। इस विधान से वैरिमन्त्र का त्याग होता है। यह ज्ञात होने पर कि मन्त्र शत्रु है, उसका जप न करे। उसके देवता के अन्य मन्त्र का जप करे।

वैदिक तौल द्रोण का परिमाण इस प्रकार का है—२ पल = १ प्रसृति, चार प्रसृति = १ कुडव, ४ कुड़व = १ प्रस्थ, ४ प्रस्थ = १ आढक, ४ आढक = १ द्रोण = लगभग १० किलो। रुद्रयामल के अनुसार वटपत्र पर अरिमन्त्र लिखकर उसे जलधारा में प्रवाहित कर दे। इससे वैरिमन्त्र का परित्याग हो जाता है।

अकडमचक्रम्

रेखाद्वयं पूर्वपरेण कुर्यात्तन्मध्यतो याम्यकुबेरभेदात्।
महेशरक्षोऽधिपतिक्रमेण तिर्यक्तथा वायुहुताशनेन॥
अकारादिक्षकारान्तान् क्लीबहीनान् लिखेत्ततः।
ऋ ॠ वर्णद्वयं ऌ ॡ तद्धि क्लीबं प्रचक्षते॥
एकैकक्रमतो लेख्यान् मेषादिषु वृषान्तकान्।
गणयेत् क्रमशो भद्रे! नामादिवर्णपूर्वकान्।
मेषादितोऽपि मीनान्तं गणयेत् क्रमशः सुधीः॥
जप्तुः स्वनामतो मन्त्री यावन्मन्त्रादिमाक्षरम्।

रत्नावल्याम्—

> **द्वादशाख्ये राशिचक्रे कूटषण्डविवर्जितान् ।**
> **आदिहन्ताद् लिखेद्वर्णान् पुरतोयावदीश्वरम् ॥**
> **सिद्धसाध्यसुसिद्धारीन् पुनः सिद्धादयः पुनः ।**
> **नवैकपञ्चमे सिद्धः साध्यः षड्दशयुग्मके ॥**
> **सुसिद्धस्त्रिसप्तके रुद्रे वेदाष्टद्वादशे रिपुः ।**
> **एतत्ते कथितं देवि अकडमादिकमुत्तमम् ॥**

इदं तु गोपालविषयकमेव, 'गोपालेऽकडमः स्मृत' इति वचनात्। शिव-विषयेऽपि—

> **वैष्णवं राशिसंशुद्धं शैवञ्चाकडमं स्मृतम् ।**

इति यामलीयात्। तथा च वाराहीतन्त्रे—

> **ताराशुद्धिर्वैष्णवानां कोष्ठशुद्धिः शिवस्य च ।**
> **राशिशुद्धिस्त्रैपुरे च गोपालेऽकडमः स्मृतः ॥**

अकडम चक्र—अकडम चक्र निम्न प्रकार का होता है—

अकडम चक्र

अः ठ भ मीन / कुम्भ अं ट ब	अ क ड म मेष	आ ख ढ व वृष / मिथुन इ ग ङ के
औ ज फ क्ष कर्क		ई घ त ल मकर
धनु ओ झ प ह / वृश्चिक ऐ ज न स	ए छ घ ष तुला	उ ङ थ व सिंह / कन्या उ च द श

द्वादश दल के चक्र में नपुंसक वर्णों ऋ ॠ ऌ ॡ को छोड़कर 'अ' से 'ह' तक के सभी वर्णों को प्रदक्षिणक्रम से लिखे। इस चक्र में साधक के नाम के प्रथमाक्षर से मन्त्र के प्रथमाक्षर तक गिने। इस गणना से पता चलता है कि मन्त्र सिद्ध, साध्य, सुसिद्ध या अरि है।

साधक के नाम के प्रथमाक्षर वाले कोष्ठक से १, ५ तथा नवें कोष्ठक में पड़ने वाला मन्त्र सिद्ध; २, ६, १०वें कोष्ठक में पड़ने वाला मन्त्र साध्य; ३, ७, ११वें कोष्ठक

में पड़ने वाला मन्त्र सुसिद्ध और ४, ८, १२वें कोष्ठक में पड़ने वाला मन्त्र अरि होता है।

रत्नावली के अनुसार यह गोपालमन्त्रों के लिये होता है।

वाराहीतन्त्र के अनुसार वैष्णवों के लिये ताराशुद्धि, शैवों के लिये कोष्ठशुद्धि, त्रिपुरा के लिये राशिशुद्धि और गोपालमन्त्रों के लिये अकडमशुद्धि विचारणीय है।

ऋणि-धनिचक्रम

तद्यथा—

कोष्ठान्येकादशान्येव वेदेन पूरितानि च।
अकारादिहकारान्तान् लिखेत्कोष्ठेषु तत्त्ववित् ॥
प्रथमं पञ्चकोष्ठेषु ह्रस्वदीर्घक्रमेण तु।
द्वयं द्वयं लिखेत्तत्र विचारे खलु साधकः।
शेषेष्वेकैकशो वर्णान् क्रमशस्तु लिखेत् सुधीः ॥

तथा—

द्वौ द्वौ स्वरौ पञ्चसु कोष्ठकेषु शेषान् स्वरान् षट्सु षडेकमेकम्।
कादीन हशेषान् विलिखेत्ततोऽर्णान् एकैकमेकादशकोष्ठकेषु।
षट्काल - काल - वियदग्नि - समुद्र - वेद-
खाकाश - शून्य - दहनाःखलु साध्यवर्णाः।
युग्म - द्वि - पञ्च - वियदन्वर-षुक्-शशाङ्क-
व्योमाब्धि वेदशशिनः खलु साधकाणाः।
नामाज्झलादकठवाद् गजभुक्तशेषं
ज्ञात्वोभयोरधिकशेषमृणं धनं स्यात् ॥

अस्यार्थः—साध्यवर्णान् स्वरव्यञ्जनभेदेन पृथक्कृतानि षट्कालाद्यङ्कैर्गुणितानि कृत्वा तथा साधकनामाक्षराणि स्वरव्यञ्जनरूपेण पृथक् कृतान् युग्माद्यैरङ्कैर्गुणितान् कृत्वा अष्टसंख्याभिर्हत्वा उभयोः साध्यसाधकयोर्यदधिकं तदृणं यन्न्यूनं तद्धनम्।

एवं ज्ञात्वा मन्त्रं दद्यात्। मन्त्रश्चेदृणी भवति तदा मन्त्रः शुभदो भवति धनी चेन्न। तथा च तन्त्रान्तरे—

मन्त्रो यद्यधिकाङ्कः स्यात्तदा मन्त्रं जपेत् सुधीः।
समेऽपि च जपेन्मन्त्रं न जपेत्तु ऋणाधिके।
शून्ये मृत्युं विजानीयास्तस्माच्छून्यं परित्यजेत् ॥

ऋणाधिके धने।

तथा—

इन्द्रर्क्षनेत्ररविपञ्चदशर्त्तुवेदवह्न्यायुधाष्टनवभिर्गुणितांश्च साध्यान् ।
दिग्भूगिरिश्रुतिगजाग्निमुनीषुवेदषड्वह्निभिस्तु गुणितानथ साधकार्णान् ।

षट्कालेत्यादिकन्तु विष्णुविषयं रामार्च्चनचन्द्रिकाधृतत्वादिति केचित्। वस्तुतस्तु पूर्वस्यैव विवरणमिदम्। तथा च इन्द्रर्क्षनेत्र इत्याद्यभिधाय—

नामार्णकोष्ठांकमथाभिहन्यादेकादिरुद्राङ्कगतं क्रमेण। इति।

व्यक्तं हि रुद्रयामले—

साध्याङ्कान् साधाकाङ्कांश्च पूरयेद्ग्रहसंख्यया ।
गुणिते हृतेऽष्टाभिर्यच्छेषं जायते स्फुटम् ।
तदङ्कं कथयाम्यत्र एकादशगृहं स्थितम् ॥

इत्युक्त्वा षट्काल-काल इत्युक्तम्। तन्त्रार्णवे—

मन्त्रस्त्वृणी शुभफलोऽप्यशुभो धनी च तुल्यं यदा समफलः कथितो मुनीन्द्रैः।

अन्यत्र—

शून्ये मृत्युमवाप्नोति धने च विफलं भवेत् ।
ऋणे तु प्राप्तिमात्रेण सर्वसिद्धिस्तु जायते ॥

प्रकारान्तरम्—

नामाद्यक्षरमारभ्य यावन्मन्त्रादिमाक्षरम् ।
त्रिधा कृत्वा स्वरैर्भिन्नं तदन्यद्विपरीतकम् ।

अस्यार्थः—साधकनामाद्यक्षरतो गणनया यावन्मन्त्राद्यक्षरं तत्संख्यं त्रिधा कृत्वा सप्तभिर्हृत्वा अधिकं ऋणं शेषं धनं स्यात्। अन्यदिति मन्त्राद्यक्षरमारभ्य यावत् साधकनामाद्यक्षरं भवेत् तावत्संख्यां सप्तगुणं कृत्वा त्रिभिर्हरेत्। अन्यच्च पिङ्गलामते—

साध्यनामद्विगुणितं साधकेन समन्वितम् ।
अष्टाभिश्च हरेच्छेषं तदन्यद्विपरीतकम् ॥

अस्यार्थः—साध्यनाम स्वरव्यञ्जनभेदेन द्विगुणीकृत्य साधकनामाक्षरेण स्वर-व्यञ्जनभेदेन संयोज्य अष्टाभिर्हृत्वा ऋणं धनं ज्ञेयम्। अन्यदिति साधकनामाक्षरं स्वरव्यञ्जनभेदेन द्विगुणीकृत्य साध्याक्षरेण स्वरव्यञ्जनभेदेन संयोज्य अष्टाभि-र्हृत्वा अधिकं ऋणं शेषं धनं ज्ञेयम् ।

ऋणी-धनीचक्र—ऋणी-धनीचक्र निम्न प्रकार का होता है—

६	६	६	०	३	४	४	०	०	०	३
अ आ	इ ई	उ ऊ	ऋ ॠ	ऌ ॡ	ए	ऐ	ओ	औं	अं	अः
क	ख	ग	घ	ङ	च	छ	ज	झ	ञ	ट
ठ	ड	ढ	ण	त	थ	द	ध	न	प	फ
ब	भ	म	य	र	ल	व	श	ष	स	ह
२	२	५	०	०	२	१	०	४	४	१

इस चक्र के उपरि भाग में ६ ६ ६ ० ३ ४ ४ ० ० ० ३ साध्यांक हैं। निम्न भाग में २ २ ५ ० ० २ १ ० ४ ४ १ साधकांक हैं। इस चक्र से विचार करने के लिये मन्त्र के स्वर और व्यञ्जन वर्णों को अलग-अलग करके उनमें से प्रत्येक के अंक चक्र से ज्ञात करके जोड़ ले।

इसी प्रकार मन्त्र लेने वाले साधक के नामाक्षरों के स्वर और व्यंजनों से अंक जानकर जोड़ ले। अब दोनों योगफलों में अलग-अलग ८ से भाग दे। यदि मन्त्र का शेष अधिक हो तो वह ऋणी माना जाता है और यदि कम हो तो धनी माना जाता है। ऋणी मन्त्र से अतिशीघ्र सिद्धि मिलती है। दोनों का शेष बराबर हो तो भी मन्त्र उत्तम माना जाता है। धनी मन्त्र से सिद्धि देर से मिलती है। यदि शेष में शून्य रहे तो उस मन्त्र को मृत्युदायी सम-ना चाहिये। उदाहरणस्वरूप देवदत्त 'ऐं नमः भगवति वद वद वाग्देवी स्वाहा' मन्त्र को ग्रहण करना चाहता है तो ऋणी-धनी विचार निम्न प्रकार से होगा—देवदत्त के नामाक्षर के अंक—द् = १, ए = २, व् = १, अ = २, द् = १, अ = २, त् = ०, त् = ०, अ = २—कुल योग = ११।

मन्त्राक्षर के अंक— ऐ = ६, अँ = ०, न् = ०, अ = ६, म् = ६, अः = ३, व् = १, अ = ६, द् = ४, अ = ६, व् = ४, अ = ६, द् = ४, अ = ६, व = ४, आ = ६, ग् = ६, द् = ४ , ए = ६, व = ४, र = ६ स = ०, व् = ४, आ = ६, ह = ३, आ = ६—कुल योग = १११।

मन्त्र के स्वर-व्यंजनों का योग १११ हुआ। इसमें ८ का भाग देने से शेष ३ बचा। देवदत्त के नाम के स्वर-व्यंजनों का योग ११ है। उसमें ८ का भाग देने से भी शेष ३ बचा। मन्त्र उत्तम है; क्योंकि दोनों के शेष बराबर हैं। मन्त्र ग्रहण के योग्य हैं।

रुद्रयामल से भी इस विधि की पुष्टि होती है।

तन्त्रार्णव के अनुसार ऋणी मन्त्र शुभ फलप्रद होता है। धनी मन्त्र अशुभ होता है। शेष बराबर होने पर सममन्त्र होता है। यह उत्तम होता है। देर से फल मिलता है। अन्यत्र कहा गया है कि शेष शून्य होने से मृत्यु होती है। धनी होने पर विफल होता है। ऋणी मन्त्र प्राप्त होते ही सिद्धिप्रद होता है।

ऋणी-धनी ज्ञात करने का अन्य प्रकार यह है कि नाम के प्रथमाक्षर से मन्त्र के प्रथमाक्षर तक वर्णमालाक्रम से गणना करके ३ से गुणा करे। ७ से भाग दे। जो शेष बचे, उसे नामराशि समझना चाहिये।

इसी प्रकार मन्त्र के प्रथमाक्षर से नाम के प्रथमाक्षर तक गणना करके उसे गुणा करके ७ का भाग देने पर जो शेष बचे, उसे मन्त्रराशि कहते हैं।

पूर्वोक्त नियमानुसार अधिक राशि ऋणी तथा कम राशि धनी होता है; अत: ऋणी राशि के मन्त्र को ग्रहण करना उचित है। धनी राशि का मन्त्र त्याज्य है।

पिंगला के मत से स्वर तथा व्यंजन के रूप में मन्त्र के अक्षरों को अलग-अलग करके कुल संख्या को दुगुना कर दे। उसमें साधक के नामाक्षरों की संख्या जोड़ दे। दोनों के योगफल में ८ का भाग देने से जो शेष बचे, उसे मन्त्रराशि कहते हैं।

इसी प्रकार साधक के नाम के स्वर-व्यंजनों के योग को दुगुना करके उसमें मन्त्र के अक्षरों को जोड़ कर ८ का भाग देने से जो शेष बचे, उसे नामराशि समझे। यहाँ ऋणी तथा धनी का विचार पूर्वोक्त नियमानुसार करना चाहिये।

उदाहरण—देवदत्त नाम के स्वर-व्यंजनों का योग ९ है तथा ऐं नम: भगवति मन्त्र के स्वर-व्यंजनों का योग २६ है। मन्त्र के स्वर-व्यंजनों के योग को दुगुना कर देने पर ५२ हुआ। इसमें नामाक्षरों के योग को जोड़ने से ६१ हुआ। इसमें ८ का भाग देने पर ५ शेष रहा। यह मन्त्रराशि हुई।

इसी प्रकार नाम के स्वर-व्यंजनों के योग को दुगुना करने पर १८ हुआ। इसमें मन्त्राक्षर २६ जोड़ने से कुलयोग ४४ हुआ। इसमें ८ का भाग देने से शेष ४ बचा। अत: नामराशि ४ हुई।

यहाँ नामराशि से मन्त्रराशि की संख्या अधिक होने के कारण मन्त्र ऋणी है। अत: यह मन्त्र देवदत्त के लिये ग्राह्य है।

जो मन्त्र पूर्वजन्म में उपासना के समय होने वाले पाप के कारण साधक को अपना फल नहीं दे पाया हो तथा अपने द्वारा पापक्षय होने के समय साधक की आयु समाप्त हो गयी हो तो अन्य जन्म में वह मन्त्र साधक का ऋणी होता है। ऐसा मन्त्र साधक को अभीष्ट फल शीघ्र देता है।

यदि नामराशि तथा मन्त्रराशि के अंक समान हों तो उपासना करने से साधक को यथासमय फल मिलता है; परन्तु यदि मन्त्र धनी राशि का है तो वह या तो साधना करने पर ही फल देता है; अन्यथा निष्फल होता है।

नामग्रहणप्रकारमाह सनत्कुमारीये—

पितृमातृकृतं नाम त्यक्त्वा शर्मादिवेदकान् ।
श्रीवर्णञ्च ततो हित्वा चक्रेषु योजयेत् क्रमात् ॥

नामग्रहणप्रकारमाह पिङ्गलायाम्—

प्रसिद्धः यद्भवेन्नाम कं वास्य जन्मनाम च ।
यतीनां पुष्पपादेन गुरुणा यत् कृतं भवेत् ॥

तन्त्रान्तरे—

लोकप्रसिद्धमथवा मात्रा पित्रा तथा कृतम् ॥

रुद्रयामले—

सुप्तो जागर्त्ति येनासौ दूरस्थः प्रतिभाषते ।
वदत्यन्यमनस्कोऽपि तन्नाम ग्राह्यमेव च ॥

देवताभेदेन चक्रविचारस्यावश्यकता वाराहीतन्त्रे यामलादौ च—

ताराशुद्धिर्वैष्णवानां कोष्ठशुद्धिः शिवस्य च ।
राशिशुद्धिस्त्रैपुरे च गोपालेऽकडमः स्मृतः ॥
अकडमो रामचन्द्रे गणेशे हरचक्रकम् ।
कोष्ठचक्रं वराहस्य महालक्ष्म्याः कुलाकुलम् ॥
नामादिचक्रं सर्वेषां भूतचक्रं तथैव च ।
त्रैपुरं तारके चक्रे शुद्धं मन्त्रं जपेद्बुधः ॥

तथा—

वैष्णवं राशिसंशुद्धं शैवञ्चाकडमं स्मृतम् ।
कालिकायाश्च तारायास्ताराचक्रं शुभावहम् ॥
चण्डिकायास्तारकोष्ठे गोपालेऽकडमं स्मृतम् ।
हरचक्रे सर्वमन्त्रं धनाधिक्ये न चाश्रयेत् ॥
ऋणाधिक्ये शुभं विद्याद्धनाधिक्ये च नो विधिः ।
दोषान् संशोध्य गृह्णीयान्मध्यदेशोद्भवस्य च ॥
ऋणी मन्त्रः शुभफलो धनी मन्त्रोऽशुभप्रदः ।
तुल्यं यदा शुभफलं कथितो मुनिसत्तमैः ॥

अन्यत्रापि—

शून्ये मृत्युमवाप्नोति धने च विफलं भवेत् ।
ऋणे च प्राप्तिमात्रेण सर्वसिद्धिस्तु जायते ॥

नामग्रहण-प्रकार—पिंगला के अनुसार साधक के उसी नाम से विचार करना चाहिये, जिस नाम से वह प्रसिद्ध होता है अथवा जन्मराशि के नाम से ऋणी-धनी विचार करना चाहिये। यतियों का नाम गुरुप्रदत्त ही ग्राह्य है।

तन्त्रान्तर के अनुसार साधक का जो लोकप्रसिद्ध नाम है, वही ग्राह्य है अथवा माता-पिता के द्वारा दिया गया नाम ही ग्राह्य है।

रुद्रयामल के अनुसार सोया हुआ व्यक्ति जिस नाम से पुकारने पर जाग जाय, उसका वही नाम ग्राह्य है।

वाराहीतन्त्र के अनुसार देवता के अनुसार चक्र का विचार करना चाहिये। वैष्णवों का ताराशुद्धि एवं शैवों के लिये कोष्ठशुद्धि का विचार करना चाहिये। शाक्तों के लिये राशिशुद्धि विचारणीय है। गोपालमन्त्र के साधकों के लिये अकडम चक्र से विचार करना चाहिये। रामचन्द्र के मन्त्र के लिये अकडम चक्र से विचार करे। गणेशमन्त्र के लिये हरचक्र से विचार करना चाहिये। वराहमन्त्र के लिये कोष्ठचक्र से विचार करना चाहिये। महालक्ष्मी के मन्त्र के लिये कुलाकुलचक्र से विचार करना चाहिये। नामादि चक्र और भूतचक्र से सबों के लिये विचार करना चाहिये। त्रिपुरा के मन्त्र के लिये तारा-चक्र से विचार करना चाहिये। विद्वान् को चक्रशुद्ध मन्त्र ही जपना चाहिये। इसके अतिरिक्त वैष्णवों के लिये राशिशुद्धि एवं शैवों के लिये अकडम चक्र से विचार आवश्यक है। काली और तारामन्त्रों के लिये ताराचक्र से विचार करना चाहिये। चण्डिकामन्त्र के लिये ताराचक्र से, गोपालमन्त्र के लिये अकडम चक्र से एवं सभी मन्त्रों का विचार हर चक्र से करना चाहिये। धनी मन्त्र का आश्रय नहीं लिया जाय तो अच्छा है। ऋणी मन्त्र शुभ होता है, धनी विद्या ग्राह्य नहीं है। दोषों को संशोधित करके मध्य देश उद्भूत मन्त्र को ग्रहण करना चाहिये। ऋणी मन्त्र शुभ फलप्रद और धनी मन्त्र अशुभ-प्रदायक होता है। शेष तुल्य बराबर होने पर भी मन्त्र शुभ फलप्रद होता है—यह मुनिसत्तमों का वचन है। अन्यत्र भी कहा गया है कि शेष शून्य होने पर मृत्यु होती है। धनी मन्त्र-साधना विफल होती है। ऋणी मन्त्र प्राप्त होते ही सभी सिद्धियों का दाता होता है।

दीक्षाप्रकरणम्

गुरुर्दीक्षापूर्वदिने स्वशिष्यमभिमन्त्रयेत्।
दर्भशय्यां परिष्कृत्य शिष्यं तत्र निवेशयेत्॥
स्वापमन्त्रेण मन्त्रज्ञः शिशोः शिखां प्रबन्धयेत्।
तन्मन्त्रं स्वापसमये पठेद्वारत्रयं शिशुः॥
श्रीगुरोः पादुकां ध्यात्वा उपवासी जितेन्द्रियः।
तारो हिलिद्वयं शूलपाणये द्विठ ईरितम्॥

वारत्रयं पठित्वा तु उपवासी जितेन्द्रियः ।
श्रीगुरोः पादुकां ध्यात्वा शयीत कुशशायने ॥

मन्त्रान्तरम्—

वपमानस्य मन्त्रोऽयं शम्भुना परिकीर्त्तितः ।
नमो जय त्रिनेत्राय पिङ्गलाय महात्मने ।
रामाय विश्वरूपाय स्वप्नाधिपतये नमः ॥
स्वप्ने कथय मे तथ्यं सर्वकार्येष्वशेषतः ।
क्रियासिद्धिं विधास्यामि त्वत्प्रसादान्महेश्वर ॥
इति मन्त्रेण सच्छिष्यो देवं प्रार्थ्य स्वपेच्च वा ।
स्वप्ने शुभाशुभं दृष्टं पृच्छेत्प्रातः शिशुं गुरुः ॥
कन्यां छत्रं रथं दीपं प्रासादं कमलं नदीम् ।
कुञ्जरं वृषभं माल्यं समुद्रं फणिनं द्रुमम् ॥
पर्वतं तुरगं मेध्यमाममांसं सुरासवम् ।
एवमादीनि सर्वाणि दृष्ट्वा सिद्धिमवाप्नुयात् ॥

इति मन्त्रसिद्धिज्ञापनार्थं शिष्याभिमन्त्रणम् ।

दीक्षा-प्रकरण—दीक्षा से पूर्व जिस दिन दीक्षा होने वाली हो, उसके पहले दिन गुरु शिष्य को बुलावे और पवित्र कुशासन पर उसे बिठाकर 'ॐ हिलि हिलि शूलपाणये स्वाहा' निद्रामन्त्र से शिखाबन्धन करे।

शिष्य सोते समय इस मन्त्र का उच्चारण तीन बार करके उपवासी और जितेन्द्रिय रहकर श्रीगुरुपादुका का ध्यान करते हुए कुश की शय्या पर शयन करे। इसके लिये अन्य मन्त्र भी हैं। सोते समय शिष्य यह प्रार्थना करे—

नमो जय त्रिनेत्राय पिङ्गलाय महात्मने ।
रामाय विश्वरूपाय स्वप्नाधिपतये नमः ॥
स्वप्ने कथय मे तथ्यं सर्वकार्येष्वशेषता ।
क्रियासिद्धि विधास्यामि त्वत्प्रसादान्महेश्वर ॥

इस मन्त्र से प्रार्थना करके शिष्य शयन करे।

स्वप्न में शुभाशुभ दिखाई पड़ने पर शिष्य प्रातःकाल गुरु से उसके सम्बन्ध में पूछे।

स्वप्न में यदि हाथी, बैल, माला, समुद्र, सूर्य, सर्प, वृक्ष, पर्वत, अश्व, पवित्र द्रव्य, आम, मांस, सुरा, आसव आदि दिखाई पड़े तो सिद्धि मिलती है। मन्त्र-सिद्धिज्ञापन के लिये शिष्य का अभिमन्त्रण इस प्रकार किया जाता है।

दीक्षायां कालनिर्णयः

गौतमीये—

मन्त्रारम्भस्तु चैत्रे स्यात् समस्तपुरुषार्थदः ।
वैशाखे रत्नलाभः स्याज्ज्येष्ठे तु मरणं भवेत् ॥
आषाढे बन्धुनाशः स्यात् पूर्णायुः श्रावणे भवेत् ।
प्राणनाशो भवेद्भाद्रे आश्विने रत्नसञ्चयः ॥
कार्त्तिके मन्त्रसिद्धिः स्यान्मार्गशीर्षे तथा भवेत् ।
पौषे तु शत्रुपीडा स्यान्माघे मेधाविवर्द्धनम् ॥
फाल्गुने सर्वकामाः स्युर्मलमासं विवर्जयेत् ।

चैत्रे तु गोपालविषयं गौतमीये उक्तत्वात् ।

मधुमासे भवेद्दीक्षा दुःखाय मरणाय च ।

इति योगिनीतन्त्रात् नान्यत्र। तथा—

ज्येष्ठे मृत्युप्रदा विद्या आषाढे सुखसम्पदः ।

इति योगिनीहृदयादाषाढे श्रीविद्यायां न दोषः। तत्र मासः सौर एव।

सौरे मासि शुभा दीक्षा न चान्द्रे न च तारके ।

इति गौतमीयात् । वैशम्पायनसंहितायाम्—

मन्त्रस्यारम्भणं मेषे धनधान्यप्रदं भवेत् ।
वृषे मरणमाप्नोति मिथुनेऽपत्यनाशनम् ॥
कर्कटे मन्त्रसिद्धिः स्यात् सिंहे मेधाविनाशनम् ।
कन्या लक्ष्मीप्रदा नित्यं तुलायां सर्वसिद्धयः ॥
वृश्चिके स्वर्णलाभः स्याद्धनुर्मानविनाशकम् ।
मकरः पुण्यदः प्रोक्तः कुम्भो धनसमृद्धिदः ।
मीनो दुःखप्रदो नित्यमेवं मासविधिक्रमः ॥

दीक्षाकाल—गौतमीय तन्त्र में लिखा है कि चैत्र मास में दीक्षा लेने से पुरुषार्थ-लाभ, वैशाख में रत्नलाभ, ज्येष्ठ में मृत्यु, आषाढ़ में बन्धुनाश, श्रावण में पूर्णायु की प्राप्ति, भाद्रमास में प्राणनाश, आश्विन में रत्नसञ्चय, कार्तिक और मार्गशीर्ष में मन्त्रसिद्धि, पौष में शत्रु-पीड़न, माघ में मेधावृद्धि और फाल्गुन में दीक्षा लेने से सभी कामनाएँ पूर्ण होती हैं। मलमास में दीक्षा लेना मना है।

योगिनीतन्त्र में लिखा है कि चैत्र मास में केवल गोपालमन्त्र ग्राह्य है; अन्य मन्त्र ग्रहण करने से दुःख और मृत्युभय होता है। योगिनीहृदय तन्त्र के अनुसार ज्येष्ठ में विद्याग्रहण मृत्युप्रद और आषाढ़ में सुख-सम्पत्प्रद होता है। यहाँ पर सौरमास ग्राह्य है। गौतमीतन्त्र

के अनुसार सौरमास की दीक्षा शुभ होती है। चान्द्र और तारामास की दीक्षा शुभ नही होती।

वैशम्पायनसंहिता के अनुसार मेष में दीक्षा लेना धन-धान्यप्रद, वृष में मृत्यु, मिथुन में अपत्यनाश, कर्क में मन्त्रसिद्धि, सिंह में मेधानाश, कन्या में बुद्धिलाभ, तुला में सर्व-सिद्धि, वृश्चिक में स्वर्णलाभ, धनु में मानहानि, मकर में पुण्यलाभ, कुम्भ में धन- समृद्धि और मीन में मन्त्रग्रहण करने से दुःख की प्राप्ति होती है। इसके साथ मासक्रम भी विचारणीय है।

दीक्षायां वारनिर्णयः

रविवारे भवेद्वित्तं सोमे शान्तिर्भवेत् किल ।
आयुरङ्गारको हन्ति तत्र दीक्षां विवर्जयेत् ।।
बुधे सौन्दर्यमाप्नोति ज्ञानं स्यात्तु वृहस्पतौ ।
शुक्रे सौभाग्यमाप्नोति यशोहानिः शनैश्चरे ।।

दीक्षा के लिये वारनिर्णय—रविवार में दीक्षा लेने से धनलाभ, सोमवार में शान्ति, मंगल में आयुनाश, बुध में सौन्दर्यलाभ, वृहस्पति में ज्ञानलाभ, शुक्र में सौभाग्यलाभ और शनिवार में दीक्षा लेने से यश की हानि होती है।

दीक्षायां तिथिनिर्णयः

आगमकल्पद्रुमे—

प्रतिपदि कृता दीक्षा ज्ञाननाशकरी मता ।
द्वितीयायां भवेज्ज्ञानं तृतीयायां शुचिर्भवेत् ।।
चतुर्थ्यां वित्तनाशः स्यात् पञ्चम्यां बुद्धिवर्द्धनम् ।
षष्ठ्यां ज्ञानक्षयः सौख्यं लभते सप्तमीदिने ।।
अष्टम्यां बुद्धिनाशः स्यान्नवम्यां वपुषः क्षयः ।
दशम्यां राजसौभाग्यमेकादश्यां शुचिर्भवेत् ।
द्वादश्यां सर्वशुद्धिः स्यात् त्रयोदश्यां दरिद्रता ।।
तिर्यग्योनिश्चतुर्दश्यां हानिर्मासावसानके ।
पक्षान्ते धर्मवृद्धिः स्यादस्वाध्यायं विवर्जयेत् ।।

अस्वाध्यायमाह—

सन्ध्यागर्जितनिर्घोषभूकम्पोल्कानिपातनम् ।
एतानन्यांश्च दिवसान् श्रुत्युक्तान् परिवर्जयेत् ।।
द्वितीया पञ्चमी चैव षष्ठी चैव विशेषतः ।
द्वादश्यामपि कर्त्तव्यं त्रयोदश्यामथापि वा ।।

इति यत् षष्ठीत्रयोदशविधानं तद्विष्णुविषयं रामार्चनचन्द्रिकाधृतत्वात्।

पञ्चमी सप्तमी षष्ठी द्वितीया पूर्णिमा तथा ।
त्रयोदशी च दशमी प्रशस्ता सर्वकमदा ॥

इति सनत्कुमारवचनात् षष्ठीविधानमपि। शिवविषये दशमीसप्तम्योर्निषेधमाह—

शुक्लपक्षस्य दशमी सप्तमी च विशेषतः ।
निन्द्या सदैव षष्ठी स्यादिति शैवागमान्तरे ॥

दीक्षा की तिथि—आगमकल्पद्रुम के अनुसार प्रतिपदा में दीक्षा लेने से ज्ञान का नाश, द्वितीया में ज्ञान का लाभ, तृतीया में पवित्रता, चतुर्थी में धन का नाश, पञ्चमी में बुद्धि की वृद्धि, षष्ठी में ज्ञान का क्षय, सप्तमी में सुख, अष्टमी में बुद्धि का नाश, नवमी में देह का क्षय, दशमी में राज्यप्राप्ति का सौभाग्य, एकादशी में पवित्रता का लाभ, द्वादशी में सर्वशुद्धि, त्रयोदशी में दरिद्रता, चतुर्दशी में तिर्यक् योनित्व की प्राप्ति एवं अमावस्या में दीक्षा लेने से अनिष्ट होता है। पूर्णिमा में धर्मबुद्धि होती है; परन्तु सन्ध्यागर्जन, जलदगर्जन, भूकम्प, उल्कापात जिस दिन हो और जो दिन श्रुति में निषिद्ध बताये गये हैं, उसमें दीक्षा न ग्रहण करे।

रामार्चनचन्द्रिका के अनुसार पञ्चमी, सप्तमी, षष्ठी, द्वितीया, पूर्णिमा, त्रयोदशी और दशमी—ये सभी तिथियाँ दीक्षा के लिये प्रशस्त और सर्वकामप्रद हैं। इनमें केवल विष्णुमन्त्र ग्रहण करे।

सनत्कुमारतन्त्र के अनुसार षष्ठी में शिवमन्त्र ग्रहण करने में दोष नहीं है। शैवागम के वचनानुसार शुक्ल पक्ष की द्वादशी, सप्तमी और षष्ठी निन्दनीय है।

दीक्षायां नक्षत्रनिर्णयः

अश्विन्यां सुखमाप्नोति भरण्यां मरणं ध्रुवम् ।
कृत्तिकायां भवेद्दुःखी रोहिण्यां वाक्पतिर्भवेत् ॥
मृगशीर्षे सुखावाप्तिरार्द्रायां बन्धुनाशनम् ।
पुनर्वसौ धनाढ्यः स्यात् पुष्ये शत्रुविनाशनम् ॥
अश्लेषायां भवेन्मृत्युर्मघायां दुःखमोचनम् ।
सौन्दर्यं पूर्वफल्गुन्यां प्राप्नोति च न संशयः ॥
ज्ञानञ्चोत्तरफल्गुन्यां हस्तायाञ्च धनी भवेत् ।
चित्रायां ज्ञानसिद्धिः स्यात् स्वात्यां शत्रुविनाशनम् ॥
विशाखायां सुखं चानुराधायां बन्धुवर्द्धनम् ।
ज्येष्ठायां सुतहानिः स्यान्मूलायां कीर्त्तिवर्द्धनम् ॥
पूर्वाषाढोत्तराषाढे भवेतां कीर्त्तिदायिके ।
श्रवणायां भवेद्दुःखी धनिष्ठायां दरिद्रता ॥

बुद्धिः शतभिषायां स्यात्पूर्वभाद्रे सुखी भवेत् ।
सौख्यञ्चोत्तरभाद्रे च रेवत्यां कीर्त्तिवर्द्धनम् ।।

आर्द्राकृत्तिकयोर्निषेधस्तु शिववह्नीतरविषये; तथा च—

आर्द्रायां कृत्तिकायाञ्च मन्त्रारम्भः प्रशस्यते ।
यदीशस्य कृशानोर्वा मन्त्रारम्भो यथाक्रमम् ।।

तन्त्रान्तरे—

अश्विनी-भरणी-स्वाती-विशाखाहस्तभेषु च ।
ज्येष्ठोत्तरात्रयेष्वेवं कुर्यान्मन्त्राभिषेचनम् ।।

इति ज्येष्ठाभरण्योर्यद्विधानं तद्रामविषयमगस्त्यसंहितोक्तत्वात् ।

दीक्षा में नक्षत्रनिर्णय—अश्विनी नक्षत्र में दीक्षा लेने से सुख, भरणी में मृत्यु, कृत्तिका में दुःख, रोहणी में वाक्पतित्व, मृगसिरा में सुखप्राप्ति, आर्द्रा में बन्धुनाश, पुनर्वसु में धन-सम्पत्तिप्राप्ति, पुष्य में शत्रुनाश, आश्लेषा में मृत्यु, मघा में दुःखनाश और पूर्वाफाल्गुनी में सौन्दर्यलाभ होता है।

इसी प्रकार उत्तराफाल्गुनी में दीक्षा लेने से ज्ञानप्राप्ति, हस्त में धनप्राप्ति, स्वाती में शत्रुनाश, विशाखा में सुखप्राप्ति, अनुराधा में बन्धुवृद्धि, ज्येष्ठा में सुतहानि, मूल में कीर्तिवृद्धि, पूर्वाषाढ और उत्तराषाढ में कीर्ति-प्राप्ति, श्रवण में दुःख, धनिष्ठा में दरिद्रता, शतभिषा में ज्ञान, पूर्वभाद्र में सुख और रेवती में कीर्तिलाभ होता है; किन्तु शिव और वह्निमन्त्र लेने में आर्द्रा और कृत्तिका दोषावह नहीं होते।

आर्द्रा और कृत्तिका में मन्त्रारम्भ प्रशस्त होता है। यदि इन दोनों नक्षत्रों में शिव और अग्निमन्त्र को ग्रहण किया जाय तो उसमें कोई दोष नहीं होता।

तन्त्रान्तर-वचनानुसार अश्विनी, भरणी, स्वाती, विशाखा, हस्त, ज्येष्ठा और तीनों उत्तरा में मन्त्राभिषेक करने में कोई दोष नहीं है।

अगस्त्यसंहिता के अनुसार ज्येष्ठा और भरणी नक्षत्र में राममन्त्र ग्रहण करने मे कोई दोष नहीं है। इन नक्षत्रों में राममन्त्र ग्रहण किये जा सकते हैं।

योगनिर्णयः

विश्वसारे—

शुभः सिद्धस्तथायुष्मान् ध्रुवयोगस्ततः परम् ।
प्रीतिः सौभाग्ययोगश्च बुद्धियोगस्ततः परम् ।
हर्षणश्च तथा योगः सर्वतन्त्रे शुभावहाः ।।

रत्नावल्याम्—

योगाः स्युः प्रीतिरायुष्मान्सौभाग्यः शोभनो धृतिः।
बुद्धिर्ध्रुवः सुकर्मा च साध्यः शुक्रश्च हर्षणः।
वरीयांश्च शिवः सिद्धो ब्रह्म ऐन्द्रश्च षोडश ॥

दीक्षा में योगनिर्णय—विश्वसारतन्त्र के अनुसार दीक्षा के लिये शुभ योग सिद्ध, आयुष्मान, ध्रुव, प्रीति, सौभाग्य, बुद्धि और हर्षण हैं। रत्नावलीतन्त्र के अनुसार १६ योग प्रशस्त हैं। उनमें १ प्रीति, २ आयुष्मान, ३ शोभन, ४ धृति, ५ वृद्धि, ६ ध्रुव, ७ सुकर्मा, ८ साध्य, ९ शुक्र, १० हर्षण, ११ वरीयान, १२ शिव, १३ ब्रह्म, १४ सिद्ध, १५ सौभाग्य, १६ इन्द्र श्रेष्ठ हैं।

करणनिर्णयः

वव-बालव-कौलव-तैतिला वणिजस्तदनन्तरम्।
करणानि शुभान्येव सर्वतन्त्रेषु भाषितम् ॥

दीक्षा के लिय करण—दीक्षा के लिये शुभ करण ५ हैं; जो १ वव, २ वालव, ३ कौलव, ४ तैतिल, ५ वणिज हैं।

लग्ननिर्णयः

वृषे सिंहे च कन्यायां धनुर्मीनाख्यलग्नके।
चन्द्रतारानुकूले च कुर्याद्दीक्षाप्रवर्त्तनम् ॥

तथा—

स्थिरलग्नं विष्णुमन्त्रे शिवमन्त्रे चरः शुभम्।
द्विस्वभावस्थितं लग्नं शक्तिमन्त्रे प्रशस्यते ॥

अगस्त्यसंहितायाम्—

त्रिषडायगताः पापाः शुभाः केन्द्रत्रिकोणगाः।
दीक्षायास्तु शुभाः सर्वे वक्रस्थाः सर्वनाशकाः ॥

दीक्षा-लग्न—वृष, सिंह, कन्या, धनु, मीन लग्न में चन्द्र-तारा के अनुकूल होने पर दीक्षा होनी चाहिये। विष्णुमन्त्र के सम्बन्ध में स्थिर लग्न अर्थात् वृष, सिंह, वृश्चिक और कुम्भ प्रशस्त है। शिवमन्त्र के लिये चर लग्न; यथा—मेष, कर्क, तुला और मकर श्रेष्ठ हैं। शक्तिमन्त्र के लिये द्वयात्मक लग्न अर्थात् मिथुन, कन्या, धनु, मीन शुभ हैं।

अगस्त्यसंहिता के अनुसार लग्न से तृतीय, षष्ठ और एकादश स्थान में पापग्रह तथा लग्न, चतुर्थ, सप्तम, दशम, नवम और पञ्चम स्थान में शुभग्रह होने पर मन्त्र लेना चाहिये; किन्तु वक्री ग्रह दीक्षा के लिये अनिष्टकारी हैं।

पक्षनिर्णयः

शुक्लपक्षे शुभा दीक्षा कृष्णेऽप्यापञ्चमाद्दिनात् ।

अगस्त्यसंहितायाम्—

शुक्लपक्षे तु कृष्णे वा दीक्षा सर्वत्र शोभना ।

कालोत्तरे तु—भूतिकामैः सिते सदा मुक्तिकामैः कृष्णपक्षे इति शेषः। निषिद्धमासेषु तत्तद्विशेषो मुनिभिरुदितः। रत्नावल्याम्—

षष्ठी भाद्रपदे मासि दर्शे कृष्णाचतुर्दशी ।
कार्त्तिके नवमी शुक्ला मार्गे शुक्ला तृतीयका ॥
पौषे तु नवमी शुक्ला माघे शुक्ला चतुर्थिका ।
फाल्गुने नवमी शुक्ला चैत्रे कामचतुर्दशी ॥

त्रयोदशीति केचित् ।

वैशाखे चाक्षया चैव ज्येष्ठे दशहरा तिथिः ।
आषाढे पञ्चमी शुक्ला श्रावणे कृष्णपञ्चमी ॥
एतानि देवपर्वाणि तीर्थकोटिफलं लभेत् ।
अत्र दीक्षा प्रकर्तव्या न मासञ्च परीक्षयेत् ॥
न वारं न च नक्षत्रं न तिथ्यादिकदूषणम् ।
न योगकरणञ्चैव शङ्करेण च भाषितम् ॥

अन्यच्च मतम्—

चैत्रे त्रयोदशी शुक्ला वैशाखैकादशी सिता ।
ज्येष्ठे चतुर्दशी कृष्णा आषाढे नागपञ्चमी ॥
श्रावणैकादशी भाद्रे रोहिणीसहिताष्टमी ।
आश्विने च महापुण्या महाष्टम्यप्यभीष्टदा ॥
कार्त्तिके नवमी शुक्ला मार्गशीर्षे तथा सिता ।
षष्ठी चतुर्दशी पौषे माघेऽप्येकादशी सिता ।
फाल्गुने च सिता षष्ठी चेति कालविनिर्णयः ॥

दीक्षापक्ष—शुक्ल पक्ष की दीक्षा शुभ होती है और कृष्ण पक्ष में पञ्चमी तक दीक्षा ग्राह्य है। अगस्त्यसंहिता के अनुसार शुक्ल या कृष्ण पक्ष दोनों में दीक्षा शुभ होती है। कालोत्तरतन्त्र के अनुसार सम्पत्ति की कामना से शुक्ल पक्ष की और मुक्ति की कामना से कृष्ण पक्ष की दीक्षा प्रशस्त होती है।

रत्नावलीतन्त्र के मत से भाद्रमास की षष्ठी, आश्विन की कृष्णचर्तुदशी, कार्तिक की शुक्ला नवमी, मार्गशीर्ष की तृतीया, पौष की शुक्ला नवमी, माघ की शुक्ला चतुर्थी,

फाल्गुन की शुक्ला नवमी, चैत्र की कामचर्तुदशी, वैशाख की अक्षय तृतीया, ज्येष्ठ का दशहरा, आषाढ़ की शुक्ला पञ्चमी और श्रावण की कृष्ण पञ्चमी में मन्त्र लेना तीर्थस्थान की दीक्षा के समान कोटिगुना फलदायी होता है।

इन देवपर्वों में मास, तिथि, वार, योग, करण और नक्षत्रादि का कोई विचार करना अपेक्षित नहीं है।

अन्य मत से चैत्र शुक्ला त्रयोदशी, वैशाख शुक्ला एकादशी, ज्येष्ठ चतुर्दशी कृष्ण, आषाढ़ की नागपञ्चमी, श्रावण की एकादशी, भाद्र की रोहिणीयुक्ता अष्टमी, आश्विन की महापुण्यदा इष्टदा महाष्टमी, कार्तिक शुक्ला नवमी, मार्गशीर्ष शुक्ला षष्ठी, पौष की शुक्ला चतुर्दशी, माघ शुक्ला एकादशी एवं फाल्गुन शुक्ला षष्ठी में कालगणना आवश्यक नहीं है।

योगिनीतन्त्रे—

अयने विषुवे चैव ग्रहणे चन्द्रसूर्ययोः।
रविसंक्रान्तिदिवसे युगाद्यायां सुरेश्वरि॥
मन्वन्तरासु सर्वासु महापूजादिनेषु च।
चतुर्थी पञ्चमी चैव चतुर्दश्यष्टमी तथा।
तिथयः शुभदाः प्रोक्ता दीक्षाग्रहणकर्मणि॥

इत्यादिवचनाच्चतुर्दश्यष्टमीति शक्तिविषयम्। चतुर्थीति गणेशविषयं तत्तत्कल्पोक्तत्वात्।

निन्दितेष्वपि मासेषु दीक्षोक्ता ग्रहणे शुभा।
सूर्यग्रहणकालस्य समानो नास्ति भूतले॥
विशेषतो महादेवि दीक्षाग्रहणकर्मणि।
तत्र यद्यत्कृतं सर्वमनन्तफलदं भवेत्॥
रविसंक्रमणे चैव सूर्यस्य ग्रहणे तथा।
तत्र लग्नादिकं किञ्चिन्न विचार्यं कथञ्चन।
रविसंक्रमणे चैव नान्यदन्वेषितं भवेत्।
न वारतिथिमासादिशोधनं सूर्यपर्वणि॥

एवं चन्द्रग्रहणेऽपि। तथा च रुद्रयामले—

न कुर्यात् शाक्तिकीं दीक्षामुपरागे विभावसौ।
न कुर्याद्वैष्णवीं तान्तु यदि चन्द्रमसो ग्रहः॥

एतच्च गोपाल-श्रीविद्येतरविषयम्।

अन्येषु पर्वयोगेषु ग्रहणे चन्द्रसूर्ययोः ।

इति गौतमीयात् ।

प्रशस्ता सकला दीक्षा स्व-स्ववारे तदा भवेत् ।
सूर्यग्रहणकाले तु नान्यदन्वेषितं भवेत् ॥

इति योगिनीहृदयाच्च। तारादौ तु विशेषो यथा—

दीक्षाकालं प्रवक्ष्यामि नीलतन्त्रानुसारतः ।
कृष्णपक्षस्य चाष्टम्यां शुभे लग्ने शुभे क्षणे ॥
पूर्वभाद्रपदायुग्मे मित्रतारादिसंयुते ।
अथवाप्यनुराधायां रेवत्यां वा प्रशस्यते ॥
जानीयाच्छोभनं कालं मन्त्रस्य ग्रहणं प्रति ।
ईषे चैव विशेषेण कार्त्तिके च विशेषतः ॥

योगिनीतन्त्र के मत से उत्तरायण और दक्षिणायनादि संक्रांति, चन्द्र-सूर्यग्रहण, युगाद्या और मन्वन्तरा तिथि तथा पूजा के दिनों में दीक्षाकार्य प्रशस्त होता है। निन्दित मास में भी सूर्यग्रहण यदि हो तो उस समय दीक्षा लेना श्रेष्ठ होता है। सूर्य और चन्द्रग्रहण के समय दीक्षा लेने में लग्नादि का कोई विचार नहीं करना पड़ता। सूर्यग्रहण काल के समान कोई दूसरा समय भूतल पर नहीं है। यह दीक्षा के लिये सर्वोत्तम है। ग्रहणकाल में जो जपादि होता है, वह फलप्रद होता है। इसी के समान चन्द्रग्रहण के समय भी दीक्षा का फल होता है।

रुद्रयामल के मत से सूर्यग्रहणकाल में शक्तिदीक्षा और चन्द्रग्रहणकाल में विष्णु-दीक्षा निषिद्ध है। यह निषेध श्रीविद्या और गोपाल को छोड़कर अन्य देवताओं के सम्बन्ध में लागू होता है। गौतमीतन्त्र के अनुसार सभी दीक्षा अपने-अपने वारों में प्रशस्त हैं।

तारामन्त्र की दीक्षा में विशेषता है। नीलतन्त्र के अनुसार तारामन्त्र की दीक्षा के विषय में कृष्णाष्टमी तिथि, शुभ लग्न, पूर्वभाद्रपद नक्षत्र और मित्र तारा को शुभ माना जाता है। तारामन्त्र के लिये अनुराधा और रेवती नक्षत्र तथा आश्विन और कार्तिक मास विशेष प्रशस्त हैं। मन्त्र-ग्रहण शुभकाल में करना चाहिये।

सूर्यग्रहणे विशेषमाह रत्नावलीधृतयामले—

श्रीपरा-कालिबीजानि लोपादौर्गश्च यो मनुः ।
सूर्यस्य ग्रहणे लब्धो नृणां मुक्तिफलप्रदः ॥
अमावस्या सोमवारे भौमवारे चतुर्दशी ।
सप्तमी रविवारे च सूर्यपर्वशतैः समाः ॥

कुलार्णवे—

सप्तमी रविवारे च सोमे दर्शस्तथैव च ।
चतुर्थी कुजवारे च अष्टमी च वृहस्पतौ ।
देवपर्वसमा ज्ञेया तासु दीक्षां समाचरेत् ॥

यामले—

पुण्यतीर्थे कुरुक्षेत्रे देवीपीठचतुष्टये ।
प्रयागे श्रीगिरौ काश्यां कालाकालं न शोधयेत् ॥

विष्णुयामले—

देवीबोधं समारभ्य यावत् स्यान्नवमी तिथिः ।
कृता तासु बुधैर्दीक्षा सर्वाभीष्टफलप्रदा ॥
शुक्लपक्षे विशेषेण तत्रापि तिथिरष्टमी ।
तत्रापि शारदी दुर्गा यत्र देवी गृहे गृहे ।
तत्र दीक्षा प्रकर्त्तव्या मासर्क्षादीन् न शोधयेत् ॥

तथा—

बोधने चैव दुर्गायाः कालाकालं न शोधयेत् ।
अशोकाख्याष्टमी यत्र रामाख्या नवमी तथा ॥
लग्ने वाप्यथवाऽलग्ने यत्र तत्र तिथावपि ।
गुरोराज्ञानुरूपेण दीक्षा कार्या विशेषतः ।
चतुर्थ्यङ्गारवारे च दिवसे त्रिदिवस्पृशि ।
तत्र लग्नादिकं किञ्चिन्न विचार्यं कथञ्चन ॥

समयातन्त्रे—

युगाद्यायां जन्मदिने विवाहदिवसे तथा ।
विषुवायनयोर्द्वन्द्वे नैव किञ्चिद्विचारयेत् ॥

तथा—

शिष्यानाहूय गुरुणा कृपया यदि दीयते ।
तदा लग्नादिकं किञ्चिन्न विचार्यं कदाचन ॥
सर्वे वारा ग्रहाः सर्वे नक्षत्राणि च राशयः ।
यस्मिन्नहनि मन्त्रज्ञो गुरुः सर्वे शुभावहाः ॥

योगिनीतन्त्रे—

ग्रहणे च महातीर्थे नास्ति कालस्य निर्णयः ॥

यामल के अनुसार सूर्यग्रहण के समय 'श्रीं' 'ह्रीं' 'क्लीं' मन्त्र, लोपामन्त्र और दुर्गामन्त्र ग्रहण करने से मोक्ष-लाभ होता है। सोमवारी अमावस्या, भौमवारी चतुर्दशी, रविवार की सप्तमी में मन्त्र-ग्रहण का फल सौ सूर्यपर्वों के समान होता है।

कुलार्णवतन्त्र का मत है कि रविवार में सप्तमी, सोमवार में अमावस्या, मंगलवार में चतुर्थी और बृहस्पतिवार में अष्टमी तिथि देवपर्व के समान होती है। अत: इसमें दीक्षा ग्रहण करना चाहिये।

रुद्रयामल के अनुसार पुण्यक्षेत्र, कुरुक्षेत्र, चारो देवीपीठ, प्रयाग, श्रीशैल और काशी में कालाकाल का विचार नहीं किया जाता है।

विष्णुयामल में लिखा है कि देवीबोधन के समय प्रतिपदा से नवमी तक की किसी भी तिथि में दीक्षा लेना अभीष्ट-प्रदायक होता है। यह काल शुक्ल पक्ष मे होना चाहिये और उसमें भी अष्टमी अतिविशिष्ट है। इसमें भी शारदीय नवरात्र सर्वश्रेष्ठ है, जिसमें दुर्गादेवी घर-घर में रहती हैं। इस समय दीक्षा लेने में मास-नक्षत्र आदि का विचार अनावश्यक है।

दुर्गाबोधन के समय कालाकाल-शोधन अपेक्षित नहीं है। अशोकाष्टमी, रामनवमी, लग्न या विना लग्न के जिस किसी तिथि में गुरु-आज्ञारूप में दीक्षाकार्य होना चाहिये। भौमवारी चतुर्थी से लेकर अगले तीन दिनों तक दीक्षा के लिये लग्नादि का विचार कदापि नहीं करना चाहिये।

समयातन्त्र के अनुसार युगादि तिथि, जन्मदिवस, विवाहदिवस, दोनों विषुवायनों अर्थात् उत्तरायन-दक्षिणायन में कुछ भी विचारणीय नहीं है। समयातन्त्र में लिखा है कि गुरुदेव शिष्य को बुलाकर कृपापूर्वक स्वेच्छा से जब भी मन्त्र प्रदान करें, तब लग्नादि के विचार की अपेक्षा नहीं रहती। ऐसे समय में वार-ग्रह-नक्षत्र और राशि आदि सभी शुभदायक हो जाते हैं। योगिनीतन्त्र के अनुसार ग्रहण-काल और महातीर्थ में काल-निर्णय आवश्यक नहीं है।

अथ वक्ष्यामि दीक्षाया: स्थानं तन्त्रानुसारत: ।
गोशालायां गुरोर्गेहे देवागारे च कानने ।
पुण्यक्षेत्रे तथोद्याने नदीतीरे च मन्त्रवित् ।।
धात्री बिल्वसमीपे च पर्वताग्रे गुहासु च ।
गङ्गायास्तु तटे वापि कोटिकोटिगुणं भवेत् ।।

निषिद्धस्थानमाह—

गयायां भास्करक्षेत्रे विरजे चन्द्रपर्वते ।
चटुले च मतङ्गे च तथा कन्याश्रमेषु च ।

न गृह्णीयात्ततो दीक्षां तीर्थेष्वेतेषु पार्वति ॥

वाराहीतन्त्रे—

शुक्रोऽस्तो यदि वा वृद्धो गुर्वादित्यो भवेद्यदि ।
मेष-वृश्चिक-सिंहेषु तदा दोषो न विद्यते ॥

महाविद्यासु सर्वासु कालादिविचारो नास्ति; तदुक्तं मुण्डमालातन्त्रे—

कालादिशोधनं नास्ति न चामित्रादिदूषणम् ॥

दीक्षा-स्थान—गोशाला, गुरुगृह, देवमन्दिर, कानन, पुण्यक्षेत्र, उद्यान, नदी-तट, आमला और बिल्ववृक्ष के समीप, पर्वत के आगे, गह्वर और गंगातट में दीक्षा कोटिगुणा फल देती है। गया, भास्कर क्षेत्र, कोणार्क, विरजातीर्थ, चन्द्रशेखर पर्वत, चटगाँव, मातंगदेश और कामाख्या में दीक्षा निषिद्ध है।

वाराहीतन्त्र के अनुसार शुक्रास्त रहने पर, गुरु के वृद्ध होने पर भी मेष, वृश्चिक और सिंह लग्न में दीक्षा लेने में कोई दोष नहीं है।

मुण्डमालातन्त्र के अनुसार महाविद्याओं के मन्त्रग्रहण में कालादि और अरि-मित्रादि दोषों का विचार अपेक्षित नहीं है।

मालानिर्णयः

सनत्कुमारसंहितायां—

तर्जनी मध्यमानामा कनिष्ठा चेति ताः क्रमात् ।
तिस्रोऽङ्गुल्यस्त्रिपर्वाणो मध्यमा चैकपर्विका ।
पर्वद्वयं मध्यमायां मेरुत्वेनोपकल्पयेत् ॥

तत्र क्रममाह सनत्कुमारसंहितायाम्—

अनामा-मध्यमारभ्य कनिष्ठादित एव च ।
तर्जनीमूलपर्यन्तं दशपर्वसु सञ्जपेत् ॥

तथा—

अनामामूलमारभ्य कनिष्ठादित एव च ।
तर्जनीमध्यपर्यन्तमष्टपर्वसु सञ्जपेत् ॥

एतद्वचनन्तु अष्टोत्तरशतविषयं विष्णुविषयञ्च ।

माला-निर्णय—सनत्कुमारसंहिता के अनुसार तर्जनी, मध्यमा, अनामिका, कनिष्ठा के क्रम से जप करे। तीनों अंगुलियों के तीन पर्व और मध्यमा के एक पर्व से जप करना चाहिये। मध्यमा के दो पर्व को मेरु माने और उनका लंघन न करे। इसका क्रम इस प्रकार का है कि अनामिका के मध्य पर्व से लेकर कनिष्ठादि होते हुए तर्जनी के मूल तक दस

पर्वों में जप करे। विष्णुमन्त्र के जप में अनामिकामूल से प्रारम्भ करके कनिष्ठापर्वो पर होते हुए तर्जनी मध्य पर्व तक आठ पर्वो पर जप करे। यह एक सौ आठ मन्त्रजप से सम्बन्धित है। मुण्डमालातन्त्र में इसे ही करमाला बताया गया है। यदि अष्टोत्तर शत जप करना हो तो उक्त क्रम में सौ संख्या पूर्ण होने पर अनामा के मूल से प्रारम्भ करके कनिष्ठादि क्रम से तर्जनी के मध्य पर्व तक आठ पर्वो में जप करे। मध्यमा के शेष दो पर्वो को मेरु माने।

शक्तिविषये पुनः—

अनामिकात्रयं पर्व कनिष्ठा च त्रिपर्विका ।
मध्यमायाश्च त्रितयं तर्जनीमूलपर्वणि ।
तर्जन्यग्रे तथा मध्ये यो जपेत् स तु पापकृत् ।।

इति श्रीक्रमवचनात् ।

तथा हंसपारमेश्वरे—

पर्वत्रयमनामाया: परिवर्तेन वै क्रमात् ।
पर्वत्रयं मध्यमायास्तर्जन्येकं समाहरेत् ।।
पर्वद्वयञ्च तर्जन्या मेरुं तद्विद्धि पार्वति ।
शक्तिमाला समाख्याता सर्वतन्त्रप्रदीपिका ।।

तथा—

अनामामूलमारभ्य प्रादक्षिण्यक्रमेण च ।
मध्यमामूलपर्यन्तमष्टपर्वसु सञ्जपेत् ।।

इदमप्यष्टोत्तरशतादिविषयम् ।

शक्तिमन्त्र के जप में अनामिका का मध्य और मूल पर्व, कनिष्ठा के तीन पर्व, अनामा का अग्रपर्व, मध्यमा के तीन पर्व तथा तर्जनी का मूल पर्व—इन दश पर्वो का उपयोग करे; क्योंकि श्रीक्रम के वचनानुसार तर्जनी के अग्र और मध्य पर्व में शक्ति का मन्त्र जपने से पाप होता है। तर्जनी के दोनों पर्वो को इस दशा में मेरु माने।

हंसपारमेश्वरतन्त्र के अनुसार इसी को शक्तिमाला कहते हैं। अष्टोत्तरशत जप करते समय उक्त क्रम से शत संख्या पूर्ण होने पर अनामिका के मूल पर्व में आरम्भ करके कनिष्ठादि के क्रम में मध्यमा के मूल पर्व तक आठ जप करे।

श्रीविद्याविषये पुनः—

अनामामध्यमायाश्च मूलाग्रञ्च द्वयं द्वयम् ।
कनिष्ठायाश्च तर्जन्यास्त्रयं पर्व सुरेश्वरि ।।

अनामामध्यमायाश्च मेरुः स्याद्द्वितयं शुभम् ।
प्रादक्षिणक्रमाद्देवि जपेत्त्रिपुरसुन्दरीम् ।।

इति यामलवचनात् ।

कनिष्ठामूलमारभ्य प्रादक्षिण्यक्रमेण च ।
तर्जनीमूलपर्यन्तमष्टपर्वसु सञ्जपेत् ।।

इदमप्यष्टोत्तरशतविषयम् । मुण्डमालातन्त्रे—

अनामिकाद्वयं पर्व कनिष्ठादिक्रमेण तु ।
तर्जनीमूलपर्यन्तं करमाला प्रकीर्त्तिता ।।
अंगुलिर्न वियुञ्जीत किञ्चिदाकुञ्चिते तले ।
अङ्गुलीनां वियोगाच्च छिद्रे च स्रवते जपः ।।

अन्यत्रापि—

अङ्गुल्यग्रेषु यज्जप्तं यज्जप्तं मेरुलङ्घने ।
पर्वसन्धिषु यज्जप्तं तत्सर्वं निष्फलं भवेत् ।।
गणनाविधिमुल्लंघ्य यो जपेत्तज्जपं यतः ।
गृह्णन्ति राक्षसास्तेन गणयेत् सर्वथा बुधः ।।

विश्वसारे—

जपसंख्यां तु कर्त्तव्या नासंख्यातं जपेत्सुधीः ।
असंख्याकारकस्यास्य सर्वं भवति निष्फलम् ।।

तन्त्रे—

हृदये हस्तमारोप्य तिर्यक् कृत्वा कराङ्गुलीः ।
आच्छाद्य वाससा हस्तौ दक्षिणेन जपेत्सदा ।।

यामल के वचनानुसार श्रीविद्या के मन्त्रजप में अनामा, मध्यमा के मूल और अग्र—इन दो-दो पर्वों, कनिष्ठा के तीन पर्व और तर्जनी के तीन पर्व—कुल दश पर्वों पर जप करें। अनामा और मध्यमा के शेष दो पर्वों को मेरु माना जाता है। अष्टोत्तरशत जप करने के लिये उक्त क्रम से सौ संख्या पूरी करने पर कनिष्ठा के मूल से प्रारम्भ करके तर्जनी के मूल तक प्रदाक्षिणक्रम से आठ पर्वों पर आठ जप करे।

मुण्डमालातन्त्र के अनुसार अनामिका के दो पर्व कनिष्ठाक्रम से तर्जनी-मूलपर्यन्त जप को करमाला कहते हैं। जपकाल में अंगुलियों को अलग न रक्खे और हथेली को कुछ सिकोड़कर जप करे। अंगुलियों को अलग करके छिद्र रखते हुए जप करने से

जपफल की हानि होती है। इसी प्रकार अंगुली के अग्रभाग या मेरु का लंघन करते हुए पर्वसन्धियों में जो जप किया जाता है, वह निष्फल होता है। गणनाविधि का उल्लंघन करके जो जप होता है, उसका फल राक्षस हर लेते हैं; इसलिये विद्वानों को विधिपूर्वक जप करना चाहिये। यह विश्वसारतन्त्र का मत है। इसी के अनुसार जपसंख्या की गणना करते हुए जप करे। हृदय पर हाथ रखकर, अंगुलियों को कुछ सिकोड़कर और दोनों हाथों को वस्त्र से ढक कर दाहिने हाथ से जप करना चाहिये।

जपसंख्याधारणे निषिद्धानिषिद्धानि

नाक्षतैर्हस्तपर्वैर्वा न धान्यैर्न च पुष्पकैः ।
न चन्दनैर्मृत्तिकया जपसंख्या न कारयेत् ॥
लाक्षा-कुसीद-सिन्दूरं गोमयञ्च करीषकम् ।
विलोड्य गुलिकां कृत्वा जपसंख्यान्तु कारयेत् ॥

कुसीदं रक्तचन्दनं करीषं शुष्कगोमयभस्म। इदन्तु पुरश्चरणविषये ज्ञेयम्।

जपने यादृशी माला संख्यानेऽपि च तादृशी ।

जपसंख्या-धारणविधि—अक्षत, अंगुलियों के पर्व, धान्य, पुष्प, चन्दन और मिट्टी से जपसंख्या-धारण न करे। इसके लिये लाक्षा, रक्तचन्दन, सिन्दूर और शुष्क गोबर को एकत्र करके इनके चूर्ण से गोलियाँ बना ले। इन्हीं गोलियों से जपसंख्या को याद रक्खे। किसी-किसी मत से ये गोलियाँ पुरश्चरण जप में प्रयुक्त होती हैं। माला-जप में उसी माला से जपसंख्या याद रखनी चाहिये।

वर्णमाला

सनत्कुमारीये—

क्रमोत्क्रमगतैर्माला मातृकार्णैः क्षमेरुकैः ।
सविन्दुकैः साष्टवर्गैरन्तर्यजनकर्मणि ।
आदि कु चु टु तु पु यु शवोऽष्टौ प्रकीर्त्तिताः ॥

तत्रायमर्थः—अकारादिवर्णान् प्रत्येकं सविन्दुं कृत्वा अनुलोमविलोमक्रमेण शतं सञ्जप्य अकारादीनां वर्णानां कवर्गादीनाञ्चान्त्यवर्णं सानुस्वारं कृत्वा पूर्वमुच्चार्य पश्चात् मन्त्रजपः कर्त्तव्यः। अनेन प्रकारेणाष्टोत्तरशतसंख्यजपो भवति। अन्तर्यजन इत्युपलक्षणम्। तथा च—

सविन्दुं वर्णमुच्चार्य पश्चान्मन्त्रं जपेद्बुधः ।
अकारादिक्षकारान्तं विन्दुयुक्तं विभाव्य च ।
वर्णमाला समाख्याता अनुलोमविलोमिका ॥

इति नारदवचनात्। प्रकारान्तरं विशुद्धेश्वरे—

अनुलोमविलोमेन वर्गाष्टकविभेदतः ।
मन्त्रेणान्तरितान् वर्णान् वर्णेनान्तरितान् मनून् ।।
कुर्याद्वर्णमयीं मालां सर्वतन्त्रप्रकाशिनीम् ।
चरमार्णं मेरुरूपं लङ्घनं नैव कारयेत् ।।

तथा मालिनीविजये सूत्रनियमः—

अन्तर्विद्रुमभासमानभुजगीं सुप्तोत्थवर्णोज्ज्वलाम् ।
आरोह-प्रतिरोहतः शतमयीं वर्गाष्टकाष्टोत्तरम् ।।

अथ वैशम्पायनसंहितायाम्—

प्रलयानलतः पूर्वं रुद्ररूपेण मूर्त्तिना ।
उद्धृतं पृथिवीबीजमतोऽन्ते तं नियोजयेत् ।।
प्रलयोद्धरितं बीजं लकारमनलात् पुनः ।
द्विलकारविधावत्र पुनरन्ते नियोजयेत् ।।

एतेन लकारद्वयं ज्ञेयमिति।

वर्णमाला—सनत्कुमारीय तन्त्र में उक्त है कि अ से क्ष तक के वर्णों का नाम वर्णमाला है। इन इक्यावन वर्णों में से 'अ' से 'क्ष' तक पचास वर्ण हैं और 'क्ष' इस माला का मेरु है। इन सभी वर्णों में अनुस्वार लगा कर अनुलोम-विलोम क्रम में अर्थात् अ से ल तक और ल से अ तक जप करे। यही माला अन्तर्यजन में प्रशस्त है। वर्णमाला आठ वर्गों में विभक्त है; यथा—१. अवर्ग—अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ ऌ ॡ ए ऐ ओ औ अं अः; इसमें १६ स्वर हैं। २. कवर्ग—क ख ग घ ङ; इसमें ५ व्यंजन हैं। ३. चवर्ग—च छ ज झ ञ; इसमें ५ व्यंजन हैं। ४. टवर्ग—ट ठ ड ढ ण; इसमें ५ व्यंजन हैं। ५. तवर्ग—त थ द ध न; इसमें ५ व्यंजनवर्ण हैं। ६. पवर्ग—प फ ब भ म; इसमें ५ वर्ण हैं। ७. यवर्ग—य र ल व; इसमें ४ वर्ण हैं। ८. शवर्ग—श ष स ह ल क्ष; इसमें ६ वर्ण हैं। इस माला में जप करने का क्रम यह है कि अकारादि वर्ग के प्रत्येक वर्ण में अनुस्वार लगाकर एक-एक वर्ण के बाद इष्टमन्त्र का एक-एक बार उच्चारण करते हुए जप करे। इस प्रकार १०८ बार जप करना चाहिये। अन्तर्यजन में ही नहीं; बाह्य पूजा में भी वर्णमाला से जप करना श्रेष्ठ है। पहले अं का उच्चारण करके मूल मन्त्र का उच्चारण करे। इसी प्रकार लं तक एक-एक वर्ण का अनुस्वारसहित उच्चारण करते हुए प्रत्येक वर्ण के बाद मूल मन्त्र का एक-एक बार जप करे। यही वर्णमाला-जप है। उदाहरणस्वरूप ह्रीं बीजमन्त्र का जप वर्णमाला पर इस प्रकार होगा—

१. अं ह्रीं अं
२. आं ह्रीं आं
३. इं ह्रीं इं
४. ईं ह्रीं ईं
५. उं ह्रीं उं
६. ऊं ह्रीं ऊं
७. ऋं ह्रीं ऋं
८. ॠं ह्रीं ॠं
९. लृं ह्रीं लृं
१०. लॄं ह्रीं लॄं
११. एं ह्रीं एं
१२. ऐं ह्रीं ऐं
१३. ओं ह्रीं ओं
१४. औं ह्रीं औं
१५. अं ह्रीं अं
१६. अः ह्रीं अः
१७. कं ह्रीं कं
१८. खं ह्रीं खं
१९. गं ह्रीं गं
२०. घं ह्रीं घं
२१. ङं ह्रीं ङं
२२. चं ह्रीं चं
२३. छं ह्रीं छं
२४. जं ह्रीं जं
२५. झं ह्रीं झं
२६. ञं ह्रीं ञं
२७. टं ह्रीं टं
२७. ठं ह्रीं ठं
२९. डं ह्रीं डं
३०. ढं ह्रीं ढं
३१. णं ह्रीं णं
३२. तं ह्रीं तं
३३. थं ह्रीं थं
३४. दं ह्रीं दं
३५. धं ह्रीं धं
३६. नं ह्रीं नं
३७. पं ह्रीं पं
३८. फं ह्रीं फं
३९. वं ह्रीं वं
४०. भं ह्रीं भं
४१. मं ह्रीं मं
४२. यं ह्रीं यं
४३. रं ह्रीं रं
४४. लं ह्रीं लं
४५. वं ह्रीं वं
४६. शं ह्रीं शं
४७. षं ह्रीं षं
४८. सं ह्रीं सं
४९. हं ह्रीं हं
५०. ळं ह्रीं ळं

क्षं सुमेरु

५१. ळं ह्रीं ळं
५२. हं ह्रीं हं
५३. सं ह्रीं सं
५४. षं ह्रीं षं
५५. शं ह्रीं शं
५६. वं ह्रीं वं
५७. लं ह्रीं लं
५८. रं ह्रीं रं
५९. यं ह्रीं यं
६०. मं ह्रीं मं
६१. भं ह्रीं भं
६२. बं ह्रीं बं
६३. फं ह्रीं फं
६४. पं ह्रीं पं
६५. नं ह्रीं नं
६६. धं ह्रीं धं
६७. दं ह्रीं दं
६८. थं ह्रीं थं
६९. तं ह्रीं तं
७०. णं ह्रीं णं
७१. ढं ह्रीं ढं
७२. डं ह्रीं डं
७३. ठं ह्रीं ठं
७४. टं ह्रीं टं
७५. ञं ह्रीं ञं
७६. झं ह्रीं झं
७७. जं ह्रीं जं
७८. छं ह्रीं छं
७९. चं ह्रीं चं
८०. ङं ह्रीं ङं
८१. घं ह्रीं घं
८२. गं ह्रीं गं
८३. खं ह्रीं खं
८४. कं ह्रीं कं
८५. अः ह्रीं अः
८६. अं ह्रीं अं
८७. औं ह्रीं औं
८८. ओं ह्रीं ओं
८९. ऐं ह्रीं ऐं
९०. एं ह्रीं एं
९१. लॄं ह्रीं लॄं
९२. लृं ह्रीं लृं
९३. ॠं ह्रीं ॠं
९४. ऋं ह्रीं ऋं
९५. ऊं ह्रीं ऊं
९६. उं ह्रीं उं
९७. ईं ह्रीं ईं
९८. इं ह्रीं इं
९९. आं ह्रीं आं
१००. अं ह्रीं अं
१०१. अं ह्रीं अं
१०२. कं ह्रीं कं
१०३. चं ह्रीं चं
१०४. टं ह्रीं टं
१०५. तं ह्रीं तं
१०६. पं ह्रीं पं
१०७. यं ह्रीं यं
१०८. शं ह्रीं शं

मालिनीविजयतन्त्र में इस वर्णमयी माला के सूत्र के सम्बन्ध में बताया गया है कि प्रवाल के समान प्रभावती सूत्ररूपा निद्रिता सर्पाकारा कुलकुण्डलिनी शक्ति ही वर्णमाला का सूत्र है। उसके आरोहण-अवरोहण से सौ संख्या होती है और अष्ट वर्गों के आदि वर्णों में आठ संख्या होती है। वैशम्पायनसंहिता में लिखा है कि रुद्ररूपी महादेव ने प्रलयाग्नि से पृथ्वी का उद्धार किया। अतएव प्रलयकाल में प्रलयाग्नि से उद्धृत उक्त लकार को लेकर वर्णमाला में दो ल विद्यमान हैं। इसी से वर्णमाला में ह के बाद ल का एक बार फिर से उच्चारण होता है।

मालायां मणिनिर्णयः

पद्मबीजादिभिर्माला बहिर्योगे शृणुष्व ताः ।
रुद्राक्ष-शङ्ख-पद्माक्ष-जीवपुत्रक-मौक्तिकैः ।।
स्फाटिकैर्मणिरत्नैश्च सौवर्णैर्विद्रुमैस्तथा ।
राजतैः कुशमूलैश्च गृहस्थस्याक्षमालिका ।।

माला की मणियाँ—बाह्य पूजा में पद्मबीजादि की माला प्रशस्त मानी गयी है। रुद्राक्ष-शंख, पद्म-बीज, जीवपुत्रिका, मुक्ता, स्फटिक, मणि, रत्न, स्वर्ण, प्रवाल, रौप्य और कुशमूल—इनमें से किसी एक की माला से गृहस्थ को जप करना चाहिये।

मालाफलम्

अङ्गुल्या गणनादेकं पर्वणाष्टगुणं भवेत् ।
पुत्रजीवैर्दशगुणं शतं शङ्खैः सहस्रकम् ।।
प्रवालैर्मणिरत्नैश्च दशसाहस्रिकं स्मृतम् ।
तदेव स्फाटिकैः प्रोक्तं मौक्तिकैर्लक्षमुच्यते ।।
पद्माक्षैर्दशलक्षं स्यात् सौवर्णैः कोटिरुच्यते ।
कुशग्रन्थ्या कोटिशतं रुद्राक्षैः स्यादनन्तकम् ।
सर्वैर्विरचिता माला नृणां मुक्तिफलप्रदा ।।

कालिकापुराणे—

रुद्राक्षैर्यदि जप्येत इन्द्राक्षैः स्फाटिकैस्तथा ।
नान्यन्मध्ये प्रयोक्तव्यं पुत्रजीवादिकञ्च यत् ।।
यद्यन्यत्तु प्रयुञ्जीत मालायां जपकर्मणि ।
तस्य कामञ्च मोक्षञ्च न ददाति प्रियङ्करी ।।

मुण्डमालायाम्—

श्मशानधुस्तूरैर्माला ज्ञेया धूमावतीविधौ ।
नराङ्गुल्यस्थिभिर्माला प्रथिता सर्वकामदा ।।

नाड्यो संग्रथनं कार्यं रक्तेन वाससा तथा ।
सदा गोप्या प्रयत्नेन जनन्या जारवत् प्रिये ॥

कामनाभेदे तु—

पद्माक्षैर्विहिता माला शत्रूणां नाशिनी मता ।
कुशग्रन्थिमयी माला सर्वपापप्रणाशिनी ॥
पुत्रजीवफलैः क्लृप्ता कुरुते पुत्रसम्पदम् ।
निर्मिता रौप्यमणिभिर्जपमालेप्सितप्रदा ।
प्रवालैर्विहिताः माला प्रयच्छेद्विपुलं धनम् ॥

मालाफल—अंगुलियों में गणना करते हुए जप करने से एकगुना फल मिलता है। अंगुली-पर्व में आठगुना, जीवपुत्रिका माला में दसगुना, शंखमाला में सौ गुना, प्रवालमाला में सहस्रगुना, मणि-रत्न और स्फटिकमाला में दश हजारगुना, मुक्तामाला में लाखगुना, पद्माक्षमाला में दस लाखगुना, वर्णमाला में करोड़गुना, कुशमूलमाला में सौ करोड़ और रुद्राक्षमाला में जप करने से अनन्त फल प्राप्त होता है। ये सभी मालायें मुक्तिदायिनी होती हैं।

कालिकापुराण में लिखा है कि रुद्राक्ष, इन्द्राक्ष और स्फटिक का जीवपुत्रिकादि किसी दूसरी माला से योग न करे; क्योंकि एकजातीय माला का अन्यजातीय माला से योग होने पर भगवती जपकर्ता के काम्य या मोक्षफल को प्रदान नहीं करती।

मुण्डमालातन्त्र में लिखा है कि धूमावती के सम्बन्ध में श्मशानधत्तूर की लकड़ी से बनी माला प्रशस्त है। नरांगुल्यस्थिमाला सर्वकामदा होती है।

नाड़ी का सूत्र या लाल धागा से माला गूँथनी चाहिये। इस माला को जननी के जार के समान सदैव गुप्त रखना चाहिये।

विभिन्न कामनाओं के लिये विभिन्न प्रकार की मालायें निर्दिष्ट हैं। यथा—शत्रुनाश के लिये पद्मबीजमाला, पापनाश के लिये कुशमूल की माला, पुत्रहेतु जीवपुत्रिका-माला, अभीष्टसिद्धि के लिये मणि-रौप्यमाला और विपुल धन के लिये प्रवालमाला।

भैरवीविद्यां तु वाराहीतन्त्रे—

सुवर्णमणिभिर्मालां स्फाटिकीं शङ्खनिर्मिताम् ।
प्रवालैरेव वा कुर्यात् पुत्रजीवं विवर्जयेत् ।
पद्माक्षञ्चैव रुद्राक्षं भद्राक्षञ्च विशेषतः ॥

त्रिपुरामन्त्रजपादौ तु रक्तचन्दनबीजादिभिरतिप्रशस्ता। तथा च तन्त्रे—

रक्तचन्दनमाला तु भोगमोक्षप्रदा भवेत् ।

तथा—

वैष्णवे तुलसीमाला गजदन्तैर्गणेश्वरे ॥
त्रिपुराया जपे शस्ता रुद्राक्षै रक्तचन्दनैः ॥

मुण्डमालायाम्—

महाशङ्खमयी माला नीलसारस्वते विधौ ॥

महाशङ्खस्तु तन्त्रे—

नृललाटास्थिखण्डेन रचिता जपमालिका ।
महाशङ्खमयी माला ताराविद्याजपे प्रिये ।
कर्णनेत्रान्तरस्थास्थि महाशङ्खः प्रकीर्त्तितः ॥

मणिनियमस्तु मुण्डमालायाम्—

अन्योन्यसमरूपाणि नातिस्थूलकृशानि च ।
कीटादिभिरदुष्टानि न जीर्णानि नवानि वै ॥

अथ गौतमीये—

पञ्चाशल्लिपिभिर्माला विहिता सर्वकर्मसु ।
अकारादिक्षकारान्ता अक्षमाला प्रकीर्त्तिता ॥
क्षार्णं मेरुमुखं तत्र कल्पयेन्मुनिसत्तम ।
अनया सर्वमन्त्राणां जपः सर्वसमृद्धिदः ॥

चामुण्डातन्त्रे—

नित्यं जपं करे कुर्यान्न तु काम्यमबोधनात् ।
जपमपि करे कुर्यान्मालाभावे तु सुन्दरि ॥

कामनाभेदे तु गौतमीये—

विशेषेणाक्षसूत्रस्य विधानमिह लक्ष्यते ।
पञ्चविंशतिभिर्मोक्षं त्रिशद्भिर्धनसिद्धये ।
सर्वार्थाः सप्तविंशत्या पञ्चदश्याभिचारिके ॥
पञ्चाशद्भिः काम्यसिद्धिः स्यात्तथा चतुरोत्तरैः ।
अष्टोत्तरशतैः सर्वसिद्धिरुक्ता मनीषिभिः ॥

वाराहीतन्त्र में भैरवी विद्या के बारे में लिखा है कि सोना, मणि, स्फटिक, शंख और प्रवालमाला श्रेष्ठ होती है। जीवपुत्रिकामाला त्याज्य है। पद्मबीज और रुद्राक्षमाला को विशेष प्रशस्त कहा गया है। त्रिपुरसुन्दरी के मन्त्रजप में रक्तचन्दनबीज की माला अतिश्रेष्ठ है। ये मालायें भोग-मोक्षदायिनी हैं। विष्णुमन्त्र में तुलसीमाला, गणेशमन्त्र में गजदन्तमाला

और त्रिपुरामन्त्र में रुद्राक्ष एवं रक्तचन्दनमाला प्रशस्त है। तारामन्त्र में महाशंखमयी माला प्रशस्त है।

महाशंख के सम्बन्ध में मुण्डमालातन्त्र में लिखा है कि मनुष्य की ललाटास्थि से बनी माला महाशंखमयी कहलाती है। कान और आँख के बीच की हड्डी का नाम महाशंख है। तारामन्त्र के जप में यह माला शुभदायिनी है।

मुण्डमालातन्त्र के अनुसार माला की मणियाँ चाहे किसी वस्तु की हों, पर सम होनी चाहिये। वे छोटी-बड़ी न हों। न बहुत बड़ी हों, न बहुत छोटी। कीड़ों से खायी या पुरानी न हों, उन्हें नवीन होना चाहिये। गौतमीयतन्त्र के अनुसार वर्णमाला से सभी प्रकार के मन्त्रजप में सफलता मिलती है।

चामुण्डातन्त्र के अनुसार नित्य जप करमाला में करना चाहिये। विशेष विधि न हो तो काम्य जप भी करमाला में करे। माला के अभाव में सभी काम्य जप करमाला में ही किये जाते हैं। मोक्ष के लिये २५, धन के लिये ३०, सर्वार्थसिद्धि के लिये २७, अभिचार के लिये १५, काम्य-सिद्धि के लिये ५४ और सर्वकार्यसिद्धि के लिये १०८ मणियों की माला श्रेष्ठ होती है।

आसनभेदा:

हंसमाहेश्वरे—

कम्बलं कोमलं कौशं दारवं कर्मसाधनम्।
शुक्लं वा यदि वा कृष्णं विशेषाद्रक्तकम्बलम्।
एतेषामासनं शुद्धं चर्मासनं सुरेश्वरि! ॥
लोम्नि चैव यदासीनस्तदा सर्वं विनश्यति।
लोमस्पर्शनमात्रेण सिद्धिहानिः प्रजायते ॥
काम्यार्थं कम्बलञ्चैव श्रेष्ठञ्च रक्तकम्बलम्।
कृष्णाजिने ज्ञानसिद्धिर्मोक्षः श्रीर्व्याघ्रचर्मणि ॥
कुशासने मन्त्रसिद्धिर्नात्र कार्या विचारणा।
धरण्यां दुःखसम्भूतिर्दौर्भाग्यं दारुजासने ॥
वंशासने दरिद्रः स्यात् पाषाणे व्याधिपीडनम्।
तृणासने यशोहानिः पल्लवे चित्तविभ्रमः।
जपध्यानतपोहानिं वस्त्रासनं करोति हि ॥

अतएव वस्त्रासनं केवलमेव विरुद्धं वस्त्रासनं रोगहरमित्यादिवचनेन विशिष्टस्य फलजनकत्वात्। चेलाजिनकुशोत्तरमिति भगवद्वचनाच्च। तथा च गौतमीये—

तथा मृद्वासने मन्त्री पटाजिनकुशोत्तरः। इति।

योगिनीहृदये—

नादीक्षितो विशेज्जातु कृष्णसाराजिने गृही।
विशेद्यतिर्वनस्थश्च ब्रह्मचारी च भिक्षुक: ॥

आगमकल्पद्रुमे—मेषव्याघ्रगजोष्ट्रऋक्षोरगत्वचस्तु षट्कर्मसु प्रत्येकं विहितासनानि।

आसन-प्रकार—हंसमाहेश्वर में लिखा है कि कोमल पद्मासन, कुशासन, दारु आसन और चर्मासन शुद्ध तथा कार्यसिद्धिदायक है। लोमयुक्त चर्मासन पर साधनादि करने से सारा कार्य नष्ट हो जाता है। काम्य कर्म में कम्बलासन और विशेषकर रक्तकम्बलासन श्रेष्ठ है। ज्ञानसिद्धि में कृष्णाजिन = काले मृग का चर्म, मोक्ष और श्रीकामना में व्याघ्रचर्मासन और मन्त्रसिद्धि में कुशासन प्रशस्त है। मृत्तिकासन अर्थात् भूमि पर बैठकर साधना करने से दु:ख, वंशासन से दारिद्र्य, पत्थर पर बैठकर साधना करने से रोग-पीड़ा, घास-फूस पर बैठकर जप करने से यश की हानि, पत्रासन = पत्ते पर बैठकर जप करने से चित्तवैकल्य प्राप्त होता है। वस्त्रासन से जप, ध्यान तथा तप की हानि होती है। कुशासन पर वस्त्र बिछाकर जप करने से रोग-निवारण होता है। अत: वस्त्रासन के विरुद्ध वस्त्रासन केवल रोगहर होने से विशिष्ट होता है। भगवत वचन के अनुसार चैलाजिन और कुशासन ही श्रेष्ठ है। गौतमीय तन्त्र के अनुसार मृत्तिकासन पटाजिन कुशोत्तर है।

योगिनीतन्त्र के अनुसार कृष्णाजिन पर अदीक्षित गृहस्थ को नहीं बैठना चाहिये अर्थात् दीक्षित गृहस्थ बैठ सकता है। इस पर केवल ब्रह्मचारी, वनवासी और भिक्षुक को ही बैठना चाहिये। आगमकल्पद्रुम के अनुसार मेष, व्याघ्र, गज, उष्ट्र और साँप के चर्मासन पर षट्कर्म में ही बैठना चाहिये।

मालासंस्कार:

यामले—

अप्रतिष्ठितमालाभिर्मन्त्रं जपति यो नर:।
सर्वं तन्निष्फलं विद्यात् क्रुद्धा भवति देवता ॥

सनत्कुमारे—

कार्पाससम्भवं सूत्रं धर्मकामार्थमोक्षदम्।
तच्च विप्रेन्द्रकन्याभिर्निर्मितञ्च सुशोभनम् ॥
श्वेतं रक्तं तथा कृष्णं पट्टसूत्रमथापि वा।
शान्तिवश्याभिचारेषु मोक्षैश्वर्यजयेषु च ॥
शुक्लं रक्तं तथा पीतं कृष्णं वर्णेषु च क्रमात्।
सर्वेषामेव वर्णानां रक्तं सर्वेप्सितप्रदम् ॥

त्रिगुणं त्रिगुणीकृत्य ग्रथयेत् शिल्पशास्त्रतः ।
मणिरत्नप्रमाणस्य सूत्रं कुर्याद्विचक्षणः ॥
एकैकं मातृकावर्णं सतारं प्रजपेत् सुधीः ।
मालामादाय सूत्रेण ग्रथयेन्मध्यमध्यतः ॥
ब्रह्मग्रथिं विधायेत्थं मेरुञ्च ग्रन्थिसंयुतम् ।
ग्रथयित्वा पुरो मालां ततः संस्कारमारभेत् ॥

कस्यचिन्मते मूलविद्यया ग्रथयेत्। तथा च एकवीराकल्पे—

मातृकावर्णतो ग्रन्थिं विद्यया वाथ कारयेत् ।
सुवर्णादिगुणैर्वापि ग्रथयेत् साधकोत्तमः ॥
ब्रह्मग्रन्थिं ततो दद्यान्नागपाशमथापि वा ।
कवचेनाथ बध्नीयान्मालां ध्यानपरायणः ॥
सर्वशेषं ततो मेरुं सूत्रद्वयसमन्वितम् ।
ग्रथयेत्तारयोगेन बध्नीयात् साधकोत्तमः ।
एवं निष्पाद्य देवेशि प्रतिष्ठाञ्च समाचरेत् ॥

गौतमीये—

मुखे मुखन्तु संयोज्य पुच्छे पुच्छं नियोजयेत् ।
गोपुच्छसदृशी माला यद्वा सर्पाकृतिः शुभा ॥

मुखपुच्छनियमस्तु छन्दःसारे—

रुद्राक्षस्योन्नतं प्रोक्तं मुखं पुच्छन्तु निम्नगम् ।
कमलाक्षस्य सूक्ष्मांशं सविन्दुद्वितयं मुखम् ॥
सविन्दुकस्य स्थूलांशं पुच्छं श्लक्ष्मिति स्मृतम् ।
एवं ज्ञात्वा मुखं पुच्छं रुद्राक्षाम्भोरुहा क्षयोः ।
तं सजातीयमेकाक्षं मेरुत्वेनाग्रतो न्यसेत् ॥
एकैकं मणिमादाय ब्रह्मग्रन्थिं प्रकल्पयेत् ।
एकैकं मातृकावर्णं ग्रथनादौ तु सञ्जपेत् ॥

ग्रन्थिनियमस्तत्रैव—

त्रिरावृत्तिग्रन्थिकेन तथार्द्धेन विधीयते ।
सार्द्धद्वयावर्त्तनेन ग्रन्थिं कुर्याद्यथा दृढम् ॥

इत्येताभ्यामिच्छाविकल्पः ।

कालिकापुराणे—

ब्रह्मग्रन्थियुतं कुर्यात् प्रतिबीजं यथास्थितम् ।
अथवा ग्रन्थिरहितं दृढ़रज्जुसमन्वितम् ।
एवं निर्माय मालां वै शोधयेन्मुनिसत्तम ॥

मालासंस्कार—यामल में लिखा है कि असंस्कृत माला में जप निष्फल होता है और देवता रुष्ट होते हैं। सनत्कुमारतन्त्र में लिखा है कि कपास के धागे में गूँथी माला से चतुर्वर्ग की सिद्धि होती है। यह धागा ब्राह्मणकुमारी द्वारा यदि बनाया गया हो तो और भी फलप्रद होता है। शान्तिकर्म में श्वेत वर्ण, वशीकरण में लाल वर्ण और मारणकार्य में काले रंग के सूत में माला गूँथनी चाहिये। कपास के सूत के बदले पट्टसूत्र से भी माला गूँथी जा सकती है। मुक्ति, ऐश्वर्य और जपादि कार्य में ब्राह्मण श्वेतवर्ण, क्षत्रिय लाल रंग, वैश्य पीले रंग और शूद्र काले रंग के धागे में माला गूँथे। अथवा लाल वर्ण के सूत में माला गूँथना सभी कार्यों में अभीष्ट फलदायक होता है।

सूत्र को तिगुना करके उसे पुन: त्रिगुणित करे। तब उससे शास्त्रानुसार माला गूँथे। जैसी मणि हो, उसी के अनुरूप सूत्र भी होना चाहिये। प्रणव और अकारादि एक-एक वर्ण (ॐ अं ॐ आं इत्यादि) का उच्चारण करते हुए माला गूँथे। बीच-बीच में ब्रह्मग्रन्थि देता जाय। मेरुस्थान को भी ग्रन्थिबद्ध करना चाहिये। इस प्रकार माला गूँथकर उसका संस्कार करे। किसी मत में मूल विद्या को जपते हुए माला गूँथनी चाहिये।

एकवीराकल्प में लिखा है कि मातृका वर्ण या मूल मन्त्र से माला गूँथे। ध्यान-परायण होकर दोनों सूत्रों को एकत्र करके हूँ मन्त्र से उसके दोनों छोरों को बाँधे। अन्त में दोनों सूत्रों को मिलाकर 'ॐ' से मेरु को बाँधे। तब प्रतिष्ठा करे।

गौतमीयतन्त्र में लिखा है कि मणियों के मुख में मुख और पूँछ में पूँछ मिलाते हुए गोपुच्छ या सर्पाकृति के समान माला का ग्रथन करे।

छन्दसार में मुख और पुच्छ के सम्बन्ध में लिखा है कि रुद्राक्ष का उन्नत भाग मुख और निम्न भाग पूँछ, पद्मबीज का दो बिन्दुओं से युक्त सूक्ष्म भाग मुख और एक बिन्दु वाला स्थूल भाग पुच्छ है। इस प्रकार रुद्राक्ष और पद्माक्षादि के माला में मुख और पुच्छ स्थिर करके उन्हीं में से एक को मेरु बनाये। साढ़े तीन या अढ़ाई वेष्टन करके मजबूती से गाँठ लगावे। अपनी इच्छानुसार साधक को उक्त किसी एक विधि से माला बना लेनी चाहिये। कालिकापुराण में लिखा है कि प्रति मणि के बाद माला में ब्रह्मग्रन्थि देते हुए माला तैयार करे अथवा ग्रन्थिरहित दृढ़ धागे में माला को गूँथकर उसका शोधन करे।

अश्वत्थपत्रनवकैः पद्माकारन्तु कल्पयेत् ।
तन्मध्ये स्थापयेन्मालां मातृकामूलमुच्चरन् ।
क्षालयेत् पञ्चगव्येन सद्योजातेन सज्जलैः ॥

सद्योजातमन्त्रस्तु—

ॐ सद्योजातं प्रपद्यामि सद्योजाताय वै नमः ।
भवे भवेनादिभवे भजस्व मां भवोद्भवाय वै नमः ।
चन्दनागुरुगन्धाद्यैर्वामदेवेन घर्षयेत् ।।

वामदेवमन्त्रस्तु—ॐ वामदेवाय नमो ज्येष्ठाय नमो रुद्राय नमः कालाय नमः कलविकरणाय नमो बलविकरणाय नमो बलप्रमथनाय नमः सर्वभूतदमनाय नमो मनोन्मथनाय। धूपयेत्तामघोरेण। अघोरमन्त्रस्तु—

ॐ अघोरेभ्योऽथ घोरेभ्यो घोरघोरतरेभ्यः सर्वतः सर्वसर्वेभ्यो नमस्तेऽस्तु रुद्ररूपेभ्यः।। लेपयेत्ततत्पुरुषेण तु। तत्पुरुषमन्त्रस्तु—

ॐ तत्पुरुषाय विद्महे महादेवाय धीमहि तन्नो रुद्रः प्रचोदयात्।
मन्त्रयेत् पञ्चमेनैव प्रत्येकन्तु शतं शतम् ।
मेरुञ्च मन्त्रयेच्चैव मूलेन च शतं शतम् ।।

मुण्डमालायाम्—

पञ्चमेनैव मन्त्रेण प्रत्येकन्तु शतं शतम् ।
मेरुञ्च पञ्चमेनैव तथा मन्त्रेण मन्त्रयेत् ।।

प्रत्येकन्तु सकृत् सकृदिति वा। तत्रैव—

प्रत्येकं मन्त्रयेन्मन्त्री पञ्चमेन सकृत् सकृत् । इति ।

तथा च गौतमीये समुदायमालामधिकृत्य—पञ्चमेनैव सूक्तेन शतान्न्यूनेन मन्त्रयेदिति दर्शनान्मालायां वा शतजपः कार्यः। पञ्चमन्त्रस्तु—ॐ ईशानः सर्वविद्यानामीश्वरः सर्वभूतानां ब्रह्माधिपतिर्ब्रह्मणोऽधिपतिः ब्रह्मा शिवो मेऽस्तु सदाशिवोम्। प्रत्येकन्तु सकृत् सकृदिति वा। तथा च तत्रैव—

प्रत्येकं मन्त्रयेन्मन्त्री पञ्चमेन सकृत् सकृत् ।
तत्रावाह्य यजेद्देवं यथाविभवविस्तरैः ।।

मालायाः प्राणप्रतिष्ठानन्तरं देवतां पूजयेत्। तथा च सनत्कुमारतन्त्रे—

संस्कृत्यैवं बुधो मालां तत्प्राणांस्तत्र योजयेत् ।
मूलमन्त्रेण तां मालां पूजयेद् द्विजसत्तमः ।।

वाराहीतन्त्रे—

माले माले महामाले सर्वतत्त्वस्वरूपिणि ।
चतुर्वर्गस्त्वयि न्यस्तस्तस्मान्मे सिद्धिदा भव ।
मायाबीजादिकं कृत्वा रक्तपुष्पैः समर्चयेत् ।।

इति शक्तिविषयम्। विष्णुविषये तु यामले—

वाग्भवञ्च तथा लक्ष्मीमक्षादिमालिकां ततः ।
ङेऽन्तां हृदयवर्णान्तां मन्त्रेणानेन पूजयेत् ॥
मन्त्रयेन्मूलमन्त्रेण क्रमेणोत्क्रमयोगतः ।
तथैव मातृकावर्णैर्मन्त्रयेत्तन्तु मन्त्रवित् ॥

योगिनीहृदये—

होमकर्म ततः कुर्याद्देवताभावसिद्धये ।
अष्टोत्तरशतं हुत्वा सम्पाताज्यं विनिक्षिपेत् ॥
होमकर्मण्यशक्तश्चेद्द्विगुणं जपमाचरेत् ।
नान्यमन्त्रं जपेन्मन्त्री कम्पयेन्न विधूनयेत् ॥
कम्पनात् सिद्धिहानिः स्याद्धूननं बहुदुःखदम् ।
शब्दे जाते भवेद्रोगः करभ्रष्टो विनाशकृत् ॥
छिन्ने सूत्रे भवेन्मृत्युस्तस्माद्यत्नपरो भवेत् ।
जपान्ते कर्णदेशे वा उच्चदेशेऽथवा न्यसेत् ॥
ॐ त्वं माले सर्वदेवानां सर्वसिद्धिप्रदा मता ।
तेन सत्येन मे सिद्धिं देहि मातर्नमोऽस्तु ते ॥
इत्युक्त्वा परिपूज्याथ गोपयेद्यत्नतो गृही ॥

पीपल के नये पत्तों को पद्माकार बिछाकर मातृकामन्त्र और मूल मन्त्र का उच्चारण करते हुए उसके ऊपर माला रक्खे। निम्न सद्योजात मन्त्र से माला का प्रक्षालन करे—

ॐ सद्योजातं प्रपद्यामि सद्योजाताय वै नमः।
भवे भवेनादिभवे भजस्व मां भवोद्भवाय नमः।।

इसके बाद निम्नलिखित वामदेवमन्त्र से माला में चन्दन, अगर और कपूर का लेप करे—

ॐ नमो वामदेवाय, नमो ज्येष्ठाय, नमो रुद्राय, नमः कालाय, नमः कलविकरणाय, नमः बलविकरणाय, नमो बलप्रमथनाथाय, नमः सर्वभूतदमनाय, नमो मनोन्मनाय।

निम्नलिखित अघोरमन्त्र से माला को धूपित करे—

ॐ अघोरेभ्योऽथ घोरेभ्यो घोरघोरतरेभ्यः।
सर्वतः सर्वसर्वेभ्यो नमस्तेऽस्तु रुद्ररूपेभ्यः।।

निम्नलिखित तत्पुरुषमन्त्र से पुनः चन्दन का लेप लगावे—

ॐ तत्पुरुषाय विद्महे महादेवाय धीमहि तन्नो रुद्रः प्रचोदयात्।

इसके बाद माला के प्रत्येक मनकों पर निम्नलिखित पञ्चम ईशान मन्त्र का सौ बार जप करे—

ॐ ईशान: सर्वविद्यानां ईश्वर: सर्वभूतानाम्।
ब्रह्माधिपति ब्रह्मणोऽधिपति ब्रह्मा शिवो मेऽस्तु सदाशिवोम्।।

मुण्डमालातन्त्र में लिखा है कि माला के प्रत्येक बीज पर और मेरु पर पञ्चम मन्त्र का सौ बार जप करे अर्थात् प्रत्येक बीज पर एक-एक बार जप करना होगा। इसके बाद माला में देवता का आवाहन करके प्राणप्रतिष्ठा करके यथाशक्ति पूजन करे। सनत्कुमारतन्त्र में लिखा है कि माला का संस्कार और प्राणप्रतिष्ठा करके मूल मन्त्र से उस माला की पूजा करे। वाराहीतन्त्र में लिखा है कि माला के ऊपरी भाग में मायाबीज ह्रीं लिख कर निम्न मन्त्र से रक्तपुष्प द्वारा माला की पूजा करे—

ह्रीं माले माले महामाले सर्वतत्त्वस्वरूपिणि।
चतुर्वर्गस्त्वयि न्यस्तस्तस्मान्मे सिद्धिदा भव।।

यह विधि शक्तिविषय के लिये है।

विष्णुविषय के लिये यामल में लिखा है कि 'ऐं श्रीं अक्षमालिकायै नम:' मन्त्र से माला की पूजा करे। तदनन्तर अकारादि वर्ग के प्रत्येक वर्ण द्वारा मूल मन्त्र को पुटित करके उससे माला को अनुलोम-विलोमक्रम से अभिमन्त्रित करे।

योगिनीहृदयतन्त्र में लिखा है कि पूजा के बाद माला के देवत्व की कामना करते हुए अष्टोत्तर शत हवन करके हूत शेष घी को माला पर डाल दे। हवन करने में असमर्थ हो तो द्विगुण जप करे। जिस देवता के मन्त्र से माला की प्रतिष्ठा करे, उसके अतिरिक्त अन्य देवता के मन्त्र का जप उस माला से न करे। जपकाल में अपने शरीर या माला का हिलना-डुलना मना है। जापक के शरीर हिलने से सिद्धिहानि और माला के हिलने से बहुत दु:ख होता है। जपकाल में माला को इस प्रकार रक्खे कि न तो उसमें शब्द हो और न वह हाथ से स्खलित हो; क्योंकि शब्द होने से रोग और स्खलित होने से जपकर्ता का विनाश होता है। जपकाल में माला का सूत्र टूटने से जपकर्ता की मृत्यु होती है; अत: सतर्क रहना चाहिये। जप पूरा होने पर माला को अपने कान पर या किसी ऊँचे स्थान पर रक्खे। निम्न मन्त्र से माला की पूजा करके उसे यत्नपूर्वक छिपाकर रक्खे—

ॐ त्वं माले सर्वदेवानां सर्वसिद्धिप्रदा मता।
तेन सत्येन मे सिद्धिं देहि माले नमोऽस्तु ते।।

कामनाभेदे अंगुलीनियममाह गौतमीये—

तर्जन्यङ्गुष्ठयोगेन शत्रूच्चाटनकर्मणि।
अङ्गुष्ठमध्यमायोगात् सर्वसिद्धि: सुनिश्चिता ।।
अङ्गुष्ठानामिका योगादुच्चाटोच्छादने मते।

ज्येष्ठाकनिष्ठायोगेन शत्रूणां नाशनं मतम् ॥

वैशम्पायनसंहितायाम्—

अङ्गुष्ठमध्यमाभ्याञ्च चालयेन्मध्यमध्यतः ।
तर्जन्या न स्पृशेदेनां मुक्तिदो गणनक्रमः ॥
जीर्णे सूत्रे पुनः सूत्रं ग्रथयित्वा शतं जपेत् ।
प्रमादात् पतिता हस्तात् शतमष्टोत्तरं जपेत् ।
जपेन्निषिद्धसंस्पर्शे क्षालयित्वा यथोदितम् ॥

छिन्नेऽपि अष्टोत्तरशतजपः कार्यः। तदुक्तं कुब्जिकातन्त्रे—

छिन्ने सूत्रे पुनः सूत्रं ग्रथयित्वा शतं जपेत् । इति।

करभ्रष्ट-छिन्नयोस्तुल्यफलकत्वात्। प्रकारान्तरमागमकल्पद्रुमे—

भूतशुद्ध्यादिकां पूजां समाप्य तत्र पूजयेत् ।
गणेश-सूर्य-विष्ण्वीशान् दुर्गांश्चावाह्य मन्त्रवित् ॥
पञ्चगव्ये ततः क्षिप्त्वा हसौर्मन्त्रेण मन्त्रवित् ।
तस्मादुत्तोल्य तां मालां स्वर्णपात्रे निधाय च ॥
पयो - दधि - घृत - क्षौद्र - शर्कराद्यैरनुक्रमात् ।
तोयधूपान्तरैः कृत्वा पञ्चामृतविधिं बुधः ॥
क्रमादत्रैव संस्थाप्य स्नापयेत् शीतलैर्जलैः ॥
ततश्चन्दनगन्धेन कस्तूरी-कुङ्कुमादिभिः ।
तामालिप्य हसौर्मन्त्रमष्टोत्तरशतं जपेत् ॥
तस्यां नवग्रहांश्चैव दिक्पालांश्च प्रपूजयेत् ।
ततः सम्पूज्य च गुरुं गृह्णीयान्मालिकां शुभाम् ॥

कामनाभेद से अंगुली-निर्णय—कामनाभेद से अंगुली-नियम के सम्बन्ध में गौतमीय तन्त्र का वचन है कि शत्रु का उच्चाटन आदि करने में तर्जनी और अँगूठे द्वारा जप करे। अंगुष्ठ और मध्यमा से मन्त्रसिद्धि, अंगूठा और अनामिका से उच्चाटनादि और अंगूठा एवं कनिष्ठा से जप करने से शत्रुनाश होता है।

वैशम्पायनसंहिता में लिखा है कि अंगूठा और मध्यमा के द्वारा अनामा के मध्य पर्व पर जपमाला चलावे। माला का स्पर्श तर्जनी से नहीं होना चाहिये। इस प्रकार जप करने से मुक्तिलाभ होता है। माला का सूत्र पुराना होने पर उसे गूँथ कर मूल मन्त्र का सौ बार जप करे। प्रमादवश यदि जपकाल में हाथ से माला गिर पड़े तो उसे उठाकर पुनः एक सौ आठ बार जप करे। माला का अस्पृश्य वस्तुओं से स्पर्श होने पर उसे पञ्चगव्य से धोकर जप करे।

कुब्जिकातन्त्र में लिखा है कि माला टूटने पर उसे फिर गूँथकर १०८ बार जप करना चाहिये।

आगमकल्पद्रुम में लिखा है कि भूतशुद्ध्यादि कर माला में गणेश, सूर्य, विष्णु, महादेव और दुर्गा का आवाहन करके उनकी पूजा करे। अन्त में पञ्चगव्य में माला डालकर 'हसौः' मन्त्र का उच्चारण करते हुए उसे उसमें से निकाल कर स्वर्णपात्र में रक्खे और पञ्चामृत नियम से क्रमशः दूध, दही, घी, मधु, शक्कर तथा शीतल जल से उसका प्रक्षालन करे। फिर चन्दन, कस्तूरी, कुंकुम आदि का माला पर लेप करके 'हसौः' का १०८ बार जप करे। तब माला में नवग्रह, दश दिक्पाल और गुरुदेव की पूजा करके उस शुभ माला को ग्रहण करे।

पुरश्चरणम्

योगिनीहृदये—

गुरोराज्ञां समादाय शुद्धान्तःकरणो नरः।
ततः पुरस्क्रियां कुर्यान्मन्त्रसिद्धिप्रकाम्यया॥

तस्य नित्यतामाह—

जीवहीनो यथा देही सर्वकर्मसु न क्षमः।
पुरश्चरणहीनोऽपि तथा मन्त्रः प्रकीर्त्तितः॥
तस्मादादौ स्वयं कुर्याद्गुरुं वा कारयेद्बुधः।
गुरोरभावे विप्रं वा सर्वप्राणिहिते रतम्॥
स्निग्धं शास्त्रविदं मित्रं नानागुणसमन्वितम्।
स्त्रियं वा सगुणोपेतां सपुत्रां विनियोजयेत्॥

पुरश्चरण—योगिनीहृदय में लिखा है कि विशुद्धमना व्यक्ति गुरु के आदेश से मन्त्र-सिद्धि की कामना से पुरश्चरण अवश्य करे; क्योंकि जैसे जीवहीन देही कोई भी कर्म नहीं कर सकता, उसी प्रकार पुरश्चरणहीन मन्त्र सिद्धि नहीं दे सकता; अतएव साधक स्वयं पुरश्चरण करे या गुरु से कराए। गुरु के अभाव में शास्त्रवेत्ता, सर्वप्राणी-हितैषी और सद्गुणसम्पन्न ब्राह्मण से कराए। गुणशालिनी पुत्रवती स्त्रीगुरु से भी पुरश्चरण कराया जा सकता है।

पुरश्चरणे स्थाननिर्णयः

योगिनीहृदये—

आदौ पुरस्क्रियां कर्त्तुं स्थाननिर्णय उच्यते।
पुण्यक्षेत्रं नदीतीरं गुहां पर्वतमस्तकम्।
तीर्थप्रदेशाः सिन्धूनां सङ्गमः पावनं वनम्॥
उद्यानानि विविक्तानि बिल्वमूलं तटं गिरेः।

तुलसी-काननं गोष्ठं वृषशून्यं शिवालयम् ॥
अश्वत्थामलकीमूलं गोशाला जलमध्यतः ।
देवतायतनं कूलं समुद्रस्य निजालयम् ।
साधने च प्रशस्तानि स्थानान्येतानि मन्त्रिणाम् ॥
सूर्यस्याग्नेर्गुरोरिन्दोर्दीपस्य च जलस्य च ।
विप्राणाञ्च गवाञ्चैव सन्निधौ शस्यते जपः ।
अथवा निवसेत्तत्र यत्र चित्तं प्रसीदति ॥

तथा—

गृहे शतगुणं विद्याद्गोष्ठे लक्षगुणं भवेत् ।
कोटिर्देवालये पुण्यमनन्तं शिवसन्निधौ ॥

पुरश्चरणस्थान—योगिनीहृदय में लिखा है कि पुण्यक्षेत्र, नदीतट, गुहा, पर्वतशिखर, तीर्थ, सागरसंगम, तपोवन, निर्जन उपवन, विल्वमूल, तराई, तुलसी-कानन, वृषशून्य गोशाला स्थान, वृषशून्य शिवालय, पीपलमूल, आमलामूल, गोशाला, जलमध्यवर्ती स्थान, देवालय, समुद्रतट और अपना घर—ये सभी स्थान साधनकार्य में श्रेष्ठ हैं। सूर्य, अग्नि, गुरु, चन्द्र, प्रदीप, जल, ब्राह्मण और गाय के निकट जप करना शुभद होता है। जिस स्थान पर मन को प्रसन्नता का अनुभव हो, वहीं पुरश्चरण कर्म करे। अपने घर में जप करना सौगुना, गोष्ठ में लाखगुना, देवमन्दिर में कोटिगुना और शिवसान्निध्य में जप करना अनन्त फलदायक होता है।

ब्रह्मयामले—

जपमेकगुणं गेहे गोष्ठे दशगुणं स्मृतम् ।
वनान्तरे शतगुणं तडागे च सहस्रकम् ॥
नदीतीरे लक्षगुणं नगाग्रे कोटिसम्मितम् ।
शिवालये कोटिशतमनन्तं गुरुसन्निधौ ॥

तथा—

गृहे गोष्ठवनाराम-नदी-नग-शिवालये ।
गुरोर्वा सन्निधौ यत्र स जपः परमो मतः ॥
म्लेच्छ - दुष्ट - मृगव्याल - शङ्कातङ्कविवर्जिते ।
एकान्तपावने निन्दारहिते भक्तिसंयुते ॥
सुदेशे धार्मिके देशे सुभिक्षे निरुपद्रवे ।
रम्ये भक्तजनस्थाने निवसेत्तपसः प्रिये ॥
गुरूणां सन्निधाने च चित्तैकाग्रस्थले तथा ।

एषामन्यतमस्थानमाश्रित्य जपमाचरेत् ।
यत्र ग्रामे जपेन्मन्त्री तत्र कूर्मं विचिन्तयेत् ।।

गौतमीये—

पर्वते सिन्धुतीरे वा पुण्यारण्ये नदीतटे ।
यदि कुर्यात् पुरश्चर्यां तत्र कूर्मं न चिन्तयेत् ।
ग्रामे वा यदि वा राष्ट्रे गृहे तञ्च विचिन्तयेत् ।।

ब्रह्मयामल में लिखा है कि अपने घर में एकगुना, गोष्ठ में दशगुना, वन में शतगुना, तालाब में हजारगुना, नदीतट पर लाखगुना, पर्वताग्र पर कोटिगुना, शिवालय में सौ कोटिगुना और गुरु के पास जप करना अनन्त फलदायी है। म्लेच्छ वसतिस्थान और मृग-सर्पादि से युक्त स्थान को छोड़कर पवित्र, अनिन्द्य तथा मनोरम स्थान को भी ग्रहण किया जा सकता है। जिस स्थान पर जप करे, उसके सम्बन्ध में साधक कूर्मचक्र से विचार कर ले।

गौतमीय तन्त्र में लिखा है कि पर्वत, समुद्रतट, तपोवन और नदीतट के सम्बन्ध में कूर्मचक्र का विचार करने की आवश्यकता नहीं है; परन्तु गाँव में या वास्तु-गृह में पुरश्चरण करने पर कूर्मचक्र का विचार अवश्य करे।

पुरश्चरणे भक्ष्यादिनियम:

गौतमीये—

पुरश्चरणकृन्मन्त्री भक्ष्याभक्ष्यं विचारयेत् ।
अन्यथा भोजनाद्दोषात् सिद्धिहानि: प्रजायते ।।
शस्तान्नञ्च समश्नीयान्मन्त्रसिद्धिसमीहया ।
तस्मान्नित्यं प्रयत्नेन शस्तान्नाशी भवेन्नर: ।।

अगस्त्यसंहितायाम्—

दधिक्षीरं घृतं गव्यमैक्षवं गुडवर्जितम् ।
तिलांश्चैव सिता मुद्गा: कन्द: केमुकवर्जित: ।।
नारिकेलफलञ्चैव कदली लवली तथा ।
आम्रमामलकञ्चैव पनसञ्च हरीतकी ।
व्रतान्तरे प्रशस्तञ्च हविष्यं मन्यते बुधै: ।।

व्रतारम्भ इति वा पाठ:।

हैमन्तिकं सिता स्विन्नं धान्यं मुद्गास्तिला यवा: ।
कलायकङ्गुनीवारा वास्तुकं हिलमोचिका ।।
षष्टिकाकालशाकञ्च मूलकं केमुकेतरत् ।

लवणे सैन्धव-सामुद्रे गव्ये च दधिसर्पिणी ॥
पयोनुद्धृतसारञ्च पनसाम्रहरीतकी ।
पिप्पली जीरकञ्चैव नागरङ्गञ्च तिन्तिडी ॥
कदली लवली धात्री फलान्यगुडमैक्षवम् ।
अतैलपक्वं मुनये हविष्यान्नं प्रचक्षते ॥
भुञ्जानो वा हविष्यान्नं शाकं यावकमेव वा ।
पयो मूलं फलं वापि यत्र यत्रोपलभ्यते ॥
रम्भाफलं तिन्तिडीकं कमलानागरङ्गकम् ।
फलान्येतानि भोज्यानि एभ्योन्यानि विवर्जयेत् ॥

यत्तु योगिनीतन्त्रे—

चिञ्चाञ्च नालिकाशाकं कलायं लकुचं तथा ।
कदम्बं नारिकेलञ्च व्रते कुष्माण्डकं त्यजेत् ॥

तत्तु व्रतान्तरे बोध्यम्।

पुरश्चरण में वैधावैध नियम—गौतमीय तन्त्र में लिखा है कि पुरश्चरणकारी साधक भक्ष्याभक्ष्य का विचार रक्खे; अन्यथा भोजनदोष के कारण सिद्धि नहीं होगी। मन्त्रसिद्धि की कामना से साधक को हविष्याशी रहना चाहिये।

अगस्त्यसंहिता में लिखा है कि गोदधि, गोदुग्ध, गोघृत, गन्ने की चीनी, तिल, सोनामूंग, केमुक छोड़कर कन्द, नारियल, केला, लवली, आम, आँवला, कटहल, हर्रे व्रत के लिये हविष्य हैं। मतान्तर से हैमन्तिक धान्य, सेन्धा नमक, पीपल, जीरा, केला और जो वस्तुयें तेल में न पकी हों, वे सब भी हविष्यान्न हैं।

उपरोक्त हविष्यान्नों का भोजन करे और शाक, यावक, दूध, मूल, फल का यथोपलब्ध भोजन करे। केला, इमली, कमला, नारंगी आदि फल का सेवन करे। कुछ मत से ये भी विवर्जित हैं।

योगिनीतन्त्र के अनुसार चिञ्चा, नालिकाशोक, कलाय, लकुच, कदम्ब, नारियल और कुष्माण्ड ग्राह्य नहीं हैं।

पुरश्चरणे वर्ज्यानि

विवर्जयेन्मधु क्षारलवणं तैलमेव च ।
ताम्बूलं कांस्यपात्रञ्च दिव्यभोजनमेव च ॥

तथा—

क्षारञ्च लवणं मांसं गृञ्जनं कांस्यभोजनम् ।
माषाढकीमसूरांश्च कोद्रवांश्चणकानपि ।

अन्नं पर्युषितञ्चैव निःस्नेहं कीटदूषितम् ॥

रामार्चनचन्द्रिकायाम्—

मैथुनं तत्कथालापं तद्गोष्ठीं परिवर्जयेत्।
ऋतुकालं विना मन्त्री स्वस्त्रियं नाभिसंस्पृशेत् ॥
लवणञ्चैव यत्क्षारं तथा क्षौद्रं रसान्तरम्।
कौटिल्यं क्षौरमभ्यङ्गमनिवेदितभोजनम् ॥
असङ्कल्पितकृत्यञ्च वर्जयेन्मर्दनादिकम्।
स्नायाच्च पञ्चगव्येन केवलामलकेन वा ॥
मन्त्रं जप्त्वान्नपानीयैः स्नानाचमनभोजनम्।
कुर्याद्यथोक्तविधिना त्रिसन्ध्यां देवतार्चनम् ॥
त्रिसन्ध्यमेकसन्ध्यं वा न मन्त्रं केवलं जपेत्।
शक्त्या त्रिषवणं स्नानमशक्तौ द्वे सकृच्च वा ॥
अस्नातस्य फलं नास्ति न चातर्पयतः पितॄन्।
अपवित्रकरो नग्नः शिरसि प्रवृत्तोऽपि वा।
प्रलपन् प्रजपेद्यावत्तावन्निष्फलमुच्यते ॥

पुरश्चरणकाल में वर्ज्य वस्तुयें—पुरश्चरणकाल में मधु, क्षार द्रव्य, नमक, तेल, ताम्बूल और कांसे के पात्र का व्यवहार तथा दिन के भोजन का त्याग करे। मांस, गाजर, मसूर, अरहर, कोदो, चना, बासी अन्न, चिकनाई-रहित द्रव्य और कीड़े लगे हुए पदार्थ का व्यवहार न करे।

रामार्चनचन्द्रिका के अनुसार मैथुन, मैथुनालाप और गप-शप त्याज्य हैं तथा ऋतु-काल के अतिरिक्त अपनी पत्नी का स्पर्श न करे। पुरश्चरणकाल में बाल न कटवाये, तेल-मालिश न करे, अनिवेदित भोजन न करे। पञ्चगव्य या आँवले के रस द्वारा मन्त्र-जप-पूर्वक स्नान और आचमन करके खाद्य और पेय पर मन्त्र का जप करके भोजन करे।

इसी प्रकार यथाविधान तीनों संध्याओं में देवता का पूजन करे। त्रिसन्ध्या या एकसन्ध्या में केवल मन्त्रजप करे। समर्थ व्यक्ति तीन बार और असमर्थ व्यक्ति एक या दो बार स्नान करे। स्नान और पितृतर्पण किये विना कार्य करने से वह निष्फल होता है। अशुद्ध हाथ, नग्न या अनावृत मस्तक होकर या कुछ प्रलाप करते हुए जप करना व्यर्थ है।

नारदीये—

मृदु सोष्णं सुपक्वञ्च कुर्याद्वै लघु भोजनम्।
नेन्द्रियाणां यथा वृद्धिस्तथा भुञ्जीत साधकः ॥

कुलार्णवे—

यस्यान्नपानपुष्टाङ्गः कुरुते धर्मसञ्चयम् ।
अन्नदातुः फलस्यार्द्धं कर्त्तुश्चार्द्धं न संशयः ॥
तस्मात् सर्वप्रयत्नेन परान्नं वर्जयेत् सुधीः ।
पुरश्चरणकाले तु सर्वकर्मसु शाङ्करि ॥
जिह्वा दग्धा परान्नेन करौ दग्धौ प्रतिग्रहात् ।
मनो दग्धं परस्त्रीभिः कथं सिद्धिर्वरानने ॥

परान्नं भिक्षालब्धेतरविषयम्। भिक्षायां स्वत्वोत्पादनात्। तथा च—

वैदिकाचारयुक्तानां शुचीनां श्रीमतां सताम् ।
सत्कुलस्थानजातानां भिक्षाशी चाग्रजन्मनाम् ॥

वामकेश्वरतन्त्रे—

विहाय वह्निं न हि वस्तु किञ्चिद्ग्राह्यं परेभ्यः सति सम्भवे च ।
असम्भवे तीर्थबहिर्विशुद्धात् पर्वातिरिक्ते पतिगृह्य जप्यात् ॥
तत्रासमर्थोऽनुदिनं विशुद्धाद्याचेत यावद्दिनमात्रभक्ष्यम् ।
गृह्णाति रागादधिकं न सिद्धिः प्रजायते कल्पशतैरमुष्य ॥

नारदीयतन्त्र में लिखा है कि पुरश्चरणकाल में हल्का, अनुष्ण और सुपक्व पदार्थ का भोजन करे। इन्द्रियों को उत्तेजित करने वाले पदार्थ न खाये।

कुलार्णवतन्त्र का वचन है कि जिसका अन्न-जल ग्रहण करते हुए धर्मकर्म किया जाता है, उसे उस धर्म का आधा फल मिलता है और आधा साधक को मिलता है। अतः पुरश्चरणकाल में परान्न वर्जित है। परान्नभोजन से जिह्वा, प्रतिग्रह से हाथ और परस्त्री से मन दग्ध होता है। ऐसी दशा में सिद्धि कैसे सम्भव है? यहाँ परान्न से भिक्षा से भिन्न अन्य उपाय से प्राप्त अन्न समझना चाहिये; क्योंकि भिक्षान्न पर भिक्षुक का अपना अधिकार होता है। वैदिकाचारी, शुचि, श्रीमान्, सज्जन, सत्कुलोत्पन्न से प्राप्त भिक्षा पाने में दोष नहीं है।

वामकेश्वरतन्त्र के अनुसार यदि अपने में सामर्थ्य हो तो वैदिकाचारी, पवित्र, सत्कुलोत्पन्न, श्रीमान्, सद्ब्राह्मण को छोड़कर किसी से अग्नि के सिवा कोई वस्तु ग्रहण न करे। यदि स्वयं असमर्थ हो तो तीर्थ के अतिरिक्त स्थान में, पर्वरहित तिथि में, विशुद्ध व्यक्ति से एक दिन का भक्ष्य भोजन भिक्षारूप में ले। जो व्यक्ति लोभवश अधिक भिक्षा लेता है, उसे सौ कल्पों में भी सिद्धि नहीं मिलती।

सकृदुच्चरिते शब्दे प्रणवं समुदीरयेत् ।
प्रोक्ते पारसवे शब्दे प्राणायामं सकृच्चरेत् ॥

बहुप्रलापी चाचम्य न्यस्याङ्गानि ततो जपेत्।
क्षुतेऽप्येवं तथाऽस्पृश्यस्थानानां स्पर्शनेऽपि च।
एवमादींश्च नियमान् पुरश्चरणकृच्चरेत्॥
विण्मूत्रोत्सर्गशङ्कादियुक्तः कर्म करोति यः।
जपार्चनादिकं सर्वमपवित्रं भवेत् प्रिये॥
मलिनाम्बरकेशादि मुखदौर्गन्ध्यसंयुतः।
यो जपेत्तं दहत्याशु देवता गुप्तिसंस्थिता॥
आलस्यं जृम्भणं निद्रां क्षुतं निष्ठीवनं भयम्।
नीचाङ्गस्पर्शनं कोपं जपकाले विवर्जयेत्॥
एवमुक्तविधानेन विलम्बं त्वरितं विना।
उक्तसंख्यां जपं कुर्यात् पुरश्चरणसिद्धये॥
देवतागुरुमन्त्राणामैक्यं सम्भावयन् धिया।
जपेदेकमनाः प्रातःकालान्मध्यन्दिनावधि॥
यत्संख्यया समारब्धं तत्कर्तव्यमहर्निशम्।
यदि न्यूनाधिकं कुर्याद्व्रतभ्रष्टो भवेन्नरः॥

जप के समय अन्य शब्द एक बार बोलने से प्रणवपाठपूर्वक फिर से जप प्रारम्भ करना पड़ता है। निष्ठुर शब्द कहने से एक बार प्राणायाम और अनेक बातें करने से आचमन तथा अंगन्यास करके फिर से जपारम्भ करें। जपकाल में अस्पृश्य स्थान का स्पर्श होने पर भी आचमनादि करना चाहिये। मल-मूत्र के वेग को रोके हुए जो जप या पूजा की जाती है, वह अपवित्र होती है। मैला वस्त्र पहनकर, केश और मुखादि को दुर्गन्धियुक्त रखते हुए जप करने से देवता चुपचाप उस जापक का नाश करते हैं। आलस्य, जम्भाई, नींद, भूख, थूकना, भय, नीच जाति का स्पर्श और क्रोध—ये सब जपकाल में वर्जित हैं। न बहुत जल्दी, न बहुत धीरे और निश्चित संख्या में जप करे। देवता, गुरु और मन्त्र में ऐक्यभाव रखते हुए एकाग्र मन से प्रातःकाल से मध्याह्न काल तक जप करना चाहिये; क्योंकि अधिक समय तक जप करने से सम्भव है कि जिह्वा की क्लान्ति के कारण जपसंख्या में न्यूनाधिक्य हो जाय। पहले दिन जो जपसंख्या है, उसी संख्या में बाद में भी प्रतिदिन जप होना चाहिये; क्योंकि किसी दिन कम और किसी दिन अधिक जप करने से वह निष्फल होता है।

गौतमीये—

न वीक्षेत् पतितं व्रात्यं पिशुनं देवनिन्दकम्।
तथाऽनाश्रमिनं विप्रं तथा विश्वविनिन्दकम्॥

मुण्डमालायाम्—

यत्संख्यया समारब्धं तज्जप्तव्यं दिने दिने।
न्यूनाधिकं न कर्त्तव्यमासमाप्तिं सदा जपेत्।
प्रजपेदुक्तसंख्यायाश्चतुर्गुणजपः कलौ ॥

अन्यत्रापि—

कृते जपस्तु कल्पोक्तस्त्रेतायां द्विगुणो जपः।
द्वापरे त्रिगुणं प्रोक्तश्चतुर्गुणजपः कलौ ॥

कुलार्णवेऽपि—

न्यूनातिरिक्तकर्माणि न फलन्ति कदाचन।
यथाविधि कृतान्येव तत्कर्माणि फलन्ति हि ॥
भूशय्या ब्रह्मचारित्वं मौनञ्चाचार्यसेविता।
नित्यं त्रिषवणं स्नानं क्षुद्रकर्मविवर्जनम् ॥
नित्यपूजा नित्यदानं देवतास्तुतिकीर्त्तनम्।
नैमित्तिकार्चनञ्चैव विश्वासो गुरुदेवयोः।
जपनिष्ठा द्वादशैते धर्माः स्युर्मन्त्रसिद्धिदाः ॥
स्त्रीशूद्रपतितव्रात्यनास्तिकोच्छिष्टभाषणम्।
असत्यभाषणञ्चैव जृम्भणं परिवर्जयेत् ॥
सत्येनापि न भाषेत जपहोमार्चनादिषु।
अन्यथानुष्ठितं सर्वं भवत्येव निरर्थकम् ॥
पुरश्चरणकाले तु यदि स्यान्मृतसूतकम्।
तथापि कृतसङ्कल्पो व्रतं नैव परित्यजेत् ॥

गौतमीय तन्त्र में लिखा है कि जपकाल में पतित, व्रात्य अर्थात् सावित्री-भ्रष्ट या जिसका यज्ञोपवीत अयोग्य समय में हुआ हो, खल, देवनिन्दक, अनाश्रमी ब्राह्मण और विश्वनिन्दक व्यक्ति का दर्शन न करे।

मुण्डमालातन्त्र के अनुसार पहले दिन जितनी संख्या में जप किया गया हो, उतनी ही संख्या में प्रतिदिन जप करना चाहिये। कम या अधिक जप न करके निश्चित संख्या में जप करके जप समाप्त करे। सतयुग की कल्पोक्त संख्या से दुगुना जप त्रेता में, तिगुना जप द्वापर में और चौगुना जप कलियुग में करना चाहिये।

कुलार्णवतन्त्र में लिखा है कि न्यूनाधिक कर्मों का फल कभी नहीं मिलता, विधिवत किये गये कर्मों का फल ही मिलता है। पुरश्चरणकाल में बारह बातों पर ध्यान देना

आवश्यक हैं। वे हैं—१. भूशय्या, २. ब्रह्मचारित्व, ३. मौनावलम्बन, ४. आचार्यसेवा, ५. नित्य त्रिसन्ध्या स्नान, ६. क्षुद्रकर्मों का परित्याग, ७. नित्य पूजा, ८. नित्य दान, ९. देवतास्तुति, १०. नैमित्तिक पूजा, ११. गुरु और देवता में विश्वास एवं १२. जपनिष्ठा।

जूठे मुँह बातचीत, मिथ्या भाषण-कुटिल बातें विवर्जित हैं। जप, हवन, पूजनकाल में सत्य भी न बोले अर्थात् मौन रहे। ऐसा न करने से सफलता नहीं मिलती। पुरश्चरणकाल में मृतकाशौच और जातकाशौच होने पर भी संकल्पित कार्य को नहीं छोड़ना चाहिये।

योगिनीहृदये—

शयीत कुशशय्यायां शुचिवस्त्रधरः सदा।
प्रत्यहं क्षालयेत् शय्यामेकाकी निर्भयः स्वपेत्॥
असत्यभाषणं वाच्यं कौटिल्यं परिवर्जयेत्।
वर्जयेद् गीतवाद्यादिश्रवणं नृत्यदर्शनम्॥
अभ्यङ्गं गन्धलेपञ्च पुष्पधारणमेव च।
त्यजेदुष्णोदकस्नानमन्यदेवप्रपूजनम्॥

तत्रैव—

नैकवासा जपेन्मन्त्रं बहुवस्त्राकुलोऽपि वा।

वैशम्पायनसंहितायाम्—

विपर्यासं न कुर्याच्च कदाचिदपि मोहतः।
उपर्यधोबहिर्वस्त्रे पुरश्चरणकृन्नरः।
विनियोगविधाने न भवेदनियमः क्वचित्॥
पतितानामन्त्यजानां दर्शने भाषणे श्रुते।
क्षुतेऽधोवायुगमने जृम्भणे जपमुत्सृजेत्॥
तथाचम्य च तत्प्राप्तौ प्राणायामं षडङ्गकम्।
कृत्वा सम्यग्जपेच्छेषं यद्वा सूर्यादिदर्शनम्॥

आदिशब्दाद्वह्निं ब्राह्मणञ्च।

योगिनीहृदय में लिखा है कि पुरश्चरणकाल में पवित्र कपड़े पहन कर कुश-शय्या पर सोये। शय्या को प्रतिदिन धोकर उस पर अकेले निर्भय होकर सोये। गाना-बजाना सुनना, नाच देखना, शरीर में गन्ध लगाना, निर्माल्य छोड़कर अन्य पुष्प धारण करना, गर्म जल से स्नान करना और अन्य देवता का पूजन करना वर्जित है। एक वस्त्र या बहुत वस्त्र पहन कर जप नहीं करना चाहिये।

वैशम्पायनसंहिता में लिखा है कि वस्त्रसम्बन्धी कोई अनियम न करे। एक वस्त्र या बहुत वस्त्र पहन कर जप नहीं करे। पतित व्यक्ति को देखने पर, आलाप सुनने में, जँभाई आने पर या अपान वायु निकलने पर जप छोड़ कर पुनः आचमन-प्राणयाम-अंग-न्यासादि करके सूर्य, अग्नि और ब्राह्मणदर्शनपूर्वक जप का प्रारम्भ करे।

तन्त्रान्तरे—

मनःसंहरणं शौचं मौनं मन्त्रार्थचिन्तनम्।
अव्यग्रत्वमनिर्वेदो जपसम्पत्तिहेतवः ॥
उष्णिषी कञ्चुकी नग्नो मुक्तकेशो गणावृतः।
अपवित्रकरोऽशुद्धः प्रलपन्न जपेत् क्वचित् ॥
अनासनः शयानो वा गच्छन् भुञ्जान एव वा।
अप्रावृत्तौ करौ कृत्वा शिरसि प्रावृतोऽपि वा ॥
चिन्ताव्याकुलचित्तो वा क्षुब्धो भ्रान्तः क्षुधान्वितः।
रथ्यायामशिवस्थाने न जपेत्तिमिरावृते ॥
उपानद्गूढपादौ वा यानशय्यागतस्तथा।
प्रसार्य न जपेत् पादावुत्कटासन एव वा ॥
न यज्ञकाष्ठे पाषाणे न भूमौ नासने स्थितः।
मार्जारं कुक्कुटं क्रौञ्चं श्वानं शूद्रं कपिं खरम्।
दृष्ट्वाचाम्य जपेच्छेषं स्पृष्ट्वा स्नानं विधीयते ॥

सर्वत्र जपे अयं नियमः। मानसे तु नियमो नास्त्येव। तथा च—

अशुचिर्वा शुचिर्वापि गच्छंस्तिष्ठन् स्वपन्नपि।
मन्त्रैकशरणो विद्वान् मनसैव सदाभ्यसेत्।
न दोषो मानसे जाप्ये सर्वदेशेऽपि सर्वदा ॥

श्यामादिविद्याजपे तु तत्प्रकरणे विशेषो द्रष्टव्यः ।

तन्त्रान्तर के अनुसार विना आसन या चलते-सोते समय, भोजन के समय, चिन्तित या क्रुद्ध, भ्रान्त अथवा क्षुधार्त होने पर जप न करे। दोनों हाथों को ढककर या मस्तक को प्रावृत करके जप न करे। मार्ग में और अमंगल स्थान में, अन्धकारमय घर में तथा चर्मपादुका पहने हुए या सवारी पर बैठकर किया जाने वाला जप निष्फल होता है। पैर फैला कर या उत्कटासन में बैठकर, यज्ञकाष्ठ, पत्थर, मिट्टी पर बैठकर या आसन पर खड़े होकर जप न करे। जप के समय बिल्ली, मुर्गा, बगला, शूद्र, वानर, गधा— इनमें से कोई दिखाई पड़े तो आचमन करे और स्पर्श होने पर स्नान करके जप को पूरा करे। इन नियमों का पालन सभी प्रकार के जप में करना होता है; किन्तु मानस जप में कोई

नियम लागू नहीं होता। जाते समय, सोते समय शुचि या अशुचि अवस्था में भी मन्त्र का स्मरण करते हुए मानस जप का अभ्यास किया जाता है। अतः मानस जप सर्वत्र सभी दशाओं में किया जा सकता है। उसमें कोई दोष नहीं होता।

श्यामादि विद्याओं के मन्त्रजप में कुछ विशेष बातें हैं, जिनके लिये सम्बन्धित प्रकरण अवलोकनीय है।

जपफलम्

शिवधर्मे—

जपनिष्ठो द्विजश्रेष्ठोऽखिलयज्ञफलं लभेत्।
सर्वेषामेव यज्ञानां जायतेऽसौ महाफलः॥
जपेन देवता नित्यं स्तूयमाना प्रसीदति।
प्रसन्ना विपुलान् कामान् दद्यान्मुक्तिञ्च शाश्वतीम्॥
यक्षरक्षःपिशाचांश्च ग्रहाः सर्पाश्च भीषणाः।
जल्पिनं नोपसर्पन्ति भयभीताः समन्ततः॥

पद्मनारदीययोः—

यावन्तः कर्मयज्ञाः स्युः प्रतिष्ठादितपांसि च।
सर्वे ते जपयज्ञस्य कलां नार्हन्ति षोडशीम्॥
माहात्म्यं वाचिकस्यैतज्जपयज्ञस्य कीर्त्तितम्।
तस्माच्छतगुणोपांशुः सहस्रो मानसः स्मृतः॥
मानसः सिद्धकामानां पुष्टिकामैरुपांशुकः।
वाचिको मारणे चैव प्रशस्तो जप ईरितः॥

गौतमीये—

शक्त्या त्रिषवणं स्नानमशक्तो द्विः सकृच्च वा।
त्रिसन्ध्यं प्रजपेन्मन्त्रं पूजनञ्च समं भवेत्॥

सन्ध्यात्रये पूजाङ्गत्वाज्जपमष्टोत्तरशतमित्यर्थः।

एकदा वा भवेत्पूजा जपेत्तत्पूजनं विना।
जपान्ते वा भवेत्पूजा पूजान्ते वा जपेन्मनुम्॥
प्रातःकाले समारभ्य जपेन्मध्यन्दिनावधि॥

मध्यन्दिनावधीति न नियमपरं किन्त्वधिककालव्यवच्छेदपरम्। अन्यथा तत्समय-जपनियमे कदाचिज्जिह्वाया जाड्याजाड्येन प्रतिनियतजपसंख्याया अपूर्णत्वे अधिकत्वे वा नियमभङ्गः स्यात्।

मन: संहृत्य विषयान्मन्त्रार्थगतमानस: ।
न द्रुतं न विलम्बञ्च जपेन्मौक्तिकहारवत् ॥

जपफल—शिवधर्म में लिखा है कि जपनिष्ठ द्विज को समस्त यज्ञों का फल मिलता है; क्योंकि जपयज्ञ सभी यज्ञों से अधिक फलप्रद हैं। जप द्वारा स्तुति करने से देवता प्रसन्न होकर विपुल काम्य वस्तुयें एवं शाश्वत मोक्ष प्रदान करता है। यक्ष-राक्षस-पिशाच-ग्रह और भीषण सर्प भयभीत होने के कारण जापक के पास नहीं आते।

पाद्म नारदीय में लिखा है कि कर्मयज्ञ, प्रतिष्ठा और तप—इनमें से कोई भी जप यज्ञ के षोडशांश के बराबर भी फलप्रद नहीं है। यह वाचिक जप का फल है। इसकी अपेक्षा उपांशु जप सौगुना और उपांशु की अपेक्षा मानस जप हजारगुना अधिक फलदायी है। सिद्धि-कामी के लिये मानस जप, पुष्टि-कामी के लिये उपांशु जप और मोक्षकामी के लिये वाचिक जप प्रशस्त है। पूजा के विना जप निष्फल होता है। अत: कम से कम एक बार पूजा अवश्य करे। चाहे जप पूरी होने पर पूजा करे या पूजा करने के बाद जप करे । प्रात:काल से जप प्रारम्भ करके दोपहर दिन तक जप करे; क्योंकि अधिक समय तक जप करने से जीभ के क्लान्त होने की सम्भावना होती है, जिससे जपसंख्या में न्यूनाधिक्य हो सकता है। मन को एकाग्र करके, विषयों से दूर करके मन्त्रार्थ का चिन्तन करते हुए सामान्य रूप से धीमे-धीमे मोती की हार के समान समान गति से जप करे।

जपनिरूपणम्

जप: स्यादक्षरावृत्तिर्मानसोपांशुवाचिकै: ।
धिया यदक्षरश्रेणीं वर्णस्वरपदात्मिकाम् ।
उच्चरेदर्थमुद्दिश्य मानस: स जप: स्मृत: ॥
जिह्वौष्ठौ चालयेत्किञ्चिद्देवतागतमानस: ।
किञ्चिच्छ्रवणयोग्य: स्यादुपांशु: स जप: स्मृत: ॥

विशुद्धेश्वरतन्त्रे—

निजकर्णागोचरो यो स जपो मानस: स्मृत: ।
उपांशुर्निजकर्णस्य गोचर: परिकीर्त्तित: ॥
मन्त्रमुच्चारयेद्वाचा स जपो वाचिक: स्मृत: ।
उच्चैर्जपाद्विशिष्ट: स्यादुपांशुर्दशभिर्गुणै: ।
जिह्वाजप: शतगुण: सहस्रो मानस: स्मृत: ॥

तन्त्रान्तरे—

उच्चैर्जपोऽधम: प्रोक्त उपांशुर्मध्यम: स्मृत: ।
उत्तमो मानसो देवि त्रिविध: कथितो जप: ।

जिह्वाजपः स विज्ञेयः केवलं जिह्वया बुधैः ॥
अतिह्रस्वो व्याधिहेतुरतिदीर्घो वसुक्षयः ।
अक्षराक्षरसंयुक्तं जपेन्मौक्तिकहारवत् ॥
मनसा यत्स्मरेत्स्तोत्रं वचसा वा मनुं स्मरेत् ।
उभयं निष्फलं याति भिन्नभाण्डोदकं यथा ॥

गौतमीये—

पशुभावे स्थिता मन्त्राः प्रोक्ता वर्णास्तु केवलाः ।
सौषुम्ने ध्वन्युच्चरिता प्रभुत्वं प्राप्नुवन्ति ते ।
मन्त्राक्षराणि चिच्छक्तौ प्रोतानि परिभावयेत् ॥
तमेव परमव्योम्नि परमानन्दबृंहिते ।
दर्शयत्यात्मसद्भावं पूजाहोमादिभिर्विना ॥

गौतमीये दशाक्षरपटले—

मूलमन्त्रं प्राणबुद्ध्या सुषुम्नामूलदेशके ।
मन्त्रार्थं तस्य चैतन्यं जीवं ध्यात्वा पुनः पुनः ॥

जप-निरूपण—मन्त्र के वर्णों का बार-बार आवृत्ति करना ही जप है। जप तीन प्रकार का होता है—मानसिक, उपांशु और वाचिक। मन्त्रार्थ का स्मरण करते हुए मन ही मन मन्त्र का उच्चारण करना मानसिक जप है। देवता में मन लगाकर जिह्वा और ओष्ठ को कुछ कम्पित करते हुए केवल अपने सुनाई पड़ने योग्य मन्त्रोच्चारण को उपांशु जप कहते हैं। वाणी द्वारा उच्चारण 'वाचिक जप' कहलाता है। उच्च स्वर वाला जप अधम, उपांशु जप मध्यम और मानस जप उत्तम होता है।

विशुद्धेश्वर तन्त्र के अनुसार निजकर्णगोचर जप को मानसिक जप कहते हैं। उपांशु जप भी निजकर्णगोचर होता है। मन्त्रोच्चारणपूर्वक जो जप होता है, उसे वाचिक कहते हैं। वाचिक जप से दसगुना अधिक फलप्रद उपांशु जप होता है। जीभ हिलाकर जप करना सौगुना फलप्रद है। मानस जप का फल हजारगुना है।

तन्त्रान्तर में लिखित है कि वाचिक जप अधम, उपांशु मध्यम और मानसिक जप उत्तम माना जाता है। इस प्रकार जप का तीन प्रकार है। जिह्वा-जप केवल जिह्वा को ही ज्ञात होता है। अति ह्रस्व जप व्याधिप्रद है। अतिदीर्घ जप से धनहानि होती है। मोती-माला की तरह अक्षराक्षर से युक्त करके मन्त्र-जप करना चाहिये।

जो मनुष्य मन ही मन स्तोत्र का पाठ करता है और मन्त्रजप स्पष्ट उच्चारणपूर्वक करता है, उसका वह स्तोत्रपाठ और मन्त्रजप निष्फल होता है।

गौतमीय तन्त्र में लिखित है कि जो मन्त्र पशुभाव में स्थित हैं, वे केवल वर्णमात्र हैं। अत: सभी मन्त्रों को 'सुषुम्ना ध्वनि' अर्थात् सुषुम्ना नाड़ी द्वारा उच्चारित करने से प्रभुत्व मिलता है। जपकाल में मन्त्राक्षरों को चैतन्यमयी शक्ति से गुँथा हुआ समझना चाहिये। यह भावना करे कि वे चैतन्य शक्ति और परमामृतमय परमशिव में ग्रथित हैं। इस प्रकार के अनुष्ठान से पूजा-होमादि की आवश्यकता नहीं होती। जपमात्र से ही फल मिल जाता है। गौतमीय तन्त्र के दशाक्षर पटल में लिखित है कि प्राणबुद्धि से सुषुम्ना के मूल देश में मूल मन्त्र का जीवरूप में ध्यान करे। मन्त्रार्थ और मन्त्रतत्त्व को हृदयंगम करते हुए जप करे।

कुलार्णवेऽपि—

मनोऽन्यत्र शिवोऽन्यत्र शक्तिरन्यत्र मारुतः।
न सिध्यति वरारोहे कल्पकोटिशतैरपि॥
जातसूतकमादौ स्यादन्ते च मृतसूतकम्।
सूतकद्वयसंयुक्तो यो मन्त्रः स न सिध्यति॥
गुरोस्तत्र हितं कृत्वा मन्त्रं यावज्जपेद्धिया।
सूतकद्वयनिर्मुक्तः स मन्त्रः सर्वसिद्धिदः॥

तत्रैव—

तस्माद्देवि! प्रयत्नेन ध्रुवेण पुटितं मनुम्।
अष्टोत्तरशतं वापि सप्तवारं जपादितः॥
जपान्ते च ततो जप्याच्चतुर्वर्गफलाप्तये।
ब्रह्मबीजं मनोर्दत्त्वा चाद्यन्ते परमेश्वरि।
सप्तवारं जपेन्मत्रं सूतकद्वयमुक्तये॥
मन्त्रार्थं मन्त्रचैतन्यं योनिमुद्रां न वेत्ति यः।
शतकोटि-जपेनापि तस्य सिद्धिर्न जायते॥
लुप्तबीजाश्च ये मन्त्रा न दास्यन्ति फलं प्रिये।
मन्त्राश्चैतन्यसहिताः सर्वसिद्धिकराः स्मृताः॥
चैतन्यरहिता मन्त्राः प्रोक्ता वर्णास्तु केवलाः।
फलं नैव प्रयच्छन्ति लक्षकोटिशतैरपि॥
मन्त्रोच्चारे कृते यादृक् स्वरूपं प्रथमं भवेत्।
शते सहस्रे लक्षे वा कोटिजापे न तत्फलम्॥
हृदये ग्रन्थिभेदः स्यात्सर्वावयववर्द्धनम्।
आनन्दाश्रूणि पुलको देहावेशः कुलेश्वरि।

गद्गदोक्तश्च सहसा जायते नात्र संशयः ॥
सकृदुच्चरितेऽप्येवं मन्त्रे चैतन्यसंयुते ।
दृश्यन्ते प्रत्यया यत्र पारस्पर्यं तदुच्यते ॥
मासमात्रं जपेन्मन्त्रं भूतलिप्यादिसंयुतम् ।
क्रमोत्क्रमात्सहस्रस्तु तस्य सिद्धो भवेन्मनुः ॥

कुलार्णवतन्त्र में वर्णन है कि जपकाल में मन, परमशिव, शिवशक्ति और प्राणवायु के अलग-अलग रहने से अर्थात् इन सबका एकत्र संयोग न होने से कल्प कोटि जप करने पर भी मन्त्रसिद्धि नहीं होती। मन्त्रोच्चारण से पहले मन्त्र का जननाशौच होता है और मन्त्रोच्चारण के बाद मृतकाशौच होता है। इन दोनो से युक्त मन्त्र सिद्ध नही होता। मन्त्र के आदि और अन्त में ब्रह्मबीज ॐ लगाकर सात बार जप करने से दोनो अशौच दूर हो जाते हैं। दोनों सूतकों से मुक्त मन्त्र ही सर्वार्थसिद्धिप्रदायक होता है।

कुलार्णव के ही अनुसार इसलिये यत्नपूर्वक ॐ से पुटित मन्त्र का जप १०८ बार या सात बार करे। जपमन्त्र के पहले और अन्त में ॐ लगाने से मन्त्र पुटित होता है। इस प्रकार शौचमुक्त मन्त्र से चारो फल प्राप्त होते हैं। मन्त्र के आदि और अन्त मे ॐ लगाकर सात बार जप करने से भी दोनों सूतकों से मन्त्र मुक्त हो जाता है।

मन्त्रार्थ, मन्त्रचैतन्य और योनिमुद्रा जाने विना जो जप किया जाता है, वह निष्फल होता है। लुप्त बीजमन्त्र कभी सिद्धि नहीं देता। चैतन्यमन्त्र से ही सभी सिद्धियाँ मिलती हैं। चैतन्यरहित मन्त्र को वर्ण कहा जाता है। इनके एक लाख करोड़ जप से भी सिद्धि नहीं मिलती। मन्त्रोचार करते ही उसका जो स्वरूप प्रकट होता है, सौ, हजार, लाख, करोड़ जप से भी वैसा फल नहीं मिलता।

शौचमुक्त चैतन्य मन्त्र के जप से हृदयग्रन्थि का भेदन होता है। सभी अवयव वृद्धि को प्राप्त होते हैं। आनन्दाश्रु गिरने लगता है। रोमांच होता है। देहावेश होता है। कण्ठ गदगद हो जाता है। चैतन्य मन्त्र के उच्चारणमात्र से सभी प्रत्यय दीखने लगते हैं। पारस्पर्य दिखने लगता है। एक महीने तक भूतलिपि से संयुक्त करके क्रमोत्क्रम से प्रतिदिन एक हजार जप करने से मन्त्र सिद्ध हो जाता है।

तत्र भूतलिपिः—

पञ्चह्रस्वाः सन्धिवर्णा व्योमेराग्निजलन्धराः ।
अन्त्यमाद्यं द्वितीयञ्च चतुर्थं मध्यमं क्रमात् ॥
पञ्चवर्गाक्षराणि स्युर्वातः श्वेतेन्दुभिः सह ।
एषा भूतलिपिः प्रोक्ता द्विचत्वारिंशदक्षरैः ॥
एवं जपं पुरा कृत्वा तेजोरूपं समर्पयेत् ।

देवस्य दक्षिणे हस्ते कुशपुष्पार्घ्यवारिभिः ॥
सफलं तद्विभाव्यैवं प्राणायामं समाचरेत्।
जपस्यादौ जपान्ते च त्रितयं त्रितयञ्चरेत् ॥

शक्तिविषये देव्या वामहस्ते। तथा च—

एवं जपं पुरा कृत्वा गन्धाक्षतकुशोदकैः।
जपं समर्पयेद्देव्या वामहस्ते विचक्षणः ॥
जपान्ते प्रत्यहं देवि होमयेत्तद्दशांशतः।
तर्पणञ्चाभिषेकञ्च तद्दशांशं ततो मुने ॥
प्रत्यहं भोजयेद्विप्रान् न्यूनाधिक्यप्रशान्तये।
अथवा सर्वसम्पूर्णे होमादिकमथाचरेत् ॥

मुण्डमालायाम्—

यस्य यावान् जपः प्रोक्तस्तद्दशांशजपः क्रमात्।
तत्तद्द्रव्यैर्जपस्यान्ते होमं कुर्याद्दिने दिने।
अथवा लक्षसंख्यायां पूर्णायां होममाचरेत् ॥

भूतलिपि—भूतलिपि इस प्रकार के होते हैं—अ इ उ ऋ ऌ ए ऐ ओ औ ह य र व ल ङ क ख घ ग ञ च छ झ ज ण ट ठ ढ ड न त थ ध द म प फ भ ब श ष स। इसमें कुल ४२ अक्षर होते हैं।

इसे पढ़ने के बाद मूल मन्त्र का उच्चारण करने से अनुलोमक्रम होता है। विलोमक्रम से उक्त भूतलिपि का रूप यह होगा—स ष श ब भ फ प म द ध थ त न डं ढ ठ ट ण ञ झ छ च ज ग घ ख क ङ ल व र य ह औ अ ऐ ए ऌ ऋ उ इ अ। इस प्रकार पहले जप करके कुश, फूल और अर्घ्य जलसहित तेजोरूप जपफल देवता के दाहिने हाथ में समर्पित करे। फलसमर्पणपूर्वक यह जप सफल हुआ—यह सोचते हुए प्राणयाम जप के पहले और बाद में तीन-तीन बार करे। शक्ति के विषय में लिखा है कि गन्ध, अक्षत और कुशोदक से देवी के बाँयें हाथ में जपफल समर्पित करे। जप के अन्त में जप का दशांश हवन करे। हवन का दशांश तर्पण करे और तर्पण का दशांश अभिषेक करे। न्यूनाधिक्य की शान्ति के लिये प्रतिदिन ब्राह्मणभोजन करावे अथवा निश्चित संख्या में जप पूरा होने पर हवनादि करे।

मुण्डमालातन्त्र में लिखा है कि पुरश्चरण में जप के अन्त में जप का दशांश हवन, हवन का दशांश तर्पण, तर्पण का दशांश मार्जन और मार्जन का दशांश ब्राह्मणभोजन करावे। ब्राह्मणभोजन से जप का न्यूनाधिक्य दोष दूर होता है अथवा समस्त जप होने पर हवनादि करे।

तथा होमाद्यशक्तौ च सनत्कुमारतन्त्रे—

यद्यदङ्गं भवेद्भङ्गं तत्संख्याद्विगुणो जपः ।
होमाभावे जपः कार्यो होमसंख्याचतुर्गुणः ॥
विप्राणां क्षत्रियाणाञ्च रससंख्यागुणः स्मृतः ।
वैश्यानां वसुसंख्याकमेषां स्त्रीणामयं विधिः ॥
यं वर्णमाश्रितः शूद्रः स च तस्य विधिञ्चरेत् ।
अनाश्रितस्य शूद्रस्य दिक्संख्याकः समीरितः ।
शूद्रस्य विप्रभक्तस्य तत्पत्न्या सदृशो जपः ॥

योगिनीहृदये—

होमकर्मण्यशक्तानां विप्राणां द्विगुणो जपः ।
इतरेषान्तु वर्णानां सर्वेषां त्रिगुणादि समीरितः ॥

त्रिगुण इति त्रिगुणादिर्होमसंख्यात्रिगुणजपः क्षत्रियेण कार्यः। वैश्येन चतुर्गुणः, शूद्रेण पञ्चगुणः। तदुक्तं कुलप्रकाशे—

यद्यदङ्गविहीनं स्यात्तत्संख्याद्विगुणो जपः ।
कुर्वीत त्रिचतुःपञ्च यथासंख्यं द्विजातयः ॥

एतेन स्त्रीशूद्राणां होमाधिकारः। तथा च शूद्राणां त्र्यस्रमीरितमिति कुण्डप्रकरणे शारदयाम्। स्त्रीणां होमाधिकारश्च तत्रैव—

लाजैस्त्रिमधुरोपेतैर्होमः कन्या प्रयच्छति ।
अनेन विधिना कन्या वरमाप्नोति वाञ्छितम् ॥

अतएव स्त्रीणां होमाधिकारः स च ब्राह्मणद्वारा। तथा च तन्त्रान्तरे—

ओंकारोच्चारणाद्धोमाच्छालग्रामशिलार्चनात् ।
ब्राह्मणीगमनाच्चैव शूद्रश्चाण्डालतां व्रजेत् ॥

इति साक्षान्निषेधात्। तथा—स्त्रीणामपि सर्वत्र वैदिककर्मसु शूद्रतुल्यत्वप्रतिपादनात्। 'स्त्रीशूद्रकरसैस्पर्शो वज्रपातो ममोपरि' इति भगवद्वचनात्।

सनत्कुमारतन्त्र में लिखित है कि जिस अंग की हानि हो, उसके लिये निर्दिष्ट संख्या का दूना जप करे; किन्तु हवन के अभाव होने पर हवनसंख्या का चौगुना जप करे। ब्राह्मण-क्षत्रिय हवनादि में असमर्थ होने पर छःगुना जप करे तथा वैश्य आठगुना जप करे। इनकी स्त्रियों के सम्बन्ध में भी यही नियम लागू होता है। शूद्र जिस वर्ण का आश्रित हो, उसी वर्ण के नियमानुसार कार्य करे। अनाश्रित शूद्र हवनादि में असमर्थ होने पर दसगुना जप करे। जो शूद्र ब्राह्मण का भृत्य हो, उसके और उसकी स्त्री के सम्बन्ध में समान जपसंख्या समझी जाती है।

योगिनीहृदयतन्त्र में वर्णन है कि हवन में असमर्थ ब्राह्मण को दुगुना जप करना चाहिये। इतर वर्णों को तिगुना जप करना चाहिये। क्षत्रियों को हवन का तिगुना जप करना चाहिये। वैश्यों को चौगुना और शूद्रों को पाँचगुना जप करना चाहिये।

कुलप्रकाशतन्त्र में लिखा है कि जो अंगविहीन हो, उसकी संख्या का दुगुना जप करे। द्विजों को तिगुना, चौगुना, पाँचगुना जप करना चाहिये। स्त्री और शूद्रों को हवन का अधिकार नहीं है। शारदातिलक के कुण्डप्रकरण में शूद्र के लिये त्रिकोण कुण्ड की विधि बतलायी गयी है। वहीं यह भी लिखा है कि कन्या घृत, मधु, शक्कर, त्रिमधुर-युक्त लावा से हवन करे। इस सबसे स्त्री और शूद्र का होमाधिकार प्रतिपादित होता है; किन्तु स्त्रियों और शूद्रों को ब्राह्मण से हवन कराना चाहिये। त्रिमधुराक्त लावा से हवन करने से कन्या को वाञ्छित पति प्राप्त होता है।

तन्त्रान्तर में लिखा है कि ओंकार के उच्चारण से, हवन से, शालग्राम-अर्चन से, ब्राह्मणी के साथ मैथुन करने से शूद्रता और चाण्डालता प्राप्त होती है। साथ ही वैदिक कर्मों में स्त्रियों को शूद्रतुल्य माना गया है। भगवद्वचन है कि 'स्त्रीशूद्रकरस्पर्शो वज्रपातो ममोपरि' अर्थात् स्त्री-शूद्र के करस्पर्श से मुझ पर वज्रपात के समान कष्ट होता है।

नृसिंहतापनीयेऽपि—सावित्रीं प्रणवं यजुर्लक्ष्मीं स्त्रीशूद्रयोर्नेच्छन्ति स मृतोऽधोगच्छति नेच्छन्तीति पर्यन्तं पराशरभाष्येऽपि गोविन्दभट्टधृतम्।

स्वाहाप्रणवसंयुक्तं शूद्रे मन्त्रं ददद् द्विजः।
शूद्रो निरयमाप्नोति ब्राह्मणो यात्यधोगतिम्॥

यजुर्वेदः लक्ष्मीः श्रीबीजमित्यर्थः। तथा नारायणकल्पेऽपि—

अष्टाक्षरो महामन्त्रः सप्तार्णः शूद्रयोषितोः।
प्रणवादिश्च यो मन्त्रो न स्त्रीशूद्रे प्रशस्यते॥

इति सर्वत्र स्त्रीणां शूद्रवद्व्यवहारः। शूद्रस्यापि स्वकर्तृकहोम इति केचित्। तथा च वाराहीतन्त्रे—

यदि कामी भवत्यत्र शूद्रोऽपि होमकर्मणि।
वह्निजायां परित्यज्य हृदयान्तेन होमयेत्॥

सर्वेषां द्विगुणजपः। तथा च वसिष्ठे—

यद्यदङ्गं विहीयेत तत्संख्याद्विगुणो जपः।
कर्त्तव्यश्चाङ्गसिद्ध्यर्थं तदशक्तेन भक्तितः॥
न चेदङ्गं विहीयेत तद्विशिष्टमवाप्नुयात्।
विप्रभोजनमात्रेण व्यङ्गं साङ्गं भवेद्ध्रुवम्।
यद्यद्भुङ्क्ते द्विजः साक्षात्तत्तद्भुङ्क्ते हरिः स्वयम्॥

तथागस्त्यसंहितायाम्—

यदि होमेऽप्यशक्तः स्यात्पूजायां तर्पणेऽपि वा ।
तावत्संख्याजपेनैव ब्राह्मणाराधनेन च ।
भवेदङ्गद्वयेनैव पुरश्चरणमार्य वै ।।

वीरातन्त्रे—

नियमः पुरुषे ज्ञेया न योषित्सु कथञ्चन ।
न न्यासो योषितामत्र न ध्यानं न च पूजनम् ।
केवलं जपमात्रेण मन्त्राः सिध्यन्ति योषिताम् ।।

नृसिंहतापनीय तन्त्र में वर्णन है कि सावित्री, प्रणव, वेद और श्रीबीज में शूद्र को अधिकार नहीं है। इन मन्त्रों का जप करने से उन्हें अधोगति प्राप्त होती है। यह पराशर भाष्य का मत है।

गोविन्द भट्ट के अनुसार स्वाहा, प्रणवसंयुक्त मन्त्र जो द्विज शूद्र को देता है, वह द्विज और शूद्र दोनों नरकगामी होते हैं, अधोगति को प्राप्त होते हैं।

नारायणकल्प के अनुसार अष्टाक्षर महामन्त्र 'ॐ नमो नारायणाय' और सप्ताक्षर मन्त्र एवं जो मन्त्र प्रारम्भ में ॐकार से युक्त हैं, उन मन्त्रों को स्त्री-शूद्रों को नहीं देना चाहिये। स्त्रियों को सर्वत्र शूद्रवत् माना गया है। शूद्र भी हवन कर सकता है—यह किसी का मत है। वाराही तन्त्र में लिखा है कि यदि शूद्र हवन करना चाहे तो वह स्वाहा के बदले 'नमः' का उच्चारण करता हुआ हवन कर सकता है।

वसिष्ठसंहिता में लिखा है कि पुरश्चरण में हवनादि जो अंग नहीं कर सके, उसके लिये दुगुना जप करे। इससे वह अंग विशिष्टता प्राप्त कर लेता है। विप्रभोजन कराने से अंगविहीन भी सांग हो जाता है। जहाँ द्विज भोजन करते हैं, वहाँ साक्षात् विष्णु भोजन करते हैं—ऐसा समझना चाहिये।

अगस्त्यसंहिता के अनुसार हवन-पूजन-तर्पण में असमर्थ होने पर उतनी संख्या में जप और ब्राह्मणभोजन कराने से पुरश्चरण के सभी अंग पूर्ण हो जाते हैं।

वीरातन्त्र में लिखा है कि जो कुछ नियम बतलाये गये हैं, वे सब पुरुषों के लिये हैं। स्त्रियों के लिये पूजा-ध्यान का कोई नियम नहीं है। केवल जप से ही स्त्रियों को मन्त्रसिद्धि होती है।

आचार्यमते विप्रभोजनेऽप्यनुकल्पः। तथा च मुण्डमालायाम्—

यदि पूजाद्यशक्तश्चेद्द्रव्यभावेन सुन्दरि ।
केवलं जपमात्रेण पुरश्चर्या विधीयते ।।

अत्र ब्राह्मणभोजनमावश्यकमेव—

सर्वथा भोजयेद्विप्रान्कृतसङ्कल्पसिद्धये।
विप्राराधनमात्रेण व्यङ्गं साङ्गं भवेद्ध्रुवम्॥

कुलार्णवे—

दीक्षाहीनान्पशून् यस्तु भोजयेद्वा स्वमन्दिरे।
स याति परमेशानि नरकानेकविंशतिम्॥
एवं यः कुरुते देवि पुरश्चरणकं प्रिये।
सर्वपापविनिर्मुक्तो देवीसायुज्यमाप्नुयात्॥

तथा—

तद्दशांशेन विप्रांश्च कौलिकानथ भोजयेत्।
क्षीरखण्डाद्यभोज्यैश्च बहुमानपुरःसरम्॥

ततश्च—

गुरवे दक्षिणान् दद्याद्भोजनाच्छादनादिभिः।
गुरुसन्तोषमात्रेण मन्त्रसिद्धिर्भवेद् ध्रुवम्॥
गुरोरभावे पुत्राय तत्पत्न्यै वा निवेदयेत्।
तयोरभावे देवेशि ब्राह्मणेभ्यो निवेदयेत्॥
सम्यक् सिद्धैकमन्त्रस्य पञ्चाङ्गोपासनेन च।
सर्वे मन्त्राश्च सिध्यन्ति तत्प्रसादात् कुलेश्वरि।
गुरुमूलमिदं सर्वमित्याहुस्तन्त्रवेदिनः॥
एकग्रामे स्थितो नित्यं गत्वा वन्देत वै गुरुम्।
गुरुरेव परं ब्रह्म तस्मादादौ तमर्चयेत्॥
तदन्ते महतीं पूजां कुर्यात्साधकसत्तमः।
सुवासिनीं कुमारीश्च भूषणैरपि भूषयेत्॥
मिष्ठान्नं बहुशं कार्यं भुञ्जीत बन्धुभिः सह।
एवं सिद्धमनुर्मन्त्री साधयेत्सकलेप्सितान्॥

मुण्डमालातन्त्र में वर्णन है कि पूजोपकरण द्रव्यादि का अभाव होने पर केवल जप से ही पुरश्चरण सिद्ध होता है; परन्तु ब्राह्मणभोजन अवश्य कराना चाहिये; क्योंकि उससे अंगहीन क्रिया पूर्ण होती है।

कुलार्णवतन्त्र के अनुसार दीक्षाहीन पशुतुल्य ब्राह्मण को अपने घर में भोजन कराने से नरक जाना पड़ता है। जो विधिवत् पुरश्चरण करता है, वह सभी पापों से मुक्त होकर

देवी का सायुज्य प्राप्त करता है। जप का दशांश कौलिक ब्राह्मणों को भोजन कराये। भोजन में खीर, खण्ड खाद्य खिलाकर बहुत सम्मानित करना चाहिये। अन्त में गुरुदेव को भोजन और वस्त्रादि से सन्तुष्ट करके दक्षिण प्रदान करे; क्योंकि गुरु के सन्तुष्ट होने से मन्त्रसिद्धि मिलती है। गुरु के अभाव में गुरुपुत्र, उनके अभाव में गुरुपत्नी और उनके भी न होने पर अन्य ब्राह्मणों को दक्षिणा देकर कार्य पूरा करे। सम्यक् पञ्चाङ्गोपासना से मन्त्र सिद्ध होते हैं। केवल गुरु के सन्तुष्ट होने से भी मन्त्र सिद्ध होते हैं। यह सब गुरुमूल ही है—ऐसा तन्त्रज्ञों का मत है। एक ही ग्राम में यदि गुरु-शिष्य दोनों रहते हों तो शिष्य प्रतिदिन गुरुगृह जाकर उनकी वन्दना करे। गुरु ही परब्रह्मस्वरूप हैं; अत: सबसे पहले उनकी पूजा करे। अन्त में महापूजा करे। फिर सुवासिनी और कुमारीपूजा करके उन्हें विविध अलंकारों तथा वस्त्रों से सन्तुष्ट करके बन्धु-बान्धवों के साथ स्वयं भी भोजन करे। इस प्रकार पञ्चाङ्गोपासना द्वारा सम्यक् रूप से मन्त्र सिद्ध होने पर भगवती की कृपा से साधक की सभी इच्छायें पूरी होती हैं।

मतान्तरे पुरश्चरणविधि:

तन्त्रे—

अथवान्यप्रकारेण पुरश्चरणमुच्यते ।
ग्रहणेऽर्कस्य चेन्दोर्वा शुचिः पूर्वमुपोषितः ।।
नद्यां समुद्रगामिन्यां नाभिमात्रोदके स्थितः ।
स्पर्शाद्विमुक्तिपर्यन्तं जपेन्मन्त्रमनन्यधीः ।।

यदि नक्रादिदूषिता नदी भवति तदा यत्कर्त्तव्यं तदाह रुद्रयामले—

अपि शुद्धोदके स्नात्वा शुचौ देशे समाहितः ।
ग्रासाद्विमुक्तिपर्यन्तं जपेन्मन्त्रमनन्यधीः ।
इति कृत्वा न सन्देहो जपस्य फलभाग्भवेत् ।।

नद्यभावे—

यद्वा पुण्योदके स्नात्वा शुचिः पूर्वमुपोषितः ।
ग्रहणादिविमोक्षान्तं जपेन्मन्त्रं समाहितः ।।

उपवासासमर्थे तु तत्रैव—

अथवान्यप्रकारेण पौरश्चरणिको विधिः ।
चन्द्रसूर्योपरागे च स्नात्वा प्रयतमानसः ।
स्पर्शनादिविमोक्षान्तं जपेन्मन्त्रं समाहितः ।।
जपाद्दशांशतो होमं तथा होमात्तु तर्पणम् ।
तर्पणस्य दशांशेन चाभिषेकं समाचरेत् ।।

अभिषेकदशांशेन कुर्याद् ब्राह्मणभोजनम्।
एवं कृत्वा तु मन्त्रस्य जायते सिद्धिरुत्तमा ॥

मतान्तर से पुरश्चरण, ग्रहणपुरश्चरण—अब दूसरे प्रकार से पुरश्चरण का वर्णन किया जाता है। चन्द्र या सूर्यग्रहण-काल में उपवासी होकर समुद्रगामिनी नदी में नाभि तक गहरे जल में खड़े होकर एकाग्र चित्त से ग्रहण के प्रारम्भ से लेकर अन्त तक इष्टमन्त्र का जप करे।

रुद्रयामल में लिखा है कि नदी में घड़ियाल आदि का भय होने पर या जहाँ नदी न हो, उपयुक्त स्थान में उपवासपूर्वक शुद्ध जल से स्नान करके पवित्र स्थान पर बैठकर ग्रास से मोक्षपर्यन्त जप करे। इस जप से पुरश्चरण जप का फल प्राप्त होता है। उपवास करने में असमर्थ होने पर स्नानपूर्वक संयत चित्त होकर ग्रास से मोक्षपर्यन्त जप करे। इसी अवधि में जप का दशांश होम, होम का दशांश तर्पण, तर्पण का दशांश मार्जन और मार्जन का दशांश ब्राह्मणभोजन कराकर पुरश्चरण क्रिया पूर्ण करे। इस प्रकार जप करने से परम सिद्धि मिलती है।

गोपालमन्त्रतर्पणे तु होमसंख्यत्वं यथा—'इह गोपालमन्त्राणां तर्पणं होम-संख्यया' इत्यादि।

दृष्टा स्नात्वा ससङ्कल्पो विमोक्षान्तं जपं चरेत्।
तावद्यज्ञादिकं कुर्याद् ग्रहणान्ते शुचिः पुमान्।
एवं जपान्मन्त्रसिद्धिर्भवत्येव न संशयः ॥

ग्रहणे जपस्यावश्यकत्वम्—

श्राद्धादेरनुरोधेन यदि जापं त्यजेन्नरः।
स भवेद्देवताद्रोही पितॄन् सप्त नयत्यधः ॥

इति सनत्कुमारवचनात्। वस्तुतस्तु आरब्धपुरश्चरणविषयमिदम्। तथाहि— आरब्धे पुरश्चरणे यदि च ग्रहणं भवेत्तदा श्राद्धाद्यनुरोधेन जपं नैव त्यजेत् इत्ये-कवाक्यत्वात्—

सर्वस्वेनापि कर्त्तव्यं श्राद्धं वै राहुदर्शने।
अकुर्वाणन्तु तच्छ्राद्धं पङ्के गौरिव सीदति ॥

इति प्रतिकूलवाक्यपराहतत्वाच्च इत्यधिकपाठः आगमतत्त्वविलासे। एवं रात्रावपि पुरश्चरणविशेषे बोद्धव्यम्। इति सर्वं समञ्जसम्।

गोपालमन्त्र के तर्पण में हवनसंख्या—सनत्कुमारतन्त्र में लिखा है कि यदि पुरश्चरण आरम्भ हो तो श्राद्ध आदि के कारण उसे छोड़ना नहीं चाहिये; अन्यथा देवद्रोह

का पाप लगता है। यद्यपि शास्त्र में पञ्चाङ्ग (जप, होम, तर्पण, मार्जन, विप्रभोजन) को ही पुरश्चरण बताया गया है; किन्तु ग्रहणकाल में पुरश्चरण जपमात्र से हो जाता है। एक मत से पुरश्चरणकाल में श्राद्ध त्याज्य नहीं है। इसके मत से ग्रहणकाल में श्राद्ध करना चाहिये; अन्यथा गौरव क्षीण होता है। रात में पुरश्चरण जप किया जा सकता है। यह आगमतत्त्वविलास का मत है।

योगिनीहृदये—

कल्पोक्तविधिना मन्त्री कुर्याद्धोमादिकं ततः।
अथवा तद्दशांशेन होमादींश्च समाचरेत्॥

तथा—

अनन्तरं दशांशेन क्रमाद्धोमादिकञ्चरेत्।
तदन्ते महतीं पूजां कुर्याद् ब्राह्मणतोषणम्॥
ततो मन्त्रस्य सिद्ध्यर्थं गुरुं सम्पूज्य तोषयेत्।
एवञ्च मन्त्रसिद्धिः स्याद्देवता च प्रसीदति॥

क्रियासारे—

दीक्षाहीनान् पशून् यस्तु भोजयेद्वा स्वमन्दिरे।
स याति परमेशानि नरकानेकविंशतिम्॥

योगिनीहृदयतन्त्र के अनुसार कल्पोक्त विधि से हवनादि करना चाहिये अथवा जप का दशांश हवन करना चाहिये। इसके बाद जप का दशांश हवन करे। इसके बाद महती पूजा करके ब्राह्मणभोजन करावे। इसके बाद मन्त्रसिद्धि के लिये गुरुपूजन करे। इससे मन्त्रसिद्धि मिलती है। देवता प्रसन्न होते हैं।

क्रियासार के अनुसार दीक्षाहीन विप्रों को अपने घर में जो भोजन कराता है, वह इक्कीस नरकों में जाता है।

यद्यपि पुरश्चरणपदं पञ्चाङ्गपरं तथा च—

जपहोमौ तर्पणञ्चाभिषेकौ विप्रभोजनम्।
पञ्चाङ्गोपासनं लोके पुरश्चरणमुच्यते॥

तथापि ग्रहणादौ पुरश्चरणपदं गौणं जपमात्रपरम्।

सूर्योदयात्समारभ्य यावत्सूर्योदयावधि।
तावज्जप्तो महेशानि पुरश्चरणमिष्यते॥

इत्यादौ तथा दर्शनात्। तत्र होमादेरभावात्तर्हि कथं ग्रहणपुरश्चरणे होमादिरिति चेद्वचनादेव जायते। न च पुरश्चरणस्य पञ्चाङ्गत्वात्सर्वत्र तदेव स्यादिति वाच्यं,

ग्रहणे तद्विधानमनर्थकं स्यात्। किन्तु ग्रहणे होमादिनियमान्नान्यत्र होमादिः। ग्रहण-पुरश्चरणे होमादिविधानन्तु प्रकृतीभूतपञ्चाङ्गपुरश्चरणतुल्यत्वबोधनाय। अतएव ग्रहणे पञ्चाङ्गस्वरूपपुरश्चरणे कृते मुख्यप्रयोगेऽप्यधिकार इति प्रकटीकृतम्। तदकरणे पुनः केवलजपमात्रपुरश्चरणे कृते नाधिकार इति सर्वसम्मतम्। पुरश्चरण-कालस्तु वाराहीतन्त्रे—

चन्द्रतारानुकूले च शुक्लपक्षे शुभेऽहनि।
आरभेत पुरश्चर्यां हरौ सुप्ते न चाचरेत्॥

प्रतिप्रसवस्तु रुद्रयामले—

कार्त्तिकाश्विन-वैशाख-माघेऽथ मार्गशीर्षके।
फाल्गुने श्रावणे दीक्षा पुरश्चर्या प्रशस्यते।
ग्रहणे च महातीर्थे न कालमवधारयेत्॥

यद्यपि पुरश्चरण के पाँच अंग होते हैं, जो जप-हवन-तर्पण-मार्जन और ब्राह्मण-भोजन हैं एवं पञ्चाङ्गोपासन को ही पुरश्चरण कहा जाता है तथापि ग्रहणपुरश्चरण में जप ही प्रधान है, शेष सब गौण माने जाते हैं।

सूर्योदय से प्रारम्भ करके सूर्योदय तक जप को भी पुरश्चरण कहते हैं, इसमें हवन आदि नहीं होते। ग्रहणजप में भी हवन आवश्यक नहीं है। सभी पुरश्चरणों में हवनादि आवश्यक नहीं हैं; किन्तु दूसरे मत से ग्रहणपुरश्चरण में हवन आवश्यक है। ग्रहणपुरश्चरण में भी पञ्चाङ्गोपासना करने से प्रयोग का अधिकार प्राप्त होता है, केवल ग्रहणपुरश्चरण से प्रयोग का अधिकार नहीं होता। यह सर्वसम्मत है।

वाराही तन्त्र के अनुसार चन्द्र-तारा अनुकूल होने पर शुक्ल पक्ष में शुभ दिन में पुरश्चरण प्रारम्भ करना चाहिये। विष्णुशयनकाल में पुरश्चरण प्रारम्भ नहीं करना चाहिये।

रुद्रयामल के अनुसार कार्तिक, आश्विन, वैशाख, माघ, अगहन, फाल्गुन, सावन, भादो में दीक्षा और पुरश्चरण प्रारम्भ करना चाहिये। ग्रहण और महातीर्थों में कालविचार अपेक्षित नहीं है।

ग्रस्तास्ते ग्रस्तोदये दीक्षापुरश्चरणयोर्निषेधमाह तन्त्रान्तरे—

ग्रस्तास्ते ह्युदिते नैव कुर्याद्दीक्षाजपं प्रिये।
कृते नाशो भवेदाशु ह्यायुःश्रीसुतसम्पदाम्॥

तन्त्रान्तर में चन्द्र-सूर्य ग्रासान्त और ग्रस्तोदय में दीक्षा एवं पुरश्चरण निषिद्ध है। ग्रस्तास्त दिन में दीक्षा जप नहीं करना चाहिये। जप करने से आयु, धन, पुत्र, सम्पत्ति का नाश होता है।

तत्र तावद्भूमेः परिग्रहं कृत्वा पुरश्चरणप्राक् तृतीयदिवसे क्षौरादिकं विधाय वेदिकायाश्चतुर्दिक्षु क्रोशं क्रोशद्वयं वा क्षेत्रं चतुरस्रं आहारादिर्विहारार्थं परिकल्प्य तत्र कूर्मचक्रानुरूपं मण्डपं विधाय एकभक्तं कुर्यात्। ततः परदिने स्नानादिकं विधाय शुद्धः सन् वेदिकायाश्चतुर्दिक्षु अश्वत्थोदुम्बरप्लक्षाणामन्यतमस्य वितस्ति-मात्रान् दशकीलान् 'ॐ सुदर्शनाय अस्त्राय फट्' इति मन्त्रेणाष्टोत्तरशताभिमन्त्रितान् वेदिकायां दश दिक्षु—

ॐ ये चात्र विघ्नकर्तारो भुवि दिव्यन्तरिक्षगाः ।
विघ्नभूताश्च ये चान्ये मम मन्त्रस्य सिद्धिषु ॥
ममैतत्कीलितं क्षेत्रं परित्यज्य विदूरतः ।
अपसर्पन्तु ते सर्वे निर्विघ्नं सिद्धिरस्तु मे ॥

इत्यनेन निखन्य तेषु 'ॐ सुदर्शनाय अस्त्राय फट्' इति अस्त्रं सम्पूज्य तेषु पूर्वादिक्रमेण इन्द्रादिलोकपालान् पूजयेत्। यथा—

'भूर्भुवः स्वः इन्द्रलोकपाल इहागच्छ' इत्यावाह्य पञ्चोपचारैः पूजयेत्। एवं क्रमेण अन्यानपि पूजयेत्। तथा च मुण्डमालायाम्—

पुण्यक्षेत्रादिकं गत्वा कुर्याद्भूमिपरिग्रहम् ।
तथा ह्यमुकमन्त्रस्य पुरश्चरणसिद्धये ।
मयेयं गृह्यते भूमिर्मन्त्रोऽयं सिध्यतामिति ॥

तथा च—

ग्रामे क्रोशमितं स्थानं नद्यादौ स्वेच्छया मतम् ।
नगरादावपि क्रोशं क्रोशयुग्ममथापि वा ॥
(क्षेत्रं वा यावदिष्टन्तु विहारार्थं प्रकल्पयेत्) ।
आहारादिविहारार्थं तावतीं भूमिमाक्रमेत् ।
क्षीरिवृक्षोद्भवान् कीलान् अस्त्रमन्त्राभिमन्त्रितान् ॥
निखनेद्दशदिग्भागे तेष्वस्त्रञ्च प्रपूजयेत् ।
लोकपालान् पुनस्तेषां गन्धाद्यैः पूजयेत्सुधीः ॥ इति।

पुरश्चरण-पद्धति—पुरश्चरण के लिये पहले स्थान निश्चित करे। पुरश्चरण के तीन दिन पहले क्षौरादि कर्म करा ले। तब वेदी की चारो दिशाओं में एक या दो कोश परिमित चौकोर भूमि को आहार-विहार के लिये मानकर उसके बीच में कूर्मचक्र के अनुसार मण्डप बनावे। उस दिन एक बार भोजन करे। दूसरे दिन स्नानादि नित्य कर्म करके शुद्ध होकर वेदिका के चारो ओर पीपल, गूलर और पाकड में से किसी एक वृक्ष की लकड़ी से बारह अंगुल की दस कील बनावे। उनके ऊपर 'ॐ सुदर्शनाय अस्त्राय फट्' मन्त्र से १०८

वार जप करे। इसके बाद उन कीलों को वेदी की दशों दिशाओं में निम्न मन्त्रोच्चारणपूर्वक गाड़ दे—

ॐ ये च विघ्नकर्तारो भुवि दिव्यन्तरीक्षगा:।
विघ्नभूताश्च ये यान्ये मम मन्त्रस्य सिद्धिषु।।
ममैतत् कीलितं क्षेत्रं परित्यज्य विदूरत:।
अपसर्पन्तु ते सर्वे निर्विघ्ना सिद्धिरस्तु मे।।

इसके बाद 'ॐ सुदर्शनाय अस्त्राय फट्' मन्त्र से कीलों की पूजा करे। तब उनके ऊपर पूर्वादि दश दिशाओं में इन्द्रादि दश लोकपालों की पूजा करे। पूजा पञ्चोपचार से करे। जैसे—

पूर्व में— ॐ भुर्भुव: स्व: इन्द्रलोकपाल इहागच्छ से आवाहन करे, पूजन करे।
अग्निकोण मे— ॐ भुर्भुव: स्व: अग्निलोकपाल इहागच्छ मम पूजां गृहाण।
दक्षिण में— ॐ भुर्भुव: स्व: यमलोकपाल इहागच्छ मम पूजां गृहाण।
नैर्ऋत्य में— ॐ भुर्भुव: स्व: निर्ऋतिलोकपाल इहागच्छ मम पूजां गृहाण।
पश्चिम में— ॐ भुर्भुव: स्व: वरुणलोकपाल इहागच्छ मम पूजां गृहाण।
वायव्य में— ॐ भुर्भुव: स्व: वायुदेवता इहागच्छ मम पूजां गृहाण।
उत्तर में— ॐ भुर्भुव: स्व: कुवेर इहागच्छ मम पृजां गृहाण।
ईशान में— ॐ भुर्भुव: स्व: ईशानदेवता इहागच्छ मम पूजां गृहाण।
ईशान और पूर्व के बीच में— ॐ भुर्भुव: स्व: ब्रह्मा इहागच्छ मम पूजां गृहाण।
नैर्ऋत्य और पश्चिम के बीच में— ॐ भुर्भुव: स्व: अनन्त इहागच्छ मम पूजां गृहाण।

ततो मध्यस्थाने क्षेत्रपालं वास्त्वीशञ्च सम्पूज्य सर्वविघ्नविनाशार्थं गणपतिं पूजयेत्। यथा— ॐ अद्येत्यादि अमुकगोत्रोऽमुकदेवशर्मा मत्कर्त्तव्यामुकदेवता-मुकमन्त्रपुरश्चरणकर्मणि सर्वविघ्नविनाशार्थं गणेशपूजामहं करिष्ये। इति संकल्प्य वेदिकामध्ये पञ्चोपचारैर्गणेशं पूजयेत्। तदुक्तम्—

क्षेत्रपालादिकं तत्र पूजयेद्विधिवत्तत: ।
क्षेत्रेशं वास्तुनामानं विघ्नराजं समर्चयेत् ।
दिक्पालेभ्यो बलिं दद्यात्तत: क्षेत्रं समाविशेत् ।।

ततो मासभक्तादिना पूजितदेवताभ्यो बलिं दद्यात्। तत:—

ॐ ये रौद्रा रौद्रकर्माणो रौद्रस्थाननिवासिन: ।
मातरोऽप्युग्ररूपाश्च गणाधिपतयश्च ये ।।
विघ्नभूताश्च ये चान्ये दिग्विदिक्षु समाश्रिता: ।
सर्वे ते प्रीतमनस: प्रतिगृह्णन्त्विमं बलिम् ।।

इत्यनेन दशदिक्षु भूतेभ्यो बलिं दद्यात्। ततो गायत्रीं जपेत्।

इसके बाद विघ्नों के विनाश के लिये निम्न मन्त्र में संकल्प करे— ॐ अद्येत्यादि अमुक गोत्र अमुकदेवशर्मा मत्कर्त्तव्या अमुक देवता अमुक मन्त्र पुरश्चरणकर्मणि सर्वविघ्नविनाशार्थं गणेशपूजामहं करिष्ये।

यह संकल्प करके वेदी के मध्य में आवाहनपूर्वक गणेश की पूजा पञ्चोपचारों से करे। दिक्पालों को बलि देकर क्षेत्र में प्रवेश करे। वेदी की दशों दिशाओं में क्षेत्रपालादि देवताओं को उड़द और भात की बलि प्रदान करे। इसके बाद प्रार्थना करे—

ॐ ये रौद्रा रौद्रकर्माणो रौद्रस्थाननिवासिनः।
मातरोऽप्युग्ररूपाश्च गणाधिपतयश्च ये ।।
विघ्नभूताश्च ये चान्ये दिग्विदिक्षु समाश्रिता ।।
सर्वे ते प्रीतमनसः प्रतिगृह्णन्त्विमं बलिम् ।।

इसके बाद गायत्री का जप करे।

तथा च—

प्रातः स्नात्वा तु गायत्र्याः सहस्रं प्रयतो जपेत् ।
ज्ञाताज्ञातस्य पापस्य क्षयार्थं प्रथमं ततः ।।

इति विद्याधराचार्यः।

विप्रान् सन्तर्पयेदर्थतोषणाच्छादनासनैः ।
बहुभिर्वस्त्रभूषाभिः सम्पूज्य गुरुमात्मनः ।
आरभेत जपं पश्चात्तदनुज्ञापुरःसरम् ।। इति।

गायत्री पुनस्तत्तद्देवतायाः यथा गोविन्दवृन्दावने —

जपात्पूर्वं जपेत्कृष्णगायत्रीं सर्वपापहाम् ।
अयुतैकप्रमाणेन एनसो न्यूनहेतवे ।। इति।

कृष्णगायत्रीस्वरसादन्यत्रापि तथा; अतएव स्त्रीशूद्रे साधारणमिति माधवाचार्यः। यत्तु—

प्रातः स्नात्वा तु सावित्र्या अयुतं प्रयतो जपेत् ।। इति।

तत्पुनरत्यन्तपापशङ्कया। 'ॐ अद्येत्यादि अमुकगोत्रः श्री अमुकदेवशर्मा ज्ञाताज्ञातपापक्षयकामः अष्टोत्तरसहस्रसावित्रीजपमहं करिष्ये' इति सङ्कल्प्य जपेत् अयुतं वा कुर्यात्। तत उपवासं हविष्यं वा कुर्यात्। परदिने उषसि स्नानादिकं कृत्वा स्वस्तिवाचनपूर्वकं सङ्कल्पं कुर्यात्। ॐ अद्येत्यादि अमुकगोत्रः श्रीअमुक-देवशर्मा अमुकदेवताया अमुकमन्त्रसिद्धिप्रतिबन्धकाशेषदुरितक्षयपूर्वकतन्मन्त्र-सिद्धिकामोऽद्यारभ्य यावता कालेन सेत्स्यति तावत्कालं अमुकमन्त्रस्य इयत्संख्यक-

जप-तद्दशांशहोम-तद्दशांशतर्पण-तद्दशांशाभिषेक-तद्दशांशब्राह्मण-भोजनरूप-पुरश्चरणमहं करिष्ये। इति सङ्कल्प्य भूतशुद्धिप्राणायामादिकं कृत्वा स्वस्वमुद्रां बद्ध्वा स्वस्वपद्धत्युक्तक्रमेण देवतां सम्पूज्य दीपे प्रज्ज्वलिताकारां देवतां हृदये कृत्वा प्रातःकालमारभ्य मध्यन्दिनं यावज्जपं कुर्यात्। ततो होमस्ततस्तर्पणम्।

विद्याधराचार्य ने कहा है कि अगले दिन प्रातःस्नानादि नित्य क्रिया करके ज्ञात और अज्ञात पापों के क्षय के लिये गायत्री का जप एक हजार करे।

इसके बाद धन, वस्त्र, आभूषण से ब्राह्मणों और गुरुदेव को सन्तुष्ट करके उनकी अनुमति लेकर जप प्रारम्भ करे। जिस देवता के मन्त्र का पुरश्चरण हो, उसी देवता की गायत्री का जप करना चाहिये।

प्रातःकाल स्नान के बाद सहस्र गायत्री-जप का जो विधान है, वह अधिक पाप की आशंका होने पर माननीय है। अन्यथा उक्त गायत्री का जप करके कार्यारम्भ करना चाहिये। गायत्री-जप के पहले संकल्प इस प्रकार करे—

ॐ अद्येत्यादि अमुकगोत्र श्री अमुकशर्मा ज्ञाताज्ञातपापक्षयकामः अष्टोत्तरसहस्र-गायत्रीजपमहं करिष्ये। इस दिन उपवासी या हविष्याशी होकर रहे।

अगले दिन उषाकाल में स्नानादि करके स्वस्तिवाचनपूर्वक संकल्प करे—

ॐ अमुकगोत्रः श्री अमुकशर्मा अमुकदेवतायाः अमुकमन्त्रसिद्धिप्रतिबन्धकाशेष-दुरितक्षयपूर्वकतन्मन्त्रसिद्धिकामो अद्यारभ्य यावता कालेन सेत्स्यति तावत्कालं अमुकमन्त्रस्य इयत्संख्यकजपतद्दशांशहोमतद्दशांशतर्पणतद्दशांशाभिषेकतद्दशांशब्राह्मणभोजनरूपपुरश्चरण-महं करिष्ये।

इसके बाद भूतशुद्धि, प्राणायामादि करके तद्देवतासम्बन्धी मुद्रायें दिखाकर अपनी पद्धति में निर्दिष्ट विधि से देवता की पूजा करे। तेजोरूपिणी देवता का हृदय में ध्यान करके प्रातःकाल से लेकर मध्याह्न काल तक जप करे। जप समाप्त होने पर हवन और तर्पण करे।

कुलार्णवे—

तर्पणन्तु ततः कुर्यात्तीर्थोदकैश्चन्द्रमिश्रितैः ।
जले देवं समावाह्य पाद्याद्यैरुदकात्मकैः ॥
सम्पूज्य विधिवद्भक्त्या परिवारसमन्वितम् ।
एकैकमञ्जलिं तोयं परिवारान् प्रतर्पयेत् ॥
ततो होमदशांशेन तर्पयेत्परदेवताम् ।
सम्पूर्णायान्तु संख्यायां पुनरेकैकमञ्जलिम् ॥

तर्पणवाक्यन्तु स्नानप्रकरणे वक्तव्यम्।

अथाभिषेकवाक्यम्—नमोऽन्तं मूलमुच्चार्य अमुकदेवतामहमभिषिञ्चामि इति कलशमुद्रया स्वमूर्ध्नि अभिषेचयेत्। तथा च गौतमीये—

नमोऽन्तं मूलमुच्चार्य तदन्ते देवताभिधाम्।
द्वितीयान्तामहं पश्चादभिषिञ्चाम्यनेन तु।
अभिषिञ्चेत्स्वमूर्द्धानं तोयैः कुम्भाख्यमुद्रया ॥

शक्तिविषये नीलतन्त्रे—

मूलान्ते नाम चोच्चार्य सिञ्चामीति नमः पदम् ॥ इति।

ततो ब्राह्मणान् भोजयित्वा दक्षिणां दद्यात्। ॐ अद्येत्यादि कृतैतदमुकदेवताया अमुकमन्त्रपुरश्चरणकर्मणः साङ्गतार्थं दक्षिणामिदं काञ्चनं वह्निदैवतं अमुकगोत्राय गुरवे तुभ्यमहं सम्प्रददे। ततोऽच्छिद्रावधारणं कुर्यात्।

कुलार्णवतन्त्र में लिखा है कि इष्टदेवता का आवाहन करके जलरूप पाद्यादि उपचारों से परिवारगणसहित यथाविधि पूजा करे और परिवार-गण का एक-एक अंजलि जल द्वारा तर्पण करे। संख्या पूरी होने पर एक-एक अंजलि द्वारा पुनः तर्पण करे। तर्पणवाक्य है—मूल मन्त्र नमो अहम् अमुकदेवतां तर्पयामि नमः। अभिषेक वाक्य है—मूलं नमः अमुक देवताम् अहं अभिषिञ्चामि। इस मन्त्र से कलशमुद्रा के द्वारा अपने मस्तक पर अभिषेक करे।

नीलतन्त्र में शक्तिमन्त्रों के विषय में अभिषेकवाक्य को इस प्रकार बताया गया है—मूलं अमुकदेवता अभिषिञ्चामि नमः। अभिषेक के बाद ब्राह्मणभोजन कराकर निम्न वाक्य से गुरुदेव को दक्षिणा प्रदान करे—

ॐ अद्येत्यादि अमुकदेवतायाः अमुकमन्त्रपुरश्चरणकर्मणः सांगतार्थं दक्षिणामिदं वह्निदैवतं अमुकगोत्राय गुरवे तुभ्यमहं प्रददे।

इस पुरश्चरण को अच्छिद्र मानकर उसे सांग सम्पन्न समझे।

ग्रहणपुरश्चरणसङ्कल्पः

तद्यथा—ॐ अद्येत्यादि राहुग्रस्ते दिवाकरे निशाकरे वा अमुकगोत्रः श्री अमुकदेवशर्मा अमुकदेवताया अमुकमन्त्रसिद्धिकामो ग्रासाद्विमुक्तिपर्यन्तं अमुक-देवतामुकमन्त्रजपरूपपुरश्चरणमहं करिष्ये। इति सङ्कल्प्य जपेत्। ततस्तद्दिने तत्परदिने वा स्नानं विधाय ॐ अद्येत्यादि अमुकमन्त्रस्य कृतैतदमुकग्रहणकालीनअमुक-देवतामुकमन्त्रे यत्संख्यकजप-तद्दशांशहोम-तद्दशांशतर्पण-तद्दशांशाभिषेक-तद्दशांशब्राह्मणभोजनकर्माण्यहं करिष्ये। इति सङ्कल्प्य होमादिकं कर्म कृत्वा पूर्व-वद्दक्षिणादिकं कुर्यादिति पुरश्चरणप्रयोगः।

ग्रहण-पुरश्चरण-सङ्कल्प—ग्रहण-पुरश्चरण में निम्न प्रकार का संकल्प करे—ॐ अद्येत्यादि राहुग्रस्तदिवाकरे अमुकगोत्रः श्री अमुकशर्मा अमुकदेवतायाः अमुकमन्त्रसिद्धि-कामो ग्रासाद् विमुक्तिपर्यन्तं अमुकदेवताया अमुकमन्त्रजपरूपपुरश्चरणमहं करिष्ये। फिर उसी दिन या अगले दिन स्नान करने के बाद हवनादि का संकल्प इस प्रकार करे—ॐ अद्येत्यादि अमुकमन्त्रस्य कृतैतदमुकग्रहणकालीन अमुकदेवता अमुकमन्त्रे यत्संख्यक जप तद्दशांश होम, तद् दशांशतर्पण तद् दशांश मार्जन तद् दशांश ब्राह्मणभोजनकर्माण्यहं करिष्ये।

इस प्रकार संकल्पसहित होमादि कार्य पूरा करके पूर्ववत् दक्षिणा देकर पुरश्चरण को पूर्ण रूप से सम्पन्न समझे। इसके बाद मन्त्र का प्रयोग करे।

कूर्मचक्रम्

दीपस्थानं समाश्रित्य कृतं कर्म फलप्रदम्।
पुरुषो दीप्यते यत्र दीपस्थानं तदुच्यते॥
चतुरस्रां भुवं भित्त्वा कोष्ठानां नवकं लिखेत्।
पूर्वकोष्ठादि विलिखेत्सप्तवर्गाननुक्रमात्।
लक्ष्मीशे मध्यकोष्ठे स्वरान् युग्मक्रमाल्लिखेत्॥
दिक्षु पूर्वादितो यत्र क्षेत्राद्यक्षरसंस्थितिः।
मुखन्तत्तस्य जानीयाद्धस्तावुभयतः स्थितौ॥
कोष्ठे कुक्षौ उभे पादौ द्वे शिष्टं पुच्छमीरितम्।
क्रमेणानेन विभजेन्मध्यस्थमपि भागतः॥
मुखस्थो लभते सिद्धिं करस्थः स्वल्पजीवनः।
उदासीनः कुक्षिसंस्थः पादस्थो दुःखमाप्नुयात्॥
पुच्छस्थः पीड्यते मन्त्री बन्धनोच्चाटनादिभिः।
कूर्मचक्रमिदं प्रोक्तं मन्त्रिणां सिद्धिदायकम्॥

पिङ्गलायाम्—

कूर्मचक्रमविज्ञाय यः कुर्याज्जपयज्ञकम्।
तस्य यज्ञफलं नास्ति सर्वानर्थाय कल्पते॥

कूर्मचक्र—जिस स्थान में पुरुष दीप्यमान होता है, उसे दीपस्थान कहते हैं। दीप-स्थान का आश्रय लेकर जो कर्म किया जाता है, वह फलप्रद होता है। इसलिये जप-पूजादि के लिये मनोनीत स्थान में अग्रांकित कूर्मचक्र बनावे।

इस चक्र के जिस कोष्ठ में उक्त स्थान (ग्राम-नगर आदि) के नाम का प्रथमाक्षर हो, उसे कूर्म का मुख समझे, मुख के दोनों ओर के कोष्ठ उसके हाथ समझे। हाथों के नीचे

वाले दो कोष्ठ उसकी कुक्षियाँ हैं। कुक्षियों के नीचे वाले दो कोष्ठ उसके पैर और शेष कोष्ठ को उसकी पूँछ समझना चाहिये।

इसी प्रकार मध्यवर्ती नौ कोष्ठों का भी विभाजन करे।

मण्डप के जिस भाग में कूर्म का मुख हो, वहीं बैठकर जप-पूजादि कार्य करने से मन्त्रसिद्धि होती है। हाथ वाले भाग में कार्य करने से साधक अल्पजीवी, कुक्षि में उदासीन, पैर में दुःखी, पूँछ में करने से बन्धन और उच्चाटनादि से पीड़ित होता है।
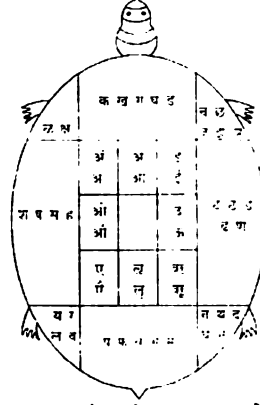
पिङ्गलातन्त्र के अनुसार कूर्मचक्र के ज्ञान विना जो जप, यज्ञ करता है, उसके यज्ञ का कोई फल नहीं मिलता और उसे सभी प्रकार के अनर्थों का सामना करना पड़ता है।

मन्त्राणां दशसंस्कारा:

गौतमीये—

जननं जीवनं पश्चात्ताडनं बोधनं तथा।
अथाभिषेको विमलीकरणाप्यायने पुनः।
तर्पणं दीपनं गुप्तिर्दशैता मन्त्रसंस्क्रियाः॥
स्वर्णादिपात्रे संलिख्य मातृकायन्त्रमुत्तमम्।
काश्मीरचन्दनेनापि भस्मना वाथ सुव्रते॥
काश्मीरं शक्तिसंस्कारे चन्दनं वैष्णवे मनौ।
शैवे भस्म समाख्यातं मातृकायन्त्रलेखने॥

मातृकायन्त्रम्—

व्योमेन्द्वौ रसनार्णकर्णिकमचां द्वन्द्वैः स्फुरत्केशरम्
वर्गोल्लासि वसुच्छदं वसुमतीगेहेन संवेष्टितम्।
आशास्वस्त्रिषु लान्तलाङ्गलियुजा क्षौणिपूरेणावृतं
यन्त्रं वर्णतनोः परं निगदितं सौभाग्यसम्पत्करम्॥

यन्त्रस्य दिक्षु वं विदिक्षु ठं लिखेत्। तथा च गौतमीये—

कादिमान्तान्पञ्चवर्गान्दिक्षु पूर्वादितो न्यसेत्।
यादिवान्ताः शादिहान्ताः लक्ष्ममीशे प्रविन्यसेत्।

चतुरस्रं चतुर्द्वारं दिक्षु वं ठं विदिक्षु च ॥

इति मातृकायन्त्रम्।

मन्त्राणां मातृकायन्त्रादुद्धारो जननं स्मृतम् ।
पंक्तिक्रमेण विधिना मुनिभिस्तत्र निश्चितम् ॥
प्रणवान्तरितान् कृत्वा मन्त्रवर्णाञ्जपेत्सुधीः ।
प्रत्येकं शतवारं तु जीवनं तदुदाहृतम् ॥

दशसंख्यो वा जपः। विश्वसारे—

पृथक्शतं वा दशधा मन्त्रवर्णाञ्जपेत्सुधीः ।
मन्त्रवर्णान्समालिख्य ताडयेच्चन्दनाम्भसा ।
प्रत्येकं वायुबीजेन पूर्ववत्ताडनं मतम् ॥

ताडनं शतधा वा । तथा च तन्त्रान्तरे—

ताडनं ताडयेद्वर्णानखिलांश्चन्दनाम्भसा ।
शतं वा दशधा वापि बोधयेत्तु मनुं ततः ॥

विश्वसारे—

दशधा शृणु देवेशि ताडनं परिकीर्त्तितम् ।
विलिख्य मन्त्रवर्णांस्तु प्रसूनैः करवीरजैः ।
तन्मन्त्रवर्णसंख्याकैर्हन्याद्रेफेण बोधनम् ॥

तन्त्रान्तरे—

विलिख्याक्षरसंख्याकैः पुष्पै रक्तहयारिभिः ।
मन्त्रवर्णान् वह्निनैकमभिमन्त्र्य सकृत्सकृत् ॥
तत्तन्मन्त्रोक्तविधिना अभिषेकः प्रकीर्त्तितः ।
अश्वत्थपल्लवैः सिञ्चन्मन्त्री मन्त्रार्णसंख्यया ॥
सञ्चिन्त्य मनसा मन्त्रं सुषुम्नामूलमध्यतः ।
ज्योतिर्मन्त्रेण विधिवद्दहेन्मलत्रयं यतिः ॥
तारं व्योमाग्निमनुयुग्दण्डी ज्योतिर्मनुर्मतः ।

तारं प्रणवः। व्योमो हकारः। अग्निर्रेफः। मनुरोकारः। दण्डी अनुस्वारः। तेन ॐ ह्रौं।

स्वर्णेन कुशतोयेन पुष्पतोयेन वा तथा ।
तेन मन्त्रेण विधिवदाप्यायनविधिः स्मृतः ॥
मन्त्रेण वारिणा मन्त्रे तर्पणं तर्पणं मतम् ।

मधुना शक्तिमन्त्रे तु वैष्णवे चेन्दुमज्जलैः ।
शैवे घृतेन दुग्धेन तर्पणं सम्यगीरितम् ।।

अभिषेकेऽपि तथा।

तारमाया-रमायोगे मनोर्दीपनमुच्यते ।
जप्यमानस्य मन्त्रस्य गोपनं त्वप्रकाशनम् ।।
संस्काराः दश सम्प्रोक्ताः सर्वतन्त्रेषु गोपिताः ।
यान् कृत्वा साम्प्रदायेन मन्त्री वाञ्छितमाप्नुयात् ।।

गौतमीय तन्त्र में मन्त्र के दश संस्कार बताये गये हैं; जैसे—जनन, जीवन, ताड़न, बोधन, अभिषेक, विमलीकरण, आप्यायन, तर्पण, दीपन और गुप्ति। जनन संस्कार के लिये पहले मातृकायन्त्र बनावे। यह यन्त्र शक्तिमन्त्र के संस्कार में कुंकुम से, विष्णुमन्त्र में चन्दन से और शिवमन्त्र में भस्म से लिखे। इस मातृकायन्त्र से मन्त्रवर्णों का पर्यायक्रम में उद्धार करना 'जनन' कहलाता है। मातृकायन्त्र के दो रूप हैं; दोनों इस प्रकार के हैं—
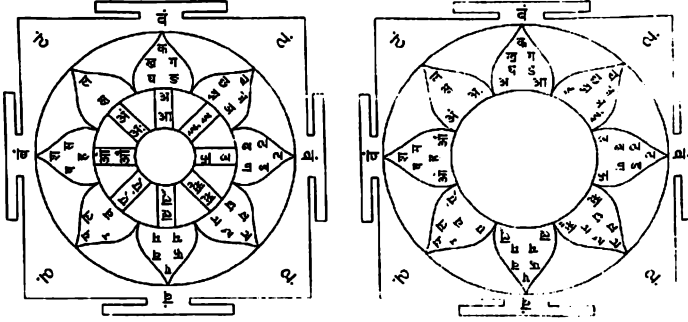
उद्धृत सभी मन्त्रवर्णों को पंक्तिक्रम में 'ॐ' द्वारा पुटित करके एक-एक वर्ण का सौ बार जप करना 'जीवन' है अथवा दस बार जप से भी हो सकता है। विश्वसारतन्त्र के अनुसार प्रत्येक मन्त्रवर्ण का सौ या दश बार जप करने पर संस्कार होता है।

मन्त्र के सभी वर्णों को अलग-अलग लिखकर 'यं' के उच्चारण-पूर्वक चन्दनजल से प्रत्येक को सौ बार या दश बार ताड़ित करने से 'ताड़न' होता है।

मन्त्र की वर्णसंख्या के अनुसार कनैल-फूलों से 'रं' उच्चारण करते हुए हनन करना 'बोधन' कहलाता है। सभी मन्त्रवर्णों को लिखकर वर्णसंख्यक लाल कनैल-फूलों से 'रं' मन्त्र द्वारा एक-एक बार अभिमन्त्रित करके अश्वत्थ के पत्ते द्वारा तत्तन्मन्त्रोक्त विधान से सभी मन्त्रवर्णों को सिञ्चित करना ही 'अभिषेक' कहलाता है।

सुषुम्णा के मूल और मध्य भाग में देय मन्त्र का चिन्तन करके ज्योतिमन्त्र ॐ ह्रौं में मलत्रय को दग्ध करना 'विमलीकरण' कहलाता है।

मन्त्रवर्णों को कुशोदक या पुष्पोदक से ज्योतिमन्त्र द्वारा आप्यायित करने का नाम 'आप्यायन' है।

इसी ज्योतिमन्त्र द्वारा मन्त्रवर्णों की संख्या के अनुसार जल से तर्पण किया जाता है। शक्तिमन्त्र में मधु से, विष्णुमन्त्र में कपूरमिश्रित जल से और शिवमन्त्र में घी-दूध से 'तर्पण' किया जाता है।

ॐ, ह्रीं और श्रीं से देय मन्त्र को पुटित करके १०८ बार जप करने से 'दीपन' होता है।

किसी को नहीं बतलाने से 'गुप्ति' होती है।

मन्त्र के इन दस संस्कारों को करने के बाद मन्त्रग्रहण करने से अभीष्ट फल की प्राप्ति होती है।

मलत्रयमिति आणव्यं मायिकं कार्मणञ्चेति। प्रपञ्चसारे—

मायिकं नाम योषोल्वं पौरुषं कार्मणं मलम्।
आणव्यं तद्द्वयं प्रोक्तं निषिद्धं तन्मलत्रयम्॥

तारमायारमायोगे इति तारमायारमाबीजपुटितं मन्त्रमष्टोत्तरशतं जपेदित्यर्थः। तथा च विश्वसारे—

तारमायारमाबीजपुटितेन जपेन्मनुम्।
शतमष्टोत्तरञ्चैव दीपयेत्साधकोत्तमः॥

मल तीन प्रकार के हैं—१. आणव्य, २. मायिक, ३. कार्मण। प्रपञ्चसार में लिखा है कि स्त्री से जो मल उत्पन्न होता है, उसे मायिक कहते हैं। पुरुष से उत्पन्न मल को कार्मण कहते हैं। उभयविधि से उत्पन्न मल को आणव्य कहते हैं। ॐ ह्रीं श्रीं से पुटित करके १०८ जप करने से मल दूर हो जाता है। विश्वसारतन्त्र के अनुसार ॐ ह्रीं श्रीं से पुटित करके १०८ बार जप करने से मन्त्र का दीपन संस्कार होता है।

कलावतीदीक्षाप्रयोगः

शिष्यः पूर्वमुपोषितः कृतनित्यक्रियः स्वस्तिवाचनपूर्वकं सङ्कल्पं कुर्यात्। तद्यथा—ॐ अद्येत्यादि अमुकगोत्रः श्रीअमुकदेवशर्मा धर्मार्थकाममोक्षप्राप्तिकामः अमुकदेवताया अमुकाक्षरमन्त्रदीक्षामहं करिष्ये इति सङ्कल्प्य गुरुं वृणुयात्। ॐ साधु भवानास्ताम्, ॐ साध्वहमासे इति प्रतिवचनम्। ॐ अर्चयिष्यामो भवन्तम्, ॐ अर्चय इति प्रतिवचनम्। ततो गन्धपुष्पवस्त्रालङ्कारादिभिर्गुरूम-

भ्यर्च्य दक्षिणं जानुं धृत्वा पठेत्—ॐ अद्येत्यादि अमुकगोत्र: श्री अमुकदेवशर्मा अमुकदेवताया मत्कर्त्तृकामुकमन्त्रदीक्षाकर्मणि अमुकगोत्रं श्री अमुकदेवशर्माण-मेभि: गन्धादिभिरभ्यर्च्य गुरुत्वेन भवन्तमहं वृणे। ॐ वृतोऽस्मीत्युत्तरम्। यथा-विहितं गुरुकर्म कुरु, यथाज्ञानत: करवाणीति प्रतिवचनम्। ततो गुरुराचम्य द्वारदेशे सामान्यार्घ्यं कुर्यात्।

तद्यथा—स्ववामे त्रिकोणवृत्तं भूविम्बं विलिख्य ॐ आधारशक्तये नम: इति सम्पूज्य, फडिति मन्त्रेण अर्घ्यपात्रं प्रक्षाल्य, साधारं शङ्खं तत्र निधाय, नम: इति मन्त्रेण जलेनापूर्य, अंकुशमुद्रया ॐ गङ्गे चेत्यादिना सूर्यमण्डलात्तीर्थमावाह्य प्रणवेन गन्धादीन्निक्षिप्य, धेनुमुद्रां प्रदर्श्य ओमित्यष्टधा दशधा वा जपेत्। तथा च—

त्रिकोणभूवृत्तविम्बमण्डलं रचयेत्तत: ।
आधारशक्तिं सम्पूज्य तत्राधारं विनिक्षिपेत् ॥
अस्त्रेण पात्रं संशोध्य हृन्मन्त्रेण प्रपूरयेत् ॥
निक्षिपेत्तीर्थमावाह्य गन्धादीन् प्रणवेन तु ।
दर्शयेद्धेनुमुद्रां वै सामान्यार्घ्यमिदं स्मृतम् ॥

इति गौतमीयवचनात् अष्टधा प्रणवजप:। विशेषार्घ्यो तथादर्शनात्। श्यामादौ तु दशधा तदर्घ्ये तथादर्शनात्।

पात्रं तोयै: प्रपूर्याथ प्रणवं दशधा जपेत् ।

इति भैरवीयात्।

तत: फडिति तज्जलेन द्वारमभ्युक्ष्य द्वारपूजां कुर्यात्। तद्यथा—ऊद्ध्वोंडुस्वरे ॐ विघ्नाय नम:, ॐ महालक्ष्म्यै नम:, ॐ सरस्वत्यै नम:। दक्षिणशाखायां ॐ विघ्नाय नम:। वामशाखायां ॐ क्षेत्रपालाय नम:। तयो: पार्श्वे ॐ गङ्गायै नम:, ॐ यमुनायै नम:। देहल्यां ॐ अस्त्राय नम:। इति पुष्पवारिभि: पूजयेत्।

निबन्धे—

द्वारमस्त्राम्बुभि: प्रोक्ष्य द्वारपूजां समाचरेत् ।
ऊद्ध्वोंडुम्बरके विघ्नं महालक्ष्मीं सरस्वतीम् ॥
ततो दक्षिणशाखायां विघ्नं क्षेत्रेशमन्यत: ।
तयो: पार्श्वद्वये गङ्गायमुने पुष्पवारिभि: ।
देहल्यामर्चयेदस्त्रं प्रतिद्वारमिति क्रमात् ॥

अशक्तश्चेद्द्वारदेवताभ्यो नम: इत्येतावन्मात्रम्। त्रिपुरादिपूजादिषु स्वतन्त्र तन्त्रे—

गणेशं क्षेत्रपालञ्च योगिनी वटुकं तथा।
गङ्गाञ्च यमुनाञ्चैव लक्ष्मीं वाणीं ततो जपेत् ॥

इति विशेष:।

दीक्षादिवस के पूर्व दिन शिष्य उपवासी रहे। दीक्षा के दिन वह नित्यकर्म से निपटकर स्वस्तिवाचन करे, तव संकल्प करे; जैसे—ॐ अद्येत्यादि अमुकगोत्र श्रीअमुकशर्मा धर्मार्थकाममोक्षकाम: अमुकदेवताया: अमुकाक्षरमन्त्रदीक्षामहं करिष्ये। संकल्प के बाद गुरु का वरण करे।

इसके लिये शिष्य हाथ जोड़कर गुरु से कहे—'ॐ साधु भवानास्ताम्'। गुरु कहे—'ॐ साध्वहमासे'। फिर शिष्य कहे—ॐ अर्चयिष्यामो भवतम्। गुरु कहे—'ॐ अर्चय'। तव शिष्य गन्ध-पुष्प-वस्त्र और अलंकार द्वारा गुरु की पूजा करे। गुरु के दाहिने जानु को स्पर्श करते हुए निम्न वाक्य द्वारा वरण करे—'ॐ अद्येत्यादि अमुकगोत्र: श्रीअमुकदेवशर्मा श्रीअमुकदेवताया मत्कर्तृकामुकमन्त्रदीक्षाकर्मणि अमुकगोत्रं श्रीअमुक-देवशर्माणमेभि: गन्धादिभिरभ्यर्च्य गुरुत्वेन भवन्तमहं वृणे'। उत्तर में गुरु कहे—'ॐ यथाज्ञानं करवाणि'।

इसके बाद गुरु आचमन करके द्वारदेश में सामान्यार्घ्य स्थापित करे। अपने बाँयें भूमि पर त्रिकोण वृत्त चतुरस्र मण्डल बनाकर उस पर ॐ आधारशक्तये नम: से पूजन करे। फिर 'फट्' से अर्घ्यपात्र को धोकर मण्डल के ऊपर आधार और आधार पर शंखादि अर्घ्यपात्र स्थापित करे। 'नम:' बोलते हुए जल से अर्घ्यपात्र को भर दे।

अंकुश मुद्रा के द्वारा 'ॐ गंगे च' इत्यादि मन्त्र से सूर्यमण्डल से तीर्थों का आवाहन करे। ॐ बोलते हुए अर्घ्यपात्र में गन्ध-पुष्प छोड़े और धेनुमुद्रा दिखावे। इसके बाद अर्घ्य के ऊपर 'ॐ' का आठ या दश बार जप करे। विशेषार्घ्य के नियमानुसार आठ बार ही जप करना चाहिये; किन्तु श्यामा आदि देवताओं के सम्बन्ध में दश बार जप करे। भैरवीतन्त्र के अनुसार पात्र को जल से भरकर प्रणव का जप दश बार करे। इसके बाद 'फट्' से अर्घ्योदक द्वारा द्वार का अभ्युक्षण करके द्वारदेवताओं की पूजा करे। जैसे द्वार के ऊपर वाले कोष्ठ में ॐ विघ्नाय नम:, ॐ महालक्ष्म्यै नम:, ॐ सरस्वत्यै नम: से गणेश, महालक्ष्मी और सरस्वती का पूजन करे। द्वार की दाहिनी शाखा में ॐ विघ्नाय नम:, ॐगंगायै नम:, ॐ यमुनायै नम: से गणेश, गंगा और यमुना का पूजन करे। द्वार की बाँयीं शाखा में ॐ क्षेत्रपालाय नम:, ॐ गंगायै नम:, ॐ यमुनायै नम: से क्षेत्र-पाल, गंगा और यमुना का पूजन करे। द्वार के निचले कोष्ठ में ॐ अस्त्राय फट् से पूजन करे। प्रत्येक देवता की अलग-अलग पूजा करने में अशक्त हो तो ॐ द्वारदेवताभ्यो नम: से एक ही बार में सभी देवताओं का एक साथ पूजन किया जा सकता है।

त्रिपुरसुन्दरी आदि की पूजा में द्वारपूजा का विधान स्वतन्त्र तन्त्र में लिखा है। जैसे गणेश, क्षेत्रपाल, योगिनी, वटुक, यमुना और सरस्वती—सबों का पूजन द्वारदेश में करें।

वैष्णवे तु—

नन्दः सुनन्दश्चण्डश्च प्रचण्डो बल एव च।
प्रबलो भद्रनामा च सुभद्रो विघ्नवैष्णवाः ॥
प्रणवादि नमोऽन्तेन नाम्ना मन्त्रेण पूजयेत् ॥

ततो दक्षिणपादप्रक्षेपपुरःसरं वामशाखां स्पृशं दक्षिणाङ्गं सङ्कोचयन्मण्डपान्तः प्रविश्य नैर्ऋत्यां ॐ वास्तुपुरुषाय नमः, ॐ ब्रह्मणे नमः इति पूजयेत्। ततो देयमन्त्रेण दिव्यदृष्ट्यावलोकनाद्दिव्यान् विघ्नानुत्सार्य अस्त्राय फट् इति मन्त्रेण जलेनान्तरीक्षगान् विघ्नानुत्सार्य वामपार्ष्णिघातत्रयेण भौमान् विघ्नानुत्सार्य फडिति सप्तजप्तान् विकारानादाय—

ॐ अपसर्पन्तु ते भूता ये भूता भूवि संस्थिताः।
ये भूता विघ्नकर्त्तारस्ते नश्यन्तु शिवाज्ञया ॥

इति तान्विकिरेत्।

लाजचन्दनसिद्धार्थभस्मदूर्वाकुशाक्षताः ।
विकिरा इति सन्दिष्टाः सर्वाः विघ्नौघनाशकाः ॥

तथा—

अनन्तरं देशिकेन्द्रो दिव्यदृष्ट्यावलोकनैः ।
दिव्यानुत्सारयेद्विघ्नान् अस्त्राद्भिश्चान्तरीक्षगान् ।
पार्ष्णिघातैस्त्रिभिर्भौमानिति विघ्नान्निवारयेत् ॥
ततोऽक्षतान् समादाय दक्षे नाराचमुद्रया ।
प्रक्षिपेदस्त्रमन्त्रेण गृहान्तर्विघ्नशान्तये ॥

अपसर्पन्तु ते इति मन्त्रेण चादरात् इति शारदीयात्।

सम्मोहनतन्त्रे—

विकिरान्विकरेत्तत्र सप्तजप्तान् शरानुना ॥ इति।

ततो ह्रीं आधारशक्तिकमलासनाय नमः इत्यासनं सम्पूज्य धृत्वा पठेत्। आसनमन्त्रस्य मेरुपृष्ठऋषिः सुतलं छन्दः कूर्मो देवता आसनपरिग्रहे विनियोगः।

पृथ्वि त्वया धृता लोका देवि त्वं विष्णुना धृता।
त्वञ्च धारय मां नित्यं पवित्रं कुरु चासनम् ॥

इति पठित्वा स्वस्तिकाद्यासनेनोपविशेत्, उपविश्य विघ्नानुत्सारयेत्। तन्त्रान्तरे—

आदौ विघ्नान् समुत्सार्य पश्चादासनकल्पनम्।
अथवा चासने स्थित्वा विघ्नानुत्सारयेत्सुधीः ॥

ततः पञ्चगव्येन मूलेन मण्डपं शोधयेत्। तत्प्रमाणन्तु गौतमीये—

पञ्चगव्येन तद्गेहं मण्डपञ्च विशोधयेत्।

पञ्चगव्यप्रमाणन्तु तत्रैव—

पलमात्रं दुग्धभागं गोमूत्रं तावदिष्यते।
घृतञ्च पलमात्रं स्याद् गोमयं तोलकद्वयम्।
दधि प्रसृतिमात्रं स्यात्पञ्चगव्यमिदं स्मृतम् ॥
अथवा पञ्चगव्यानां समानो भाग इष्यते।
मूलमन्त्रेण सम्मन्त्र्य तेनैव परिशोधयेत्।
तेन सर्वविशुद्धिः स्यात्सर्वपापनिकृन्तनम् ॥

विष्णुपूजा में नन्द, सुनन्द, चण्ड, प्रचण्ड, बल, प्रबल, भद्र, सुभद्र, विघ्न, वैष्णव सबों की पूजा होती है। पूजा ॐ नन्दाय नमः आदि के क्रम से करे।

फिर गुरु दाहिने पैर को आगे करके बाँईं शाखा को स्पर्श करे और दाहिने अंग को सिकोड़ते हुए मण्डप में प्रवेश करे। मण्डप के बीच में जाकर नैर्ऋत्य कोण में ॐ वास्तुपुरुषाय नमः और ॐ ब्रह्मणे नमः से वास्तुपुरुष और ब्रह्मा का पूजन करे। तब देव-मन्त्र का उच्चारण करते हुए दिव्य दृष्टि से देखकर दिव्य विघ्नराशि को उत्सारित करे और अस्त्राय फट् से जलधारा-वेष्टन द्वारा आकाशस्थित विघ्न तथा बाँईं एँड़ी से भूमि पर तीन बार आघात करके भूमिगत विघ्न को दूर करे। फिर 'फट्' मन्त्र सात बार जप कर हाथ में विकिर लेकर निम्न मन्त्र पढ़ते हुए उन्हें चारो ओर फेंक दे—

ॐ अपसर्पन्तु ये भूता ये भूता भूमिसंस्थिताः।
ये भूता विघ्नकर्तारः ते नश्यन्तु शिवाज्ञया ॥

लाजा, चन्दन, श्वेत सरसो, भस्म, कुश और अक्षत—ये सब विकिर कहलाते हैं। ये सभी विघ्नविनाशक हैं।

शारदातिलक में लिखा है कि नाराच मुद्रा से अक्षत लेकर ॐ अस्त्राय फट् कहते हुए उन्हें गृहमध्य में फेंककर सब विघ्नों की शान्ति करे। 'अपसर्पन्तु ये भूता' मन्त्र से विघ्न दूर करे।

सम्मोहनतन्त्र में लिखा है कि इसके बाद 'ह्रीं आधारशक्तिकमलासनाय नमः' से आसन-पूजा करके आसन को स्पर्श करके यह विनियोग पढ़े—ॐ आसनमन्त्रस्य मेरुपृष्ठऋषिः सुतलं छन्दः कूर्मो देवता, आसनपरिग्रहे विनियोगः। फिर यह पढ़े—

ॐ पृथ्वी त्वया धृता लोका देवि त्वं विष्णुना धृता।
त्वं च धारय मां नित्यं पवित्रं कुरु चासनम्।।

इसके बाद स्वस्तिकादि आसन पर बैठकर विघ्नोत्सारण करे। तन्त्रान्तर में लिखा है कि चाहे पहले विघ्नोत्सारण कर ले, तब आसन पर बैठे। अब पञ्चगव्य द्वारा मूल मन्त्र से मण्डप का शोधन करे।

पञ्चगव्य समान तौल में ले या इस प्रकार ग्रहण करे—दूध ८० ग्राम, गोमूत्र ८० ग्राम, घी ८० ग्राम, गोबर २० ग्राम, दही १ गण्डूष = मुट्ठी भर। मूल मन्त्र से पञ्चगव्य को अभिमन्त्रित करे। ऐसे पञ्चगव्य से सभी द्रव्यों की शुद्धि होती है। सब पाप दूर हो जाते हैं।

ततो दक्षिणभागे पूजाद्रव्याणि वामभागे सुवासिताम्बुपूर्णं कुम्भं हस्तक्षालनार्थं पात्रान्तरं पृष्ठदेशे स्थापयेत्। सर्वदिक्षु घृतप्रदीपांस्तु स्थापयित्वा पुटाञ्जलिर्भूत्वा वामे ॐ गुरुभ्यो नमः ॐ परमगुरुभ्यो नमः ॐ परापरगुरुभ्यो नमः, दक्षिणे ॐ गणेशाय नमः, मध्ये ॐ अमुकदेवतायै नमः। तथा च—

कृताञ्जलिपुटो भूत्वा वामे गुरुत्रयं यजेत्।
गुरुञ्च परमादिञ्च परापरगुरुं तथा।
दक्षिणे च गणेशञ्च मूर्ध्नि देवं विभावयेत्।।

ततः फडिति मन्त्रेण गन्धपुष्पाभ्यां करौ संशोध्य ऊर्ध्वोर्द्ध्वतालत्रयं दत्त्वा छोटिकाभिर्दशदिग्बन्धनं कुर्यात्। ततो रमिति जलधारया वह्निप्राकारं विचिन्तयेत्। ततो भूतशुद्धिः। ततो मातृकान्यासः। ततः प्राणायामः। ततः पीठन्यासः। ततो ऋष्यादिन्यासः। ततो मन्त्रन्यासः। ततो मुद्राप्रदर्शनम्। ततो ध्यानम्। ततो मानसपूजा। ततोऽर्घ्यस्थापनम्। तद्यथा—

अर्घ्यस्य त्रीणिपात्राणिपाद्यस्यापि त्रयंभवेत्।
तथैवाचमनीयादिपात्राणि च विभागशः।
तथा करणदौर्बल्यादेकमेव प्रशस्यते।

षडाचमनपात्राणि इति आगमान्तरे पाठः। पुरश्चरणचन्द्रिकायाम्—

एकस्मिन्नथवा पात्रे पाद्यादीनि प्रकल्पयेत्।

इत्यत्यन्ताशक्तविषयम्। किन्तु सामान्यार्घ्यविशेषार्घ्यद्वयस्यावश्यकत्वम्। तथा च नवरत्नेश्वरे—

एकपात्रं न कर्त्तव्यं यदि साक्षान्महेश्वरः।
मन्त्राः पराङ्मुखा यान्ति आपदस्तु पदे पदे।
इहलोके दरिद्रः स्यान्मृते च पशुतां व्रजेत्।।

तथा राघवभट्टधृतवचनम्—

सर्वत्रैव प्रशस्तोऽजः शिवसूर्यार्चनं विना।

अजः शङ्खः।

इसके बाद गुरु अपने दाहिने पूजाद्रव्य, बाँयें सुगन्धित जलपूर्ण घड़ा और पीछे हाथ धोने के लिये एक पात्र रक्खे। सब दिशाओं में घी का दीपक जलाकर हाथ जोड़कर बाँयें ॐ गुरुभ्यो नमः, ॐ परमगुरुभ्यो नमः, ॐ परापरगुरुभ्यो नमः से प्रणाम करे। दाँयें ॐ गणेशाय नमः और मस्तक पर ॐ अमुकदेवतायै नमः से प्रणाम करे।

फिर फट् से गन्ध-पुष्प द्वारा करशोधन करे। अर्थात् बाँयें हाथ से गन्धयुक्त पुष्प लेकर उसे दोनों हाथों से मले और फट् मन्त्र पढ़ते हुए उसे सूँघकर भूमि पर फेंक दे। फिर क्रमशः ऊपर की ओर तीन बार ताली बजाकर छोटिका मुद्रा से दशो दिशाओं का बन्धन करे। तब 'वं' से जलधारा द्वारा अपने देह को वेष्टित करके यह समझे कि मैं वह्नि प्राकार (अग्नि का घेरा) से वेष्टित हूँ। इसके बाद क्रमश भूतशुद्धि, मातृकान्यास, प्राणायाम, पीठन्यास, ऋष्यादि न्यास, मन्त्रन्यास, मुद्राप्रदर्शन, ध्यान और मानस पूजन करके विशेषार्घ्य स्थापित करे।

अर्घ्य और पाद्य प्रत्येक के तीन-तीन पात्र और आचमनीय आदि के भी तीन पात्र स्थापित करे। इसमें असमर्थ हो तो एक ही पात्र से सारे कार्य करे। अन्य आगमानुसार छः आचमनीय पात्र स्थापित करने का विधान है।

पुरश्चरणचन्द्रिका में लिखा है कि एक ही पात्र से पाद्य, अर्घ्य और आचमनीय आदि प्रदान करे; किन्तु यह अति अशक्त्य अवस्था में करना चाहिये।

नवरत्नेश्वर में लिखा है कि सामान्यार्घ्य और विशेषार्घ्य के दो पात्रों को स्थापित करना आवश्यक है। इन्हें एक ही पात्र में कदापि स्थापित न करे; क्योंकि ऐसा करने से मन्त्र पराङ्मुख हो जाता है। साधक दरिद्र होकर परलोक में पशुत्व को प्राप्त करता है। राघव भट्टधृत वचन के अनुसार शिव और सूर्यपूजा के अतिरिक्त अन्य सभी पूजाओं में शंख में अर्घ्यस्थापन प्रशस्त है।

अर्घ्यपात्रस्य मानमाह लैङ्गे—

षट्त्रिंशदङ्गुलं पात्रमुत्तमं परिकीर्त्तितम्।
मध्यमन्तु त्रिभागोनं कनीयो द्वादशाङ्गुलम्॥

स्ववामे त्रिकोणमण्डलं कृत्वा तदुपरि त्रिपदिकामारोप्य फडिति शङ्खं प्रक्षाल्य तदुपरि संस्थाप्य नमः इति मन्त्रेण गन्धपुष्पाक्षतदूर्वादि तत्र निक्षिप्य विमलजलेन विलोममातृकया मूलेन च पूजयेत्। यथा—

क्षं लं हं सं षं शं वं लं रं यं मं भं बं फं पं नं धं दं थं तं णं ढं डं ठं टं ञं झं जं छं चं ङं घं गं खं कं अः अं औं ओं ऐं एं लॄं लृं ॠं ऋं ऊं उं ईं इं आं अं इत्यनेन।

मं वह्निमण्डलाय दशकलात्मने नमः इति त्रिपदिकायां, अं सूर्यमण्डलाय द्वादशकलात्मने नमः इति शङ्खे, उं सोममण्डलाय षोडशकलात्मने नमः इति जले सम्पूज्य—

ॐ गङ्गे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति।
नर्मदे सिन्धुकावेरि जलेऽस्मिन्सन्निधिं कुरु॥

इत्यनेनाङ्कुशमुद्रया सूर्यमण्डलात्तीर्थाण्यावाह्य अमुकि इहावह इह तिष्ठ इति स्वहृदयाद्देवतां तत्रावाह्य, हुं इति तर्जनीभ्यामवगुण्ठ्य वषडिति गालिनीमुद्रां प्रदर्श्य, वौषडिति तज्जलं वीक्ष्य, पुनरङ्गमन्त्रैः सकलीकृत्य, गन्धपुष्पाभ्यां नमः इति तत्र देवतां सम्पूज्य, तदुपरि मत्स्यमुद्रया आच्छाद्य, मूलमन्त्रमष्टधा जपेत्।

लिंगपुराण में वर्णन है कि अर्घ्यपात्र ३६ अंगुल का उत्तम, २४ अंगुल का मध्यम और १२ अंगुल का अधम होता है। अपने बाँयीं ओर त्रिकोण मण्डल बनाकर उस पर तिपाया रक्खे और फट् से शंख धोकर उस त्रिपाद पर रखे। तब 'नमः' से गन्ध, पुष्प, दूब और अक्षत अर्घ्यपात्र में डाले। मूल मन्त्र और विलोम मातृका से उसे जल से पूर्ण कर दे।

मूल मन्त्र और विलोम मातृका इस प्रकार है—मूल मन्त्र क्षं लं हं सं षं शं वं लं रं यं मं भं बं फं पं नं धं दं थं तं णं ढं डं ठं टं ञं झं जं छं चं ङं घं गं खं कं अः अं औं ओं ऐं एं लॄं लृं ॠं ऋं ऊं उं ईं इं आं अं। अब मं वह्निमण्डलाय दशकलात्मने नमः से त्रिपाद पर, अं सूर्यमण्डलाय द्वादशकलात्मने नमः से शंख में और 'उं सोममण्ड-लाय षोडश कलात्मने नमः' से जल में पूजा करे।

इसके बाद मूल मन्त्र से अंकुश मुद्रा द्वारा जल को आलोड़ित करते हुए सूर्यमण्डल से तीर्थों का आवाहन करे—

ॐ गंगे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति।
नर्मदे सिन्धु कावेरि जलेऽस्मिन् सन्निधिं कुरु।।

इसके बाद अपने हृदय में देवता का आवाहन करे। जैसे—'अमुकी देवी इहावह इह तिष्ठ'। तब हुं से दोनों तर्जनियों से अवगुण्ठन, वषट् से गालिनी मुद्रा दिखावे। वौषट् से जल का दर्शन करके अंगन्यास के मन्त्रों से सकलीकरण करे। तब गन्ध-पुष्प से अर्घ्यपात्र में देवता की पूजा करे। मत्स्य मुद्रा से आच्छादन करे। मूल मन्त्र का आठ बार जप करे।

तथा च गौतमीये—

गन्धपुष्पैः समभ्यर्च्य कृष्णाख्यं तत्र योजयेत्।
अष्टकृत्वो जपेन्मन्त्रं शिखया गालिनीं न्यसेत्॥

अत्र कृष्णपदं तत्तद्देवतापरम्। ततो वमिति मन्त्रेण धेनुमुद्रां प्रदर्श्यास्त्रेण संरक्ष्य तस्मात्किञ्चिज्जलं प्रोक्षणीपात्रे निक्षिप्य तेनोदकेनात्मानं पूजोपकरणञ्च मूलेन त्रिरभ्युक्ष्य पीठन्यासक्रमेण शरीरे धर्मादीन् पूजयेत्। तद्यथा—

दक्षिणस्कन्धे ॐ धर्माय नमः। वामे ॐ ज्ञानाय नमः, वामोरौ ॐ वैराग्याय नमः, दक्षिणोरौ ॐ ऐश्वर्याय नमः, मुखे ॐ अधर्माय, वामपार्श्वे ॐ अज्ञानाय, नाभौ ॐ अवैराग्याय, दक्षिणपार्श्वे ॐ अनैश्वर्याय, सर्वत्र प्रणवादिनमोऽन्तेन पूजयेत्। तथा च शारदायाम्—

अंसोरुयुग्मयोर्विद्वान् प्रादक्षिण्येन देशिकः।
धर्मं ज्ञानञ्च वैराग्यमैश्वर्यञ्चाप्यनुक्रमात्।
मुखपार्श्वनाभिपार्श्वेष्वधर्मादीन् प्रकल्पयेत्॥

हृदये ॐ अनन्ताय, ॐ पद्माय, ॐ अर्कमण्डलाय द्वादशकलात्मने, ॐ सोममण्डलाय षोडशकलात्मने, मं वह्निमण्डलाय दशकलात्मने नमः। एवं सं सत्त्वाय, रं रजसे, तं तमसे, आं आत्मने, अं अन्तरात्मने, पं परमात्मने, ह्रीं ज्ञानात्मने, प्रणवादिनमोऽन्तेन पूजयेत्। शारदायाम्—

न्यासक्रमेण देहेषु धर्मादीन् पूजयेदथ।
पुष्पाद्यैः पीठमन्वन्तं तस्मिंश्च परदेवताम्॥

ततो हृत्पद्मस्य पूर्वादिकेशरेषु पीठशक्तिं सम्पूज्य मध्ये पीठमनु यजेत्। तत्र हृदये मूलदेवतां नैवेद्यं विना गन्धाद्यैः पूजयेत्।

गौतमतन्त्र के अनुसार गन्ध, पुष्प से पूजन करके उसमें देवता का योजन करे और आठ बार मन्त्र-जप करे। मालिनी मुद्रा से शिखा में न्यास करे। तव 'वं' से धेनुमुद्रा दिखाकर 'फट्' से संरक्षण करे। अर्घ्यपात्र का कुछ जल प्रोक्षणीपात्र में डाले। उस जल से मूल मन्त्र द्वारा अपने शरीर तथा पूजनसामग्री का तीन बार अभ्युक्षण करे। फिर पीठन्यास के क्रम से अपने शरीर में गन्ध, पुष्प से धर्मादि का पूजन करे। जैसे—दाँयें कन्धे पर—ॐ धर्माय नमः। बाँयें कन्धे पर—ॐ ज्ञानाय नमः। बाँयीं जंघा में—ॐ वैराग्याय नमः। दाँयीं जंघा में—ॐ ऐश्वर्याय नमः। मुख में—अधर्माय नमः। बाँयीं पसली में—ॐ अज्ञानाय नमः। नाभि में—ॐ अवैराग्याय नमः। दाँयीं पसली में—ॐ अनैश्वर्याय नमः। हृदय में—ॐ अनन्ताय नमः। ॐ पद्माय नमः, ॐ अर्कमण्डलाय

द्वादशकलात्मने नमः। ॐ सोममण्डलाय षोडशकलात्मने नमः। मं वह्निमण्डलाय दशकलात्मने नमः, सं सत्त्वाय नमः, रं रजसे नमः, तं तमसे नमः, आं आत्मने नमः, अं अन्तरात्मने नमः, पं परमात्मने नमः, ह्रीं ज्ञानात्मने नमः। शारदातिलक में लिखा है कि इस प्रकार धर्मादि समस्त पीठदेवताओं की पूजा करके हृदयकमल के मध्य में पूर्वादि केशरों में पीठशक्तियों की और हृदय में इष्टदेवता की पूजा करे।

तथा च निबन्धे—

विना नैवेद्यं गन्धाद्यैरुपचारैः समर्चयेत्।

तत उत्तमाङ्ग—हृदयमूलाधारपादसर्वाङ्गेषु मूलेन पञ्चपुष्पाञ्जलिं दत्त्वा यथाशक्ति मन्त्रं जप्त्वा ॐ गुह्यातिगुह्यगोप्त्रीत्वमित्यादिना जपं समर्पयेत्। तथा च निबन्धे—

पञ्चकृत्वस्ततः कुर्यात्पुष्पाञ्जलिमनन्यधीः।
उत्तमाङ्गहृदाधारपादसर्वाङ्गकं न्यसेत्॥

सर्वमेतत्प्रोक्षणीपात्रस्थवारिणा विदध्यात्। ततः प्रोक्षण्यास्तोयं विसृज्य पूर्ववदापूर्य बहिःपूजामारभेत। ततः वक्ष्यमाणशारदोक्तसर्वतोभद्रमण्डलाद्यन्यतमं विधाय तत्र पूजयेत्। ॐ मण्डलाय नमः इति मण्डलं सम्पूज्य, शालिभिः कर्णिकामापूर्य, तदुपरि तण्डुलान्विकीर्य, तेषु दर्भानास्तीर्य, विष्टरं चाक्षतसंयुक्तं तदुपरि न्यसेत्। ततो मण्डले एताः पूजयेत्। तद्यथा—

पीठमध्ये ॐ आधारशक्तये नमः, ॐ कूर्माय नमः इत्यादि पीठमन्वन्तं तत्तत्पटलोक्तपीठपूजां कुर्यात्। ततो मण्डले प्रादक्षिण्येन एताः पूजयेत्—ॐ यं धूम्रार्चिषे नमः इत्यादिवक्ष्यमाणवह्नेर्दशकलां विन्यस्य पूजयेत्। ततो हेमादिरचितं कुम्भं फडिति प्रक्षाल्य, चन्दनागरुकर्पूरैर्धूपयित्वा त्रिगुणतन्तुना संवेष्ट्य, ॐ कुम्भाय नमः इति गन्धपुष्पाभ्यां सम्पूज्य, विष्टराक्षतनवरत्नानि च प्रक्षिप्य, प्रणवमुच्चरन् कुम्भपीठयोरैक्यं विभाव्य पीठे स्थापयेत्।

निबन्ध में लिखा है कि नैवेद्य को छोड़कर गन्धादि उपचारों से पूजा करे। फिर मस्तक, हृदय, मूलाधार, पाद और सर्वाङ्ग—इन पाँच स्थानों में मूल मन्त्र से पाँच पुष्पाञ्जलियाँ प्रदान करे। यथाशक्ति मूल मन्त्र का जप करे और इस मन्त्र से जप समर्पित करे—

गुह्यातिगुह्यगोप्त्रीत्वं गृहाणास्मत्कृतं जपम्।
सिद्धिर्भवतु मे देवि त्वत्प्रसादात् महेश्वरी।।

निबन्ध में ही इस सम्बन्ध में लिखा है कि एकाग्र मन से पाँच पुष्पाञ्जलियाँ देकर उक्त पाँच स्थानों में न्यास करे। ये सभी कार्य प्रोक्षणीपात्र के जल से सम्पूर्ण करे।

इसके बाद प्रोक्षणी पात्र के जल को फेंककर उसे फिर पूर्ववत् भरे और वाह्य पूजन आरम्भ करे। पहले शारदातिलकोक्त सर्वतोभद्रादि मण्डलों में से कोई एक मण्डल बनाकर ॐ

मण्डलाय नमः से उसकी पूजा करे। फिर धान्य से कर्णिका के मध्य भाग की पूजा करके अक्षत छोड़े। तब उस पर कुश बिछाकर उसके ऊपर अक्षतयुक्त कुश स्थापित करे। इसके बाद मण्डल पर पूजा करे; जैसे— ॐ आधारशक्तये नमः, ॐ कूर्माय नमः इत्यादि। देवता के पटल के अनुरूप क्रम से पीठदेवताओं का पूजन करके मण्डल में प्रदक्षिणक्रम से पूजन करे। जैसे— ॐ यं धूम्रार्चिषे नमः आदि से दश वह्निकलाओं का पूजन करे। फिर स्वर्णादि से बने कुम्भ को 'फट्' से धोकर चन्दन, अगर, कपूर से धूपित करे। त्रिगुणित धागे से वेष्टित करे। ॐ कुम्भाय नमः मन्त्र से गन्ध आदि अर्पण करे। तब कुश, अक्षत और नवरत्न कुम्भ में डालकर ॐ का उच्चारण करते हुए तथा कुम्भ एवं पीठदेवता के ऐक्य का ध्यान करते हुए उसे पीठ पर स्थापित करे।

गौतमीये कुम्भविधानन्तु —

हैमं रौप्यं तथा ताम्रं मार्तिकं वा स्वशक्तितः ।
वित्तशाठ्यं न कुर्वीत कृते निष्फलमाप्नुयात् ॥
षट्त्रिंशदङ्गुलं कुम्भं विस्तारोन्नतिशालिनम् ।
षोडशं द्वादशं वापि ततो न्यूनं न कारयेत् ॥

ततः कुम्भे प्रादक्षिण्येन सूर्यस्य ॐ कं भं तपिन्यै नमः इति द्वादशकला विन्यस्य पूजयेत्। ततः क्षीरिद्रुमकषायेण पलाशत्वग्भवेन वा तीर्थोदकैर्वा गन्धपुष्पसुवासितजलैर्वा आत्माभेदेन मातृकां प्रतिलोमतो देयमन्त्रञ्च जपन्पूजयेत्कुम्भं देवताधिया। ततश्चन्द्रस्यामृतादिषोडशकला जले प्रादक्षिण्येन विन्यस्य, ॐ अं अमृतायै नमः इत्यादिना सम्पूज्य, शङ्खान्तरं क्षीरिद्रुमकषायादिद्रव्यैरापूर्य गन्धाष्टकं विलोड्य तस्मिञ्जले सकलाः कला आवाह्य पूजयेत्।

गौतमीय तन्त्र में लिखा है कि अपनी सामर्थ्य के अनुसार सोना, चाँदी, ताम्बे या मिट्टी का कुम्भ स्थापित करे। अपनी सामर्थ्य से कम धन में काम न चलावे; अन्यथा कार्य सफल नहीं होता। यह कुम्भ ३६ अंगुल विस्तार वाला और उन्नत अर्थात् ऊँचा होना चाहिये। कुम्भ की ऊँचाई १६ अथवा १२ अंगुल होनी चाहिये। इससे छोटा कुम्भ नहीं रखना चाहिये।

अब कुम्भ के ऊपर प्रदक्षिणक्रम से ॐ कं भं तपिन्यै नमः आदि मन्त्रों से सूर्य की बारह कलाओं का पूजन करे। फिर आत्मा और मन्त्र में ऐक्य की भावना करके देय मन्त्र और मातृका मन्त्र का प्रतिलोम जप करके मूल मन्त्र का उच्चारण करते हुए कुम्भ को देवता समझे। तब उसे आकन्दादि दूध वाले वृक्ष के कषाय या पलाश-छाल के कषाय या तीर्थजल या गन्ध-पुष्प सुवासित जल से पूर्ण करे। तब प्रदक्षिणक्रम से उस जल में चन्द्रमा की अमृतादि षोड़श कलाओं का न्यास करे। इसके बाद ॐ अं अमृतायै नमः

आदि मन्त्रों से उनकी पूजा करे। फिर क्षीरि वृक्ष कषायादि से अन्य शंखपात्र को तीर्थजल से भरकर गन्धाष्टक द्वारा आलोड़ित करे। उसी जल में सभी कलाओं का आवाहन करके उनकी पूजा करे।

शारदायाम्—

गन्धाष्टकं तु त्रिविधं शक्तिविष्णुशिवात्मकम् ।
चन्दनागुरुकर्पूरचोरकुङ्कुमरोचनाः ।
जटामांसी कपियुता शक्तेर्गन्धाष्टकं विदुः ॥
चन्दनागुरुह्रीवेरकुष्ठकुङ्कुमसेव्यकाः ।
जटामांसी सुरमिति विष्णोर्गन्धाष्टकं स्मृतम् ॥
चन्दनागुरुकर्पूरतमालजलकुङ्कुमम् ।
कुशीदं कुष्ठसंयुक्तं शैवं गन्धाष्टकं स्मृतम् ॥

अस्यार्थः—चन्दनागुरुकर्पूरकृष्णशठीकुंकुमरोचनाजटामांसीगाठियालाशक्तेर्गन्धाष्टकम्। चन्दनागुरुबालाकूठकुंकुमश्वेतवीरणमूलजटामांसीदेवदारु इति विष्णोः। चन्दनागुरुकर्पूरतमालबालाकुङ्कुमरक्तचन्दनकुड इति शिवस्य। तत्रादौ वह्नेर्दशकलाः पूजयेत्। यथा—वह्नेर्धूमार्चिरादिदशकला इहागच्छत इहागच्छत इह तिष्ठत तिष्ठत इह सन्निहिता भवत इत्यावाहयेत्। ततो मूलमन्त्रं प्रतिलोमतो जपन्मन्त्रस्य देवतां मनसा ध्यायन् आसां प्राणप्रतिष्ठां कुर्यात्। तद्यथा—

आं ह्रीं क्रौं हं सः धूमार्चिरादिवह्निदशकलानां प्राणाः, इह प्राणाः एवं आमित्यादि धूमार्चिरादिवह्निदशकलानां जीव इह स्थितः, एवं आमित्यादि धूमार्चिरादिवह्निदशकलानां सर्वेन्द्रियाणि, एवं आमित्यादि धूमार्चिरादिवह्निदशकलानां वाङ्मनश्चक्षुःश्रोत्रघ्राणप्राणा इहागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा इति प्राणान् प्रतिष्ठाप्य गन्धादिभिः पूजयेत्। 'ॐ धूमार्चिरादिभ्य एष गन्धो नमः' इत्यादिना पञ्चोपचारैः पूजयेत्। ततः प्रत्येकेन पूजयेत्। तद्यथा—

यं धूमार्चिषे नमः। रं उष्मायै नमः। लं ज्वलिन्यै नमः। वं ज्वालिन्यै नमः। शं विस्फुलिङ्गिन्यै नमः। यं सुश्रियै नमः। सं सुरूपायै नमः। हं कपिलायै नमः। लं हव्यवाहनायै नमः। क्षं कव्यवाहनायै नमः। शक्तश्चेत्प्रत्येकमावाह्य पाद्यादिभिः पूजयेत्। ततः सूर्यस्य तपिन्यादि द्वादशकलाः पूर्ववत्प्राणप्रतिष्ठावाहनादिकं कृत्वा पूजयित्वा च प्रत्येकन्तु पूजयेत्। द्वादशकला यथा—

तपिनी तापिनी धूम्रा मरीचिर्ज्वलिनी रुचिः ।
सुषुम्ना भोगदा विश्वा बोधिनी धारिणी क्षमा ।
एताः कलास्तु सूर्यस्य सूर्यमण्डलसंस्थिताः ॥

तद्यथा—कं भं तपिन्यै नमः। खं बं तापिन्यै नमः। गं फं धूम्रायै नमः। घं पं मरीच्यै नमः। ङं नं ज्वलिन्यै नमः। चं धं रुच्यै नमः। छं दं सुषुम्नायै नमः। जं खं भोगदायै नमः। झं तं विश्वायै नमः। ञं णं बोधिन्यै नमः। टं ढं धारिण्यै नमः। ठं डं क्षमायै नमः—इति पूजयेत्। शक्तश्चेत्प्रत्येकमावाह्य प्रत्येकं पाद्यादिभिः पूजयेत्। तथा निबन्धे—

कभाद्या वसुदाः सौराः ठडान्ता द्वादशेरिताः ।

ततश्चन्द्रस्यामृतादिषोडशकलाः प्राणप्रतिष्ठादिकं कृत्वा पूर्ववत्पूजयेत्। तद्यथा—अं अमृतायै नमः। आं मानदायै नमः। इं पूषायै नमः। ईं तुष्ट्यै नमः। उं पुष्ट्यै नमः। ऊं रत्यै नमः। ऋं धृत्यै नमः। ॠं शशिन्यै नमः। लृं चन्द्रिकायै नमः। ॡं कान्त्यै नमः। एं ज्योत्स्नायै नमः। ऐं श्रियै नमः। ओं प्रीत्यै नमः। औं अङ्गदायै नमः। अं पूर्णायै नमः। अः पूर्णामृतायै नमः। शक्तश्चेत्प्रत्येकमावाह्य पाद्यादिभिः पूजयेत्।

शारदातिलक में लिखा है कि शिव, विष्णु और शक्तिभेद से गन्धाष्टक तीन प्रकार का होता है—

१. शक्तिगन्धाष्टक—चन्दन, अगर, कपूर, कृष्णशठी, कुंकुम, गोरोचन, जटामासी और गठियाला।

२. विष्णुगन्धाष्टक—चन्दन, अगर, बाला, कूड़, कुंकुम, श्वेत वेण का मूल, जटामासी और देवदारु।

३. शैवगन्धाष्टक—चन्दन, अगर, कपूर, तमाल, बाला, कुंकुम, रक्त चन्दन और कूड़।

अग्नि की दश कलाओं का पूजनक्रम यह है—धूमार्चिरादि दश कला इहागच्छत, आगच्छत, इह तिष्ठत, तिष्ठत इह सन्निहिता भवत' से आवाहन करके प्रतिलोम से मूल मन्त्र का जप करके मन्त्र के देवता का ध्यान करते हुए कलाओं की प्राणप्रतिष्ठा करे। जैसे—आं ह्रीं क्रों हंसः धूमार्चिरादि वह्निदशकलानां जीव इह स्थितः। आं ह्रीं क्रों हंसः धूमार्चिरादि वह्निदशकलानां सर्वेन्द्रियाणि इह स्थितानि। आं ह्रीं क्रों हंसः धूमार्चिरादिवह्निदशकलानां वाङ्मनश्चक्षुश्श्रोत्रप्राणा इहागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा।

इस प्रकार प्राणप्रतिष्ठा करके ॐ धूमार्चिरादिदेवताभ्यो एष गन्धो नमः से पञ्चोपचार से प्रत्येक देवता का पूजन करे। प्रत्येक देवता का नामोल्लेख इस प्रकार करे—यं धूमार्चिषे नमः। रं उष्मायै नमः। लं ज्वलिन्यै नमः। वं ज्वालिन्यै नमः। शं विस्फुलिङ्गिन्यै नमः। षं सुश्रियै नमः। सं सुरूपायै नमः। हं कपिलायै नमः। लं हव्यवाहनायै नमः। क्षं कव्यवाहनायै नमः। समर्थ हो तो प्रत्येक का आवाहन कर पाद्यादि से पूजन करे।

इसी प्रकार सूर्य की तपिन्यादि द्वादश कलाओं का आवाहनादि और प्राणप्रतिष्ठा करके प्रत्येक की पूजा करे। जैसे—कं भं तपिन्यै नमः। खं बं तापिन्यै नमः। गं फं धूम्रायै नमः। घं पं मरीच्यै नमः। ङं नं ज्वलिन्यै नमः। चं धं रुच्यै नमः। छं दं सुषुम्नायै नमः। जं बं भोगदायै नमः। झं तं विश्वायै नमः। ञं णं बोधिन्यै नमः। टं ढं धारिण्यै नमः। ठं डं क्षमायै नमः। समर्थ हो तो प्रत्येक का आवाहन-पूजन पृथक्-पृथक् करे।

इसी प्रकार चन्द्रमा की अमृता आदि षोडश कलाओं का आवाहनादि करके प्रत्येक की पूजा करे। जैसे—अं अमृतायै नमः। आं मानदायै नमः। इं पूषायै नमः। ईं तुष्ट्यै नमः। उं पुष्ट्यै नमः। ऊं रत्यै नमः। ऋं धृत्यै नमः। ॠं शशिन्यै नमः। ऌं चन्द्रिकायै नमः। ॡं कान्त्यै नमः। एं ज्योत्स्नायै नमः। ऐं श्रियै नमः। ओं प्रीत्यै नमः। औं अंगदायै नमः। अं पूर्णायै नमः। अः पूर्णामृतायै नमः। यदि समर्थ हो तो प्रत्येक का आवाहन पूजन पृथक् पृथक् करे।

ततः सृष्ट्यादिपञ्चाशत्कलाः पूजयेत्। यथा—सृष्ट्यादिकवर्गचवर्गदशकलाः पूर्ववत्प्राणप्रतिष्ठादिकं कृत्वा प्रत्येकं पूजयेत्। प्रत्येकपूजनन्तु—

कं सृष्ट्यै नमः, खं ऋद्ध्यै नमः, गं स्मृत्यै नमः, घं मेधायै नमः, ङं कान्त्यै नमः, चं लक्ष्म्यै नमः, छं धृत्यै नमः, जं स्थिरायै नमः, झं स्थित्यै नमः, ञं सिद्ध्यै नमः। शक्तश्चेत्प्रत्येकमावाह्य पाद्यादिभिः पूजयेत्। तत्र ॐ हंसः सुचिसद्व-सुरन्तरीक्षसद्धोता वेदिषदतिथिर्दुरोनसन्नृषद्वरसदृतसद्व्योम सदजा गोजा ऋतजा अद्रिजा ऋतं वृहदिति जप्त्वा आवाह्य शङ्खे पूजयेत्। ततो जवादिटतपवर्गदश-कलाः पूर्ववत्प्राणप्रतिष्ठादिकं कृत्वा पूजयेत्। यथा—

टं जवायै नमः, ठं पालिन्यै नमः, डं शान्त्यै नमः, ढं ऐश्वर्यै नमः, णं रत्यै नमः, तं कामिकायै नमः, थं वरदायै नमः, दं ह्लादिन्यै नमः, धं प्रीत्यै नमः, नं दीर्घायै नमः। सर्वत्र शक्तश्चेत्प्रत्येकमावाह्य पूजयेत्। ततः ॐ प्रतद्विष्णुस्तवते वीर्येण मृगो न भीमः कुचरो गिरिष्ठा यस्योरुषु त्रिषु विक्रमणेषधिक्षियन्ती भुवनानि विश्वा इति जप्त्वा आवाह्य पूजयेत्। ततस्तीक्ष्णादिपयवर्गदशकलाः पूर्ववत्प्राणप्रतिष्ठादिकं कृत्वा पूजयेत्। यथा—

पं तीक्ष्णायै नमः, फं रौद्रायै नमः, बं भयायै नमः, भं निद्रायै नमः, मं तन्द्रायै नमः, यं क्षुधायै नमः, रं क्रोधिन्यै नमः, लं क्रियायै नमः, वं उत्कारिण्यै नमः, शं मृत्यवे नमः। सर्वत्र शक्तश्चेत्प्रत्येकमावाह्य पाद्यादिभिः पूजयेत्। ततः ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्द्धनम्। उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात् इति जप्त्वावाह्य पाद्यादिभिः पूजयेत्। ततः पीतादिषवर्गपञ्चकलाः पूर्ववत्प्राणप्रतिष्ठादिकं कृत्वावाह्य पाद्यादिभिः पूजयेत्। यथा—

षं पीतायै नमः, सं श्वेतायै नमः, हं अरुणायै नमः, लं असितायै नमः, क्षं अनन्तायै नभः। शक्तश्चेत्प्रत्येकमावाह्य पूजयेत्। ततः ॐ तद्विष्णोः परमं पदं सदा पश्यन्ति सूरयः। दिवीव चक्षुराततम् इति जप्त्वा विष्णुं स्मरेत्। ततो विवृत्त्यादि षोडशकला पूर्ववत्प्राणप्रतिष्ठादिकं कृत्वा आवाह्य पाद्यादिभिः पूजयेत्। यथा—

अं निवृत्त्यै नमः, आं प्रतिष्ठायै, इं विद्यायै, ईं शान्त्यै, उं गन्धिकायै, ऊं दीपिकायै, ऋं रेचिकायै, ॠं मोचिकायै, लृं परायै, ॡं सूक्ष्मायै, एं सूक्ष्मामृतायै, ऐं ज्ञानामृतायै, ओं आप्यायिन्यै, औं व्यापिन्यै, अं व्योमरूपायै, अः अनन्तायै नमः। शक्तश्चेत्प्रत्येकमावाह्य पाद्यादिभिः पूजयेत्। ॐ तद्विप्रासो विपण्यवो जागृवांसः समिन्धते विष्णोर्यत्परमं पदं विष्णुर्योनिं प्रकल्पयतु त्वष्टा रूपाणि पिंषतु। आसिञ्चतु प्रजापतिर्धाता गर्भं दधातु ते। ॐ गर्भं देहि सिनीवालि गर्भं देहि सरस्वति। गर्भन्ते आश्विनौ देवावाधत्तां पुष्करस्त्रजाविति जप्त्वावाह्य पूजयेत्। ततः कलात्मकं तत्शङ्खस्थं क्वाथं कुम्भे निक्षिपेत्। ततोऽश्वत्थपनसचूतपल्लवै-रिन्द्रवल्लीवेष्टितैः कल्पवृक्षबुद्ध्या कुम्भवक्त्रं पिधाय, तस्मिन्कुम्भवक्त्रे सफला-क्षतं चषकं कल्पवृक्षफलबुद्ध्या स्थापयेत्। ततः कुम्भं निर्मलेन क्षौमयुग्मेन संवेष्ट्य, मूलेन कुम्भे मूर्त्तिं सङ्कल्प्य, यथोक्तरूपेण देवतां ध्यात्वा, तत्रावाहनं कृत्वा पूजयेत्।

तत्पश्चात् सृष्ट्यादि दश कलाओं का आवाहनादि करके प्रत्येक की पूजा करे। जैसे—कं सृष्ट्यै नमः। खं ऋद्ध्यै नमः। गं स्मृत्यै नमः। घं मेधायै नमः। ङं कान्त्यै नमः। चं लक्ष्म्यै नमः। छं धृत्यै नमः। जं स्थिरायै नमः। झं स्थित्यै नमः। ञं सिद्ध्यै नमः।

यदि समर्थ हो तो 'ॐ हंसः शुचिसद् वसुरन्तरीक्ष सद्धोता वेदिषदतिथिर्दुरोनसत्रृषद वरसत् ऋतसत् व्योमसदब्जा गोजा ऋतजा अद्रिजा ऋतं वृहत्' का जप करने के बाद आवाहन करके सृष्ट्यादि दश कलाओं से प्रत्येक का अलग-अलग पूजन करे।

अब पूर्ववत् आवाहनादि करके जयादि दश कलाओं की पूजा करे। जैसे—टं जयायै नमः। ठं पालिन्यै नमः। डं शान्त्यै नमः। ढं ऐश्वर्यै नमः। णं रत्यै नमः। तं कामिकायै नमः। थं वरदायै नमः। दं ह्लादिन्यै नमः। धं प्रीत्यै नमः। नं दीर्घायै नमः।

समर्थ हो तो 'ॐ प्रतद् विष्णु स्तवते वीर्येण मृगो न भीमः कुचरो गिरिष्ठा यस्योरुषु त्रिषु विक्रमणेष्वधिक्षियन्ती भुवनानि विश्वा' इस मन्त्र का जप करने के बाद आवाहन करके जयादि प्रत्येक कला का अलग-अलग पूजन करे।

इसके बाद पूर्ववत् आवाहनादि करके तीक्ष्णादि देवताओं का पूजन करे। जैसे—पं तीक्ष्णायै नमः। फं रौद्रायै नमः। बं भयायै नमः। भं निद्रायै नमः। मं तन्द्रायै नमः। यं क्षुधायै नमः। रं क्रोधिन्यै नमः। लं क्रियायै नमः। वं उत्कारिण्यै नमः। शं मृत्यवे नमः।

समर्थ हो तो 'ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्द्धनम् ऊर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्यो-र्मुक्षीय मामृतात्' का जप करने के बाद आवाहन करके तीक्ष्णादि देवताओं का पूजन अलग-अलग करे।

अब पूर्वोक्त क्रम से पीतादि देवताओं का पूजन करे। जैसे—षं पीतायै नम:। सं श्वेतायै नम:। हं अरुणायै नम:। लं असितायै नम:। क्षं अनन्तायै नम:।

समर्थ हो तो 'ॐ तद्विष्णो: परमं पदं सदा पश्यन्ति सूरय: दिवीव चक्षुराततम्' से विष्णु का स्मरण करने के बाद पीतादि प्रत्येक देवता का अलग-अलग आवाहन करके पाद्यादि से पूजन करे।

इसके बाद पूर्ववत् निवृत्त्यादि षोड़श कलाओं का आवाहनादि प्राणप्रतिष्ठा करके प्रत्येक का पूजन करे। जैसे—

अं निवृत्त्यै नम:। आं प्रतिष्ठायै नम:। इं विद्यायै नम:। ईं शान्त्यै नम:। उं गन्धिकायै नम:। ऊं दीपिकायै नम:। ऋं रेचिकायै नम:। ॠं मोचिकायै नम:। ऌं परायै नम:। ॡं सूक्ष्मायै नम:। एं सूक्ष्मामृतायै नम:। ऐं ज्ञानामृतायै नम:। ओं आप्यायिन्यै नम:। औं व्यापिन्यै नम:। अं व्योमरूपायै नम:। अ: अनन्तायै नम:। समर्थ हो तो 'ॐ तद् विप्रासो विपण्यवो जागृवांस: समिन्धते विष्णोर्यत् परमं पदं विष्णुर्योनिं प्रकल्पयतु त्वष्टा रूपाणि पिंषतु। आसिञ्चतु प्रजापतिर्धाता गर्भं दधातु ते। ॐ गर्भं धेहि सिनीवालि गर्भं धेहि सरस्वति गर्भं ते आश्विनौ देवावाधत्तां पुष्करस्रजौ' का जप करने के बाद आवाहनादि करके प्रत्येक निवृत्त्यादि कला का पूजन अलग-अलग करे।

इसके बाद चन्द्रकलास्वरूप शंखस्थ क्वाथ को कुम्भ में डाल दे। इसके बाद पीपल, कटहल और आम्रपल्लवों को इन्द्रवल्ली लता द्वारा वेष्टित करके उसे कल्पवृक्ष समझते हुए उससे कुम्भ का मुख ढक दे। फिर उस कुम्भ पर फल और अक्षतयुक्त कपर्दी को कल्पवृक्ष का फल मानकर स्थापित करे। इसके बाद दो निर्मल रेशमी वस्त्रों से कुम्भ को वेष्टित करे। इसके बाद कुम्भ में मूल मन्त्र से देवमूर्ति की कल्पना करते हुए यथोक्त रूप से देवता का ध्यान करके आवाहन करते हुये उसका पूजन करे।

यथा—मूलमन्त्रमुच्चरन् अमुक इहागच्छ इहागच्छ इह तिष्ठ इह तिष्ठ इह सन्निधेहि इह सन्निरुध्यस्व इत्यावाहनादिकं कृत्वा, हुं इत्यवगुण्ठ्य, देवताङ्गे षडङ्गन्यासं कृत्वा, वमिति धेनुमुद्रया अमृतीकृत्य, परमीकरणमुद्रया परमीकुर्यात्। तत: प्राणप्रतिष्ठां कृत्वा षोडशोपचारै: पूजयेत्। यथा—

मूलमुच्चार्य इदमासनं अमुकदेवतायै नम:, अमुकदेव स्वागतन्ते इति स्वागतम्। ततो मूलमुच्चार्य एतत्पाद्यं अमुकदेवतायै नम: इति पादाम्बुजे दद्यात्। एतच्छ्यामाकदूर्वाब्जविष्णुक्रान्ताभिरीरितम्। अर्घ्यं अमुकदेवतायै स्वाहा इति गन्धपुष्पा-

क्षतयवकुशाग्रतिलसर्षपदूर्वात्मकमर्घ्यं शिरसि दद्यात्। वैष्णवे तु अर्घ्यादि क्रमेणैव देयमिति वदन्ति। ततो मूलमुच्चार्य इदमाचमनीयं अमुकदेवतायै स्वधा इति जातीलवङ्गकक्कोलात्मकमाचमनीयं वदने दद्यात्। स्वधामन्त्रेण वदने दद्यादा-चमनीयकं इत्यत्र सुधापाठं कुर्वन्तः सुधाशब्दस्यामृतवाचकत्वादमृतवाचकशब्दाद्य जलवाचकत्वादिदमाचमनीयं वमिति वदन्ति। तथा च—

मधुपर्कं ततो दद्याज्जलमन्त्रेण देशिकः ।

इति वचनात्। न च मधुपर्कमात्रविषयमिदम्।

स्वधानुना ततः कुर्यान्मधुपर्कं मुखाम्बुजे ।
तेनैव मनुना कुर्यादद्भिराचमनीयकम् ।।

इति वचनात्। तथा—

वारुणेन च मन्त्रेण दद्यादाचमनीयकम् ।

इत्यादिवचनविरोधात्। एतद्वचनं शूद्रविषयकमिति केचित्। वस्तुतस्तु इच्छा-विकल्पः। मैथिलास्तु स्वधा इति पाठं कुर्वन्ति, न सुधेति। वकारस्य त्यागा-बोधकत्वात्। किञ्च त्यागार्थकस्वाहाशब्देनार्घ्यदानविधानात्, तत्समभिव्याहृता-चमनीयदाने त्यागार्थबोधकत्वेन स्वधामन्त्रो युज्यते न तु सुधेत्याहुः। तथा च— नमः स्वाहास्वधावौषडिति यथाक्रमाभिधानाज्जलमन्त्रेण देशिक इति वचनं प्रमाणशून्यमिति तान्त्रिकाः। तेन चाचमनीयं स्वधेति। तथा—

स्वधेत्याचमनीयञ्च त्रिवारं मुखपङ्कजे ।
स्वधेति मधुपर्कञ्च पुनराचमनीयकम् ।।

इति सोमशम्भुधृतवचनात्। एके पुनर्जलमन्त्रेण देशिकः। वारुणेन च बीजेन इत्यत्र सहार्थे तृतीयां वदन्तः इदमाचमनीयं अमुकदेवतायै वं स्वधेति मन्यन्ते। ततो मधुपर्कः स्वधा इति मधुपर्कं दद्यात्।

आज्यं दधिमधून्मिश्रं मधुपर्कं विदुर्बुधाः ।

एवं पुनराचमनीयं स्वधेति। ततः स्नानीयं निवेदयामि, ततो वस्त्रयज्ञोपवीतानि दद्यात्। ततः आभरणं नमः, एष गन्धे नमः, स च गन्धश्चन्दनकर्पूरकाला-गुरुभिरीरितः। ततो मन्त्रपुटितमातृकावर्णेन तत्तन्न्यासस्थानानि पूजयित्वा एतानि पुष्पाणि वौषट् इति। सर्वत्र दाने मूलमन्त्रोच्चारणम्।

पहले मूलं इहागच्छ इहागच्छ, इह तिष्ठ इह तिष्ठ, इह सन्निधेहि, इह सन्निधेहि से आवाहनादि करे। 'हूं' से अवगुण्ठन करे। फिर देवता अंग में षडङ्गन्यास करे। 'वं' उच्चारणपूर्वक धेनुमुद्रा से अमृतीकरण करे। परमीकरण मुद्रा से परमीकरण करे। तब

प्राणप्रतिष्ठा करके षोड़शोपचार से पूजा करे। 'मूलं इदमासनं अमुकदेवतायै नमः' से रजतादि निर्मित आसन देवे। 'अमुकदेव स्वागतं ते' से स्वागत करे।

फिर 'मूलं एतद् पाद्यं अमुकदेवतायै नमः' से देवता के चरणों में पाद्य देवे। साँवा, दूब, कमल, अपराजिता जल में मिलाकर पाद्य की रचना करे। गन्ध-पुष्प-अक्षत-यव-कुशाग्र-तिल-सरसो और दूब मिले जल से 'मूलं अमुकदेवतायै स्वाहा' बोलकर देवता के मस्तक पर अर्घ्य प्रदान करे। मतान्तर है कि विष्णुपूजा में अर्घ्यादि से आरम्भ करके पाद्यादि प्रदान करे।

इसके बाद जायफल, लवंग और कंकोल-मिश्रित जल से 'मूलं इदमाचमनीयं अमुकदेवतायै स्वाहा' कहकर मुख में तीन बार आचमनीय प्रदान करे। 'स्वधा' मन्त्र से मधुपर्क और पुनराचमनीय प्रदान करे। किसी मत से आचमनीय के लिये 'इदमाचमनीयं अमुकदेवतायै वं स्वधा' मन्त्र है। 'मधुपर्कं स्वधा' से मधुपर्क प्रदान करे। घी, दही और मधु मिलाने से मधुपर्क बनता है। 'पुनराचमनीयं स्वधा' से पुनराचमनीय दे। 'स्नानीयं निवेदयामि' से स्नानीय जल प्रदान करे। 'वस्त्रोपवीतादि निवेदयामि' से से वस्त्र-यज्ञोपवीतादि प्रदान करे। फिर 'आभरणं नमः' से आभूषण और 'एष गन्धो नमः' से गन्ध निवेदित करे। चन्दन, कपूर और कालागुरु इत्यादि से गन्ध बनावे। इसके बाद मूल मन्त्र से पुटित मातृका वर्ण द्वारा मातृका न्यास से तत्तत् स्थानों में पूजा करे। 'एतानि पुष्पाणि अमुकदेवतायै वौषट्' से पुष्प प्रदान करे। सभी द्रव्यों के निवेदन में मूल मन्त्र का उच्चारण करना चाहिये।

ततः आवरणपूजा। ततो गुग्गुल्वगुरूशीरशर्करामधुचन्दनघृतात्मकं धूपं दद्यात्। तथा च शारदायाम्—

गुग्गुल्वगुरूशीरशर्करामधुचन्दनैः ।
धूपयेदाज्यसम्मिश्रैर्नीचैर्देवस्य देशिकः ॥

विशेषस्तु तत्रैव—

सिताज्यमधुसम्मिश्रं गुग्गुल्वगुरुचन्दनम् ।
षडङ्गं धूपयेतत्तु सर्वदेवप्रियं सदा ॥
रोगरोगहररोगदकेशाः सुरतरुजतुलघुपत्रविशेषाः ।
वक्रविवर्जितवारिजमुद्रा धूपवर्तिरिह सुन्दरि भद्रा ॥

अस्यार्थः—कुड-हरीतकी-गुड-जटामांसी-देवदारु-जतु-अगुरु-तेजपत्र-सरल-नखी-मुथाः । तथा—

गुग्गुलं सरलं दारु पत्रं मलयसम्भवम् ।
ह्रीवेरमगुरुं कुष्ठं गुडं सर्ज्जरसं घनम् ॥

हरीतकीं नखीं लाक्षां जटामांसीञ्च शैलजम्।
षोडशाङ्गं विदुर्धूपं दैवे पैत्रे च कर्मणि॥
मधु मुस्तं घृतं गन्धो गुग्गुल्वगुरुशैलजम्।
सरलं शिह्लसिद्धार्थं दशाङ्गो धूप उच्यते॥

ततः कर्पूरगर्भिण्या वर्त्तिकया दीपं दद्यात्। तथा च—

वर्त्त्या कर्पूरगर्भिण्या सर्पिषा तिलजेन वा।
आरोप्य दर्शयेद्दीपानुच्चैः सौरभशालिनः॥

इति शारदाधृतम्। विशेषस्तु—

तत्र तत्र जलं दद्यादुपचारान्तरान्तरे।
मधुपर्के च वस्त्रे च दद्यादाचमनीयकम्॥

ततो नैवेद्यानि दद्यात्। गन्धादिदाने विशेषस्तु तन्त्रान्तरे—

मध्यमानामिकाङ्गुष्ठैरङ्गुल्यग्रेण पार्वति।
दद्याच्च विमलं गन्धं मूलमन्त्रेण साधकः॥
अंगुष्ठतर्जनीभ्यान्तु चक्रे पुष्पं निवेदयेत्।
यथा गन्धं तथा देवि धूपं दद्याद्विचक्षणः॥
मध्यमानामिकाभ्यान्तु मध्यपर्वणि देशिकः।
अंगुष्ठाग्रेण देवेशि धृत्वा धूपं निवेदयेत्॥
उत्तोलनं त्रिधा कृत्वा गायत्र्या मूलयोगतः।
तत्त्वाख्यमुद्रया देवि नैवेद्यन्तु निवेदयेत्॥
मूलेनाचमनं दद्यात्ताम्बूलं तत्त्वमुद्रया।
धूपभाजनमन्त्रेण प्रोक्ष्याभ्यर्च्य हृदामुना॥
अस्त्रेण पूजितां घण्टां वादयन् गुग्गुलुं दहेत्।
ततः समर्पयेद्धूपं घण्टावाद्यजयस्वनैः॥

तथा—

जयध्वनि तथा मन्त्रमातः स्वाहेत्युदीर्यते।
अभ्यर्च्य वादयेद् घण्टां सुधूपैर्धूपयेत्ततः॥

तन्त्रे—

न भूमौ वितरेद्धूपं नासने न घटे तथा॥

आवरण-पूजन—तत्पश्चात् आवरण पूजा करने के बाद गुग्गुल, अगर, खश, शक्कर, मधु, चन्दन और घीमिश्रित धूप प्रदान करे।

शारदातिलक में लिखा है कि शक्कर, घी और मधु में गुग्गुल, अगर और चन्दन मिलाने से षडंग धूप बनता है। यह धूप सभी देवों को प्रिय है। शारदातिलक में ही लिखा है कि कपूर, घी, मधु, गुग्गुल, अगर, चन्दनमिश्रित षडंग धूप सभी देवों को देना चाहिये। सभी देवताओं को यह धूप प्रिय है। कुड, हर्रे, गुड़, जटामासी, देवदारु, लाह, अगर, तेजपात, सरल काष्ठ, नखी और मुखा—कुल ११ वस्तुओं से बत्ती बनाकर धूप प्रदान करे। उक्त ग्यारह वस्तुओं में गुग्गुल, चन्दन, बाला, धूना और शिलाजीत मिलाने से षोडशांग धूप बनता है। यह धूप देव और पितृकर्म में प्रशस्त है।

इसके बाद कपूरगर्भित वत्ती का दीपक दिखावे। कपूरगर्भित वत्ती को गोघृत या तिलतैल में जलाकर दीपक दिखावे। यह दीपक सुगन्धित होता है। प्रत्येक उपचार में पूजन के समय प्रत्येक उपचार के बाद जल प्रदान करे। मधुपर्क और वस्त्र देने के बाद आचमनीय प्रदान करे। इसके बाद नैवेद्य प्रदान करे। गन्धादि के सम्बन्ध में विशेष नियम है।

१. गन्ध—मध्यमा, अनामिका और अंगूठे के अग्रभाग से मूल मन्त्रोच्चारपूर्वक प्रदान करे।

२. पुष्प—अंगुष्ठ और तर्जनी से यन्त्र या देवता के अंग पर चढ़ावे।

३. धूप—गन्ध के समान प्रदान करे। मध्यमा और अनामिका के मध्य पर्व एवं अंगुष्ठ के अग्र भाग से धूप लेकर तीन बार उत्तोलनपूर्वक गायत्री या मूलमन्त्र द्वारा प्रदान करे। विशेष विधि यह है कि फट् से धूपपात्र को प्रोक्षित कर नम: से उसकी पूजा करे। फिर फट् से घण्टा की पूजा करके घण्टा बजाते हुए गुग्गुल जलावे और 'जयध्वनि मात:' से घण्टा की पूजा करके उसे बजाते हुए उत्तम धूप प्रदान करे। मिट्टी, आसन और घट पर रखकर धूप प्रदान न करे।

तथा च गौतमीये—

उत्तार्य दृष्टिपर्यन्तां घण्टां वामदिशि स्थिताम्।
वादयन् वामहस्तेन दक्षहस्तेन चार्पयेत्।

एवं दीपदानेऽपि घण्टावादनम्। यामले—

निवेदयेत्पुरोभागे गन्धं पुष्पञ्च भूषणम्।
दीपं दक्षिणतो दद्यात्पुरतो वा न वामतः॥
वामतस्तु तथा धूपमग्रे वा न तु दक्षिणे।
नैवेद्यं दक्षिणे वामे पुरतो वा न पृष्ठतः॥

वामदक्षिणभागस्तु देवताया एव न तु साधकस्य।

धूपदीपौ सुभोज्यञ्च देवताग्रे निवेदयेत्।

इति दर्शनात्। घृतयुक्तं दक्षिणे तैलयुक्तं वामे। एवं सिता वर्त्तिश्चेद्दक्षिणे रक्ता चेद्वामे। सम्मुखे न नियमः।

गौतमतन्त्र में लिखा है कि देवता की दृष्टिपर्यन्त धूप का उत्तोलन कर वाम भाग स्थित घण्टे को बजाते हुए दाहिने हाथ से धूप समर्पित करे। धूप को बाँये या आगे रखकर निवेदित करे। उसे दाँई ओर न रक्खे।

४. दीपदान—दीपदान में भी उक्त प्रकार से ही घण्टा का प्रयोग करे। उसे देवता के दाँयें या आगे रखकर निवेदित करे। बाँई ओर दीपक न रक्खे। विशेष बात यह है कि घी का दीपक दाँयीं ओर और तेल का बाँई ओर रखकर प्रदान करे। श्वेत वर्ण की बत्ती वाला दीपक दाँई और लाल वर्ण की बत्ती वाला दीपक बाँई ओर रखकर प्रदान करे। सम्मुख रखने में कोई नियम नहीं है। सभी प्रकार के दीपक सामने रखकर निवेदित किए जा सकते हैं।

पक्वञ्च देवतावामे आमान्नञ्चैव दक्षिणे।

तथा च पुरश्चरणचन्द्रिकायाम्—

दक्षिणन्तु परित्यज्य वामे चैव निधापयेत्।
अभोज्यं तद्भवेदन्नं पानीयञ्च सुरोपमम्॥

इति साम्प्रदायिकाः। तथा च यामले—

दीपं घृतयुतं दक्षे तैलयुक्तञ्च वामतः।
दक्षिणे च सितावर्तिं वामतो रक्तवर्त्तिकम्॥
पक्वापक्वविधानेन नैवेद्येष्विति तत्स्थितिः।
पुरतो नियमो नास्ति दीपनैवेद्ययोः क्वचित्॥

ततो वन्दनम्। ततोऽष्टोत्तरसहस्रं शतं वा सञ्जप्य गुह्यातीत्यादिना जपं समर्पयेत्।

अथ मन्त्रस्य दशसंस्कारान् पूर्वोक्तेन प्रकारेण कृत्वा गुरुः शिष्यमानीय वौषडिति मन्त्रेण शिष्यनेत्रं वस्त्रेणाच्छाद्य शिष्याञ्जलिं पुष्पैः पूरयित्वा गुरुः स्वयमेव मन्त्रमुच्चरन् कलशे पुष्पाञ्जलिं देवताप्रीत्यै क्षेपयेत्। ततो नेत्रबन्धनं दूरीकृत्य दर्भास्तरे शिष्यं उपवेश्य स्वकृतपूजाक्रमाद्भूतशुद्ध्यादिकं विधाय तत्तन्मन्त्रोक्तन्यासान् शिष्यदेहे कुर्यात्। कुम्भस्थां देवतां पुनः पञ्चोपचारैः सम्पूज्य अलंकृतं शिष्यमन्यस्मिन्नुपवेशयेत्। ततो मङ्गलाचारपूर्वकं कुम्भं समुद्धृत्य, तन्मुखस्थान् सुरद्रुमरूपान् पल्लवान् शिष्यस्य शिरसि निधाय, मातृकां मनसा जपन् मूलेन साधितैस्तोयैर्वसिष्ठसंहितोक्ताभिषेकमन्त्रैस्तमभिषिञ्चेत्। ततः शिष्यः अवशिष्ट-जलेनाचम्य, वाससी परिधाय, गुरोः सन्निधावुपविशेत्। ततस्तामेव गुरुरात्मनो

देवतां शिष्यसंक्रान्तां तयोरैक्यं सम्भावयन् गन्धादिभिः पूजयेत्। ततः ॐ सहस्रारे हुं फडिति मन्त्रेण शिष्यशिखां बद्ध्वा संरक्ष्य शिष्यशरीरे कलान्यासं कुर्यात्। तद्यथा—

कुशत्रयेण पादतलाज्जानुपर्यन्तम्—ॐ निवृत्त्यै नमः। जानुनोर्नाभिपर्यन्तम्—ॐ प्रतिष्ठायै नमः। नाभेराकण्ठम्—ॐ विद्यायै नमः। कण्ठादाललाटम्—ॐ शान्त्यै नमः। ललाटादाब्रह्मरन्ध्रान्तम्—ॐ शान्त्यतीतायै नमः। पुनर्ब्रह्मरन्ध्रादाललाटम्—ॐ शान्त्यतीतायै नमः। ललाटादाकण्ठम्—ॐ शान्त्यै नमः। कण्ठान्नभिपर्यन्तम्—ॐ विद्यायै नमः। नाभेर्जानुपर्यन्तम्— ॐ प्रतिष्ठायै नमः। जानुनोः पादपर्यन्तम्—ॐ निवृत्त्यै नमः।

५. नैवेद्य—दाँयें, बाँयें या सामने रखकर तत्त्वमुद्रा से नैवेद्य प्रदान करे। उसे पीछे की ओर न रक्खे। पक्वान्न बाँयें और आमान्न दाँयें रख कर निवेदित करे। पुरश्चरणचन्द्रिका में लिखा है कि यदि बाँई ओर अन्नादि रक्खा हो तो वह अभोज्य होता है। पानी मदिरा-तुल्य होता है। यह साम्प्रदायिक मत है। यामल में लिखा है कि गन्ध, पुष्प और भूषण को आगे रखकर समर्पित करे। दाँयें-बाँयें जो संकेत है, वह देवता के दाँयें-बाँयें समझना चाहिये; अपने दाँयें-बाँयें नहीं। दीप और नैवेद्य यदि देवता के आगे रखकर निवेदित किया जाय तो घी, तेल और अपक्व का विचार नहीं किया जाता।

इसके बाद मूल मन्त्र से आचमनीय देकर तत्त्वमुद्रा से ताम्बूल प्रदान करे। नमस्कार करके मूल मन्त्र का अष्टोत्तर शत या अष्टोत्तर सहस्र जप करे। फिर 'गुह्यातिगुह्य' आदि से जप का समर्पण करे। इसके बाद देय मन्त्र का पूर्वोक्त प्रकार से दश संस्कार करके गुरु शिष्य को अपने सामने बैठाकर उसकी दोनों आँखों को फट् मन्त्र से वस्त्र द्वारा आच्छादित करे। उसकी अञ्जलि को फूलों से भर दे। फिर गुरु देय मन्त्र का उच्चारण करते हुए देवता की प्रीति के उद्देश्य से शिष्य द्वारा उन फूलों को कलश में डलवा दे। तब शिष्य की आँखें खोलकर उसे कुशासन पर बैठाकर भूतशुद्धिपूर्वक उसके शरीर में उस मन्त्र के विहित न्यास को करे। तदनन्तर कुम्भस्थ देवता का पुनः पञ्चोपचारपूजन करे। अलंकृत शिष्य को दूसरे स्थान पर बैठावे। मंगलाचरण करके कलश के मुख पर रक्खे कुछ कल्पवृक्षरूपी पल्लवों को शिष्य के मस्तक पर रक्खे। मातृका मन्त्र का मन ही मन स्मरण करे। मूल मन्त्र से अभिमन्त्रित जल द्वारा वसिष्ठसंहितोक्त मन्त्रपाठ करते हुए शिष्य को अभिषिक्त करे।

बचे हुए जल से शिष्य आचमन करे और वस्त्र पहन कर गुरु के समीप बैठे। गुरु यह ध्यान करे कि वह और देवता शिष्य में संक्रान्त हैं। वह, देवता और शिष्य एक हैं। तब गन्धादि द्वारा देवता की पूजा करके 'ॐ सहस्रारे हुं फट्' से शिखाबन्धन करे। तीन कुशपत्रों से शिष्य के शरीर में निम्नवत् कलान्यास करे—

चरणतल से जानुपर्यन्त	ॐ निवृत्त्यै नमः।
जानु से नाभि तक	ॐ प्रतिष्ठायै नमः।
नाभि से कण्ठ तक	ॐ विद्यायै नमः।
कण्ठ से ललाट तक	ॐ शान्त्यै नमः।
ललाट से ब्रह्मरन्ध्र तक	ॐ शान्त्यतीतायै नमः।
ब्रह्मरन्ध्र से ललाट तक	ॐ शान्त्यतीतायै नमः।
ललाट से कण्ठ तक	ॐ शान्त्यै नमः।
कण्ठ से नाभि तक	ॐ विद्यायै नमः।
नाभि से जानु तक	ॐ प्रतिष्ठायै नमः।
जानु से चरणतल तक	ॐ निवृत्त्यै नमः।

ततः शिष्यस्य शिरसि हस्तं दत्त्वा, देयमन्त्रमष्टोत्तरशतं जप्त्वा, अमुकमन्त्रं तेऽहं ददामीति शिष्यहस्ते जलं दद्यात्। ततो ददस्वेति शिष्यो ब्रूयात्। तथा च वासिष्ठे—

ततस्तच्छिरसि स्वहस्तं दत्त्वा शतं जपेत्।
अष्टोत्तरं ततो मन्त्रं दद्यादुदकपूर्वकम्।
आवयोस्तुल्यफलदो भवत्वेवमुदीरयेत्॥

ततः ऋष्यादिसंयुक्तं मन्त्रं गुरुर्दक्षिणकर्णे त्रिः श्रावयित्वा वामकर्णे सकृत् श्रावयेत्। तथा च गौतमीये—

न्यासजलं तस्य देहे गुरुः सन्न्यस्य यत्नतः।
दक्षकर्णे वदेन्मन्त्रं त्रिवारं पूर्णमानसः।

दक्षकर्ण इति द्विजातिविषयम्। तथा च तन्त्रे—

दक्षकर्णे त्रिशो विद्यां एकोच्चारेण चोच्चरेत्।
एष विधिर्द्विजातीनां स्त्रीशूद्राणाञ्च वामतः॥

रुद्रयामले—

गुरुस्तु प्राङ्मुखो भूत्वा शिष्यं प्रत्यङ्मुखस्थितम्।
त्रिवारं दक्षिणे कर्णे वामे चैव तथा सकृत्।
विपरीतं ततो ज्ञेयं स्त्रीशूद्राणाञ्च वामतः॥

ततो गुरुचरणे पतित एव तिष्ठेत्।

त्वत्प्रसादादहं देव कृतकृत्योऽस्मि सर्वतः ।
मायामृत्युमहापाशाद्विमुक्तोऽस्मि शिवोऽस्मि च ।

इति वदेत्। ततो गुरुः—

उत्तिष्ठ वत्स ! मुक्तोऽसि सम्यगाचारवान् भव ।
कीर्त्तिश्रीकान्तिपुत्रायुर्बलारोग्यं सदाऽस्तु ते ।।

इति उत्थापयेत्। विश्वसारे—

दक्षकर्णे वदेन्मन्त्रं ऋष्यादिकसमन्वितम् ।
तथा तस्मिन्क्षणे देवि जपेन्मन्त्रं शताष्टकम् ।।

शारदायाम्—

गुरोर्लब्ध्वां परां विद्यामष्टकृत्वो जपेत्सुधीः ।
गुरुमन्त्रदेवतानामैक्यं सम्भावयन् धिया ।

एतद्वचनं तत्तद्भावनापरजपविषयं भावनाशून्ये तु सहस्रम्। गुरुः स्वशक्तिरक्षार्थं सहस्रं शतं वा जपेत्। तन्त्रान्तरे—

शतं जपेत्तदग्रे तु निकटे त्रिदिनं वसेत् ।
नो चेत्सञ्चारिणी शक्तिर्गुरुमेति न संशयः ।।

विश्वसारे—

अष्टाधिकसाहस्रं शतं वाऽपि विधानतः ।
स्वशक्तिरक्षणार्थाय गुरुर्मन्त्रं तदा जपेत् ।।

यामले—

दत्त्वा मन्त्रं जपेद्देवि शतमष्टोत्तरं ततः ।

इसके बाद शिष्य के मस्तक पर हाथ रखकर देय मन्त्र का अष्टोतरशत जप करके गुरु कहे—'अमुकमन्त्रं ते अहं ददामि'। तब उसके हाथ में जल दे। शिष्य कहे—'ददस्व'।

वसिष्ठसंहिता में लिखा है कि मन्त्रजप कर गुरु कहे—'आवयोस्तुल्यफलदो भवतु'। इसके बाद ऋष्यादिसंयुक्त मन्त्र शिष्य के दाहिने कान में तीन बार और बाँयें कान में एक बार सुनावे।

गौतमीयतन्त्र के अनुसार यह विधान द्विजों के लिये है। स्त्री और शूद्र को बाँयें कान में तीन बार और दाँयें कान के एक बार सुनाना चाहिये।

रुद्रयामल में लिखा है कि गुरु पूर्वमुख होकर पश्चिमाभिमुखी शिष्य के कान में मन्त्र सुनावे। फिर शिष्य गुरु के चरणों में गिर कर कहे—

ॐ त्वत् प्रसादादहं देव! कृतकृत्योऽस्मि सर्वतः।
मायामृत्युमहापाशाद् विमुक्तोऽस्मि शिवोऽस्मि च।।

गुरु शिष्य को उठाते हुये कहे—

उत्तिष्ठ वत्स! मुक्तोऽसि सम्यगाचारवान् भव।
कीर्तिश्रीकान्तिप्रज्ञायुर्बलारोग्यं सदाऽस्तु ते।।

विश्वसारतन्त्र में लिखा है कि गुरु से मन्त्र पाते ही शिष्य एक सौ आठ बार उसका जप करे।

शारदातिलक में लिखा है कि गुरु से मन्त्र प्राप्त करके गुरुमन्त्र और देवता में ऐक्य-भावना करके एक सौ आठ बार जप करे। यह वचन देवता के ध्यानपूर्वक जप करने से सम्बन्धित है। ध्यानपूर्वक जप न कर सकने पर एक हजार जप करने का विधान है। तन्त्रसार में वर्णन है कि मन्त्र प्राप्त करके शिष्य १०८ बार जप करे। तीन दिनों तक गुरु के निकट रहे। इससे गुरु की सञ्चारिणी शक्ति शिष्य में प्रविष्ट करती है।

विश्वसारतन्त्र के अनुसार गुरु अपनी शक्ति की रक्षा के लिये उक्त मन्त्र का अष्टाधिक सहस्र या एक सौ आठ बार जप करे।

यामल का भी ऐसा ही वचन है। शिष्य १०८ मन्त्र जपे।

ततः शिष्यः कुशतिलजलान्यादाय ॐ अद्य कृतैतत् अमुकदेवताया अमुक-मन्त्रग्रहणप्रतिष्ठार्थं दक्षिणामिदं सुवर्णं काञ्चनं वा वह्निदैवतं अमुकगोत्राया-मुकदेवशर्मणे गुरवे तुभ्यमहं सम्प्रददे ।

शरीरमर्थं प्राणांश्च सर्वं तस्मै निवेदयेत् ।
ततः प्रभृति कुर्वीत गुरोः प्रियमनन्यधीः ।
यद्यदिष्टतमं लोके मुखे तत्तन्निवेदयेत् ।

स्वतन्त्रतन्त्रे दक्षिणानियमो यथा—

गुरवे दक्षिणां दद्यात्प्रत्यक्षाय शिवात्मने ।
सर्वस्वं वा तदर्धं वा तदर्धं वा तदाज्ञया ।
नो चेत्सञ्चारिणी शक्तिः कथमस्य भविष्यति ।।

कुलामृते—

वित्तशाठ्यं परित्यज्य सर्वकर्माणि साधयेत् ।
वित्तशाठ्यं निहन्त्याशु पुत्रानायुर्यशोधनम् ।।
गुरुदेवं वञ्चयित्वा यः कुर्याद्धनसञ्चयम् ।
तेन तद्भुज्यते नैव ह्रीयते राजतस्करैः ।।
आसनं गुरवे दद्याद्रक्तकम्बलमेव च ।

हाराद्याभरणं दद्याद्गाञ्च दद्यात् पयस्विनीम् ॥
भूमिं वृत्तिकरीं दद्यात् पुत्रपौत्रानुगामिनीम् ॥

तथा—

गुरवे दक्षिणां दद्यात् स्वर्णवस्त्रसमन्वितम् ।
गुरुसन्तोषमात्रेण दुष्टमन्त्रोऽपि सिध्यति ॥
अन्यथा नैव सिद्धिः स्यादभिचाराय कल्पते ।
दीक्षाग्रहणसामग्रीं गुरवेऽथ निवेदयेत् ।
अन्यांश्च ब्राह्मणांस्तत्र यत्नतः परितोषयेत् ॥

ततो मिष्टान्नपानादिना ब्राह्मणान् परितोष्य स्वयं भुञ्जीत । तथा च निबन्धे—

ब्राह्मणान् भोजयेत् पश्चाद्विधिवद्दीक्षितो नरः ।
विप्रेभ्यो दक्षिणां दद्यात्स्वयं भुञ्जीत वाग्यतः ॥

दीक्षादिवसे गुरुशिष्योरुपवासे दोषमाह योगिनीतन्त्रे—

मन्त्रं दत्त्वा गुरुश्चैवमुपवासं यदाचरेत् ।
महान्धकारे नरके कृमिर्भवति नान्यथा ॥
दीक्षां कृत्वा यदा मन्त्री चोपवासं समाचरेत् ।
तस्य देवः सदा रुष्टः शापं दत्त्वा व्रजेत्पुरम् ॥

यद्यत्र होमः क्रियते तदा तद्विधानं वक्ष्यामः।

इति कलावतीदीक्षाप्रयोग:

●

अन्त में शिष्य कुश, तिल और जल लेकर निम्न संकल्प करके गुरु को सोना या चाँदी प्रदान करे। जैसे—ॐ अद्य कृतैतदमुकदेवताया: अमुकमन्त्रग्रहणप्रतिष्ठार्थं दक्षिणामिदं सुवर्णं काञ्चनं वा वह्निदैवतं अमुकगोत्राय अमुकगुरवे तुभ्यमहं सम्प्रददे। शरीर, अर्थ और प्राण सभी गुरु को निवेदित करे। मन्त्रग्रहण के दिन में गुरु को प्रिय लगने वाले कार्य अनन्य मन से करना चाहिये। संसार की सर्वाधिक प्रिय वस्तुयें गुरु को प्रदान करे।

स्वतन्त्रतन्त्र में लिखा है कि गुरु की आज्ञानुसार सर्वस्व या उसका आधा या उसकी चौथाई साक्षात् शिवस्वरूप गुरु को दक्षिणा में प्रदान करे। अन्यथा गुरु से शक्ति सञ्चारित होकर शिष्य में किस प्रकार संक्रान्त होगी?

कुलामृत में लिखा है कि वित्तशाठ्य छोड़कर सभी कार्य करे। धन रहने पर भी दक्षिणा नहीं देने से पुत्र, आयु, यश और धन का नाश होता है। जो व्यक्ति गुरुदेव को धोखा देकर धनसञ्चय करता है, वह उस धन का भोग नहीं कर पाता। राजा और चोर उसका हरण कर लेते हैं। आसन के लिये लाल कम्बल, हारादि आभूषण, दूधारु गाय,

पौत्रादि के उपयोगयोग्य भूमि गुरु को प्रदान करे। गुरु को वस्त्रसहित सोना दक्षिणा दे। गुरु के सन्तुष्ट होने पर इष्ट मन्त्र सिद्ध होता है। गुरु के सन्तुष्ट हुए विना मन्त्र सिद्ध नहीं होता। उनके असन्तुष्ट होने पर मन्त्र अनिष्टकर होता है। दीक्षा-ग्रहण की सारी उपकरण सामग्री गुरुदेव को निवेदित करे।

इसके बाद अन्य ब्राह्मणों को मिष्टान्नपान आदि और दक्षिणा आदि देकर सन्तुष्ट करके स्वयं भोजन करे।

दीक्षा के दिन गुरु और शिष्य दोनों को उपवास नहीं करना चाहिये।

योगिनीतन्त्र में लिखा है कि यदि मन्त्र देने के बाद उस दिन गुरु उपवासी रहे तो महा अन्धकार नरक में कृमि होकर जन्म लेता है। शिष्य दीक्षित होकर उपवास करे तो देवता उससे रुष्ट होकर उसे शाप देकर अपने स्थान में लौट जाते हैं।

होमविधि आगे दी जायगी। यहाँ हवन करना हो तो वहाँ देख लें।

पञ्चायतनी दीक्षा

यामले—

भवानीन्तु यदा मध्ये ऐशान्यामच्युतं यजेत्।
आग्नेय्यां पार्वतीनाथं नैर्ऋत्यां गणनायकम्।
वायव्यां तपनञ्चैव पूजाक्रम उदाहतः॥
यदा तु मध्ये गोविन्दमैशान्यां शङ्करं यजेत्।
आग्नेय्यां गणनाथञ्च नैर्ऋत्यां तपनन्तथा॥
वायव्यामम्बिकाञ्चैव भोगमोक्षैकभूमिकाम्।
शङ्करञ्च यदा मध्ये ऐशान्यामच्युतं यजेत्॥
आग्नेय्यां तपनञ्चैव नैर्ऋत्यां गणनायकम्।
वायव्यां पार्वतीञ्चैव स्वर्गमोक्षप्रदायिनीम्॥
आदित्याञ्च यदा मध्ये ऐशान्यां शङ्करं यजेत्।
आग्नेय्यां गणनाथञ्च नैर्ऋत्यां केशवं तथा॥
वायव्यमबिकां देवीं स्वर्गसाधनभूमिकाम्।
गणनाथं यदा मध्ये ऐशान्यां केशवं यजेत्॥
आग्नेय्यामीश्वरञ्चैव नैर्ऋत्यां तपनन्तथा।
वायव्यां पार्वतीञ्चैव पूजयेन्मोक्षसाधिनीम्।
स्वस्थानवर्जिता देवा दुःखशोकभयप्रदाः॥

पञ्चायतनी दीक्षा—यामल में लिखा है कि पञ्चायतनी दीक्षा में शक्ति, विष्णु, शिव, सूर्य और गणेश के पाँच यन्त्र अंकित करके उनमें पाँचों देवताओं का पूजन करना

चाहिये। इसमें विशेष नियम यह है कि यदि गुरु पञ्च देवताओं में शक्तिभावना प्रधान रूप से करे तो उसका यन्त्र मध्य में स्थापित करके पूजन करे।

इस यन्त्र के ईशानकोण में विष्णु, अग्निकोण में शिव, नैर्ऋत्यकोण में गणेश और वायुकोण में सूर्ययन्त्र स्थापित कर पूजन करे।

यदि मध्य में विष्णु की पूजा करे तो ईशान में शिव, आग्नेय में गणेश, नैर्ऋत्य में सूर्य और वायव्य में भोग-मोक्षदात्री अम्बिका का यन्त्र स्थापित करे और पूजन करे।

यदि मध्य में शिव का पूजन करे तो ईशान में विष्णु, आग्नेय में सूर्य, नैर्ऋत्य में गणेश और वायव्य में स्वर्ग-मोक्षप्रदात्री पार्वती का पूजन करे।

मध्य में सूर्यदेव की पूजा करे तो ईशान में शिव, आग्नेय में गणेश, नैर्ऋत्य में विष्णु और वायव्य में स्वर्गसाधिका भवानी के यन्त्र का पूजन करे।

यदि मध्य में गणेश की पूजा करे तो ईशान में विष्णु, आग्नेय में शिव, नैर्ऋत्य में सूर्य और वायव्य में पार्वती की पूजा करे।

उक्त स्थानों में उलटफेर होने से देवतागण दुःख-शोक और भय प्रदान करते हैं।

तथा च गणेशविमर्शिण्याम्—

शम्भौ मध्यगते हरीनहरभूदेव्यो हरौ शङ्करे
भास्ये नागसुता रवौ हरगणेशाजम्बिकाः स्थापिताः ।
देव्यां विष्णुहरैकदन्तरवयो लम्बोदरेऽजेश्वरे
नार्याः शङ्करभागतोऽतिसुखदा व्यास्तास्तु ते हानिदाः ॥

रामार्चनचन्द्रिकायां गौतमीये च—

यदा तु मध्दे गोविन्दमाग्नेय्यां गणनायकम् ।
नैर्ऋत्यां हंसमभ्यर्च्य वायव्यामर्चयेच्छिवाम् ॥
ऐशान्यां शङ्करञ्चैव भोगमोक्षफलाप्तये ।

इति यदङ्गदेवतायाः पूजने आग्नेयादौ गणेशादिपूजनमुक्तं तद्रामगोपाल-विषयमिति केचित्। वस्तुतो वैकल्पिकमिति साम्प्रदायिकाः। एतेषां पूजनन्तु गौतमीये—

गन्धादिभिरथाभ्यर्च्य षडङ्गार्चनमेव च ।
विंशकृत्वो जपेन्मन्त्रं नमस्कृत्य समापयेत् ॥

अङ्गदेवतापूजाकालस्तु पीठदेवतापूजानन्तरम्। तथा च सनत्कुमारतन्त्रे—

पीठस्यार्चनमङ्गदेवयजनं प्राणप्रतिष्ठां ततः ।
आह्वानं निजमुद्रिकाविरचनं ध्यानं प्रभोः पूजनम् ॥

यत्तु—

देवे पुष्पाञ्जलिं दत्त्वा अङ्गदेवान् समर्चयेत् ।

तत्तु प्रतिष्ठितप्रतिमादियन्त्रादिविषयम्। यन्त्रातिरिक्ताधारे पूजने तु कुलावल्याम्—

एकपीठे पृथक्पूजां विना यन्त्रं करोति यः ।
अङ्गाङ्गित्वं परित्यज्य देवताशापमाप्नुयात् ॥

एवञ्च—

आवाह्य देवतामन्यामर्चयंस्त्वन्यदेवताम् ।
उभाभ्यां लभते शापं मन्त्री भवति दुर्मतिः ॥

इति त्वङ्गातिरिक्तपरम्। सर्वेषामङ्गमन्त्राणां सिद्धादिविचारो नास्ति। तथा च—

सिद्धादिशोधनं नैषामङ्गत्वे सति राजवत् ।

श्यामादौ तु पञ्चायतनाभावः। तथा च रुद्रयामले—

श्यामायां भैरवीताराच्छिन्नमस्ता तु भैरवि ।
मञ्जुघोषे तथा रौद्रे पञ्चाङ्गं नेष्यते बुधैः ॥
उपविद्यासु सर्वासु षट्कर्मादिषु साधने ।
नात्र दीक्षाद्यपेक्षास्ति नात्राङ्गाङ्गिप्रपूजनम् ॥

तत्त्वसारे—

उपविद्यासु सर्वासु तथा प्रयोगसाधने ।
दीक्षां विनैव कर्त्तव्य उपदेशः सदैव हि ॥

गणेशविमर्शिनी के अनुसार भी पञ्चायतन पूजा का यही क्रम है।

रामार्चनचन्द्रिका में भी पञ्चायतन पूजन का क्रम इसी के समान है। अंगदेवता-पूजन में आग्नेयादि कोण में गणेशादि देवताओं की पूजा का विधान है। वह राम और गोपालविषयक है।

साम्प्रदायिकों के मत से ईशानादि कोण-विधान वस्तुतः वैकल्पिक है।

गौतमतन्त्र में उक्त देवताओं का पूजनक्रम यही बताया गया है। विशेष यह है कि इसके अनुसार गन्धादि द्वारा पूजन के बाद षडंग पूजा करनी चाहिये। फिर बीस बार मन्त्र जप कर नमस्कारपूर्वक जपसमर्पण किया जाता है।

सनत्कुमारतन्त्र में वर्णन है कि पीठपूजा के बाद अंगदेवताओं की पूजा करे। तब प्राणप्रतिष्ठा, आवाहन, मुद्राप्रदर्शन, ध्यान और देवता का पूजन करे।

प्रतिष्ठित प्रतिमादि यन्त्रस्थल के लिये यह विधि है कि देवता को पुष्पाञ्जलि देने के

बाद अंगदेवताओं की पूजा करे।

कुलावली तन्त्र में लिखा है कि यन्त्र के अतिरिक्त अन्य आधार पर पूजा करे। एक पीठ पर अंगदेवताओं को छोड़कर अन्य देवताओं की पूजा करने से देवता का शाप मिलता है।

एक देवता का आवाहन करके दूसरे देवता का पूजन करने से साधक दोनों देवताओं से शापित होकर दुर्बुद्धि वाला कहा जाता है। यहाँ अन्य देवता से अंगदेवता से भिन्न देवता से तात्पर्य है।

अंगदेवता के मन्त्रों के सम्बन्ध में सिद्धादि विचार की आवश्यकता नहीं होती। श्यामादि देवताओं की मन्त्रदीक्षा में पञ्चायतनी दीक्षा नहीं की जाती।

रुद्रयामल में लिखा है कि श्यामा, भैरवी, तारा, छिन्नमस्ता मञ्जुघोष और रुद्रमन्त्र की पूजा में पञ्चायतन-पूजन नहीं होता।

तत्त्वसार में लिखा है कि सभी प्रकार की उपविद्याओं और षट्कर्मों की साधना में दीक्षादि तथा अंगादि पूजा की आवश्यकता नहीं होती।

इन कार्यों को दीक्षा के विना केवल उपदेश लेकर ही करना चाहिये।

संक्षेपदीक्षा

मुहूर्त्ते सर्वतोभद्रे नवं कुम्भं निधाय च।
सोदकं गन्धपुष्पाभ्यामर्चितं वस्त्रसंयुतम्॥
सर्वौषधिनवरत्नपञ्चपल्लवसंयुतम्।
ततो देवार्चनं कृत्वा हुनेदष्टोत्तरं शतम्॥

पञ्चपल्लवमिति पनसाम्राश्वत्थवटवकुलानि। तथा च वासिष्ठे—

पनसाम्रं तथाश्वत्थं वटं वकुलमेव च।
पञ्चपल्लवमित्युक्तं मुनिभिस्तन्त्रवेदिभिः॥

नवरत्नानि—

मुक्तामाणिक्यवैदूर्यगोमेदान् वज्रविद्रुमौ।
पद्मरागं मरकतं नीलञ्चेति यथाक्रमात्॥

निबन्धे—

शिष्यं स्वलंकृतं वेद्यामुपाग्निमुपवेशयेत्।
मन्त्रितः प्रोक्षणीतोयैः शान्तिकुम्भजलैस्तथा॥

मूलमन्त्रेणाष्टशतैर्मन्त्रितैरभिषेचयेत्। अष्टशतैः अष्टोत्तरशतैः।

अथ सम्पादयेन्मन्त्रं हस्तं शिरसि धारयन् ।
नमोऽस्त्वित्यक्षतान् दद्यात्ततः शिष्योऽर्चयेद् गुरुम् ॥

यद्वा दीक्षान्तरं शङ्खमभ्यर्च्य साक्षतं तदम्बुनाभिषिच्याष्टवारं मूलेन शिरसि करं निधायाष्टौ वारान् कर्णे जपेत्। तथा च—

तत्राप्यशक्तः कश्चिच्चेदब्जमभ्यर्च्य साक्षतम् ।
तदम्बुनाभिषिच्याष्टवारं मूलेन केवलम् ।
निधायाष्टौ जपेत्कर्णे उपदेशे त्वयं विधिः ॥

उपदेशान्तरमाह विश्वसारे—

चन्द्रसूर्यग्रहे तीर्थे सिद्धक्षेत्रे शिवालये ।
मन्त्रमात्रप्रकथनमुपदेशः स उच्यते ॥

विश्वसारे—

महादीक्षा तथा दीक्षा उपदेशस्ततः परम् ।
युगे युगे च कर्त्तव्य उपदेशः कलौ युगे ॥

इति संक्षेपदीक्षा

●

संक्षिप्त दीक्षापद्धति—सर्वतोभद्र मण्डल के ऊपर नया कलश स्थापित करके उसे जल से पूर्ण करे। गन्ध-पुष्प से इस कलश का पूजन करके वस्त्र से आवेष्टित करे। इसके अन्दर सर्वौषधि और नवरत्न डाले। फिर कलश के मुख पर पञ्चपल्लव रखकर देवता का यथाशक्ति पूजन करे और विधिपूर्वक एक सौ आठ हवन करे।

वशिष्ठसंहिता के अनुसार पञ्चपल्लव में ये पाँच होते हैं—कटहल, आम, पीपल, वट और बकुल = मौलसिरी।

नवरत्न में मोती, माणिक, नीलक्रान्त, गोमेद, हीरा, मूंगा, पुखराज, पन्ना और नीलम होते हैं।

'निबन्ध' में लिखा है कि अलंकृत शिष्य को वेदी के ऊपर अग्नि के समीप बैठाकर प्रोक्षणीपात्रस्थ जल और शान्तिकुम्भ के जल पर एक सौ आठ मन्त्र जप कर इसी जल से उसका अभिषेक करे।

इसके बाद शिष्य के मस्तक पर हाथ रखकर मूल मन्त्र प्रदान करे। तब शिष्य 'नमोऽस्तु' से अक्षत द्वारा गुरु का पूजन करे।

प्रकारान्तर—अक्षतयुक्त शंख को जल में भरकर उससे देवता का पूजन करे। शंखजल से मूल मन्त्र का उच्चारण आठ बार करके शिष्य का अभिषेक करे।

इसके बाद गुरु शिष्य के मस्तक पर हाथ रख कर उसके कान में आठ बार मन्त्र को सुनावे।

विश्वसारतन्त्र में लिखा है कि चन्द्र या सूर्यग्रहण के समय, तीर्थस्थान में, काशी आदि तीर्थक्षेत्र में या शिवालय में शिष्य को गुरु केवल मन्त्र बता दे तो यह दीक्षा होती है। इन स्थानों में और कालों में पूजादि की आवश्यकता नहीं होती।

यह भी लिखा है कि अन्यान्य युगों में महादीक्षा, दीक्षा और उपदेश—ये तीनों विहित थे; किन्तु कलियुग में केवल उपदेश करने से ही कार्य सम्पन्न हो जाता है।

सर्वतोभद्रमण्डलम्

शारदायाम्—

चतुरस्रे चतुष्कोष्ठे कर्णसूत्रसमन्विते ।
चतुर्ष्वपि च कोष्ठेषु कोणसूत्रचतुष्टयम् ॥
मध्ये मध्ये यथा मत्स्या भवेयुः पातयेत्तथा ।
पूर्वापरायते द्वे द्वे मन्त्री याम्योत्तरायते ॥
पातयेत्तेषु मत्स्येषु समं सूत्रचतुष्टयम् ।
पूर्ववत्कोणकोष्ठेषु कर्णसूत्राणि पातयेत् ॥
तदुद्भूतेषु मत्स्येषु दद्यात्सूत्रचतुष्टयम् ।
ततः कोष्ठेषु मत्स्याः स्युस्तेषु सूत्राणि पातयेत् ॥
यावच्छतद्वयं मन्त्री षट्पञ्चाशत्पदान्यपि ।
तावत्तेनैव विधिना तत्र सूत्राणि पातयेत् ॥
षट्त्रिंशता पदैर्मध्ये लिखेत्पद्मं सलक्षणम् ।
बहिः पंक्त्या भवेत्पीठं पंक्तियुग्मेन वीथिकाम् ॥
द्वारशोभोपशोभास्त्रां शिष्टाभ्यां परिकल्पयेत् ।
शास्त्रोक्तविधिना मन्त्री ततः पद्मं समालिखेत् ॥
पद्मक्षेत्रस्य सन्त्यज्य द्वादशांशं बहिः सुधीः ।
तन्मध्यं विभजेद् वृत्तैस्त्रिभिः समविभागतः ॥
आद्यं स्याकर्णिकास्थानं केशराणां द्वितीयकम् ।
तृतीयं पद्मपत्राणां मुक्तांशेन दलाग्रकम् ॥
वाह्यवृत्तान्तरा लस्य मानेन विधिना सुधीः ।
निधाय केशराग्रेषु परितोऽर्द्धनिशाकरान् ॥
लिखित्वा सन्धिसंस्थानि तत्र सूत्राणि पातयेत् ।
दलाग्राणाञ्च यन्मानं तन्मानं वृत्तमालिखेत् ॥

तदन्तराले तन्मध्यसूत्रस्योभयतः सुधीः ।
आलिखेद्बाह्यहस्तेन दलाग्राणि समन्ततः ॥
दलमूलेषु युगशः केशराणि प्रकल्पयेत् ।
एतत्साधारणं प्रोक्तं पङ्कजं तन्त्रवेदिभिः ॥
पदानि त्रीणि पादार्थं पीठकोणेषु मार्जयेत् ।
अवशिष्टैः पदैर्विद्वान् पीठगात्राणि कल्पयेत् ॥
पदानि वीथिसंस्थानि मार्जयेत्पंक्त्यभेदतः ।
दिक्षु द्वाराणि रचयेद् द्विचतुष्कोष्ठकैस्ततः ॥
पदैस्त्रिभिरथैकेन शोभाः स्युर्द्वारपार्श्वयोः ।
उपशोभाः स्युरेकेन त्रिभिः कोष्ठैरनन्तरम् ॥
अवशिष्टैः पदैः षड्भिः कोणानां स्याच्चतुष्टयम् ।
रञ्जयेत्पञ्चभिर्वर्णैर्मण्डलं तन्मनोहरम् ॥
पीतं हरिद्राचूर्णं स्यात्सितं तण्डुलसम्भवम् ।
कुसुम्भचूर्णमरुणं कृष्णं दग्धपुलाकजम् ।
बिल्वादिपत्रजं श्याममित्युक्तं वर्णपञ्चकम् ॥
अंगुलोत्सेधविस्ताराः सीमारेखाः सिताः शुभाः ।
कर्णिकां पीतवर्णेन केशराण्यरुणेन च ॥
शुक्लवर्णानि पत्राणि तत्सन्धिः श्यामलेन च ।
रजसा रञ्जयेन्मन्त्री यद्वा पीतैव कर्णिका ॥
केशराः पीतवर्णाक्ताः अरुणानि दलानि च ।
सन्धयः कृष्णवर्णाः स्युः पीतेनाप्यसितेन वा ॥
रञ्जयेत्पीठगर्भाणि पादाः स्युररुणप्रभाः ।
गात्राणि तस्य शुक्लानि वीथीषु च चतसृषु ॥
आलिखेत्कल्पलतिकां दल-पुष्प-समन्विताः ।
वर्णैर्नानाविधैश्चित्राः सर्वदृष्टिमनोहराः ॥
द्वाराणि श्वेतवर्णानि शोभा रक्ताः समीरिताः ।
उपशोभाः पीतवर्णाः कोणान्यसितभांसि च ॥
तिस्रो रेखा बहिः कार्याः सितरक्तासिताः क्रमात् ।
मण्डलं सर्वतोभद्रमेतत्साधारणं मतम् ॥

सर्वतोभद्रमण्डल—इन श्लोकों के अनुसार जो सर्वतोभद्रमण्डल बनता है, उसके लिये निम्नांकित चित्र का अवलोकन उपयुक्त होगा—
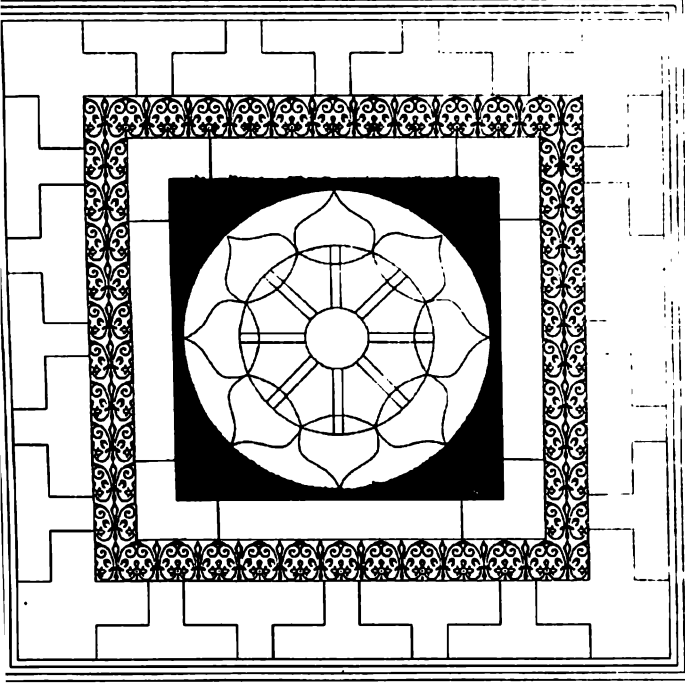
सर्वतोभद्रमण्डल

स्वल्पसर्वतोभद्रमण्डलम्

चतुरस्त्रां भुवं भित्त्वा दिग्भ्यो द्वादशधी सुधीः ।
पातयेत्तत्र सूत्राणि कोष्ठानां दृश्यते शतम् ।।
चतुश्चत्वारिंशदाढ्यं पश्चात्षट्त्रिशताम्बुजम् ।
कोष्ठैः प्रकल्पयेत्पीठं पंक्त्या नैवात्र वीथिका ।।
द्वारशोभे यथापूर्वमुपशोभा न दृश्यते ।
अवशिष्टैः पदैः कुर्यात्षड्भिः कोणानि तन्त्रवित् ।
विदध्यात्पूर्ववच्छेषं एवं वा मण्डलं स्मृतम् ।।

मूलोक्त श्लोक के अनुसार जो स्वल्पसर्वतोभद्रमण्डल बनता है, उसके लिये ांकित चित्र का अवलोकन करना चाहिए—

स्वल्पसर्वतोभद्रमण्डल
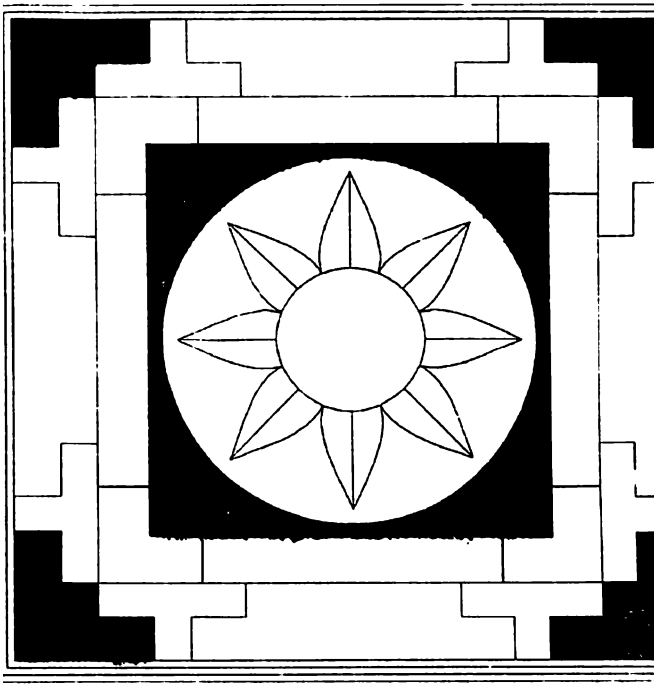
नवनाभमण्डलम्

चतुरस्त्रे चतुःषष्टिपदान्यारचयेत् सुधीः ।
पादैश्चतुर्भिः पद्मं स्यान्मध्ये तत्परितः पुनः ॥
वीथीश्चतस्त्रः कुर्वीत मण्डलान्तावसानिकाः ।
दिग्गतेषु चतुष्केषु पद्मजानि समालिखेत् ॥
विदिग्गतचतुष्कानि भित्वा षोडशधा सुधीः ।
मार्जयेत्स्वस्तिकाकारं श्वेतपीतारुणासितैः ॥
राजीभिः पूरयेत्तानि स्वस्तिकानि शिवादितः ।
प्राक्प्रोक्तेनैव मार्गेण शेषमन्यत्समापयेत् ।
नवनाभमिदं प्रोक्तं मण्डलं सर्वसिद्धिदम् ॥

नवनाभमण्डल—इन श्लोकों के अनुसार जिस प्रकार का नवनाभमण्डल निम्न चित्र में प्रदर्शित किया गया है। यह सर्वसिद्धिप्रद है।

नवनाभमण्डल
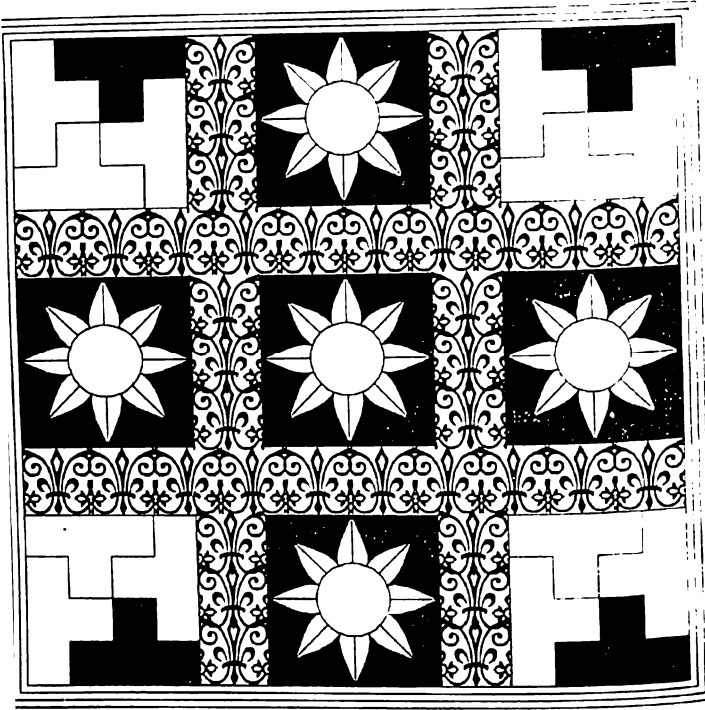
पञ्चाब्जमण्डलम्

पञ्चाब्जमण्डलं प्रोक्तमेतत्स्वस्तिकवर्जितम् ।
दीक्षायां देवपूजार्थं मण्डलानां चतुष्टयम् ।
सर्वतन्त्रानुसारेण प्रोक्तं सर्वसमृद्धिदम् ॥

पञ्चाब्जमण्डल—इस श्लोक के अनुसार जो पञ्चाब्जमण्डल बनता है, उसे ि
के माध्यम से ज्ञात किया जा सकता है। सभी तन्त्रों के अनुसार यह सभी प्रकार
द्धिप्रदायक है।

पूर्व में अंकित सर्वतोभद्रमण्डल, स्वल्प सर्वतोभद्रमण्डल, नवनाभमण्डल ं
धानुसार किसी एक को बनाकर उन्हें पाँच रंगों के चूर्ण से भरे। पाँच रंगों के
ल्दीचूर्ण, चावलचूर्ण, कुसुम्भचूर्ण, दग्ध धान्यचूर्ण और बेलपत्रचूर्ण आते हैं। इ
क्रमशः पीला, उजला, लाल, काला और हरा होता है।

पञ्चाब्जमण्डल
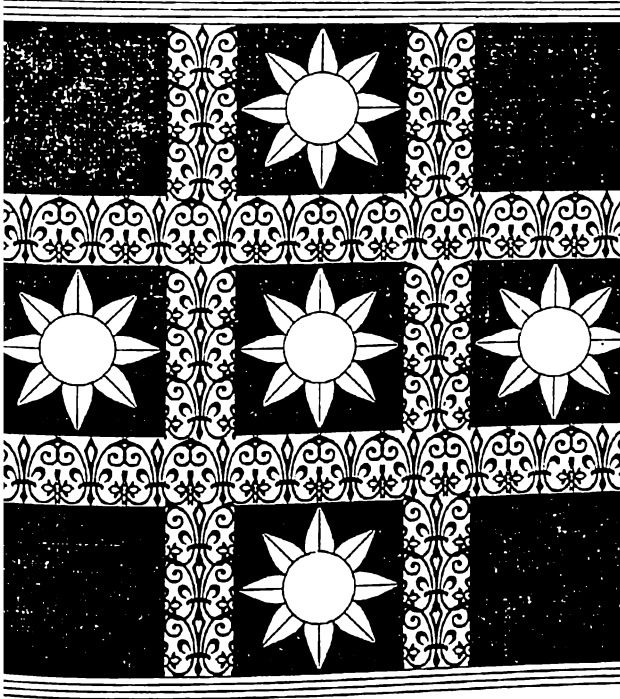
,भ्र वर्ण से एक अंगुली ऊँची सकल सीमा रेखा चित्रित करके पीले
।, लालरंग से केशर, उजले रंग से सभी पत्र और हरे रंग से सभी सन्
।

कारान्तर यह है कि कर्णिका पीले रंग से, केशर पीले और लाल रंग से, प
सन्धि काले रंग से, पीठगर्भ उजले या काले रंग से, पीठपद लाल रंग से,
ंग से बनाकर वीथियों में पत्र-पुष्पों सहित कल्पलता को सभी रंगों के
सभी द्वार उजले रंग, शोभा लालरंग, उपशोभा पीले रंग और चारो को
बनावे। मण्डल के बाहर लाल और उजले रंग की तीन रेखायें चित्रित

त्रिलौहीमुद्रा

थ मन्त्रिणां हितार्थाय त्रिलौहीमुद्रा निरूप्यते—

सोमसूर्याग्निरूपा: स्युर्वर्णा लौहत्रयं तथा।

रौप्यमिन्दुः स्मृतो हेम सूर्यस्ताम्रो हुताशनः ॥
लौहभागाः समुद्दिष्टाः स्वराद्यक्षरसंख्यया ।
तैर्लोहैः कारयेन्मुद्रामसङ्कलितसङ्गताम् ॥
एषु स्वराः स्मृताः सौम्याः स्पर्शाः सौराः शुभोदयाः ।
आग्नेया व्यापकाः सर्वे सोमसूर्याग्निदेवताः ॥
स्वराः षोडश विख्याताः स्पर्शास्ते पञ्चविंशतिः ।
व्यापका दश ते कामधनधर्मप्रदायिनः ॥
साष्टं सहस्रं सञ्जप्य स्पृष्ट्वा तां जुहुयात्ततः ।
तस्यां सम्पातयेन्मन्त्री सर्पिषा पूर्वसंख्यया ॥
निक्षिप्य कुम्भे तां मुद्रामभिषेकोक्तवर्त्मना ।
आवाह्य पूजयेद्देवीमुपचारैर्विधानतः ॥
अभिषिच्य विनीताय दद्यात्तां मुद्रिकां गुरुः ।
इयं मुद्रा क्षुद्ररोगविषज्वरविनाशिनी ॥
व्यालचौरमृगादिभ्यो रक्षां कुर्याद्विशेषतः ।
युद्धे विजयमाप्नोति धारयेन्मनुजेश्वरः ॥
मन्त्रसिद्धिकरीं पुंसां चतुवर्गफलप्रदाम् ।
धारयेन्मनुजो नित्यं देवतुल्यो भवेद्भुवि ॥

अभिषिच्येति पूर्वोक्तदीक्षापद्धत्युक्तक्रमेण घटं संस्थाप्य तत्तत्कल्पोक्तदेवतामावाह्य यथोपचारतः सम्पूज्य साध्यमभिषिच्य तस्मै दद्यादित्यर्थः। ततो गुरवे दक्षिणां दत्त्वा महान्तमुत्सवं कुर्यात्।

इति महामहोपाध्यायश्रीकृष्णानन्दागमवागीशविरचिते
तन्त्रसारे प्रथमः परिच्छेदः

त्रिलौही मुद्रा (अंगूठी)—मन्त्रसाधकों के कल्याण के लिये त्रिलौही मुद्रा का निरूपण किया जाता है। सोना, चाँदी, ताँबा—त्रिलौह सूर्य, चन्द्र, अग्निस्वरूप हैं। चाँदी चन्द्र है। सोना सूर्य है। ताम्बा अग्नि है। अंगूठी बनाने में सोना, चाँदी और ताम्बे का अनुपात अपने नाम के पहले अक्षर के अनुसार होता है। इस अनुपात से अंगूठी बनवावे। इनके लिये स्वरों को सौम्य अर्थात् चन्द्र माना जाता है। सभी २५ स्पर्शवर्णों को सूर्य माना जाता है। सभी वर्णों को अग्निस्वरूप माना जाता है। इन सभी वर्णों के देवता सूर्य, सोम और अग्नि हैं। स्वरों की संख्या १६ हैं। स्पर्शवर्ण २५ हैं। व्यापक अन्तःस्थ की

संख्या १० है। सभी काम-धनप्रदायक हैं। अर्थात् १६ भाग सोना, २५ भाग चाँदी और १० भाग ताँबा मिलाकर जो अंगूठी बनती है, उसे हाथ में लेकर एक हजार आठ मन्त्र जप करे और हवन करे। हवन घी से करे। १००८ सम्पात घी के बूँदों को अंगूठी पर गिरावे। इसके बाद अभिषेकोक्त मार्ग से मुद्रा को कुम्भ में डाल दे। उस कुम्भ में देवी का आवाहन करके विधिवत् उपचारों से पूजन करे।

इससे अभिषेक करके नम्रतापूर्वक गुरु को वह अंगूठी प्रदान करे। इस मुद्रिका से क्षुद्र रोग, विषज्वर का विनाश होता है। साँपों, चोरों और मृगों से रक्षा होती है। जो राजा इस अँगूठी को धारण करता है, उसे युद्ध में विजय मिलती है। मनुष्यों को मन्त्रसिद्धि मिलती है और चतुर्वर्गफल प्राप्त होते हैं। जो मनुष्य इसे नित्य धारण करता है, वह देवतुल्य हो जाता है। पूर्वोक्त दीक्षा-पद्धति से अभिषेक करे। कलश स्थापित करके मन्त्र के कल्प के अनुसार देवता का आवाहन करके यथोपचार से पूजन करे। साध्य का अभिषेक करके अंगूठी देनी चाहिये। इसके बाद गुरु को दक्षिणा देकर महान् उत्सव करे।

प्रथम परिच्छेद सम्पूर्ण

द्वितीयः परिच्छेदः

सामान्यपूजापद्धतिः

तत्र ब्राह्मे मुहूर्त्ते उत्थाय मुक्तस्वापः रात्रिवासस्त्यक्त्वा शिरसि सहस्रदल-कमलकर्णिकास्थितं श्वेतवर्णं गुरुं द्विभुजं वराभयकरं श्वेतमाल्यानुलेपनं स्वप्रकाश-रूपं स्ववामस्थितसुरक्तशक्त्या स्वप्रकाशरूपया सहितं विभाव्य मानसोपचारैराराध्य नमस्कुर्यात्। यथा—

अखण्डमण्डलाकारं व्याप्तं येन चराचरम् ।
तत्पदं दर्शितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥
अज्ञानतिमिरान्धस्य ज्ञानाञ्जनशलाकया ।
चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥

ततो मूलादिब्रह्मरन्ध्रान्तं मूलविद्यां विभावयेत्। मूलविद्यां कुण्डलिनीम्। तथा च योगिनीहृदये—

विद्या कुण्डलिनीरूपा मण्डलत्रयभेदिनी ।

अन्यत्रापि—

ध्यायेत्कुण्डलिनीं सूक्ष्मां मूलाधारनिवासिनीम् ।
तामिष्टदेवतारूपां सार्द्धत्रिवलयान्विताम् ॥
कोटिसौदामिनीभासां स्वयम्भूलिङ्गवेष्टिताम् ।
तामुत्थाय महादेवीं प्राणमन्त्रेण साधकः ॥
उद्यद्दिनकरद्योतां यावच्छ्वासं दृढासनः ।
अशेषाशुभशान्त्यर्थं समाहितमनाः शिवम् ।
तत्प्रभापटलव्याप्तं शरीरमपि चिन्तयेत् ॥

एतस्य नित्यत्वमाह गौतमीये—

इदानीं पूर्वकृत्यञ्च प्रसङ्गात्कथयामि ते ।
यत्कृत्वाधिकारितां याति मन्त्रयन्त्रार्चनादिषु ।
येन विना न सिद्धिः स्यान्नरकञ्च प्रपद्यते ॥

यामले च—

प्रातःकृत्यमकृत्वा तु यो देवीं भक्तितोऽर्चयेत् ।
निष्फला तस्य पूजा स्याच्छौचहीना यथा क्रिया ॥

लक्ष्मीकुलार्णवेऽपि—

सन्ध्यया तु विहीनो यो न दीक्षाफलमाप्नुयात् ।

इति वचनात्तस्यावश्यकत्वम्। वैदिकसन्ध्यानन्तरं तान्त्रिकसन्ध्या कर्त्तव्या। तदुक्तम्—

वैदिकी तान्त्रिकी सन्ध्या यथानुक्रमयोगतः ।

सामान्य पूजापद्धति—ब्राह्ममुहूर्त में निद्रा त्याग कर उठे। रात्रिवास का त्याग करे। शिरोदेश में स्थित सहस्रदलकर्णिकामध्य-स्थित, श्वेत वर्ण, दो भुजाओं वाले, एक हाथ में वर और दूसरे हाथ में अभय मुद्रा वाले, श्वेत माल्य-अनुलेप वाले, स्वप्रकाशरूप, अपने वाम भाग में स्थित सुन्दर लाल वर्ण की शक्ति के सहित स्वप्रकाशस्वरूप गुरुदेव का ध्यान करे। फिर मानसोपचार से उनकी पूजा करे। इसके बाद ध्यान करे। जैसे—

अखण्डमण्डलाकारं व्याप्तं येन चराचरम्।
तत्पदं दर्शितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः।।
अज्ञानतिमिरान्धस्य ज्ञानाञ्जनशलाकया।
चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः।।

१. लं पृथिव्यात्मकं गन्धं समर्पयामि।
२. हं आकाशात्मकं पुष्पं समर्पयामि।
३. यं वाय्वात्मकं धूपं आघ्रापयामि।
४. रं वह्न्यात्मक दीपं दर्शयामि।
५. वं अमृतात्मकं नैवेद्यं निवेदयामि।
६. सं सर्वात्मकं ताम्बूलादिसर्वोपचारान् समर्पयामि।

इसके बाद मूलाधार से ब्रह्मरन्ध्र तक मूल विद्या कुलकुण्डलिनी की भावना करे। योगिनीहृदय में कुण्डलिनीरूपा विद्या मण्डलत्रयभेदिनी बतायी गयी है।

तन्त्रान्तर में कुण्डलिनी के स्वरूप का वर्णन इस प्रकार का है। वह अति सूक्ष्म शरीर वाली, मूलाधारवासिनी, इष्टदेवतारूपा है। जो स्वयम्भू शिवलिंग को साढ़े तीन लपेटों में वेष्टित किए हुए है। उसकी देह की कान्ति करोड़ों बिजली की चमक के समान है। ऐसी कुलकुण्डलिनी को साधक 'हंसः' मन्त्र से प्रबोधित करे। श्वास का संयमन करते हुए उसका ध्यान करे। यह भावना करे कि उदयकालीन सूर्य के समान प्रभा वाली कुल-कुण्डलिनी की देहकान्ति से अपना शरीर व्याप्त हो गया है।

गौतमीय तन्त्र में महादेव श्रीदेवी से कहते हैं कि इस समय प्रसंगानुसार मैं तुमसे पूर्व कृत्य बताता हूँ। जो व्यक्ति प्रातःकृत्य करके साधना करता है, उसे मन्त्र-यन्त्र की अर्चना का अधिकार मिल जाता है। प्रातःकृत्य न करने से देवार्चनादि कार्यों में सिद्धि नहीं मिलती है। उलटे नरकगामी होना पड़ता है।

यामल में लिखा है कि प्रातःकृत्य न करके जो व्यक्ति भक्तिपूर्वक देवी की अर्चना करता है, उसकी वह पूजा शौचहीन क्रिया के समान निष्फल होती है।

लक्ष्मीकुलार्णव में लिखा है कि जो व्यक्ति सन्ध्याविहीन है, उसे दीक्षा से कोई फल नहीं मिलता। अत: सन्ध्या आवश्यक कर्तव्य है। वैदिकी सन्ध्या के बाद तान्त्रिकी सन्ध्या करनी चाहिये।

सन्ध्याप्रयोग:

तत्र शक्तिविषये—ॐ आत्मतत्त्वाय स्वाहा, ॐ विद्यातत्त्वाय स्वाहा, ॐ शिवतत्त्वाय स्वाहा इत्याचामेत्। अन्यत्राचमनमात्रम्। तथा च स्वतन्त्रतन्त्रे—

आत्मविद्याशिवैस्तत्त्वैराचामेत्साधकाग्रणी: ।
वह्निजायां ततो दत्त्वा शुद्धेन पायसा प्रिये ।।

मालिनीतन्त्रे—

आचामेदात्मतत्त्वाद्यै: प्रणवाद्यैर्द्विठान्तकै: । इति ।

ततो जले गङ्गे चेत्यादिना तीर्थमावाह्य मूलेन कुशेन त्रिवारं भूमौ जलं क्षिपेत्। तज्जलेन सप्तधा मूर्द्धानमभिषिञ्चेत्। तत: प्राणायामषडङ्गन्यासौ कृत्वा वामहस्ततले जलं निधाय दक्षिणहस्तेन जलमाच्छाद्य हं यं वं लं रं इति त्रिवारमभिमन्त्र्य, मूलमुच्चरन् गलितोदकविन्दुभिस्तत्त्वमुद्रया मूर्द्धनि सप्तधाभ्युक्षणं कृत्वा, शेषजलं दक्षिणहस्ते समादाय, तेजोरूपं ध्यात्वा, इडयाकृष्य, देहान्त: पापं प्रक्षाल्य, कृष्णवर्णं तज्जलं पापरूपं ध्यात्वा, पिङ्गलया विरेच्य, पुर: कल्पितवज्रशिलायां फडिति मन्त्रेण पापपुरुषस्वरूपं तज्जलं क्षिपेदित्यघमर्षणम्। गङ्गे चेत्यादिमन्त्रं तीर्थेऽपि पठेत्, तीर्थे तद् द्विगुणफलमिति स्मृते:। तथा च गौतमीये—

आचम्य विधिवन्मन्त्री शुचौ देशे च संविशेत् ।
जले संयोज्य तीर्थानि त्रिवारं मूलमन्त्रत: ।
क्षिपेद्भूमौ कुशाग्रेण सप्तधा मूर्ध्नि सेचयत् ।।

तन्त्रान्तरे—

पुनराचम्य विन्यस्य षडङ्गमपि धर्मवित् ।
वामहस्ते जलं गृह्य गलितोदकविन्दुभि: ।।
सप्तधा प्रोक्षणं कृत्वा मूर्ध्नि मन्त्रं समुच्चरन् ।
अवशिष्टोदकं दक्षहस्ते संगृह्य बुद्धिमान् ।।
इडयाकृष्य देहान्त:क्षालितं पापसञ्चयम् ।
कृष्णवर्णं तदुदकं दक्षनाड्या विरेचयेत् ।।
दक्षहस्ते तु तन्मन्त्री पापरूपं विचिन्त्य च ।
पुरतो वज्रपाषाणे निक्षिपेदस्त्रमुच्चरन् ।।

अन्यत्रापि—

षडङ्गन्यासमाचर्य वामहस्ते जलं ततः ।
गृहीत्वा दक्षिणेनैव सम्पुटं कारयेद्बुधः ।।
शिववायुजलपृथ्वीवह्निबीजैस्त्रिधा पुनः ।
अभिमन्त्र्य च मूलेन सप्तधा तत्त्वमुद्रया ।।
निक्षिप्य तज्जलं मूर्ध्नि शेषं दक्षे निधाय च ।
शरीरान्तःस्थितं पापं क्षालयेत्साधकाग्रणीः ।।

ततो हस्तं प्रक्षाल्याचम्य ह्रीं हं सः ॐ घृणिः सूर्य आदित्य इति मन्त्रेण वा सूर्यायार्घ्यं दद्यात्। तथा सम्मोहनतन्त्रे—

शिवबीजं वह्निसंस्थं वामनेत्रविभूषितम् ।
विन्दुनादात्मकं देवि हंसः पदमथो लिखेत् ।
अनेन मनुना मन्त्री भास्करस्य प्रियेण तु ।।

अर्घ्यं दद्यादिति शेषः। विशेषस्तु स्नानप्रकरणे वक्तव्यः। ततः ॐ सूर्यमण्डलस्थायै अमुकदेवतायै नमः इत्यनेन तद्गायत्र्या वा त्रिवारं जलं निक्षिप्य तत्तद्देवताया गायत्रीं जपेत्। तथा चार्घ्यानन्तरं ज्ञानार्णवे—

ततश्च प्रजपेद्धीमान् गायत्रीं परमाक्षरीम् ।

गायत्री तु स्नानप्रकरणे वक्तव्या। नन्दिकेश्वरसंहितायाम्—

यावन्न दीयते चार्घ्यं भास्कराय महात्मने ।
तावन्न पूजयेद्विष्णुं शङ्करं वा महेश्वरीम् ।।

गौतमीये—

एवं ते कथिता मन्त्रसन्ध्या मन्त्रफलाप्तये ।
न कुर्याद्यदि मोहेन न दीक्षाफलमाप्नुयात् ।।
सन्ध्यात्रयं तथा कुर्याद् ब्राह्मणो विधिपूर्वकम् ।
तन्त्रोक्तविधिपूर्वन्तु शूद्रः सन्ध्यां समाचरेत् ।।
संक्षेपसन्ध्यामथवा कुर्यान्मन्त्री ह्यशक्तितः ।
सायं प्रातश्च मध्याह्ने देवं ध्यात्वा मनुं जपेत् ।
सन्ध्यायां पतितायान्तु गायत्रीं दशधा जपेत् ।।

सन्ध्या—स्वतन्त्रतन्त्र और मालिनीतन्त्र में लिखा है शक्तिसन्ध्या में ॐ आत्मतत्त्वाय स्वाहा, ॐ विद्यातत्त्वाय स्वाहा, ॐ शिवतत्त्वाय स्वाहा से आचमन करे। अन्य देवताओं के सम्बन्ध में केवल वैदिक आचमन यथाविधि करे। तब 'ॐ गंगे च यमुने चैव'

इत्यादि मन्त्र से जल में तीर्थों का आवाहन करे। तीन कुशपत्रों से भूमि पर तीन बार और मस्तक पर सात बार जल छिड़के। तब प्राणायाम और षडंगन्यास करे। बाँयें हाथ में जल लेकर उसे दाँयें हाथ से ढँके और 'हं यं वं लं रं' का तीन बार जप करे। मूल मन्त्र का उच्चारण करके तत्त्वमुद्रा द्वारा टपकते हुए जलविन्दु से मस्तक का अभ्युक्षण सात बार करे। शेष जल दाँयें हाथ में ले ले। उस जल को तेजोरूप मानकर इडानाड़ा = बाँयीं नासा से भीतर खींचते हुए देहमध्यगत पाप का प्रक्षालन करे। इसके बाद उस जल को काले पापपुरुष समझते हुए दाँयीं नासा द्वारा निकालते हुए कल्पित वज्रशिला पर 'फट्' बोलते हुए पटक दे। इसे अघमर्षण कहते हैं। गंगादि तीर्थजल में भी 'ॐ गंगे च' से तीर्थावाहन करे। 'स्मृति' के मत से तीर्थजल में तीर्थावाहन से दुगुना फल होता है।

गौतमतन्त्र में लिखा है कि साधक विधिवत् आचमन करके पवित्र स्थान और आसन पर बैठे। जल में तीर्थों का आवाहन करके मूल मन्त्र से तीन बार पृथ्वी पर और सात बार सिर पर कुशाग्र द्वारा सिञ्चन करे।

तन्त्रान्तर में लिखित है कि पुन: आचमन करके षडंगन्यास करे। हाथ में जल लेकर गिरते हुए जलबिन्दुओं के द्वारा मन्त्रोच्चारण करते हुए शिर पर सात बार प्रोक्षण करे। शेष जल द्वारा पूर्वोक्त प्रकार से अघमर्षण करे। जैसे अवशिष्ट जल को दाँयें हाथ में लेकर बाँयीं नासा से भीतर खींचकर सञ्चित पाप का प्रक्षालन करे। उस पापपुरुषरूपी जल को दाँयीं नासा द्वारा निकाल कर दाँयें हाथ में लेकर अपने सामने कल्पित वज्रपत्थर पर 'फट्' बोलते हुए पटक दे।

अन्यत्र भी लिखा है कि षडंगन्यास करके बाँयें हाथ में जल लेकर दाँयें हाथ से ढँक दे। शिव, वायु, जल, पृथ्वी, वह्निबीज = ' हं यं वं लं रं' के तीन जप से अभिमन्त्रित करे। मूल मन्त्र के सात बार जप से अभिमन्त्रित करे। तत्त्वमुद्रा से कुछ अपने मस्तक पर छोड़े। अवशिष्ट जल दाँयें हाथ में लेकर अपने शरीरस्थ पाप का प्रक्षालन करे। इसके बाद हाथ धोकर आचमन करके 'ह्रीं हंस:' या 'घृणि: सूर्य:' आदित्य मन्त्र से सूर्य को जल से अर्घ्य प्रदान करे।

सम्मोहनतन्त्र के अनुसार भास्कर के प्रिय 'हंस' मन्त्र से अर्घ्य प्रदान करने के बाद 'ॐ सूर्यमण्डलस्थायै अमुकदेवतायै नम:' मन्त्र का उच्चारण करे और उस देवता के गायत्री मन्त्र का जप करे। ज्ञानार्णव के अनुसार अर्घ्य देने बाद गायत्री मन्त्र का जप करे।

नन्दिकेश्वरसंहिता में वर्णन है कि जब तक सूर्यदेव को अर्घ्य न दिया जाय तब तक विष्णु, शिव या शक्ति देवता के पूजन का अधिकार नहीं होता। गौतमतन्त्र में लिखा है कि इसी प्रकार तान्त्रिक मन्त्र की फलप्राप्ति के लिये तान्त्रिक सन्ध्या करनी चाहिये, जिसके न करने से दीक्षा का फल नहीं मिलता। ब्राह्मण विधिपूर्वक प्रात:, मध्याह्न और सायं— तीनों कालों में वैदिक सन्ध्या के साथ तान्त्रिक सन्ध्या भी करे। सम्पूर्ण मन्त्रानुष्ठान में

असमर्थ होने पर साधक सन्ध्या संक्षेप में करे। जैसे प्रातः, मध्याह्न और सायंकाल देवता का ध्यान करके केवल मूल मन्त्र का जप करे। यथासमय सन्ध्या न कर सकने पर दूसरे समय दस बार गायत्री का जप करने के वाद सन्ध्या करे।

स्नानविधिः

नद्यादौ गत्वा वैदिकस्नानं कृत्वा तान्त्रिकस्नानमाचरेत्। तथा च गौतमीयतन्त्रे—

अथ स्नानं तथा कुर्याद्यथाशास्त्रविधानतः ।
मलप्रक्षालनं स्नानं स्वशाखोक्तं समाचरेत् ।
मन्त्रस्नानं ततः कुर्यात्कर्मणां सिद्धिहेतवे ॥

तद्यथा—ॐ अद्येत्यादि अमुकदेवताप्रीतये स्नानमहं करिष्ये इति सङ्कल्पं कुर्यात्। तथा च कुलचूडामणौ—

ताम्रपात्रं सदूर्वञ्च सतिलं सजलं तथा ।
गृहीत्वामुकदेवस्य प्रीतये स्नानामाचरेत् ॥

ततः षडङ्गन्यासः प्राणायामौ कृत्वा—

ॐ गङ्गे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति ।
नर्मदे सिन्धुकावेरि जलेऽस्मिन् सन्निधिं कुरु ॥

इत्यनेनाङ्कुशमुद्रया सूर्यमण्डलात्तीर्थमावाह्य, वमिति धेनुमुद्रया अमृतीकृत्य, कवचेनावगुण्ठ्य, अस्त्रेण संरक्ष्य, मूलेनैकादशधाभिमन्त्र्य, सूर्याभिमुखं द्वादशवारिधारां निक्षिप्य, तस्मिन्निष्टदेवताचरणारविन्दनिःसृते जले त्रिर्निर्मज्य, देवतां ध्यायन् मूलमन्त्रं यथाशक्ति जपन् उदकेन त्रिवारजप्तेन कलशमुद्रया त्रिवारमात्मानमभिषिच्य, वैदिकसन्ध्यातर्पणं कृत्वा, सूर्यायार्घ्यं दत्त्वा, तान्त्रिकाघमर्षणादि वारिधारान्तं कर्म कुर्यात्। तथा च यामले—

ध्यात्वा जलाञ्जलीन् क्षिप्त्वा तर्पयेदिष्टदेवताम् ।

तत्र क्रममाह—ॐ देवांस्तर्पयामि, ॐ ऋषींस्तर्पयामि, ॐ पितृंस्तर्पयामि, इति सन्तर्प्य गुरुं परापरगुरुं परमेष्ठिगुरुञ्च तर्पयेत्। तथा च—

देवान् ऋषीन् पितृंश्चैव तं कल्पोक्तविधानतः ।
गुरुपंक्तिं पुरा तर्प्य तर्पयेदिष्टदेवताम् ॥

वैष्णवे तु विशेषः—

नारदं पर्वतं जिष्णुं निशठोद्धवदारुकम् ।
विष्वक्सेनञ्च शैनेयं गुरुञ्च तर्पयेत्त्रिशः ॥

वाक्यन्तु—ॐ नारदं तर्पयामि इत्यादिक्रमेण प्रयोगः। ततो मूलमुच्चार्य

अमुकदेवतां तर्पयामि नमः इति विष्णुविषयम्। तथा च गौतमीये—

आदौ मन्त्रं समुच्चार्य श्रीपूर्वं कृष्णमित्यपि ।
तर्पयामि पदञ्चोक्त्वा नमोऽन्तं तर्पयेत्ततः ॥

अन्यत्र मूलमुच्चार्य अमुकदेवतां तर्पयामि। तथा च तन्त्रान्तरे—

तर्पयामिपदं योज्यं मन्त्रान्तेष्वेषु नामसु ।
द्वितीयान्तेषु चेत्येवं तर्पणस्य मनुः स्मृतः ॥

शक्तिविषये पुनः मूलमुच्चार्य अमुकदेवीं तर्पयामि स्वाहा। होमतर्पणयोः स्वाहेति तत्तन्मन्त्रवचनात्। तथा च नीलतन्त्रे—

मन्त्रान्ते नाम उच्चार्य तर्पयामि ततः परम् ।
स्वाहान्तं तर्पयन्त्वेवम्…………॥ इत्यादि।

विशुद्धेश्वरे—

विद्यां पूर्वं समुच्चार्य तदन्ते देवताभिधाम् ।
तर्पयामीति सम्प्रोक्त्वा स्वाहान्तस्तर्पणे मतः ॥
पञ्चविंशतिसंख्या वा दशधा वा त्रिधापि वा ।
मूलमन्त्रं समुच्चार्य श्रीकृष्णं तर्पयेत्सुधीः ॥

इति गौतमीयवचनात्पञ्चविंशतिवारं दशधा त्रिधा वा सन्तर्पयेत्। अत्र श्रीकृष्ण-मित्युपलक्षाम्। शक्तिविषये त्रिधा तर्पणम्।

स्नानकर्मणि सम्प्राप्ते मूर्ध्नि मन्त्री जलाञ्जलिम् ।
विद्ययाथ त्रिशः कुर्यात्पूतास्तु त्रिः पयः पिबेत् ।
तर्पणञ्च त्रिधा भूयस्त्रिधा च प्रोक्षणं तनोः ॥

इति कुलामृतवचनात्। ततश्च तदावरणदेवतानां प्रत्येकेन सकृत्तर्पयेत्। तथा च कुलार्णवे—

एकैकमञ्जलिं तोयं परिवारान् प्रतर्पयेत् ।

तत्राशक्तश्चेन्मूलमन्त्रमुच्चार्य इष्टदेवतामात्रं तर्पयेत्। तथा च—

अशक्तौ मूलमुच्चार्य देवीमात्रं प्रतर्पयेत् ।

ततो जलादुत्थाय धौते वाससी परिधायाचम्य ह्रीं हंसः इदमर्घ्यं सूर्याय स्वाहा। तारादौ तु ह्रीं हंसः मार्त्तण्डभैरवाय प्रकाशशक्तिसहिताय इदमर्घ्यं स्वाहा। तन्त्रान्तरे—

सूर्यमन्त्रं समुच्चार्य मार्त्तण्डभैरवाय च ।
प्रकाशशक्तिसहिताय इदमर्घ्यं ततः पठेत् ।
स्वाहान्तं मन्त्रमुच्चार्य अर्घ्यं दत्त्वा जपेन्मनुम् ॥

स्नानविधि—नदी आदि जलाशय में वैदिक नियमानुसार स्नान करके तान्त्रिक स्नान करे। गौतमतन्त्र में वर्णन है कि पहले शरीर को धोने के लिये अपनी शाखा के विधान से स्नान करे। तब सर्व-धर्मसिद्ध्यर्थ मन्त्रस्नान करे। मन्त्रस्नान के लिये पहले संकल्प करे। जैसे—ॐ अद्येत्यादि अमुकदेवताप्रीतये स्नानमहं करिष्ये।

कुलचूड़ामणि में लिखा है कि जल, तिल और दूबसहित ताम्रपात्र ग्रहण करके देवता की प्रीति की कामना से स्नान करे। तब षड़ंगन्यास और प्राणायाम करके निम्नलिखित मन्त्र से अंकुशमुद्रा के द्वारा सूर्यमण्डल से तीर्थों का आवाहन करे—

ॐ गङ्गे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति।
नर्मदे सिन्धु कावेरि जलेऽस्मिन् सन्निधिं कुरु।।

इसके बाद 'वं' मन्त्र से धेनुमुद्रा बनाकर अमृतीकरण करे। 'हुं' से कवचमुद्रा द्वारा अवगुण्ठन करे। 'फट्' मन्त्र से संरक्षण करे। तब ग्यारह बार मूल मन्त्र का जप करके स्नानीय जल को अभिमन्त्रित करे। तब सूर्याभिमुख होकर बारह बार जलधारा छोड़ते हुए यह भावना करे कि यह जल इष्टदेवता के चरणारविन्द से निकला है। तीन बार उसमें डुबकी लगाकर देवता का ध्यान करते हुए यथाशक्ति मूल मन्त्र का जप करे। इसके बाद कलशमुद्रा से अपने मस्तक पर तीन बार अभिषेक करे। इसके बाद वैदिक सन्ध्या और तर्पण करके सूर्य को अर्घ्य प्रदान करे। तान्त्रिक अघमर्षणादि से जलधारा-दान तक सभी कर्म करे।

यामल में लिखा है कि ध्यान करके जलाञ्जलि देते हुए इष्टदेवता का तर्पण करना चाहिये। तर्पण का क्रम इस प्रकार का है—

ॐ देवांस्तर्पयामि। ॐ ऋषींस्तर्पयामि। ॐ पितृंस्तर्पयामि। ॐ गुरुं, परमगुरुं, परापरगुरुं, परमेष्ठिगुरुं तर्पयामि।

विष्णुमन्त्र के विषय में नारद, पर्वत, विष्णु, निशठ, उद्धव, दारुक, विष्वक्सेन, शैनेय और गुरु में से प्रत्येक को तीन-तीन बार तर्पण करे। जैसे—ॐ नारदं तर्पयामि, ॐ पर्वतं तर्पयामि इत्यादि। इसके बाद 'मूलं अमुकदेवतां तर्पयामि नमः' से इष्टदेवता का तर्पण करे। यह विधान विष्णुमन्त्र के लिये है। अन्य देवता के सम्बन्ध में 'मूलं अमुकीं देवीं तर्पयामि स्वाहा' कहकर तर्पण करे। हवन के समय भी इसी प्रकार किया जाता है।

विशुद्धेश्वरतन्त्र में वर्णन है कि उक्त क्रम से पच्चीस, दस या तीन बार श्रीकृष्ण का तर्पण करे अर्थात् यह नियम विष्णुविषयक है। शक्ति के बारे में भी तीन बार तर्पण करने का नियम है। ऐसा ही मत नीलतन्त्र का भी है। गौतमतन्त्र के अनुसार भी पच्चीस बार, दश बार या तीन बार तर्पण करना चाहिये। कुलामृत के अनुसार स्नान करके मस्तक पर जलाञ्जलि देकर तीन बार आचमन करने के बाद तीन बार तर्पण करे और तीन बार शरीर

का प्रोक्षण करे। इसके बाद आवरणदेवताओं में से प्रत्येक का तर्पण करे।

कुलार्णव में लिखा है कि प्रत्येक का एक-एक बार तर्पण करे और यदि इसमें समर्थ न हो तो मूल मन्त्र का उच्चारण करके केवल इष्टदेवता का तर्पण करे।

इसके बाद जल से बाहर निकल कर दो धौतवस्त्र धारण करे। तब 'ह्रीं हंसः इदमर्घ्यं सूर्याय स्वाहा' से अर्घ्य प्रदान करे। तारादि देवता से सम्बन्धित स्नान में 'ह्रीं हंसः मार्तण्डभैरवाय प्रकाशशक्तिसहिताय इदमर्घ्यं स्वाहा' से अर्घ्य देना चाहिये। तन्त्रान्तर के अनुसार भी सूर्य को इसी प्रकार अर्घ्य देना चाहिये।

श्रीविद्याविषये तु—ऐं ह्रीं श्रीं ह्रां ह्रीं सः मार्त्तण्डभैरवाय प्रकाशशक्तिसहिताय ग्रहराशिनक्षत्रतिथियोगकरणपरिवारसहिताय इदमर्घ्यं स्वाहा इदमर्घ्यं दत्त्वा, तत्तद्देवतागायत्रीं शतधा वा जपेत्। तथा च तन्त्रान्तरे—

अष्टोत्तरशतावृत्त्या गायत्रीं प्रजपेत्सुधीः ।
महापातकयुक्तोऽपि प्रजपेद्दशधा यदि ।
सत्यं सत्यं महादेवि मुक्तो भवति तत्क्षणात् ॥

इति दशधा शक्ताशक्तभेदेन। गायत्रीजपानन्तरं तर्पणं वा। तथा च—

सूर्यमण्डलवासिन्यै देवतायै ततः परम् ।
अर्घ्यमञ्जलिमादाय गायत्र्या वा त्रिरुत्क्षिपेत् ॥
यथाशक्ति जपेद्देवीं गायत्रीं तदनन्तरम् ।
तर्पणार्थं समाचम्य प्राणानायम्य साधकः ।
ध्यात्वा जलाञ्जलिं क्षिप्त्वा तर्पयेदिष्टदेवताम् ॥

इति यामलवचनात्। गायत्री तु—त्रैलोक्यमोहनाय विद्महे कामदेवाय धीमहि तन्नो विष्णुः प्रचोदयात्—इति विष्णुगायत्री। नारायणाय विद्महे वासुदेवाय धीमहि तन्नो विष्णुः प्रचोदयात्—इति नारायणगायत्री। वज्रनखाय विद्महे तीक्ष्णदंष्ट्राय धीमहि तन्नो नरसिंहः प्रचोदयात्—इति नृसिंहगायत्री। वागीश्वराय विद्महे हयग्रीवाय धीमहि तन्नो हंसः प्रचोदयात्—इति हयग्रीवगायत्री।

गोपालगायत्री तु—कृष्णाय विद्महे दामोदराय धीमहि तन्नो विष्णुः प्रचोदयादिति। दशरथाय विद्महे सीतावल्लभाय धीमहि तन्नो रामः प्रचोदयात्—इति रामगायत्री। तत्पुरुषाय विद्महे महादेवाय धीमहि तन्नो रुद्रः प्रचोदयात्—इति शिवगायत्री। तत्पुरुषाय विद्महे वक्रतुण्डाय धीमहि तन्नो दन्ती प्रचोदयात्—इति गणेशगायत्री। दक्षिणामूर्त्तये विद्महे ध्यानस्थाय धीमहि तन्नो धीशः प्रचोदयात्—इति दक्षिणामूर्त्तिगायत्री। आदित्याय विद्महे मार्त्तण्डाय धीमहि तन्नः सूर्यः प्रचोदयात्—इति सूर्यगायत्री। कामदेवाय विद्महे पुष्पवाणाय धीमहि तनोऽनङ्गः

प्रचोदयात्—इति कामदेवगायत्री। सर्वसम्मोहिन्यै विद्महे विश्वजनन्यै धीमहि तन्नः शक्तिः प्रचोदयात्—इति शक्तिगायत्री। त्वरितायै विद्महे महानित्यायै धीमहि तन्नो देवी प्रचोदयात्—इति त्वरितागायत्री। ऐं वागीश्वर्ये विद्महे क्लीं कामेश्वर्यै धीमहि सौस्तनः शक्तिः प्रचोदयात्—इति बालाभैरवीगायत्री। ऐं त्रिपुरादेव्यै विद्महे क्लीं कामेश्वर्यै धीमहि सौस्तनः क्लिन्ने प्रचोदयात्—इति त्रिपुरासुन्दरीगायत्री। त्रिपुरायै विद्महे भैरव्यै धीमहि तन्नो देवी प्रचोदयात्—इति भैरवीगायत्री। महादेव्यै विद्महे दुर्गायै धीमहि तन्नो देवी प्रचोदयात्। इति दुर्गागायत्री। नारायण्यै विद्महे दुर्गायै धीमहि तन्नो गौरी प्रचोदयात्—इति जयदुर्गागायत्री। महालक्ष्म्यै विद्महे महाश्रियै धीमहि तन्नः श्रीः प्रचोदयात्—इति लक्ष्मीगायत्री। वाग्देव्यै विद्महे कामराजाय धीमहि तन्नो देवी प्रचोदयात्—इति सरस्वतीगायत्री। नारायण्यै विद्महे भुवनेश्वर्यै धीमहि तन्नो देवी प्रचोदयात्—इति भुवनेश्वरीगायत्री। भगवत्यै विद्महे माहेश्वर्यै धीमहि तन्नोऽन्नपूर्णे प्रचोदयात्—इति अन्नपूर्णागायत्री। महिषमर्दिन्यै विद्महे दुर्गायै धीमहि तन्नो घोरे प्रचोदयात्—इति महिषमर्दिनीगायत्री। वैरोचिन्यै विद्महे छिन्नमस्तायै धीमहि तन्नो देवी प्रचोदयात्—इति छिन्नमस्तागायत्री। कलिकायै विद्महे श्मशानवासिन्यै धीमहि तन्नो देवी प्रचोदयात्—इति कालिकागायत्री। तारायै विद्महे महोग्रायै धीमहि तन्नो देवी प्रचोदयात् इति तारागायत्री। गरुडाय विद्महे सुपर्णाय धीमहि तन्नो गरुडः प्रचोदयात्—इति गरुडगायत्री।

श्रीविद्या के बारे में अर्घ्य प्रदान करने का मन्त्र यह है—'ऐं ह्रीं श्रीं ह्रां ह्रीं सः मार्तण्डभैरवाय प्रकाशशक्तिसहिताय इदमर्घ्यं स्वाहा'। इस प्रकार अर्घ्य देकर इष्ट की गायत्री का सौ या दस बार जप करे।

तन्त्रान्तर में वर्णन है कि एक सौ आठ या दस बार गायत्री-जप करने से महापातकी व्यक्ति भी मोक्ष पाता है। यहाँ जपसंख्या एक सौ आठ या दस, जो निर्दिष्ट है, वह शक्ताशक्त के लिये है। शक्त १०८ बार जप करे और अशक्त १० बार ही जप करे।

मतान्तर से गायत्री-जप के बाद तर्पण करना चाहिये। इसके सम्बन्ध में यामल में लिखा है कि सूर्यमण्डलस्थ देवता के उद्देश्य से गायत्रीपाठपूर्वक तीन बार अर्घ्य प्रदान करे। फिर यथाशक्ति गायत्री-जप के बाद आचमन, प्राणायाम, ध्यानसहित जलाञ्जलि देकर इष्ट का तर्पण करे। विभिन्न गायत्री मन्त्र इस प्रकार के हैं—

१. विष्णुगायत्री—त्रैलोक्यमोहनाय विद्महे कामदेवाय धीमहि तन्नो विष्णुः प्रचोदयात्।
२. नारायणगायत्री—नारायणाय विद्महे वासुदेवाय धीमहि तन्नो विष्णुः प्रचोदयात्।
३. नृसिंहगायत्री—वज्रनखाय विद्महे तीक्ष्णदंष्ट्राय धीमहि तन्नो नृसिंहः प्रचोदयात्।
४. हयग्रीवगायत्री—वागीश्वराय विद्महे हयग्रीवाय धीमहि तन्नो हंसः प्रचोदयात्।

५. गोपालगायत्री—कृष्णाय विद्महे दामोदराय धीमहि तन्नो विष्णुः प्रचोदयात्।
६. रामगायत्री— दशरथाय विद्महे सीतावल्लभाय धीमहि तन्नो रामः प्रचोदयात्।
७. शिवगायत्री—तत्पुरुषाय विद्महे महादेवाय धीमहि तन्नो रुद्रः प्रचोदयात्।
८. गणेशगायत्री—तत्पुरुषाय विद्महे वक्रतुण्डाय धीमहि तन्नो दन्ती प्रचोदयात्।
९. दक्षिणामूर्तिगायत्री—दक्षिणामूर्तये विद्महे ध्यानस्थाय धीमहि तन्नो धीशः प्रचोदयात्।
१०. सूर्यगायत्री—आदित्याय विद्महे मार्तण्डाय धीमहि तन्नः सूर्यः प्रचोदयात्।
११. कामदेवगायत्री—कामदेवाय विद्महे पुष्पवाणाय धीमहि तन्नोऽनङ्गः प्रचोदयात्।
१२. शक्तिगायत्री—सर्वसम्मोहिन्यै विद्महे विश्वजनन्यै धीमहि तन्नः शक्तिः प्रचोदयात्।
१३. त्वरितागायत्री—त्वरितायै विद्महे महानित्यायै धीमहि तन्नः देवी प्रचोदयात्।
१४. बालाभैरवीगायत्री—ऐं वागीश्वर्यै विद्महे क्लीं कामेश्वर्यै धीमहि सौंस्तनः शक्तिः प्रचोदयात्।
१५. त्रिपुरसुन्दरीगायत्री—ऐं त्रिपुरादेव्यै विद्महे क्लीं कामेश्वर्यै धीमहि सौंस्तनः क्लित्रः प्रचोदयात्।
१६. भैरवीगायत्री—त्रिपुरायै विद्महे भैरव्यै धीमहि तन्नो गौरी प्रचोदयात्।
१७. दुर्गागायत्री—दुर्गादेव्यै विद्महे दुर्गायै धीमहि तन्नो देवी प्रचोदयात्।
१८. जयदुर्गागायत्री—नारायण्यै विद्महे दुर्गायै धीमहि तन्नो गौरी प्रचोदयात्।
१९. लक्ष्मीगायत्री—महालक्ष्म्यै विद्महे महाश्रियै धीमहि तन्नः श्रीः प्रचोदयात्।
२०. सरस्वतीगायत्री—वाग्देव्यै विद्महे कामराजाय धीमहि तन्नो देवी प्रचोदयात्।
२१. भुवनेश्वरी गायत्री—नारायण्यै विद्महे भुवनेश्वर्यै धीमहि तन्नो देवी प्रचोदयात्।
२२. अन्नपूर्णागायत्री—भगवत्यै विद्महे माहेश्वर्यै धीमहि तन्नोऽन्नपूर्णे प्रचोदयात्।
२३. महिषमर्दिनीगायत्री—महिषमर्दिन्यै विद्महे दुर्गायै धीमहि तन्नो घोरे प्रचोदयात्।
२४. छिन्नमस्तागायत्री—वैरोचिन्यै विद्महे छिन्नमस्तायै धीमहि तन्नो देवी प्रचोदयात् ।
२५. कालिकागायत्री—कालिकायै विद्महे श्मशानवासिन्यै धीमहि तन्नो देवी प्रचोदयात्।
२६. तारागायत्री—तारायै विद्महे महोग्रायै धीमहि तन्नो देवी प्रचोदयात्।
२७. गरुडगायत्री—गरुडाय विद्महे सुपर्णाय धीमहि तन्नो गरुडः प्रचोदयात्।

ध्यानन्तु प्रातः—

उद्यदादित्यसङ्काशां पुस्तकाक्षकरां स्मरेत् ।
कृष्णाजिनधरां ब्राह्मीं ध्यायेत्तारकितेऽम्बरे ॥

मध्याह्ने—

श्यामवर्णां चतुर्बाहुं शङ्खचक्रलसत्कराम् ।
गदापद्मधरां देवीं सूर्यासनकृताश्रयाम् ॥
सायाह्ने वरदां देवीं गायत्रीं संस्मरेद्यतिः ।

शुक्लां शुक्लाम्बरधरां वृषासनकृताश्रयाम् ॥
त्रिनेत्रां वरदां पाशं शूलञ्च नृकरोटिकाम् ।
सूर्यमण्डलमध्यस्थां ध्यायन् देवीं समभ्यसेत् ॥

त्रिपुरादौ ध्यानविशेषो यथा—

प्रातराधारकमले हुतभुङ्मण्डलोपरि ।
वाग्बीजरूपां विद्याया विद्युत्पटलभास्वराम् ॥
पुष्पबाणेक्षुकोदण्डपाशांकुशलसत्कराम् ।
स्वेच्छागृहीतवपुषीं गुरुविद्याक्षरात्मिकाम् ॥
मध्याह्ने हृदयाम्भोजकर्णिके सूर्यमण्डले ।
कामबीजात्मिकां देवीमलक्तकरसारुणाम् ॥
प्रसूनवाणपुण्ड्रेक्षुचापपाशांकुशान्विताम् ।
परितः स्वात्ममुख्याभिः षट्त्रिंशत्तत्त्वशक्तिभिः ॥
सायमाज्ञासरोजस्थे चन्द्रे चन्द्रसमद्युतिम् ।
शक्तिबीजत्मिकां चापबाणपाशांकुशान्विताम् ॥
युगनित्याक्षराकारां स्फटिकाभरणान्विताम् ।
चिन्तयित्वा भगवतीं नित्याभिः परिवारिताम् ॥

ध्यान—अपने देवता की गायत्री का जप करके देवता का ध्यान करे। प्रात:काल उदीयमान सूर्य के समान वर्ण वाली, दोनों हाथों में पुस्तक और जपमाला वाली, कृष्ण-चर्म पहनने वाली ब्राह्मी शक्ति का ध्यान करे। अत्यन्त सबेरे आकाश में जब तारे विद्यमान हों तब प्रात:सन्ध्या करे। मध्याह्न में श्याम वर्ण, चार हाथों में शंख, चक्र, गदा, पद्म धारण करने वाली, सूर्यमण्डलस्था देवी का ध्यान करे। सायंकाल वरदायिनी गायत्रीरूपा, शुक्लवर्णा, श्वेत वस्त्रा, वृषारूढ़ा, त्रिनेत्रा, पाश-शूल-नरकपाल वाली, सूर्यमण्डलमध्य-स्थिता देवी का ध्यान करे।

इस प्रकार तीन सन्ध्याओं में अलग-अलग रूप से देवता का ध्यान करे। काली-तारादि सभी देवताओं के सम्बन्ध में उपर्युक्त प्रकार का ही ध्यान करे; परन्तु त्रिपुरसुन्दरी की सन्ध्या में ध्यान कुछ दूसरे प्रकार का है।

प्रात:काल मूलाधार कमल अग्निमण्डल के ऊपर संस्थित, वायुबीजरूपिणी, विद्युत्-पुञ्ज-जैसी उज्ज्वल कान्ति वाली, हाथों में पुष्पबाण, ईख का धनुष, पाश और अंकुश धारण की हुई, इच्छामय प्रतिमा, गुरु एवं विद्याक्षररूपिणी त्रिपुरसुन्दरी का ध्यान करे। दोपहर में हृदयकमल की कर्णिका के मध्य में सूर्यमण्डलवासिनी, कामबीजात्मिका, अलता के समान लाल वर्ण वाली, पुष्पबाण, श्वेत ईखदण्डनिर्मित धनुष, पाश,

अंकुशयुक्त हाथ, प्रधान छत्तीस तत्त्वशक्तियों से परिवेष्टित त्रिपुरसुन्दरी का ध्यान करे। सायंकाल आज्ञाचक्र में चन्द्रमण्डलवासिनी, चन्द्रमा के समान कान्ति वाली, शक्तिबीजरूपिणी, हाथों में धनुष-बाण-पाश-अंकुश धारण की हुई, ह-क्ष अक्षरमयी, स्फटिक के आभूषणों से अलंकृत, नित्यादेवी गण से घिरी हुई भगवती का ध्यान करे।

तारादौ तु—ह्रीं हंसः इति सूर्यार्घ्यं दत्त्वा, ताम्रादिपात्रे चन्दनार्ककुसुमापराजितापुष्पाणि निक्षिप्य, उद्यदादित्यमण्डलवर्त्तिन्यै नित्यचैतन्योदितायै श्रीमदेकजटायै स्वाहा इत्यर्घ्यं दत्त्वा, गायत्रीं जपेदिति विशेषः। तदुक्तं नीलतन्त्रे—

उद्यदादित्यमण्डलवर्त्तिन्यै च समुद्धरेत्।
नित्यचैतन्योदितायै स्वाहेति च मनुः स्मृतः ॥

अन्यत्र कालिकामन्त्रे एकजटापदस्थाने कालिकापदप्रयोगः। ततः सूर्यमण्डले देवतां विभाव्य मूलमन्त्रं यथाशक्ति जप्त्वा, संहारमुद्रया देवतां स्वहृदयमानीय, तीर्थं नमस्कृत्य, यागस्थानमाविशेदिति स्नानविधिः।

ततः सामान्यार्घ्यस्थापनाद्यासनोपवेशनान्तं दीक्षापद्धत्युक्तं कर्म समाप्य वामे ॐ गुरुभ्यो नमः, ॐ परमगुरुभ्यो नमः, ॐ परापरगुरुभ्यो नमः। दक्षिणे ॐ गणेशाय नमः। मूर्ध्नि मूलमुच्चार्य अमुकदेवतायै नमः। तथा च गौतमीये—

कृताञ्जलिपुटो भूत्वा वामे गुरुत्रयं यजेत्।
गुरुञ्च परमादिञ्च परापरगुरून् तथा।
दक्षपार्श्वे गणेशञ्च मूर्ध्नि देवं विभावयेत् ॥

ततः फडिति मन्त्रेण गन्धपुष्पाभ्यां करौ संशोध्य ऊर्ध्वोर्ध्वं तालत्रयं दत्त्वा, छोटिकाभिर्दशदिग्बन्धनं कृत्वा, रमिति जलधारया वह्निप्राकारं विचिन्त्य भूतशुद्धिं कुर्यात्।

तारा आदि देवता की सन्ध्या में एक विशेष बात यह है कि 'ह्रीं हंसः' से सूर्य को अर्घ्य देकर ताम्बे आदि के पात्र में लाल चन्दन, अपराजिता-फूल और अकवन-फूल डालकर अर्घ्य इस मन्त्र से दे—'उद्यदादित्यमण्डलमध्यवर्त्तिन्यै नित्यचैतन्योदितायै श्रीमदेकजटायै स्वाहा'। इसके बाद गायत्री का जप करे। काली के सम्बन्ध में 'एकजटा' के स्थान पर 'कालिका' शब्द का प्रयोग करे। इसके बाद सूर्यमण्डल में इष्टदेवता का ध्यान करते हुए मूल मन्त्र का जप यथाशक्ति करे। फिर संहारमुद्रा से अपने हृदय में देवता को लाकर तीर्थनमस्कारपूर्वक पूजास्थान में जाय।

इसके बाद दीक्षा-पद्धति के क्रमानुसार सामान्यार्घ्य-स्थापना से आसनोपवेशन तक का कार्य करे। इसके बाद हाथ जोड़कर बाँयें भाग में ॐ गुरुभ्यो नमः, ॐ परमगुरुभ्यो नमः, ॐ परापरगुरुभ्यो नमः से प्रणाम करे। दाहिनी ओर ॐ गणेशाय नमः से और

मस्तक पर मूल मन्त्र का उच्चारण करके अमुकदेवतायै नमः से आराध्य देवता को नमस्कार करे। तब फट् मन्त्र द्वारा करशुद्धि करके ऊपर की ओर तीन बार ताली बजावे। छोटिक मुद्रा से दशों दिशाओं का दिग्बन्ध करे। इसके बाद 'रं' मन्त्र से जलधारा द्वारा अपने शरीर को वेष्टित करके ऐसी भावना करे कि मैं अग्नि की चहारदीवारी के बीच में बैठा हूँ। तब भूतशुद्धि करे।

तद्यथा—स्वाङ्के उत्तानौ करौ कृत्वा सोऽहमिति हृदयस्थं जीवात्मानं दीपकलिकाकारं मूलाधारस्थितकुलकुण्डलिन्या सह सुषुम्नावर्त्मना मूलाधार-स्वाधिष्ठान-मणिपूरकानाहत-विशुद्धाज्ञाख्यषट्चक्राणि भित्त्वा, शिरोऽवस्थिताधोमुखसहस्रदलकमलकर्णिकान्तर्गतपरमात्मानि संयोज्य, तत्रैव पृथिव्यप्तेजो-वाय्वाकाश-गन्ध-रस-स्पर्श-शब्द-नासिका-जिह्वा-चक्षुस्त्वक्-श्रोत्र-वाक्-पाणि-पाद-पायूपस्थ-प्रकृतिमनोबुद्ध्यहंकाररूपचतुर्विंशतितत्त्वानि विलीनानि विभाव्य, यमिति वायुबीजं धूम्रवर्णं वामनासापुटे विचिन्त्य, तस्य षोडशवारजपेन वायुना देहमापूर्य, नासापुटौ धृत्वा, तस्य चतुःषष्टिवारजपेन कुम्भकं कृत्वा, वामकुक्षिस्थकृष्णवर्णपापपुरुषेण सह देहं संशोष्य तस्य द्वात्रिंशद्वारजपेन दक्षिणनासया वायुः रेचयेत्। ततो दक्षिणनासापुटे रमिति वह्निबीजं रक्तवर्णं ध्यात्वा, तस्य षोडशवारजपेन वायुना देहमापूर्य, नासापुटौ धृत्वा, तस्य चतुःषष्टिवारजपेन कुम्भकं कृत्वा, वामकुक्षिस्थकृणवर्णपापपुरुषेण सह देहं मूलाधारस्थितवह्निना दग्ध्वा, तस्य द्वात्रिंशद्वारजपेन वामनासया भस्मना सह वायुं रेचयेत्।

ठमिति चन्द्रबीजं शुक्लवर्णं वामनासिकायां ध्यात्वा, तस्य षोडशवारजपेन ललाटे चन्द्रं नीत्वा नासापुटौ धृत्वा, वमिति वरुणबीजस्य चतुःषष्टिवारजपेन तस्माल्ललाटचन्द्राद् गलितसुधया मातृकावर्णात्मिकया समस्तदेहं विरच्य, लमिति पृथ्विबीजस्य द्वात्रिंशद्वारजपेन देहं सुदृढं विचिन्त्य, दक्षिणेन वायुं रेचयेत्। मात्रासंख्यया वा। तदुक्तं गौतमीये—

**सुषुम्नावर्त्मना सोऽहमिति मन्त्रेण योजयेत्।
सहस्रारे शिवस्थाने परमात्मनि देशिकः॥
धूम्रवर्णं ततो वायुबीजं षड्विन्दुलाञ्छितम्।
पूरयेदिडया वायुं सुधीः षोडशमात्रया॥
मात्रया तु चतुःषष्ट्या कुम्भयेच्च सुषुम्नया।
द्वात्रिंशन्मात्रया मन्त्री रेचयेत्पिङ्गलाख्यया॥
पूरयेदनया चैव सञ्चिन्त्य नीलमारुतम्।
रक्तवर्णं वह्निबीजं त्रिकोणं स्वस्तिकान्वितम्॥**

तेन पूरकयोगेन मात्रया षोडशाख्यया ।
चतुःषष्ट्या मात्रया च निर्दहेत्कुम्भकेन तु ॥
वामपार्श्वस्थितं पापपुरुषं कज्जलप्रभम् ।
ब्रह्महत्याशिरस्कञ्च स्वर्णस्तेयं भुजद्वयम् ॥
सुरापानहृदा युक्तं गुरुतल्पकटिद्वयम् ।
तत्संसर्गिपदद्वन्द्वमङ्गप्रत्यङ्गपातकम् ॥
उपपातकरोमाणं रक्तश्मश्रुविलोचनम् ।
खड्गचर्मधरं क्रुद्धमेवं कुक्षौ विचिन्तयेत् ॥
मूलाधारोत्थितेनैव वह्निना निर्दहेच्च तम् ।
एवं सन्दह्य परितो द्वात्रिंशन्मात्रया ततः ॥
भस्मना सहितं मन्त्री रेचयदिडया पुनः ।
वामनाड्यां चन्द्रबीजं कुन्देन्द्वयुतसप्रभम् ॥
भालेन्दुराजे संयोज्य ततः षोडशमात्रया ।
सुषुम्नया चतुःषष्टिमात्रया तोयबीजकम् ॥
ध्यात्वामृतमयीं सृष्टिं पञ्चाशद्वर्णरूपिणीम् ।
तया देहं विचिन्त्यैवं मनसा पिङ्गलाध्वना ॥
द्वात्रिंशन्मात्रया मन्त्री लंबीजेन दृढं नयेत् ।
स्वस्थाने हंसमन्त्रेण पुनस्तेनैव वर्त्मना ॥
जीवं तत्त्वानि चानीय स्वस्थाने स्थापयेत्ततः ।
इति कृत्वा भूतशूद्धिं मातृकान्यासमाचरेत् ॥

ततः हंस इति बीजं स्वहृदयमानीय कुलकुण्डलिनीं पृथिव्यादीनि यथास्थाने स्थापयेत्। विशेषस्तु शक्तिविषये—हंस इति जीवादिकं परमशिवे संयोज्य सोऽहमिति मन्त्रेण स्वस्थानमानयेत्। तथा च तन्त्रान्तरे—

सोऽहमेवं समाभास्य जीवं हृदि समानयेत् ।

शूद्रे तु विशेषो वाराहीतन्त्रे—

हंसाख्यं न स्मरेच्छूद्रो भूतशुद्धौ कदाचन ।
स्मरणान्नरकं याति दीक्षा च विफला भवेत् ॥

शारदायाम्—

जीवं तेजोमयं ध्यात्वा नमोमन्त्रेण योजयेत् ।

भूतशुद्धिपदव्युत्पत्तिमाह विशुद्धेश्वरे—

शरीराकारभूतानां भूतानां यद्विशोधनम् ।
अव्ययब्रह्मसंयोगाद्भूतशुद्धिरियं मता ।।इति।

वाराहीये—

मूलाधारात्ततो जीवं ब्रह्ममार्गेण देशिकः ।
हंसेन पुष्करस्थाने परमात्मनि योजयेत् ।।

ब्रह्ममार्गः सुषुम्ना। त्रिपुरासारसमुच्चये—

संयोज्य जीवमथ दुर्गममध्यनाडीमार्गेण पुष्करनिविष्टशिवे सुसूक्ष्मे।

तत आं सोऽहं इति पठित्वा हृदि हस्तं दत्त्वा प्राणप्रतिष्ठां कुर्यात्। ज्ञानार्णवे—

प्राणप्रतिष्ठया पश्चाज्जीवं देहे नियोजयेत् ।
मुखवृत्तं समुच्चार्य हंसस्तु विपरीतकम् ।
उद्धरेत्परमेशानि विद्येयं त्र्यक्षरी मता ।।
प्राणप्रतिष्ठामन्त्रोऽयं सर्वकर्माणि साधयेत् ।
तेनैव विधिना देवि स्थिरीकुर्यान्निजां तनुम् ।।

पुरश्चरणचन्द्रिकायाम्—

अथवान्यप्रकारेण भूतशुद्धिर्विधीयते ।
धर्मकन्दसमुद्भूतं ज्ञाननालसुशोभनम् ।।
ऐश्वर्याष्टदलोपेतं परं वैराग्यकर्णिकम् ।
स्वीयहृत्कमलं ध्यायेत्प्रणवेन प्रकाशितम् ।।
कृत्वा तत्कर्णिकासंस्थं प्रदीपकलिकानिभम् ।
जीवात्मानं हृदि ध्यात्वा मूले सञ्चिन्त्य कुण्डलीम् ।
सुषुम्नावर्त्मनात्मानं परमात्मनि योजयेत् ।।

भूतशुद्धि—अपनी गोद में दोनों हाथों को उत्तान रखकर, हृदयस्थ प्रदीपकलिकाकार जीवात्मा को मूलाधार-स्थित कुण्डलिनी 'सोहं' मन्त्र से संयुक्त करे। जीवात्मा से संयुक्त कुण्डलिनी को सुषुम्णा मार्ग से मूलाधार से उठाकर स्वाधिष्ठान, मणिपूर, अनाहत, विशुद्धि और आज्ञाचक्रों का भेदन करते हुए शिरःस्थ अधोमुख सहस्रदल कमल की कर्णिका में परमशिव से संयोजित करे। तब यह भावना करे कि पृथिवी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, पञ्चभूत, गन्ध, रस, रूप, स्पर्श, शब्द, पञ्चतन्मात्राएँ; नासिका, जीभ, नेत्र, त्वचा, कर्ण—पञ्च ज्ञानेन्द्रियाँ; वाक्, हस्त, पाद, गुह्य, मेढ्र—पाँच कर्मेन्द्रियाँ; प्रकृति, मन, बुद्धि, अहंकार सभी चौबीसों तत्त्व उसमें विलीन हो गये। उक्त भावना के साथ धूम्रवर्ण वायुबीज 'यं' का वाम नासापुट में ध्यान करके 'यं' का सोलह बार जप करते हुए वायु से देह को परिपूर्ण करे, फिर दोनों नासापुटों को बन्द करके उक्त बीज

'यं' का चौंसठ बार जप करते हुए कुम्भक करे। बाँई कोख में स्थित कृष्णवर्ण के पापपुरुषसहित देह का शोषण करके 'यं' का बत्तीस बार जप करते हुए दाँई नासा में उस वायु का रेचन कर दे। इसके बाद दाँयें नासापुट में रक्तवर्ण अग्निबीज 'रं' का ध्यान करके उस बीज 'रं' का सोलह बार जप करते हुए वायु से देह को परिपूर्ण करे। तब दोनों नासापुटों को बन्द करके उक्त बीज का चौंसठ बार जप करते हुए कुम्भक करे। तब मूलाधार-स्थित अग्नि के द्वारा कृष्ण वर्ण के पापपुरुषसहित देह को भस्मीभूत करते हुए उक्त बीज का बत्तीस बार जप करते हुए बाँयीं नासा से भस्मसहित वायु का रेचन करे।

इसके बाद शुक्ल वर्ण के चन्द्रबीज 'ठं' का वाम नासिका में ध्यान करके इस बीज का सोलह बार के जप से ललाट में चन्द्रमा को लाकर दोनों नासिकाछिद्रों को बन्द करे। तब वरुणबीज 'वं' के चौंसठ जप से ललाटस्थ चन्द्रमा से टपकने वाले मातृका-वर्णमय अमृत द्वारा पूरे नये देह की रचना करे। पृथ्वीबीज 'लं' के बत्तीस जप से देह के सुदृढ़ होने की भावना करके दाँई नासा से वायु का रेचन करे। यह सभी गौतमतन्त्र के अनुसार कहा गया है। इसके बाद 'सोऽहं' मन्त्र से सुषुम्ना नाड़ी द्वारा जीवात्मा को सहस्त्रदल पद्म में परमात्मा से संयोजित करे। तब छ: बिन्दुओं से चिह्नित धूम्रवर्ण वायुबीज 'यं' का सोलह बार जप इड़ा बाँयीं नासा से पूरक करे। इसी बीज को चौंसठ बार जप करके सुषुम्ना से वायुनिरोध और बत्तीस बार जप कर पिंगला से रेचन करे। रक्तवर्ण, त्रिकोणाकार, स्वस्तिकयुक्त अग्निबीज 'रं' का सोलह बार जप करते हुए पूरक करे। इसी बीज को चौंसठ बार जप कर वायुनिरोध द्वारा बाँईं बगल में स्थित पापपुरुष को दग्ध करे। पाप-पुरुष का ध्यान इस प्रकार का है—

वामपार्श्वस्थितं पापं पुरुषं कज्जलप्रभम्।
ब्रह्महत्याशिरस्कं च स्वर्णस्तेयं भुजद्वयम्।।
सुरापानहृदा युक्तं गुरुतल्पकटिद्वयम्।
तत्संसर्गिपदद्वन्द्वं अङ्गप्रत्यङ्गपातकम्।।
उपपातकरोमाणं रक्तश्मश्रुविलोचनम्।
खड्गचर्मधरं क्रुद्धमेवं कुक्षौ विचिन्तयेत्।।

मूलाधार से उठने वाली अग्नि से इस पापपुरुष को दग्ध करे। 'यं' बीज का बत्तीस बार जप करते हुए भस्मसहित वायु का रेचन करे। फिर वाम नाड़ी से कुन्देन्दु-कान्तियुक्त चन्द्रबीज 'ठं' को ललाट-चन्द्र से संयोजित करते हुए उसका सोलह बार जप करे। वरुणबीज 'वं' के चौंसठ जप से मातृका वर्णमय अमृतवृष्टि द्वारा नूतन देह का निर्माण करे। 'लं' बीज के बत्तीस जप से देह को सुदृढ़ करे। तब हंस मन्त्र से जीवात्मा को हृदय में लाकर कुण्डलिनी और पृथ्वी आदि चौबीस तत्त्वों को पुन: यशास्थान स्थापित करे। शक्तिविषयक मन्त्र में 'हंस:' मन्त्र से जीवात्मादि को परमशिव में संयोजित करे। सोऽहं मन्त्र से उन्हें यथास्थान स्थापित करे।

वाराही तन्त्र में लिखा है कि भूतशुद्धि क्रिया में शूद्र 'हंस:' मन्त्र का कदापि स्मरण न करे; अन्यथा वह नरकगामी होगा और उसकी दीक्षा निष्फल होगी। शारदातिलक में लिखा है कि शूद्र 'हंस:' के बदले 'नम:' मन्त्र उच्चारण करके कार्य करे।

विशुद्धेश्वरतन्त्र में भूतशुद्धि शब्द की व्युत्पत्ति के बारे में लिखा है कि शरीराकार में परिणत पृथ्वी आदि पञ्चभूत जिस क्रिया से शुद्ध होकर अव्यय ब्रह्म से संयुक्त होते हैं, उसी का नाम भूतशुद्धि है।

वाराहीतन्त्र में लिखा है कि साधक मूलाधार से ब्रह्ममार्ग द्वारा जीव को ले जाकर 'हंस:' मन्त्र से पुष्करस्थान में परमात्मा से संयुक्त करे। ब्रह्ममार्ग सुषुम्ना है। इसके बाद त्रिपुरासारसमुच्चय के अनुसार अपने हृदय पर हाथ रखकर 'आं सोऽहं' मन्त्र से प्राणप्रतिष्ठा करे।

ज्ञानार्णव में लिखा है कि प्राणप्रतिष्ठा द्वारा देह में जीवात्मा को संयोजित करे। मुख-वृत्त और हंस का विपरीत क्रम से उच्चारण करके त्र्यक्षरी विद्या का उद्धार करे। यह प्राणप्रतिष्ठा मन्त्र है। इससे सभी कर्मों का साधन करे। इस प्रकार अपने देह को स्थिर करे।

पुरश्चरणचन्द्रिका में भूतशुद्धि की दूसरी विधि का वर्णन है। धर्मरूप कन्द से उद्भूत, ज्ञानरूप नाल में शोभित, अणिमादि ऐश्वर्यरूप अष्ट दलों से युक्त, वैराग्यरूप कर्णिकाविशिष्ट अपने हृदयपद्म को प्रणव द्वारा प्रकाशित रूप में ध्यान करते हुए उसी हृत्पद्म की कर्णिका के ऊपर जीवात्मा का और मूलाधार में कुण्डलिनी का ध्यान करके सुषुम्ना मार्ग से परमात्मा के साथ जीवात्मा का योग करे।

मातृकान्यास:

तत्र मातृकाया ऋष्यादिन्यासः। अस्य मातृकामन्त्रस्य ब्रह्मऋषिर्गायत्रीच्छन्दो मातृकासरस्वती देवता हलो बीजानि स्वराः शक्तयो मातृकान्यासे विनियोगः। शिरसि ॐ ब्रह्मणे ऋषये नमः, मुखे ॐ गायत्रीच्छन्दसे नमः, हृदि ॐ मातृकासरस्वत्यै देवतायै नमः, गुह्ये ॐ व्यञ्जनेभ्यो बीजेभ्यो नमः, पादयोः ॐ स्वरेभ्यः शक्तिभ्यो नमः। तथा च ज्ञानार्णवे—

मातृकां शृणु देवेशि न्यसेत्पापनिकृन्तनीम्।
ऋषिर्ब्रह्मास्य मन्त्रस्य गायत्रीच्छन्द उच्यते॥
देवता मातृका देवी बीजं व्यञ्जनमुच्यते।
शक्तयस्तु स्वरा देवि षडङ्गन्यासमाचरेत्॥

ततः कराङ्गन्यासः—अं कं खं गं घं ङं आं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः। इं चं छं जं झं ञं ईं तर्जनीभ्यां स्वाहा। उं टं ठं डं ढं णं ऊं मध्यमाभ्यां वषट्। एं तं थं दं

धं नं ऐं अनामिकाभ्यां हुं। ओं पं फं बं भं मं औं कनिष्ठाभ्यां वौषट्। अं यं रं लं वं शं षं सं हं लं क्षं अः करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्। एवं हृदयादिषु अं कं खं गं घं ङं आं हृदयाय नमः इत्यादि क्रमेण न्यसेत्। तथा च ज्ञानार्णवे---

अं आं मध्ये कवर्गन्तु इं ईं मध्ये चवर्गकम् ।
उं ऊं मध्ये टवर्गन्तु एं ऐं मध्ये तवर्गकम् ।।
ओं औं मध्ये पवर्गन्तु विन्दुयुक्तं न्यसेत्प्रिये ।
अनुस्वार-विसर्गान्तौ यशवर्गौ सलक्षकौ ।।
हृदयञ्च शिरो देवि शिखा कवचकं तथा ।
नेत्रमन्त्रं न्यसेत् ङेऽन्तं नमः स्वाहा क्रमेण तु ।।
वषट् हुं वौषडन्तञ्च फडन्तं योजयेत्प्रिये ।
षडङ्गोऽयं मातृकायाः सर्वपापहरः स्मृतः ।।

अथान्तर्मातृका अगस्त्यसंहितायाम्---

एकैकवर्णानेकैकपत्रान्ते विन्यसेत्प्रिये ।

अकारादिषोडशस्वरान् सविन्दून् षोडशदलकमले कण्ठमूले न्यसेत्। ककारादिद्वादशवर्णान् सविन्दून् द्वादशदलकमले हृदये न्यसेत्। डकारादिदशवर्णान् सविन्दून् दशदलकमले नाभौ न्यसेत्। वकारादिषड्वर्णान् सविन्दून् षड्दलकमले लिङ्गमूले न्यसेत्। वकारादि चतुरो वर्णान् सान्ताञ्चतुर्दलकमले मूलाधारे न्यसेत्। हक्षवर्णद्वयं द्विदलकमले भ्रूमध्ये न्यसेत्।

तथा च ज्ञानार्णवे—

द्व्यष्टपत्राम्बुजे कण्ठे स्वरान् षोडश विन्यसेत् ।
द्वादशच्छदहृत्पद्मे कादीन्द्वादश विन्यसेत् ।।
दशपत्राम्बुजे नाभौ डकारादीन्न्यसेद्दश ।
षट्पत्रमध्ये लिङ्गस्थे वकारादीन्न्यसेच्च षट् ।।
आधारे चतुरो वर्णान्न्यसेद्वादींश्चतुर्दले ।
हक्षौ भ्रूमध्यगे पद्मे द्विदले विन्यसेत्प्रिये ।
इत्यन्तर्मातृकां न्यस्य सर्वाङ्गन्यासमाचरेत् ।।

अगस्त्यसंहितायाम्—

एकैकवर्णमेकैकपत्रान्ते विन्यसेत्प्रिये ।
एवमन्तःप्रविन्यस्य मनसातो बहिर्न्यसेत् ।।

वैष्णवे तु विशेषः—

एकैकं वर्णमुच्चार्य मूलाधाराच्छिरोऽन्तकम् ।

नमोऽन्त इति विन्यास आन्तरः परिकीर्त्तितः ॥

तथा—

अथान्तर्मातृकान्यासो मूलाधारे चतुर्दले ।
सुवर्णाभे व श ष स चतुर्वर्णविभूषिते ॥
षड्दले वैद्युतनिभे स्वाधिष्ठानेऽनलत्विषि ।
ब भ मैर्यरलैर्युक्ते वर्णैः षड्भिश्च सुव्रते ॥
मणिपूरे दशदले नीलजीमूतसन्निभे ।
डादिफान्तैर्दलैर्युक्ते विन्दूद्भासितमस्तकैः ॥
अनाहते द्वादशारे प्रवालरुचिसन्निभे ।
कादिठान्तदलैर्युक्ते योगिनां हृदयङ्गमे ॥
विशुद्धे षोडशदले धूम्राभे स्वरभूषिते ।
आज्ञाचक्रे तु चन्द्राभे द्विदले हक्षलाञ्छिते ॥
सहस्रारे हिमनिभे सर्ववर्णविभूषिते ।
अकथादित्रिरेखात्महलक्षत्रयभूषिते ॥
तन्मध्ये परविन्दुञ्च सृष्टिस्थितिलयात्मकम् ।
एवं समाहितमना ध्यायेन्न्यासोऽयमान्तरः ॥

मातृकान्यास—मातृकान्यास के दो प्रकार हैं—अन्तर्मातृका एवं बहिर्मातृका।

अन्तर्मातृकान्यास—पहले विनियोग करे—'अस्य मातृकामन्त्रस्य ब्रह्मा ऋषिः गायत्री छन्दः मातृका सरस्वती देवता हलो बीजानि स्वराः शक्तयोः मातृकान्यासे विनियोगः'।

ऋष्यादिन्यास—ॐ ब्रह्मणे नमः शिरसि। ॐ गायत्री छन्दसे नमः मुखे। ॐ मातृकासरस्वत्यै देवतायै नमः हृदये। ॐ व्यञ्जनेभ्यो बीजेभ्यो नमः गुह्ये। ॐ स्वरेभ्यो शक्तिभ्यो नमः पादयोः।

करन्यास— अं कं खं गं घं ङं आं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः।
इं चं छं जं झ ञं ईं तर्जनीभ्यां स्वाहा।
उं टं ठं डं ढं णं ऊं मध्यमाभ्यां वषट्।
एं तं थं दं धं नं ऐं अनामिकाभ्यां नमः।
ओ पं फं बं भं मं औं कनिष्ठिकाभ्यां वौषट्।
अं यं रं लं वं शं षं सं हं लं क्षं अः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः।

षडंगन्यास— अं कं खं गं घं ङं आं हृदयाय नमः।
इं चं छं जं झं ञं ईं शिरसे स्वाहा।
उं टं ठं डं ढं णं ऊं शिखायै वषट्।

एं तं थं दं धं नं ऐं कवचाय हुम्।

ओं पं फं बं भं मं औं नेत्रत्रयाय वौषट।

अं यं रं लं वं शं षं सं हं लं क्षं अः अस्त्राय फट्।

ज्ञानार्णव के अनुसार षडंग मातृकान्यास सभी पापों का विनाशक है। इसके अनुरूप भी षडंग न्यास इसी प्रकार का होता है। अगस्त्यसंहिता और ज्ञानार्णव में अन्तर्मातृका न्यास की विधि निम्न प्रकार उल्लिखित है—

कण्ठस्थ षोड़शदल पद्म विशुद्धिचक्र के १६ दलों में अं नमः, आं नमः, इं नमः, ईं नमः, उं नमः, ऊं नमः, ऋं नमः, ॠं नमः, ऌं नमः, ॡं नमः, एं नमः, ऐं नमः, ओं नमः, औं नमः, अं नमः, अः नमः—इस प्रकार सोलह स्वरों से न्यास करे।

हृदय के द्वादशदल पद्म अनाहत चक्र में कं से ठं तक के व्यञ्जनों का इस प्रकार न्यास करे—कं नमः, खं नमः, गं नमः, घं नमः, ङं नमः, चं नमः , छं नमः, जं नमः, झं नमः, ञं नमः, टं नमः, ठं नमः।

नाभिमूल के दशदल पद्म मणिपूर चक्र में डं से फं तक के दश व्यञ्जनों का न्यास इस प्रकार करे—डं नमः, ढं नमः, णं नमः, तं नमः, थं नमः, दं नमः, धं नमः, नं नमः, पं नमः, फं नमः।

लिंगमूल के षड्दल पद्म याने स्वाधिष्ठान में बं से लं तक के छः वर्णों का न्यास इस प्रकार करे—बं नमः, भं नमः, मं नमः, यं नमः, रं नमः, लं नमः।

मूलाधार के चतुर्दल में न्यास इस प्रकार करे—वं नमः, शं नमः, षं नमः, सं नमः।

भ्रूमध्य के द्विदल पद्म आज्ञाचक्र में हं नमः, क्षं नमः से न्यास करे।

अगस्त्यसंहिता में विधान है कि प्रत्येक पद्म के प्रत्येक दल में एक-एक वर्ण का न्यास करे। विष्णु उपासना में मूलाधार से मस्तक तक के षट्चक्रों में निम्न प्रकार का न्यास करे—

मूलाधार के स्वर्णिम चारो दलों में—वं शं षं सं का न्यास करे।

स्वाधिष्ठान के विद्युत्प्रभ छः दलों में—बं भं मं यं रं लं का न्यास करे।

नीलमेघाभ दशदल मणिपूरचक्र में—डं ढं णं तं थं दं धं नं पं फं का न्यास करे।

मूंगे की-सी आभा वाले द्वादशदल अनाहत में—कं खं गं घं ङं चं छं जं झं ञं टं ठं का न्यास करे।

धुयें के समान आभा वाले षोडशदल विशुद्धिचक्र में—अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं ऌं ॡं एं ऐं ओं औं अं अः का न्यास करे।

भ्रूमध्यस्थित चन्द्रप्रभ द्विदल आज्ञा में हं, क्षं का न्यास करे।

मस्तक में शिखा के नीचे वर्फ के समान श्वेतवर्णाभ सहस्रार के हजार दलों में अ से क्ष तक के पचास वर्णों को बीस आवृत्ति से न्यस्त करे। सहस्रार के मध्य में अकथ

त्रिकोण, जो हलक्ष से विभूषित है, उसके मध्य में सृष्टि-स्थिति-लयात्मक परबिन्दु को न्यस्त करे। समाहित मन से इस अन्तर्मातृका न्यास का चिन्तन करे।

बाह्यमातृकाध्यानम्

पञ्चाशल्लिपिभिर्विभक्तमुखदो: तन्मध्यवक्ष:स्थलाम्
भास्वन्मौलिनिबद्धचन्द्रशकलामापीनतुङ्गस्तनीम् ।
मुद्रामक्षगुणं सुधाढ्यकलशं विद्याञ्च हस्ताम्बुजै-
र्विभ्राणां विशदप्रभां त्रिनयनां वाग्देवतामाश्रये ॥

एवं ध्यात्वा न्यसेत्। तत्र अंगुलिनियमतन्त्रे—

ललाटेऽनामिकामध्ये विन्यसेन्मुखपङ्कजे ।
तर्जनीमध्यमानामा वृद्धानामे च नेत्रयो: ॥
अंगुष्ठं कर्णयोर्न्यस्य कनिष्ठांगुष्ठकौ नसो: ।
मध्यास्तिस्रो गण्डयोस्तु मध्यमाञ्चोष्ठयोर्न्यसेत् ॥
अनामां दन्तयोर्न्यस्य मध्यमामुत्तमाङ्गके ।
मुखेऽनामां मध्यमाञ्च हस्ते पादे च पार्श्वयो: ॥
कनिष्ठानामिकामध्यास्तास्तु पृष्ठे च विन्यसेत् ।
ता: सांगुष्ठा नाभिदेशे सर्वा: कुक्षौ च विन्यसेत् ॥
हृदये च तलं सर्वमंसयोश्च ककुत्स्थले ।
हृत्पूर्वहस्तपत्कुक्षिमुखेषु तलमेव च ।
एताश्च मातृकामुद्रा: क्रमेण परिकीर्त्तिता: ॥

नित्यत्वमाह तत्रैव—

अज्ञात्वा विन्यसेद्यस्तु न्यास: स्यात्तस्य निष्फल: । इति।

स्थानमाह गौतमीये—

ललाटमुखवृत्ताक्षिश्रुतिघ्राणेषु गण्डयो: ।
ओष्ठदन्तोत्तमाङ्गास्यदो:पत्सन्ध्यग्रकेषु च ॥
पार्श्वयो: पृष्ठतौ नाभौ जठरे हृदयेंऽसके ।
ककुद्यंसे च हृत्पूर्वपाणिपादयुगे तथा ॥
जठराननयोर्न्यस्येन्मातृकावर्णान्यथाक्रमम् ।

तद्यथा—अं नमो ललाटे, आं नमो मुखवृत्ते, इं ईं चक्षुषो:, उं ऊं कर्णयो:, ऋं ॠं नसो:, ऌं ॡं गण्डयो:, एं ओष्ठे, ऐं अधरे, ओं ऊर्ध्वदन्ते, औं अधोदन्ते, अं ब्रह्मरन्ध्रे, अ: मुखे। कं दक्षबाहुमूले, खं कूर्परे, गं मणिबन्धे, घं अंगुलिमूले, ङं अंगुल्यग्रे। एवं चं छं जं झं ञं वामबाहुमूलसन्ध्यग्रकेषु। एवं टं ठं डं ढं णं

दक्षपादमूलसन्ध्यग्रकेषु। एवं तं थं दं धं नं वामपादमूलसन्ध्यग्रकेषु। पं दक्षपार्श्वे, फं वामपार्श्वे, बं पृष्ठे, भं नाभौ, मं उदरे, यं हृदि, रं दक्षबाहुमूले, लं ककुदि, वं वामबाहुमूले, शं हृदादिदक्षकरे, यं हृदादिवामकरे, सं हृदादिदक्षपादे, हं हृदादिवामपादे, लं हृदाद्युदरे, क्षं हृदादिमुखे, सर्वत्र नमोऽन्तेन न्यसेत्। तथा च

ओमाद्यन्तो नमोऽन्तो वा सविन्दुर्विन्दुवर्जितः ।
पञ्चाशद्वर्णविन्यासः क्रमादुक्तो मनीषिभिः ॥

इति राघवभट्टः।

बहिर्मातृकान्यास—उपरोक्त प्रकार से अन्तर्मातृका न्यास करने के बाद बाह्य मातृका न्यास करे। न्यास के पहले मातृका देवी का ध्यान इस प्रकार करे—

पञ्चाशल्लिपिभिर्विभक्तमुखदोः तन्मध्यवक्षस्थलां
भास्वन्मौलिनिबद्धचन्द्रशकलामापीनतुङ्गस्तनीम् ।
मुद्रामक्षगुणं सुधाढ्यकलशं विद्यां च हस्ताम्बुजै-
र्विभ्राणां विषदप्रभां त्रिनयनां वाग्देवतामाश्रये।।

वाग्देवी का सारा शरीर—मुख, बाहु, मध्य, वक्षःस्थल आदि पचास वर्णों से संघटित है। उनका केशपाश चन्द्रकला से प्रकाशमान है और उरोज ऊँचे हैं। करकमलों में मुद्रा, अक्षमाला, अमृतपूर्ण कलश और पुस्तक सुशोभित है। तीन नेत्रों वाली देवी की प्रभा चारो ओर व्याप्त है। ऐसी वाग्देवता का आश्रय मैं ग्रहण करता हूँ।

अंगुलिनियमतन्त्र के अनुसार निम्नलिखित रूप में अंगुलियों से मातृकान्यास करे—
ललाट में अनामिका और मध्यमा से।
मुख में तर्जनी, मध्यमा और अनामिका से।
नेत्रों में मध्यमा और अनामिका से।
कानों में अंगूठों से।
गालों में तर्जनी, मध्यमा और अनामिका से।
ओठों में मध्यमा से।
दन्तपंक्तियों में अनामिका से।
मस्तक में मध्यमा से।
मुख में अनामिका-मध्यमा से।
नाभि में कनिष्ठा, अनामिका, मध्यमा और अंगुष्ठ से।
उदर में सभी अंगुलियों से।

वक्ष, दोनों कन्धों, ककुदस्थल, हृदय से हाथ तक, हृदय से पैर तक, हृदय से उदर तक और हृदय से मुख तक के स्थानों में हथेली से न्यास करे। इसी को मातृका मुद्रायें कहते हैं। इन्हें जाने विना जो न्यास करता है, उसका न्यास व्यर्थ है।

गौतमतन्त्र के अनुसार न्यासस्थान और क्रम इस प्रकार के हैं। सर्वत्र आदि में ॐ और वाद में नम: लगाकर न्यास करे। जैसे—

अं नम: ललाटे
आं नम: मुखवृत्ते
इं ई नम: चक्षुषो:
उं ऊं नम: कर्णयो:
ऋं ॠं नम: नसो:
ऌं ॡं नम: गण्डयो:
एं नम: ओष्ठे
ऐं नम: अधरे
ओं नग: ऊर्ध्वदन्ते
औं नम: अधोदन्ते
अं नम: ब्रह्मरन्ध्रे
अ: नम: मुखे
कं नम: दक्षबाहुमूले
खं नम: कूर्परे
गं नम: मणिबन्धे
घं नम: अङ्गुलिमूले
ङं नम: अङ्गुल्यग्रे
चं नम: वामबाहुमूले
छं नम: कूर्परे
जं नम: मणिबन्धे
झं नम: अंगुलिमूले
ञं नम: अंगुल्यग्रे
टं नम: दक्षपादमूले
ठं नम: दक्षोरौ
डं नम: दक्षजानुनि
ढं नम: गुल्फे
णं नम: पादांगुल्यग्रे
तं नम: वामपादमूले
थं नम: वामोरौ
दं नम: वामजानुनि
धं नम: दक्षगुल्फे
नं नम: दक्षपादांगुल्यग्रे
पं नम: दक्षपार्श्वे
फं नम: वामपार्श्वे
बं नम: पृष्ठ
भं नम: नाभौ
मं नम: उदरे
यं नम: हृदि
रं नम: दक्षबाहुमूले
लं नम: ककुदि
वं नम: वामबाहुमूले
शं नम: हृदादिदक्षकरे
सं नम: हृदादिदक्षपादे
हं नम: हृदादिवामपादे
लं नम: हृदादि उदरे
क्षं नम: हृदादिमुखे।

राघवभट्ट के अनुसार आदि में ॐ और अन्त में नम: एवं ऊपर बिन्दु लगाकर पचास वर्णों का न्यास करना चाहिये।

संहारमातृकान्यास:

अस्या: ध्यानं यथा—

अक्षस्रजं हरिणपोतमुदग्रटङ्कं विद्यां करैरविरतं दधतीं त्रिनेत्राम्।
अर्द्धेन्दुमौलिमरुणामरविन्दरामां वर्णेश्वरीं प्रणमत: स्तनभारनम्राम्॥

न्यासस्तु क्षकारादि अकारान्त:। यथा—क्षं नमो हृदादिमुखे इत्यादि। अपरञ्च—

चतुर्द्धा मातृका प्रोक्ता केवला विन्दुसंयुता ।
सविसर्गा सोभया च रहस्यं शृणु कथ्यते ॥
विद्याकरी केवला च सोभया भुक्तिदायिनी ।
पुत्रदा सविसर्गा तु सविन्दुर्वित्तदायिनी ॥

विशुद्धेश्वरे—

वाग्भवाद्या च वाक्सिद्ध्यै रमाद्या श्रीप्रवृद्धये ।
हृल्लेखाद्या सर्वसिद्ध्यै कामाद्या लोकवश्यदा ।
श्रीकण्ठाद्यानिमान्यस्येत्सर्वमन्त्रः प्रसीदति ॥

श्रीविद्याविषये नवरत्नेश्वरे—

वाग्भवाद्या नमोऽन्ताश्च न्यस्तव्या मातृकाक्षराः ।
श्रीविद्याविषये मन्त्री वाग्भवाद्यष्टसिद्धये ॥

नित्यतामाह यामले—

भूतशुद्धिलिपिन्यासौ विना यस्तु प्रपूजयेत् ।
विपरीतफलं दद्यादभक्त्या पूजनं यथा ॥

सामान्यन्यासे अंगुलिनियमस्तु गौतमीये—

मनसा वा न्यसेन्न्यासान् पुष्पेणैवाथ वा मुने ।
अंगुष्ठानामिकाभ्यां वा चान्यथा विफलं भवेत् ॥

विशेषन्यासे तु नायं नियमः। श्यामादिविद्यायां विशेषमातृकान्यासो वक्तव्यः।

संहारमातृकान्यास—न्यास के पहले ध्यान करे—

अक्षस्रजं हरिणपोतमुदग्रटंकं विद्यां करैरविरतं दधतीं त्रिनेत्राम्।
अर्द्धेन्दुमौलिमरुणामरविन्दरामां वर्णेश्वरीं प्रणमतः स्तनभारनम्राम्।।

जिनके चारो हाथों में अक्षमाला, हिरणशिशु, मृदंग और पुस्तक हैं, तीन नयन हैं, ललाट पर अर्द्धचन्द्र है, लाल कमलासीन हैं, पयोधरों के भार से जो झुकी हुई हैं, उन देवी को मैं प्रणाम करता हूँ।

ध्यान करके 'क्ष' से 'अ' तक के वर्णों का न्यास हृदादि मुख में करे। पूर्वोक्त गौतमतन्त्र में वर्णित न्यासक्रम को विपरीतक्रम से करने पर संहारन्यास होता है।

मातृका वर्ण चार प्रकार के होते हैं—केवल, विन्दुयुक्त, विसर्गयुक्त और बिन्दु एवं विसर्ग दोनों से युक्त। केवल न्यास से विद्या, विन्दु-विसर्गयुक्त न्यास से भोग, विसर्गयुक्त न्यास से पुत्र और बिन्दुयुक्त न्यास से धन का लाभ होता है।

विशुद्धेश्वरतन्त्र में वर्णन है कि वाक्सिद्धि के लिए वाग्बीज ऐं, श्रीवृद्धि के लिये

श्रीबीज श्रीं, सर्वसिद्धि के लिये नमः और लोकवशीकरण के लिये कामबीज क्लीं आदि में लगाकर न्यास करे। श्रीकण्ठबीज अः आदि में लगाकर न्यास करने से सभी मन्त्र प्रसन्न होते हैं।

नवरत्नेश्वर में श्रीविद्या के बारे में लिखा है कि आदि में वाग्बीज ऐं और अन्त में नमः लगाकार अर्थात् ऐं अं नमः इत्यादि रूप से पचास वर्णों के द्वारा न्यास करे। इससे अणिमादि अष्ट सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं।

यामल में लिखा है कि भूतशुद्धि और मातृकान्यास का त्याग करके जो व्यक्ति पूजा करता है, उसकी वह पूजा भक्तिहीन पूजा के समान निष्फल होती है।

गौतमतन्त्र में सामान्य न्यास के सम्बन्ध में अंगुलि-नियम इस प्रकार का है। मन ही मन पुष्प द्वारा या अंगुष्ठ और अनामिका से न्यास करे; अन्यथा न्यास विफल होता है। साधारण न्यास में ही इस नियम का पालन करे; विशेष न्यास में नहीं। श्यामादि विद्या के विषय के मातृकान्यास में जो कुछ विशेष क्रम है, वह उनके निरूपण-क्रम में दिया जायेगा।

प्राणायामः

प्राणायामे अंगुलिनियमस्तु ज्ञानार्णवे–
भूतशुद्धिं ततः कुर्यात्प्राणायामक्रमेण च।
कनिष्ठानामिकाङ्गुष्ठैर्यन्नासापुटधारणम् ।
प्राणायामः स विज्ञेयस्तर्जनीमध्यमे विना ॥

प्राणायामो द्विविधः—सगर्भो निर्गर्भश्च। तथा च—

सगर्भो मन्त्रजापेन निर्गर्भो मात्रया भवेत् ॥

मात्रा च—

वामजानुनि तद्धस्तभ्रामणं यावता भवेत् ।
कालेन मात्रा सा ज्ञेया मुनिभिर्वेदपारगैः ॥

मूलमन्त्रस्य बीजस्य प्रणवस्य वा षोडशवारजपेन वामनासापुटेन वायुं पूरयेत्। तथा च कालीहृदये—

प्राणायामत्रयं कुर्यान्मूलेन प्रणवेन वा ।
अथवा मन्त्रबीजेन यथोक्तविधिना सुधीः ।

तस्य चतुःषष्टिवारजपेन वायुं कुम्भयेत्। तस्य द्वात्रिंशद्वारजपेन वायुं रेचयेत्। पुनर्दक्षिणेनापूर्य उभाभ्यां कुम्भयित्वा वामेन रेचयेत्। पुनर्वामेनापूर्य उभाभ्यां कुम्भयित्वा दक्षिणेन रेचयेत्।

यथा सारसमुच्चये—विपरीतमतो विदधीत बुधः पुनरेव तु तद्विपरीतकमिति। यौगिके पुनर्मात्रानियमः। तथा च गौतमीये—

मन्त्रप्राणायामः प्रोक्तो यौगिकं कथयामि ते ।
पूरयेद्वामया विद्वान् मात्राषोडशसंख्यया ।। इत्यादि ।

यद्वा—चतुःषोडशाष्टवारजपे पूरकादिकं कुर्यात्। अथवा एकचतुर्द्विवारेण। तथा च तन्त्रान्तरे—

पूजयेत्षोडशभिर्वायुं धारयेच्च चतुर्गुणैः ।
रेचयेत्कुम्भकार्द्धेन अशक्त्या तत्तुरीयकैः ।
तदशक्तौ तच्चतुर्थमेवं प्राणस्य संयमः ।।

अस्य नित्यत्वमाह स एव—

प्राणायामं विना मन्त्रपूजने न हि योग्यता ।

निबन्धे—

आदावन्ते च यत्नेन प्राणायामं समाचरेत् ।
कर्मस्वपि समस्तेषु शुभेष्वप्यशुभेषु च ।।

गोपाले तु विशेषो वक्तव्यः।

प्राणायाम—ज्ञानार्णव में प्राणायाम के लिये यह अंगुलिनियम बताया गया है कि प्राणायाम के नियम मे भूतशुद्धि करे। कनिष्ठा, अनामिका और अंगूठे से वाम और दक्षिण नासापुट को धारण करने का नाम प्राणायाम है। प्राणायाम में तर्जनी और मध्यमा अंगुलियों को व्यवहृत न करे।

प्राणायाम के दो प्रकार हैं—सगर्भ और निगर्भ। मन्त्रजपपूर्वक प्राणायाम करना सगर्भ और मात्रा द्वारा किया जाने वाला प्राणायाम निगर्भ कहलाता है। बाँईं जानु पर हाथ फेरने में जितना समय लगता है, उसी समय का नाम मात्रा है। वर्ण के उच्चारण में इसी मात्रा का उपयोग होता है।

देवता के मूल मन्त्र या ऋष्यादि न्यासोक्त बीजमन्त्र अथवा 'ॐ' का सोलह बार जप करता हुआ बाँईं नासापुट से श्वास खींचे। तब चौंसठ बार जप करता हुआ कुम्भक करे। बत्तीस बार जप करता हुआ दाँईं नासा से वायु का रेचन करे। फिर सोलह मात्रा से दाँईं नासा से पूरक करे। चौंसठ जप से कुम्भक करे और बत्तीस जप से रेचक करे। पुनः सोलह जप से बाँईं नासा से पूरक, चौंसठ जप से कुम्भक और बत्तीस जप से रेचक करे।

गौतमतन्त्र के अष्टांग योग स्थल पर लिखित नियमों के अनुसार चार बार जप से पूरक, सोलह जप से कुम्भक और आठ जप से रेचक प्राणायाम होता है अथवा एक बार जप से पूरक, चार जप से कुम्भक और दो जप से रेचक करे।

पूजनादि कर्मों में प्राणायाम अवश्य करना चाहिये। प्राणायाम के विना मन्त्र-जप और पूजनादि करने का अधिकार नहीं होता। शुभाशुभ सभी कार्यों के आदि और अन्त में प्राणायाम करना चाहिये। सारसमुच्चय, गौतम, निबन्धतन्त्रों का यही मत है।

पीठन्यासः

ॐ आधारशक्तये नमः, प्रकृतये, कूर्माय, अनन्ताय, पृथिव्यै, क्षीरसमुद्राय, श्वेतद्वीपाय, मणिमण्डपाय, कल्पवृक्षाय, मणिवेदिकायै, रत्नसिंहासनाय—एतत्सर्वं हृदि। ततो दक्षिणस्कन्धे धर्माय, वामस्कन्धे ज्ञानाय, वामोरौ वैराग्याय, दक्षिणोरौ ऐश्वर्याय, मुखे अधर्माय, वामपार्श्वे अज्ञानाय, नाभौ अवैराग्याय, दक्षिणपार्श्वे अनैश्वर्याय—सर्वत्र प्रणवादिनमोऽन्तेन न्यसेत्। तथा च शारदायाम्—

अंसोरुयुग्मयोर्विद्वान् प्रादक्षिण्येन साधकः ।
धर्मं ज्ञानञ्च वैराग्यमैश्वर्यं क्रमशः सुधीः ।
मुखपार्श्वनाभिपार्श्वेष्वधर्मादीन् प्रकल्पयेत् ॥ इति।

पुनश्च हृदि—ॐ अनन्ताय नमः। एवं पद्माय, अं सूर्यमण्डलाय द्वादशकलात्मने नमः, उं सोममण्डलाय षोडशकलात्मने नमः, मं वह्निमण्डलाय दशकलात्मने नमः, सं सत्त्वाय, रं रजसे, तं तमसे, आं आत्मने, अं अन्तरात्मने, पं परमात्मने, ह्रीं ज्ञानात्मने। सर्वत्र नमः, इत्यन्तं विन्यस्य हृत्पद्मस्य पूर्वादिकेशरेषु तत्तत्कल्पोक्तपीठशक्तीर्मध्ये पीठमनुञ्च न्यसेत्। शारदायाम्—

अनन्तं हृदये पद्मं तस्मिन् सूर्येन्दुपावकान् ।
एषु स्वस्वकलां न्यस्य नामाद्यक्षरपूर्वकम् ॥
सत्त्वादीन्त्रिगुणान्न्यस्य तथैवात्र गुरूत्तमः ।
आत्मानमन्तरात्मानं परमात्मानमेव च ।
ज्ञानात्मानं प्रविन्यस्य न्यसेत्पीठमनुं ततः ॥

पीठन्यास—नीचे निर्दिष्ट अंगों पर हाथ रखकर उनके आगे लिखे मन्त्रों से न्यास करे। सभी मन्त्रों के आदि में ॐ और अन्त में नमः जोड़े।

हृदय में ॐ आधारशक्तये नमः। ॐ प्रकृतये नमः। ॐ कूर्माय नमः। ॐ अनन्ताय नमः। ॐ पृथिव्यै नमः। ॐ क्षीरसमुद्राय नमः। ॐ श्वेतद्वीपाय नमः। ॐ मणिमण्डपाय नमः। ॐ कल्पवृक्षाय नमः। ॐ मणिवेदिकायै नमः। ॐ रत्नसिंहासनाय नमः।

१. दक्षिण कन्धे में—ॐ धर्माय मनः
२. वाम कन्धे में—ॐ अधर्माय नमः
३. बाँयीं जांघ में—ॐ वैराग्याय नमः
४. दाँयीं जांघ में—ॐ ऐश्वर्याय नमः
५. मुख में—ॐ अधर्माय नमः
६. बाँयें पार्श्व में—ॐ अज्ञानाय नमः
७. नाभि में—ॐ वैराग्याय नमः
८. दक्षिणपार्श्व में—ॐ अनैश्वर्याय नमः

फिर हृदय में—ॐ अनन्ताय नम:। ॐ पद्माय नम:। ॐ सूर्यमण्डलाय द्वादशकलात्मने नम:। ॐ उं सोममण्डलाय षोडशकलात्मने नम:। रं वह्निमण्डलाय दशकलात्मने नम:। सं सत्त्वाय नम:। रं रजसे नम:। तं तमसे नम:। आं आत्मने नम:। अं अन्तरात्मने नम:। पं परमात्मने नम:। ह्रीं ज्ञानात्मने नम:।

फिर पूर्वादि केशरों में कल्पोक्त पीठशक्तियों का पूजन करके मध्य में पीठमन्त्र की पूजा करे।

पूर्वादि दिशाओं का नियम यामल के अनुसार यह है कि पूज्य और पूजक का मध्य स्थान पूर्व, उसका दक्षिण दक्षिण, उसका उत्तर उत्तर और उसके पीछे का भाग पश्चिम होता है।

ऋष्यादिन्यास:

ऋषिस्तु—

महेश्वरमुखाज्ज्ञात्वा यः साक्षात्तपसा मनुम्।
संसाधयति शुद्धात्मा स तस्य ऋषिरीरितः।
गुरुत्वान्मस्तके चास्य न्यासस्तु परिकीर्त्तितः॥
सर्वेषां मन्त्रतत्त्वानां छादनाच्छन्द उच्यते।
अक्षरत्वात्पदत्वाच्च मुखे छन्दः समीरितम्॥
सर्वेषामेव जन्तूनां भाषणात्प्रेरणात्तथा।
हृदयाम्भोजमध्यस्था देवता तत्र तां न्यसेत्॥
ऋषिच्छन्दोऽपरिज्ञानान्न मन्त्रफलभाग्भवेत्।
दौर्बल्यं याति मन्त्राणां विनियोगमजानताम्॥

तन्त्रान्तरे—

ऋषिं न्यसेन्मूर्ध्निदेशे छन्दस्तु मुखपङ्कजे।
देवतां हृदये चैव बीजन्तु गुह्यदेशके।
शक्तिञ्च पादयोश्चैव सर्वाङ्गे कीलकं न्यसेत्॥

ततस्तु तत्तन्मन्त्रोक्तन्यासान् कुर्यात्। तदुक्तं कुलार्णवे—

आगमोक्तेन विधिना नित्यं न्यासं करोति यः।
देवताभावमाप्नोति मन्त्रसिद्धिः प्रजायते॥
यो न्यासकवचच्छन्नो मन्त्रं जपति तं प्रिये।
दृष्ट्वा विघ्नाः पलायन्ते सिंहं दृष्ट्वा यथा गजाः॥
अकृत्वा न्यासजालं यो मूढत्वात्प्रजपेन्मनुम्।
सर्वविघ्नैः स वध्यः स्याद्व्याघ्रैर्मृगशिशुर्यथा॥

ऋष्यादि न्यास—ऋषि उसे कहते हैं, जो महादेव के मुख से सुनकर मन्त्र की साधना करता है। जो शुद्ध आत्मा है। इसका न्यास मस्तक पर किया जाता है। सभी मन्त्रतत्त्वों को आच्छादित करने से छन्द कहते हैं। अक्षर से पद से छन्द का न्यास मुख में किया जाता है। सभी जीवों में बोली से ही प्रेरणा होती है। इसलिये इसका न्यास हृदयकमल में होता है। ऋषि-छन्द के ज्ञान से मन्त्रफल प्राप्त होता है। विनियोग की अज्ञानता से मन्त्र में दुर्बलता आती है।

तन्त्रान्तर के अनुसार ऋषि का न्यास मूर्धा पर, छन्द का मुख में, देवता का हृदय में, बीज का गुह्यदेश में, शक्ति का पाँवों में एवं कीलक न्यास सर्वाङ्ग में करना चाहिये।

कुलार्णव की उक्ति है कि आगमोक्त विधि से जो नित्य न्यास करता है, उसे देवताभाव प्राप्त होता है और मन्त्रसिद्धि मिलती है। जो न्यास-कवच से युक्त होकर मन्त्र-जप करता है, उसे देखकर विघ्न वैसे ही भाग जाते हैं, जैसे सिंह को देखकर हाथी भाग जाते हैं। न्यासजाल के विना जो मूढ़तावश मन्त्रजप करता है, उसे सभी विघ्नों की बाधा का सामना करना पड़ता है।

षडङ्गन्यासे अङ्गुलिनियमस्तु—

त्रिद्व्येकदशकत्रिद्विसंख्यया शैलसम्भवे।

अंगुलीनामिति वचनादिति सर्वत्र साधारणम्। यामले—

हृदयं मध्यमानामातर्जनीभिः स्मृतं शिरः ।
मध्यमातर्जनीभ्यां स्यादङ्गुष्ठेन शिखा तथा ॥
दशभिः कवचं प्रोक्तं तिसृभिर्नेत्रमीरितम् ।
प्रोक्तांगुलीभ्यामन्त्रं स्यादङ्गक्लृप्तिरियं मता ॥ इति।

तिसृभिस्तर्जनीमध्यमानामाभिः।

तर्जनीमध्यमानामा प्रोक्ता नेत्रत्रये क्रमात् ।
यदि नेत्रद्वयं प्रोक्तं तदा तर्जनीमध्यमे ॥

इति राघवभट्टधृतवचनात्।

हृदयादिषु विन्यस्येदङ्गमन्त्रांस्ततः सुधीः ।
हृदयाय नमः पूर्वं शिरसे वह्निवल्लभा ।
शिखायै वषडित्युक्तं कवचाय हुमीरितम् ॥
नेत्रत्रयाय वौषट् स्यादस्त्राय फडिति क्रमात् ।
षडङ्गमन्त्रानित्युक्तान् षडङ्गेषु नियोजयेत् ॥
पञ्चाङ्गानि मनोर्यत्र तत्र नेत्रमनुं त्यजेत् ।

इति शारदावचनम्। वैष्णवे तु—

अनङ्गुष्ठा ऋजवो हस्तशाखा भवेन्मुदा हृदये शीर्षकेऽपि च
अधोऽङ्गुष्ठा खलु मुष्टिः शिखायां करद्वन्द्वाङ्गुलयो वर्मणि स्युः ।
नाराचमुष्ट्युद्धृतबाहुयुग्मकांगुष्ठतर्जन्युदितो ध्वनिस्तु
विश्वग्विषक्तः कथितास्त्रमुद्रा यत्राक्षिणी तर्जनीमध्यमे च ॥
नेत्रत्रयं यत्र भवेदनामा षडङ्गमुद्रा कथिता यथावत् ॥
अङ्गहीनस्य मन्त्रस्य स्वेनेवाङ्गानि कल्पयेत् ।

तथा च ब्रह्मयामले—

स्वनामाद्यक्षरं बीजं सर्वेषामभिधीयते ॥

ततस्तत्तत्कल्पोक्तमुद्रां प्रदर्श्य ध्यानं कृत्वा मानसैः सम्पूज्य शङ्खस्थापनं कुर्यात्। तथा च सनत्कुमारतन्त्रे—

अकृत्वा मानसं यागं न कुर्याद्बहिरर्चनम् ।

शङ्खस्थापनन्तु दीक्षाप्रकरणे उक्तम्।

षडंगन्यास-अंगुलिनियम—साधारण नियमानुसार तीन, दो, एक, दश, तीन, दो अंगुलियों से न्यास होता है। यामल के अनुसार हृदय में मध्यमा, अनामिका एवं तर्जनी से न्यास करे। मध्यमा और तर्जनी से मस्तक में, अंगूठे द्वारा शिखा में, सभी अंगुलियों से कवच-न्यास, तर्जनी, मध्यमा और अनामिका से नेत्र में तथा तर्जनी और मध्यमा से करतल में न्यास करे। यदि देवता त्रिनेत्र हो तो तर्जनी, मध्यमा, अनामिका द्वारा और यदि द्विनेत्र हो तो तर्जनी, मध्यमा द्वारा उस स्थान में न्यास करे। हृदयाय नमः, शिरसे स्वाहा, शिखायै वषट्, कवचाय हुम्, नेत्रत्रयाय वौषट्, अस्त्राय फट् से न्यास करे। शारदातिलक के अनुसार जहाँ पञ्चाङ्ग न्यास का विधान हो, वहाँ नेत्र को छोड़कर शेष स्थानों में न्यास करे। विष्णु की साधना में अंगुष्ठहीन सारे करतल से हृदय और मस्तक में न्यास करे। अंगुष्ठमध्यगत मुट्ठी से शिखा में, दोनों हाथों की सभी अंगुलियों से कवच में और तर्जनी एवं मध्यमा द्वारा नेत्र में न्यास करे। नाराचमुद्रा द्वारा दोनों बाहु मुष्टि ऊपर उठाकर अंगुष्ठ और तर्जनी से मस्तक के चारो ओर करतल से ध्वनि करे। ब्रह्मयामल का कथन है कि जहाँ अंगन्यास के मन्त्र का निर्देश न हो, वहाँ देवता के नाम के पहले अक्षर से न्यास करे।

इस प्रकार न्यासादि करने के बाद देवता के कल्प के अनुसार मुद्रायें दिखाकर ध्यान करे। तत्पश्चात् मानस पूजन करके शंखस्थापन करे।

सनकुमारतन्त्र के वचनानुसार मानस-पूजन के विना बाह्य पूजन न करे। शंख-स्थापन की विधि दीक्षा प्रकरण में अंकित है। सूर्य और शिव की पूजा में शंख में विशेषार्घ्यस्थापन निषिद्ध है।

ततः शरीरे धर्मादिपूजा। तथा च शारदायाम्—

न्यासक्रमेण देहेषु धर्मादीन् पूजयेत्ततः ।
पुष्पाद्यैः पीठमन्वन्तं तस्मिंश्च परदेवताम् ॥

इति दर्शनाच्छरीरे पीठपूजा। ततः पीठपूजा। पीठस्योत्तरे गुरुपंक्तीः पूजयेत्। यथा—वायव्यादीशपर्यन्तं ॐ गुरुभ्यो नमः, ॐ परमगुरुभ्यो नमः, ॐ परापरगुरुभ्यो नमः, ॐ परमेष्ठिगुरुभ्यो नमः। त्रिपुरादौ तु विशेषगुरुपूजा वक्तव्या। ततः पीठमध्ये ॐ आधारशक्तये नमः। एवं प्रकृतये, कूर्माय, शेषाय, पृथिव्यै, क्षीरसमुद्राय, श्वेतद्वीपाय, मणिमण्डपाय, कल्पवृक्षाय, मणिवेदिकायै, रत्नसिंहासनाय। अग्निकोणे धर्माय। निर्ऋतिवाय्वीशानेषु ज्ञानं वैराग्यं ऐश्वर्यञ्च पूजयेत्। ततः पूर्वादिचर्तुदिक्षु अधर्माज्ञानावैराग्यानैश्वर्यान् पूजयेत्। मध्ये अनन्तादि ह्रीं ज्ञानात्मने नमः। इत्यन्तं सम्पूज्य पूर्वादिकेशरेषु मध्ये तत्तत्कल्पोक्तपीठशक्तीः सम्पूज्य मध्ये पीठमनुं प्रपूजयेत्। क्रमदीपिकायाम्—

वायव्यादीशपर्यन्तं अर्च्या पीठस्योत्तरे गौरवी पंक्तिरादौ ।
पूज्योऽन्यत्राप्याम्बिकेयः कराब्जैः पाशं दण्डं सृण्यभीती दधानः ॥
आरभ्याधारशक्त्याद्यमरचरणपावध्यतो मध्यभागे
धर्मादीन् वह्निरक्षःपरमशिवगतान्दिक्ष्वधर्मादिकांश्च ।
मध्ये शेषाब्जविम्बत्रितयगुणगुणात्मस्त्रजं केशराणां
मध्ये मध्ये च शक्तीर्नव समभियजेत्पीठमन्त्रेण भूयः ॥

तारादिविद्यादौ तु विशेषो वक्तव्यः। पूर्वादिदिङ्नियमस्तु यामले—

पूज्यपूजकयोर्मध्यं प्राचीति कीर्त्त्यते बुधैः ।
तद्दक्षिणं दक्षिणं स्यादुत्तरं चोत्तरं स्मृतम् ।
पृष्ठन्तु पश्चिमं ज्ञेयं सर्वत्रैवं प्रयोजयेत् ।

स्पष्टमाह शाम्भवीये—

स्वसम्मुखं भवेत्प्राची देवीपृष्ठन्तु पश्चिमम् ।
सव्यञ्च दक्षिणं विद्याद्दक्षिणञ्चोत्तरं मतम् ॥

भावचूडामणौ—

साधकेच्छावशाद्देवि सर्वदिङ्मुखदेवता ।
रात्रावुदङ्मुखः कुर्याद्देवकार्यं सदैव हि ।
शिवार्चनं सदाप्येवं शुचिः कुर्यादुदङ्मुखः ॥

विष्णुविषये वाराहीये—

स्नातः शुक्लाम्बरधरः स्वाचान्तः पूर्वदिङ्मुखः ।
अनेन विधिना मन्त्री पूर्वादौ पूजनं चरेत् ॥

पीठपूजा—तदनन्तर अपने शरीर में धर्मादि की पूजा करे। शारदातिलक में लिखा है कि पीठन्यास क्रम से फूलों से देवता-शरीर में धर्म से उस देवता की पीठशक्ति तक की पूजा करे। तब उसके ऊपर देवता का पूजन करे। क्रमदीपिका में वर्णन है कि पीठ के उत्तर भाग में वायुकोण से ईशानकोण तक गुरुपंक्ति की पूजा करे—ॐ गुरुभ्यो नमः, ॐ परमगुरुभ्यो नमः। ॐ परापरगुरुभ्यो नमः। ॐ परमेष्ठिगुरुभ्यो नमः। त्रिपुरा आदि से सम्बन्धित विशेष गुरुपूजा का वर्णन आगे किया जायगा।

अब पीठपूजा करे। सभी मन्त्रों के आदि में ॐ और अन्त में नमः जोड़कर पूजा करे। पीठमध्य में—ॐ आधारशक्तये नमः। ॐ प्रकृतये नमः। ॐ कूर्माय नमः। ॐ शेषाय नमः। ॐ पृथिव्यै नमः। ॐ क्षीरसागराय नमः। ॐ श्वेतद्वीपाय नमः। ॐ मणिमण्डपाय नमः। ॐ कल्पवृक्षाय नमः। ॐ मणिवेदिकायै नमः। ॐ रत्नसिंहासनाय नमः। अग्निकोण में ॐ धर्माय नमः। नैर्ऋत्य कोण में ॐ ज्ञानाय नमः। वायव्य कोण में ॐ वैराग्याय नमः। ईशान कोण में ॐ ऐश्वर्याय नमः। पूर्व में ॐ अधर्माय नमः। दक्षिण में ॐ अज्ञानाय नमः। पश्चिम में ॐ अवैराग्याय नमः। उत्तर में ॐ अनैश्वर्याय नमः। मध्य में ॐ अनन्ताय नमः। ॐ पद्माय नमः। अं सूर्यमण्डलाय द्वादशकलात्मने नमः। उं सोममण्डलाय षोड़शकलात्मने नमः। रं वह्निमण्डलाय दशकलात्मने नमः। सं सत्त्वाय नमः। तं तमसे नमः। रं रजसे नमः। आं आत्मने नमः। अं अन्तरात्मने नमः। पं परमात्मने नमः। ह्रीं अज्ञानात्मने नमः। तत्पश्चात् केशर की पूर्वादि दिशाओं में कल्पोक्त पीठशक्तियों की पूजा करके मध्य में पीठमन्त्र की पूजा करे।

क्रमदीपिकातन्त्र में लिखा है कि वायव्य से ईशान तक पीठ के उत्तर भाग में गुरुपंक्ति का पूजन करे। अन्य पूज्यों में अम्बिका के हाथों में कमल, पाश, दण्ड, माला और अभयमुद्रा का पूजन करे। मध्य भाग में आधारशक्ति से पूजन प्रारम्भ करे। अग्निकोण में धर्मादि, नैर्ऋत्य में परमशिव अधर्मादि का पूजन करे। मध्य में शेष अब्ज बिम्बत्रितय गुणागुण। बीच में नव शक्तियों का पीठमन्त्र से पूजन करे। तारा आदि विद्याओं के बारे में आगे बतलाया जायगा।

यामल के अनुसार पूर्वादि दिशाओं का नियम है कि पूज्य और पूजक के मध्य में पूर्व, उसका दक्षिण दक्षिण, उसका उत्तर उत्तर तथा उसके पीछे का भाग पश्चिम होता है। शाम्भवतन्त्र के अनुसार अपने सम्मुख भाग को पूर्व, देवता के पृष्ठ भाग को पश्चिम, वाम भाग को दक्षिण और दक्षिण भाग को उत्तर माने। भावचूड़ामणि के अनुसार साधक की इच्छानुसार देवता सभी दिशाओं में मुख कर स्थिर रहता है। रात में साधक उत्तरमुख होकर देवकार्य कर सकता है। शिवपूजन सदैव उत्तरमुख होकर करे।

विष्णु से सम्बन्धित पूजा में वाराही तन्त्र का मत है कि स्नान करके श्वेत वस्त्र पहन कर आचमन करके पूर्वमुख होकर देवकार्य करे।

अविशेषे यन्त्रनियमस्तु मत्स्यसूक्ते—

अनुक्तकल्पे यन्त्रन्तु लिखेत्पद्मं दलाष्टकम् ।
षट्कोणकर्णिकं तत्र वेदद्वारोपशोभितम् ।।

ततः पुनर्ध्यात्वा दीक्षापद्धत्युक्तक्रमेण आवाहनादि प्राणप्रतिष्ठान्तं कर्म कुर्यात्।

यन्त्राङ्कन—मत्स्यसूक्त में वर्णन है कि जहाँ यन्त्र का उल्लेख न हो, वहाँ षट्कोणविशिष्ट कर्णिका अंकित करके उसके बाहर अष्टदल पद्म और चतुर्द्वारयुक्त भूपर से यन्त्र बना ले। तब ध्यान करके दीक्षा-पद्धति में लिखी विधि के अनुसार आवाहन से लेकर प्राण-प्रतिष्ठापर्यन्त सभी कार्य करे।

आवाहने तु विशेषो यथा आगमकल्पद्रुमे—

मूलमन्त्रं समुच्चार्य सुषुम्नावर्त्मना सुधीः ।
आनीय तेजः स्वस्थानान्नासिकारन्ध्रनिर्गतम् ।।
करस्थमातृकाम्भोजे चैतन्यं पुष्पसञ्चये ।
संयोज्य यन्त्रमध्ये तत्संस्थाप्यावाहयेत्ततः ।।

ततः षोडशोपचारैः पञ्चोपचारैर्वा पूजयेत्। षोडशोपचारनियमस्तु—

आसनं स्वागतं पाद्यमर्घ्यमाचमनीयकम् ।
मधुपर्काचमनस्नानवसनाभरणानि च ।।
सुगन्धसुमनोधूपदीपनैवेद्यवन्दनम् ।
प्रयोजयेदर्चनायामुपचारस्तु षोडशः ।।

अथवा एषामप्यभावे पञ्चोपचारान् कल्पयेत्—

गन्धादयो नैवेद्यान्ता पूजा पञ्चोपचारिका । इति।

विष्णुविषये तु—

अर्घ्याद्याः पञ्चपञ्चैव गन्धाद्या इति भेदतः ।
प्रयोजयेदर्चनायामुपचारान् दश क्रमात् ।।

ततः पुष्पपर्यन्तमुपचारं तत्तन्मन्त्रेण दत्त्वा षडङ्गेन पूजयेत्। पुष्पदाने तु विशेषः—

पुष्पं वा यदि वा पत्रं फलं नेष्टमधोमुखम् ।
दुःखदं तत्समाख्यातं यथोत्पन्नं तथार्पणम् ।
अधोमुखं फलं नेष्टं पुष्पाञ्जलिविधौ न च ।।

सर्वस्वद्रव्यदानेऽयं क्रमः—

आदौ मूलं ततो द्रव्यं देवतायै ततः पदम् ।

श्रीतत्त्वचिन्तामणौ—

हृद्वह्निवल्लभातोयमन्त्रं पाद्यादिषु क्रमात् ।
नमो वौषट् गन्धपुष्पे हृदान्यानि निवेदयेत् ।।

मूलमुच्चार्य एतत्पाद्यं अमुकदेतायै नमः इत्यादिना दद्यात्। ततो मूर्द्धहृद्गुह्य-पादसर्वाङ्गकेषु मूलेन पञ्चपुष्पाञ्जलीन् दत्त्वा तत्तत्कल्पोक्तावरणपूजां कुर्यात्। तथा च—

पञ्चपुष्पाञ्जलीन् दत्त्वा परिवारार्चनं चरेत् ।

इति भट्टः। ततो धूपदीपौ दद्यात्।

इष्टदेव का आवाहन-पूजन—आवाहन के सम्बन्ध में आगमकल्पद्रुम का मन्तव्य है कि साधक मूल मन्त्र का उच्चारण करके सुषुम्ना मार्ग से चैतन्यरूप तेज को स्वस्थान से लाकर नासिकारन्ध्र द्वारा निकाले। अपने करस्थित मातृकापद्म में पुष्पपुञ्ज के ऊपर संयोजित करे। फिर यन्त्र के मध्य में इस तेजयुक्त पुष्प की स्थापना करके आवाहन करे।

इसके बाद षोड़शोपचार या पञ्चोपचार से पूजन करे। षोडश उपचारों में ये हैं— आसन, स्वागत, पाद्य, अर्घ्य, आचमनीय, मधुपर्क, आचमनीय, स्नानीय, वस्त्र, अलंकार, गन्ध, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य और नमस्कार।

सोलह उपचारों के उपलब्ध न होने पर पाँच उपचारों से पूजा करे। पाँच उपचारों में—गन्ध, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य माने जाते हैं। विष्णुपूजन में अर्घ्य, पाद्य, आचमनीय, मधुपर्क, स्नानीय, गन्ध, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य—ये दश उपचार होते हैं।

देवता के मूल मन्त्र से पुष्पपर्यन्त उपचारों को प्रदान करके षडंगपूजन षडंग मन्त्रों से करे। पुष्प प्रदान करने में विशेष नियम यह है कि पुष्प-पत्र-फल अधोमुख प्रदान न करे। ऐसा करने से साधक दुःख का भागी होता है; किन्तु पुष्पाञ्जलि देने में इस नियम का पालन आवश्यक नहीं है।

श्रीतत्त्वचिन्तामणि के अनुसार मूल मन्त्र का उच्चारण करके द्रव्यनाम ले, तब अमुकदेवतायै बोले। पाद्य में नमः, अर्घ्य में स्वाहा, गन्ध में नमः, पुष्प में वौषट् और अन्य उपचारों में नमः लगाकर समर्पण करे। यथा—मूलं एतत् पाद्यं अमुकदेवतायै नमः।

इसके बाद देवता के मस्तक, हृदय, गुह्य, पाद और सर्वांग में मूल मन्त्र से एक-एक पुष्पाञ्जलि प्रदान करे। तब पद्धति के अनुसार आवरण-पूजन करे। पाँच पुष्पाञ्जलि देकर परिवार-अर्चन करे, तब धूप-दीपादि से पूजन करे।

तद्यथा—जयध्वनि-मन्त्रमातः स्वाहेति पुष्पाक्षतैर्घण्टां सम्पूज्य, वामहस्तेन तां वादयन्, तत्तन्मन्त्रेण नीचैर्धूपं एवं दृष्टिपर्यन्तं दीपं दद्यात्। ततो मूलेन पुष्पाञ्जलित्रयं दत्त्वा, नैवेद्यमानीय, फडिति सम्प्रोक्ष्य, चक्रमुद्रया अभिरक्ष्य, तदुपरि मूलमष्टधा

जप्त्वा धेनुमुद्रया अमृतीकृत्य, मूलमुच्चार्य नैवेद्यं दद्यात्।

यत्तोयमर्घ्यपात्रस्य तदादाय निवेदयेत् ।
अन्यतोयैर्यदुत्सृष्टमर्घ्यपात्रस्थितेतरैः ।
न गृह्णाति महादेवो दत्तं विधिशतैरपि ॥

इति वचनादुपचारानर्घ्यपात्रस्थजलेनोत्सृज्य दद्यात्। ततः पुनराचमनीयं दत्त्वा ताम्बूलादीन् दद्यात्। वैष्णवे तु नैवेद्ये विशेषो वक्तव्यः। ततः सपरिवारां देवतां गन्धादिभिरभ्यर्च्य, नृत्यगीतैर्देवं सन्तोष्य, जयजयेत्युक्त्वा, विशेषार्घ्यं दत्त्वा पुष्पाञ्जलिं दद्यात्। दाने तु—आदौ मूलं ततो द्रव्योल्लेखः ततः सम्प्रदानं ततस्त्यागार्थकं पदमिति सर्वत्र। तथा च कुलार्णवे—

आदौ मूलं समुच्चार्य पश्चाद्देयं समुच्चरेत् ।
सम्प्रदानं तदन्ते तु त्यागार्थकपदन्ततः ।
एवं क्रमेण देवेशि उपचारान् प्रकल्पयेत् ॥

मन्त्रान्ते कर्मसन्निपात इति न्यायात्। ततश्चुल्लुकोदकमादाय ॐ इतः पूर्वं प्राणबुद्धिदेहधर्माधिकारतो जाग्रत्स्वप्नसुषुप्त्यवस्थासु मनसा वाचा हस्ताभ्यां पद्भ्यामुदरेण शिश्ना यत्स्मृतं यदुक्तं यत्कृतं तत्सर्वं ब्रह्मार्पणं भवतु स्वाहा, मां मदीयं सकलं सम्यगमुकदेवतायै समर्पयेत् ॐ तत्सत्। नमस्कारानन्तरं वा। ततोऽष्टोत्तरसहस्रं शतं वा जप्त्वा—

ॐ गुह्यातिगुह्यगोप्ता त्वं गृहाणास्मत्कृतं जपम् ।
सिद्धिर्भवतु मे देव त्वत्प्रसादात्त्वयि स्थिते ॥

अन्यत्र गोप्त्री देवीति विशेषः। इति जपं समर्प्य स्तुत्वा नत्वाऽष्टाङ्गप्रमाणं कुर्यात्। अष्टाङ्गप्रणामो यथा—

पद्भ्यां कराभ्यां जानुभ्यामुरसा शिरसा दृशा ।
वचसा मनसा चैव प्रणामोऽष्टाङ्ग ईरितः ॥
बाहुभ्याञ्चैव जानुभ्यां शिरसा वचसा दृशा ।
पञ्चाङ्गोऽयं प्रणामः स्यात्पूजासु प्रवराविमौ ॥
भूमौ निपत्य यः कुर्यात्कृष्णेऽष्टाङ्गनतिं सुधीः ।
सहस्रजन्मजं पापं त्यक्त्वा वैकुण्ठमाप्नुयात् ॥

तथा च—

वेदविद्भ्यो धरां दत्त्वा यत्फलं लभते नरः ।
तत्फलं लभते भक्त्या कृष्णे कृत्वा प्रदक्षिणम् ॥

कृष्ण इत्युपलक्षणम्। विश्वसारे—

शङ्खहस्तेन सर्वत्र प्रदक्षिणं प्रकीर्त्तितम् ।

नतिविशेषस्तु यामले—

त्रिकोणकारा सर्वत्र नतिः शक्तेः प्रकीर्त्तिता ।
दक्षिणद्वारवीं गत्वा दिशस्तस्माच्च शाम्भवीम् ।
ततश्च दक्षिणं गत्वा नमस्कारस्त्रिकोणवत् ।।
अर्द्धचन्द्रं महेशस्य पृष्ठतश्च समीरिता ।
शिवप्रदक्षिणे मन्त्री अर्द्धचन्द्रक्रमेण तु ।
सव्यासव्यक्रमेणैव सोमसूत्रं न लङ्घयेत् ।।

सोमसूत्रं जलनिःसरणस्थानम्।

प्रसार्य दक्षिणं हस्तं स्वयं नम्रशिराः पुनः ।
दर्शयेद्दक्षिणं पार्श्वं मनसाऽपि विचक्षणः ।
त्रिधा च वेष्टयेत्सम्यग्देवतायाः प्रदक्षिणे ।।
एकहस्तप्रणामश्च एकं वाऽपि प्रदक्षिणम् ।
अकाले दर्शनं विष्णोर्हन्ति पुण्यं पुराकृतम् ।।

ततो देवताङ्गे आवरणदेवता विलाप्य, क्षमस्वेति विसर्जनं कृत्वा, संहारमुद्रया तत्तेजःपुष्पैः सार्द्धमाघ्राय स्वहृदयमानयेत्। पुरश्चरणचन्द्रिकायाम् 'क्षमस्वे'ति वदन् मूलमन्त्रेण व्यापकं त्रिश इति वचनाद्विसर्जनान्तरं व्यापकं कुर्यात्। तथा च—

निधाय देवतां पश्चात्स्वीयहृत्सरसीरुहे ।
सुषुम्नावर्त्मना पुष्पमाघ्रायोद्वासयेत्ततः ।।

जैसे कि 'ॐ जयध्वनिमन्त्रमातः स्वाहा' मन्त्र से घण्टा का पूजन करके बाँयें हाथ से घण्टे को बजाते हुए धूप-पात्र को अधोमुख करके धूप प्रदान करे। दीपक को ऊर्ध्वमुख करके मन्त्र से दीपदान करे। इसके बाद मूल मन्त्र से तीन पुष्पाञ्जलियाँ देकर नैवेद्य लाकर 'फट्' से जल के द्वारा अभ्युक्षण करे। चक्रमुद्रा से संरक्षण करे। नैवेद्य के ऊपर मूल मन्त्र का आठ जप करके धेनुमुद्रा से अमृतीकरण करे। तब मूल मन्त्र से नैवेद्य निवेदित करे। निवेदनीय सभी द्रव्यों को अर्घ्य जल से प्रोक्षित करने के बाद प्रदान करे। सभी द्रव्य अर्घ्य जल से उत्सर्ग करते हुए प्रदान करे। अन्य जल से उत्सर्गकृत द्रव्य को महादेवी ग्रहण नहीं करतीं।

इसके बाद पुनराचमनीय देकर पीने का जल और ताम्बूल आदि प्रदान करे। विष्णु के सम्बन्ध में नैवेद्य का जो विशेष नियम है, वह उनके प्रकरण में लिखा जायगा।

तदनन्तर परिवारसहित देवता का फिर गन्धादि से पूजन करे। नाच-गान के द्वारा

देवता को सन्तुष्ट करते हुए 'जय-जय' बोलकर विशेषार्घ्य और पुष्पाञ्जलि प्रदान करे। द्रव्य-समर्पण में पहले मूल मन्त्र, तब द्रव्य, तब त्याग पद बोले। इसके बाद आत्मसमर्पण करे। इसकी विधि यह है कि हाथ में गण्डूष-परिमित जल लेकर निम्न मन्त्र से समर्पित करे— ॐ इत: पूर्वं प्राणबुद्धिदेहधर्माधिकारतो मनसा वाचा हस्ताभ्यां पद्भ्यामुदरेण शिरसा यत् स्मृतं यदुक्तं यत् कृतं तत् सर्वं ब्रह्मार्पणं भवतु स्वाहा, मां मदीयसकलं सम्यगमुकदेवतायै समर्पये ॐ तत्सत्।

एक मत यह भी है कि नमस्कार के बाद आत्मसमर्पण करे। इसके बाद एक हजार आठ या एक सौ आठ बार मूल मन्त्र का जप करके निम्न मन्त्र से जप को समर्पित करे—

ॐ गुह्यातिगुह्यगोप्ता त्वं गृहाणास्मत्कृतं जपम्।
सिद्धिर्भवतु मे देव त्वत्प्रसादात् त्वयि स्थिते।।

देवी-मन्त्र के जपसमर्पण में 'गोप्ता' के स्थान पर गोप्त्री' और 'देव' के स्थान पर 'देवी' का प्रयोग करे। इसके बाद स्तोत्रपाठ करके साष्टांग-प्रणाम करे। पैरों, हाथों, घुटनों, वक्ष, मस्तक, नेत्र, वाक् तथा मन—इन आठ अंगों से किये जाने वाले प्रणाम को अष्टांग कहते हैं। घुटनों, भुजाओं, मस्तक, वाक् और नेत्र से पञ्चाङ्ग प्रणाम होता है। पूजनादि में यही दोनों प्रशस्त हैं। इन अंगों को भूमि से सटाकर प्रणाम करना होता है। इन प्रणामों द्वारा सहस्र जन्म के पापों से मुक्त होकर साधक वैकुण्ठ प्राप्त करता है।

वेदवेत्ता ब्राह्मण को भूमिदान करने से जो फल होता है, भक्तिपूर्वक प्रदक्षिणा करके देवता को प्रणाम करने से वही फल प्राप्त होता है।

विश्वसार में लिखा है कि हाथ में शंख लेकर सर्वत्र देवता की प्रदक्षिणा करे। यामल में लिखा है कि शक्तिदेवता को त्रिकोणाकार नमस्कार करे अर्थात् देवता की दक्षिण दिशा में वायुकोणपर्यन्त जाकर फिर दक्षिण में वापस आ जाय। शिव को अर्द्धचन्द्राकार प्रदक्षिणा करके प्रणाम करे। सोमसूत्र अर्थात् जलहरी का उल्लंघन न करे।

अन्यान्य देवताओं के सम्बन्ध में यह नियम है कि दाँयाँ हाथ फैलाकर नत शिर होकर दक्षिण पार्श्व को दिखाते हुए तीन बार देवता का वेष्टन करके प्रदक्षिणा करे।

जो व्यक्ति देवता को एक हाथ से प्रणाम करता है अथवा एक बार प्रदक्षिणा करता है या असमय में देवता का दर्शन करता है, उसका पूर्व सञ्चित पुण्य नष्ट हो जाता है।

इसके बाद यह भावना करे कि देवता के शरीर में आवरण देवता विलीन हो गये हैं। फिर 'क्षमस्व' कहकर विसर्जन करे। इसके लिये संहारमुद्रा से एक फूल लेकर उसे सूंघते हुए उस पुष्पसहित देवता के तेज को अपने हृदय में ले आवे।

पुरश्चरणचन्द्रिका में वर्णन है कि 'क्षमस्व' कहकर तीन बार व्यापक न्यास करे। इसका अर्थ यह समझना चाहिये कि विसर्जन के बाद व्यापक न्यास करे। फूल को सूंघते

हुए सुषुम्ना नाड़ी से देवता को ले जाकर अपने हृदयकमल में स्थापित करे।

ततः ऐशान्यां त्रिकोणमण्डलं कृत्वा निर्माल्यशेषं दद्यात्। विष्णौ तु—ॐ विष्वक्सेनाय नमः। शक्तौ—ॐ शेषिकायै नमः। शिवे—ॐ चण्डेश्वराय नमः। सूर्ये—ॐ तेजश्चण्डाय नमः। गणेशे—ॐ उच्छिष्टगणेशाय नमः। कालिकादौ—ॐ उच्छिष्टचाण्डालिन्यै नमः। तथा च—

विष्वक्सेनः स्मृतो विष्णोस्तेजश्चण्डो विवस्वतः। इत्यादि।

तथा च निबन्धे—

सूर्ये गणपतावुग्रे शाक्ते शैवेऽथ वैष्णवे।
तेजश्चण्डमखोच्छिष्टसोजमुच्छिष्टपूर्विकाम्।
चाण्डालीं शेषिकां चण्डं विष्वक्सेनं क्रमाद्यजेत्।।

सोज इति उमा शम्भुना सह वर्त्तते इति सो—दुर्गा तज्जो गणेशः। ततः पादोदकं पीत्वा नैवेद्यं किञ्चित्स्वीकृत्य अन्यद्यथायोग्याय दत्त्वा यथासुखं विहरेदिति। मत्स्यसूक्ते—

अनिवेद्यं न भुञ्जीत मत्स्य-मांसादिकञ्च यत्।
अन्नं विष्ठा पयो मूत्रं यद्विष्णोरनिवेदितम्।।

विष्णोरिति तत्तद्देवतापरम्। तथा च भैरवतन्त्रे—

हृदये च बहिर्देवीं समर्प्य विधिवत्ततः।
निर्माल्यञ्च शुचौ देशे नैवेद्यं भक्षयेत्सुधीः।।

तन्त्रान्तरे—

निर्माल्यं शिरसा धार्यं सर्वाङ्गे चानुलेपनम्।
नैवेद्यं चोपभुञ्जीत दत्त्वा तद्भक्तिशालिने।।
देवतार्चावशिष्टं यत्सलिलं शङ्खमध्यगम्।
अङ्गलग्नं मनुष्याणां ब्रह्महत्यां व्यपोहति।।

तत्पश्चात् ईशानकोण में त्रिकोण मण्डल बनाकर उसमें निर्माल्य अर्पण करे। विष्णुमन्त्र के सम्बन्ध में ॐ विष्वक्सेनाय नमः से, शक्तिविषयक मन्त्र में ॐ शेषिकायै नमः से, शिव से सम्बन्धित पूजन में ॐ चन्द्रेश्वराय नमः से, सूर्य से सम्बन्धित पूजन में ॐ तेजश्चण्डाय नमः से, गणेशविषयक पूजन में ॐ उच्छिष्टगणेशाय नमः से, कालकादि-विषयक पूजन में ॐ उच्छिष्टचाण्डालिन्यै नमः से निर्माल्य-पुष्पों से पूजन करे। इसके बाद चरणोदक का पान करे। कुछ नैवेद्य ग्रहण करे। योग्य व्यक्ति को कुछ नैवेद्य देकर सुखपूर्वक विहार करे।

सामान्य पूजन यन्त्र
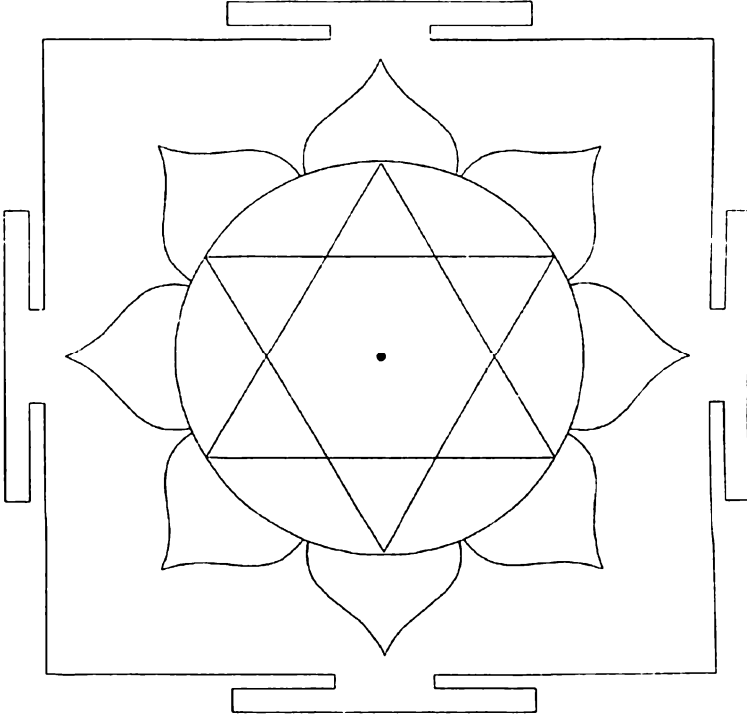
मत्स्यसूक्त में लिखा है कि मत्स्य, मांस आदि कोई भी वस्तु देवता को निवेदन किए विना नहीं खाना चाहिये। इष्टदेवता को निवेदन के विना अन्न को विष्टा को समान और जलादि पानीय द्रव्य को मूत्र के समान समझना चाहिए। भैरवतन्त्र में लिखा है कि पूजास्थान से बाहर साधक के होने पर यथाविधान देवता को हृदय में समर्पण कर उसके निर्माल्य को ग्रहण करे। पवित्र स्थान में बैठकर नैवेद्य का भोजन करे।

तन्त्रान्तर में लिखा है कि निर्माल्य-पुष्पादि को मस्तक पर धारण करे। निवेदित चन्दन का सर्वांग में विलेपन करे। देवभक्त ब्राह्मणों को नैवेद्य प्रदान करे। तब स्वयं नैवेद्य-भोजन करे। देवता की पूजा से बचा शंखजल शरीर में लगाने से सभी पापों का विनाश हो जाता है।

इति सामान्यपूजापद्धतिः

●

यामाहुराद्यां प्रकृतिं मुनीन्द्राः पद्मां त्रिशक्तिं गिरमन्नपूर्णाम् ।
नित्याञ्च दुर्गां त्वरितां तथान्यां भजामि नित्यं भुवनेश्वरीं ताम् ।।
अथ वक्ष्ये जगद्धात्रीमधुना भुवनेश्वरीम् ।
ब्रह्मादयोपि तां ज्ञात्वा लेभिरे परमां श्रियम् ।।

तथा भुवनेश्वरीमन्त्राः—

नकुलीशोऽग्निमारूढो वामनेत्रार्द्धचन्द्रवान् ।
बीजन्तस्याः समाख्यातं सेवितं सिद्धिकांक्षिभिः ।।

नकुलीशो हकारः, अग्नी रेफः, वामनेत्रमीकारः, अर्द्धचन्द्रोऽनुस्वारः। भुवनेश्वरी पदार्थमाह दक्षिणामूर्त्तिसंहितायाम्—

व्योमबीजे महेशानि कैलासाद्रिप्रतिष्ठितम् ।
वह्निबीजात्सुवर्णादि निष्पन्नं बहुधा प्रिये ।।
तेनायं वर्त्तते लोको भूमिमण्डलसंस्थितः ।
तूर्यस्वरेण पाताले शेषरूपेण धार्यते ।।
महाभूमण्डलन्तस्मात्पातालस्यापि नायिका।
अतएव महेशानि भुवनाधीश्वरि प्रिये ।।

मतान्तरमाह—

हकारो व्योम तूर्येण स्वरेणानिलसम्भवः ।
विकारे सति रेफेण साक्षाद्वह्निस्वरूपिणी।।
वह्निबीजं वसुधेयं तस्माद्रेफञ्च सुन्दरि ।
अतएव महेशानि सवायोः समता भवेत् ।।
विन्दुचक्रामृताद्देवि प्लावयन्ती जगत्त्रयम् ।
द्रवरूपी भवेत्तस्मात्प्लवन्ती चार्द्धमात्रया ।
अतएव महेशानि भुवनेशीति कथ्यते ।।

विविध देवी मन्त्र—मुनीन्द्रों ने जिसे कमला, त्रिशक्ति, अन्नपूर्णा, सरस्वती, नित्या, त्वरिता, दुर्गा एवं अन्य महाविद्या कहा है, मैं उसी आद्या प्रकृति भुवनेश्वरी की वन्दना करता हूँ। ब्रह्मादि देवताओं ने भी जिसके मन्त्र को जानकर परमश्री को प्राप्त किया था, उसी भुवनेश्वरी के मन्त्र का वर्णन मैं करता हूँ।

नकुलीश (ह), अग्नि (र), वाम नेत्र (ई), अर्द्धचन्द (ं) के एकत्र होने से 'ह्रीं' बीज बनता है। यही भुवनेश्वरी का मन्त्र है।

दक्षिणामूर्त्तिसंहिता में लिखा है कि आकाशवीज हकार में कैलासादि प्रतिष्ठित हैं। वह्निवीज 'रं' से पृथ्वी-स्थित सुवर्णादि निष्पन्न हैं। चतुर्थ स्वर ईकार अनन्त रूप से पाताल में रहकर सारे भूमण्डल को धारण किए हुए हैं। अतएव स्वर्ग, मर्त्य और पाताल भुवनों की इन्हें नायिका मानकर इनको भुवनेश्वरी कहा गया है। मतान्तर से भुवनेश्वरी मन्त्र 'ह्रीं' का अर्थ होता है कि 'ह' से आकाश की और 'ई' से वायु की उत्पत्ति होती है। हकार और ईकार का रकार से सम्मिश्रण होने से यह साक्षात् अग्निरूपा है। अग्निबीज रं से पृथ्वी की उत्पति होती है। बिन्दुचक्र से झरने वाले अमृत से त्रिलोक प्लावित होता है। अत: इसे द्रवरूपिणी कहा गया है। अत: इसी से इसे भुवनेश्वरी कहा जाता है।

भुवनेशीपूजाप्रयोग:

सामान्यपूजापद्धत्युक्तक्रमेण प्रात:कृत्यादिपीठन्यासान्तं कर्म विधाय हृत्पद्मस्य पूर्वादिकेशरेषु मध्ये च पीठशक्तीर्न्यसेत्। तद्यथा—जया विजया अजिता अपराजिता नित्या विलासिनी दोग्ध्री अघोरा मङ्गला। वाक्यन्तु—ॐ जयायै नमः इत्यादि। कर्णिकायां ह्रीं सर्वशक्तिकमलासनाय नमः।

ततः ऋष्यादिन्यासः—अस्य भुवनेश्वरीमन्त्रस्य शक्तिर्ऋषिर्गायत्रीच्छन्दो भुवनेश्वरी देवता हकारो बीजम् ईकारः शक्तिः रेफः कीलकं चतुर्वर्गसिद्ध्यर्थे विनियोगः। शिरसि ॐ शक्तये ऋषये नमः। मुखे ॐ गायत्र्यै छन्दसे नमः, हृदि ॐ भुवनेश्वर्यै देवतायै नमः, गुह्ये ॐ हं बीजाय नमः, पादयोः ईं शक्तये नमः, सर्वाङ्गे रं कीलकाय नमः। तथा च शारदायाम्—

ऋषिः शक्तिर्भवेच्छन्दो गायत्री देवता मनोः ।
कथिता सुरसंघेन सेविता भुवनेश्वरी ।
हतूर्यबीजशक्ती च कीलकं रेफ उच्यते ॥

ततो मन्त्रन्यासं कुर्यात्। शिरसि ॐ हृल्लेखायै नमः। एवं वदने एं गगनायै नमः, हृदि उं रक्तायै नमः, गुह्ये इं करालिकायै नमः, पादयोः अं महोच्छुष्मायै नमः। एवमूर्ध्वप्राग्याम्योदीच्यपश्चिमेषु मुखेषु तां न्यसेत्। एतासां बीजानि निबन्धे—

हृल्लेखां मूर्ध्नि वदने गगनां हृदयाम्बुजे ।
रक्तां करालिकां गुह्ये महोच्छुष्मां पदद्वये ॥
ऊर्ध्वप्राग्दक्षिणोदीच्यपश्चिमेषु मुखेषु ताः ।
सत्यादि पञ्चह्रस्वाढ्या न्यस्तव्या भूतसम्प्रभाः ॥

भुवनेश्वरी का पूजन—पूर्वोक्त सामान्य पूजा-पद्धति में प्रात:कृत्य से लेकर पीठन्यास तक सभी क्रिया करे। फिर हृदयकमलकेशर में पूर्वादि दिशाओं और मध्य में

पीठशक्तियों का न्यास करे। जैसे—ॐ जयायै नमः। ॐ विजयायै नमः। ॐ अजितायै नमः। ॐ विलासिन्यै नमः। ॐ दोग्ध्र्यै नमः। ॐ अघोरायै नमः। ॐ मंगलायै नमः।

इसके बाद कमल की कर्णिका में 'ह्रीं शक्तिकमलासनाय नमः' से आसन प्रदान करे। इसके बाद विनियोग करे—अस्य भुवनेश्वरीमन्त्रस्य शक्ति ऋषिः गायत्री छन्दः भुवनेश्वरी देवता हकारो बीजं ईकारः शक्तिः रेफः कीलकं चतुर्वर्गसिद्ध्यर्थे विनियोगः।

ऋष्यादिन्यास—शिरसि ॐ शक्तये ऋषये नमः। मुखे ॐ गायत्र्यै छन्दसे नमः। हृदि ॐ भुवनेश्वर्यै देवतायै नमः। गुह्ये ॐ हं बीजाय नमः। पादयोः ॐ ईं शक्तये नमः। सर्वांगे रं कीलकाय नमः।

मन्त्र न्यास—शिरसि ॐ हृल्लेखायै नमः। मुखे ॐ गगनायै नमः। हृदये उं रक्तायै नमः। गुह्ये इं करालिकायै नमः। पादयोः अं महोच्छुष्मायै नमः।

पञ्चभूततुल्य इन्हीं हृल्लेखादि पञ्च देवताओं के आदि में मन्त्रन्यास की विधि से ओं आदि पञ्च ह्रस्व वर्ण (ओं एं उं इं अं) लगाकर सदाशिव के ऊर्ध्व, पूर्व, दक्षिण, उत्तर और पश्चिम मुखों में न्यास करे। ओं ईशानाय नमः। एं सद्योजाताय नमः। उं वामदेवाय नमः। इं तत्पुरुषाय नमः। अं अघोराय नमः।

ततः कराङ्गन्यासौ कुर्यात्—ह्रां अंगुष्ठाभ्यां नमः, ह्रीं तर्जनीभ्यां स्वाहा, ह्रूं मध्यमाभ्यां वषट्, ह्रैं अनामिकाभ्यां हुं, ह्रौं कनिष्ठाभ्यां वौषट्, ह्रः करतल-करपृष्ठाभ्यां फट्। एवं हृदयादिषु ह्रां हृदयाय नमः इत्यादि। तथा च—

षड्दीर्घभाजा बीजेन कुर्यादङ्गक्रियां मनोः ।

स्वच्छन्दसंग्रहे—

स्वरं विहाय बीज तं दीर्घषट्केन योजयेत् ।
षडङ्गानि विधेयानि सर्वत्रायं विधिः स्मृतः ॥

अंगुलिनियमस्तु पूर्वमेवोक्तः। सर्वत्र कराङ्गन्यासे एवं क्रमः।

ततो भाले ॐ गायत्रीसहितब्रह्मणे नमः। दक्षिणकपोले ॐ सावित्रीसहित-विष्णवे नमः। वामकपोले ॐ वागीश्वरीसहितमहेश्वराय नमः। वामकर्णोपरि ॐ श्रीसहितधनपतये नमः। मुखे ॐ रतिसहितस्मराय नमः। सव्यकर्णोपरि ॐ पुष्टिसहितगणपतये नमः। दक्षिणगण्डकर्णान्तराले ॐ शङ्खनिधये नमः। वाम-गण्डकर्णान्तराले ॐ पद्मनिधये नमः। मुखे ॐ भुवनेश्वर्यै देवतायै नमः। एवं कण्ठमूल-दक्षिणस्तन-वामस्तन-वामांस-हृदय-दक्षिणांस-नाभिषु एतान्न्यसेत्। तथा च—

ब्रह्माणं विन्यसेद्भाले गायत्र्या सह संयुतम् ।
सावित्र्या सहितं विष्णुं कपोले दक्षिणे न्यसेत् ॥

वागीश्वर्या समायुक्तं वामगण्डे महेश्वरम् ।
न्यसेच्छ्रिया धनपतिं वामकर्णाग्रके पुनः ॥
रत्या स्मरं मुखे न्यस्य पुष्ट्या गणपतिं न्यसेत् ।
सव्यकर्णोपरि निधी कर्णगण्डान्तरालयोः ।
न्यस्तव्यं वदने मूलं भूयश्चैतां स्तनौ न्यसेत् ॥

तथा च शारदायाम्—

कण्ठमूले स्तनद्वन्द्वे वामांसे हृदयाम्बुजे ।
सव्यांसे पार्श्वयुगले नाभिदेशे च देशिकः ॥

तथा च वर्णभिन्नन्यासे तु विश्वसारे—

ॐकाराद्यं ङेयुतञ्च नमोऽन्तञ्च यथा स्थितिः ।
विधिना विन्यसेत्सर्वं शङ्करस्य मतेन च ॥

एवं सर्वत्र। ततो भाले ॐ ब्राह्म्यै नमः, वामांसे ॐ माहेश्वर्यै नमः, वामपार्श्वे ॐ कौमार्यै नमः, जठरे ॐ वैष्णव्यै नमः, दक्षिणपार्श्वे ॐ वाराह्यै नमः, दक्षिणांसे ॐ इन्द्राण्यै नमः, गले ॐ चामुण्डायै नमः, हृदि ॐ महालक्ष्म्यै नमः, इति न्यस्य मूलेन व्यापकत्रयं सप्तमं वा कुर्यात्। तथा च—

भालेंऽसे पार्श्वे जठरे पार्श्वेऽसे च गले हृदि ।
ब्राह्मण्याद्यास्ततो न्यस्य विधिना प्रोक्तलक्षणा ।
मूलेन व्यापकं देहे न्यस्य देवीं विभावयेत् ॥ इति।

कराङ्गादि न्यास—करन्यास—ह्रां अंगुष्ठाभ्यां नमः। ह्रीं तर्जनीभ्यां स्वाहा। ह्रूं मध्यमाभ्यां वषट्। ह्रैं अनामिकाभ्यां हुं। ह्रौं कनिष्ठाभ्यां वौषट्। ह्रः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः।

षडंग न्यास—ह्रां हृदयाय नमः। ह्रीं शिरसे स्वाहा। ह्रूं शिखायै वषट्। ह्रैं कवचाय हुं। ह्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्। ह्रः करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्।

स्वच्छन्दसंग्रह में वर्णन है कि बीजमन्त्र से स्वरों को हटाकर उसमें छः दीर्घ स्वरों का योग करके षडंग न्यास करे। तब निम्न न्यास करे। अंगुलिनियम का वर्णन पहले किया जा चुका है। अंगन्यास में सर्वत्र यही क्रम होता है—

भाले—ॐ गायत्रीसहितब्रह्मणे नमः।

दक्षकपोले—ॐ सावित्रीसहितविष्णवे नमः।

वामकपोले—ॐ वागीश्वरीसहितमहेश्वराय नमः।

वामकर्णोपरि—ॐ श्रीसहितधनपतये नमः।

मुखे—रतिसहितस्मराय नमः।

दक्षकर्णोपरि—ॐ पुष्टिसहितगणपतये नमः।

दक्षगण्डकर्णान्तराले—ॐ शंखनिधये नमः।

वामगण्डकर्णान्तराले—ॐ पद्मनिधये नमः।

मुखे—ॐ भुवनेश्वर्यै नमः।

इसी प्रकार कण्ठमूल, दक्षिण स्तन, वाम स्तन, वामांस, हृदय, दक्षिणांस एवं नाभि में न्यास करे।

शारदातिलक के अनुसार इसी प्रकार कण्ठमूल, दक्ष स्तन, वाम स्तन, बाँयाँ कन्धा, हृदय, दाँयाँ कन्धा, दक्ष पार्श्व, वाम पार्श्व और नाभि में न्यास करे।

विश्वसार में लिखा है कि वर्णन्यास के अतिरिक्त न्यासों में पहले ॐ, तब देवता का चतुर्थ्यन्त नाम और तब नमः शब्द लगाकर न्यास करे। जैसे—

भाले—ॐ ब्राह्म्यै नमः।
वामांसे—ॐ माहेश्वर्यै नमः।
वामपार्श्वे—ॐ कौमार्यै नमः।
जठरे—ॐ वैष्णव्यै नमः।
दक्षिणपार्श्वे—ॐ वाराह्यै नमः।
दक्षांसे—ॐ इन्द्राण्यै नमः।
गले—ॐ चामुण्डायै नमः।
हृदये—ॐ महालक्ष्म्यै नमः।

मूल मन्त्र से तीन या सात बार व्यापक न्यास करे। तब ध्यान करे।

ततो ध्यानम्—

उद्यद्दिनकरद्युतिमिन्दुकिरीटां तुङ्गकुचां नयनत्रययुक्ताम्।
स्मेरमुखीं च वरांकुशपाशाभीतिकरां प्रजपेद्भुवनेशीम्॥

एवं ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्य बहिःपूजामारभेत्।

ध्यान— उद्यद्दिनकरद्युतिमिन्दुकिरीटां तुङ्गकुचां नयनत्रययुक्ताम्।
स्मेरमुखीं च वराङ्कुशपाशाभीतिकरां प्रजपेद् भुवनेशीम्।।

उदीयमान सूर्य की आभा वाली, चन्द्रमा से शोभित किरीटधारिणी, उन्नत पयोधरा, त्रिलोचना, स्मितमुखी, हाथों में वर, अंकुश, पाश और अभय मुद्राधारिणी भुवनेश्वरी का भजन करना चाहिये।

इस प्रकार के ध्यान के बाद भगवती का पूजन मानसोपचारों से करे। तब वाह्य पूजन प्रारम्भ करे।

पूजायन्त्रम्

पद्ममष्टदलं वाह्ये वृत्तं षोडशभिर्दलैः।
विलिखेत्कर्णिकामध्ये षट्कोणमतिसुन्दरम्।
चतुरस्रं चतुर्द्वारमेवं मण्डलमालिखेत्॥

ततो दीक्षापद्धत्युक्तक्रमेण शङ्खस्थापनं कुर्यात्। ततः सामान्यपूजापद्धत्युक्त-

क्रमेण पीठपूजां विधाय पीठशक्तिः पूजयेत्। तद्यथा—पूर्वादिकेशरेषु ॐ जयायै नमः। एवं विजयायै, अजितायै, अपराजितायै, नित्यायै, विलासिन्यै, दोग्ध्र्यै, अघोरायै, मध्ये मङ्गलायै। तथा च निबन्धे—

ततः सम्पूजयेत्पीठं नवशक्तिसमन्वितम् ।
जयाख्या विजया पश्चात् अजिता चापराजिता ॥
नित्या विलासिनी दोग्ध्री त्वघोरा मङ्गलाऽपि च।
बीजाढ्यमासनं दत्त्वा मूर्त्तिं मूलेन कल्पयेत् ॥

सर्वत्र प्रणवादिनमोऽन्तेन पूजयेत्। तदुपरि ह्रीं सर्वशक्तिकमलासनाय नमः। ततः पूर्ववद् ध्यानावाहनादिपञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं विधाय आवरणपूजामारभेत्।

तद्यथा—ह्रां हृदयाय नमः इत्यादिना षडङ्गानि सम्पूज्य, कर्णिकामध्ये ॐ हृल्लेखायै नमः, पूर्वे एं गगनायै नमः, दक्षिणे उं रक्तायै, उत्तरे इं करालिकायै, पश्चिमे अं महोच्छुष्मायै, षट्कोणेषु पूर्वादिक्रमेण ॐ गायत्र्यै नमः, एवं ब्रह्मणे नमः, नैर्ऋते सावित्र्यै, विष्णवे, वायव्ये सरस्वत्यै, रुद्राय। वह्निकोणे श्रियै, धनपतये, पश्चिमे रत्यै, स्मराय, ऐशान्यां पुष्ट्यै, गणपतये, षट्कोणस्थोभयपार्श्वयोः ॐ शङ्खनिधये, ॐ पद्मनिधये, सर्वत्र प्रणवादिनमोऽन्तम्। केशरेषु अग्निनिर्ऋति-वायव्यीशानेषु मध्ये चतुर्दिक्षु च ह्रां हृदयाय नमः इत्यादिना षडङ्गानि पूजयेत्। तथा च निबन्धे—

केशरेष्वग्निकोणादौ हृदयादीनि पूजयेत् ।
नेत्रमग्रे दिशास्वस्त्रं ध्यातव्याश्चाङ्गदेवताः ॥

एवं सर्वत्र। भैरव्यादौ विशेषो वक्तव्यः। पूर्वाद्यष्टदलेषु ॐ अनङ्गकुसुमायै नमः। एवं अनङ्गकुसुमातुरायै, अनङ्गमदनायै, अनङ्गमदनातुरायै, भुवनपालायै, अनङ्गवेद्यायै, शशिरेखायै, गगनरेखायै। पूर्वादि षोडशदलेषु कराल्यै, विकराल्यै, उमायै, सरस्वत्यै, श्रियै, दुर्गायै, उषायै, लक्ष्म्यै, श्रुत्यै, स्मृत्यै, धृत्यै, श्रद्धायै, मेधायै, मत्यै, कान्त्यै, अर्घ्यायै। तद्बहिः भूभागे पूर्वादितः अनङ्गरूपायै, अनङ्ग-मदनायै, अनङ्गमदनातुरायै, भुवनवेगायै, भुवनपालिकायै, सर्वशिशिरायै, अनङ्ग-वेदनायै, अनङ्गमेखलायै। प्रणवादिनमोऽन्तेनैताः पूजयेत्। तद्बहिश्चतुरस्रे पूर्वादौ ॐ लां इन्द्राय देवाधिपतये सायुधाय सवाहनाय सपरिवाराय नमः। ॐ रां अग्नये तेजोधिपतये सायुधाय सवाहनाय सपरिवाराय नमः। ॐ यां यमाय प्रेताधिपतये सायुधेत्यादि। ॐ क्षां निर्ऋतये रक्षोधिपतये सायुधेत्यादि। ॐ वां वरुणाय जलाधिपतये सायुधेत्यादि। ॐ यां वायवे प्राणाधिपतये सायुधेत्यादि। ॐ सां सोमाय ताराधिपतये सायुधेत्यादि। ॐ हां ईशानाय गणाधिपतये सायु-

धेत्यादि। इन्द्रेशानयोर्मध्ये ॐ आं ब्रह्मणे प्रजाधिपतये सायुधेत्यादि। निर्ऋति-वरुणयोर्मध्ये ॐ ह्रीं अनन्ताय नागाधिपतये सायुधेत्यादि। तथा च—

लोकपाला बहिः पूज्याः समस्ताश्चतुरस्रके ।
पुरुहुतेशयोर्मध्ये रक्षोवरुणयोस्तथा ॥
ब्रह्मविष्णू सदा पूज्यौ दिगीशार्चा विदुर्बुधाः ।
इन्द्रादिलोकपालानां ये मन्त्रास्ते ध्रुवादिकाः ।
स्वस्वबीजान्विताः सर्वे सचतुर्थीनमोऽन्तिकाः ॥

इति वचनात्सर्वत्र प्रणवादिनमोऽन्तेन पूजनम्। स्व-स्वबीजमाह मन्त्रदर्शने—

पृथिव्याग्निपवनाद्यन्तवरुणानिलसेश्वरैः ।
अनन्तविन्दुसंयुक्तैरर्च्याः पाशेन मायया ॥

तथा—

अन्ते यजेल्लोकपालान् मूलपारिषदान्वितान् ।
हेतिजात्यधियोपेतान्दिक्षु पूर्वादितो यजेत् ॥

सवाहनायेति क्रमदीपिका। तद्बहिः पूर्वादौ वज्राय शक्तये दण्डाय खड्गाय पाशाय अंकुशाय गदायै शूलाय पद्माय चक्राय प्रणवादिनमोऽन्तेन पूजयेत्। ततो धूपादिविसर्जनान्तं कर्म समापयेत्। अस्य पुरश्चरणं द्वात्रिंशल्लक्षजपः। तथा च—

प्रजपेन्मन्त्रविन्मन्त्रं द्वात्रिंशल्लक्षमानतः ।
त्रिस्वादुयुक्तैर्जुहुयादष्टद्रव्यैर्दशांशतः ॥

अष्टद्रव्याणि यथा—

अश्वत्थोडुम्बरप्लक्षन्यग्रोधसमिधस्तिलाः ।
सिद्धार्थपायसाज्यानि द्रव्याण्यष्टौ विदुर्बुधाः ॥

त्रिस्वाद्विति घृतमधुशर्करा इति।

पूजन—भुवनेश्वरी पूजन-यन्त्र बनाने की विधि यह है कि पहले अष्टदल पद्म बनावे। उसके बाहर वृत्त और उसके बाहर षोडशदल कमल बनावे। तब अष्टदल कमल के मध्य में षट्कोण बनावे। पद्म के बाहर चतुरस्र बनावे, जिसमें चार द्वार हों। दीक्षापद्धति के क्रम से शंख-स्थापन करके सामान्य पूजापद्धति से पीटपूजा के बाद पीठशक्तियों की पृजा करे। केशर के पूर्वादि आठ दिशाओं में ॐ जयायै नमः। ॐ विजयायै नमः। ॐ अजितायै नमः। ॐ अपराजितायै नमः। ॐ नित्यायै नमः। ॐ विलासिन्यै नमः। ॐ दोग्ध्र्यै नमः। ॐ अघोरायै नमः। मध्य बिन्दु में ॐ मङ्गलायै नमः।

भुवनेश्वरी पूजन-यन्त्र
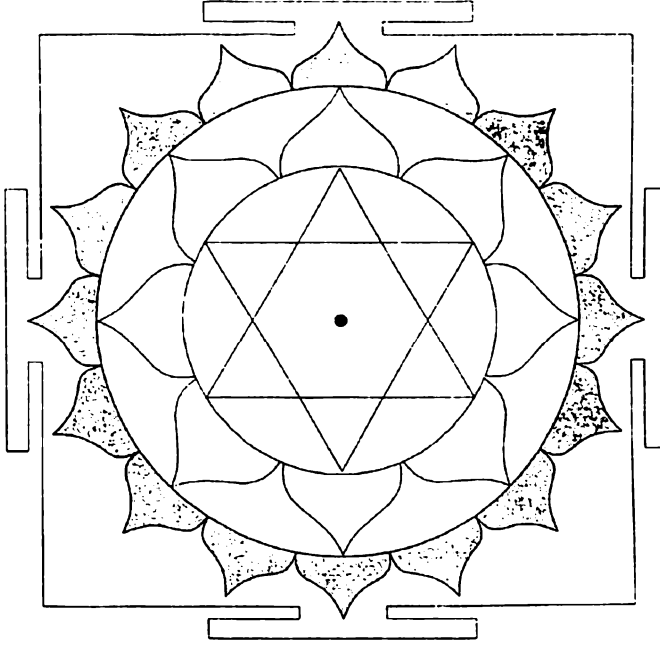
इसके बाद बीजमन्त्रसहित आवाहनादि करके मूल से मूर्ति की कल्पना करे। 'ह्रीं सर्वशक्तिकमलासनाय नमः' से आसन देकर, ध्यान करके सामान्य पूजा-पद्धति-क्रम से आवाहनादि से पञ्चपुष्पाञ्जलि दान तक सभी कार्य करके आवरण-पूजन प्रारम्भ करे।

पहले षडंग पूजा करे—ह्रां हृदयाय नमः हृदये। ह्रीं शिरसे स्वाहा शिरसि। ह्रूं शिखायै वषट् शिखायै। ह्रैं कवचाय हुं कवचे। ह्रौं नेत्रत्रयाय वौषट् त्रिनेत्रे। ह्रः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः। कर्णिकामध्य में—ॐ हल्लेखायै नमः। पूर्व में—एं गगनायै नमः। दक्षिण में—उं रक्तायै नमः। उत्तर में—इं करालिकायै नमः। पश्चिम में—अं महोच्छुष्मायै नमः।

षट्कोणों में—पूर्व में ॐ गायत्र्यै नमः ब्रह्मणे नमः। नैर्ऋत्य में ॐ सावित्र्यै नमः विष्णवे नमः। वायव्य में ॐ सरस्वत्यै नमः ॐ रुद्राय नमः। आग्नेय में ॐ श्रियै नमः, ॐ धनपतये नमः। पश्चिम में ॐ रत्यै नमः, ॐ स्मराय नमः। ईशान में ॐ पुष्ट्यै नमः, ॐ गणपतये नमः।

षट्कोण के दोनों पार्श्वों में ॐ शंखनिधये नमः, ॐ पद्मनिधये नमः से पूजन करे। इसके बाद अष्टदल पद्म में पूर्वादि क्रम से—

१. ॐ अनङ्गकुसुमायै नमः।
२. ॐ अनङ्गकुसुमातुरायै नमः।
३. ॐ अनङ्गमदनायै नमः।
४. ॐ अनङ्गमदनातुरायै नमः।
५. ॐ भुवनपालायै नमः।
६. ॐ अनङ्गवेद्यायै नमः।
७. ॐ शशिरेखायै नमः।
८. ॐ गगनरेखायै नमः।

इन आठ देवताओं का पूजन करे। षोडशदल पद्म में पूर्वादि क्रम से सोलह देवियों का पूजन करे—

१. ॐ करात्यै नमः।
२. ॐ विकरात्यै नमः।
३. ॐ उमायै नमः।
४. ॐ सरस्वत्यै नमः।
५. ॐ श्रियै नमः।
६. ॐ दुर्गायै नमः।
७. ॐ उषायै नमः।
८. ॐ लक्ष्म्यै नमः।
९. ॐ श्रुत्यै नमः।
१०. ॐ स्मृत्यै नमः।
११. ॐ धृत्यै नमः।
१२. ॐ श्रद्धायै नमः।
१३. ॐ मेधायै नमः।
१४. ॐ मत्यै नमः।
१५. ॐ कान्त्यै नमः।
१६. ॐ आर्यायै नमः।

पद्मदलों के बाहरी भाग में पूर्वादि क्रम से इन आठ देवियाँ का पूजन करे—

१. ॐ अनङ्गरूपायै नमः।
२. ॐ अनङ्गमदनायै नमः।
३. ॐ अनङ्गमदनातुरायै नमः।
४. ॐ भुवनवेगायै नमः।
५. ॐ भुवनपालिकायै नमः।
६. ॐ सर्वशिशिरायै नमः।
७. ॐ अनङ्गवेदनायै नमः।
८. ॐ अनङ्गमेखलायै नमः।

भूपुर में पूर्वादि क्रम से दश दिक्पालों का पूजन करे—

१. ॐ लां इन्द्राय देवाधिपतये सायुधाय सवाहनाय सपरिवाराय नमः।
२. ॐ रां अग्नये तेजोधिपतये सायुधाय सवाहनाय सपरिवाराय नमः।
३. ॐ यां यमाय प्रेताधिपतये सायुधाय सवाहनाय सपरिवाराय नमः।
४. ॐ क्षां निर्ऋतये रक्षोधिपतये सायुधाय सवाहनाय सपरिवाराय नमः।
५. ॐ वां वरुणाय जलाधिपतये सायुधाय सवाहनाय सपरिवाराय नमः।
६. ॐ यां वायवे प्राणाधिपतये सायुधाय सवाहनाय सपरिवाराय नमः।
७. ॐ सां सोमाय ताराधिपतये सायुधाय सवाहनाय सपरिवाराय नमः।
८. ॐ हां ईशानाय गणाधिपतये सायुधाय सवाहनाय सपरिवाराय नमः।
९. ॐ आं ब्रह्मणे प्रजाधिपतये सायुधाय सवाहनाय सपरिवाराय नमः।

(पूर्व-ईशानमध्य)

१०. ॐ ह्रीं अनन्ताय नागाधिपतये सायुधाय सवाहनाय सपरिवाराय नमः।

(नैर्ऋत्य-पश्चिममध्य)

इसके सम्बन्ध में लिखा है कि पद्म के वाहर भूपुर के ऊपर चारो दिशाओं और चारो विदिशाओं में इन्द्रादि लोकपालों का पूजन करे। पूर्व-ईशान के मध्य में ब्रह्मा की तथा नैर्ऋत्य और पश्चिम के मध्य में अनन्त की पूजा करे। चतुरस्र = भूपुर के बाहर दश लोकपालों के आयुधों का पूजन करे—

१. ॐ वज्राय नमः।
२. ॐ शक्तये नमः।
३. ॐ दण्डाय नमः।
४. ॐ खड्गाय नमः।
५. ॐ पाशाय नमः।
६. ॐ अङ्कुशाय नमः।
७. ॐ गदाय नमः।
८. ॐ शूलाय नमः।
९. ॐ पद्माय नमः।
१०. ॐ चक्राय नमः।

यहाँ तक गन्धाक्षत-पुष्प से पूजा करने के बाद सामान्य पूजापद्धति के क्रम से धूपादि-विसर्जनान्त कर्म करके पूजा समाप्त करे। भुवनेश्वरी के उक्त मन्त्र 'ह्रीं' के पुरश्चरण में बत्तीस लाख जप करे। उसका दशांश तीन लाख बीस हजार त्रिमधुर-मिश्रित अष्ट द्रव्य से हवन करे। अष्टद्रव्य में अश्वत्थ, गूलर, पाँकड़, वट की समिधा, तिल, श्वेतसरसो, पायस एवं घी आते हैं। इन्हें घी-मधु-शक्कर में मिश्रित करके हवन करना चाहिये।

मन्त्रान्तरम्

वाग्भवं शम्भुवनितारमाबीजत्रयात्मकम् ।
मन्त्रं समुद्धरेन्मन्त्री त्रिवर्गफलसाधनम् ।
न्यासपूजादिकं सर्वं पूर्ववच्च समाचरेत् ॥

षडङ्गन्यासे तु विशेषः—ऐं ह्रां अंगुष्ठाभ्यां नमः इत्यादि। तथा च निबन्धे—

षड्दीर्घभाजा बीजेन वाग्भवाद्येन कल्पयेत् ।
षडङ्गानि मनोरस्य जातियुक्तेन देशिकः ॥

ध्यानन्तु—

सिन्दूरारुणविग्रहां त्रिनयनां माणिक्यमौलिस्फुरत्
तारानायकशेखरां स्मितमुखीमापीनवक्षोरुहाम् ।
पाणिभ्यां मणिपूर्णरत्नचषकं रक्तोत्पलं बिभ्रतीं
सौम्यां रत्नघटस्थसव्यचरणां ध्यायेत्परामम्बिकाम् ॥

अस्य पुरश्चरणं द्वादशलक्षजपः; तथा च शारदायाम्—

रविलक्षं जपेन्मन्त्रं पायसैर्मधुरान्वितैः ।
दशांशं जुहुयान्मन्त्री पीठे प्रागीरिते यजेत् ॥

इति वचनात्।

द्वितीय मन्त्र—इनका दूसरा मन्त्र इस प्रकार है—वाग्भव ऐं, शम्भुवनिता ह्रीं, रमा-

बीज श्रीं अर्थात् ऐं ह्रीं श्रीं से युक्त मन्त्र से देवी की आराधना करने से अर्थ-धर्म-काम—त्रिवर्ग का लाभ होता है।

इसके षडंग न्यास में कुछ अन्तर है। जैसे—ऐं ह्रां अंगुष्ठाभ्यां नमः। ऐं ह्रीं तर्जनीभ्यां नमः। ऐं ह्रूं मध्यमाभ्यां नमः। ऐं ह्रैं अनामिकाभ्यां नमः। ऐं ह्रौं कनिष्ठाभ्यां नमः। ऐं ह्रः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः।

ऐं ह्रां हृदयाय नमः। ऐं ह्रीं शिरसे स्वाहा। ऐं ह्रूं शिखायै वषट्। ऐं ह्रैं कवचाय हुं। ऐं ह्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्। ऐं ह्रः नेत्रत्रयाय अस्त्राय फट्। इसका ध्यान इस प्रकार है—

सिन्दूरारुणविग्रहां त्रिनयनां माणिक्यमौलिस्फुरत्
तारानायकशेखरां स्मितमुखीमापीनवक्षोरुहाम्।
पाणिभ्यां मणिपूर्णरत्नचषकं रक्तोत्पलं बिभ्रतीं
सौम्यां रत्नघटस्थसव्यचरणां ध्यायेत् परामम्बिकाम्।।

भगवती भुवनेश्वरी का शरीर सिन्दूर के समान लाल रंग का है। तीन नेत्र हैं। माणिक्ययुक्त चन्द्रकला मस्तक पर है। अधर मुस्कानयुक्त हैं। दोनों स्तन अति स्थूल हैं। दो हाथों में भारी रत्नजटित पानपात्र और लाल कमल हैं। शान्त स्वरूप है। बाँयाँ पैर रत्नजटित घट के ऊपर स्थित है। इस प्रकार का ध्यान पराम्बिका का करना चाहिये।

शारदातिलक के अनुसार इनके मन्त्र 'ऐं ह्रीं श्रीं' का पुरश्चरण बारह लाख जप से होता है। जप का दशांश एक लाख बीस हजार हवन घी-मधु-शक्कर—त्रिमधुरयुक्त पायस से करना चाहिये।

मन्त्रान्तरम्

वाग्बीजपुटिता माया विद्येयं त्र्यक्षरी मता।

अस्य मन्त्रस्य पूर्ववन्न्यासः। कराङ्गन्यासौ—ऐं ह्रां ऐं अंगुष्ठाभ्यां नमः इत्यादि। ऐं ह्रां ऐं हृदयाय नमः इत्यादि। तथा च—

मध्येन दीर्घयुक्तेन वाक्पुटेन प्रकल्पयेत्।
षडङ्गानि·································।। इत्यादि।

ध्यानन्तु—

श्यामाङ्गीं शशिशेखरां निजकरैर्दानञ्च रक्तोत्पलं
रत्नाढ्यं चषकं परं भयहरं संबिभ्रतीं शाश्वतीम्।
मुक्ताहारलसत्पयोधरनतां नेत्रत्रयोल्लासिनीं
वन्देऽहं सुरपूजितां हरवधूं रक्तारविन्दस्थिताम्।।

एवं ध्यात्वा पूर्ववद्यजेत्।

अष्टपत्रेषु विशेषः—आं ब्राह्म्यै, ईं माहेश्वर्यै, ऊं कौमार्यै, ॠं वैष्णव्यै, लॄं वाराह्यै, ऐं इन्द्राण्यै, औं चामुण्डायै, अः महालक्ष्म्यै। पुनरष्टदले—अं असिताङ्गाय, इं रुरवे, उं चण्डाय, ऋं क्रोधाय, लृं उन्मत्ताय। एवं कपालिने ओं भीषणाय, अं संहाराय। नमः सर्वत्र। यद्वा—अं आं असिताङ्गब्राह्मीभ्यां नमः इत्यादि। तथा च—

दीर्घाद्या मातरः प्रोक्ता ह्रस्वाद्या भैरवाः स्मृता ।

अन्यत् सर्वं पूर्ववद्बोध्यम्। अस्य पुरश्चरणजपो दशलक्षः। त्रिमधुरान्वितैः पलाशपुष्पैर्दशांशहोमः। तथा च—

तत्त्वलक्षं जपेन्मन्त्रं जुहुयात्तद्दशांशतः ।
पलाशपुष्पैः स्वाद्वक्तैः पुष्पैर्वा राजवृक्षजैः ।

तत्त्वलक्षं दशलक्षम्—अन्तरङ्गत्वाच्छक्तेर्दशतत्त्वमिति वचनाच्च इति गुरवः। चतुर्विंशतिलक्षमिति केचित्।

तृतीय मन्त्र—श्री भुवनेश्वरी का तीसरा मन्त्र वाग्बीजपुटिता माया = ऐं ह्रीं ऐं तीन वर्णों का है। इस मन्त्र के न्यास पूर्ववत् हैं। इसका करांगन्यास इस प्रकार करे—

करन्यास	षडंगन्यास
१. ऐं ह्रां ऐं अंगुष्ठाभ्यां नमः।	१. ऐं ह्रां ऐं हृदयाय नमः।
२. ऐं ह्रीं ऐं तर्जनीभ्यां नमः।	२. ऐं ह्रीं ऐं शिरसे स्वाहा।
३. ऐं ह्रूं ऐं मध्यमाभ्यां नमः।	३. ऐं ह्रूं ऐं शिखायै वषट्।
४. ऐं ह्रैं ऐं अनामिकाभ्यां नमः।	४. ऐं ह्रैं ऐं कवचाय हुं।
५. ऐं ह्रौं ऐं कनिष्ठाभ्यां नमः।	५. ऐं ह्रौं ऐं नेत्रत्रयाय वौषट्।
६. ऐं ह्रः ऐं करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः।	६. ऐं ह्रः ऐं अस्त्राय फट्।

इसका ध्यान इस प्रकार है—

श्यामाङ्गीं शशिशेखरां निजकरैर्दानं च रक्तोत्पलं
रत्नाढ्यं चषकं परं भयहरं संविभ्रतीं शाश्वतीम्।
मुक्ताहारलसत्पयोधरनतां नेत्रत्रयोल्लासिनीम्
वन्देऽहं सुरपूजितां हरवधूं रक्तारविन्दस्थिताम्।।

भगवती भुवनेश्वरी का शरीर श्याम वर्ण का है। मस्तक पर चन्द्रमा शोभित है। अपने चार हाथों में क्रमशः वरमुद्रा, लाल कमल, रत्नजटित पात्र और अभय मुद्रा धारण किए सनातन स्वरूपा हैं। मोतियों के हार से अलंकृत हैं। पयोधरों के भार से झुकी हुई हैं। तीनों नेत्रों में उल्लास है। देवों द्वारा पूजित शिवपत्नी भगवती लाल कमल पर बैठी हुई हैं। मैं उनकी वन्दना करता हूँ। इस प्रकार ध्यान करके पूर्ववत् पूजन करे।

पद्म के अष्टदलों में आठ देवियों और आठ भैरवों का पूजन इस प्रकार करें—

१. आं ब्राह्म्यै नमः।	१. आं असिताङ्गाय नमः।
२. ईं माहेश्वर्यै नमः।	२. ईं रुरवे नमः।
३. ऊं कौमार्यै नमः।	३. ऊं चण्डाय नमः।
४. ॠं वैष्णव्यै नमः।	४. ॠं क्रोधाय नमः।
५. ॡं वाराह्यै नमः।	५. ॡं उन्मत्ताय नमः।
६. ऐं इन्द्राण्यै नमः।	६. ऐं कपालिन्यै नमः।
७. औं चामुण्डायै नमः।	७. औं भीषणाय नमः।
८. अः महालक्ष्म्यै नमः।	८. अः संहाराय नमः।

अथवा इस क्रम से अष्टदलों में पूजा करे—

१. अं आं असिताङ्गब्राह्मीभ्यां नमः।	५. ऌं ॡं उन्मत्तवराहीभ्यां नमः।
२. इं ईं रुरुमाहेश्वरीभ्यां नमः।	६. एं ऐं कपाली-इन्द्राणीभ्यां नमः।
३. उं ऊं चण्डकौमारीभ्यां नमः।	७. ओं औं भीषणचामुण्डाभ्यां नमः।
४. ऋं ॠं क्रोधवैष्णवीभ्यां नमः।	८. अं अः संहारमहालक्ष्मीभ्यां नमः।

आदि में षड् दीर्घ स्वरों को मातृकाओं में लगाया जाता है। जिसके आदि में ह्रस्व स्वर हों, उन्हें भैरव कहते हैं। अन्य सभी पूजनकर्म पूर्ववत् करे। दस लाख जप से इसका पुरश्चरण होता है। त्रिमधुराक्त पलाश के फूलों से दशांश एक लाख हवन होता है।

किसी मत से इसका जप दश लाख और किसी मत से चौबीस लाख मन्त्र-जप से इसका पुरश्चरण होता है।

मन्त्रान्तरम्

अनन्तो विन्दुसंयुक्तो मायाब्रह्माग्नितारवान् ।
पाशादिस्त्र्यक्षरो मन्त्रः सर्वकामफलप्रदः ॥

अस्यैकाक्षरीवत् ऋषिच्छन्दोदेवतान्यासः। अङ्गमन्त्रस्तु—ह्रीं अंगुष्ठाभ्यां नमः, ह्रीं हृदयाय नमः इत्यादि। सर्वत्र ह्रींबीजेन कराङ्गन्यासौ कुर्यात्। तथा च निबन्धे—

ऋष्याद्याः पूर्वमुक्ताः स्युर्बीजेनाङ्गक्रिया मता ।

ध्यानम्—

वरांकुशौ पाशमभीतिमुद्रां करैर्वहन्तीं कमलासनस्थाम् ।
बालार्ककोटिप्रतिमां त्रिनेत्रां भजेऽहमाद्यां भुवनेश्वरीं ताम् ॥

अस्याः पूजा तु एकाक्षरीवत्। अष्टदलेषु ब्राह्म्यादियुगलं पूर्ववत्पूजयेत्। षोडशदले पूजाया अनुक्तत्वात्षोडशदलाभावः। अस्य पुरश्चरणजपो दशलक्षः। दधिमधुघृताक्ताभिरश्वत्थोदुम्बरप्लक्षाणां समिद्भिस्तिलैर्दुग्धाक्तैर्दशसहस्रहोमः। तथाच

हविष्यभुग्जपेन्मन्त्रं तत्त्वलक्षं जितेन्द्रियः ।
तत्सहस्रं जुहुयाच्च जपान्ते मन्त्रवित्तमः ॥
दधिक्षौद्रघृताक्ताभिः समिद्भिः क्षीरिभूरुहाम् ।
तत्संख्यया तिलैः शुद्धैः पयोऽक्तैर्जुहुयात्ततः ॥

अत्र तत्त्वशब्देन दश उच्यन्ते शक्तेर्दश तत्त्वानीति वचनात्। अन्ये तु भुवनेश्वरीमन्त्रा न निबद्धा अप्रसिद्धत्वात्।

चतुर्थ मन्त्र—अनुस्वारयुक्त अनन्त = आं, मायाबीज = ह्रीं, ब्रह्मा = क्, अग्नि = रं तार = ऊं = क्रों—इन तीन अक्षरों—आं ह्रीं क्रों से जो मन्त्र बनता है, उससे सभी कामनाएँ पूर्ण होती हैं। इस मन्त्र के ऋषि, छन्द, देवता और न्यासादि पूर्वोक्त एकाक्षर मन्त्र ह्रीं के समान ही होते हैं।

इसका करांग न्यास निम्न प्रकार से करे—ह्रीं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः। ह्रीं तर्जनीभ्यां स्वाहा। ह्रीं मध्यमाभ्यां वषट्। ह्रीं अनामिकाभ्यां हुं। ह्रीं कनिष्ठाभ्यां वौषट्। ह्रीं करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्।

षडंग न्यास इस प्रकार करे—ह्रीं हृदयाय नमः। ह्रीं शिरसे स्वाहा। ह्रीं शिखायै वषट्। ह्रीं कवचाय हुं। ह्रीं नेत्रत्रयाय वौषट्। ह्रीं अस्त्राय फट्।

इसका ध्यान निम्न प्रकार का है—

वरांकुशौ पाशमभीतिमुद्रां करैर्वहन्तीं कमलासनस्थाम्।
बालार्ककोटिप्रतिमां त्रिनेत्रां भजेऽहमाद्यां भुवनेश्वरीं ताम्।।

भगवती भुवनेश्वरी अपने चारो हाथों में क्रमशः वरमुद्रा, अंकुश, पाश और अभय मुद्रा धारण की हुई हैं। कमल के आसन पर शोभित हैं। करोड़ों बालसूर्य के समान उनकी आभा है। तीन नेत्र हैं। ऐसी आद्या भुवनेश्वरी का भजन मैं करता हूँ।

ध्यान के बाद एकाक्षर मन्त्र 'ह्रीं' के समान पूजन करे। अष्टदलों में ब्राह्मी आदि युगल देवताओं की पूर्वोक्त क्रम से पूजा करे। इस मन्त्र में षोड़शदल में पूजन करने का उल्लेख नहीं है। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि इसमें षोड़शदल पद्म नहीं है।

इस मन्त्र का पुरश्चरण दश लाख जप से होता है। दही-मधु-घी से युक्त पीपल, गूलर या पाकड़ वृक्ष की समिधा के साथ तिल-दूध मिलाकर दस हजार हवन करे।

मतान्तर से हविष्यान्न भोजन करते हुए जितेन्द्रिय होकर दश लाख जप करे। जप के अन्त में दश हजार हवन करे। दही-मधु-घृताक्त दुधारु वृक्षों की समिधा में तिल और दूध मिलाकर हवन करे।

यहाँ पर तत्त्व शब्द से दश संख्या शक्ति के दश तत्त्वों के वचनानुसार समझना चाहिये। भुवनेश्वरी के अन्य मन्त्रों का वर्णन अप्रसिद्धि के कारण नहीं किया गया है।

अन्नपूर्णामन्त्राः

मायाहृद्भगवत्यन्ते माहेश्वरिपदं ततः ।
अन्नपूर्णे ठयुगलं मनुः सप्तदशाक्षरः ॥

कल्पे च—

प्रणवाद्या यदा देवि तदा सप्तदशाक्षरी ।
अन्नप्रदा मोक्षदा च सदा विभवदायिनी ॥
मायाद्या च यदा देवि तदा सा सकलेष्टदा ।
श्रीबीजाद्या यदा देवि तदा सुखविवर्द्धिनी ॥
वाग्बीजाद्या यदा देवि वागीशत्वप्रदायिनी ।
कामाद्या च यदा विद्या सर्वकामप्रदायिनी ॥
तारमायादिका विद्या भोगमोक्षप्रदायिनी ।
मायाश्रीबीजयुग्माद्या सदा विभवदायिनी ।
श्रीमायायुग्मबीजाद्या सर्वसम्पत्तिपूरणी ॥

अस्याः पूजाप्रयोगः—प्रातःकृत्यादि पीठन्यासान्तं कर्म विधाय हृत्पद्मस्य केशरेषु मध्ये च भुवनेश्वरीपीठमन्त्रोक्तपीठशक्तीर्विन्यस्य ऋष्यादिन्यासं कुर्यात्। तद्यथा—शिरसि ॐ ब्रह्मणे ऋषये नमः, मुखे पंक्तये छन्दसे नमः, हृदि अन्नपूर्णायै देवतायै नमः। तत्रैव—

एतेषां मन्त्रराशीनां ऋषिर्ब्रह्मा उदाहृतः ।
पंक्तिश्छन्दः समाख्यातं देवता चान्नपूर्णिका ॥

ततः कराङ्गन्यासौ—ह्रीं अंगुष्ठाभ्यां नमः, ह्रीं हृदयाय नमः इत्यादि। सर्वत्र मायाबीजेन कुर्यात्। तथा च निबन्धे—

अङ्गानि मायया कुर्यात्ततो देवीं विचिन्तयेत् ।

कल्पे च—

यद्वीजाद्या भवेद्विद्या तद्वीजेनाङ्गकल्पना ।

ततो ध्यानम्—

रक्तां विचित्रवसनां नवचन्द्रचूडामन्नप्रदाननिरतां स्तनभारनम्राम् ।
नृत्यन्तमिन्दुसकलाभरणां विलोक्य हृष्टां भजे भगवतीं भवदुःखन्त्रीम् ॥

एवं ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्य शङ्खस्थापनं कुर्यात्। ततः सामान्योक्तपीठपूजां विधाय भुवनेश्वरीमन्त्रोक्तजयादिपीठमन्वन्तां पीठपूजां विधाय पुनर्ध्यात्वा आवाहनादिपञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं कर्म विधाय आवरणपूजामारभेत्।

तद्यथा—केशरेषु अग्निकोणे ह्रीं हृदयाय नमः, नैर्ऋते ह्रीं शिरसे स्वाहा, वायव्ये ह्रीं शिखायै वषट्, ऐशान्यां ह्रीं कवचाय हुं, मध्ये ह्रीं नेत्रत्रयाय वौषट्, चतुर्दिक्षु ह्रीं अस्त्राय फट्।

अष्टदलेषु—पूर्वादिक्रमेण ब्राह्म्यै माहेश्वर्यै कौमार्यै वैष्णव्यै वाराह्यै इन्द्राण्यै चामुण्डायै महालक्ष्म्यै प्रणवादिनमोऽन्तेन पूजयेत्। तत्रैव—

दलेषु पूजयेदेताः ब्राह्म्याद्याः क्रमतः सुधीः ।

शूद्रस्य प्रणवस्थले चतुर्दशस्वरो विन्दुसंयुक्तः। कालिकापुराणे—मन्त्रस्य सेतुकरणे उक्तत्वात्। तथा च—

चतुर्दशस्वरेणाढ्यं विन्दुभूषितमस्तकम् ।
शूद्रस्य प्रणवं देवि कथितं तन्त्रवेदिभिः ॥

अतः पूर्वादौ इन्द्रादीन् वज्रादींश्च पूर्ववत्सम्पूज्य धूपादिविसर्जनान्तं कर्म समापयेत्। अस्य पुरश्चरणजपः षोडशसहस्रसंख्यः। तथा च—

यथाविधि जपेन्मन्त्रं वसुयुग्मसहस्रकम् ।
साज्येनान्नेन जुहुयात्तद्दशांशमनन्तरम् ॥

अयं मन्त्रः प्रणवादिरष्टादशाक्षरः। मायादिः श्रीबीजादिश्च। तथा मायां विना प्रणवादिः कामादिः श्रीबीजादिर्वाग्भवादिश्च सप्तदशाक्षरः कवचे तथा प्रतिपादनात्। विशेषस्तु—

यद्यद्बीजादिको मन्त्रस्तेनैवाङ्गप्रकल्पना ।

अन्नपूर्णा मन्त्र—'ह्रीं नमे भगवति महेश्वरि अन्नपूर्णे स्वाहा' यह सत्रह अक्षरों का मन्त्र है। इस मन्त्र के आरम्भ में ॐ लगाकर साधना करने से भगवती साधक को अन्न, मुक्ति और वैभव देती हैं। आरम्भ में 'ह्रीं' लगाकर जप करने से यह सभी अभीष्ट-प्रदायक होता है। श्रीबीज 'श्रीं' लगाने से सुख की वृद्धि होती है। वाग्बीज 'ऐं' लगाने से वागीशता मिलती है। कामबीज 'क्लीं' से सभी मनोकामनाएँ पूर्ण होती हैं। प्रणव और माया 'ॐ ह्रीं' लगाकर मन्त्र-साधना से भोग और मोक्ष दोनों प्राप्त होते हैं। माया और श्रीबीज लगाने से वैभव मिलता है। श्रीं-ह्रीं के योग से सर्वसम्पत्ति का लाभ होता है।

भगवती अन्नपूर्णा की पूजा-पद्धति यह है कि पहले सामान्य पूजा-पद्धति के क्रम से प्रातःकृत्यादि से पीठन्यासपर्यन्त कर्म समाप्त करके भगवती भुवनेश्वरी के पूजाक्रम में कथित विधि से हृदयकमल के केशर के मध्य में भुवनेश्वरी पीठमन्त्रोक्त पीठशक्तियों का न्यास करके इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे—शिरसि ॐ ब्रह्मणो नमः। मुखे पंक्तये छन्दसे नमः। हृदये अन्नपूर्णायै देवतायै नमः।

करन्यास—ह्रीं अंगुष्ठाभ्यां नमः। ह्रीं तर्जनीभ्यां नमः। ह्रीं मध्यमाभ्यां नमः। ह्रीं अनामिकाभ्यां नमः। ह्रीं कनिष्ठिकाभ्यां नमः। ह्रीं करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः।

षडंगन्यास—ह्रीं हृदयाय नमः। ह्रीं शिरसे स्वाहा। ह्रीं शिखायै वषट्। ह्रीं कवचाय हुं। ह्रीं नेत्रत्रयाय वौषट्। ह्रीं अस्त्राय फट्। तत्पश्चात् निम्नवत् ध्यान करे—

रक्तां विचित्रवसनां नवचन्द्रचूड़ामन्नप्रदाननिरतां स्तनभारनम्राम्।
नृत्यन्तमिन्दुशकलाभरणं विलोक्य हृष्टां भजे भगवतीं भवदुःखहन्त्रीम्।।

लाल आभा वाली, अनुपम सुन्दर वस्त्राभूषित नव चन्द्र से सुशोभित केशपाश वाली भगवती अन्नपूर्णा स्तनों के भार से झुकी हुई हैं। चन्द्रादि आभूषणों से युक्त भगवान् शिव को नृत्य करते हुए देखते प्रसन्न होकर अन्नदान करती रहती हैं। ऐसी आनन्ददायिनी भगवती का मैं भजन करता हूँ।

इस प्रकार ध्यान करके मानसोपचार से पूजा करके शंखस्थापन करे। तब सामान्य पूजा-पद्धति के क्रम से पीठपूजा करे। भगवती भुवनेश्वरी की पूजा-पद्धति-क्रम से पीठदेवता और पीठशक्तियों की पूजा करे। तब ध्यान-आवाहनादि करके पञ्च पुष्पाञ्जलि दान करे। इसके बाद आवरण पूजन आरम्भ करे। जैसे—

केशर में षडंग पूजन करे—अग्निकोणे ह्रीं हृदयाय नमः। नैर्ऋते ह्रीं शिरसे स्वाहा। वायव्ये ह्रीं शिखायै वषट्। ऐशान्यां ह्रीं कवचाय हुं। मध्ये ह्रीं नेत्रत्रयाय वौषट्। चतुर्दिक्षु ह्रीं अस्त्राय फट्।

अष्टदलों में पूर्वादि क्रम से—ॐ ब्राह्म्यै नमः। ॐ माहेश्वर्यै नमः। ॐ कौमार्यै नमः। ॐ वाराह्यै नमः। ॐ इन्द्राण्यै नमः। ॐ चामुण्डायै नमः। ॐ महालक्ष्म्यै नमः। शूद्र साधक के लिये चौदहवाँ स्वर 'औं' ही प्रणव होता है।

इसके बाद पूर्वादि दिशाओं में भुवनेश्वरी मन्त्रोक्त इन्द्रादि दश दिक्पालों और उनके वज्रादि अस्त्रों की पूजा करके धूपादि से विसर्जन तक के सभी कर्म समाप्त करके पूजन समाप्त करे।

इस मन्त्र का पुरश्चरण सोलह हजार जप का होता है। जप का दशांश सोलह सौ हवन घृताक्त अन्न से करे।

इस मन्त्र के प्रारम्भ में प्रणव 'ॐ' का योग करने से यह अट्ठारह अक्षरों का मन्त्र हो जाता है। इसी प्रकार ह्रीं-श्रीं के योग से भी यह अट्ठारह अक्षरों का मन्त्र होता है; किन्तु मायाहीन प्रणवादि, श्रीबीजादि और वाग्बीजादि के संयोग होने पर यह सप्तदशाक्षर ही माना जाता है।

इसके सम्बन्ध मे यह विशेष कर ज्ञातव्य है कि जिस बीज को मन्त्र के पहले लगाकर साधना करे, उसी बीज के द्वारा करांगन्यास करे।

त्रिपुटामन्त्रा:

श्रीमायामदनैः प्रोक्तो मन्त्रो बीजत्रयात्मकः ।

तत्र पूजायन्त्रम्; तदुक्तं दशपटल्याम्—

षट्कोणं पूर्वमालिख्य मध्ये विद्यां लिखेत्सुधीः ।
वीप्सया तान्तु षट्कोणकोणेषु क्रमतो लिखेत् ॥
वाह्ये वसुदलं कुर्याद्दीर्घस्वरविभूषितम् ।
चतुरस्रं चतुर्द्वारभूषितं मण्डलं लिखेत् ।
मध्ये देवीं समावाह्य ध्यायेत्सर्वसमृद्धिदाम् ॥

अस्याः पूजाप्रयोगः—ततः प्रातःकृत्यादि पीठन्यासान्तं कर्म विधाय भुवनेश्वरीमन्त्रोक्तजयादिपीठमन्वन्तं विन्यस्य ऋष्यादिन्यासं कुर्यात्। तद्यथा—शिरसि सम्मोहनाय ऋषये नमः, मुखे गायत्र्यै छन्दसे नमः, हृदि त्रिपुटायै देवतायै नमः।

ततः कराङ्गन्यासौ—श्रीं अंगुष्ठाभ्यां नमः। ह्रीं तर्जनीभ्यां स्वाहा, क्लीं मध्यमाभ्यां वषट्, श्रीं अनामिकाभ्यां हुं, ह्रीं कनिष्ठाभ्यां वौषट्, क्लीं करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्। एवं श्रीं हृदयाय नमः इत्यादि। तथा च निबन्धे—

ऋषिः सम्मोहनश्छन्दो गायत्री देवता पुनः ।
त्रिपुटाख्या द्विरुक्तैस्तद्बीजैरङ्गानि षट्क्रमात् ॥

ततो ध्यानम्—

पारिजातवने रम्ये मण्डपे मणिकुट्टिमे ।
रत्नसिंहासने रम्ये पद्मे षट्कोणशोभिते ।
अधस्तात्कल्पवृक्षस्य निषण्णां देवतां स्मरेत् ॥
चापं पाशाम्बुजसरसिजान्यंकुशं पुष्पबाणान्
संविभ्राणां करसरसिजैः रत्नमौलिं त्रिनेत्राम् ।
हेमाब्जाभां कुचभरनतां रत्नमञ्जीरकाञ्चीं
ग्रैवेयाद्यैर्विलसिततनुं भावयेच्छक्तिमाद्याम् ॥
चामरादर्शताम्बूलकरण्डकसमुद्गकान् ।
वहन्तीभिः कुचार्त्ताभिर्दूतीभिः परिवारिताम् ।
करुणामृतवर्षिण्या पश्यन्तीं साधकं दृशा ॥

अम्बुजं पद्मं न तु शङ्खं, दधतीं पद्मयुगलमिति दक्षिणामूर्तिवचनात्। एवं ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्य शङ्खस्थापनं कुर्यात्। ततः सामान्यपूजापद्धत्युक्तपीठपूजां विधाय केशरेषु भुवनेश्वरीमन्त्रोक्तजयादिपीठमन्वन्तं सम्पूज्य पुनर्ध्यात्वा आवाहना-

दिपञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं विधाय आवरणपूजां कुर्यात्। तद्यथा—

अग्न्यादिषट्कोणेषु ॐ लक्ष्म्यै नमः, ॐ हरये नमः। एवं गौर्यै, शिवाय, रत्यै, कामाय, षट्कोणस्योभयतः पार्श्वयोः ॐ शङ्खनिधये नमः, ॐ पद्मनिधये नमः। ततः केशरेषु अग्न्यादिकोणचतुष्टयेषु मध्ये दिक्षु च श्रीं हृदयाय नमः इत्यादिना षडङ्गानि पूजयेत्। ततः पत्रेषु ब्राह्म्याद्या मातरः पूज्याः। तथा च निबन्धे—

हृल्लेखाविहिते पीठे पूजयेत्तां समाहितः ।
अग्न्यादिषट्सु कोणेषु लक्ष्म्याद्याः पूजयेद्ध्रुवम् ।।
लक्ष्मीं हेमप्रभां तन्वीं सवराब्जयुगाभयाम् ।
शङ्खचक्रगदाम्भोजधरं हेमनिभं हरिम् ।।
पाशांकुशाभयाभीष्टधरां गौरीं जवारुणाम् ।
मृगटङ्काभयाभीष्टधरं हेमनिभं हरम् ।।
नीलोत्पलकरां सौम्यां रतिं काञ्चनसन्निभाम् ।
धृतपाशांकुशेष्वासं पुष्पेक्षुमरुणं स्मरन् ।।
पूर्ववन्निधियुग्मन्तु यजेदुभयपार्श्वयोः ।
बहिरङ्गानि सम्पूज्य पूज्याः पत्रेषु मातरः ।। इति।

तद्बहिरिन्द्रादीन् वनितारूपान् पूजयेत्। निबन्धे—

लोकेशान् वनितारूपानर्चयेत्सौम्यविग्रहान् ।

ततो धूपादिविसर्जनान्तं कर्म समापयेत्। अस्य पुरश्चरणजपो द्वादशलक्षः। तथा च—

भानुलक्षं जपेदेनं मनुं तावत्सहस्रकम् ।
विल्वारग्वधसम्भूतैर्मधुराक्तैः समिद्वरैः ।
जवापुष्पैश्च जुहुयात्तोषयेद्वसुना गुरुम् ।।

आरग्वधः शोणालुः। अयं मन्त्रस्त्रिधा भवति—

परादिर्वा भवेद्देवि कामादिर्वा भवेदियम् ।

इति दक्षिणामूर्त्तिवचनात्।

त्रिपुटा-मन्त्र—श्रीं ह्रीं क्लीं—यह तीन अक्षर का त्रिपुटा का मन्त्र है। त्रिपुटा यन्त्र के मध्य में सर्वसमृद्धिदायिनी त्रिपुटा देवी का आवाहन करके ध्यान करे।

सामान्य पूजा पद्धति के क्रम से प्रातःकृत्यादि पीठन्यासान्त कर्म समाप्त करके भगवती भुवनेश्वरी की पूजा-पद्धति के अनुसार पीठशक्तियों का न्यास करे—ॐ जयायै

नम:। ॐ विजयायै नम:। ॐ अजितायै नम:। ॐ अपराजितायै नम:। ॐ नित्यायै नम:। ॐ विलासिन्यै नम:। ॐ दोग्ध्र्यै नम:। ॐ अघोरायै नम:।

ऋष्यादिन्यास—सम्मोहनऋषये नम: शिरसि। गायत्रीछन्दसे नम: मुखे। त्रिपुटायै देवतायै नम: हृदि।

करन्यास—श्रीं अंगुष्ठाभ्यां नम:। ह्रीं तर्जनीभ्यां नम:। क्लीं मध्यमाभ्यां वषट्। श्रीं अनामिकाभ्यां हुं। ह्रीं कनिष्ठाभ्यां वौषट्। क्लीं करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्।

षडंगन्यास—श्रीं हृदयाय नम:। ह्रीं शिरसे स्वाहा। क्लीं शिखायै वषट्। श्रीं कवचाय हुं। ह्रीं नेत्रत्रयाय वौषट्। क्लीं अस्त्राय फट्। इसके बाद निम्नवत् ध्यान करे—

पारिजातवने रम्ये मण्डपे मणिकुट्टिमे।
रत्नसिंहासने रम्ये पद्मे षट्कोणशोभिते।
अधस्तात्कल्पवृक्षस्य निषण्णां देवतां स्मरेत्।।
चापं पाशाम्बुजसरसिजान्यंकुशं पुष्पवाणान्
संविभ्राणां करसरसिजै रत्नमौलिं त्रिनेत्राम्।
हेमाब्जाभां कुचभरनतां रत्नमञ्जीरकाञ्चीम्
ग्रैवेयाद्यैर्विलसिततनुं भावयेच्छक्तिमाद्याम्।।
चामरादर्शताम्बूलकरण्डकसमुद्गकान् ।
वहन्तीभि: कुचार्त्ताभिर्दूतीभि: परिवारिताम्।
करुणामृतवर्षिन्यां पश्यन्तीं साधकं दृशा।।

सुन्दर पारिजात-वन के मध्य में मणिजटित मण्डप में मनोहर रत्नसिंहासन पर षट्कोण चक्र के ऊपर सुशोभित कमल में कल्पवृक्ष के नीचे बैठी हुई देवी त्रिपुटा का स्मरण करना चाहिये। वे अपने चार कर-कमलों में धनुष-पाश-दो कमल-अंकुश और पुष्प-वाण ग्रहण की हुई हैं। मस्तक पर रत्नमुकुट है, तीन नेत्र हैं, शरीर की आभा स्वर्ण-कमल के समान है। स्तनों के भार से झुकी हुई हैं। रत्नों के बने नूपुर और चन्द्रहार धारण की हुई हैं। कण्ठहार आदि आभूषणों से शरीर सुशोभित है। स्तनों के भार से झुकी हुई हैं। दूतियाँ चारो ओर से चँवर, दर्पण, ताम्बूल और सिन्दूर की डिब्बी ली हुई देवी त्रिपुटा को घेर कर खड़ी हैं। दयारूपी अमृत की वर्षा करने वाली दृष्टि से भगवती साधक को देख रही हैं।

उक्त ध्यान में 'अब्ज' शब्द का अर्थ कमल है, शंख नहीं; क्योंकि दक्षिणा-मूर्तिवचन से यह स्पष्ट है कि भगवती त्रिपुटा दो कमल धारण की हुई हैं। इस प्रकार ध्यान करके मानसोपचार से पूजा करे। शंख-स्थापन करे। फिर सामान्य पूजा पद्धति के क्रम से पीठपूजापर्यन्त कर्म करके केशर में भगवती का पूजन पद्धति के अनुसार करे। जया आदि

पीठशक्तियों की पूजा करे। तब ध्यान-आवाहन से पञ्च पुष्पाञ्जलि दानपर्यन्त सभी कार्य करे। इसके बाद आवरण-पूजन करे।

आग्नेयादि षट् कोणों में—ॐ लक्ष्म्यै नमः। ॐ हरये नमः। ॐ गौर्यै नमः। ॐ शिवायै नमः। ॐ रत्यै नमः। ॐ कामायै नमः। षट्कोण के दोनों बगलों में ॐ शंख-निधये नमः, ॐ पद्मनिधये नमः।

इसके बाद केशर में अग्नि आदि चारो कोनों, मध्य और दिशाओं में षडंग पूजा करे—श्रीं हृदयाय नमः। श्रीं शिरसे स्वाहा। श्रीं शिखायै वषट्। श्रीं कवचाय हुं। श्रीं नेत्रत्रयाय वौषट्। श्रीं अस्त्राय फट्।

इसके बाद आठ दलों में—ॐ ब्राह्मयै नमः। ॐ माहेश्वर्यै नमः। ॐ नारायण्यै नमः। ॐ कौमार्यै नमः। ॐ अपराजितायै नमः। ॐ चामुण्डायै नमः। ॐ वाराह्यै नमः। ॐ नारसिंह्यै नमः से आठ देवियों का पूजन करे।

निबन्धग्रन्थ में षट्कोणों की पूज्य देवियों का ध्यान इस प्रकार का दिया है—

१. लक्ष्मी—लक्ष्मीं हेमप्रभां तन्वीं सवराब्जयुगाभयाम्।
२. हरि—शंखचक्रगदाम्भोजधरे हेमनिभं हरिम्।
३. गौरी—पाशांकुशभयाभीष्टधरां गौरीं जवारुणाम्।
४. हर—मृगटंकाभयाभीष्टधरं हेमनिभं हरिम्।
५. रति—नीलोत्पलकरां सौम्यां रतिं काञ्चनसन्निभाम्।
६. स्मर—धृतपाशांकुशेष्वासं पुष्पेक्षुमरुणं स्मरम्।

१. लक्ष्मी—स्वर्णवर्णा, इकहरे शरीर वाली, वरमुद्रा, दो कमल तथा अभय मुद्रायुक्त हैं।
२. हरि (विष्णु)—शंख-चक्र-गदा-पद्म से युक्त स्वर्णवर्ण के हैं।
३. गौरी—जवापुष्प के समान लाल वर्णा हैं। पाश, अंकुश, अभय और वर मुद्रा से युक्त हैं।
४. हर (शिव)—स्वर्णवर्ण हैं। मृगटंक, अभय और वरमुद्रा से युक्त हैं।
५. रति—स्वर्णवर्णा, सौम्यरूपा, नीलकमल हाथ में है।
६. कामदेव—अरुणवर्ण, पाश, अंकुश, धनुष और पुष्पबाण से युक्त हैं।

उक्त प्रकार से ध्यान करके पूजन करे। दोनों पार्श्वों में दोनों निधियों का पूजन करे। पद्म के बाहर अंगदेवताओं का पूजन करे। पद्मदलों में अष्ट मातृकाओं का पूजन करे। तब भूपुर में स्त्रीमूर्तिधारी इन्द्रादि लोकपालों का पूजन करे। इसके बाद धूपादि से विसर्जन तक का कर्म सम्पूर्ण करे।

इस मन्त्र का पुरश्चरण बारह लाख जप से होता है। त्रिमधुराक्त वेल या आरग्वध

समिधा या जवापुष्प द्वारा हवन होता है। धन देकर गुरु को सन्तुष्ट करे।

यह त्रिपुटा मन्त्र तीन प्रकार का है—१. परादि ह्रीं श्रीं क्लीं, २. कामादि क्लीं श्रीं ह्रीं एवं ३. श्रीबीजादि श्रीं ह्रीं क्लीं।

त्रिपुटा यन्त्र
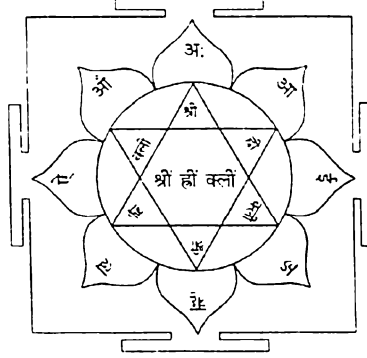
त्वरितामन्त्राः

अथाभिधास्ये त्वरितां त्वरितं फलदायिनीम् ।
तारो माया वर्मबीजम् ऋद्धिरीशस्वरान्विता ।।
कूर्मस्तदन्त्यो भगवान् क्षस्त्री दीर्घतनुच्छदम् ।
संवर्त्तो भगवान् माया फडन्तो द्वादशाक्षरः ।।

माया भुवनेशी, वर्म हुं, ऋद्धिः खकारः, ईश्वरः एकारः, कूर्मश्चकारः, तदन्त्यश्छकारः, भग एकारस्तद्युक्तः क्षः, स्त्री स्वरूपं, दीर्घतनुच्छदं हुं, संवर्त्तः क्षकारः भग एकारस्तद्युक्तः क्षः, पुनर्भुवनेश्वरी फट्। अस्यार्जुनऋषिर्विराट् छन्दः त्वरिता देवता पुरुषार्थचतुष्टयसिद्ध्यर्थे विनियोगः। तथा च निबन्धे—

मुनिरर्जुन आख्यातो विराट् छन्द उदाहृतम् ।
त्वरिता देवता प्रोक्ता पुरुषार्थफलप्रदा ।।

अस्याः पूजापद्धतिः; तत्र पूजायन्त्रं दक्षिणामूर्त्तौ—

अष्टपत्रं लिखेत्पद्मं बहिर्भूविन्द्वमालिखेत् ।
प्रत्येकं वसुकोणेषु कवचञ्चाष्टधा लिखेत् ।।
मध्ये तु भुवनेशानीं वेष्टयेन्मातृकाक्षरैः ।
सर्वरक्षाकरं नाम यन्त्रमेतदुदाहृतम् ।
यत्रावाह्य महेशानीमुपचारैः समर्चयेत् ।।

ततः प्रातःकृत्यः पीठादि न्यासान्तं कर्म समाप्य केशरेषु भुवनेश्वरीमन्त्रोक्त-जयादिपीठशक्तीर्विन्यस्य मध्ये क्षं हुं हं वज्रदेह घुरु घुरु हिंगुलु हिंगुलु गर्ज गर्ज हं हूं क्षां पञ्चाननाय नमः—इति मन्त्रं न्यसेत्। तथा च निबन्धे—

संवर्त्तको विन्दुयुतः कवचं सकलं वियत्।
वज्रदेह घुरुद्वन्द्वमाभाष्य हिंगुलुद्वयम्॥
गर्ज गर्ज वियत्सेन्दु वर्मान्त्यो दीर्घविन्दुवान्।
पञ्चाननाय हृदयं पीठमन्त्रः प्रकीर्त्तितः॥

ततः ऋष्यादिन्यासः—शिरसि अर्जुनऋषये नमः, मुखे विराट् छन्दसे नमः, हृदि त्वरितायै देवतायै नमः।

ततो मन्त्रन्यासः—मूर्ध्नि ॐ नमः, भाले हुं नमः, गले खे नमः, हृदि च नमः, नाभौ छे नमः, गुह्ये क्ष नमः, ऊर्वो स्त्री नमः, जानुनोः हूं नमः, जङ्घयोः क्षे नमः, पादद्वन्द्वे फट् नमः। मूलेन व्यापकं कुर्यात्। तथा च निबन्धे—

मायाविवर्जितान् वर्णान् मूर्ध्नि भाले गले हृदि।
नाभिगुह्योरुयुगे च जानुजङ्घापदेषु च।
विन्यस्य व्यापकं कुर्यात्समस्तेनैव साधकः॥

ततः कराङ्गन्यासौ—चछे अंगुष्ठाभ्यां नमः, छेक्ष तर्जनीभ्यां स्वाहा, क्षस्त्री मध्यमाभ्यां वषट्, स्त्रीहुं अनामिकाभ्यां हुं, हूंक्षे कनिष्ठाभ्यां वौषट्, क्षेफट् करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्। एवं चक्षे हृदयाय नमः इत्यादिना हृदयादिषु। तथा च निबन्धे—

कूर्माद्यैः सप्तभिर्वर्णैः पूर्वपूर्वविवर्जितैः।
द्वाभ्यां द्वाभ्यां षडङ्गानि कुर्यात्साधकसत्तमः॥

ततो ध्यानम्—

श्यामां बर्हिकलापशेखरयुतामाबद्धपर्णांशुकां
गुञ्जाहारलसत्पयोधरनतामष्टाहिपान् बिभ्रतीम्।
ताटङ्काङ्गदमेखलागुणरणन् मञ्जीरतां प्रापितान्
कैरातीं वरदाभयोद्यतकरां देवीं त्रिनेत्रां भजे॥

एवं ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्य शङ्खस्थापनं कुर्यात्। ततः सामान्योक्तपीठपूजां विधाय पद्मस्य केशरेषु पूर्वादिक्रमेण जया-विजया-अजिता-अपराजिता-नित्या-विलासिनी-दोग्ध्री-अघोरा-मङ्गलाः प्रणवादिनमोऽन्तेन पूज्याः। मध्ये क्षं हुं हं वज्रदेह घुरु घुरु हिंगुलु हिंगुलु गर्ज गर्ज हं हूं क्षां पञ्चाननाय नमः। ततः पूर्ववद्

ध्यात्वा आवाहनादि पञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं विधाय आवरणपूजामारभेत्। अग्न्या-दिकोणेषु चछे गायत्र्यै हृदयाय नमः, छेक्ष गायत्र्यै शिरसे स्वाहा, क्षस्त्री गायत्र्यै शिखायै वषट्, स्त्रीहूं गायत्र्यै कवचाय हुं, हूंक्षे गायत्र्यै नेत्रत्रयाय वौषट्। दिक्षु क्षे फट् गायत्र्यै अस्त्राय फट् इति सम्पूज्य उत्तरेशानयोः प्रणीतां गायत्रीञ्च पूजयेत्। तथा च निबन्धे—

अङ्गैः प्रणीतां गायत्रीं केशरेष्वर्चयेत्क्रमात् ।
दलेषु पूजयेदेताः श्रीबीजाद्याः सुभूषिताः ॥
हुंकारीं खेचरीं चण्डां छेदिनीं क्षेपिणीं स्त्रियम् ।
हूंकारीं क्षेमकारीञ्च लोके सायुधभूषणाम् ।
फट्कारीमग्रतो वाह्ये कोदण्डशरधारिणीम् ॥

वाक्यन्तु—श्रीं हुंकार्यै नमः, वाह्ये अग्रतः ॐ फट्कारिण्यै नमः इत्यादि। द्वारस्योभयपार्श्वयो—ॐ जयायै नमः, ॐ विजयायै नमः। तद्बाह्ये—किङ्कराय रक्ष रक्ष त्वरिताज्ञास्थिरो भव हुं फट् इति मन्त्रेण किङ्करां पूजयेत्। तथा च निबन्धे—

द्वारस्य पार्श्वयोः पूज्ये हेमवेत्रकराम्बुजे ।
जयाख्या विजयाख्या च किङ्कराय पदं ततः ॥
रक्ष रक्ष पदस्यान्ते त्वरिताज्ञास्थिरो भव ।
वर्मास्त्रान्तेन मनुना किङ्करं तद्बहिर्यजेत् ।
लगुडं विभ्रतं कृष्णं कृष्णचर्चरमूर्द्धजम् ॥
आरण्यैररुणैः पुष्पैरतिरम्यैः सुगन्धिभिः ।
पूजयेद्धूपदीपाद्यैर्नृत्यगीतैर्महोत्सवैः ॥ इति।

अत्र न इन्द्रादिपूजा अनुक्तत्वात्। ततो धूपादिविसर्जनान्तं कर्म समापयेत्। अस्य पुरश्चरणजपो लक्षसंख्यकः। तद्दशांशं बिल्वस्य समिद्वरैस्त्रिमध्वक्तैर्होम-येत्। तथा च—

लक्षं सञ्जप्य मन्त्रज्ञो मन्त्रमेनं जितेन्द्रियः ।
दशांशं जुहुयाद्बिल्वैस्त्रिमध्वक्तैः समिद्वरैः ॥

त्वरिता—ॐ ह्रीं हुं खेचछे क्ष स्त्रीं हूँ क्ष एं ह्रीं फट्—यह त्वरिता का द्वादशाक्षर मन्त्र है । त्वरिता देवी का यह द्वादशाक्षर मन्त्र शीघ्र फलदायी है। तार = ॐ, माया = ह्रीं, वर्मबीजं = हूं, ईश्वर = ए युक्त ऋद्धि = खे, कूर्म = च, छ, भग = ए से युक्त छे, क्ष स्त्री दीर्घ वर्म = हूँ, सेवते = क्ष, भग = ए, माया = ह्रीं और फट् के संयोग से यह मन्त्र उद्धृत होकर—ॐ ह्रीं हुं खे च छे क्ष स्त्रीं हूं क्ष ए ह्रीं फट् बनता है। इसमें बारह अक्षर होते हैं।

विनियोग—इस मन्त्र के ऋषि अर्जुन, छन्द विराट्, देवता त्वरिता, चतुर्वर्ग पुरुषार्थ-सिद्धि के लिये विनियोग।

इसका पूजन यन्त्रसाधकों का सर्वरक्षाकारक है। इसमें देवी त्वरिता का आवाहन करके यथाशक्ति उपचारों से पूजन करे। पहले सामान्य पूजा पद्धति के क्रम से प्रातःकृत्यादि पीठन्यासान्त तक के कर्मों को करे।

केशर में भगवती भुवनेश्वरी मन्त्रोक्त जयादि पीठशक्तियों का न्यास करके मध्य में निम्न पीठमन्त्र का न्यास करे—

क्षं हुं हं वज्रदेहे घुर घुर हिंगुल हिंगुल गर्ज गर्ज हूं हूं क्षां पञ्चाननाय नमः।

ऋष्यादि न्यास—अर्जुनऋषये नमः शिरसि। विराट् छन्दसे नमः मुखे। त्वरितादेवतायै नमः हृदि।

मन्त्रन्यास—ॐ नमः मूर्ध्नि, हुं नमः भाले। खें नमः गले। चं नमः हृदि। छं नमः नाभौ। क्षं नमः गुह्ये। स्त्रीं नमः ऊर्वोः। हूं नमः जानुनी। क्षे नमः जंघयो। फट् नमः पादद्वन्द्वे।

इसके बाद मूल मन्त्र से व्यापक न्यास करके करांगन्यास करे।

करन्यास—चछे अंगुष्ठाभ्यां नमः। छे क्ष तर्जनीभ्यां स्वाहा। क्षस्त्रीं मध्यमाभ्यां वषट्। स्त्री हुं अनामिकाभ्यां हुं। हुं क्षें कनिष्ठाभ्यां वौषट्। क्षें फट् करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः।

षडंग न्यास—चछे हृदयाय नमः। छेक्ष शिरसे स्वाहा। क्षस्त्रीं शिखायै वषट्। स्त्री हुं कवचाय हुं। हुं क्ष नेत्रत्रयाय वौषट्। क्षं फट् अस्त्राय फट्। इसके बाद ध्यान करे —

श्यामां बर्हिकलापशेखरयुतामाबद्धपर्णांशुकाम्
गुञ्जाहारलसत्पयोधरनतामष्टाहिपान् बिभ्रतीम्।
ताटंकांगदमेखलागुणरणन् मञ्जीरतां प्रापितान्
कैरातीं वरदाभयोद्यतकरां देवीं त्रिनेत्रां भजे।।

भगवती त्वरिता श्यामवर्णा हैं। मस्तक पर मयूरपुच्छ का मुकुट और पत्तों का बना वस्त्र है। गुंजों की माला से सुशोभित स्तनों के भार से झुकी हुई हैं। आठ नागों को ताटंक, वलय, चन्द्रहार, करधनी, नूपुर के रूप में धारण की हुई हैं। किरातवंश की देवी त्रिनयना हैं। वर एवं अभय देने को उद्यत हाथों वाली देवी का मैं भजन करता हूँ।

इस प्रकार से देवी त्वरिता का ध्यान करके मानस पूजन करे। तब शंखस्थापन करे। सामान्य पूजा पद्धति के अनुसार पीठपूजा करे। केशर में पूर्वादि क्रम से पीठशक्तियों का पूजन करे। ॐ जयायै नमः। ॐ विजयायै नमः। ॐ अजितायै नमः। ॐ नित्यायै नमः। ॐ विलासिन्यै नमः। ॐ दोग्ध्र्यै नमः। ॐ अघोरायै नमः। ॐ मंगलायै नमः।

केशर के मध्य में क्षं हुं हं वज्रदेहे घुर घुर हिंगुल हिंगुल गर्ज गर्ज हं हूं क्षां पञ्चाननाय नम: से पूजा करे। पूर्ववत् ध्यान-आवाहन करके पुष्पाञ्जलि तक सभी कार्य करके आवरणपूजन करे।

षडंगपूजन—आग्नेयादि कोणों में—चछे गायत्र्यै हृदयाय नमः। छेक्ष गायत्र्यै शिरसे स्वाहा। क्षस्त्री गायत्र्यै शिखायै वषट्। स्त्री हूँ गायत्र्यै कवचाय हुं। हुं क्षे गायत्र्यै नेत्रत्रयाय वौषट्। दिशाओं में—क्षे फट् गायत्र्यै अस्त्राय फट्। इसके बाद उत्तर दिशा में प्रणीता तथा गायत्री की पूजा करे। पद्मदलों में श्रीबीज आगे लगाकर इन देवियों का पूजन करे। जैसे—

१. श्री हुंकार्यै नमः। २ श्रीं खेचर्यै नमः। ३ श्रीं चण्डायै नमः। ४ श्रीं छेदिन्यै नमः। ५ श्रीं क्षेपिण्यै नमः। ६. श्रीं स्त्रियै नमः। ७. श्रीं हुंकार्यै नमः। ८. सायुधभूषणाय नमः। इसके बाद पद्मदल के बाहर धनुर्वाणधारिणी फट्कारिणी का पूजन करे। इसका पूजन श्रीं फट्कारिण्यै नम: से करे।

द्वार के दोनों पार्श्वों में ॐ जयायै नम:, ॐ विजयायै नम: से पूजा करे। उसके बाद 'किंकराय रक्ष-रक्ष त्वरिताऽऽज्ञा स्थिरो भव हुं फट्' से किंकर की पूजा करे।

त्वरिता यन्त्र

निबन्ध में लिखा है कि पद्महस्ता, स्वर्णवस्त्रधारिणी जया-विजया की पूजा करे। किंकर लगुडधारी, कृष्णवर्ण और कृष्णकेश है। सुगन्धित लाल वनपुष्प, धूप, दीप द्वारा पूजन करके गीतवाद्य से महोत्सव मनावे।

प्रमाण में उल्लिखित होने से इस देवता की पूजा में इन्द्रादि लोकपालों और उनके अस्त्रों का पूजन नहीं होता है। इसके बाद धूपादि विसर्जनपर्यन्त कर्म समाप्त करके पूजा पूर्ण करे।

इस मन्त्र का पुरश्चरण एक लाख जप और त्रिमधुराक्त बेल की समिधा से दश हजार हवन से होता है।

नित्यामन्त्र:

वाग्भवं कामबीजञ्च नित्यक्लिन्ने मदौ पुनः ।
द्रवे वह्निवधूर्मन्त्रो द्वादशार्णोऽयमीरितः ॥

अस्याः पूजाप्रयोगः—प्रातःकृत्यादिपीठन्यासान्तं विधाय केशरेषु पूर्वादिक्रमेण जयादि ह्रीं सर्वशक्तिकमलासनाय नमः इत्यन्तं विन्यस्य ऋष्यादिन्यासं समाचरेत्। तद्यथा—शिरसि सम्मोहनऋषये नमः, मुखे निवृच्छन्दसे नमः, हृदि नित्यायै देवतायै नमः। तथा च निबन्धे—

ऋषिः सम्मोहनश्छन्दो निवृन्नित्या च देवता । इति ।

ततः कराङ्गन्यासौ—ऐं अंगुष्ठाभ्यां नमः, ऐं तर्जनीभ्यां स्वाहा, ऐं मध्यमाभ्यां वषट्, ऐं अनामिकाभ्यां हुं, ऐं कनिष्ठाभ्यां वौषट्, ऐं करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्। एवं हृदयादिषु ऐं हृदयाय नमः इत्यादिना षडङ्गेषु न्यसेत्। तथा च निबन्धे—

वाचा कृत्वा षडङ्गानि नित्यां ध्यायेद्यथाविधि।

ततो ध्यानम्—

अर्द्धेन्दुमौलिमरुणाममराभिवन्द्यामम्भोजपाशसृणिपूर्णकपालहस्ताम् ।
रक्ताङ्गरागवसनाभरणां त्रिनेत्रां ध्यायेच्छिवस्य वनितां मदविह्वलाङ्गीम् ॥

एवं ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्य शङ्खस्थापनं कुर्यात्। ततः पीठपूजां विधाय केशरेषु जयादिपीठशक्तीः सम्पूज्य मध्ये ह्रीं सर्वशक्तिकमलासनाय नमः इत्यन्तं सम्पूज्य पुनर्ध्यात्वा आवाहनादिपञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं विधाय आवरणपूजा-मारभेत्।

तद्यथा—अग्न्यादिकोणचतुष्टये मध्ये दिक्षु च ऐं हृदयाय नमः, ऐं शिरसे स्वाहा, ऐं शिखायै वषट्, ऐं कवचाय हुं, मध्ये ऐं नेत्रत्रयाय वौषट्, चतुर्दिक्षु ऐं अस्त्राय फट्। अष्टदलेषु ॐ नित्यायै, निरञ्जनायै, क्लिन्नायै, क्लेदिन्यै, मदनातुरायै, मदद्रवायै, द्राविण्यै, द्रविण्यै सर्वत्र प्रणवादिनमोऽन्तेन पूजयेत्। तथा च निबन्धे—
नित्या निरञ्जना क्लिन्ना क्लेदिनी मदनातुरा ।
मदद्रवा द्राविणी च द्रविणीत्यष्टशक्तयः ।

नीलोत्पलकपालाढ्यकरा रक्ताम्बुजप्रभा ।। इति।

तद्बाह्ये इन्द्रादीन् वज्रादींश्च पूजयेत्। ततो धूपादिविसर्जनान्तं कर्म समापयेत्। अस्य पुरश्चरणजपश्चतुर्लक्षः। तथा च—

चतुर्लक्षं जपित्वा च मधुराक्तैर्मधूकजैः ।
कुसुमैरयुतं हुत्वा तोषयेद् गुरुमात्मनः ।।

नित्या—मन्त्र है—ऐं क्लीं नित्यक्लिन्ने मदद्रवे स्वाहा। यह द्वादशाक्षर है।

सामान्य पूजा पद्धति क्रम से प्रात:कृत्यादि से पीठन्यास तक कर्म करे। केशर में जया आदि पीठशक्तियों का न्यास करने के पश्चात् ऋष्यादि न्यास करे।

ऋष्यादि न्यास—ॐ सम्मोहनऋषये नम: शिरसि। निवृच्छन्दसे नम: मुखे। नित्यायै देवतायै नम: हृदि।

करन्यास—ऐं अंगुष्ठाभ्यां नम:। ऐं तर्जनीभ्यां स्वाहा। ऐं मध्यमाभ्यां वषट्। ऐं अनामिकाभ्यां हुं। ऐं कनिष्ठाभ्यां वौषट्। ऐं करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्।

षडंगन्यास—ऐं हृदयाय नम:। ऐं शिरसे स्वाहा। ऐं शिखायै वषट्। ऐं कवचाय हुं। ऐं नेत्रत्रयाय वौषट्। ऐं अस्त्राय फट्।

नित्यायन्त्र
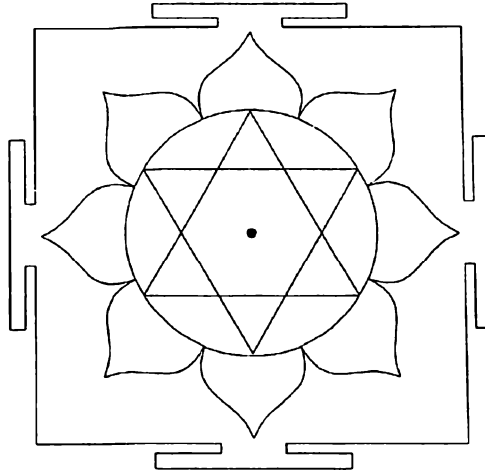
नित्या का ध्यान निम्नवत् करे—

अर्द्धेन्दुमौलिमरुणाममराभिवन्द्यामम्भोजपाशसृणिपूर्णकपालहस्ताम् ।
रक्ताङ्गरागवसनाभरणां त्रिनेत्रां ध्यायेच्छिवस्य वनितां मदविह्वलाङ्गीम्।।

नित्या देवी के मस्तक पर अर्द्धचन्द्र है। उनका रंग लाल है। देवों द्वारा वन्दित है। दाँयें ऊपरी हाथ में पद्म, दाँयें निचले हाथ में माला, बाँयें ऊपरी हाथ में पाश, बाँयें निचले हाथ में सुरापूर्ण नरकपाल है। लाल चन्दन, लाल वस्त्राभूषण से विभूषित है। त्रिलोचन भगवान् शिव की पत्नी हैं। सुरापान से मदमत्त हैं।

इस प्रकार ध्यान करके मानस पूजन करे। तब शंख स्थापित करे। तब पीठपूजन करे। केशर में जयादि पीठशक्तियों का पूजन करे। मध्य में 'ह्रीं सर्वशक्तिकमलासनाय नमः' से आसन देकर देवी नित्या का पूजन करे। तब पुनः पूर्ववत् ध्यान-आवाहन-पुष्पाञ्जलि-दानादि कर्म करके आवरण-पूजन करे।

षट्कोण के अग्न्यादि कोणचतुष्टय में ऐं हृदयाय नमः। ऐं शिरसे स्वाहा। ऐं शिखायै वषट्। ऐं कवचाय हुं से पूजन करे। मध्य में ऐं नेत्रत्रयाय वौषट् से पूजा करे। चारो दिशाओं में ऐं अस्त्राय फट् से पूजन करे।

अष्टदल में इन आठ का पूजन करे—ॐ नित्यायै नमः। ॐ निरञ्जनायै नमः। ॐ क्लिन्नायै नमः। ॐ क्लेदिन्यै नमः। ॐ मदनातुरायै नमः। ॐ मदद्रवायै नमः। ॐ द्राविण्यै नमः। ॐ द्राविण्यै नमः। निबन्ध के अनुसार नित्या आदि आठ शक्तियाँ नीलोत्पल कपालाढ्यकरा रक्ताम्बुजप्रभा हैं।

भूपुर चतुरस्त्र में इन्द्रादि दश लोकपालों और वज्रादि अस्त्रों की पूजा करे। धूप, दीप, नैवेद्य से पूजन करके विसर्जन करे।

चार लाख जप से इसका पुरश्चरण होता है। जप का दशांश चालीस हजार त्रिमधुराक्त महुआ के फूलों से हवन करे। गुरुदेव को दान-दक्षिणा देकर सन्तुष्ट करे।

वज्रप्रस्तारिणीमन्त्रा:

वाङ्मयानन्तरं भूयो नित्यक्लिन्ने मदद्रवे ।
स्वाहान्तो रविसंख्यार्णो मन्त्रो वश्यप्रदायकः ॥

अस्याः पूजायन्त्रम्—षट्कोणं द्वादशदलं चतुर्द्वारं चतुरस्त्रञ्च। ततः पूजा—प्रातःकृत्यादिपीठन्यासान्तं विधाय केशरेषु जयादिपीठमन्वन्तं विन्यस्य ऋष्यादि-न्यासं कुर्यात्। शिरसि अङ्गिरसे ऋषये नमः, मुखे त्रिष्टुप्छन्दसे नमः, हृदि वज्र-प्रस्तारिण्यै देवतायै नमः। तथा च निबन्धे—

अङ्गिराः स्यादृषिस्त्रिष्टुप्छन्दो मुनिभिरीरितम् ।
वज्रप्रस्तारिणी प्रोक्ता देवताभीष्टदायिनी ॥ इति।

ततः कराङ्गन्यासौ—ऐं अंगुष्ठाभ्यां नमः इत्यादि, ऐं हृदयाय नमः इत्यादिना हृदयादिषु। तथा च निबन्धे—

वाग्भवेन षडङ्गानि विदध्यान् मन्त्रवित्तमः।

ततो ध्यानम्—

रक्ताब्धौ रक्तपोते रविदलकमलाभ्यन्तरे सन्निषण्णां
रक्ताक्षीं रक्तमौलिस्फुरितशशिकलां स्मेरवक्त्रां त्रिनेत्राम् ।
बीजापूरेषुपाशांकुशमदनधनुःसत्कपालानि हस्तैः
बिभ्राणामानताङ्गीं स्तनभरनमितामम्बिकामाश्रयामः ॥

एवं ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्य शङ्खस्थापनं विधाय पूर्ववत् पीठपूजां कृत्वा पुनर्ध्यात्वा आवाहनादिपञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं विधाय आवरणपूजामारभेत्। अग्न्यादिकोणेषु मध्ये दिक्षु च ऐं हृदयाय नमः इत्यादिना सम्पूज्य द्वादशदलेषु पूर्वादिक्रमेण ॐ हृल्लेखायै नमः। एवं क्लेदिन्यै, क्लिन्नायै, क्षोभिण्यै, मदनातुरायै, निरञ्जनायै, रागवत्यै, मदनावत्यै, मेखलायै, द्राविण्यै, वेगवत्यै, स्मरायै— सर्वत्र प्रणवादिनमोऽन्तेन पूजयेत्। तथा च निबन्धे—

हृल्लेखा क्लेदिनी क्लिन्ना क्षोभिणी मदनातुरा ।
निरञ्जना रागवती सप्तमी मदनावती ।
मेखला द्राविणी पश्चाद्वेगवत्यपरा स्मरा ॥ इति।
कपालोत्पलधारिण्यः शक्तयो रक्तविग्रहाः।

तद्बाह्ये ब्राह्म्यादिमातृः पूजयेत्। तद्बहिरिन्द्रादीन् वज्रादींश्च पूजयेत्। तथा च निबन्धे—

मातरो दिग्विदिक्ष्वर्च्याः पुनः पूज्या दिगीश्वराः ।

ततो धूपादिविसर्जनान्तं कर्म समापयेत्। अस्य पुरश्चरणं लक्षजपः। तथा च—

मन्त्रं मन्त्री जपेल्लक्षं जपान्ते जुहुयात्ततः ।
अयुतं राजवृक्षोत्थैर्घृतसिक्तैः समिद्वरैः ॥

राजवृक्षः शोणालुः।

वज्रप्रस्तारिणी मन्त्र—'ह्रीं नित्यक्लिन्ने मदद्रवे स्वाहा' यह द्वादशाक्षर मन्त्र वज्रप्रस्तारिणी का है। इससे देवी की आराधना करने से वशीकरण सिद्ध होता है।

सामान्य पूजा पद्धति के क्रम से प्रातःकृत्यादि से पीठन्यासपर्यन्त कर्म करके केशर में जयादि पीठशक्तियों का न्यास करके ऋष्यादि न्यास करे।

ऋष्यादिन्यास—अंगिरसऋषये नमः शिरसि। त्रिष्टुप् छन्दसे नमः मुखे। वज्रप्रस्तारिणी देवतायै नमः हृदये।

करन्यास—ऐं अंगुष्ठाभ्यां नमः। ऐं तर्जनीभ्यां स्वाहा। ऐं मध्यमाभ्यां वषट्। ऐं अनामिकाभ्यां हुं। ऐ कनिष्ठाभ्यां वौषट्। ऐं करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्।

षडंगन्यास—ऐं हृदयाय नमः। ऐं शिरसे स्वाहा। ऐं शिखायै वषट्। ऐं कवचाय हुं। ऐं नेत्रत्रयाय वौषट्। ऐं अस्त्राय फट्।

वज्रप्रस्तारिणी-पूजनयन्त्र
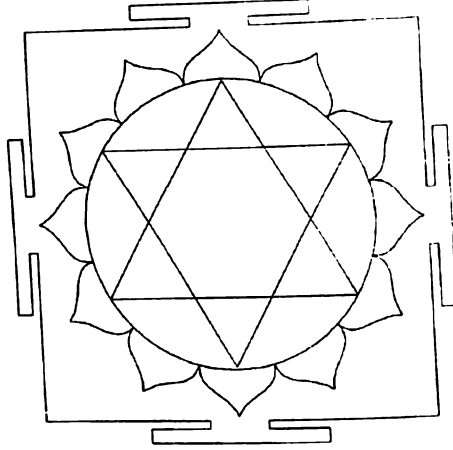
इसका ध्यान इस प्रकार है—

रक्ताब्धौ रक्तपोते रविदलकमलाभ्यन्तरे सन्निषण्णाम्
रक्ताक्षीं रक्तमौलिस्फुरतशशिकलां स्मेरवक्त्रां त्रिनेत्राम्।
बीजापुरेषुपाशांकुशमदनधनुःसत्कपालानि हस्तै-
र्विभ्राणामानतांगीं स्तनभरनमितामम्बिकामाश्रयामः।।

रक्तसागर में रक्तवर्ण जलयान के ऊपर द्वादशदल रक्तपद्म पर बैठी हुई हैं। मस्तक पर अर्द्धचन्द्र से शोभित रक्त केशपाश है। मुस्कानयुक्त मुखमण्डल, तीन आँखें हैं। बाँयें ऊपर और नीचे वाले हाथों में पाश, धनुष और नरकपाल है। दाँयें ऊपर और नीचे के हाथों में अंकुश, बाण और अनार के फूल हैं। स्तनों के भार से झुकी हुई अम्बिका की शरण में मैं जाता हूँ।

इस प्रकार ध्यान करके मानस पूजन करे। शंख-स्थापन करे। पीठ-पूजा करे। पुनः ध्यान-आवाहनादि से पञ्च पुष्पाञ्जलि तक सभी कार्यों को करके आवरण-पूजन करे।

षट्कोण के अग्न्यादि कोणों में, मध्य में और चारो दिशाओं में ऐं हृदयाय नमः, ऐं शिरसे स्वाहा, ऐं शिखायै वषट्, ऐं कवचाय हुम्, ऐं नेत्रत्रयाय वौषट्, ऐं अस्त्राय फट् से पूजन करे।

द्वादश दल के बारह दलों में पूर्वादि क्रम से बारह देवियों का पूजन करे; जैसे—ॐ हल्लेखायै नम:। ॐ क्लेदिन्यै नम:। ॐ क्लिन्नायै नम:। ॐ क्षोभिण्यै नम:। ॐ मदनातुरायै नम:। ॐ निरञ्जनायै नम:। ॐ रागवत्यै नम:। ॐ मदनावत्यै नम:। ॐ मेखलायै नम:। ॐ द्राविण्यै नम:। ॐ वेगवत्यै नम:। ॐ स्मरायै नम:। निबन्ध के अनुसार इनका ध्यान है कि ये कपाल उत्पलधारिणी लाल वर्ण की हैं।

दलों के बाहर चारो दिशाओं में और चारो कोनों में ब्राह्मी आदि की पूजा करे—ॐ ब्राह्म्यै नम:। ॐ माहेश्वर्यै नम:। ॐ कौमार्यै नम:। ॐ वैष्णव्यै नम:। ॐ वाराह्यै नम:। ॐ इन्द्राण्यै नम:। ॐ चामुण्डायै नम:। ॐ महालक्ष्म्यै नम:।

भूपुरचतुरस्र में इन्द्रादि दश दिक्पालों और वज्रादि अस्त्रों का पूजन करे। इसके बाद धूपादि विसर्जनान्त कर्म करके पूजन पूर्ण करे।

एक लाख जप से इसका पुरश्चरण सम्पन्न होता हैं। घृतसिक्त राजवृक्ष की समिधा से दस हजार हवन करे।

दुर्गामन्त्रा:

अथ दुर्गामनुं वक्ष्ये दृष्टादृष्टफलप्रदाम्।
मायाद्रिकर्णविन्द्वाढ्यो भूयोऽसौ सर्गवान् भवेत्॥
पञ्चान्तक: प्रतिष्ठावान् मारुतो भौतिकासन:।
तारादि हृदयान्तोऽयं मन्त्रो वस्वक्षरात्मक:॥

अद्रिर्दकार:, कर्ण: उकार:, पञ्चान्तको गकार:, प्रतिष्ठा आकार:, मारुतो यकार:, भौतिक: ऐकार:। प्रमाणान्तरं—

तारो माया स्वबीजञ्च दुर्गायै हृदयं तत:। इति भट्ट:।

अस्या: पूजाप्रयोग:—प्रात:कृत्यादिपीठन्यासान्तं विधाय हृत्पद्मस्य केशरेषु मध्ये च पीठशक्तीर्न्यसेत्। तद्यथा—आं प्रभायै ईं मायायै ऊं जयायै एं सूक्ष्मायै ऐं विशुद्धायै ओं नन्दिन्यै औं सुप्रभायै अं विजयायै अ: सर्वसिद्धिदायै, नम: सर्वत्र। तदुपरि ॐ वज्रनखदंष्ट्रायुधाय महासिंहाय हुं फट् नम: इति न्यसेत्। तथा च निबन्धे—

प्रभा माया जया सूक्ष्मा विशुद्धा नन्दिनी पुन:।
सुप्रभा विजया सर्वसिद्धिदा नवशक्तय:॥
अज्भिर्ह्रस्वत्रयक्लीवरहितै: पूजयेदिमा:।
प्रणवानन्तरं वज्रनखदंष्ट्रायुधाय च॥
महासिंहाय वर्मान्तं नति: सिंहमनुर्मत:।
दद्यादासनमेतेन मूर्त्तिं मूलेन कल्पयेत्॥

ततः ऋष्यादिन्यासः; तद्यथा—शिरसि नारदऋषये नमः, मुखे गायत्रीच्छन्दसे नमः, हृदि दुर्गायै देवतायै नमः। तथा च निबन्धे—

ऋषिः स्यान्नारदश्छन्दो गायत्री देवता मनोः ।
दुर्गा समीरिता सद्भिर्दुरितापन्निवारिणी ।। इति।

ततः कराङ्गन्यासौ—ह्रां ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै अंगुष्ठाभ्यां नमः, ह्रीं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै तर्जनीभ्यां स्वाहा, ह्रूं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै मध्यमाभ्यां वषट्, ह्रैं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै अनामिकाभ्यां हुं, ह्रौं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै कनिष्ठाभ्यां वौषट्, ह्रः ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्। एवं हृदयादिषु ह्रां ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः इत्यादि। तथा च निबन्धे—

नमस्कारविमुक्तेन मूलमन्त्रेण साधकः ।
ह्रामाद्यैः सह कुर्वीत षडङ्गानि यथाविधि ।।

ततो ध्यानम्—

सिंहस्था शशिशेखरा मरकतप्रख्या चतुर्भिर्भुजैः
शङ्खं चक्रधनुःशरांश्च दधती नेत्रैस्त्रिभिः शोभिता।
आमुक्ताङ्गदहारकङ्कणरणत्काञ्चीक्वणन्नूपुरा
दुर्गा दुर्गतिहारिणी भवतु वो रत्नोल्लसत्कुण्डला ।।

एवं ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्य शङ्खस्थापनं कुर्यात्। ततः पीठपूजां कृत्वा केशरेषु मध्ये च आं प्रभायै, ईं मायायै, उं जयायै, एं सूक्ष्मायै, ऐं विशुद्धायै, ओं नन्दिन्यै, औं सुप्रभायै, अं विजयायै, अः सर्वसिद्धिदायै, तदुपरि वज्रनख-दंष्ट्रायुधाय महासिंहाय हुं फट् नमः इति पूजयेत्। तथा च—

अज्भिर्ह्रस्वत्रयक्लीवरहितैः पूजयेदिमाः ।
प्रणवानन्तरं वज्रनखदंष्ट्रायुधाय च ।।
महासिंहाय वर्मान्तं नतिः सिंहमनुर्मतः ।
दद्यादासनमेतेन मूर्त्तिं मूलेन कल्पयेत् ।।

ततः पुनर्ध्यात्वा आवाहनादिपञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं विधाय आवरणपूजा-मारभेत्। तद्यथा—

अग्निनिर्ऋतिवायव्यीशानकोणेषु मध्ये दिक्षु च ह्रां ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै हृदयाय नमः इत्यादिना पूजयेत्। ततः पत्रेषु जं जयायै, विं विजयायै, कीं कीर्त्त्यै, प्रीं प्रीत्यै, प्रं प्रभायै, श्रं श्रद्धायै, श्रुं श्रुत्यै, मं मेधायै। पत्रेषु ॐ शङ्खाय चक्राय गदायै खड्गाय पाशाय अंकुशाय चापाय शराय। तद्बाह्ये इन्द्रादीन् वज्रादींश्च पूजयेत्। ततो धूपादिविसर्जनान्तं कर्म समापयेत्। अस्य पुरश्चरणमष्टलक्षजपः। तथा च—

वसुलक्षं जपेन्मन्त्रं तिलैर्मधुरलोडितैः ।
पयोञ्झसा वा जुहुयात्तत्सहस्त्रं जितेन्द्रियः ॥

तेन वाचनिकोऽष्टसहस्त्रहोमः।

दुर्गा—मन्त्र है—ॐ ह्रीं दुं दुर्गायें नम:। यह अष्टाक्षर मन्त्र है। यह मन्त्र दृष्ट-अदृष्ट सभी प्रकार का फल प्रदान करता है। इसका मन्त्रोद्धार इस प्रकार होता है—

मायाद्रि कर्णविन्द्वाढ्यो भूयोऽसौ सर्गवान् भवेत्।
पञ्चान्तक: प्रतिष्ठावान् मारुतो भौतिकासन:।
तारादि हृदयान्तोऽयं मन्त्रो वस्वक्षरात्मक:।।

माया ह्रीं + अद्रि (द) + कर्ण (उ) + बिन्दु (अनुस्वार) = दुं। पुन: यह वर्ण विसर्गयुक्त = दु:, पञ्चान्तकं = ग, प्रतिष्ठा = आ, मारुत = य, भौतिक = ऐ = दुर्गायै। इनके आदि में तार (ॐ) तथा अन्त में हृदय नम:। कुल मिलाकर ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नम:। भट्ट के अनुसार तार ॐ, माया ह्रीं, स्वबीज दुं, दुर्गायै हृदयं नम:। अर्थात् ह्रीं दुं दुर्गायै नम:।

दुर्गायन्त्र
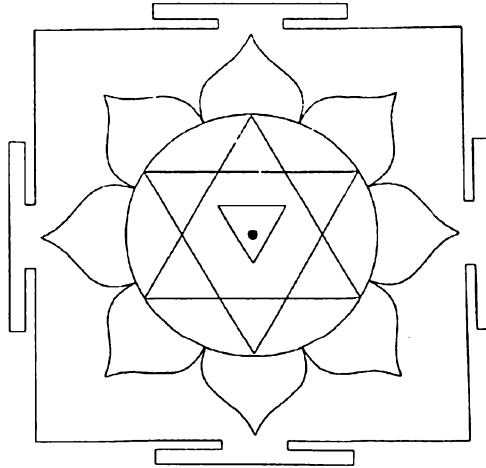
सामान्य पूजा पद्धति के क्रम से प्रात:कृत्यादि से पीठन्यासपर्यन्त के कर्म समाप्त करके हृदयपद्म के केशर में, पूर्वादि दिशाओं और मध्य में पीठशक्तियों का न्यास करे— आं प्रभायै नम:। ई मायायै नम:। ऊं जयायै नम:। एं सूक्ष्मायै नम:। ऐं विशुद्धायै नम:। ओं नन्दिन्यै नम:। औं सुप्रभायै नम:। अं विजयायै नम:। अ: सर्वसिद्धिदायै नम:। इन नौ शक्तियों की पूजा करके पीठ के ऊपर ॐ वज्रनखदंष्ट्रायुधाय महासिंहाय हुं फट् नम: से न्यास करके ऋष्यादि न्यास करे।

ऋष्यादिन्यास—नारदऋषये नमः शिरसि। गायत्रीछन्दसे नमः मुखे। दुर्गादेवतायै नमः हृदये।

करन्यास—ह्रां ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै अंगुष्ठाभ्यां नमः। ह्रीं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै तर्जनीभ्यां स्वाहा। ह्रूं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै मध्यमाभ्यां वषट्। ह्रैं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै अनामिकाभ्यां हुं। ह्रौं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै कनिष्ठाभ्यां वौषट्। ह्रः ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्।

षडंगन्यास—ह्रां ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै हृदयाय नमः। ह्रीं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै शिरसे स्वाहा। ह्रूं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै शिखायै वषट्। ह्रैं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै कवचाय हुं। ह्रौं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः नेत्रत्रयाय वौषट्। ह्रः ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै अस्त्राय फट्।

इनका ध्यान इस प्रकार किया जाता है—

> सिंहस्था शशिशेखरा मरकतप्रख्या चतुर्भिर्भुजैः
> शङ्खं चक्रधनुःशरांश्च दधती नेत्रैस्त्रिभिः शोभिता।
> आमुक्ताङ्गदहारकङ्कणरणत्काञ्चीक्वणन्नूपुरा
> दुर्गा दुर्गतिहारिणी भवतु वो रत्नोल्लसत्कुण्डला।।

दुर्गा देवी सिंह पर विराजित हैं। ललाट पर अर्द्धचन्द्र है। शरीर की कान्ति मरकत मणि के समान हरी है। चार भुजाएँ हैं। शंख-चक्र-धनुष और वाण हाथों में हैं। तीन नयनों से शोभित हैं। वलय, मुक्ताहार, कंकण, कांची, रेशमी साड़ी, नूपुर और रत्नजटित कुण्डलादि आभूषणों से अलंकृत हैं। ऐसी भगवती दुर्गा भक्तों की दुर्दशा को दूर करें।

इसके बाद मानसोपचार से पूजा करके शंखस्थापन करे। तब पीठपूजा करके केशर में आं प्रभायै नमः, ईं मायायै नमः, उं जयायै नमः, एं सूक्ष्मायै नमः, ऐं विशुद्धायै नमः, ओं नन्दिन्यै नमः, औं सुप्रभायै नमः, अं विजयायै नमः, अः सर्वसिद्धिदायै नमः से पूजा करके उसके ऊपर 'वज्रनखदंष्ट्रायुधाय महासिंहाय हुं फट् नमः' से पूजन करे। तब फिर ध्यान-आवाहन से पञ्च पुष्पाञ्जलि दान तक सभी कार्य करके आवरण पूजा करे।

षट्कोण में, पूर्वादि दिशाओं में, मध्य में और चारो ओर षडंग पूजन करे—ह्रां ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै हृदयाय नमः। ह्रीं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै शिरसे स्वाहा। ह्रूं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै शिखायै वषट्। ह्रैं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै कवचाय हुं। ह्रौं ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नेत्रत्रयाय वौषट्। ह्रः ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै अस्त्राय फट्।

अष्टदल में पूर्वादि क्रम से—जं जयायै नमः, विं विजयायै नमः, कीं कीर्त्यै नमः, प्रीं प्रीत्यै नमः, प्रं प्रभायै नमः, श्रं श्रद्धायै नमः, श्रुं श्रुत्यै नमः, मं मेधायै नमः से पूजा करे। अष्टदल के दलाग्रों में आठ अस्त्रों का पूजन करे—ॐ शंखाय नमः, ॐ चक्राय नमः, ॐ गदायै नमः, ॐ खड्गाय नमः, ॐ पाशाय नमः, ॐ अंकुशाय नमः, ॐ चापाय नमः, ॐ शराय नमः।

चतुरस्त्र भूपुर में इन्द्रादि दश लोकपालों और वज्रादि उनके दश आयुधों का पूजन करे। इसके बाद धूपादि विसर्जनान्त कर्म करके पूजन पूर्ण करे।

इस मन्त्र का पुरश्चरण आठ लाख जप से होता है। त्रिमधुर से अक्त तिल अथवा दूधमिश्रित अन्न से आठ हजार हवन करे। यहाँ जप का दशांश हवन विहित नहीं है।

महिषमर्दिनीमन्त्राः

शारदायाम्—

भान्तं वियत्सनयनं श्वेतो मर्दिनि ठद्वयम् ।
अष्टाक्षरी समाख्याता विद्या महिषमर्दिनी ॥

नारायणीतन्त्रे—

विषं हि मज्जा कालोऽग्निरद्रिरिस्थो निठद्वयम् ।

विषं मकारः, हि स्वरूपं, मज्जा यकारः, कालो मकारः, अग्नि रेफः, अद्रिर्दकारः, इस्थः इकारयुक्तः, इति वचनादिकारयुक्तो दकारः। अयं मन्त्रः तारादिः मायादिः कामादिः वाग्भवादिः वधूबीजादिः कवचादिश्च नवाक्षरः। तथा च विश्वसारे—

प्रणवाद्यां जपेद्विद्यां मायाद्यां वा जपेत्सुधीः ।
वधूबीजादिकां वापि कवचाद्यां जपेत्तथा ॥
सर्वकालेषु सर्वत्र कामाद्यां प्रजपेत्सुधीः ।
वाग्भवाद्यां जपेत्तान्तु देवीं वाक्यविशुद्धये ॥
विना बीजैर्महाविद्या निर्वीर्या परिकीर्त्तिता ।
पुटिता बीजयुग्मेन मुखे युग्ममदेशके ॥
दशाक्षरी समा नास्ति विद्या त्रिभुवनेश्वरी ।
प्रणवञ्च तथा माया भवेद्विद्या पुनर्दश ।
कामं प्रणवमित्युक्तं भवेद्विद्या पुनर्दश ॥

एतेषां पूजा—प्रातःकृत्यादिपीठन्यासान्तं विधाय केशरेषु मध्ये च दुर्गामन्त्रोक्त-पीठशक्तीः पीठमनुञ्च न्यसेत्। ततः पूर्वोक्त-ऋष्यादिन्यासञ्च कृत्वा कराङ्गन्यासौ कुर्यात्। तद्यथा—

महिषहिंसिके हूं फट् अंगुष्ठाभ्यां नमः, महिषशत्रोशार्वि हूं फट् तर्जनीभ्यां स्वाहा, महिषं हेषय हेषय हूं फट् मध्यमाभ्यां वषट्, महिषं हन हन देवि हूं फट् अनामिकाभ्यां हूं, महिषसूदनि हूं फट् कनिष्ठाभ्यां फट्। एवं हृदयादि महिषहिंसिके हूं फट् हृदयाय नमः इत्यादि। तथा च—

पञ्चाङ्गानि मनोर्यत्र तत्र नेत्रं विवर्जयेत् ।

नेत्ररहितं पञ्चाङ्गं कुर्यात्। तथा च निबन्धे—

महिषहिंसिके हूं फट् हृदयं परिकीर्त्तिम् ।
महिषत्रोशार्वि हूं फट् शिर उदाहृतम् ॥
महिषं हेषय-द्वन्द्वं हूं फडन्तः शिखामनुः ।
महिषं हन युग्मान्ते देवि हूं फट् तनुच्छदम् ।
महिषान्ते सूदनि हूं फडन्तमस्त्रमीरितम् ॥

ततो ध्यानम्—

गारुडोपलसन्निभां मणिमौलिकुण्डलमण्डिताम्
नौमि भालविलोचनां महिषोत्तमाङ्गनिषेदुषीम् ।
शङ्ख-चक्र-कृपाण-खेटक-बाण-कार्मुकशूलकान्
तर्जनीमपि विभ्रतीं निजबाहुभिः शशिशेखराम् ॥

एवं ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्य अर्घ्यस्थापनं कृत्वा पीठपूजां विधाय केशरेषु मध्ये च पूर्वोक्त-पीठशक्तीः पीठमनुञ्च यजेत्। अर्घ्यपात्रन्तु विश्वसारे—

कालीवत् पूजयेद्देवीं कालीवत् फलमाप्नुयात् ।
न वैष्णवैर्यजेद्देवीं न तुलस्या कदाचन ॥
न शङ्खैरर्घ्यपात्रं स्यात् कथितं पद्मयोनिना ।
विश्वामित्रस्य पात्रेण मृदा वापि शिवां यजेत् ॥

इति वचनात् शङ्खनिषेधः। पुनर्ध्यात्वा आवाहनादि पञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं विधाय आवरणपूजामारभेत्। अग्न्यादिषु पूर्ववदङ्गं पूजयेत्। ततः पत्रेषु पूर्वादि आं दुर्गायै नमः, ईं वरवर्णिन्यै, ऊं आर्यायै, ॠं कनकप्रतिभायै, ॡं कृत्तिकायै, ऐं अभयप्रदायै, औं कन्यायै, अः सुरूपायै। तथा च तन्त्रान्तरे—

आदौ दुर्गां ततो वरवर्णिनीमार्यकाह्वयाम् ।
कनकप्रतिभाञ्चैव कृत्तिकामभयप्रदाम् ।
कन्याञ्चैव सुरूपाञ्च यजेत्पूर्वादितः क्रमात् ॥

दीर्घाद्यत्वमेतासान्तु—

अष्टपत्रे यजेद्देवी दुर्गाद्या दीर्घपूर्विकाः ।

इति मन्त्रचूडामणिना उक्तत्वात्। दीर्घस्वरैः क्रमादिति शारदावचनाच्च। पत्राग्रेषु यं चक्राय, रं शङ्खाय, लं खड्गाय, वं खेटकाय, शं बाणाय, षं धनुषे, सं शूलाय, हं तर्जन्यै। नमः सर्वत्र। तथा च निबन्धे—

यजेदग्रेष्वायुधानि चक्रशङ्खासिखेटकान् ।
बाणं बाणासनं शूलं तर्जनीं यादिभिः क्रमात् ॥

पत्राग्रेषु ब्राह्म्याद्याः पूजयेत्। ततो दिक्षु तद्बहिरिन्द्रादीन् वज्रादींश्च प्रपूजयेत्। ततो धूपादिविसर्जनान्तं कर्म समापयेत्। तथा च कुलचूडामणौ—

ब्राह्म्याद्याश्च ततः पश्चाल्लोकपालांस्ततो बहिः ।
तदस्त्राणि सिद्धमयी प्रयोगञ्च समाचरेत् ॥

अस्य पुरश्चरणमष्टलक्षजपः। अष्टसहस्रं तिलैर्होमः। तथा च—

अष्टलक्षं जपेन्मन्त्रं तत्सहस्रं तिलैः शुभैः ।

इत्यादि वचनात्। जपसमर्पणात्पूर्वमुत्तरस्यां दिशि त्रिकोणमण्डलं विलिख्य बलिं दद्यात्।

एहि एहि पदद्वन्द्वं गृह्ण गृह्ण पदद्वयम् ।
मदीयञ्च बलिं देवि लुलापकपदद्वयम् ॥
साधय-द्वितयं ब्रूयात्खादय-द्वितयं पुनः ।
सर्वसिद्धिपदं देहि ततः स्वाहापदं वदेत् ।
बलिदानस्य मन्त्रोऽयं मर्दिन्याः परिकीर्त्तितः ॥

महिषमर्दिनी मन्त्र—'महिषमर्दिनी स्वाहा' मन्त्र में आठ अक्षर हैं। ॐ ह्रीं क्लीं ऐं स्त्रीं और हूं बीजों को लगाने से छः नवाक्षर मन्त्र बनते हैं; जैसे—

ॐ महिषमर्द्दिनी स्वाहा। ह्रीं महिषमर्द्दिनी स्वाहा। क्लीं महिषमर्द्दिनी स्वाहा। ऐं महिषमर्द्दिनी स्वाहा। स्त्रीं महिषमर्द्दिनी स्वाहा। हूं महिषमर्द्दिनी स्वाहा। यह उद्धार शारदातिलक तन्त्र और नारायणी तन्त्र के मत से होता है। विश्वसारतन्त्र में लिखा है कि आदि में कोई बीज युक्त न करने से मन्त्र निर्वीर्य रहता है। आदि में प्रणव और अन्त में मायाबीज से पुटित; जैसे—ॐ महिषमर्द्दिनी स्वाहा ह्रीं और आरम्भ में क्लीं और अन्त में ॐ से पुटित—क्लीं महिषमर्द्दिनी स्वाहा ॐ—ये दो दशाक्षर मन्त्र त्रिलोक में ईश्वर के समान हैं।

महिषमर्द्दिनी का पूजनयन्त्र दुर्गायन्त्र के समान ही होता है।

सामान्य पूजा पद्धति के क्रम से प्रातःकृत्यादि से लेकर पीठन्यास तक के कर्म करके हृदयकमल के केशर में पूर्वादि क्रम से दिशाओं, विदिशाओं और मध्य में पीठशक्तियों का न्यास करे। इनकी पीठशक्तियाँ भी दुर्गा की पीठशक्तियाँ ही हैं, जो नव हैं। दुर्गामन्त्र में वर्णित ऋष्यादि न्यास करके करन्यास और षडंगन्यास करे।

करन्यास—महिषहिंसिके हुं फट् अंगुष्ठाभ्यां नमः। महिषशत्रोशार्वि हुं फट् तर्जनीभ्यां स्वाहा। महिषं हेषय हेषय हूं फट् मध्यमाभ्यां वषट्। महिषं हन हन देवि हुं फट् अनामिकाभ्यां हूं। महिषसूदिनी हुं फट् कनिष्ठाभ्यां फट्।

जहाँ मन्त्र के पञ्चाङ्ग न्यास की विधि होती है, वहाँ नेत्रमन्त्र को छोड़कर न्यास किया जाता है। यहाँ पर पञ्चाङ्ग न्यास इसी प्रकार का है।

पञ्चाङ्ग न्यास—महिषहिंसिके हुं फट् हृदयाय नमः। महिषशत्रोशार्वि हुं फट् शिरसे स्वाहा। महिषं हेषय हेषय हुं फट् शिखायै वषट्। महिषं हन हन देवि हुं फट् कवचाय फट्। महिषसृदिनी हुं फट् अस्त्राय फट्।

इनका ध्यान इस प्रकार होता है—

गारुडोपलसन्निभां मणिमौलिकुण्डलमण्डिताम्
नौमि भालविलोचनां महिषोत्तमाङ्गनिषेदुषीम्।
शंखचक्रकृपाणखेटकवाणकार्मुकशूलकान्
तर्जनीमपि विभ्रतीं निजबाहुभिः शशिशेखराम्।।

महिषमर्द्दिनी देवी के शरीर की कान्ति मरकत मणि के समान है। मणिजटित मुकुट और कुण्डल से सुशोभित हैं। ललाट में नेत्र वाली देवी को मैं प्रणाम करता हूँ। महिष के मस्तक पर देवी बैठी हैं। अपने आठ हाथों में शंख, चक्र, खड्ग, खेटक, वाण, धनुष, शूल और तर्जनीमुद्रा तथा शिर पर अर्द्धचन्द्र धारण की हुई हैं।

ध्यान के बाद मानसोपचारों से पूजन करके अर्घ्य-स्थापन करे। तब पीठपूजा करे। तब हृदयकमल के केशर के मध्य में दुर्गामन्त्रोक्त पीठशक्तियों की पूजा करे।

विश्वसार में वर्णन है कि काली के समान इनकी पूजा करे। ऐसा करने मे काली-पूजा-जैसा ही फल मिलता है। वैष्णवों से दुर्गा-पूजा न करावे। पूजा में दुर्गा को तुलसी नहीं चढ़ाना चाहिये। अर्घ्यस्थापन शंखपात्र में न करे। मिट्टी के पात्र में अर्घ्य-स्थापन करे।

पुनः ध्यान-आवाहन आदि से पञ्च पुष्पाञ्जलि-दान तक सभी कार्य करके आवरण पूजन करे। षट्कोण में षडंग पूजन करे। यह पूर्वादि क्रम से इस प्रकार करे—महिषहिंसिके हुं फट् हृदयाय नमः। महिषशत्रोशार्वि हुं फट् शिरसे स्वाहा। महिषं हेषय हेषयं हूं फट् शिखायै वषट्। महिषं हन हन देवि हूं फट् कवचाय हुं। महिषसृदिनी हुं फट् अस्त्राय फट्।

अष्टदल में पूर्वादिक्रम से आं दुर्गायै नमः। ईं वरवर्णिन्यै नमः। ऊं आर्यायै नमः। ॠं कनकप्रतिभायै नमः। लृं कृत्तिकायै नमः, ऐं अभयप्रदायै नमः। औं कन्यायै नमः। अः सूक्ष्मायै नमः। यह पत्रमूल में करे।

आठ दलों के मध्य भाग में अस्त्रों का पूजन करे—यं चक्राय नमः। रं शंखाय नमः। लं खड्गाय नमः। वं खेटकाय नमः। शं वाणाय नमः। षं धनुषे नमः। सं शूलाय नमः। हं तर्जन्यै नमः।

आठ दलों के अग्रभाग में ब्राह्मी आदि अष्ट मातृकाओं की पूजा करे— ॐ ब्राह्म्यै नमः। ॐ माहेश्वर्यै नमः। ॐ कौमार्यै नमः। ॐ वाराह्यै नमः। ॐ इन्द्राण्यै नमः। ॐ चामुण्डायै नमः। ॐ महालक्ष्म्यै नमः।

भूपुर में इन्द्रादि दश दिक्पालों और वज्रादि दश आयुधों को पूजे। सामान्य पूजा पद्धति के अनुसार धूपादि विसर्जनान्त कार्य करे।

इसका पुरश्चरण आठ लाख जप से होता है। अन्त में आठ हजार हवन तिल से होता है। जप-समर्पण करने से पहले उत्तर दिशा में एक त्रिकोण-मण्डल बनाकर निम्न मन्त्र से बलि प्रदान करे—

ॐ एह्येहि गृह्ण गृह्ण मदीयं बलिं लुलापकं लुलापकं साधय साधय खादय खादय सर्वसिद्धिं देहि स्वाहा।

जयदुर्गामन्त्राः

तारो दुर्गे युगं रक्तमन्त्योढान्तं सलोचनम् ।
द्विठान्तो जयदुर्गेयं विद्या वेद्या दशाक्षरी ॥

अस्याः पूजा—प्रातःकृत्यादि दुर्गामन्त्रोक्तं ऋष्यादिन्यासान्तं कर्म कृत्वा कराङ्गन्यासौ कुर्यात्। ॐ दुर्गे अंगुष्ठाभ्यां नमः, दुर्गे तर्जनीभ्यां स्वाहा, दुर्गायै मध्यमाभ्यां वषट्, भूतरक्षणि अनामिकाभ्यां हुं, ॐ दुर्गे दुर्गे रक्षणि कनिष्ठाभ्यां वौषट्, ॐ दुर्गे दुर्गे रक्षणि करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्।

एवं हृदयादिषु। तथा च निबन्धे—

तारादि दुर्गे हृदयं दुर्गे च शिर ईरितम् ।
दुर्गायै स्याच्छिखावर्म भूतरक्षणि कीर्त्तितं॥
तारादि दुर्गे द्वितयं रक्षण्यक्षि समीरितम् ।
तारादि दुर्गे युगलं रक्षण्यस्त्रमुदीरितम् ॥

ततो ध्यानम्—

कालाभ्राभां कटाक्षैररिकुलभयदां मौलिबद्धेन्दुरेखां
शङ्खं चक्रं कृपाणं त्रिशिखमपि करैरुद्वहन्तीं त्रिनेत्राम् ।
सिंहस्कन्धाधिरूढां त्रिभुवनमखिलं तेजसा पूरयन्तीं
ध्यायेद्दुर्गां जयाख्यां त्रिदशपरिवृतां सेवितां सिद्धिकामैः ॥

एवं ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्य अर्घ्यस्थापनं कुर्यात्। ततः पूर्वोक्तपीठपूजां विधाय पूर्ववत्पूजां कुर्यात्। अस्य पुरश्चरणं पञ्चलक्षजपः। घृतेन दशांशहोमः।

तथा च निबन्धे—

बाणलक्षं जपेन्मन्त्रं घृतेन जुहुयात्ततः ।
दशांशंसंस्कृते वह्नौ ब्राह्मणानपि भोजयेत् ।
अष्टाक्षरोदिते पीठे पूर्ववत्पूजयेत्सुधीः ॥

जयदुर्गामन्त्र—

तारो दुर्गे युगं रक्तमन्त्योद्धान्तं सलोचनम्।
द्विठान्तो जयदुर्गेयं विद्या वेद्या दशाक्षरी।।

इसका उद्धार करने पर 'ॐ दुर्गे दुर्गे रक्षणि स्वाहा' दशाक्षर मन्त्र जयदुर्गा का होता है। इसका दुर्गायन्त्र में पूजन होता है।

प्रातःकृत्यादि से लेकर दुर्गामन्त्रोक्त ऋष्यादि न्यास तक सभी कार्यो को करके करांगन्यास करना चाहिये।

करन्यास—ॐ दुर्गे अंगुष्ठाभ्यां नमः। ॐ दुर्गे तर्जनीभ्यां स्वाहा। ॐ दुर्गे मध्यमाभ्यां वषट्। ॐ भूतरक्षणि अनामिकाभ्यां हुं। ॐ दुर्गे दुर्गे रक्षणि कनिष्ठाभ्यां वौषट्। ॐ दुर्गे दुर्गे रक्षणि करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः।

षडंगन्यास—ॐ दुर्गे हृदयाय नमः। ॐ दुर्गे शिरसे स्वाहा। ॐ दुर्गे शिखायै वषट्। ॐ भूतरक्षणि कवचाय हूँ। ॐ दुर्गे दुर्गे रक्षणि नेत्रत्रयाय वौषट्। ॐ दुर्गे दुर्गे रक्षणि अस्त्राय फट्। इसके बाद निम्नवत् ध्यान करे—

कालाभ्राभां कटाक्षैररिकुलभयदां मौलिबद्धेन्दुरेखाम्
शंखं चक्रं कृपाणं त्रिशिखमपि करैरुद्वहन्तीं त्रिनेत्राम्।
सिंहस्कन्धाधिरूढां त्रिभुवनमखिलं तेजसा पूरयन्तीम्
ध्यायेद् दुर्गां जयाख्यां त्रिदशपरिवृतां सेवितां सिद्धिकामैः।।

काले मेघ जैसी कान्ति, कटाक्षों से शत्रुओं को भयभीत करने वाली, मस्तक पर अर्द्धचन्द्र, चार हाथों में शंख-चक्र-खड्ग और त्रिशूलधारिणी, त्रिनेत्रा, सिंह के कन्धे पर बैठी, तीनों लोकों को अपने तेज से परिपूर्ण करने वाली, देवताओं से घिरी हुई जयदुर्गा का ध्यान सिद्धि चाहने वालों को करना चाहिये।

इसके बाद मानसोपचार से पूजन करे। अर्घ्य स्थापन करे। पूर्वोक्त दुर्गापीठ-पूजा के समान पूजन करे। इसका पुरश्चरण पाँच लाख जप से होता है। जप का दशांश पचास हजार घी से हवन करना चाहिये।

शूलिनीमन्त्राः

ज्वलज्वलपदस्यान्ते शूलिनीति पदं ततः ।
दुष्टग्रहहुमस्त्रान्ते वह्निजायावधिर्मनुः ।
भूतेन्द्रियाक्षरैः प्रोक्तो ग्रहक्षुद्रविनाशकृत् ।।

अस्याः पूजा—प्रातःकृत्यादि दुर्गामन्त्रोक्तपीठन्यासान्तं कर्म कृत्वा ऋष्यादिन्यासं कुर्यात्। यथा—शिरसि दीर्घतपसे ऋषये नमः, मुखे ककुप्छन्दसे नमः, हृदि

शूलिन्यै देवतायै नमः। निबन्धे—

ऋषिर्दीर्घतपाः प्रोक्तः ककुप् छन्द उदाहृतम् ।
शूलिनी देवता प्रोक्ता समस्तसुरवन्दिता ॥ इति।

ततः कराङ्गन्यासौ कुर्याद्यथा—शूलिनि दुर्गे हुं फट् अंगुष्ठाभ्यां नमः, शूलिनि वरदे हुं फट् तर्जनीभ्यां स्वाहा, शूलिनि विन्ध्यवासिनि हुं फट् मध्यमाभ्यां वषट्, शूलिनि असुरमर्दिनि युद्धप्रिये त्रासय त्रासय हुं फट् अनामिकाभ्यां हुं, शूलिनि देवसिद्धसुपूजिते नन्दिनि रक्ष रक्ष महायोगेश्वरि हुं फट् कनिष्ठाभ्यां फट्। एवं हृदयादिषु। तथा च निबन्धे—

दुर्गे हृद्वरदे शीर्षं विन्ध्यवासिनि तच्छिखा ।
असुरान्ते मर्दिनि स्याद्युद्धपूर्वं प्रिये पुनः ॥
त्रासय-द्वितयं वर्म देवसिद्धसुपूजिते ।
नन्दिनि स्याद्रक्षयुगं महायोगेश्वरि क्रमात् ।
शूलिन्याद्या हुं फडन्ताः पञ्च वै मनवः क्रमात् ॥

ततो ध्यानम्—

अध्यारूढां मृगेन्द्रं सजलजलधरश्यामलां हस्तपद्मैः
शूलं बाणं कृपाणन्त्वरिजलजगदाचापपाशान्वहन्तीम् ।
चन्द्रोत्तंसां त्रिनेत्रां चतसृभिरसिनाखेटकं विभ्रतीभिः
कन्याभिः सेव्यमानां प्रतिभटभयदां शूलिनीं भावयामि ॥

एवं ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्य अर्घ्यस्थापनं कुर्यात्। ततः पूर्वोक्तपीठपूजां विधाय पुनर्ध्यात्वा आवाहनादि पञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं कर्म कृत्वा आवरण-पूजामारभेत्। तद्यथा—

अग्निनिर्ऋतिवाय्वीशानकोणेषु दिक्षु च शूलिनि दुर्गे हुं फट् हृदयाय नमः इत्यादिना पूर्वोक्तपञ्चाङ्गानि यजेत्। ततः पत्रेषु पूर्वादि ॐ दुर्गायै नमः, एवं वरदायै विन्ध्यवासिन्यै असुरमर्दिन्यै युद्धप्रियायै देवसिद्धसुपूजितायै नन्दिन्यै महायोगेश्वर्यै। ततः पत्राग्रेषु तदस्त्राणि पूजयेत्। तथा च निबन्धे—

विधाय पूजामङ्गानां पूज्यां पत्रेषु शक्तयः ।
दुर्गाद्या वरदा विन्ध्यवासिन्यसुरमर्दिनी ॥
युद्धप्रिया पञ्चमी स्याद्देवसिद्धसुपूजिता ।
सप्तमी नन्दिनी प्रोक्ता महायोगेश्वरी परा ॥
दलाग्रेषु तदस्त्राणि शङ्खं चक्रमसिं पुनः ।
गदेषुचापशूलानि पाशं पश्चाद्दिशोऽधिपान् ॥

ततो धूपादि-विसर्जनान्तं कर्म समापयेत्। अस्य पुरश्चरणं पञ्चदशलक्षजप:। तथा च—

मनुमेनं जपेन्मन्त्री वर्णलक्षं विचक्षण:।
सर्पिषान्नेन वा होमस्तद्दशांशमितो भवेत्।।

शूलिनी दुर्गा—मन्त्र है—ज्वल ज्वल शूलिनि दुष्ट ग्रह हुं फट् स्वाहा। इसमें पन्द्रह अक्षर हैं। इससे ग्रहदोष और क्षुद्र रोग दूर हो जाते हैं।

यन्त्र—दुर्गायन्त्र के समान पञ्चकोण, अष्टदल और भूपुरयुक्त होता है। प्रात:कृत्य से दुर्गामन्त्रोक्त पीठन्यास तक के सभी कार्य करके ऋष्यादि न्यास करे—ॐ दीर्घतपसे ऋषये नम: शिरसि। ककुप्छन्दसे नम: मुखे। शूलिनीदेवतायै नम: हृदि।

करन्यास—शूलिनि दुर्गे हुं फट् अंगुष्ठाभ्यां नम:। शूलिनि वरदे हुं फट् तर्जनीभ्यां स्वाहा। शूलिनि विन्ध्यवासिनि हुं फट् मध्यमाभ्यां नम:। शूलिनि असुरमर्द्दिनि युद्धप्रिये त्रासय त्रासय हुं फट् अनामिकाभ्यां नम:। शूलिनि देवसिद्धसुपूजिते नन्दिनि रक्ष रक्ष महायोगेश्वरि हुं फट् कनिष्ठाभ्यां नम:।

अंगन्यास—शूलिनि दुर्गे हुं फट् हृदयाय नम:। शूलिनि वरदे हुं फट् शिरसे स्वाहा। शूलिनि विन्ध्यवासिनि हुं फट् शिखायै वषट्। शूलिनि असुरमर्दिनि युद्धप्रिये त्रासय त्रासय हुं फट् कवचाय हुं। शूलिनि देवसिद्धसुपूजिते नन्दिनि रक्ष रक्ष महा योगेश्वरि हुं फट् अस्त्राय फट्। इनका ध्यान निम्नवत् होता है—

अध्यारूढां मृगेन्द्रां सजलजलधरश्यामलां हस्तपद्मै:
शूलं वाणं कृपाणं त्वरिजलजगदाचापपाशान् वहन्तीम्।
चन्द्रोत्तंसां त्रिनेत्रां चतसृभिरसिना खेटकं विभ्रतीभि:
कन्याभि: सेव्यमानां प्रतिभटभयदां शूलिनीं भावयामि।।

सिंहासीना, जलद श्यामवर्णा, आठ करकमलों में शूल, वाण, खड्ग, चक्र, शंख, गदा, पद्म और धनुष-वाण धारण की हुई, मस्तक पर अर्द्धचन्द्र, त्रिनेत्रा, भगवती शूलिनी का मैं ध्यान करता हूँ। इनकी सेवा शत्रुओं को भयप्रदायक है। अपने दोनों हाथों में खड्ग और ढाल ली हुई चार कन्याएँ इनकी सेवा में लग्न हैं।

इसके बाद मानसोपचार से पूजन करे। विशेषार्घ्य स्थापित करे। पीठपूजन करे। ध्यान-आवाहनादि से पञ्च पुष्पाञ्जलि दान तक के सभी कार्य करके आवरणपूजन करे।

पञ्चकोण में—अग्नि, निर्ऋति, वायु, ईशान कोणों में और चारो दिशाओं में पञ्चाङ्ग पूजन करे। ॐ शूलिनि दुर्गे हुं फट् हृदयाय नम:। ॐ शूलिनि वरदे हुं फट् शिरसे स्वाहा। ॐ शूलिनि विन्ध्यवासिनि हुं फट् शिखायै वषट्। ॐ शूलिनि असुरमर्दिनि युद्ध-प्रिये त्रासय त्रासय हुं फट् कवचाय हुं। ॐ शूलिनि देवसिद्धसुरपूजिते नन्दिनि रक्ष रक्ष

महायोगेश्वरि हुं फट् अस्त्राय फट्।

तब पद्मदलों में पूर्वादि क्रम से निम्न शक्तियों का पूजन करे—ॐ दुर्गायै नम:। ॐ वरदायै नम:। ॐ विन्ध्यवासिन्यै नम:। ॐ असुरमर्दिन्यै नम:। ॐ युद्धप्रियायै नम:। ॐ देवसिद्धसुपूजितायै नम:। ॐ नन्दिन्यै नम:। ॐ महायोगेश्वर्यै नम:।

दलों के अग्र भाग में देवी के अस्त्रों की पूजा करे—ॐ शंखाय नम:। ॐ चक्राय नम:। ॐ खड्गाय नम:। ॐ गदायै नम:। ॐ वाणाय नम:। ॐ चापाय नम:। ॐ शूलाय नम:। ॐ पाशाय नम:।

भूपुरचतुरस्र में इन्द्रादि दश दिक्पालों का पूजन करे—ॐ इन्द्राय नम:। ॐ अग्नये नम:। ॐ यमाय नम:। ॐ निर्ऋतये नम:। ॐ वरुणाय नम:। ॐ वायवे नम:। ॐ कुवेराय नम:। ॐ ईशानाय नम:। ॐ ब्रह्मणे नम:। ॐ अनन्ताय नम:।

तब धूपादि विसर्जनान्त कर्म करे। इसका पुरश्चरण पन्द्रह लाख जप और इसका दशांश डेढ लाख हवन घी या अनाज से करने पर सम्पन्न होता है।

वागीश्वरीमन्त्रा:

अथ वर्णतनुं वक्ष्ये विश्वबोधप्रबोधिनीम् ।
यस्यामनुपलब्धायां सर्वमेतज्जगज्जडम् ॥

वद वद वाग्वादिनि वह्निवल्लभा इति दशाक्षरः। तथा च निबन्धे—

अद्रिर्वरुणसंरुद्धो-द-वाग्वादिनि ठ-द्वयम् ।
सरस्वत्या दशार्णोऽयं वागैश्वर्यप्रदायकः ।
भुवनेशीसम्पुटोऽयं महासारस्वतप्रदः ॥

अस्याः पूजायन्त्रम्—

व्योमेन्द्वौ रसनार्णकार्णिकमचां द्वन्द्वैः स्फुरत्केशरं
पत्रान्तर्गतपञ्चवर्गयशलार्णाद्यब्जवर्गं क्रमात् ।
आशास्वस्त्रिषु लान्तलाङ्गलियुजा क्षौणी पुरेणावृतं
यन्त्रं वर्णतनोः परं निगदितं सर्वार्थसिद्धिप्रदम् ॥

अस्याः पूजा—प्रातःकृत्यादिपीठन्यासान्तं विधाय केशरेषु मध्ये दिक्षु च ॐ मेधायै नमः। एवं प्रज्ञायै प्रभायै विद्यायै श्रियै धृत्यै स्मृत्यै बुद्ध्यै विद्येश्वर्यै, मध्ये वर्णपद्मासनाय। नमः सर्वत्र।

तत ऋष्यादिन्यासः—शिरसि कण्वऋषये नमः, मायापुटितश्चेद्बृहस्पतये ऋषये नमः। मुखे विराट्च्छन्दसे नमः। हृदि वागीश्वर्यै देवतायै नमः।

अथ मन्त्रन्यासः—वं शिरसि नमः। श्रवणयोः दं नमः वं नमः। चक्षुषोः दं

नमः वां नमः। नासिकयोः ग्वां नमः दिं नमः। वदने निं नमः। लिङ्गे स्वां नमः। गुह्ये हां नमः। ततो मातृकायाः कराङ्गन्यासौ कृत्वा ध्यायेत्। तथा च निबन्धे—

शिरःश्रवणदृङ्नासावदनान्धुगुदेष्विमान् ।
न्यस्य वर्णान् षडङ्गानि मातृकोक्तानि कल्पयेत् ॥

ततो ध्यानम्—

तरुणसकलमिन्दोर्विभ्रती शुभ्रकान्तिः
कुचभरनमिताङ्गी सन्निषण्णा सिताब्जे ।
निजकरकमलोद्यल्लेखनी पुस्तकश्रीः
सकलविभवसिद्ध्यै पातु वाग्देवता नः ॥

एवं ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्य शङ्खस्थापनं कुर्यात्। ततः पीठपूजां कृत्वा केशरेषु मध्ये दिक्षु च मेधादि पीठमन्वन्तं सम्पूज्य पुनर्ध्यात्वा आवाहनादि-पञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं विधाय आवरणपूजां कुर्यात्। अग्निकोणे अं कं खं गं घं ङं आं हृदयाय नमः। नैर्ऋते इं चं छं जं झं ञं ईं शिरसे स्वाहा। वायुकोणे उं टं ठं डं ढं णं ऊं शिखायै वषट्। ईशाने एं तं थं दं धं नं ऐं कवचाय हुं। मध्ये ओं पं फं बं भं मं औं नेत्रत्रयाय वौषट्। दिक्षु अं यं रं लं वं शं षं सं हं लं क्षं अः अस्त्राय फट्। पत्रेषु पूर्वादि ॐ योगायै नमः, ॐ सत्यायै नमः। एवं विमलायै ज्ञानायै बुद्ध्यै स्मृत्यै मेधायै प्रज्ञायै। दलाग्रेषु ब्राह्म्याद्या मातरः पूज्याः। यथा निबन्धे—

ब्राह्म्याद्या मातरः पूज्याः प्रणवादिनमोऽन्तिकाः ।

तथा च—

आदावङ्गानि सम्पूज्य पश्चात् शक्तिरिमा यजेत् ।
योगा सत्या च विमला ज्ञाना बुद्धिः स्मृतिः पुनः ॥
मेधा प्रज्ञा च पत्रेषु मुद्रापुस्तकधारिणी ।
दलाग्रेषु समभ्यर्च्य ब्राह्म्याद्याश्च यथाविधि ।
लोकपाला बहिः पूज्यास्तेषामस्त्राणि तद्बहिः ॥

इति प्रपञ्चसारात्। तद्बहिरिन्द्रादीन् वज्रादींश्च पूजयेत्। ततो धूपादिविसर्जनान्तं कर्म समापयेत्। अस्य पुरश्चरणं दशलक्षजपः। तथा च—

दशलक्षं जपेन्मन्त्रं दशांशं जुहुयात्ततः ।
पुण्डरीकैः पयोऽभ्यक्तैस्तिलैर्वा मधुराप्लुतैः ॥

वागीश्वरी मन्त्र—जो ज्ञान देकर जगत् को प्रबोधित करती है, जिसके विना सारा संसार जड़तापन्न हो जाता है, उसी मातृका वर्णमयी वागीश्वरी के मन्त्र का वर्णन यहाँ

किया जाता है। 'वद वद वाग्वादिनि स्वाहा' यह दशाक्षर मन्त्र है। यह वागीश्वरता प्रदान करता है। इसके आदि और अन्त में ह्रीं लगाकर पुटित करने से 'ह्रीं वद वद वाग्वादिनि स्वाहा ह्रीं' मन्त्र बनता है। इसे महासारस्वत मन्त्र कहा जाता है।

वागीश्वरी यन्त्र
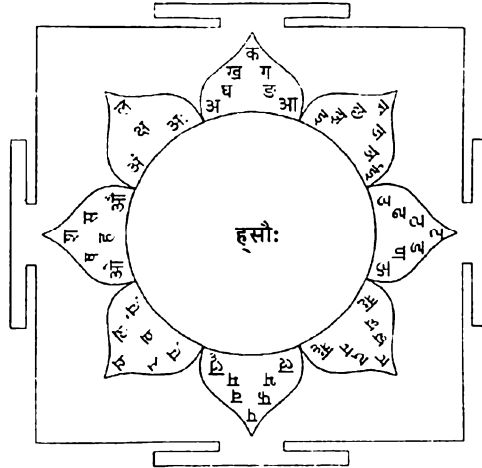
प्रात कृत्यादि से पीठन्यास तक के कार्य करके केशर की पूर्वादि दिशाओं और मध्य में निम्न शक्तियों का न्यास करे—ॐ मेधायै नमः। ॐ प्रज्ञायै नमः। ॐ प्रभायै नमः। ॐ विद्यायै नमः। ॐ श्रियै नमः। ॐ धृत्यै नमः। ॐ स्मृत्यै नमः। ॐ बुद्ध्यै नमः। ॐ विद्येश्वर्यै नमः। मध्य में—वर्णपद्मासनाय नमः।

तब ऋष्यादि न्यास करे—कण्वऋषये नमः शिरसि। विराट्छन्दसे नमः मुखे। वागीश्वर्यै देवतायै नमः हृदि। उक्त दशाक्षर मन्त्र के ह्रीं से पुटित होने पर द्वादशाक्षर मन्त्र बनने की दशा में 'बृहस्पतिऋषये नमः शिरसि' से न्यास करे। तब मन्त्रन्यास करे।

मन्त्रन्यास—शिरसि वं नमः। श्रवणयोः दं नमः वं नमः। चक्षुषोः दं नमः वां नमः। नासिकयोः ग्वां नमः दिं नमः। वदने निं नमः। लिंगे स्वां नमः। गुह्ये हां नमः।

इसके बाद मातृकाओं से करांगन्यास करे—अं कं खं गं घं आं अंगुष्ठाभ्यां नमः। इं चं छं जं झं ञं ईं तर्जनीभ्यां स्वाहा। उं टं ठं डं ढं णं ऊं मध्यमाभ्यां वषट्। एं तं थं दं धं नं ऐं अनामिकाभ्यां हुं। ओं पं फं बं भं मं औं कनिष्ठाभ्यां वौषट्। अं यं रं लं वं शं षं सं हं ळं क्षं अः अस्त्राय फट्।

षडंगन्यास—अं कं खं गं घं ङं आं हृदयाय नमः। इं चं छं जं झं ञं ईं शिरसे स्वाहा।

उं टं ठं डं ढं णं ऊं शिखायै वषट्। ऐं तं थं दं धं नं ऐं कवचाय हुं। ओं पं फं बं भं मं औं नेत्रत्रयाय वौषट्। अं यं रं लं वं शं षं सं हं लं क्षं अः अस्त्राय फट्। तत्पश्चात् निम्न रूप से वाग्देवता का ध्यान करे—

तरुणशकलमिन्दोर्विभ्रती शुभ्रकान्तिः कुचभरनमिताङ्गी सन्निषण्णा सिताब्जे।
निजकरकमलोद्यल्लेखनीपुस्तकश्रीः सकलविभवसिद्ध्यै पातु वाग्देवता नः।।

मस्तक पर तरुण चन्द्रकला, उज्ज्वल वर्णा, स्तनों के भार से झुकी हुई, श्वेत कमल पर बैठी हुई, दो करकमलों में लेखनी और पुस्तकधारिणी भगवती वाग्देवता सभी प्रकार के ऐश्वर्य की सिद्धि देने के लिये हमारी रक्षा करें।

इसके बाद मानसोपचारों से पूजा करे। शंख-स्थापन करे। फिर सामान्य पूजा क्रम से पीठपूजा करके केशर की दिशाओं में और मध्य में पूर्वोक्त पीठन्यास कर, मेधा आदि देवताओं का पूजन करे। इसके बाद ध्यानादि पञ्च पुष्पाञ्जलि दानपर्यन्त सभी कार्य समाप्त करके आवरण पूजन करे।

केशर में अग्निकोण में—अं कं खं गं घं ङं आं हृदयाय नमः। नैर्ऋत्य में—इं चं छं जं झं ञं ईं शिरसे स्वाहा। वायुकोण में—उं टं ठं डं ढं णं ऊं शिखायै वषट्। ईशान में—एं तं थं दं धं नं ऐं कवचाय हुम्। मध्य में—ओं पं फं बं भं मं औं नेत्रत्रयाय वौषट्। चारो दिशाओं में—अं यं रं लं वं शं षं सं हं लं क्षं अः अस्त्राय फट्।

पद्मदलों में पूर्वादि क्रम से—ॐ योगायै नमः। ॐ सत्यायै नमः। ॐ विमलायै नमः। ॐ ज्ञानायै नमः। ॐ बुद्ध्यै नमः। ॐ स्मृत्यै नमः। ॐ मेधायै नमः। ॐ प्रज्ञायै नमः।

दलों के अग्रभाग में—ॐ ब्राह्मयै नमः। ॐ माहेश्वर्यै नमः। ॐ कौमार्यै नमः। ॐ वाराह्यै नमः। ॐ इन्द्राण्यै नमः। ॐ चामुण्डायै नमः। ॐ महालक्ष्म्यै नमः।

भूपुर में इन्द्रादि दश दिक्पालों तथा उनके वज्रादि आयुधों का पूजन करे। इसके बाद धूपादि विसर्जनान्त कर्म करके पूजा पूर्ण करे।

इसका पुरश्चरण दस लाख जप से होता है। दशांश एक लाख हवन दुग्धमिश्रित श्वेत कमल अथवा घी-मधु-शक्करमिश्रित तिल से करे।

मन्त्रान्तरम्

हृदयान्ते भगवति वदशब्दयुगं ततः।
वाग्देवि वह्निजायान्तं वाग्भवाद्यं समुद्धरेत्।
मनुः षोडशवर्णाढ्यो वागैश्वर्यफलप्रदः।।

अस्य पूजा—प्रातःकृत्यादि पीठन्यासान्तं विधाय केशरेषु मध्ये च पूर्वोक्त-

पीठशक्तीः पीठमनुञ्च न्यसेत्। ततः पूर्वोक्तऋष्यादिन्यासं कृत्वा कराङ्गन्यासौ कुर्यात्। तद्यथा—ऐं अंगुष्ठाभ्यां नमः। नमस्तर्जनीभ्यां स्वाहा। भवगति मध्यमाभ्यां वषट्। वद वद अनामिकाभ्यां हुं। वाग्देवि कनिष्ठाभ्यां वौषट्। स्वाहा करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्। एवं हृदयादिषु। तथा च निबन्धे—

मनोः षड्भिः पदैः कुर्याज्जातियुक्तं षडङ्गकम्।

ततो ध्यानम्—

शुभ्रां स्वच्छविलेपमाल्यवसनां पीतांशुखण्डोज्ज्वलां
व्याख्यामक्षगुणं सुधाढ्यकलशं विद्याञ्च हस्ताम्बुजैः।
विभ्राणां कमलासनां कुचलतां वाग्देवतां सस्मितां
वन्दे वाग्विभवप्रदां त्रिनयनां सौभाग्यसम्पत्करीम्॥

एवं ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्य शङ्खस्थापनं कुर्यात्। ततः पूर्वोक्तक्रमेण पूजयेत्। किन्त्वङ्गमन्त्रे विशेषः। अस्य पुरश्चरणमष्टलक्षजपः। तथा च—

हविष्याशी जपेन्मन्त्रं वसुलक्षमनन्यधीः।
दशांशं जुहुयादन्ते तिलैराज्यपरिप्लुतैः॥

द्वितीय मन्त्र—ऐं नमः भगवति वद वद वाग्देवि स्वाहा—यह सोलह अक्षरों का मन्त्र वागैश्वर्य प्रदान करता है।

प्रातःकृत्यादि से पीठन्यास तक का कर्म करके पूर्वोक्त पीठशक्तियों का मन्त्रों से न्यास करे। पूर्ववत् विनियोग और ऋष्यादि न्यास करके करांगन्यास करे।

करन्यास—ऐं अंगुष्ठाभ्यां नमः। नमस्तर्जनीभ्यां स्वाहा। भगवति मध्यमाभ्यां वषट्। वद वद अनामिकाभ्यां हुं। वाग्देवी कनिष्ठाभ्यां वौषट्। स्वाहा करतलकर पृष्ठाभ्यां फट्।

षडंगन्यास—ऐं हृदयाय नमः। नमः शिरसे स्वाहा। भगवति शिखायै वषट्। वद वद कवचाय हुं। वाग्देवि नेत्रत्रयाय वौषट्। स्वाहा अस्त्राय फट्। तदनन्तर निम्नवत् ध्यान करे—

शुभ्रां स्वच्छविलेपमाल्यवसनां शीतांशुखण्डोज्ज्वलां
व्याख्यामक्षगुणं सुधाढ्यकलशं विद्यां च हस्ताम्बुजैः।
विभ्राणां कमलासनां कुचलतां वाग्देवता सस्मिताम्
वन्दे वाग्विभवप्रदां त्रिनयनां सौभाग्यसम्पत्करीम्॥

गौर वर्णा, श्वेत चन्दन, श्वेत पुष्प, माला एवं श्वेत वस्त्रधारिणी, अर्द्धचन्द्र से सुशोभिता हैं। उनके चार करकमलों में ज्ञानमुद्रा, अक्षमाला, अमृतपूर्ण कलश और पुस्तक हैं। स्तनों के भार से झुकी हुई हैं। श्वेत कमल पर बैठी हुई त्रिनेत्रा सौभाग्य-सम्पत्ति एवं वाणी का ऐश्वर्य देने वाली मुस्कुराती हुई भगवती वाग्देवता की मैं वन्दना करता हूँ।

तब मानसोपचार से पूजन करके शंखस्थापन करे। तब पूर्वोक्त क्रम मे पूजा करे। पहले पीठपूजन करे। पद्म के केशर और मध्य में पूर्वोक्त पीठशक्तियों का न्यास करके आवरण-पूजन करे। यन्त्रमध्य में बिन्दु में देवी की स्थिति समझकर देवी के दाँये भाग में ॐ संस्कृतायै वाङ्मय्यै नमः। वाम भाग में प्राकृतायै वाङ्मय्यै नमः। केशर के अग्निकोण में ऐं हृदयाय नमः। नैर्ऋत्य में ऐं शिरसे स्वाहा। वायव्य में ऐं शिखायै वषट्। ईशान में ऐं नेत्रत्रयाय वौषट्। दिशाओं में ऐं अस्त्राय फट्।

पद्मपदलों में पूर्वादि क्रम से—ॐ प्रज्ञायै नमः। ॐ मेधायै नमः। ॐ श्रुत्यै नमः। ॐ शक्त्यै नमः। ॐ स्मृत्यै नमः। ॐ वागीश्वर्यै नमः। ॐ मत्यै नमः। ॐ स्वस्त्यै नमः।

दलाग्रों में—ॐ ब्राह्म्यै नमः। ॐ माहेश्वर्यै नमः। ॐ कौमार्यै नमः। ॐ वाराह्यै नमः। ॐ इन्द्राण्यै नमः। ॐ चामुण्डायै नमः। ॐ महालक्ष्म्यै नमः।

शूद्र के लिये ओं ही प्रणव कहा गया है।

भूपुर में इन्द्रादि लोकपालों और वज्रादि उनके आयुधों का पूजन करे। इसके बाद धूप-दीप-नैवेद्य के बाद विसर्जन करे।

इस मन्त्र का पुरश्चरण आठ लाख जप से होता है। घृतमिश्रित तिल से जप का दशांश अस्सी हजार हवन करे।

मन्त्रान्तरम्

तारो मायाधरो विन्दुशक्तिस्तारः सरस्वती ।
ङेन्तानत्यन्तको मन्त्रः प्रोक्त एकादशाक्षरः ॥

अस्य पूजा—प्रातःकृत्यादिपूर्वोक्तपीठमन्वन्तं विन्यस्य पूर्वोक्तऋष्यादिन्यासं कुर्यात्। ततो मन्त्रन्यासः—ॐ नमो ब्रह्मरन्ध्रे। ह्रीं नमो भ्रूवोर्मध्ये। चक्षुषोः ऐं नमः ह्रीं नमः। कर्णयोः ॐ नमः सं नमः। नासिकयोः रं नमः स्वं नमः। मुखे त्यैं नमः। लिङ्गे नं नमः। गुह्ये मं नमः। ततः कराङ्गन्यासौ—ऐं अंगुष्ठभ्यां नमः। ऐं तर्जनीभ्यां स्वाहा। ऐं मध्यमाभ्यां वषट्। ऐं अनामिकाभ्यां हुं। ऐं कनिष्ठाभ्यां वौषट्। ऐं करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्। एवं हृदयादिषु ऐं हृदयाय नमः इत्यादि। तथा च निबन्धे—

ब्रह्मरन्ध्रे भ्रुवोर्मध्ये नवरन्ध्रेषु च क्रमात् ।
मन्त्रवर्णान्न्यसेन्मन्त्री वाग्भवेनाङ्गकल्पना ॥

ततो ध्यानम्—

वाणीं पूर्णनिशाकरोज्ज्वलमुखीं कर्पूरकुन्दप्रभां
चन्द्रार्द्धाङ्कितमस्तकां निजकरैः संविभ्रतीमादरात् ।

वीणामक्षगुणं सुधाढ्यकलशं विद्याञ्च तुङ्गस्तनीं
दिव्यैराभरणैर्विभूषिततनुं हंसाधिरूढां भजे ॥

एवं ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्य शङ्खस्थापनं कुर्यात्। ततः पीठपूजां विधाय केशरेषु मध्ये च पूर्वोक्तपीठशक्तीः पीठमनुञ्च यजेत्। ततः पुनर्ध्यात्वा, आवाहनादि-पञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं विधायावरणपूजामारभेत्। देव्या दक्षिणे ॐ संस्कृतायै वाङ्मयै नमः। वामे ॐ प्राकृतायै वाङ्मयै नमः।

ततः केशरेषु अग्निकोणे ऐं हृदयाय नमः, नैर्ऋते ऐं शिरसे स्वाहा, वायव्ये ऐं शिखायै वषट्, ईशाने ऐं कवचाय हुं, मध्ये ऐं नेत्रत्रयाय वौषट्, दिक्षु ऐं अस्त्राय फट्।

ततः पत्रेषु पूर्वादि प्रज्ञायै मेधायै श्रुत्यै शक्त्यै स्मृत्यै वागीश्वर्यै मत्यै स्वस्त्यै, सर्वत्र प्रणवादिनमोऽन्तेन पूजयेत्। ततः पत्राग्रेषु ब्राह्म्याद्या मातरः पूज्याः। तथा च निबन्धे—

देव्या दक्षिणतः पूज्याः संस्कृता वाङ्मयी शुभा।
प्राकृता वाङ्मयी पूज्या वामतः सर्वदा शुभा ॥
इष्टा पूर्ववदङ्गानि प्रज्ञाद्याः पूजयेत् पुनः।
प्रज्ञा मेधा श्रुतिः शक्तिः स्मृतिर्वागीश्वरी मतिः ॥
स्वस्तिश्चेति समाख्याता ब्राह्म्याद्यास्तदनन्तरम्।
ततस्तद्बहिरिन्द्रादीन् वज्रादींश्च प्रपूजयेत् ॥

ततो धूपादिविसर्जनान्तं कर्म समापयेत्। अस्य पुरश्चरणं द्वादशलक्षजपः; तथा च—

जपेद् द्वादशलक्षाणि तत्सहस्रं सिताम्बुजैः।
नागचम्पकपुष्पैर्वा जुहुयात्साधकोत्तमः ॥

तृतीय मन्त्र—ॐ ह्रीं ऐं ह्रीं ॐ सरस्वत्यै नमः। इसमें ग्यारह अक्षर हैं। इसका यन्त्र पूर्ववत् है।

प्रातःकृत्यादि कर्म करके पूर्वोक्त पीठन्यास, विनियोग और ऋष्यादि न्यास करे। तब इस प्रकार न्यास करे—

मन्त्रन्यास—ॐ नमो ब्रह्मरन्ध्रे। ह्रीं नमो भ्रुवोर्मध्ये। ऐं नमः ह्रीं नमः चक्षुषोः। ॐ नमः सं नमः कर्णयोः। रं नमः स्वं नमः नासिकयोः। त्यैं नमः मुखे। नं नमः लिङ्गे। मं नमः गुह्ये।

करन्यास—ऐं अंगुष्ठाभ्यां नमः। ऐं तर्जनीभ्यां स्वाहा। ऐं मध्यमाभ्यां वषट्। ऐं अनामिकाभ्यां हुं। ऐं कनिष्ठाभ्यां वौषट्। ऐं करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्।

षडंगन्यास—ऐं हृदयाय नम:। ऐं शिरसे स्वाहा। ऐं शिखायै वषट्। ऐं कवचाय हुं। ऐं नेत्रत्रयाय वौषट्। ऐं अस्त्राय फट्। ध्यान इस प्रकार करे—

वाणीं पूर्णनिशाकरोज्ज्वलमुखीं कर्पूरकुन्दप्रभाम्
चन्द्रार्द्धांकितमस्तकां निजकरै: सम्बिभ्रतीमादरात्।
वीणामक्षगुणं सुधाढ्यकलशं विद्यां च तुङ्गस्तनीम्
दिव्यैराभरणै: विभूषिततनुं हंसाधिरूढां भजे।।

मुख की कान्ति पूर्णिमा के चाँद के समान, गौरवर्ण, कपूर और कुन्दपुष्प के समान, मस्तक पर अर्द्धचन्द्र है। चारो हाथों में वीणा, अक्षमाला, अमृतपूर्ण कलश और पुस्तक है। उच्च उरोजों वाली का शरीर दिव्य अलंकारों से शोभित है। हंस पर बैठी हुई भगवती वाणी की मैं वन्दना करता हूँ।

मानसोपचारों से पूजा करके शंखस्थापन करे। तब सामान्य पूजाक्रम से पीठपूजा करके केशर में पूर्वोक्त पीठशक्तियों का पीठमन्त्रों से न्यास करे। तब ध्यान-आवाहनादि पञ्च पुष्पाञ्जलि तक सभी कार्य करके आवरण पूजन करे।

बिन्दु में देवी के दाँयें ॐ संस्कृतायै वाङ्मय्यै नम:। बाँयें ॐ प्राकृतायै वाङ्मय्यै नम:। केशर के अग्निकोण में ऐं हृदयाय नम:। नैर्ऋत्य में ऐं शिरसे स्वाहा। वायव्य में ऐं शिखायै वषट्। ईशान में ऐं कवचाय हुं। मध्य में ऐं नेत्रत्रयाय वौषट्। चारो दिशाओं में ऐं अस्त्राय फट्।

पद्मदलों में पूर्वादि क्रम से—ॐ प्रज्ञायै नम:। ॐ मेधायै नम:। ॐ श्रुत्यै नम:। ॐ शक्त्यै नम:। ॐ स्मृत्यै नम:। ॐ वागीश्वर्यै नम:। ॐ मत्यै नम:। ॐ स्वस्त्यै नम: से इनका पूजन करे।

दलों के अग्रभाग में—ॐ ब्राह्मयै नम:। ॐ माहेश्वर्यै नम:। ॐ कौमार्यै नम: । ॐ वैष्णव्यै मन:। ॐ वाराह्यै नम:। ॐ इन्द्राण्यै नम:। ॐ चामुण्डायै नम:। ॐ महा-लक्ष्म्यै नम: से इन अष्टमातृकाओं का पूजन करे।

चतुरस्र भूपुर में इन्द्रादि दश दिक्पालों और वज्रादि उनके आयुधों का पूजन करे। तब धूपादि-विसर्जनान्त कर्म करे।

इसका पुरश्चरण बारह लाख जप से होता है। चम्पापुष्प, श्वेत पद्म या नागकेशर से बारह हजार हवन करे।

मन्त्रान्तरम्

शारदायाम्—

वाचस्पतेऽमृते भूय: प्लुव: प्लुरिति कीर्त्तयेत्।
वागाद्यो मनुराख्यातो रुद्रसंख्याक्षरोऽपर: ।।

अस्य पूजादिकं पूर्ववत्। कराङ्गन्यासौ तु ऐं अंगुष्ठाभ्यां नम:। वाचस्पते

तर्जनीभ्यां स्वाहा। अमृते मध्यमाभ्यां वषट्। प्लुवः अनामिकाभ्यां हुं। प्लुः कनिष्ठाभ्यां फट्! एवं हृदयादिषु। तथा च निबन्धे—

कुर्यादङ्गानि विधिवद्वागाद्यैः पञ्चभिः पदैः ।

ध्यानन्तु—

आसीना कमले करैर्जपवटीं पद्मद्वयं पुस्तकं
विभ्राणा तरुणेन्दुबद्धमुकुटा मुक्तेन्दुकुन्दप्रभा ।
भालोन्मीलितलोचना कुचभरक्लान्ता भवद्भूतये
भूयाद्वागधिदेवता मुनिगणैरासेव्यमानानिशम् ॥

अस्य पुरश्चरणमेकादशलक्षजपः। तथा च—

रुद्रलक्षं जपेन्मन्त्रं दशांशं जुहुयाद् घृतैः ॥

चतुर्थ मन्त्र—शारदातिलक में 'ऐं वाचस्पते अमृते प्लुवः प्लूः'—इस ग्यारह अक्षरों के मन्त्र का वर्णन है। पूजा-पद्धति पूर्ववत् है। केवल करांग न्यास निम्न प्रकार से करे—

ऐं अंगुष्ठाभ्यां नमः—हृदयाय नमः।
ऐं वाचस्पते तर्जनीभ्यां स्वाहा—शिरसे स्वाहा।
ऐं अमृते मध्यमाभ्यां वषट्—शिखायै वषट्।
ऐं प्लुवः अनामिकाभ्यां हुं—कवचाय हुम्।
ऐं प्लूः कनिष्ठाभ्यां फट्—अस्त्राय फट्।

इसका ध्यान इस प्रकार है—

आसीना कमले करैर्जपवटीं पद्मद्वयं पुस्तकम्
विभ्राणा तरुणेन्दुबद्धमुकुटा मुक्तेन्दुकुन्दप्रभा।
भालोन्मीलितलोचना कुचभरक्लान्ता भवद्भूतये
भूयाद् वागधिदेवता मुनिगणैरासेव्यमानाऽनिशम्।।

कमल पर बैठी हैं, हाथों में जपमाला है, दो कमल और पुस्तक हैं। तरुण चन्द्र से शोभित मुकुट है। मोती, चन्द्रमा एवं कुन्दपुष्प के समान शरीर की कान्ति है। नयन उन्मीलित हैं। स्तनों के भार से बोझिल हैं। मुनियों के द्वारा उपासिता भगवती वागधिदेवता हमें ऐश्वर्य प्रदान करें। पूर्वोक्त विधान से पूजा करे। ग्यारह लाख जप और दशांश हवन अपेक्षित है।

तथा च शारदायाम्—

तोयस्थं शयनं विष्णोः सकेवलचतुर्मुखम् ।
अर्घांशेन्दुयुतो वह्निर्विन्दुसत्याम्बुमान् भृगुः ।

उक्तानि त्रीणि बीजानि सद्भिः सारस्वतो मनुः ॥

तोयं वकारः, विष्णोः शयनमाकारः, केवलेन स्वररहितेन ककारेण सह तेन वाक्। वाग्भवमिति पर्यवसितार्थः।

केचित्तु लक्षितलक्षणाभयादेवं वर्णयन्ति। आकारयुक्तो वकारः के मस्तके वलते केवलोऽनुस्वारः तद्युक्तेन ककारेण सह वर्त्तत तेन क्वामिति तन्त्र निरूढ-लक्षणायाः शक्तितुल्यत्वात्। वाक् वाग्भवमिति पर्यायः। वस्तुतस्तु—

द्वादशस्वरमुद्धृत्य विन्दुनादविभूषितम् ।
विन्दुनादसमायुक्तं वह्निबीजं समुद्धरेत् ॥
षष्ठस्वरसमायुक्तं द्वितीयं बीजमुद्धरेत् ।
चन्द्रबीजं समुद्धृत्य वारुणं योजयेत्ततः ॥
त्रयोदशस्वरारूढं विन्दुनादविभूषितम् ।

इति विश्वसारवचनाद्वाग्भवबीजमेव। अस्य पूजा पूर्ववत्। कराङ्गन्यासस्तु द्विरुक्तस्त्रिभिर्बीजैर्विधेयः। ऐं अंगुष्ठाभ्यां नमः, रूं तर्जनीभ्यां स्वाहा, स्वों मध्यमाभ्यां वषट् इत्यादि। तथा च निबन्धे—

अङ्गानि कल्पयेन्मन्त्री द्विरुक्तैर्जातिसंयुतैः ।

ध्यानन्तु—

मुक्ताहारावदातां शिरसि शशिकलालंकृतां बाहुभिः स्वै-
र्व्याख्यां वर्णाख्यमालां मणिमयकलशं पुस्तकञ्चोद्वहन्तीम् ।
आपीनोत्तुङ्गवक्षोरुहभरविलसन्मध्यदेशामधीशां
वाचम्मीडे चिराय त्रिभुवननमितां पुण्डरीके निषण्णाम् ॥

इति ध्यात्वा पूर्ववत्पूजयेत्। अस्य पुरश्चरणं त्रिलक्षजपः। तथा च—

त्रिलक्षं प्रजपेन्मन्त्रं जुहुयात्तद्दशांशतः ।
पायसैराज्यसम्मिश्रैः संस्कृते हव्यवाहने ॥

पञ्चम मन्त्र—शारदातिलक के अनुसार तीन अक्षरों का सारस्वत मन्त्र है—ऐं रूं स्वों। शारदातिलक और विश्वसारतन्त्र में वर्णित सांकेतिक भाषा का उद्धार करने पर यह त्र्यक्षर मन्त्र उपलब्ध होता है।

इसकी पूजा भी पूर्ववत् होती है। केवल करांगन्यास में अन्तर है।

करन्यास—ऐं अंगुष्ठाभ्यां नमः। रूं तर्जनीभ्यां स्वाहा। स्वों मध्यमाभ्यां वषट्। ऐं अनामिकाभ्यां हुं। रूं कनिष्ठाभ्यां वौषट्। स्वों करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्।

अंगन्यास—ऐं हृदयाय नमः। रूं शिरसे स्वाहा। स्वौं शिखायै वषट्। ऐं कवचाय हुं। रूं नेत्रत्रयाय वौषट्। स्वौं अस्त्राय फट्। इस मन्त्र का ध्यान निम्नवत् है—

मुक्ताहारावदातां शिरसि शशिकलाऽलंकृतां बाहुभिः स्वै-
र्व्याख्यां वर्णाख्यमालां मणिमयकलशं पुस्तकञ्चोद्वहन्तीम्।
आपीनोत्तुङ्गवक्षोरुहभरविलसन्मध्यदेशामधीशाम्
वाचम्मीडे चिराय त्रिभुवननमितां पुण्डरीके निषण्णाम्।।

मोतियों के हार के समान उज्ज्वल आभा है। मस्तक पर चन्द्रकला है। चारो हाथों में ज्ञानमुद्रा, मातृकामाला, मणिजटित कलश एवं पुस्तक है। पुष्ट एवं उच्च उरोजों के भार से शरीर का मध्य भाग झुका हुआ है। श्वेत कमल पर आसीन हैं। त्रिलोकवन्दिता भगवती वाग्देवी की मैं वन्दना करता हूँ।

पूजन पूर्ववत् करे। तीन लाख जप से इसका पुरश्चरण होता है। दशांश ३० हजार घीमिश्रित पायस हवन होता है।

पारिजातसरस्वतीमन्त्रः

मन्त्रदेवप्रकाशिकायाम्—स च प्रणवहृल्लेखासम्पुटितहकारसकारौकारविन्दु-युक्तः सरस्वती ङेन्ता नतिश्च।

अस्याः पूजा—प्रातःकृत्यादि पीठमन्वन्तं विन्यस्य ऋष्यादिन्यासं कुर्यात्। शिरसि कण्वऋषये नमः, मुखे त्रिष्टुप्छन्दसे नमः, हृदि पारिजातसरस्वत्यै नमः। ततो मातृकोक्तकराङ्गन्यासौ कुर्यात्। मूर्द्धभ्रूमध्यनेत्रकर्णनासापुटद्वयवदन-गुह्यपादेष्वेकादशाक्षरविन्यासः। ततो ह्सां अंगुष्ठाभ्यां नमः इत्यादिना कराङ्गन्यासौ कुर्यात्। अन्यत्सर्वं पूर्ववत्। दक्षिणामूर्त्तिसंहितायान्तु—

सम्पत्प्रदाया भैरव्या वाग्भवं बीजमालिखेत्।
तारेण परया देवि सम्पुटीकृत्य मन्त्रवित्।
सरस्वत्यै हृदन्तोऽयं रुद्रार्णो मनुरीरितः ॥

प्रपञ्चसारे—

आद्यन्तप्रणवशक्तिर्मध्यसंस्था वाग्भूयो भवति सरस्वती ङेन्ता।
नत्यन्तामनुरयमीशसंख्यवर्णः सम्प्रोक्तो भजमानः पारिजातः ॥

दक्षिणामूर्त्तिर्ऋषिः प्रोक्ता गायत्री छन्द ईरितम्।
पारिजातेश्वरी वाणी देवता परिकीर्त्तिता ॥
तृतीयञ्च द्वितीयञ्च बीजं शक्तिञ्च तारकम्।
कीलकं परमेशानि महासारस्वतप्रदम्।

षड्दीर्घस्वरसम्भिन्नबीजेनाङ्गक्रिया मता ॥

ततो ध्यानम्—

हंसारूढा हरहसितहारेन्दुकुन्दावदाता
वाणी मन्दस्मिततरमुखी मौलिबद्धेन्दुलेखा ।
विद्यावीणामृतमयघटाक्षस्रजा दीप्तहस्ता
श्वेताब्जस्था भवदभिमतप्राप्तये भारती स्यात् ॥

अस्याः पूजादिकं पूर्वोक्तैकादशाक्षरीवत्। पुरश्चरणं द्वादशलक्षजपः। अर्कपुष्पै-र्नागचम्पकैर्वा जुहुयाद् द्वादशसहस्रकम्।

इति सरस्वतीमन्त्राः

पारिजात सरस्वती—मन्त्रदेवप्रकाशिका के अनुसार पारिजात सरस्वती का मन्त्र है—ॐ ह्रीं हसौः ॐ सरस्वत्यै नमः। प्रातःकृत्यादि से पीठन्यासपर्यन्त कर्म करके ऋष्यादि न्यास करे।

ऋष्यादिन्यास—कण्वऋषये नमः शिरसि। त्रिष्टुप्छन्दसे नमः मुखे। पारिजातसरस्वत्यै नमः हृदये।

करन्यास—अं कं खं गं घं ङं आं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः। इं चं छं जं झं ञं ईं तर्जनीभ्यां स्वाहा। उं टं ठं डं ढं णं ऊं मध्यमाभ्यां वषट्। एं तं थं दं धं नं ऐं अनामिकाभ्यां हुं। ओं पं फं बं भं मं औं कनिष्ठाभ्यां वौषट्। औं यं रं लं वं शं षं सं हं लं क्षं अः करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्।

अंगन्यास—अं कं खं गं घं ङं आं हृदयाय नमः। इं चं छं जं झं ञं ईं शिरसे स्वाहा। उं टं ठं डं ढं णं ऊं शिखायै वषट्। एं तं थं दं धं नं ऐं कवचाय हुं। ओं पं फं बं भं मं औं नेत्रत्रयाय वौषट्। औं यं रं लं वं शं सं हं ळं क्षं अः अस्त्राय फट्।

मन्त्रवर्णन्यास—ॐ नमः ब्रह्मरन्ध्रे। ह्रीं नमः भ्रूमध्ये। ऐं नमः दक्षिणनेत्रे। ह्रीं नमः वामनेत्रे। ॐ नमः दक्षिणकर्णे। सं नमः वामकर्णे। रं नमः दक्षिणनासायां। स्वं नमः वामनासायां। त्यैं नमः मुखे। नं नमः गुह्ये। मं नमः पादे।

पुनः 'हसां' के साथ करन्यास—हसां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः इत्यादि और हसां हृदयाय नमः इत्यादि से हृदयादि षडंगन्यास करे। अन्य सारी पूजा वागीश्वरी की पूजा-पद्धति के अनुसार करे।

दक्षिणामूर्तिसंहिता के अनुसार ग्यारह अक्षरों का मन्त्र है—ॐ ऐं ह्स्रैं ह्रीं सरस्वत्यै नमः। प्रपञ्चसार में पारिजातसरस्वती का एक अन्य मन्त्र है—ॐ ऐं ह्रीं सरस्वत्यै नमः। इस मन्त्र की उपासना करने वाला पारिजात वृक्ष के समान वाञ्छित कामना पूर्ण करने

वाला सिद्ध होता है।

उक्त दोनों मन्त्रों के ऋषि दक्षिणामूर्ति, छन्द गायत्री, देवता परिजातेश्वरी वाणी, ह्रीं बीज, ऐं शक्ति और ॐ कीलक है। बीजमन्त्र में छ: दीर्घ स्वरों को जोड़कर करांगन्यास करे। जैसे—

आं ह्रीं अङ्गुष्ठाभ्यां नम:। ईं ह्रीं तर्जनीभ्यां स्वाहा। ऊं हूँ मध्यमाभ्यां वषट्। ऐं ह्रीं अनामिकाभ्यां हुं। औं ह्रीं कनिष्ठाभ्यां वौषट्। अ: ह्रीं करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्।

इसी प्रकार हृदय, शिर, शिखा, कवच, त्रिनेत्र और अस्त्रन्यास से षडंगन्यास करके ध्यान करे—

हंसारूढा हरहसितहारेन्दुकुन्दावदाता
वाणीमन्दस्मिततरमुखी मौलिबद्धेन्दुलेखा।
विद्यावीणाऽमृतमयघटाक्षस्त्रजा दीप्तहस्ता
श्वेताब्जस्था भवदभिमतप्राप्तये भारती स्यात्।।

हंस पर बैठी, मोतियों के हार से शोभित है। चन्द्रमा और कुन्दपुष्प के समान वर्ण गौर है। मुख पर मन्द मुस्कान है। मस्तक पर अर्द्धचन्द्र, हाथों में पुस्तक, वीणा, अमृतपूर्ण कलश और अक्षमाला है। श्वेत कमल पर बैठी भगवती भारती अभीष्ट सिद्धि हमें प्राप्त करायें।

इसके बाद पूर्वोक्त एकादशाक्षर मन्त्र की पूजाविधि से समस्त पूजन सम्पन्न करे। इस मन्त्र का पुरश्चरण बारह लाख जप से होता है। बारह हजार हवन आकपुष्प, नागकेशरपुष्प और चम्पाफूलों से करे।

गणेशमन्त्रा:

अथ वक्ष्ये गणपतेर्मन्त्रान् सर्वार्थसिद्धिदान् ।
यान् ज्ञात्वा मानवा नित्यं साधयन्ति मनोरथान् ।।
पञ्चान्तकं शशिधरं बीजं गणपतेर्विदुः ।

पञ्चान्तकं गकारः।

अस्य पूजाप्रयोगः—प्रातःकृत्यादिपीठन्यासान्तं विधाय केशरेषु मध्ये च ॐ तीव्रायै नमः, ज्वालिन्यै नन्दायै भोगदायै कामरूपिण्यै उग्रायै तेजोवत्यै सत्यायै विघ्ननाशिन्यै तदुपरि सर्वशक्तिकमलासनाय नमः। सर्वत्र प्रणवादिनमोऽन्तेन पूजयेत्। तथा च निबन्धे—

तीव्राख्या ज्वालिनी नन्दा भोगदा कामरूपिणी ।
उग्रा तेजोवती सत्या नवमी विघ्ननाशिनी ।।
सर्वादिशक्तिकमलासनाय हृदयावधिः ।

पीठमन्त्रोऽयमेतेन प्रदद्यादासनं विभोः ॥

ततः ऋष्यादिन्यासः—शिरसि गणकऋषये नमः, मुखे निवृच्छन्दसे नमः, हृदि गणेशाय देवतायै नमः। ततः कराङ्गन्यासौ—गां अंगुष्ठाभ्यां नमः, गीं तर्जनीभ्यां स्वाहा, गूं मध्यमाभ्यां वषट्, गैं अनामिकाभ्यां हुं, गौं कनिष्ठाभ्यां वौषट्, गः करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्। एवं गां हृदयाय नमः इत्यादिना हृदयादौ न्यसेत्। तथा च निबन्धे—

षड्दीर्घभाजा बीजेन कुर्यादङ्गानि षट्क्रमात्।

ततो ध्यानम्—

सिन्दूराभं त्रिनेत्रं पृथुतरजठरं हस्तपद्मैर्दधानं
दण्डं पाशाङ्कुशेष्टान्युरुकरविलसद्वीजपूराभिरामम्।
बालेन्दुद्योतिमौलिं करिपतिवदनं दानपूरार्द्रगण्डं
भोगीन्द्राबद्धभूषं भजत गणपतिं रक्तवस्त्राङ्गरागम् ॥

एवं ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्यार्घ्यस्थापनं कुर्यात्। ततः पीठपूजां विधाय केशरेषु मध्ये च तीव्रादिपीठमन्वन्तं पूजयेत्। ततो मूलेन मूर्त्तिं परिकल्प्य पुनर्ध्यात्वा आवाहनादि-पञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं कर्म विधाय आवरणपूजामारभेत्।

यथा—कर्णिकायां पूर्वादिदिक्षु ॐ गणाधिपतये नमः; एवं गणेशाय गणनाशकाय गणक्रीडाय। ततः केशरेषु अग्निनिर्ऋतिवायव्यीशानकोणेषु मध्ये दिक्षु च गां हृदयाय नमः इत्यादिक्रमेण पूजयेत्। पत्रमध्ये पूर्वादि—

वक्रतुण्डमेकदन्तं महोदरगजाननौ।
लम्बोदराख्यं विकटं विघ्नराजमनन्तरम्।
धूम्रवर्णं दलाग्रेषु ब्राह्म्याद्याः पूजयेत्ततः ॥

वाक्यन्तु—ॐ वक्रतुण्डाय नमः इत्यादिक्रमेण पूजयेत्। दलाग्रेषु ब्राह्म्याद्या मातरः पूर्वादिक्रमेण पूज्याः। तद्बहिरिन्द्रादीन् वज्रादींश्च प्रपूजयेत्। ततो धूपादि-विसर्जनान्तं कर्म समापयेत्। अस्य पुरश्चरणं चतुर्लक्षजपः। तथा च—

वेदलक्षं जपेन्मन्त्रं दशांशं जुहुयात्ततः।
मोदकैः पृथुकैर्लाजैः शक्तुभिः सेक्षुपर्वभिः ॥
नारिकेलैस्तिलैः शुद्धैः सुपक्वैः कदलीफलैः।
अष्टद्रव्याणि विघ्नस्य कथितानि मनीषिभिः ॥

गणेश मन्त्र—'गं' इस मन्त्र के ज्ञानमात्र से मनुष्य की सभी इच्छाएँ पूरी हो जाती हैं। इसका मन्त्रोद्धार यह है—पञ्चान्तकं = ग, शशिधरं = ं बीजं गणपते विन्दु अर्थात्

'गं'। इसका पूजायन्त्र इस प्रकार का है—

गणेश यन्त्र
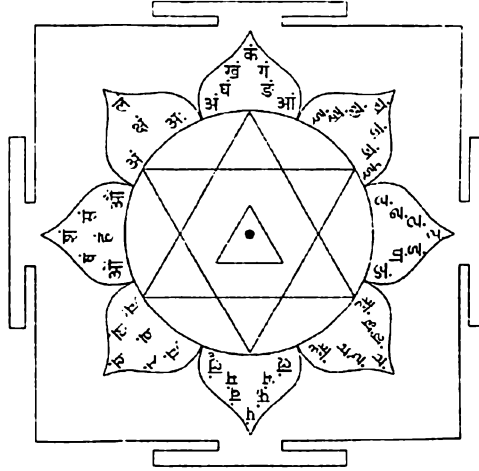
प्रात:कृत्यादि से पीठन्यासान्त कर्म करके केशरमध्य में पीठमन्त्र से पीठशक्तियों का पूजन करे। ॐ तीव्रायै नम:। ॐ ज्वालिन्यै नम:। ॐ नन्दायै नम:। ॐ भोगदायै नम:। ॐ कामरूपिण्यै नम:। ॐ उग्रायै नम:। ॐ तेजोवत्यै नम:। ॐ सत्यायै नम:। ॐ विघ्ननाशिन्यै नम:। ॐ सर्वशक्तिकमलासनाय नम: से आसन देकर गणेश जी का पूजन करे। इसके बाद न्यास करे।

ऋष्यादि न्यास—ॐ गणकऋषये नम: शिरसि। ॐ निवृच्छन्दसे नम: मुखे। ॐ गणेशाय देवतायै नम: हृदये।

करन्यास—गां अंगुष्ठाभ्यां नम:। गीं तर्जनीभ्यां स्वाहा। गूं मध्यमाभ्यां वषट्। गैं अनामिकाभ्यां हुम्। गौं कनिष्ठाभ्यां वौषट्। ग: करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्।

षडंगन्यास—गां हृदयाय नम:। गीं शिरसे स्वाहा। गूं शिखायै वषट्। गैं कवचाय हुं। गौं नेत्रत्रयाय वौषट्। ग: अस्त्राय फट्। अनन्तर ध्यान करें—

सिन्दूराभं त्रिनेत्रं पृथुतरजठरं हस्तपद्मैर्दधानं
दन्तं पाशाङ्कुशेष्टान्युरुकरविलसद्बीजपूराभिरामम्।
बालेन्दुद्योतिमौलिं करिपतिवदनं दानपूरार्द्रगण्डं
भोगीन्द्राबद्धभूषं भजत गणपतिं रक्तवस्त्राङ्गरागम्।।

श्री गणेश सिन्दूर के समान रक्त वर्ण के हैं। तीन नयन और स्थूल उदर हैं। चार करकमलों में दाँत, पाश, अंकुश एवं वरमुद्रा है। सूंड पर मनोहर बीजपूर एवं मस्तक

पर बाल चन्द्र है। हाथी के समान मुख है। कनपटियाँ मदवारि से आर्द्र हैं। सर्पाभूषणों से अलंकृत, रक्त वस्त्र एवं रक्त अंगराग से युक्त श्री गणेश की मैं वन्दना करता हूँ।

ध्यान के बाद मानस पूजन करके अर्घ्य स्थापन करे। तब पीठ पूजन करे। केशर की आठो दिशाओं में तथा मध्य में पूर्वोक्त तीव्रादि पीठदेवताओं का पूजन करे। तब मूल मन्त्र से देवता की मूर्ति कल्पित करके ध्यान-आवाहनादि करके पञ्च पुष्पाञ्जलि प्रदान करे। इसके बाद आवरण-पूजन करे।

कर्णिका अर्थात् बिन्दु में पूर्वादि क्रम से ॐ गणाधिपतये नमः, ॐ गणेशाय नमः, ॐ गणनायकाय नमः, ॐ गणक्रीडाय नमः से पूजन करे।

षट्कोणों में षडंग पूजा करे। गां हृदयाय नमः। गीं शिरसे स्वाहा। गूं शिखायै वषट्। गैं कवचाय हुं। गौं नेत्रत्रयाय वौषट्। गः अस्त्राय फट्।

अष्टदल में पूर्वादि क्रम से—ॐ वक्रतुण्डाय नमः। ॐ एकदन्ताय नमः। ॐ महोदराय नमः। ॐ गजाननाय नमः। ॐ लम्बोदराय नमः। ॐ विकटाय नमः। ॐ विघ्नराजाय नमः। ॐ धूम्रवर्णाय नमः।

अष्टदल के अग्रभाग में—ॐ ब्राह्मयै नमः। ॐ माहेश्वर्यै नमः। ॐ कौमार्यै नमः। ॐ वैष्णव्यै नमः। ॐ इन्द्राण्यै नमः। ॐ वाराह्यै नमः। ॐ चामुण्डायै नमः। ॐ महालक्ष्म्यै नमः।

चतुरस्त्र भूपुर में इन्द्रादि दश लोकपालों का और वज्रादि दश आयुधों का पूजन करे। इसके बाद धूपादि-विसर्जनान्त कार्य करे।

इसका पुरश्चरण चार लाख जप से होता है। जप का दशांश चालीस हजार हवन मोदक, पृथुक, लावा, सत्तू, ईखखण्ड, नारियल, तिल और पके केलों—कुल आठ द्रव्यों से होता है।

महागणेशमन्त्र:

निबन्धे—

श्रीशक्तिस्मरभूमिविघ्नबीजानि प्रथमं लिखेत् ।
ङेन्तं गणपतिं पश्चाद्वरान्ते वरदं पदम् ॥
उक्त्वा सर्वजनं मेन्ते वशमानय ठद्वयम् ।
अष्टाविंशत्यक्षरोऽयं ताराद्यो मनुरीरितः ॥

भूबीजमाह—

स्मृतिस्थं मांसमौबिन्दुयुक्तं भूबीजमीरितम् ।

स्मृतिर्गकारः, मांसं लकारः। तेन ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं ग्लौं गं गणपतये वर-वरद सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा।

अस्य पूजाप्रयोगः—प्रातःकृत्यादिपीठन्यासान्तं कर्म विधाय पूर्वोक्ततीव्रादि-पीठमन्वन्तं पीठशक्तीर्विन्यस्य ऋष्यादिन्यासमाचरेत्। शिरसि गणकऋषये नमः, मुखे निवृद्गायत्रीच्छन्दसे नमः, हृदि महागणपतये देवतायै नमः।

ततः कराङ्गन्यासौ—ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं ग्लौं गं गां अंगुष्ठाभ्यां नमः, एवं ॐ ५ गीं तर्जनीभ्यां स्वाहा, ॐ ५ गूं मध्यमाभ्यां वषट्, ॐ ५ गैं अनामिकाभ्यां हुं, ॐ ५ गौं कनिष्ठाभ्यां वौषट्, ॐ ५ गः करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्। एवं हृदयादिषु। केचित्तु ॐ गां हृदयाय नमः इत्यादि वदन्ति तन्न,

षड्बीजस्थे स्वबीजेन दीर्घभाजा प्रकल्पयेत् ।

इति प्रपञ्चसारवचनाद्विशिष्टस्यैव ग्रहणात् । ततो ध्यानम्—

नवरत्नमयं द्वीपं स्मरेदिक्षुरसाम्बुधौ ।
तद्वीचिधौतपर्यन्तं मन्दमारुतसेवितम् ॥
मन्दारपारिजातादिकल्पवृक्षलताकुल ।
उद्भूतरत्नच्छायाभिररुणीकृतभूतलम् ॥
उद्यद्दिनकरेन्दुभ्यामुद्भासितदिगन्तरम् ।
तस्य मध्ये पारिजातं नवरत्नमयं स्मरेत् ॥
ऋतुभिः सवितं षड्भिरनिशं प्रीतिवर्द्धनैः ।
तस्याधस्तान्महापीठे रचिते मातृकाम्बुजे ।
षट्कोणान्तस्त्रिकोणस्थं महागणपतिं स्मरेत् ॥
हस्तीन्द्राननमिन्दुचूडमरुणच्छायं त्रिनेत्रं रसा-
दाश्लिष्टं प्रियया सपद्मकरया साङ्कस्थया सङ्गतम् ।
बीजापूरगदाधनुस्त्रिशिखयुक्चक्राब्जपाशोत्पलं
व्रीह्यग्रस्वविषाणरत्नकलशान् हस्तैर्वहन्तं भजे ॥
गण्डपालीगलद्दानपूरलालसमानसान् ।
द्विरेफान् कर्णतालाभ्यां वारयन्तं मुहुर्मुहुः ॥
कराग्रधृतमाणिक्यकुम्भवक्त्रविनिःसृतैः ।
रत्नवर्षैः प्रीणयन्तं साधकान् मदविह्वलम् ।
माणिक्यमुकुटोपेतं रत्नाभरणभूषितम् ॥

एवं ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्य बहिःपूजामारभेत्।

अस्य पूजायन्त्रम्—त्रिकोणं तद्बहिः षट्कोणञ्च, अन्यत् सर्वं मातृकायन्त्रवत् बोध्यम्। ततः शङ्खस्थापनं कृत्वा पीठपूजां विधाय पूर्ववत्पीठशक्तीः पीठमनुञ्च सम्पूज्य पुनर्ध्यात्वा आवाहनादि-पञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं विधाय आवरणपूजा-

मारभेत्। त्रिकोणबाह्ये पूर्वादि चतुर्दिक्षु पूर्वे विल्ववृक्षाधः श्रियं श्रीपतिं, दक्षिणे वटवृक्षाधः गौरीं गौरीपतिं, पश्चिमे पिप्पलवृक्षाधः रतिं रतिपतिम्, उतरे प्रियंगु-वृक्षाधः महीं वराहं, देवताग्रे लक्ष्मीं गणनायकं, षट्कोणेषु अग्रकोणे सिद्धि-सहितमामोदम्, अग्निकोणे समृद्धिसहितं प्रमोदं, ईशानकोणे कान्तिसहितं सुमुखं, पश्चिमे मदनावतीसहितं दुर्मुखं, नैर्ऋते मदद्रवासहितं विघ्नं, वायव्ये द्राविणीसहितं विघ्नकर्त्तारं पूजयेत्। षट्कोणस्योभयपार्श्वयोः ॐ वसुधासहितशङ्खनिधये नमः, ॐ वसुमतीसहितपद्मनिधये नमः। यथा निबन्धे—

त्रिकोणस्य बहिर्विल्ववटपिप्पलभूरुहाम् ।
प्रियङ्गोरप्यधो मन्त्री दिक्षु पूर्वादितो यजेत् ॥
द्वौ द्वौ श्रियं श्रीपतिञ्च गौरीं गौरीपतिं तथा ।
रतिं रतिपतिञ्चापि महीमपि वराहकम् ॥
अग्रे च पूजयेल्लक्ष्मीसहितं गणनायकम् ।
अग्रे कोणे तथा सिद्धिसहितामोदमित्यपि ॥
अग्निकोणे समृद्ध्या च सहितञ्च प्रमोदकम् ।
ईशाने कान्तिसहितं सुमुखं पश्चिमे तथा ॥
दुर्मुखं मदनावत्या सहितं नैर्ऋते तथा ।
सहितं मदद्रवया गणस्याप्यधिनायकम् ॥
द्राविण्या सहितं वायौ विघ्नकर्त्तारमेव च ।
षट्कोणपार्श्वयोः शङ्खनिधिं वसुधया युतम् ।
वसुमत्या युतञ्चापि यजेत् पद्मनिधिं द्रुतम् ॥

ततः केशरेषु अग्न्यादिकोणे मध्ये दिक्षु च षड्बीजस्थे गां हृदयाय नमः इत्यादिना पूजयेत्। ततः पद्ममध्ये ब्राह्म्याद्याः सम्पूज्य तद्बहिः भूगृहे इन्द्रादीन् वज्रादींश्च पूजयेत्। ततो धूपादिविसर्जनान्तं कर्म समापयेत्। अस्य पुरश्चरणजप-श्चतुश्चत्वारिंशत्सहस्राधिकश्चतुर्लक्षः। तद्यथा—

ध्यायेन्मन्त्रं जपेन्मन्त्री चतुर्लक्षं समाहितः ।
चतुःसहस्रसंयुक्तं चत्वारिंशत्सहस्रकम् ।
दशांशं जुहुयाद् द्रव्यैरष्टाभिर्मोदकादिभिः ॥

महागणेश मन्त्र—ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं ग्लौं गं गणपतये वरवरद सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा। यह मन्त्र अट्ठाईस अक्षरों का है। इसका यन्त्र पूर्वोक्त गणेशयन्त्र के ही समान है।

पूजन—प्रातःकृत्यादि से पीठन्यास तक सभी कर्म करके गणेशपूजा-पद्धति के अनुसार तीव्रादि पीठशक्तियों का न्यास करके ऋष्यादि न्यास करे।

ऋष्यादि न्यास—गणकऋषये नमः शिरसि। निवृद् गायत्री छन्दसे नमः मुखे। महा-

गणपतिदेवताय नम: हृदये।

करन्यास— ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं ग्लौं गं गां अंगुष्ठाभ्यां नम:। ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं ग्लौं गं गीं तर्जनीभ्यां स्वाहा। ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं ग्लौं गं गूं मध्यमाभ्यां वषट्। ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं ग्लौं गं गैं अनामिकाभ्यां हुं। ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं ग्लौं गं गौं कनिष्ठाभ्यां वौषट्। ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं ग्लौं गं ग: करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्।

अंगन्यास— ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं ग्लौं गं गां हृदयाय नम:। ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं ग्लौं गं गीं शिरसे स्वाहा। ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं ग्लौं गं गूं शिखायै वषट्। ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं ग्लौं गं गैं कवचाय हुं। ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं ग्लौं गं गौं नेत्रत्रयाय वषट्। ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं ग्लौं गं ग: अस्त्राय फट्।

एक मत यह है कि ॐ गां हृदयाय नम:, ॐ गीं शिरसे स्वाहा इत्यादि क्रम से हृदयादि न्यास करें; किन्तु यह ठीक नहीं है। प्रपञ्चसार के अनुसार षड्बीज-स्थित निज बीज में दीर्घ स्वर लगाकर अंगन्यास करे। इस मत के अनुसार उपर्युक्त क्रम ही ठीक है; क्योंकि केवल निज बीज में ही दीर्घ स्वर लगाकर यदि न्यास करना होता तो षड्बीज-स्थित पद की कोई आवश्यकता ही नहीं थी। अत: निष्कर्ष यही है कि षड्बीजों से न्यास करें। उसमें जो निज बीज है, केवल उसी में दीर्घ स्वर लगाना चाहिये। तदनन्तर निम्नवत् ध्यान करे—

नवरत्नमयं द्वीपं स्मरेदिक्षुरसाम्बुधौ।
तद्वीचिधौतपर्यन्तं मन्दमारुतसेवितम् ॥
मन्दारपारिजातादिकल्पवृक्षलताऽऽकुलम् ।
उद्धूतरत्नच्छायाभिररुणीकृतभूतलम् ॥
उद्यद्दिनकरेन्दुभ्यामुद्भासितदिगन्तरम् ।
तस्य मध्ये पारिजातं नवरत्नमयं स्मरेत् ॥
ऋतुभि: सेवितं षड्भिरनिशं प्रीतिवर्द्धनै:।
तस्याधस्तान्महापीठे रचिते मातृकाम्बुजे।
षट्कोणान्तस्त्रिकोणस्थं महागणपतिं स्मरेत् ॥

ईख के रस के सागर में नवरत्नों से अलंकृत द्वीप है। उस सागर का तट लहरों से स्वच्छ है। मन्द पवन से सेवित है। मन्दार-पारिजात आदि कल्पवृक्ष एवं लताओं से परिपूर्ण है। रत्नों के प्रकाश की छाया से द्वीप का धरातल लालिमायुक्त है। उदीयमान सूर्य एवं चन्द्र से दिशाएँ प्रकाशित हैं। इस प्रकार के द्वीप के मध्य में नवरत्नों से सुशोभित एवं प्रीति को बढ़ाने वाला छ: ऋतुओं द्वारा निरन्तर सेवित पारिजात वृक्ष है। उस वृक्ष के नीचे षट्कोण के मध्य में मातृका वर्णों से रचित कमल पर त्रिकोणात्मक महापीठ

पर विराजमान महागणपति का ध्यान करे।

हस्तीन्द्राननमिन्दुचूड़मरुणच्छायं त्रिनेत्रं रसा-
दाश्लिष्टप्रियया सपद्मकरया साङ्कस्थया सङ्गतम्।
बीजापूरगदाधनुस्त्रिशिखयुक् चक्राब्जपाशोत्पलम्
व्रीह्यग्रस्वविषाणरत्नकलशान् हस्तैर्वहन्तं भजे ।।
गण्डपालीगलद्दानपूरलालसमानसान् ।
द्विरेफान् कर्णतालाभ्यां वारयन्तं मुहुर्मुहु: ।।
कराग्रधृतमाणिक्यकुम्भवक्त्रविनि:सृतै: ।
रत्नवर्षै: प्रीणयन्तं साधकान् मदविह्वलम्।
माणिक्यमुकुटोपेतं रत्नाभरणभूषितम् ।।

गजेन्द्र-मुख पर अर्द्धचन्द्रयुक्त चूड़ा है। अरुणाभायुक्त शरीर है। तीन नयन हैं। बाँई ओर विराजमाना पद्महस्ता प्रिया द्वारा प्रीतिपूर्वक आलिंगित हैं। हाथों में अनार, गदा, धनुष, त्रिशूल, चक्र, पद्म, पाश, उत्पल, व्रीहिगुच्छ, अपना दाँत और रत्नजटित कलश है। दोनों कनपटियों से झरते हुए मदजल को पीने की इच्छा वाले भौंरों को हटाने के लिये बारम्बार अपने कानों को हिला रहे हैं। आगे बढ़े हुए हाथ में स्थित माणिक्य-कलश के मुख से रत्नों की वर्षा के द्वारा साधकों को प्रसन्न किए हुए हैं। पानोल्लास से मस्त हैं। माणिक्य का मुकुट है। रत्नाभूषणों से सुशोभित महागणपति की मैं वन्दना करता हूँ।

इसके बाद मानस पूजा करे, तब बाहरी पूजा करे। पूजन यन्त्र में पहले त्रिकोण, तब षट्कोण, तब अष्टदल, तब भूपुर बनावे। यह यन्त्र गणेश-पूजन में अंकित है। इसके बाद शंखस्थापन करके पीठपूजा और पीठशक्तियों की पूजा करे। पुन: ध्यान-आवाहन आदि से पञ्च पुष्पाञ्जलि दान तक सभी कर्म करे। तब आवरण-पूजन करे—

त्रिकोण के बाहर पूरब में बेलवृक्ष के नीचे ॐ श्रियै नम: श्रीपतये नम: से।
त्रिकोण के बाहर दक्षिण में वटवृक्ष के नीचे ॐ गौर्यै नम: ॐ गौरीपतये नम: से।
त्रिकोण के बाहर पश्चिम में अश्वत्थवृक्ष के नीचे ॐ रत्यै नम: ॐ रतिपतये नम: से।
त्रिकोण के बाहर उत्तर में प्रियंगुवृक्ष के नीचे ॐ मह्यै नम: ॐ वराहाय नम: से।
त्रिकोण मध्य बिन्दु के आगे लक्ष्मीसहितगणनायकाय नम: से पूजन करे।

षट्कोण में—
अग्रकोण में—ॐ सिद्धिसहित आमोदाय नम:।
अग्निकोण में—ॐ समृद्धिसहितप्रमोदाय नम:।
ईशानकोण में—ॐ कान्तिसहितसुमुखाय नम:।
पश्चिम में—ॐ मदनावतिसहितदुर्मुखाय नम:।

नैर्ऋत्यकोण में— ॐ मदद्रवासहितविघ्नाय नमः।

वायुकोण में— ॐ द्राविणीसहितविघ्नकर्त्रे नमः।

षट्कोण के दोनों ओर—वसुधासहितशंखनिधये नमः।

वसुमतीसहितपद्मनिधये नमः।

इन मन्त्रों से पूजन करे।

केशर (विन्दु) के अग्न्यादि कोणों में, मध्य में और चारो दिशाओं में निम्नवत् पूजन करे—

ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं ग्लौं गं गां हृदयाय नमः।

ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं ग्लौं गं गीं शिरसे स्वाहा।

ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं ग्लौं गं गूं शिखायै वषट्।

ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं ग्लौं गं गैं कवचाय हूँ।

ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं ग्लौं गं गौं नेत्रत्रयाय वौषट्।

ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं ग्लौं गं गः अस्त्राय फट्। दिशाओं में।

अष्टदल में पूर्वादिक्रम से पूजन करे—

ॐ ब्राह्म्यै नमः। ॐ माहेश्वर्यै नमः। ॐ कौमार्यै नमः। ॐ वैष्णव्यै नमः। ॐ इन्द्राण्यै नमः। ॐ वाराह्यै नमः। ॐ चामुण्डायै नमः। ॐ महालक्ष्म्यै नमः।

चतुरस्र भूपुर में ॐ इन्द्राय नमः। ॐ अग्नये नमः। ॐ यमाय नमः। ॐ नैर्ऋतये नमः। ॐ वरुणाय नमः। ॐ वायवे नमः। ॐ कुवेराय नमः। ॐ ईशानाय नमः। ॐ ब्रह्मणे नमः। ॐ अनन्ताय नमः से पूजन करे।

चतुरस्र भूपुर के बाहर— ॐ वज्राय नमः। ॐ शक्तये नमः। ॐ दण्डाय नमः। ॐ खड्गाय नमः। ॐ पाशाय नमः। ॐ अङ्कुशिने नमः। ॐ गदाय नमः। ॐ त्रिशूलाय नमः। ॐ पद्माय नमः। ॐ चक्राय नमः से पूजा करे।

इसके बाद धूपादि विसर्जनपर्यन्त सभी कार्य करे।

इस मन्त्र का पुरश्चरण चार लाख चौवालीस हजार जप से होता है। जप के बाद गणेशमन्त्रोक्त मोदकादि अष्ट द्रव्यों से दशांश = ४४४०० हवन करे।

मन्त्रान्तरम्

शक्तिरुद्धं निजं बीजं महागणपतिं वदेत्।
ङेन्तमग्निवधुः प्रोक्तो मन्त्रोऽयं द्वादशाक्षरः॥

अस्य पूजाप्रयोगः—प्रातःकृत्यादितीव्रादिपीठशक्तीः पीठमन्वन्तं पीठमनुञ्च विधाय ऋष्यादिन्यासं कुर्यात्। निबन्धे—

गणकः स्यादृषिश्छन्दो गायत्री निवृदादिका।

उदिता देवता मन्त्रे नाम्ना शक्तिगणाधिपः ॥

ततः कराङ्गन्यासौ—ह्रीं अंगुष्ठाभ्यां नमः। गं तर्जनीभ्यां स्वाहा। ह्रीं मध्यमाभ्यां वषट्। महागणपतये अनामिकाभ्यां हुं। स्वाहा कनिष्ठाभ्यां वौषट्। समुदायमुच्चार्य करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्। एवं हृदयादिषु। तथा च निबन्धे—

व्यस्तैः समस्तैर्मन्त्रस्य पदैरङ्गानि कल्पयेत् ।

तथा—शिरसि गणकऋषये नमः, मुखे निवृद्गायत्रीच्छन्दसे नमः, हृदि शक्तिगणाधिपतये देवतायै नमः। ततो ध्यायेत्—

मुक्तागौरं मदगजमुखं चन्द्रचूडं त्रिनेत्रं
हस्तैः स्वीयैर्दधतमरविन्दांकुशौ रत्नकुम्भम् ।
अङ्कस्थायाः सरसिजरुचेस्तद्ध्वजालम्बिपाणे-
र्देव्या योनौ विनिहितकरं रत्नमौलिं भजामः ॥

एवं ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्य शङ्खस्थापनं कुर्यात्। ततः पीठपूजां विधाय तीव्रादिपीठमन्वन्तं पूजयेत्। पुनर्ध्यात्वा आवाहनादि-पञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं विधाय आवरणपूजां कुर्यात्। पूर्वोक्तचत्वारि मिथुनानि श्रीश्रीपतिप्रभृतीनि षट्कोणेषु आमोदादीन् केशरेष्वग्न्यादिकोणेषु मध्ये दिक्षु च ह्रीं हृदयाय नमः, गं शिरसे स्वाहा, ह्रीं शिखायै वषट्, महागणपतये कवचाय हुं, स्वाहा नेत्रत्रयाय वौषट्, समुदायमूलमुच्चार्य अस्त्राय फट्। पत्रेषु ब्राह्म्यादिमातृकास्तद्बहिरिन्द्रादीन् वज्रादींश्च सम्पूज्य धूपादिविसर्जनान्तं कर्म समापयेत्। यन्त्रन्तु महागणपतियन्त्रवत्। अस्य पुरश्चरणं लक्षजपः। तथा च—

लक्षमेकं जपेन्मन्त्रमपूपैस्तद्दशांशतः ।
जुहुयादर्चिते वह्नौ दिनेशो देवमर्चयेत् ॥

द्वितीय मन्त्र—ह्रीं गं ह्रीं महागणपतये स्वाहा—यह दूसरा द्वादशाक्षर मन्त्र है। इसका यन्त्र गणेशयन्त्र के समान ही है। प्रात:कृत्यादि करके गणेशपूजोक्त तीव्रादि पीठन्यास कर सभी कर्म करके ऋष्यादि न्यास करे।

ऋष्यादि न्यास—ॐ गणकऋषये नमः शिरसि। निवृद् गायत्री छन्दसे नमः मुखे। शक्तिगणाधिपतये देवतायै नमः हृदये।

करन्यास—ह्रीं अंगुष्ठाभ्यां नमः। गं तर्जनीभ्यां स्वाहा। ह्रीं मध्यमाभ्यां वषट्। महागणपतये अनामिकाभ्यां हुं। स्वाहा कनिष्ठाभ्यां वौषट्। ह्रीं गं ह्रीं महागणपतये स्वाहा करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्।

हृदयादि षडंग न्यास—ह्रीं हृदयाय नमः। गं शिरसे स्वाहा। ह्रीं शिखायै वषट्।

महागणपतये कवचाय हुं। स्वाहा नेत्रत्रयाय वौषट्। ह्रीं गं ह्रीं महागणपतये स्वाहा अस्त्राय फट्। इसके बाद ध्यान करे—

मुक्तागौरं मदगजमुखं चन्द्रचूड़ं त्रिनेत्रम्।
हस्तैः स्वीयैर्दधतमरविन्दाङ्कुशौ रत्नकुम्भम्।
अङ्कस्थायाः सरसिजरुचेस्तद्ध्वजालम्बिपाणे-
र्देव्या योनौ विनिहितकरे रत्नमौलिं भजामः ।।

मोतियों के समान गौरवर्ण हैं। मतवाले हाथी के जैसा मुख है। चूड़ा में अर्द्धचन्द्र हैं। तीन नेत्र हैं। तीन हाथों में कमल, अंकुश एवं रत्नकलश है। गोद में बैठी लिंग के अग्रभाग को अपने हाथ से स्पर्श करती हुई कमलमुखी देवी की योनि पर चौथा हाथ है। रत्नमुकुटधारी महागणपति की मैं वन्दना करता हूँ।

ध्यान के बाद मानस पूजन करके शंखस्थापन करे। गणेशोक्त पूजन विधि से पीठदेवताओं की स्थापना करके पूजन करे। तब ध्यान-आवाहनादि करके पञ्च पुष्पाञ्जलि प्रदान करे। इसके बाद आवरण पूजन करे।

पूर्वोक्त यन्त्र में पूर्वोक्त विधि से श्री-श्रीपति, गौरी-गौरीपति, रति-रतिपति, मही-वराह, लक्ष्मी-गणनायक, सिद्धिसहित आमोद, समृद्धिसहित प्रमोद, कान्तिसहित सुमुख, मदनावतीसहित दुर्मुख, मदद्रवासहित विघ्न, द्राविणीसहित विघ्नकर्ता, वसुधासहित शंखनिधि और वसुमतिसहित पद्मनिधि का पूजन करे।

केशर में अग्नि आदि कोणों में, मध्य में और चारो दिशाओं में निम्न मन्त्रों से पूजा करे—ह्रीं हृदयाय नमः। गं शिरसे स्वाहा। ह्रीं शिखायै वषट्। महागणपतये कवचाय हुं। स्वाहा नेत्रत्रयाय वौषट्। ह्रीं गं ह्रीं महागणपतये स्वाहा अस्त्राय फट्।

अष्टदल में ॐ ब्राह्म्यै नमः। ॐ माहेश्वर्यै नमः। ॐ कौमार्यै नमः। ॐ वैष्णव्यै नमः। ॐ इन्द्राण्यै नमः। ॐ वाराह्यै नमः। ॐ चामुण्डाय नमः। ॐ महालक्ष्म्यै नमः से अष्टमातृकाओं का पूजन करे।

भूपुर में इन्द्रादि दश दिक्पालों और वज्रादि दश आयुधों का पूजन पूर्वोक्त प्रकार से करे।

इसके बाद धूपादि विसर्जनान्त कर्म करके पूजा समाप्त करे। इस मन्त्र का पुरश्चरण एक लाख जप से होता है। जप का दशांश अर्थात् दश हजार हवन संस्कृत अग्नि में पिष्टकों से करे। पूजा प्रतिदिन करे।

मन्त्रान्तरम्

शक्तिरुद्धं निजं बीजं वशमानय ठद्वयम् ।
ताराद्यो मनुराख्यातो रुद्रसंख्याक्षरोऽपरः ।।

अस्य पूजायन्त्रञ्च पूर्ववत्। अङ्गमन्त्रस्तु—

एकेन त्रिभिर्द्वाभ्यां समस्तेन प्रकल्पयेत् ।

ॐ अंगुष्ठाभ्यां नमः। ॐ ह्रीं गं तर्जनीभ्यां स्वाहा। वशं मध्यमाभ्यां वषट्। आनय अनामिकाभ्यां हुं। स्वाहा कनिष्ठाभ्यां वौषट्। समस्तमुच्चार्य करतलकर-पृष्ठाभ्यां फट्। एवं हृदयादिषु। तथा च निबन्धे—

एकेनादौ त्रिभिर्द्वाभ्यां त्रिभिर्द्वाभ्यामनन्तरम् ।
समस्तेनास्त्रमाख्यातमङ्गक्लृप्तिरियं मता ॥

एतान्यंगुष्ठकादिषु हृदयादिषु विन्यसेत्।

ततो ध्यानम्—

हस्तैर्विभ्रतमिक्षुदण्डवरदौ पाशांकुशौ पुष्कर-
पृष्ठस्वप्रमदावराङ्गमनयाश्लिष्टं ध्वजाग्रस्पृशा ।
श्यामांग्या विधृताब्जया त्रिनयनं चन्द्रार्द्धचूडं जपा-
रक्तं हस्तिमुखं स्मरामि सततं भोगातिलोलं विभुम् ॥

अन्यत्सर्वं पूर्ववत्। अस्य पुरश्चरणजपो लक्षत्रयम्। तथा च निबन्धे—

लक्षत्रयं जपेन्मन्त्रमिक्षुदण्डैर्दशांशतः ।
अपूपैराज्ययुक्तैर्वा जुहुयान्मन्त्रसिद्धये ॥

तृतीय मन्त्र—ॐ ह्रीं गं ह्रीं वशमानय स्वाहा—यह तृतीय मन्त्र एकादशाक्षर है। इस ग्यारह अक्षरों के मन्त्र से पूजन महागणपति की पूजापद्धति से क्रमानुसार करे। पूजन यन्त्र भी पूर्ववत् है। केवल अंगन्यास इस प्रकार करे—

ॐ अंगुष्ठाभ्यां नमः। ॐ ह्रीं गं तर्जनीभ्यां स्वाहा। वशं मध्यमाभ्यां वषट्। आनय अनामिकाभ्यां हुं। स्वाहा कनिष्ठाभ्यां वौषट्। ॐ ह्रीं गं वशमानय स्वाहा करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्। इसी प्रकार हृदयादि षडंग न्यास करके ध्यान करे—

हस्तैर्विभ्रतमिक्षुदण्डवरदौ पाशांङ्कुशौ पुष्कर-
पृष्ठस्वप्रमदावराङ्गमनयाश्लिष्टं ध्वजाग्रस्पृशा।
श्यामाङ्ग्या विधृताब्जया त्रिनयनं चन्द्रार्द्धचूडं जपा-
रक्तं हस्तिमुखं स्मरामि सततं भोगातिलोलं विभुम् ।।

श्रीगणेश के हाथों में ईखदण्ड, वरमुद्रा, पाश और अंकुश हैं। श्यामवर्णा कमलहस्ता ध्वजाग्र को स्पर्श करने वाली स्वपत्नी द्वारा आलिंगित हैं। अपनी पत्नी की योनि पर हाथ रक्खे हुए हैं। तीन आँखें हैं। चूड़ा में अर्द्धचन्द्र है। अड़हुल के फूल के समान रक्तवर्ण हैं। मुख हाथी के समान है। निरन्तर भोगासक्त भगवान् महागणपति का मैं स्मरण करता हूँ।

इस मन्त्र का पुरश्चरण तीन लाख जप से होता है। दशांश तीस हजार हवन ईखखंडों और घृताक्त पिष्टकों से होता है।

हेरम्बमन्त्र:

स च उकारयुक्तो गकारः सविन्दुः प्रणवादिनमोऽन्तश्चतुरक्षरः। तथा च निबन्धे—

पञ्चान्तको विन्दुयुक्तो वामकर्णविभूषितः ।
तारादिहृदयान्तोऽयं हेरम्बमनुरीरितः ।
चतुर्वर्णात्मको नृणां चतुर्वर्गफलप्रदः ॥

अस्य पूजाप्रयोगः—प्रातःकृत्यादिपीठन्यासान्तं विधाय गणेशोक्तपीठशक्तीः पीठमनुञ्च विन्यस्य ऋष्यादिन्यासं कुर्यात्। अस्य गणकऋषिर्गायत्रीच्छन्दो हेरम्बो देवता गकारो बीजं विन्दुः शक्तिश्चतुर्वर्गसिद्ध्यर्थे विनियोगः। शिरसि गणकऋषये नमः इत्यादि। ततः कराङ्गन्यासौ—गां गीं गूं गैं गौं गः इत्येतैः षडङ्गानि कुर्यात्। तथा च—

षड्दीर्घभाजा बीजेन षडङ्गानि प्रकल्पयेत् ।

ततो ध्यानम्—

मुक्ताकाञ्चननीलकुन्दघुसृणच्छायैस्त्रिनेत्रान्वितै-
र्नागास्यैर्हरिवाहनं शशिधरं हेरम्बमर्कप्रभम् ।
दृप्तं दानमभीतिमोदकरदान् टङ्कं शिरोक्षात्मिकां
मालां मुद्गरमंकुशं त्रिशिखकं दोर्भिर्दधानं भजे ॥

एवं ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्यार्घ्यस्थापनं कुर्यात्। ततो गणेशोक्तपीठशक्त्यन्तं सम्पूज्य ॐ हुं हुं महासिंहाय गां हेरम्बासनाय नमः इत्यासनं पूजयेत्। तथा च निबन्धे—

प्रणवं कवचद्वन्द्वं महासिंहाय गां ततः ।
हेरम्बेति पदं पश्चादासनाय हृदन्ततः ।
अयमासनमन्त्रः स्यात्प्रदद्यादमुनासनम् ॥

पीठन्यासेऽप्ययं मन्त्रः। तथा च निबन्धे—

आसने यो मनुः प्रोक्तस्तन्न्यासेऽपि स एव हि ।

ततः ॐ गमिति मन्त्रेण मूर्तिं कल्पयेत्। तथा च निबन्धे–

तारादिविघ्नबीजेन मूर्त्तिं तस्य प्रकल्पयेत् ।

ततः पुनर्ध्यात्वा आवाहनादिपञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं विधायावरणपूजा-

मारभेत्। यथा—अग्न्यादिकोणे मध्ये दिक्षु च गां हृदयाय नमः इत्यादिना पूजयेत्। पत्रेषु—

विघ्नं विनायकं शूरं वीरं वरदसंज्ञकम् ।
इभवक्त्रञ्चैकरदं लम्बोदरञ्च पूजयेत् ।।

पत्राग्रे लोकपालान् तद्बहिरिन्द्रादीन् वज्रादींश्च पूजयेत्। ततो धूपादिविसर्जनान्तं कर्म समापयेत्। अस्य पुरश्चरणं त्रिलक्षजपः। तथा च—

लक्षत्रयं जपेन्मन्त्रं दशांशं जुहुयात्ततः ।

होतव्यं पूर्ववत्।

हेरम्ब मन्त्र—ॐ गूं नमः। यह चार अक्षरों का मन्त्र है। इसी मन्त्र से पूजा करे। यह साधकों को चतुवर्गफल-प्रदायक है।

यन्त्र—गणेशयन्त्र के समान होता है।

प्रातःकृत्यादि से पीठन्यासान्त कर्मों को करके पूर्वोक्त गणेशपूजा-पद्धति के क्रम से पीठन्यास करे। इसके बाद विनियोग और ऋष्यादि न्यास करे—

विनियोग—अस्य मन्त्रस्य गणक ऋषिः, गायत्री छन्दः, हेरम्बो देवता, गकारो बीजं, बिन्दुः शक्तिः, चतुवर्गसिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः।

ऋष्यादि न्यास—गणकऋषये नमः शिरसि। गायत्रीछन्दसे नमः मुखे। हेरम्बाय देवतायै नमः हृदये। गं बीजाय नमः गुह्ये। विन्दवे नमः पादयोः। चतुवर्गसिद्ध्यर्थे जपे विनियोगाय नमः अञ्जलौ।

करन्यास—गां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः। गीं तर्जनीभ्यां स्वाहा। गूं मध्यमाभ्यां वषट्। गैं अनामिकाभ्यां हुं। गौं कनिष्ठायां वौषट्। गः करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्।

हृदयादि न्यास—गां हृदयाय नमः। गीं शिरसे स्वाहा। गूं शिखायै वषट्। गैं कवचाय हुं। गौं नेत्रत्रयाय वौषट्। गः अस्त्राय फट्। अनन्तर ध्यान करे—

मुक्ताकाञ्चननीलकुन्दघुसृणच्छायैस्त्रिनेत्रान्वितै-
र्नागास्यैर्हरिवाहनं शशिधरं हेरम्बमर्कप्रभम्।
दृप्तं दानमभीतिमोदकरदान् टङ्कं शिरोऽक्षात्मिकां
मालां मुद्‌गरमङ्कुशं त्रिशिखकं दोर्भिर्दधानं भजे ।।

मोती, स्वर्ण, नीलम, कुन्द और कुंकुम के समान विविध वर्ण के पाँच गजमुख हैं। प्रत्येक मुख में तीन नयन हैं। सिंह पर विराजमान हैं। ललाट में अर्द्धचन्द्र है। देह की प्रभा सूर्य के समान है। गर्वपूर्वक हाथों में वरमुद्रा, अभयमुद्रा, मोदक, स्वदन्त, टंक, अस्त्र, मुण्डमाला, मुद्‌गर, अंकुश और त्रिशूल धारण किए हुए हैं। ऐसे हेरम्ब की मैं वन्दना करता हूँ।

इसके बाद मानसोपचारों से पूजन करके अर्घ्य-स्थापन करे। गणेशपूजा में वर्णित विधि से पीठपूजा करे। 'ॐ हुं हुं महासिंहाय गां हेरम्बासनाय नम:' से आसन की पूजा करे। पीठन्यास में भी इसी मन्त्र का प्रयोग करे।

इसके बाद 'ॐ गं' से मूर्ति को कल्पित करके फिर से ध्यान-आवाहन आदि करके पाँच पुष्पाञ्जलि प्रदान तक सभी कार्य करके आवरण पूजा करे।

षडंग पूजन—अग्नि आदि कोणों में, मध्य में और दिशाओं में पूजन करे—गां हृदयाय नम:। गीं शिरसे स्वाहा। गूं शिखायै वषट्। गौं कवचाय हुं। ग: अस्त्राय फट्।

अष्ट पद्मदलों में पूर्वादि क्रम से ॐ विघ्नाय नम:। ॐ विनायकाय नम:। ॐ शूराय नम:। ॐ वीराय नम:। ॐ वरदाय नम:। ॐ इभवक्त्राय नम:। ॐ एक-दन्ताय नम:। ॐ लम्बोदराय नम: से पूजन करे।

आठ दलाग्रों में—ॐ ब्राह्म्यै नम:। ॐ माहेश्वर्यै नम:। ॐ कौमार्यै नम:। ॐ वैष्णव्यै नम:। ॐ इन्द्राण्यै नम:। ॐ वाराह्यै नम:। ॐ चामुण्डायै नम:। ॐ महालक्ष्म्यै नम:।

भूपुर में—ॐ इन्द्राय नम:। ॐ अग्नये नम:। ॐ यमाय नम:। ॐ नैर्ऋतये नम:। ॐ वरुणाय नम:। ॐ वायवे नम:। ॐ कुवेराय नम:। ॐ ईशानाय नम:। ॐ ब्रह्मणे नम:। ॐ अनन्ताय नम:।

भूपुर के बाहर—ॐ वज्राय नम:। ॐ शक्तये नम:। ॐ दण्डाय नम:। ॐ खड्गाय नम:। ॐ पाशाय नम:। ॐ अंकुशाय नम:। ॐ गदाय नम:। ॐ त्रिशूलाय नम:। ॐ पद्माय नम:। ॐ चक्राय नम:।

तब धूप-दीपादि से विसर्जनान्त कर्म करके पूजा समाप्त करे।

इसका पुरश्चरण तीन लाख जप और तीस हजार हवन से होता है। गणेशमन्त्र का हवन सामग्रियों से हवन करे।

मन्त्रान्तरम्

गं क्षिप्रप्रसादनाय नमः। तथा च निबन्धे—

संवर्त्तको नेत्रयुतः पार्श्वो वह्न्यासने स्थितः ।
प्रसादनाय हृन्मत्रं स्वबीजाद्यो दशाक्षरः ॥

अस्य पूजा—प्रातःकृत्यादिपीठन्यासान्तं कर्म विधाय ऋष्यादिन्यासं कुर्यात्। शिरसि गणकऋषये नमः, मुखे विराट्छन्दसे नमः, हृदि क्षिप्रप्रसादनाय देवतायै नमः। तदुक्तम्—

गणको मुनिराख्यातो विराट्छन्द उदीरितम् ।

क्षिप्रप्रसादनो विघ्नो देवतास्य प्रकीर्त्तिता ।
दीर्घयुक्तेन बीजेन षडङ्गानि प्रकल्पयेत् ॥

एकाक्षरवत् कराङ्गन्यासौ कृत्वा ध्यायेत्। ध्यानम्—

पाशांकुशौ कल्पलतां विषाणं दधत् स्वशुण्डाहितबीजपूरः ।
रक्तस्त्रिनेत्रस्तरुणेन्दुमौलिर्हारोज्ज्वलो हस्तिमुखोऽवताद्वः ॥

एवं ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्य शङ्खस्थापनं कुर्यात्। ततः पीठपूजां विधाय पुनर्ध्यात्वा आवाहनादिपञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं विधाय आवरणपूजामारभेत्। अग्न्यादिकोणे मध्ये दिक्षु च गां हृदयाय नमः इत्यादिना षडङ्गानि पूजयेत्। तथा च निबन्धे—

अङ्गानि पूर्वमभ्यर्च्य विघ्नानष्टौ यजेत्ततः ।
पत्रेषु पूजयेदेता ब्राह्म्याद्यास्तदनन्तरम् ॥

पत्रेषु—

विघ्नं विनायकं शूरं वीरं वरदसंज्ञकम् ।
इभवक्त्रञ्चैकरदं लम्बोदरञ्च पूजयेत् ॥

पत्राग्रे ब्राह्म्याद्यास्तद्बहिरिन्द्रादीन् वज्रादींश्च पूजयेत्। ततो धूपादिविसर्जनान्तं कर्म समापयेत्। अस्य पुरश्चरणं लक्षजपः। तथा च—

लक्षं जपेज्जपस्यान्तो जुहुयादयुतं तिलैः ।
मधुरत्रितयैर्वापि द्रव्यैरष्टाभिरीरितैः ॥

अन्य मन्त्र—'गं क्षिप्रप्रसादनाय नमः' यह हेरम्ब का दूसरा दशाक्षर मन्त्र है। इसी मन्त्र से हेरम्ब का पूजन पूर्वोक्त गणेशयन्त्र में करे। प्रातःकृत्यादि से पीठन्यासान्त कर्म करके ऋष्यादि न्यास करे।

ऋष्यादि न्यास—गणकऋषये नमः शिरसि। विराट्छन्दसे नमः मुखे। क्षिप्र- प्रसादनाय देवतायै नमः हृदये।

करन्यास—गां अंगुष्ठाभ्यां नमः। गीं तर्जनीभ्यां स्वाहा। गूं मध्यमाभ्यां वषट्। गैं अनामिकाभ्यां हुं। गौं कनिष्ठाभ्यां वौषट्। गः करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्।

अंगन्यास—गां हृदयाय नमः। गीं शिरसे स्वाहा। गूं शिखायै वषट्। गैं कवचाय हुँ। गौं नेत्रत्रयाय वौषट्। गः अस्त्राय फट्। अनन्तर ध्यान करे—

पाशाङ्कुशौ कल्पलतां विषाणं दधत् स्वशुण्डाहितबीजपूरः।
रक्तस्त्रिनेत्रस्तरुणेन्दुमौलिर्हारोज्ज्वलो हस्तिमुखोऽवताद्वः ।।

हाथों में पाश, अंकुश, कल्पलता और गजदन्त है। अपनी सूंड पर बीजपूर रखे हुए

हैं। लाल वर्ण, तीन नयन, मस्तक पर तरुण चन्द्र, गले में उज्ज्वल हार और हाथी के समान मुख वाले भगवान् हेरम्ब हमारी रक्षा करें।

मानसोपचारों से पूजन करे। शंखस्थापन करे। तब पीठपूजा करके ध्यान-आवाहनादि पूजन करके पाँच पुष्पाञ्जलि प्रदान करे। तब आवरणपूजन करे।

षडंग पूजन अग्नि आदि दिशाओं के कोणों में, मध्य में और दिशाओं में करे। पूजन षडंग न्यास से वर्णित मन्त्रों से करे।

आठ दलों में अष्टविघ्नों की पूजा करे। ॐ विघ्नाय नमः। ॐ विनायकाय नमः। ॐ शूराय नमः। ॐ वीराय नमः। ॐ वरदाय नमः। ॐ इभवक्त्राय नमः। ॐ एकदन्ताय नमः। ॐ लम्बोदराय नमः।

दलों के अग्रभाग में अष्टमातृकाओं का पूजन करे—ॐ ब्राह्म्यै नमः। ॐ माहेश्वर्यै नमः। ॐ कौमार्यै नमः। ॐ वैष्णव्यै नमः। ॐ इन्द्राण्यै नमः। ॐ वाराह्यै नमः। ॐ चामुण्डायै नमः। ॐ महालक्ष्म्यै नमः।

भूपुर में इन्द्रादि दश दिक्पालों और उनके दश आयुधों का पूजन करे। इसके बाद धूप-दीपादि से विसर्जन तक समस्त कार्य करे।

पुरश्चरण में एक लाख जप और दश हजार हवन गणेशमन्त्रोक्त आठ द्रव्यों से करे।

हरिद्रागणेशमन्त्राः

पञ्चान्तको धरासंस्थो विन्दुभूषितमस्तकः ।
एकाक्षरो महामन्त्रः सर्वकामफलप्रदः ॥

अस्य वसिष्ठ ऋषिर्गायत्रीच्छन्दो हरिद्रागणपतिर्देवता गकारो बीजं लकारः शक्तिः। बीजेनैव षडङ्गकम्। ध्यानन्तु—

हरिद्राभं चतुर्बाहुं हारिद्रवसनं विभुम् ।
पाशांकुशधरं देवं मोदकं दन्तमेव च ॥

एवं ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्य शङ्खस्थापनादितीव्रादिपीठमन्वन्तां पीठपूजां विधाय पुनर्ध्यात्वा गणपतिं पूजयेत्। आवरणपूजाविनियोगमेकाक्षरगणपतिवत्। अस्य पुरश्चरणं चतुर्लक्षजपः। त्रिमधुरयुक्तहरिद्राचूर्णमिश्रितैस्तण्डुलैरयुतहोमः।

हरिद्रागणेशमन्त्र—हरिद्रा गणेश का मन्त्र 'ग्लं' एकाक्षर है। यह सर्वार्थसिद्धिदायक है। इसका यन्त्र गणेश यन्त्र के ही समान है।

ऋष्यादि न्यास—इस मन्त्र के ऋषि वशिष्ठ, छन्द गायत्री, देवता हरिद्रा गणेश, बीज 'ग' और शक्ति 'ल' है।

करन्यास—गां अंगुष्ठाभ्यां नमः। गीं तर्जनीभ्यां नमः। गूं मध्यमाभ्यां नमः। गैं अनामिकाभ्यां नमः। गौं कनिष्ठाभ्यां नमः। गः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः।

षडंगन्यास—गां हृदयाय नमः। गीं शिरसे स्वाहा। गूं शिखायै वषट्। गैं कवचाय हुं। गौं नेत्रत्रयाय वौषट। गः अस्त्राय फट्। इनका ध्यान इस प्रकार करे—

हरिद्राभं चतुर्बाहुं हारिद्रवसनं विभुम्।
पाशाङ्कुशधरं देवं मोदकं दन्तमेव च ।।

हल्दी जैसा पीला वर्ण, चार भुजाएँ, हल्दी के रंग के वस्त्र, हाथों में पाश, अंकुश, वर, मोदक और दन्त धारण करने वाले प्रभुत्वशाली भगवान् हरिद्रा गणेश का मैं ध्यान करता हूँ।

इसके बाद मानसोपचारों से पूजन करके शंखस्थापन करे। तीव्रादि पीठशक्तियों और पीठ की पूजा करके ध्यान-आवाहनादि सहित एकाक्षर गणेशमन्त्रोक्त पूजा के समान पूजन करे।

चार लाख जप से इसका पुरश्चरण होता है। घी-मधु-शक्कर और हल्दीचूर्णमिश्रित चावल से हवन होता है।

मन्त्रान्तरम्

मन्त्रोद्धारमहं वक्ष्ये शृणुष्व कमलानने ।
इन्द्रबीजं समुद्धृत्य निजबीजं समुद्धरेत् ।।
चतुर्द्दशस्वरेणाढ्यं विन्दुभूषितमस्तकम् ।
एकाक्षरी महाविद्या कथिता पद्मयोनिना ।।

अस्य पूजादिकं सर्वं महागणपतिवत्। कराङ्गन्यासौ तु षड्दीर्घयुक्तेन स्वबीजेन। अस्य भेदान्तरम्—

लक्ष्म्याद्यां वाथ कूर्चाद्यां मायाद्यां वा जपेत् सुधीः ।
कामाद्यां वधूबीजाद्यां वागाद्यां वा जपेत् सदा ।
ॐकाराद्यां महाविद्यां निजबीजादिकां तथा ।।

तथा च—

द्व्यक्षरी च महाविद्या त्र्यक्षरी चास्त्रसंयुता ।
चतुर्वर्णात्मिका विद्या वह्निजायावधिः प्रिये ।।
एषा विद्या महाविद्या त्रैलोक्ये च सुदुर्लभा ।
चतुर्वर्गप्रदा साक्षान्महापातकनाशिनी ।।

एतासां पूजादिकं महागणपतिमन्त्रवत्।

हरिद्रागणेश का अन्य मन्त्र—हरिद्रा गणेश का दूसरा मन्त्र 'ग्लौं' एक अक्षर का होता है। इसे ब्रह्मा ने बताया है। इस मन्त्र का पूजन इत्यादि महागणपति की पूजा के समान होता है। केवल अंग- न्यास 'गां हृदयाय नम:' इत्यादि के क्रम से होता है। इसके आदि में श्रीं, हूं, ह्रीं, क्लीं स्त्रीं, अथवा ॐ या गं को लगाने से जो दो अक्षर के मन्त्र बनते हैं, उनसे भी हरिद्रा गणेश की पूजा हो सकती है। इन दो अक्षरों के मन्त्र में 'फट्' लगाने से त्र्यक्षर और स्वाहा लगाने से चतुरक्षर मन्त्र बनते हैं। ये सभी मन्त्र त्रिभुवन में अतिदुर्लभ हैं। ये धर्म-अर्थ-काम-मोक्ष चतुर्वर्गफलप्रदायक हैं। महापापों के विनाशक हैं। मन्त्र हैं—

द्व्यक्षर मन्त्र	त्र्यक्षर मन्त्र	चतुरक्षर मन्त्र
श्रीं ग्लौं	श्रीं ग्लौं फट्	श्रीं ग्लौं स्वाहा
हूं ग्लौं	हूं ग्लौं फट्	हूं ग्लौं स्वाहा
ह्रीं ग्लौं	ह्रीं ग्लौं फट्	ह्रीं ग्लौं स्वाहा
क्लीं ग्लौं	क्लीं ग्लौं फट्	क्लीं ग्लौं स्वाहा
स्त्रीं ग्लौं	स्त्रीं ग्लौं फट्	स्त्रीं ग्लौं स्वाहा
ॐ ग्लौं	ॐ ग्लौं फट्	ॐ ग्लौं स्वाहा
गं ग्लौं	गं ग्लौं फट्	गं ग्लौं स्वाहा

इन मन्त्रों की पूजा महागणपति की पूजा के समान उन्हीं के यन्त्र में होती है।

लक्ष्मीमन्त्रा:

अथ वक्ष्ये श्रियो मन्त्रान् श्रीसौभाग्यफलप्रदान् ।
यस्या: कटाक्षमात्रेण त्रैलोक्यमपि वर्द्धते ॥
वान्तं वह्निसमारूढं वामनेत्रेन्दुसंयुतम् ।
बीजमेतत् श्रियो देव्या: सर्वकामफलप्रदम् ॥

अस्य पूजाप्रयोग:—सामान्यपूजापद्धत्युक्तप्रात:कृत्यादिपीठन्यासान्तं कर्म विधाय ऋष्यादिन्यासं कुर्यात्। शिरसि भृगवे ऋषये नम:, मुखे निवृद्गायत्रीच्छन्दसे नम:, हृदये श्रियै देवतायै नम:। केशरेषु मध्ये च पीठशक्ती: पीठमनुञ्च न्यसेत्। यथा—ॐ विभूत्यै नम:। एवं उन्नत्यै कान्त्यै सृष्ट्यै कीर्त्यै सन्नत्यै व्युष्ट्यै उत्कृष्ट्यै ऋद्ध्यै। तथा च निबन्धे—

विभूतिरुन्नति: कान्ति: सृष्टि: कीर्त्तिश्च सन्नति: ।
व्युष्टिरुत्कृष्टिर्ऋद्धिश्च सम्प्रोक्ता नवशक्तय: ॥

तत: श्रीं कमलासनाय नम: इत्यासनं न्यसेत्। तत: कराङ्गन्यासौ—श्रां अंगुष्ठाभ्यां नम:। श्रीं तर्जनीभ्यां स्वाहा। श्रूं मध्यमाभ्यां वषट्। श्रैं अनामिकाभ्यां

हुं। श्रौं कनिष्ठाभ्यां वौषट्। श्रः करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्। एवं श्रां हृदयाय नमः इत्यादिना न्यसेत्। तथा च निबन्धे—

अङ्गानि दीर्घयुक्तेन रमाबीजेन कल्पयेत् ।

ततो ध्यानम्—

कान्त्या काञ्चनसन्निभां हिमगिरिप्रख्यैश्चतुर्भिर्गजै-
र्हस्तोत्क्षिप्तहिरण्मयामृतघटैरासिच्यमानां श्रियम् ।
बिभ्राणां वरमब्जयुग्ममभयं हस्तैः किरीटोज्ज्वलां
क्षौमाबद्धनितम्बविम्बललितां वन्देऽरविन्दस्थिताम् ॥

एवं ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्य शङ्खस्थापनं कुर्यात्। ततः पीठपूजां विधाय केशरेषु मध्ये च विभूत्यादिपीठमन्वन्तं सम्पूज्य, मूलेन मूर्त्तिं परिकल्प्य, पुनर्ध्यात्वा आवाहनादिपञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं कर्म विधाय आवरणपूजामारभेत्।

तद्यथा—अग्न्यादि केशरेषु मध्ये दिक्षु च श्रां हृदयाय नमः इत्यादिना सम्पूज्य दिग्दलेषु पूर्वादि ॐ वासुदेवाय नमः। एवं सङ्कर्षणाय, प्रद्युम्नाय, अनिरुद्धाय। विदिग्दलेषु अग्न्यादि ॐ दमकाय नमः, सलिलाय, गुग्गुलये, कुरुण्टकाय। ततो देव्या दक्षिणे ॐ शङ्खनिधये नमः, एवं वसुधायै। वामे ॐ पद्मनिधये नमः, एवं वसुमत्यै। पत्राग्रेषु पूर्वादि ॐ बलाक्यै नमः, एवं विमलायै कमलायै वनमालिकायै विभीषिकायै मालिकायै शाङ्कर्यै वसुमालिकायै। तद्बहि-रिन्द्रादीन् वज्रादींश्च पूजयेत्। ततो धूपादिविसर्जनान्तं कर्म समापयेत्। अस्य पुर-श्चरणं द्वादशलक्षजपः। तथा च—

भानुलक्षं जपेमन्त्रं दीक्षितो विजितेन्द्रियः ।
तत्सहस्रञ्च जुहुयात्कमलैर्मधुरोक्षितैः ॥
जपान्ते जुहुयान्मन्त्री तिलैर्वा मधुराप्लुतैः ।
विल्वैः फलैर्वा जुहुयात्त्रिभिर्वा साधकोत्तमः ॥

लक्ष्मी मन्त्र—अब लक्ष्मी के मन्त्र का वर्णन किया जाता है। इन सभी मन्त्रों से लक्ष्मी की आराधना करने से सम्पत्ति और सौभाग्य की वृद्धि होती हैं। इस लक्ष्मी की कृपा से ही तीनों लोक श्री से सम्पन्न है।

१ 'श्रीं' लक्ष्मी का एकाक्षर मन्त्र है। यह सभी मनोरथों को पूर्ण करता है। पूजन यन्त्र आगे अंकित है।

श्रीलक्ष्मीपूजनयन्त्र
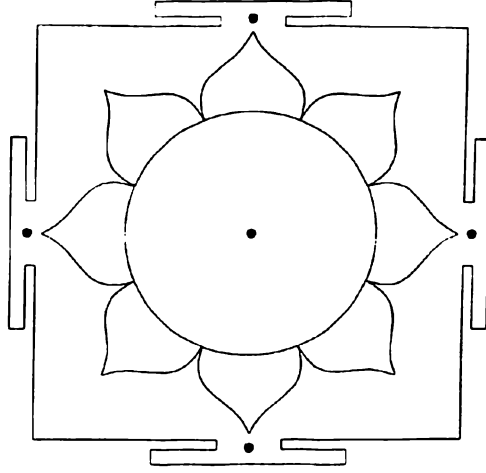
प्रात:कृत्यादि से लेकर पीठन्यास तक के सभी कार्य करके ऋष्यादि न्यास इस प्रकार करे—भृगुऋषये नम: शिरसि। निवृद्गायत्रीछन्दसे नम: मुखे। श्रियै देवतायै नम: हृदये।

हृदयकमल के केशर में दिशाओं तथा मध्य में नौ शक्तियों का पूजन करे—ॐ विभूत्यै नम:। ॐ उन्नत्यै नम:। ॐ कान्त्यै नम:। ॐ सृष्ट्यै नम:। ॐ कीर्त्यै नम:। ॐ सन्नत्यै नम:। ॐ व्युष्ट्यै नम:। ॐ उत्कृष्ट्यै नम:। ॐ ऋद्ध्यै नम:। श्री कमलासनाय नम: से आसन प्रदान करे। इसके बाद करांगन्यास करे।

करन्यास—श्रां अंगुष्ठाभ्यां नम:। श्रीं तर्जनीभ्यां स्वाहा। श्रूं मध्यमाभ्या वषट्। श्रैं अनामिकाभ्यां हुं। श्रौं कनिष्ठाभ्यां वौषट्। श्र: करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्।

हृदयादि षडंग न्यास—श्रां हृदयाय नम:। श्रीं शिरसे स्वाहा। श्रूं शिखायै वषट्। श्रैं कवचाय हुं। श्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्। श्र: अस्त्राय फट्। इसके बाद ध्यान करे—

कान्त्या काञ्चनसन्निभां हिमगिरिप्रख्यैश्चतुर्भिर्गजै-
र्हस्तोत्क्षिप्तहिरण्मयामृतघटैरासिच्यमानां श्रियम्।
विभ्राणां वरमब्जयुक्तमभयं हस्तै: किरीटोज्ज्वलां
क्षौमाबद्धनितम्बबिम्बललितां वन्देऽरविन्दस्थिताम्।

हिमालय के समान विशाल एवं उज्ज्वल चार हाथी अपनी सूंड़ों में उठाए हुए अमृतपूर्ण स्वर्णकलशों से अमृतधारा द्वारा स्वर्णसमान देहकान्ति वाली भगवती श्री का

अभिषेक कर रहे हैं। भगवती अपने दाँयें उपरि हाथ में पद्म, निचले हाथ में वरमुद्रा, बाँयें उपरि हाथ में पद्म और नीचे के हाथ में अभयमुद्रा धारण की हुई हैं। उनके मस्तक पर उज्ज्वल रत्नमुकुट है। पट्ट वस्त्र से भूषित कमल के ऊपर वे विराजमान हैं।

ध्यान के बाद मानस पूजा करके शंखस्थापन करे। तब पीठपूजा करे। केशर के मध्य में विभूति आदि नवशक्तियों का अर्चन पूर्वोक्त मन्त्रों से करे। तब मूलमन्त्र से देवता के स्वरूप की कल्पना करके ध्यान करे। तब आवाहनादि से पञ्च पुष्पाञ्जलि तक सारा कार्य करके आवरण पूजा करे।

यन्त्र में बिन्दु से अग्न्यादि कोणों, मध्य में और दिशाओं में षडंग पूजन करे—श्रां हृदयाय नमः। श्रीं शिरसे स्वाहा। श्रूं शिखायै वषट्। श्रैं कवचाय हुं। श्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्। श्रः अस्त्राय फट्।

अष्टदल में पूर्वादि क्रम से पूर्व-दक्षिण-पश्चिम-उत्तर में इन मन्त्रों से पूजन करे—ॐ वासुदेवाय नमः। ॐ सङ्कर्षणाय नमः। ॐ प्रद्युम्नाय नमः। ॐ अनिरुद्धाय नमः।

अग्नि-नैर्ऋत्य-वायव्य-ईशान कोणों के दलों में—ॐ दमकाय नमः। ॐ सलिलाय नमः। ॐ गुग्गुलाय नमः। ॐ कुरण्टकाय नमः से पूजन करे।

यन्त्र के मध्य बिन्दु के दाँयें भाग में—ॐ शंखनिधये नमः। ॐ वसुधायै नमः एवं बाँयें भाग में ॐ पद्मनिधये नमः। ॐ वसुमत्यै नमः।

आठ दलों के अग्रभाग में—ॐ बलाकायै नमः। ॐ विमलायै नमः। ॐ कमलायै नमः। ॐ वनमालिकायै नमः। ॐ भाविकायै नमः। ॐ मालिकायै नमः। ॐ शाङ्कर्यै नमः। ॐ वसुमालिकायै नमः।

भूपुर में दश दिक्पालों और उनके अस्त्रों का पूजन करे—ॐ इन्द्रायै नमः। ॐ अग्नये नमः। ॐ यमाय नमः। ॐ नैर्ऋतये नमः। ॐ वरुणाय नमः। ॐ वायवे नमः। ॐ कुवेराय नमः। ॐ ईशानाय मम। ॐ ब्रह्मणे नमः। ॐ अनन्ताय नमः।

ॐ वज्राय नमः। ॐ शक्तये नमः। ॐ दण्डाय नमः। ॐ खड्गाय नमः। ॐ पाशाय नमः। ॐ अङ्कुशाय नमः। ॐ गदाय नमः। ॐ त्रिशूलाय नमः। ॐ पद्माय नमः। ॐ चक्राय नमः—इनका पूजन करके समग्र यन्त्रदेवताओं का धूप-दीप-नैवेद्य-आरती से पूजन करके विसर्जन करे।

इसका पुरश्चरण बारह लाख जप और बारह हजार हवन से होता है। हवन-सामग्रियों में घी-मधु-शक्कर-मिश्रित कमल या घी-मधु-शक्करमिश्रित तिल या घी-मधु-शक्करमिश्रित बेलफल या सबों को एक साथ मिलाकर होता है।

मन्त्रान्तरम्

वाग्भवं वनिता विष्णोर्माया मकरकेतन: ।
चतुर्वर्णात्मको मन्त्र: चतुर्वर्गफलप्रद: ।।

अस्य पूजादिकं पूर्ववद्बोध्यम्। तथा च—

रमाया: कल्पिते पीठे तद्विधानेन पूजयेत् ।
कुर्यात् प्रयोगांस्तत्रस्थान् मनुना साधकोत्तम: ।
निधिभि: सेव्यते नित्यं मूर्त्तिमद्भिरुपस्थितै: ।।

ध्याने तु विशेषो यथा—

माणिक्यप्रतिमप्रभां हिमनिभैस्तुङ्गैश्चतुर्भिर्गजै-
र्हस्तग्राहितरत्नकुम्भसलिलैरासिच्यमानां सदा ।
हस्ताब्जैर्वरदानमम्बुजयुगाभीतीर्दधानां हरे:
कान्तां कांक्षितपारिजातलतिकां वन्दे सरोजासनाम् ।।

अस्य पुरश्चरणं द्वादशलक्षजप:। तथा च—

भानुलक्षं हविष्याशी जपेदन्ते सरोरुहै: ।
जुहुयादरुणै: फुल्लैस्तत्सहस्रं जितेन्द्रिय: ।।

द्वितीय मन्त्र—ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं—लक्ष्मी का यह द्वितीय मन्त्र चतुर्वर्गफलप्रदायक है। इस मन्त्र का यन्त्र और सभी पूजनविधि एकाक्षर मन्त्र 'श्रीं' के समान पूर्ववत् हैं। केवल ध्यान दूसरे प्रकार का है! वह इस प्रकार है—

माणिक्यप्रतिमप्रभां हिमनिभैस्तुङ्गैश्चतुर्भिर्गजै:
हस्तग्राहितरत्नकुम्भसलिलैरासिच्यमानां मुदा।
हस्ताब्जैर्वरदानमम्बुजयुगाभीतिर्दधानां हरे:
कान्तां कांक्षितपरिजातलतिकां वन्दे सरोजासनाम् ।।

देहकान्ति माणिक्य के समान है। बर्फ के समान उज्ज्वल विशाल चार हाथियों की सूंडों द्वारा पकड़े हुए कलशों के जल से अभिषिक्त हो रही हैं। चार करकमलों में से दो में कमल और एक में वर और एक में अभयमुद्रा है। भगवान् विष्णु की प्रिया सबों के मनोरथों को पूर्ण करने में पारिजात लता के समान हैं। कमल के ऊपर विराजमान भगवती लक्ष्मी की मैं वन्दना करता हूँ।

ध्यान के बाद पूर्वोक्त विधि से पूजा करे। इसका पुरश्चरण बारह लाख जप और बारह हजार लाल कमलों के हवन से होता है।

मन्त्रान्तरम्

नमः कमलवासिन्यै ठद्वयमिति प्रोक्तो दशाक्षरः। तथा च निबन्धे—

दीर्घो यादिर्विसर्गान्तो ब्रह्मा भानुर्वसुन्धरा ।
वान्ते सिन्यै प्रिया वह्नेर्मनुः प्रोक्तो दशाक्षरः ॥

अस्य पूजा—पूर्ववत्पीठमन्वन्तं विन्यस्य ऋष्यादिन्यासं कुर्यात्। यथा—शिरसि दक्षऋषये नमः। मुखे विराट्च्छन्दसे नमः। हृदि श्रियै देवतायै नमः। तथा च शारदायाम्—

ऋषिर्दक्षो विराट्छन्दो देवताश्रीः समीरिता ।

ततः कराङ्गन्यासौ—ॐ देव्यै नमोऽङ्गुष्ठाभ्यां नमः। ॐ पद्मिन्यै नमस्तर्जनीभ्यां स्वाहा। ॐ विष्णुपत्न्यै नमो मध्यमाभ्यां वषट्। ॐ वरदायै नमोऽनामिकाभ्यां हुं। ॐ कमलरूपायै नमः कनिष्ठाभ्यां फट्। एवं ॐ देव्यै नमो हृदयाय नमः इत्यादि। तथा च निबन्धे—

देव्यै हृदयमाख्यातं पद्मिन्यै शिर ईरितम् ।
विष्णुपत्न्यै शिखा प्रोक्ता वरदायै तनुच्छदम् ।
अस्त्रं कमलरूपायै नमोऽन्ताः प्रणवादिकाः ॥

ततो ध्यानम्—

आसीना सरसीरुहे स्मितमुखी हस्ताम्बुजैर्बिभ्रती
दानं पद्मयुगाभये च वपुषा सौदामिनी सन्निभा ।
मुक्ताहारविराजमानपृथुलोत्तुङ्गस्तनोद्भासिनी
पायाद्वः कमला कटाक्षविभवैरानन्दयन्तीं हरीम् ॥

एवं ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्य, शङ्खस्थापनं कृत्वा, पूर्वोक्तपीठशक्ति-सहित-पीठमन्वन्तां पीठपूजां विधाय, पुनर्ध्यात्वा आवाहनादिपञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं विधायावरणपूजां कुर्यात्। अग्न्यादिचतुष्कोणमध्ये दिक्षु च ॐ देव्यै नमो हृदयाय नमः। ॐ पद्मिन्यै नमः शिरसे स्वाहा। ॐ विष्णुपत्न्यै नमः शिखायै वषट्। ॐ वरदायै नमः कवचाय हुं। ॐ कमलरूपायै नमोऽस्त्राय फट्।

ततः पूर्वादिदलेषु पूर्ववद्बलाक्यादिकाः पूजयेत्। तद्बहिरिन्द्रादीन् वज्रादींश्च पूजयेत्। ततो धूपादिविसर्जनान्तं कर्म समापयेत्। अस्य पुरश्चरणजपो दशलक्षः। तथा च—

दशलक्षं जपेन्मन्त्रं मन्त्रविद्विजितेन्द्रियः ।
दशांशं जुहुयान्मन्त्री मधुराक्तैः सरोरुहैः ॥

तृतीय मन्त्र—निवन्धग्रन्थ के अनुसार लक्ष्मी जी का दशाक्षर मन्त्र है—नम: कमलवासिन्यै स्वाहा।

प्रात:कृत्यादि से पीठन्यास तक के सभी कर्म करके ऋष्यादि न्यास करे—दक्षऋषये नम: शिरसि। विराट्छन्दसे नम: मुखे। श्रियै देवतायै नम: हृदये। शारदातिलक के अनुसार भी यह अनुमोदित होता है।

करन्यास—ॐ देव्यै नमो अंगुष्ठाभ्यां नम:। ॐ पद्मिन्यै नम: तर्जनीभ्यां स्वाहा। ॐ विष्णुपत्न्यै नम: मध्यमाभ्यां वषट्। ॐ वरदायै नम: अनामिकाभ्यां हुं। ॐ कमलरूपायै नम: कनिष्ठाभ्यां फट्।

अंगन्यास—ॐ देव्यै नमो हृदयाय नम:। ॐ पद्मिन्यै नम: शिरसे स्वाहा। ॐ विष्णुपत्न्यै नम: शिखायै वषट्। ॐ वरदायै नम: कवचाय हुं। ॐ कमलरूपायै नम: अस्त्राय फट्। इसके बाद निम्नवत् ध्यान करे—

आसीना सरसीरुहे स्मितमुखी हस्ताम्बुजैर्विभ्रती
दानं पद्मयुगाभये च वपुषा सौदामिनीसन्निभा।
मुक्ताहारविराजमानपृथुलोत्तुङ्गस्तनोद्भासिनी
पायाद्व: कमलाकटाक्षविभवैरानन्दयन्तीं हरिम्।।

मुस्कुराती हुई लक्ष्मी कमल पर विराजमान हैं। करकमलों में वर, दो कमल और अभयमुद्रा है। देह की कान्ति विजली के समान है। मोतियों के हार से सुशोभित उच्च स्थूल स्तनों से प्रदीप्त शोभा वाली हैं। भगवती कमला अपने कटाक्षकौशल से विष्णु को आनन्दित करती हैं। वे हमारी रक्षा करें।

इसके बाद मानसोपचारों से पूजा करके शंखस्थापन करे। तब पूर्ववत् पीठपूजा करके फिर ध्यान-आवाहनादि करके पञ्च पुष्पाञ्जलि प्रदान करे। इसके बाद आवरण पूजन करे।

पंचांग पूजन यन्त्रमध्यबिन्दु के समीप, आग्नेयादि कोनों, मध्य में और चारो दिशाओं में निम्न मन्त्रों से करे—ॐ देव्यै नमो हृदयाय नम:। ॐ पद्मिन्यै नम: शिरसे स्वाहा। ॐ विष्णुपत्न्यै नम: शिखायै वषट्। ॐ वरदायै नम: कवचाय हुं। ॐ कमलरूपायै नम: अस्त्राय फट्।

अष्टदल में पूर्ववत् पूर्वादि क्रम से वलाका आदि शक्तियों की पूजा करके भूपुर में इन्द्रादि दश दिक्पालों और उनके आयुधों का पूजन करे। धूपादि विसर्जनान्त कर्म करके पूजन पूर्ण करे।

पुरश्चरण दश लाख मन्त्रजप से और दशांश एक लाख हवन त्रिमधुराक्त कमलों से करने पर होता है।

महालक्ष्मीमन्त्राः

तारो वाग्भवं माया रमा कामः हेसोर्जगत्प्रसूत्यै नमः। तथा च—

वाग्भवं शम्भुवनिता रमा मकरकेतनः।
तार्त्तीयश्च जगत्पार्श्वो वह्निबीजसमुज्ज्वलः।
अर्घीशाढ्यो भृगुस्त्यैहृन्मन्त्रोऽयं द्वादशाक्षरः।
महालक्ष्म्याः समुद्दिष्टस्ताराद्यः सर्वसिद्धिदः॥

अस्य पूजा—प्रातःकृत्यादिश्रीबीजोक्तपीठन्यासान्तं विधाय ऋष्यादिन्यासं कुर्यात्। शिरसि ब्रह्मणे ऋषये नमः, मुखे गायत्रीच्छन्दसे नमः, हृदि महालक्ष्म्यै देवतायै नमः। ततो मूलेन करौ संशोध्य अंगुष्ठादिक्रमेण प्रत्येकं तारादिनमोऽन्तानि पञ्चबीजानि न्यसेत्। ॐ ऐं नमः, ॐ ह्रीं नमः, ॐ श्रीं नमः, ॐ क्लीं नमः, ॐ हेसो नमः, ॐ जगत्प्रसूत्यै नमः—इति करतले। ततो मस्तकादिचरणं यावन्मूलेन व्यापकं कुर्यात्। ततो मूर्द्धास्यहृदयगुह्यपादेषु पञ्चबीजानि न्यसेत्। शेषाक्षराणि हृदये सप्तधातुषु। तथा च निबन्धे—

हस्तौ संशोध्य मूलेन तारादिहृदयान्तकम्।
बीजानां पञ्चकं न्यस्येदंगुलिषु यथाक्रमम्॥
मन्त्रशेषं न्यसेन्मन्त्री तलयोरुभयोरपि।
मूर्द्धादिचरणं यावन्मूलेन व्यापकं न्यसेत्॥
मूर्द्धास्यवक्षोगुह्यांघ्रौ पञ्चबीजानि विन्यसेत्।
शेषान्न्यसेत्सप्तवर्णान् हृदये सप्तधातुषु॥

ततः कराङ्गन्यासौ—ऐं ज्ञानाय अंगुष्ठाभ्यां नमः। ह्रीं ऐश्वर्याय तर्जनीभ्यां स्वाहा। श्रीं शक्तये मध्यमाभ्यां वषट्। क्लीं बलाय अनामिकाभ्यां हुं। हेसोः वीर्याय कनिष्ठाभ्यां वौषट्। जगत्प्रसूत्यै नमस्तेजसे करतलकरपृष्ठभ्यां फट्। एवं हृदयादिषु। तथा च निबन्धे—

अङ्गानि पञ्चभिर्बीजैरस्त्रं शेषाक्षरैर्भवेत्।
ज्ञानैश्वर्यादिभिर्युक्तैश्चतुर्थ्यन्तैः सजातिभिः॥
ज्ञानमैश्वर्यशक्ती च बलवीर्ये सतेजसी।
ज्ञानैश्वर्यादयः प्रोक्ताः षट्क्रमादङ्गदेवताः॥

ततो ध्यानम्—

बालार्कद्युतिमिन्दुखण्डविलसत्कोटीरहारोज्ज्वलां
रत्नाकल्पविभूषितां कुचनतां शालेः करैर्मञ्जरीम्।
पद्मं कौस्तुभरत्नमप्यविरतं संविभ्रतीं सस्मितां

फुल्लाम्भोजविलोचनत्रययुतां ध्यायेत् परामम्बिकाम् ॥

विस्तरेण तु ध्यानं शारदायां द्रष्टव्यम्। इति ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्य शङ्खस्थापनं कुर्यात्। ततः श्रीबीजोक्तपीठपूजां विधाय पुनर्ध्यात्वा आवाहनादिपञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं विधायावरणपूजामारभेत्। यथा—देव्या दक्षिणे शङ्करनन्दनाय नमः। एवं वामे पुष्पधन्वने, अग्न्यादिकोणेषु मध्ये दिक्षु च ऐं ज्ञानाय हृदयाय नमः इत्यादिना पूजयेत्। तथा च शारदायाम्—

पूजयेद्दक्षिणे पार्श्वे देव्याः शङ्करनन्दनम् ।
अन्यतः पुष्पधन्वानं पुष्पाञ्जलिकरं यजेत् ।
अंगानि पूर्वमुक्तेषु स्थानेषु विधिवद्यजेत् ॥

पत्रेषु पूर्वादि ॐ उमायै नमः। एवं श्रियै सरस्वत्यै दुर्गायै धरण्यै गायत्र्यै देव्यै उषायै। दक्षिणे जह्नुसुतायै, वामे सूर्यसुतायै, पुनर्दक्षिणे ॐ शङ्खनिधये, पुनर्वामे ॐ पद्मनिधये, पश्चिमे धृतातपत्रं वरुणं पूजयेत्। यथा—

उमाद्याः पत्रमध्यस्थाः शक्तीरष्टौ यजेत् क्रमात् ।
अथोमा श्री सरस्वत्यै दुर्गाधरणीसंयुता ।
गायत्री देव्युषा चेति पद्महस्ताः सुशोभनाः ॥

तद्बाह्ये द्वादशराशीन् नवग्रहान् प्रत्येकेन यजेत्। तद्बाह्ये अष्टौ गजान् ऐरावतपुण्डरीकवामनकुमुदाञ्जनपुष्पदन्तसार्वभौमसुप्रतीकान् पूजयेत्। तथा च निबन्धे—

जह्नुसूर्यसुते पूज्ये पादप्रक्षालनोद्यते ।
शङ्खपद्मनिधी पूज्यौ पार्श्वयोर्धृतचामरौ ॥
धृतातपत्रवरुणं पूजयेत् पश्चिमे ततः ।
सम्पूज्य राशीन् परितो यजेदथ नवग्रहान् ॥
अर्चयेद्दिग्गजान् दिक्षु चतुर्दन्तविभूषितान् ।
ऐरावतः पुण्डरीको वामनः कुमुदोऽञ्जनः ।
पुष्पदन्तः सार्वभौमः सुप्रतीकश्च ते क्रमात् ॥

तत इन्द्रादीन् वज्रादींश्च प्रपूजयेत्। ततो धूपादिविसर्जनान्तं कर्म समापयेत्। अस्य पुरश्चरणं द्वादशलक्षजपः। तथा च—

भानुलक्षं जपेन्मन्त्रं दशांशं जुहुयाद् घृतैः ।
जुहुयात् श्रीफलैः पद्मैः प्रत्येकमयुतद्वयम् ।
तर्पयेत् सलिलैः शुद्धैः सुगन्धैरयुतद्वयम् ॥

अयुतद्वयमिति वाचनिकव्यवस्था।

महालक्ष्मी मन्त्र—मूलोक्त कूटों के उद्धार करने पर महालक्ष्मी का जो मन्त्र होता है, वह है—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं हसौ: जगत्प्रसूत्यै नम:। इसमें बारह अक्षर हैं। यह मन्त्र सर्वसिद्धिप्रदायक है। इनका पूजन यन्त्र लक्ष्मीयन्त्र के समान ही है।

प्रात:कृत्यादि से निवृत्त होकर लक्ष्मीमन्त्र में वर्णित पीठन्यास तक के कर्म करके ऋष्यादि न्यास करे।

ऋष्यादि न्यास—ब्रह्मणे ऋषये नम: शिरसि। गायत्रीछन्दसे नम: मुखे। महालक्ष्मीदेवतायै नम: हृदये।

मूल मन्त्र से दोनों हाथों को शुद्ध करके अंगुष्ठादि अंगुलियों में पाँच बीजों का न्यास करे। ॐ ऐं नम: अंगुष्ठे। ॐ ह्रीं नम: तर्जन्यां। ॐ श्रीं नम: मध्यमायां। ॐ क्लीं नम: अनामिकायां। ॐ हसौ: नम: कनिष्ठायां। करतले ॐ जगत्प्रसूत्यै नम:। तब मूल मन्त्र से आपादमस्तक व्यापक न्यास करे। तब मन्त्रन्यास करे—ॐ नम: मस्तके। ह्रीं नम: मुखे। श्रीं नम: हृदये। क्लीं नम: गुह्ये, हसौ: नम: पादयो:। त्वङ्मांसरक्तमेदास्थिमज्ज-शुक्रादिसप्तधातुषु जगत्प्रसूत्यै नम:।

करन्यास—ऐं ज्ञानाय अंगुष्ठाभ्यां नम:। ह्रीं ऐश्वर्याय तर्जनीभ्यां स्वाहा। श्रीं शक्तये मध्यमाभ्यां वषट्। क्लीं बलाय अनामिकाभ्यां हुं। हसौ: वीर्याय नम: कनिष्ठाभ्यां वौषट्। जगत्प्रसूत्यै नमस्तेजसे करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्। इसी प्रकार हृदयादि न्यास करे। यथा—ऐं ज्ञानाय हृदयाय नम: इत्यादि। तत्पश्चात् निम्नवत् ध्यान करे—

बालार्कद्युतिमिन्दुखण्डविलसत्कोटीरहारोज्ज्वलाम्
रत्नाकल्पविभूषितां कुचनतां शाले: करैर्मञ्जरीम्।
पद्मं कौस्तुभरत्नमप्यविरतं संविभ्रतीं सस्मिताम्
फुल्लाम्भोजविलोचनत्रययुतां ध्यायेत् परामम्बिकाम्।।

आभा उदीयमान सूर्य के समान है। अर्द्धचन्द्र से सुशोभित मस्तक है। गले में उज्ज्वल हार है। सभी अंग रत्नाभूषणों से विभूषित हैं। उरोजों के भार से झुकी हुई हैं। हाथों में धान्यमञ्जरी, कमल, कौस्तुभरत्न हैं। मुख मुस्कानयुक्त है। विकसित कमलफूलों के समान तीन नेत्र हैं। ऐसी श्रेष्ठ माँ कमला का मैं ध्यान करता हूँ।

मानसोपचारों से पूजा करके शंखस्थापन करे। तब लक्ष्मीमन्त्रोक्त विधान से पीठपूजन करे। तब ध्यान-आवाहनादि करके पञ्च पुष्पाञ्जलि प्रदान करे। इसके बाद आवरण-पूजन करे। यन्त्र में बिन्दु में देवी स्थान के दाँयें भाग में ॐ शंकरनन्दनाय नम: से और बाँयीं ओर ॐ पुष्पधन्वने नम: से पूजा करे। अग्न्यादि कोणों में मध्य में और चारो दिशाओं में अग्रलिखित मन्त्रों से पूजा करे—ऐं ज्ञानाय नम:। ह्रीं ऐश्वर्याय नम:। श्रीं शक्तये नम:। क्लीं बलाय नम:। हसौ: वीर्याय नम:। ॐ जगत्प्रसूत्यै नम:। ॐ तेजसे नम:।

अष्ट दलों में पूर्वादि क्रम से इन देवियों का पूजन करे— ॐ उमायै नम:। ॐ श्रियै नम:। ॐ सरस्वत्यै नम:। ॐ दुर्गायै नम:। ॐ धरण्यै नम:। ॐ गायत्र्यै नम:। ॐ देव्यै नम:। ॐ उषायै नम:।

तब दक्षिण भाग में जह्नुसुतायै नम: से और वाम भाग में सूर्यसुतायै नम: से गंगा-यमुना का पूजन करे। फिर दाँयीं ओर शंखनिधये नम: से, बाँईं ओर पद्मनिधये नम: से और पश्चिम में ॐ वरुणाय नम से पूजा करे।

विशेष ज्ञातव्य यह है कि उक्त अष्ट शक्तियाँ पद्महस्ता अतिशोभा से सम्पन्न हैं। उनके पैर धोने के लिये उद्यत गंगा और यमुना हैं। शंखनिधि और पद्मनिधि चामर लिए हुए हैं। इनका पूजन करे।

इसके बाहर चारो ओर मेष, वृष, मिथुन, कर्क, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, धनु, मकर, कुम्भ और मीन राशियों का पूजन करे। सूर्य, चन्द्र, मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनैश्चर, राहु, केतु—नौ ग्रहों का पूजन करे। इनके बाहर आठो दिशाओं में चार दाँत वाले ऐरावत, पुण्डरीक, वामन, कुमुद, अंजन, पुष्पदन्त, सार्वभौम और सुप्रतीक—इन आठो दिग्गजों का पूजन करे।

इसके बाद भूपुर में इन्द्रादि दश दिक्पालों और उनके आयुधों का पूजन करे। तब समग्र पूजन में धूपादि विसर्जनान्त कर्म करे।

इस मन्त्र का पुरश्चरण बारह लाख जप से होता है। जप का दशांश एक लाख हवन घी से करे और बीस हजार हवन श्रीफल से या पद्म से करे। फिर सुगन्धित पवित्र जल से बीस हजार तर्पण करे।

मन्त्रान्तरम्

शम्भुपत्नी श्रिया रुद्धा कामो भगवती मही।
ब्रह्मादित्यौ धरा दीर्घा लक्ष्म्यादिर्भगवान्मरुत्॥
प्रसीदयुगलं भूय: श्रीरुद्धा भुवनेश्वरी।
महालक्ष्मि नमोऽन्त: स्यात् प्रणवादिरयं मनु:॥

मही लकार:, भगवती एकारवती, ब्रह्मा ककार:, आदित्यो मकार:, धरा लकार:, दीर्घा आकारयुक्ता, लक्ष्म्यादिर्लकार:, मरुत् यकार एकारयुक्त:।

अस्य पूजा—प्रात:कृत्यादिपूर्वोक्त ऋष्यादिन्यासान्तं विधाय कराङ्गन्यासौ कुर्यात्। श्रीं ह्रीं श्रीं कमले श्रीं ह्रीं श्रीं अंगुष्ठाभ्यां नम:। एवं श्रीं ह्रीं श्रीं कमलालये श्रीं ह्रीं श्रीं तर्जनीभ्यां स्वाहा। श्रीं ह्रीं श्रीं प्रसीद श्रीं ह्रीं श्रीं मध्यमाभ्यां वषट्। श्रीं ह्रीं श्रीं प्रसीद श्रीं ह्रीं श्रीं अनामिकाभ्यां हुं। श्रीं ह्रीं श्रीं महालक्ष्मि श्रीं

ह्रीं श्रीं कनिष्ठाभ्यां वौषट्। श्रीं ह्रीं श्रीं नमः श्रीं ह्रीं श्रीं अस्त्राय फट्। एवं हृदयादिषु। तथा च निबन्धे—

कमले हृदयं प्रोक्तं शिरः स्यात्कमलालये।
शिखा प्रसीद तेनैव कवचं चतुरक्षरैः।
अस्त्रमेतैः पदैः कुर्यात्त्रिबीजपुटितैः पृथक्॥

ततो ध्यानम्—

सिन्दूरारुणकान्तिमब्जवसतिं सौन्दर्यवारांनिधिं
कोटीराङ्गदहारकुण्डलकटीसूत्रादिभिर्भूषिताम्।
हस्ताब्जैर्वसुपात्रमब्जयुगलादर्शौ वहन्तीं परा-
मावीतां परिचारिकाभिरनिशं ध्यायेत्प्रियां शार्ङ्गिणः॥

एवं ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्य शङ्खस्थापनं कुर्यात्। पूर्ववत्पीठपूजां विधाय, पुनर्ध्यात्वा आवाहनादिपञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं विधायावरणपूजामारभेत्। केशरेषु अग्न्यादिकोणे मध्ये दिक्षु च श्रीं ह्रीं श्रीं कमले श्रीं ह्रीं श्रीं हृदयाय नमः इत्यादिना पूजयेत्। दलमूले पूर्वादि ॐ श्रीधराय नमः, एवं हृषिकेशाय वैकुण्ठाय विश्वरूपाय वासुदेवाय सङ्कर्षणाय प्रद्युम्नाय अनिरुद्धाय। दलमध्ये भारत्यै पार्वत्यै चान्द्र्यै शच्यै दमकाय सलिलाय गुग्गुलवे कुरुण्टकाय। दलाग्रेषु—

अनुरागं विसंवादं विजयं वल्लभं मदम्।
हर्षं बलं तेज इति महालक्ष्मीबाणान्यजेत्॥

वाक्यन्तु—अनुरागाय महालक्ष्मीबाणाय नमः। एवं क्रमेण पूजयेत्। तथा च निबन्धे—

दलाग्रेष्वर्चयेद्बाणान् महालक्ष्म्या क्रमादमून्।

तद्बहिरिन्द्राहीन् वज्रादींश्च पूजयेत्। ततो धूपादिविसर्जनान्तं कर्म समापयेत्। अस्य पुरश्चरणं लक्षजपः। तथा च—

लक्षं जपेत्फलैर्बिल्वैर्जुहुयान्मधुरोक्षितैः।
दशांशं संस्कृते वह्नौ प्राक्प्रोक्तेनैव वर्त्मना॥

महालक्ष्मी का अन्य मन्त्र—मूलोक्त कूटों का उद्धार करने पर महालक्ष्मी का जो मन्त्र बनता है, वह है—ॐ श्रीं ह्रीं श्रीं कमले कमलालये प्रसीद प्रसीद श्रीं ह्रीं श्रीं महालक्ष्म्यै नमः। इसका यन्त्र पूर्ववत् लक्ष्मीयन्त्र ही है।

प्रातःकृत्यादि से लेकर पूर्वोक्त महालक्ष्मी-मन्त्रोक्त विधि से ऋष्यादि न्यास तक सभी कर्म करके करांग न्यास करे।

करन्यास—

श्रीं ह्रीं श्रीं कमले श्रीं ह्रीं श्रीं अंगुष्ठाभ्यां नम:।
श्रीं ह्रीं श्रीं कमलालये श्रीं ह्रीं श्रीं तर्जनीभ्यां स्वाहा।
श्रीं ह्रीं श्रीं प्रसीद श्रीं ह्रीं श्रीं मध्यमाभ्यां वषट्।
श्रीं ह्रीं श्रीं प्रसीद श्रीं ह्रीं श्रीं अनामिकाभ्यां हुं।
श्रीं ह्रीं श्रीं महालक्ष्मि श्रीं ह्रीं श्रीं कनिष्ठाभ्यां वौषट्।
श्रीं ह्रीं श्रीं नम: श्रीं ह्रीं श्रीं अस्त्राय फट्।

हृदयादि न्यास—

श्रीं ह्रीं श्रीं कमले श्रीं ह्रीं श्रीं हृदयाय नम:।
श्रीं ह्रीं श्रीं कमलालये श्रीं ह्रीं श्रीं शिरसे स्वाहा।
श्रीं ह्रीं श्रीं प्रसीद श्रीं ह्रीं श्रीं शिखायै वषट्।
श्रीं ह्रीं श्रीं प्रसीद श्रीं ह्रीं श्रीं कवचाय हुं।
श्रीं ह्रीं श्रीं महालक्ष्मि श्रीं ह्रीं श्रीं नेत्रत्रयाय वौषट्।
श्रीं ह्रीं श्रीं नम: श्रीं ह्रीं श्रीं अस्त्राय फट्।

निबन्धग्रन्थ के अनुसार भी करांग न्यास इसी प्रकार का है। इसका ध्यान है—

सिन्दूरारुणकान्तिमब्जवसतिं सौदर्यवारान्निधिम्
कोटीराङ्गदहारकुण्डलकटीसूत्रादिभिर्भूषिताम् ।
हस्ताब्जैर्वसुपात्रमब्जयुगलादर्शौ वहन्तीं परा-
मावीतां परिचारिकाभिरनिशं ध्यायेत्प्रियां शार्ङ्गिण:।।

देह की कान्ति सिन्दूर के समान लाल है। कमल के ऊपर विराजमान हैं। सौन्दर्य अनुपम है। इन्द्रनील मणि, वलय, हार, कुण्डल और करधनी आदि आभूषणों से अलंकृत हैं। हाथों में रत्नपूर्ण पात्र, दो कमल और दर्पण है। सेविकाओं से घिरी हुई हैं। भगवान् विष्णु की प्रिया महालक्ष्मी का मैं ध्यान करता हूँ।

इसके बाद मानसोपचारों से पूजन करके शंखस्थापन करे। पूर्ववत् पीठपूजन करे। ध्यान-आवाहनादि करके पाँच पुष्पाञ्जलि अर्पित करे। तब आवरण पूजा करे।

यन्त्र के मध्य बिन्दु के इर्द-गिर्द अग्न्यादि चारो कोणों में, मध्य में और चारो दिशाओं में षडंग पूजन करे—श्रीं ह्रीं श्रीं कमले श्रीं ह्रीं श्रीं हृदयाय नम:। श्रीं ह्रीं श्रीं कमलालये श्रीं ह्रीं श्रीं शिरसे स्वाहा। श्रीं ह्रीं श्रीं प्रसीद श्रीं ह्रीं श्रीं शिखायै वषट्। श्रीं ह्रीं श्रीं प्रसीद श्रीं ह्रीं श्रीं कवचाय हुं। श्रीं ह्रीं श्रीं महालक्ष्मि श्रीं ह्रीं श्रीं नेत्रत्रयाय वौषट्। श्रीं ह्रीं श्रीं नम: श्रीं ह्रीं श्रीं अस्त्राय फट्।

आठ दलों के मूल भाग में पूर्वादि क्रम से इनका पूजन करे—ॐ श्रीधराय नम:। ॐ हृषीकेशाय नम:। ॐ वैकुण्ठाय नम:। ॐ विश्वरूपाय नम:। ॐ वासुदेवाय नम:।

ॐ सङ्कर्षणाय नमः। ॐ प्रद्युम्नाय नमः। ॐ अनिरुद्धाय नमः।

दलों के मध्य में इनका पूजन करे—ॐ भारत्यै नमः। ॐ पार्वत्यै नमः। ॐ चान्द्र्यै नमः। ॐ शच्यै नमः। ॐ दमकाय नमः। ॐ सलिलाय नमः। ॐ गुग्गुलाय नमः। ॐ कुरण्टकाय नमः।

दलों के अग्रभाग में इनका पूजन करे—ॐ अनुरागाय महालक्ष्मीवाणाय नमः। ॐ संवादाय नमः। ॐ विजयाय नमः। ॐ वल्लभाय नमः। ॐ मदाय नमः। ॐ हर्षाय नमः। ॐ बलाय नमः। ॐ तेजसे नमः।

भूपुर में इन्द्रादि दश दिक्पालों और वज्रादि आयुधों का पूजन करे। इसके बाद धूपादि विसर्जन तक के सभी कार्यों को करके पूजा सम्पादन करे।

पुरश्चरण में एक लाख मन्त्रजप करके संस्कृत अग्नि में त्रिमधुराक्त बेलफल से दशांश अर्थात् दस हजार हवन करे।

सूर्यमन्त्राः

तारो घृणिर्भृगुः पश्चाद्वामकर्णविभूषितः ।
वह्न्यासनो मरुच्छेषः सनेत्रोऽद्रिस्त्य पश्चिमः ।
अष्टाक्षरो मनुः प्रोक्तो भानोरभिमतप्रदः ॥

अस्य पूजा—सामान्यपूजापद्धत्युक्तप्रातःकृत्यादिप्राणायामान्तं विधाय पीठन्यासं कुर्यात्। तत्र विशेषः—स्वहृदयस्य पूर्वादिदिक्षु मध्ये च प्रभूतं विमलं सारं समाराध्यं परमसुखं विन्यस्य आधारशक्त्यादि अं सूर्यमण्डलाय द्वादशकलात्मने नमः इत्यन्तं न्यसेत्। तथा च निबन्धे—

पीठे क्लृप्ते प्रथमं दिक्षु मध्ये च संयजेत् ।
प्रभूतं विमलं सारं समाराध्यमनन्तरम् ।
परमादिसुखं पीठं स्वविद्यान्तं प्रकल्पयेत् ॥

ततः केशरेषु मध्ये च रां दीप्तायै नमः, रीं सूक्ष्मायै नमः, रूं जयायै, रें भद्रायै, रैं विभूत्यै, रों विमलायै, रौं अमोघायै, रं विद्युतायै, रः सर्वतोमुख्यै नमः। तदुक्तं निबन्धे—

दीप्ता सूक्ष्मा जया भद्रा विभूतिर्विमला पुनः ।
अमोघा विद्युता सर्वतोमुखी पीठशक्तयः ॥
दीप्तदीपशिखाकारा बीजन्यासं विदुः क्रमात् ।
अक्लीवह्रस्वत्रितयस्वरान्विन्द्वग्निसंयुतान् ॥

तदुपरि ॐ ब्रह्मविष्णुशिवात्मकाय सौराय योगपीठाय नमः। तथा च शारदायाम्—

वदेत्पदं चतुर्थ्यन्तं ब्रह्मविष्णुशिवात्मकम् ।
सौराय योगपीठाय नमः पदमनन्तरम् ।
पीठमन्त्रोऽयमाख्यातो दिनेशस्य जगत्पतेः ॥

ततः ऋष्यादिन्यासः—शिरसि देवभागृषये नमः, मुखे गायत्रीच्छन्दसे नमः, हृदि आदित्याय देवतायै नमः। तथा च निबन्धे—

देवभागो मुनिः प्रोक्तो गायत्रीच्छन्द ईरितम् ।
आदित्यो देवता प्रोक्तो दृष्टादृष्टफलप्रदः ॥

रामार्चनचन्द्रिकायाम्—

तारं बीजमिति प्रोक्तं यः शक्तिः समुदाहृतः ।

चैतन्मन्त्रस्य भार्गवऋषिः । तदुक्तं रामार्चनचन्द्रिकायाम्—

भार्गवोऽस्य मुनिः प्रोक्ता गायत्री देवता मनोः। इत्यादि ।

ततः कराङ्गन्यासः—सत्याय तेजोज्वालामणे हुं फट् स्वाहा अंगुष्ठाभ्यां नमः। ब्रह्मणे तेजोज्वालामणे हुं फट् स्वाहा तर्जनीभ्यां स्वाहा। विष्णवे तेजोज्वालामणे हुं फट् स्वाहा मध्यमाभ्यां वषट्। रुद्राय तेजोज्वालामणे हुं फट् स्वाहा अनामिकाभ्यां हुं। अग्नये तेजोज्वालामणे हुं फट् स्वाहा कनिष्ठाभ्यां वौषट्। सर्वाय तेजोज्वालामणे हुं फट् स्वाहा करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्। एवं हृदयादिषु। तथा च शारदायाम्—

सत्याय हृदयं प्रोक्तं ब्रह्मणे शिर ईरितम् ।
विष्णवे स्याच्छिखा वर्म रुद्राय परिकीर्त्तितम् ॥
अग्नये नेत्रमाख्यातं सर्वायास्त्रमुदाहृतम् ।
तेजोज्वालामणे हुं फट् द्विठान्ताः पृथगीरिताः ॥

ततो मूर्त्तिन्यासः; यथा—शिरसि ॐ आदित्याय नमः। एवं मुखे एं रवये, हृदये उं भानवे, गुह्ये इं भास्कराय, चरणयोः अं सूर्याय। तथा च निबन्धे—

आदित्यं विन्यसेन्मूर्ध्नि रविञ्च मुखतो न्यसेत् ।
हृदये भानुनामानं भास्करं गुह्यदेशतः ।
सूर्यञ्चरणयोर्न्यस्येत् ह्रस्वैः सत्यादिपञ्चभिः ॥

ततो मन्त्रन्यासः—शिरसि ॐ ॐ नमः, मुखे ॐ घृं नमः। कण्ठे ॐ णिं नमः, हृदये ॐ सूं नमः, कुक्षौ ॐ र्य्यं नमः, नाभौ ॐ आं नमः। लिङ्गे ॐ दिं नमः, पादयोः ॐ त्यं नमः। तथा च निबन्धे—

मूर्द्धास्यकण्ठहृदयकुक्षिनाभिध्वजांघ्रिषु ।
मन्त्रवर्णान् न्यसेदष्टौ प्रत्येकं प्रणवादिना ॥

ततो ध्यानम्—

रक्ताब्जयुग्माभयदानहस्तं केयूरहाराङ्गदकुण्डलाढ्यम् ।
माणिक्यमौलिं दिननाथमीडे बन्धूककान्तिं विलसत्त्रिनेत्रम् ॥

एवं ध्यात्वा मानसोपचारैः सम्पूज्य अर्घ्यस्थापनं कुर्यात्। ततो गुरुपंक्तिपूजां कृत्वा पीठपूजां कुर्यात्। ॐ खं खखोल्काय नमः इति मूर्त्तिं परिकल्प्य पुनर्ध्यात्वा आवाहनादिपञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं विधाय आवरणपूजामारभेत्। तथा च निबन्धे—

तारादि खं खखोल्काय मनुना मूर्त्तिकल्पना ।
साक्षिणं सर्वलोकानां तस्यामावाह्य पूजयेत् ॥

केशरेषु अग्न्यादिकोणे मध्ये दिक्षु च ॐ सत्याय तेजोज्वालामणे हुं फट् स्वाहा हृदयाय नमः। एवं ॐ ब्रह्मणे तेजोज्वालामणे हुं फट् स्वाहा शिरसे स्वाहा। ॐ विष्णवे तेजोज्वालामणे हुं फट् स्वाहा शिखायै वषट्। ॐ रुद्राय तेजोज्वालामणे हुं फट् स्वाहा कवचाय हुं। ॐ अग्नये तेजोज्वालामणे हुं फट स्वाहा नेत्रत्रयाय वौषट्। ॐ सर्वाय तेजोज्वालामणे हुं फट् स्वाहा अस्त्राय फट्। दिक्पत्रेषु पूर्वादि ॐ आदित्याय नमः। एवं एं रवये उं भानवे इं भास्कराय। विदिक्पत्रेषु ऊं ऊषायै, पं प्रज्ञायै, पं प्रभायै, सं सन्ध्यायै। तथा च निबन्धे—

अङ्गानि पूजयेदादौ दिक्पत्रेष्वर्कमूर्त्तयः ।
आदित्याद्याश्चतस्रोऽर्च्याः शक्तयः कोणपत्रगाः ॥
स्वस्वनामादिवर्णाः स्युस्तासां बीजान्यनुक्रमात् ।
ऊषा प्रज्ञा प्रभा सन्ध्या शक्तयः परिकीर्त्तिताः ॥

ततः पत्राग्रेषु ब्राह्म्याद्याः सम्पूज्य पुरतोऽरुणमर्चयेत्। तथा च शारदायाम्—

पत्राग्रस्था ब्राह्म्याद्याः पुरतोऽरुणमर्चयेत् ।

तद्बाह्ये पूर्वादि चन्द्रादीन् पूजयेत्। ॐ चन्द्राय नमः। एवं मङ्गलाय बुधाय वृहस्पतये शुक्राय शनैश्चराय राहवे केतवे। तथा च शारदायाम्—

चन्द्रादीन् पूजयेत् पश्चाद्ग्रहानष्टौ ततो बहिः ।

तत इन्द्रादीन् वज्रादींश्च सम्पूज्य धूपादिविसर्जनान्तं कर्म समापयेत्। अस्य पुरश्चरणमष्टलक्षजपः। तथा च—

वसुलक्षं जपेन्मन्त्रं समिद्भिः क्षीरशाखिनाम् ।
तत्सहस्रं प्रजुहुयात् क्षीराक्ताभिर्जितेन्द्रियः ॥

अत्रापि वाचनिक एवाष्टसहस्रहोमः।

सूर्यमन्त्र—मूलोक्त कूट का उद्धार करने पर 'ॐ घृणि: सूर्य आदित्य' आठ अक्षरों का मन्त्र होता है।

पूजन यन्त्र—षट्कोण अष्टदल और भूपुरयुक्त होता है।

सामान्य पूजा-पद्धति के क्रम से प्रात:कृत्यादि से प्राणायाम तक के कर्मों को करके पीठन्यास करे। विशेषता यह है कि हृदय में कल्पित पीठ के पूर्वादि दिशाओं और मध्य में पीठदेवताओं का न्यास करे—ॐ प्रभूताय नम:। ॐ विमलाय नम:। ॐ साराय नम:। ॐ समाराध्याय नम:। ॐ परमसुखाय नम:। तब 'ॐ आधारशक्तये नम:' और 'अं सूर्यमण्डलाय द्वादशकलात्मने नम:'। ये न्यासमन्त्र हैं।

केशर में विन्दु में और उसके इर्द-गिर्द प्रज्वलित शिखाकृति निम्न पीठशक्तियों का न्यास करे—रां दीप्तायै नम:। रीं सूक्ष्मायै नम:। रूं जयायै नम:। रें भद्रायै नम:। रैं विभूत्यै नम:। रों विमलायै नम:। रौं अमोघायै नम:। रं विद्युतायै नम:। र: सर्वतोमुखायै नम:। इनके ऊपर ॐ ब्रह्मविष्णुशिवात्मकाय सौराय योगपीठाय नम: से जगन्नाथ सूर्य के पीठ का न्यास करे। इसके बाद ऋष्यादि न्यास करे। यह निबन्ध, शारदा में भी मान्य है।

ऋष्यादि न्यास—देवभागृषये नम: शिरसि। गायत्रीछन्दसे नम: मुखे। आदित्याय देवतायै नम: हृदये। इस न्यास से दृष्टादृष्ट दोनों फल प्राप्त होते हैं। निबन्ध के अनुसार यह ऋष्यादि न्यास है। रामार्चनचन्द्रिका के अनुसार इसके ऋषि भार्गव हैं।

करन्यास—

सत्याय तेजोज्वालामणे हुं फट् स्वाहा अंगुष्ठाभ्यां नम:।
ब्रह्मणे तेजोज्वालामणे हुं फट् स्वाहा तर्जनीभ्यां स्वाहा।
विष्णवे तेजोज्वालामणे हुं फट् स्वाहा मध्यमाभ्यां वषट्।
रुद्राय तेजोज्वालामणे हुं फट् स्वाहा अनामिकाभ्यां हुं।
अग्नये तेजोज्वालामणे हुं फट् स्वाहा कनिष्ठाभ्यां वौषट्।
सर्वाय तेजोज्वालामणे हुं फट् स्वाहा करतलकरपृष्ठाभ्यां नम:।

षडंग न्यास—इसी प्रकार षडंग न्यास करे। केवल अंगुलियों के बदले हृदयाय, शिरसे, शिखायै, कवचाय, नेत्रत्रयाय और अस्त्राय लगा ले।

मूर्तिन्यास—ॐ आदित्याय नम: शिरसि। एं रवये नम: मुखे। उं भानवे नम: हृदये। इं भास्कराय नम: गुह्ये। अं सूर्याय नम: चरणयो:। निबन्ध ग्रन्थ में भी मूर्तिन्यास इसी प्रकार का है।

मन्त्रन्यास—शिरसि ॐ ॐ नम:। मुखे ॐ घृं नम:। कण्ठे ॐ णिं नम:। हृदये ॐ सूं नम:। कुक्षौ ॐ र्य्यं नम:। नाभौ ॐ आं नम:। लिङ्गे ॐ दिं नम:। पादयो: ॐ त्यं नम:। इस प्रकार न्यास सम्पन्न कर ध्यान करे—

रक्ताब्जयुग्माभयदानहस्तं केयूरहाराङ्गदकुण्डलाढ्यम्।
माणिक्यमौलिं दिननाथमीडे बन्धूककान्तिं विलसत्त्रिनेत्रम्।।

हाथों में दो लाल कमल, अभय और मुद्रा है। केयूर, हार, वलय और कुण्डल आदि आभूषणों से अलंकृत हैं। मस्तक पर माणिक्यमौलि है। देह की कान्ति बन्धूक-पुष्प के समान लाल रंग की है। तीन नेत्र हैं। ऐसे दिन के स्वामी भगवान् सूर्य की मैं वन्दना करता हूँ।

इसके बाद मानसोपचारों से पूजा करके शंख को छोड़कर ताम्रपात्र में अर्घ्य-स्थापन करे। गुरुपंक्ति का पूजन करे—ॐ गुरुभ्यो नमः। ॐ परमगुरुभ्यो नमः। ॐ परापरगुरुभ्यो नमः। ॐ परमेष्ठिगुरुभ्यो नमः। सामान्य पूजा पद्धति क्रम से पीठपूजा करे। ॐ खं खखोल्काय नमः से मूर्ति कल्पित करके पुनः ध्यान-आवाहनादि करके पाँच पुष्पाञ्जलि अर्पित करे। इसके बाद आवरण-पूजन करे।

सूर्य यन्त्र
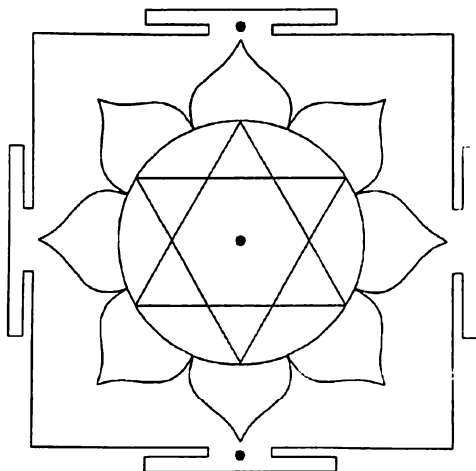
षडंग पूजन षट्कोण के अग्न्यादि कोणों, मध्य और दिशाओं में करे—
ॐ सत्याय तेजोज्वालामणे हुं फट् स्वाहा हृदयाय नमः।
ॐ ब्रह्मणे तेजोज्वालामणे हुं फट् स्वाहा शिरसे स्वाहा।
ॐ विष्णवे तेजोज्वालामणे हुं फट् स्वाहा शिखायै वषट्।
ॐ रुद्राय तेजोज्वालामणे हुं फट् स्वाहा कवचाय हुं।
ॐ अग्नये तेजोज्वालामणे हुं फट् स्वाहा नेत्रत्रयाय वौषट्।
ॐ सर्वाय तेजोज्वालामणे हुं फट् स्वाहा अस्त्राय फट्।

पद्मदलों में पूर्वादि क्रम से—ॐ आदित्याय नमः। एं रवये नमः। उं भानवे नमः। इं भास्कराय नमः से सूर्य की चार मूर्तियों का पूजन करे। तब आग्नेयादि चार कोणों वाले दलों में—उं उषायै नमः। पं प्रज्ञायै नमः। पं प्रभायै नमः। सं सन्ध्यायै नमः से चार शक्तियों का पूजन करे।

पद्मदलों के अग्रभाग में—ॐ ब्राह्म्यै नमः। ॐ माहेश्वर्यै नमः। ॐ कौमार्यै नमः। ॐ वैष्णव्यै नमः। ॐ इन्द्राण्यै नमः। ॐ वाराह्यै नमः। ॐ चामुण्डायै नमः। ॐ महालक्ष्म्यै नमः से अष्ट मातृकाओं का पूजन करे।

बिन्दु में सूर्यस्थान के आगे अरुण की पूजा करे। अष्टदल के बाहर और भूपुर के मध्य में ॐ चन्द्राय नमः। ॐ मङ्गलाय नमः। ॐ बुधाय नमः। ॐ बृहस्पतये नमः। ॐ शुक्राय नमः। ॐ शनैश्चराय नमः। ॐ राहवे नमः। ॐ केतवे नमः से आठ ग्रहों का पूजन करे।

भूपुर में इन्द्रादि दश दिक्पालों और भूपुर के बाहर उनके वज्रादि आयुधों का पूजन करे। इसके बाद समग्र पूजन में धूप-दीपादि से विसर्जन तक सभी कार्य करके पूजन सम्पूर्ण करे।

आठ लाख जप से इसका पुरश्चरण होता है। आठ हजार हवन दूधमिश्रित गूलर, वट या अश्वत्थ की समिधाओं से करे।

मन्त्रान्तरम्

आकाशमग्निदीर्घेन्दुसंयुतं भुवनेश्वरी ।
सर्गान्वितो भृगुर्भानोस्त्र्यक्षरोऽयं समीरितः ॥

अस्य पूजा—प्रातःकृत्यादिपूर्वमन्त्रोक्तपीठन्यासं विधाय पूर्वमन्त्रोक्तऋष्यादिन्यासं कुर्यात्। ततो मन्त्रन्यासः—आधारादिपादपर्यन्तं ह्रां नमः। कण्ठादाधारपर्यन्तं ह्रीं नमः। मूर्द्धादिकण्ठपर्यन्तं सः नमः। शारदायाम्—

आधारादिपदाग्रान्तं कण्ठादाधारकावधि ।
मूर्द्धादिकण्ठपर्यन्तं क्रमाद्बीजत्रयं न्यसेत् ॥

ततः कराङ्गन्यासौ—ह्रां अंगुष्ठाभ्यां नमः। ह्रीं तर्जनीभ्यां स्वाहा। ह्रूं मध्यमाभ्यां वषट्। ह्रैं अनामिकाभ्यां हुं। ह्रौं कनिष्ठाभ्यां वौषट्। ह्रः करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्। एवं हृदयादिषु। तथा च निबन्धे—

षड्दीर्घयुक्तमध्येन बीजेनाङ्गादिकल्पना ।

ततो ध्यानम्—

रक्ताम्बुजासनमशेषगुणैकसिन्धुं भानुं समस्तजगतामधिपं भजामि ।
पद्मद्वयाभयवरान्दधतं कराब्जैर्माणिक्यमौलिमरुणाङ्गरुचिं त्रिनेत्रम् ॥

इति ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्य अर्घ्यस्थापनं कुर्यात्। ततः पूर्वोक्तक्रमेण पीठपूजां विधाय मूलमन्त्रेण मूर्त्तिं सङ्कल्प्य पुनर्ध्यात्वा आवाहनादिपञ्चपुष्पाञ्जलि-दानपर्यन्तं विधाय आवरणपूजां कुर्यात्। अग्निनिर्ऋतिवायव्यीशानकोणेषु मध्ये दिक्षु च ह्रां हृदयाय नमः इत्यादिना पूजयेत्। पत्रेषु चन्द्रादीन् पूर्ववत्पूजयेत्। तत इन्द्रादीन् वज्रादींश्च प्रपूजयेत्। ततो धूपादिविसर्जनान्तं कर्म समापयेत्। अस्य पुरश्चरणं द्वादशलक्षजपः। तथा च—

भानुलक्षं जपेन्मन्त्रमाज्येन च दशांशतः ।
तिलैर्वा मधुरासिक्तैर्जुहुयाद्विजितेन्द्रियः ॥

सूर्य का अन्य मन्त्र—ह्रां ह्रीं सः। यह मन्त्र 'आकाशमग्निदीर्घेन्दु' इत्यादि श्लोक के उद्धार करने पर बनता है। इसका पूजन यन्त्र पूर्वोक्त मन्त्र के समान है।

प्रात:कृत्यादि करके पूर्वोक्त पीठ में न्यासान्त कर्म करके पूर्ववत् ऋष्यादि न्यास करे। तब मन्त्रवर्णन्यास करे। जैसे—मूलाधार से पादाग्र तक ह्रां नमः, कण्ठ से मूलाधार तक ह्रीं नमः और मस्तक से कण्ठ तक सः नमः से न्यास करे।

करन्यास—ह्रां अंगुष्ठाभ्यां नमः। ह्रीं तर्जनीभ्यां स्वाहा। ह्रूं मध्यमाभ्यां वषट्। ह्रैं अनामिकाभ्यां हुं। ह्रौं कनिष्ठाभ्यां वौषट्। ह्रः करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्। इसी प्रकार अंगुलियों के स्थान पर हृदयादि लगाकर अंगन्यास करे। न्यासोपरान्त निम्नवत् ध्यान करे—

रक्ताम्बुजासनमशेषगुणैकसिन्धुं भानुं समस्तजगतामधिपं भजामि।
पद्मद्वयाभयवरान् दधतं कराब्जैर्माणिक्यमौलिमरुणाङ्गरुचिं त्रिनेत्रम्।।

रक्त कमल पर भगवान् सूर्य विराजमान हैं। सभी गुणों के सागर हैं। सारे संसार के अधिपति भगवान् सूर्य की मैं वन्दना करता हूँ। हाथों में दो कमल, वरमुद्रा और अभयमुद्रा है। मस्तक पर माणिक्य मौलि है। देह की कान्ति का वर्ण लाल है। तीन नेत्र हैं।

मानसोपचारों से पूजा करके विशेषार्घ्य-स्थापन करे। पूर्वोक्त विधि से पीठपूजा करके मूल मन्त्र से मूर्ति कल्पित करे। ध्यान-आवाहनादि करके पाँच पुष्पाञ्जलि अर्पित करे। तब आवरण पूजन करे।

षट्कोण में आग्नेयादि कोणों में, मध्य में, दिशाओं में इस प्रकार पूजन करे—ह्रां हृदयाय नमः। ह्रीं शिरसे स्वाहा। ह्रूं शिखायै वषट्। ह्रैं कवचाय हुं। ह्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्। ह्रः अस्त्राय फट्।

आठ दलों में—ॐ चन्द्राय मनः। ॐ भौमाय नमः। ॐ बुधाय नमः। ॐ बृहस्पतये नमः। ॐ शुक्राय नमः। ॐ शनैश्चराय नमः। ॐ राहवे नमः। ॐ केतवे नमः से आठ ग्रहों का पूजन करे।

भूपुर में इन्द्रादि दश दिक्पालों और वज्रादि आयुधों का पूजन करे। इसके बाद धूपादि

विसर्जनान्त समग्र पूजन करे।

बारह लाख जप और त्रिमधुराक्त तिल से एक लाख बीस हजार हवन करने से इसका पुरश्चरण पूर्ण होता है।

मन्त्रान्तरम्

आकाशवह्निपवनसत्यान्तार्घीशविन्दुमत् ।
मार्त्तण्डभैरवं नाम बीजमेतदुदाहृतम् ।
पुटितं विम्बबीजेन सर्वकामफलप्रदम् ॥

विम्बबीजमाह तन्त्रे—

टान्तं दहननेत्रेन्दुसहितं तदुदाहृतम् ।

अस्य पूजाप्रयोगः—प्रातःकृत्यादिपूर्वमन्त्रोक्तपीठन्यासान्तं कर्म विधाय पूर्ववदृष्यादिन्यासं कुर्यात्। ततो मूर्त्तिन्यासः—ठ्रं सूर्याय नमोऽङ्गुष्ठयोः। ठ्रिं भास्कराय नमस्तर्जन्योः। ठ्रुं भानवे नमो मध्यमयोः। ठ्रैं रवये नमोऽनामिकयोः। ठ्रौं दिवाकराय नमः कनिष्ठयोः। ततः शिरसि वदने हृदये पादेषु तान् तत्तद्बीजादिकान् न्यसेत्। तथा च निबन्धे—

पञ्चह्रस्वाढ्यबीजेन पञ्चमूर्त्तीः प्रविन्यसेत् ।
अंगुष्ठादिकनिष्ठान्तमङ्गुलीषु क्रमादिमाः ॥
सूर्यस्तु भास्करो भानुस्ततो रविर्दिवाकरौ ।
शिरोवदनहृदगुह्यपाददेशेषु तान् पुनः ॥

ततः कराङ्गन्यासः—ठ्रां अंगुष्ठाभ्यां नमः। ठ्रीं तर्जनीभ्यां स्वाहा। ठ्रूं मध्यमाभ्यां वषट्। ठ्रैं अनामिकाभ्यां हुं। ठ्रौं कनिष्ठाभ्यां वौषट्। ठ्रः करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्। एवं ठ्रां हृदयाय नमः इत्यादि। तथा च निबन्धे—

दीर्घयुक्तेन बीजेन नेत्रान्ताङ्गानि विन्यसेत् ।

ततो मूलबीजेन व्यापकन्यासं कृत्वा ध्यायेत्। तथा च निबन्धे—

व्यापकं मूलबीजेन कुर्वीत तदनन्तरम् ।

ततो ध्यानम्—

हेमाम्भोजप्रवालप्रतिमनिजरुचिं चारुखट्वाङ्गचापौ
चक्रं शक्तिं सपाशं सृणिमतिरुचिरामक्षमालां कपालम् ।
हस्ताम्भोजैर्दधानं त्रिनयनविलसद्वेदवक्त्राभिरामं
मार्त्तण्डं वल्लभार्द्धं मणिमयमुकुटं हारदीप्तं भजामः ॥

एवं ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्य अर्घ्यस्थापनं कुर्यात्। ततः पूर्वोक्तक्रमेण पीठमन्वन्तं सम्पूज्य पूर्वादिषु कर्णिकायां ॐ ऊषायै नमः। एवं प्रज्ञायै प्रभायै

सन्ध्यायै इति सम्पूज्य मूर्त्तिं मूलेन कल्पयेत्। ततः पुनर्ध्यात्वा आवाहनादि-पञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं कर्म विधाय आवरणपूजामारभेत्। तथा च निबन्धे—

पीठे दीप्तादिभिर्युक्ते कर्णिकायामुषादिकाः ।
पूर्वादिदिक्षु सम्पूज्य मूर्त्तिं मूलेन कल्पयेत् ।।

ततः पूर्वादि दिक्षु सूर्यं भास्करं भानुं रविञ्च पूजयेत्। कोणेषु दिवाकरम्। ततोऽग्निनिर्ऋतिवायव्यीशानकोणेषु ठ्रां हृदयाय नमः इत्यादि। ईशाने ठ्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्। शारदायाम्—

सूर्यादीन् चतुरो दिक्षु विदिक्ष्वन्यं समर्चयेत् ।
अङ्गपूजा यथापूर्वं नेत्रमीशादिदिग्गतम् ।। इति।

ततः पूर्ववच्चन्द्रादि अष्टग्रहान् सम्पूज्य भूगृहेषु लोकपालान् पूजयेत्। तथा च निबन्धे—

ग्रहानष्टौ तथा वाह्ये लोकपालांस्ततः परम् ।

ततो धूपादिविसर्जनान्तं कर्म समापयेत्। अस्य पुरश्चरणजपो लक्षत्रयसंख्यः। त्रिमधुरोपेतैः पद्मैर्दशांशहोमः। तथा च—

लक्षत्रयं जपेन्मन्त्रं विम्बबीजपुटीकृतम् ।
दशांशं कमलैः फुल्लैर्जुहुयान्मधुरोक्षितैः ।।
इमं मन्त्रं जपेन्मर्त्त्यः कान्तिं पुत्रान् धनं द्युतिम् ।
वाक्सिद्धिमतुलां लक्ष्मीं सौभाग्यमपि साधयेत् ।।

सूर्य का अन्य मन्त्र—'ठ्रिं ह्र्यूं'—दो अक्षर का यह मन्त्र 'आकाशवह्निपवन' आदि श्लोकस्थ कूटों के उद्धार करने पर होता है। इसका यन्त्र पूर्ववत् है। इस मन्त्र से सभी मनोरथ पूर्ण होते हैं। ठ्रिं विश्वबीज है।

प्रातःकृत्यादि पूर्वोक्त पीठन्यासान्त कर्म करके पूर्ववत् ऋष्यादि न्यास करके मूर्तिन्यास करे—अंगुष्ठद्वये ठ्रं सूर्याय नमः। तर्जनीद्वये ठ्रिं भास्कराय नमः। मध्यमाद्वये ठ्रूं भानवे नमः। अनामिकाद्वये ठ्रें रवये नमः। कनिष्ठाद्वये ठ्रौं दिवाकराय नमः। यह न्यास 'निबन्ध' के मतानुसार है। इसके अनुसार 'ठ्रं सूर्याय नमः' आदि मन्त्रों से क्रमशः शिर, मुख, हृदय, गुह्य और पादद्वय में न्यास करे।

करन्यास—ठ्रां अंगुष्ठाभ्यां नमः। ठ्रीं तर्जनीभ्यां स्वाहा। ठ्रूं मध्यमाभ्यां वषट्। ठ्रैं अनामिकाभ्यां हुं। ठ्रौं कनिष्ठाभ्यां वौषट्। ठ्रः करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्। इसी प्रकार अंगुलियों के स्थान पर हृदय, शिर, शिखा, कवच, नेत्र और अस्त्र रखकर षडंगन्यास करे। इसके बाद ध्यान करे—

हेमाम्भोजप्रवालप्रतिमनिजरुचिं चारुखट्वाङ्गचापौ
चक्रं शक्तिं सपाशं सृणिमतिरुचिरामक्षमालां कपालम्।
हस्ताम्भोजैर्दधानं त्रिनयनविलसद्वेदवक्त्राभिरामं
मार्तण्डं वल्लभार्द्धं मणिमयमुकुटं हारदीप्तं भजाम: ।।

देह की कान्ति स्वर्णकमल और मूंगे के समान है। आठ हाथों में खट्वांग, धनुष, चक्र, शक्ति, पाश, अंकुश, रुद्राक्षमाला और नरकपाल हैं। तीन नेत्र, चार मुख, अर्द्धांग में प्रिया है। मणिजटित मुकुट एवं उज्ज्वल हार से सुशोभित भगवान् सूर्य की मैं वन्दना करता हूँ।

तब मानसोपचार से पूजन करे। अर्घ्य स्थापित करे। तब पूर्व मन्त्रोक्त पीठ-पूजान्त कर्म करके कर्णिका में पूर्वादि क्रम से इनकी पूजा करे—ॐ ऊषायै नम:। ॐ प्रज्ञायै नम:। ॐ प्रभायै नम:। ॐ सन्ध्यायै नम:। इसके बाद मूल मन्त्र से मूर्ति कल्पित करके ध्यान-आवाहनादि करे और पाँच पुष्पाञ्जलि अर्पित करे। तब आवरण-पूजन करे।

यन्त्र मध्य बिन्दु के पूर्व में ॐ सूर्याय नम:। दक्षिण में ॐ भास्कराय नम:। पश्चिम में ॐ भानवे नम: और उत्तर में ॐ रवये नम: से चारो मुखों का पूजन करे। चारो कोनों में दिवाकराय नम: से पूजा करे। षट्कोण के आग्नेयादि कोणों में अंगपूजा करे। ईशान में नेत्र की पूजा करे।

अष्टदल में पूर्ववत् चन्द्रादि आठ ग्रहों का पूजन करे। भूपुर में लोकपालों और उनके आयुधों का पूजन करे। धूपादि से विसर्जन तक समग्र पूजन करे।

इसका पुरश्चरण तीन लाख जप और तीस हजार त्रिमधुराक्त कमलों के हवन से पूर्ण होता है। इस मन्त्र का जप करने से मनुष्य को कान्ति, पुत्र, धन, द्युति, वाक्सिद्धि और सौभाग्य की प्राप्ति होती है।

अजपामन्त्र:

वियदर्द्धेन्दुललितं तदादिः सर्गसंयुतः ।
अजपाख्यो मनुः प्रोक्तो द्व्यक्षरः सुरपादपः ।।

अस्य पूजा—प्रातःकृत्यादिपूर्वोक्तपीठमन्वन्तं समाप्य ऋष्यादिन्यासं कुर्यात्। शिरसि ब्रह्मणे ऋषये नमः। मुखे गायत्रीच्छन्दसे नमः। हृदि श्रीगिरिजापतये देवतायै नमः। तथा च निबन्धे—

ऋषिर्ब्रह्मा स्मृतो देवि गायत्रीच्छन्द ईरितम् ।
देवता जगतामादिः सम्प्रोक्ता गिरिजापतिः ।।

ततः कराङ्गन्यासौ—ह्सां अंगुष्ठाभ्यां नमः इत्यादि। एवं हृदयादिषु। तथा च निबन्धे—

हसां षड्दीर्घयुक्तेन कुर्यादङ्गक्रियां मनोः ।

ततो ध्यानम्—

उद्यद्भानुस्फुरिततडिदाकारमर्द्धाम्बिकेशं
पाशाभीतिं वरदपरशुं सन्दधानं कराब्जैः ।
दिव्याकल्पैर्नवमणिमयैः शोभितं विश्वमूलं
सौम्याग्नेयं वपुरवतु वश्चन्द्रचूडं त्रिनेत्रम् ।।

एवं ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्य शङ्खस्थापनं कृत्वा, पूर्वोक्तपीठपूजां विधाय पुनर्ध्यात्वा आवाहनादिपञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं विधायावरणपूजामारभेत्। अग्निनिर्ऋतिवायव्यीशानकोणेषु मध्ये दिक्षु च ह्सां हृदयाय नमः इत्यादिना पूजयेत्। दिग्दलेषु ऋतं वरं वसुं नरं वरं; विदिग्दलेषु ऋतजा-गोजा-अब्जाद्रिजा पूजयेत्। तथा च निबन्धे—

ऋतं वसुं नरवरौ दिग्दलेषु विदिक्ष्वथ ।
अर्चयेत् ऋतजां गोजामब्जाख्यामद्रिजां पुनः ।।

तद्बाह्ये इन्द्रादीन् वज्रादींश्च प्रपूजयेत्। ततो धूपादिविसर्जनान्तं कर्म समापयेत्। अस्य पुरश्चरणं द्वादशलक्षजपः। घृतयुक्तपायसेन दशांशहोमः। तथा च—

भानुलक्षं जपेन्मन्त्रं पायसेन ससर्पिषा ।
दशांशं जुहुयान्मन्त्री ततः सिद्धो भवेन्नरः ।।

अजपा-मन्त्र—'वियदर्धेन्दु' आदि मूलोक्त श्लोक के कूटात्मक शब्दों के उद्धार करने पर दो अक्षरों का अजपा हंस मन्त्र बनता है। यह मन्त्र कल्पवृक्ष के समान है। इसके जप से सभी मनोरथ पूर्ण होते हैं।

यन्त्र—षट्कोण, अष्टदल और भूपुर से बनता है।

सामान्य पूजा पद्धति के क्रम से प्रातःकृत्यादि से पीठन्यासान्त कर्मों को सम्पन्न करके ऋष्यादि न्यास करे।

ऋष्यादि न्यास—ब्रह्मणे ऋषये नमः शिरसि। गायत्रीछन्दसे नमः मुखे। श्रीगिरजापतये देवतायै नमः हृदये।

करन्यास—ह्सां अंगुष्ठाभ्यां नमः। ह्सीं तर्जनीभ्यां स्वाहा। ह्सूं मध्यमाभ्यां वषट्। ह्सैं अनामिकाभ्यां हुं। ह्सौं कनिष्ठाभ्यां वौषट्। ह्सः करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्।

हृदयादि षडंग न्यास—ह्सां हृदयाय नमः। ह्सीं शिरसे स्वाहा। ह्सूं शिखायै वषट्। ह्सैं कवचाय हुं। हसौं नेत्रत्रयाय वौषट्। ह्सः अस्त्राय फट्। न्यासोपरान्त निम्नवत् ध्यान करे—

उद्यद्भानुस्फुरिततड़िताकारमर्दाम्बिकेशं
पाशाभीतिं वरदपरशुं सन्दधानं कराब्जैः।
दिव्याकल्पैर्नवमणिमयैः शोभितं विश्वमूलं
सौम्याग्नेयं वपुरवतु वश्चन्द्रचूडं त्रिनेत्रम्।।

भगवान् के देह की कान्ति उदीयमान सूर्य एवं चमकने वाली विद्युत् के समान है। अर्द्धांग में अम्बिका एवं अर्द्धांग में महादेव हैं। यह अर्द्धनारीश्वरस्वरूप हैं। करकमलों में पाश, वर, अभय और परशु हैं। दिव्य नव्य मणियों से युक्त आभूषणों से विभूषित हैं। विश्व के कारण हैं। सौम्य अग्नि के समान तीन नयन हैं। मस्तक पर अर्द्धचन्द्र है। आधा शरीर नरकपाल से और आधा मणिमय आभूषणों से सज्जित है। यह विश्वमूल आग्नेय मूर्ति हमारी रक्षा करे।

मानसोपचारों से पूजा करके शंखस्थापन करे। तब पीठपूजा करके पुनः ध्यान-आवाहनादि करके पाँच पुष्पाञ्जलि अर्पण करे। इसके बाद आवरण पूजा करे।

षडंग पूजन—अग्निकोण में ह्सां हृदयाय नमः। वायव्य में ह्सीं शिरसे स्वाहा। ईशान में ह्सूं शिखायै वषट्। नैर्ऋत्य में ह्सैं कवचाय हुं। ह्सौं नेत्रत्रयाय वौषट्। ह्सः अस्त्राय फट्।

अष्टदल में—पूर्वादि क्रम से पूर्व दल में ॐ ऋताय नमः। दक्षिण दल में ॐ वसवे नमः। पश्चिम दल में ॐ नराय नमः। उत्तर दल में ॐ वराय नमः। आग्नेय दल में ॐ ऋतजायै नमः। नैर्ऋत्य दल में ॐ गोजायै नमः। वायव्य दल में ॐ अब्जायै नमः। ईशान दल में ॐ अद्रिजायै नमः से पूजन करे।

भूपुर में इन्द्रादि दश दिक्पालों और उनके आयुधों का पूजन करे। इसके बाद धूपादि विसर्जनान्त समग्र यन्त्रस्थ देवों का पूजन करे।

पुरश्चरण में बारह लाख जप और दशांश एक लाश बीस हजार हवन घीमिश्रित पायस से करे।

विष्णुमन्त्राः

अथ वक्ष्ये महामन्त्रान् विष्णोः सर्वसमृद्धिदान्।
यस्य संस्मरणात् सन्तो भवाब्धे पारमाश्रिताः ।।
तारं नमः पदं ब्रूयान्नरौ दीर्घसमन्वितौ।
पावनो नाम मन्त्रोऽयं प्रोक्तो वस्वक्षरः परः ।।

अस्य पूजाप्रयोगः—प्रातःकृत्यादिस्नानान्तं कर्म कृत्वा पूजामण्डपमागत्य वैष्णवाचमनं कुर्यात्। तद्यथा गौतमीये—

केशवाद्यैस्त्रिभिः पीत्वा द्वाभ्यां प्रक्षालयेत् करौ ।
द्वाभ्यामोष्ठौ च सम्मृज्य द्वाभ्यां मृज्यान्मुखः ततः ॥
एकेन हस्तं प्रक्षाल्य पादावपि तथैकतः ।
सम्प्रोक्ष्यैकेन मूर्द्धानं ततः सङ्कर्षणादिभिः ॥
आस्यनासाक्षिकर्णांश्च नाभ्युरस्कं भुजौ क्रमात् ।
स्पृशेदेवं भवेदाचमनन्तु वैष्णवान्वये ।
एवमाचमनं कृत्वा साक्षान्नारायणो भवेत् ॥

केशवादयस्तु केशव-नारायण-माधव-गोविन्द-विष्णु-मधुसूदन-त्रिविक्रम-वामन-श्रीधर-हृषीकेश-पद्मनाभ-दामोदर-सङ्कर्षण-वासुदेव-प्रद्युम्न-अनिरुद्ध-पुरुषोत्तम-अधोक्षज-नृसिंह-अच्युत-जनार्दन-उपेन्द्र-हरि-विष्णवः। वाक् ॐ केशवाय नमः इत्यादि। तथा च—

सचतुर्थीनमोऽन्तैश्च नामभिर्विन्यसेत् सुधीः ।

ततः सामान्यार्घ्यादि-मातृकान्यासान्तं कर्म विधाय केशवकीर्त्त्यादिन्यासं कुर्यात्। अस्य ऋष्यादिन्यासः—शिरसि प्रजापतये ऋषये नमः । मुखे गायत्रीच्छन्दसे नमः। हृदि अर्द्धलक्ष्मीहरये देवतायै नमः।

ततः कराङ्गन्यासौ—श्रीं अंगुष्ठाभ्यां नमः इत्यादि। एवं हृदयादिषु। तथा च गौतमीये—

ऋषिः प्रजापतिच्छन्दो गायत्री देवता पुनः ।
अर्द्धलक्ष्मीहरिः प्रोक्तः श्रीबीजेन षडङ्गकम् ॥

ततो ध्यानम्—

उद्यत् प्रद्योतनशतरुचिं तप्तहेमावदाभं
पार्श्वद्वन्द्वे जलधिसुतया विश्वधात्र्या च जुष्टम् ।
नानारत्नोल्लसितविविधाकल्पमापीतवस्त्रं
विष्णुं वन्दे दरकमलकौमोदकीं चक्रपाणिम् ॥

एवं ध्यात्वा न्यसेत्। तथा च क्रमदीपिकायाम्—'वर्णानुक्त्वा सार्द्धचन्द्रान् पुरस्तात्' इत्यादि दर्शनात्सर्वत्र सानुस्वारः।

अं केशवाय कीर्त्त्यै नमो ललाटे। आं नारायणाय कान्त्यै नमो मुखे। इं माधवाय तुष्ट्यै नमो दक्षनेत्रे। ईं गोविन्दाय पुष्ट्यै नमो वामनेत्रे। सर्वत्र एवं उं विष्णवे धृत्यै दक्षकर्णे। ऊं मधुसूदनाय शान्त्यै वामकर्णे। ऋं त्रिविक्रमाय क्रियायै दक्षनासापुटे। ॠं वामनाय दयायै वामनासापुटे। ऌं श्रीधराय मेधायै दक्षगण्डे। ॡं हृषीकेशाय हर्षायै वामगण्डे। एं पद्मनाभाय श्रद्धायै ओष्ठे। ऐं दामोदराय लज्जायै

अधरे। ओं वासुदेवाय लक्ष्म्यै ऊर्ध्वदन्तपंक्तौ। औं सङ्कर्षणाय सरस्वत्यै अधोदन्तपंक्तौ। अं प्रद्युम्नाय प्रीत्यै मस्तके। अः अनिरुद्धाय रत्यै मुखे। कं चक्रिणे जयायै। खं गदिने दुर्गायै, गं शार्ङ्गिणे प्रभायै, घं खड्गिने सत्यायै, ङं शङ्खिने चण्डायै—इतिदक्षकरमूलसन्ध्यग्रकेषु। चं हलिने बाण्यै, छं मुषलिने विलासिन्यै, जं शूलिने विजयायै, झं पाशिने विरजायै, ञं अंकुशिने विश्वायै—इति वामकरमूलसन्ध्यग्रकेषु। टं मुकुन्दाय विनदायै, ठं नन्दजाय सुनदायै, डं नन्दिने स्मृत्यै, ढं नराय ऋद्ध्यै, णं नरकजिते समृद्ध्यै—इति दक्षपादमूलसन्ध्यग्रकेषु। तं हरये शुद्ध्यै, थं कृष्णाय बुद्ध्यै, दं सत्याय भक्त्यै, धं सात्त्वताय मत्यै, नं शौरये क्षमायै—इति वामपाद-मूलसन्ध्यग्रकेषु। पं शूराय रमायै दक्षपार्श्वे। फं जनार्दनाय उमायै वामपार्श्वे। बं भूधराय क्लेदिन्यै पृष्ठे। भं विश्वमूर्त्तये क्लिन्नायै नाभौ। मं वैकुण्ठाय वसुदायै उदरे। यं त्वगात्मने पुरुषोत्तमाय वसुधायै हृदि। रं असृगात्मने बलिने परायै दक्षांसे। लं मांसात्मने बलानुजाय परायणायै ककुदि। वं मेदात्मने बालाय सूक्ष्मायै वामांसे। शं अस्थ्यात्मने वृषघ्नाय सन्ध्यायै हृदादिदक्षकरे। षं मज्जात्मने वृषाय प्रज्ञायै हृदादिवामकरे। सं शुक्रात्मने हंसाय प्रभायै हृदादिदक्षपादे। हं प्राणात्मने वराहाय निशायै हृदादिवामपादे। लं जीवात्मने विमलाय अमोघायै हृदाद्युदरे। क्षं क्रोधात्मने नृसिंहाय विद्युतायै हृदादिमुखे इति। नमः सर्वत्र। केशवादिमाह शारदायाम्—

केशवनारायणमाधवगोविन्दविष्णवः ।
मधुसूदनसंज्ञोऽन्यः स्यात्त्रिविक्रमवामनौ ॥
श्रीधरश्च हृषीकेशः पद्मनाभस्ततः परः ।
दामोदरः वासुदेवः सङ्कर्षण इतीरितः ॥
प्रद्युम्नश्चानिरुद्धश्च स्वरार्णमूर्त्तयः स्मृताः ।
पश्चाच्चक्री गदी शार्ङ्गी खड्गी शङ्खी हली पुनः ॥
मुशली शूलिसंज्ञोऽन्यः पाशी स्यादंकुशी पुनः ।
मुकुन्दो नन्दजो नन्दो नरो नरकजिद्धरिः ॥
कृष्णः सत्यः सात्वतः स्यात् शौरिः शूरो जनार्दनः ।
भूधरो विश्वमूर्त्तिश्च वैकुण्ठः पुरुषोत्तमः ॥
बली बलानुजो बालो वृषघ्नश्च वृषः पुनः ।
हंसो वराहो विमलो नृसिंहो मूर्त्तयो हलाम् ॥
केशवाद्या इमे श्यामाः शङ्खचक्रलसत्कराः ।
कीर्त्तिः कान्तिस्तुष्टिपुष्टिधृतिः शान्तिः क्रिया दया ॥
मेधा सहर्षा श्रद्धा स्याल्लज्जा लक्ष्मीः सरस्वती ।

प्रीति रतिरिमाः प्रोक्ताः क्रमेण स्वरशक्तयः ॥
जया दुर्गा प्रभा सत्या चण्डा वाणी विलासिनी ।
विजया विरजा विश्वा विनदा सुनदा स्मृतिः ॥
ऋद्धिः समृद्धिः शुद्धिः स्याद्भुक्तिर्बुद्धिर्मति क्षमा ।
रमोमा क्लेदिनी क्लिन्ना वसुदा वसुधा परा ॥
तथा परायणा सूक्ष्मा सन्ध्या प्रज्ञा प्रभा निशा ।
अमोघा विद्युता चेति कीर्त्याद्याः सर्वकामदाः ॥
एताः प्रियतमाङ्केषु निमग्नाः सस्मिताननाः ।
विद्युद्दामसमाभाः स्युः पङ्कजाभयवाहवः ॥

विष्णुमन्त्र—ॐ नमो नारायणाय—यह अष्टाक्षर विष्णुमन्त्र है। यह मन्त्र सभी प्रकार की समृद्धि देने वाला है। इसके स्मरणमात्र से साधु लोग संसारसागर को पार कर जाते हैं।

यन्त्र—षट्कोण, अष्टदल और भूपुर से बनता है।

प्रातःकृत्यादि से स्नानान्त कर्म करके पूजामण्डप में आकर वैष्णव आचमन करे। गौतमतन्त्र में वैष्णवाचमन की यह विधि वर्णित है कि ॐ केशवाय नमः, ॐ नारायणाय नमः, ॐ माधवाय नमः से तीन आचमन करे। ॐ गोविन्दाय नमः, ॐ विष्णवे नमः से दोनों हाथों को धोवे। ॐ मधुसूदनाय नमः, ॐ त्रिविक्रमाय नमः से दोनों ओठों का मार्जन करे। ॐ वामनाय नमः ॐ श्रीधराय नमः से मुखमार्जन करे। ॐ हृषीकेशाय नमः से हाथ धोकर ॐ पद्मनाभाय नमः से पैरों को धोवे।

तब ॐ सङ्कर्षणाय नमः से मुख का स्पर्श करे। ॐ वासुदेवाय नमः, ॐ प्रद्युम्नाय नमः से नासिकाओं का स्पर्श करे। ॐ अनिरुद्धाय नमः, ॐ पुरुषोत्तमाय नमः से दोनों आँखों का स्पर्श करे। ॐ अधोक्षजाय नमः, ॐ नृसिंहाय नमः से दोनों कानों का स्पर्श करे। ॐ अच्युताय नमः से नाभि का, ॐ जनार्दनाय नमः से वक्षःस्थल का स्पर्श करे। ॐ उपेन्द्राय नमः से मस्तक का और ॐ हरये नमः, ॐ विष्णवे नमः से दोनों भुजाओं का स्पर्श करे। इस प्रकार के आचमन करने से साधक साक्षात् नारायण हो जाता है।

इसके बाद सामान्यार्घ्य का स्थापन करके मातृकान्यासान्त कर्म करके केशव-कीर्त्यादि न्यास करे। जैसे—

ऋष्यादि न्यास—ॐ प्रजापतये ऋषये नमः शिरसि। ॐ गायत्री छन्दसे नमः मुखे। ॐ अर्द्धलक्ष्मीहरये देवतायै नमः हृदये।

करन्यास—श्रीं अंगुष्ठाभ्यां नमः। श्रीं तर्जनीभ्यां स्वाहा। श्रीं मध्यमाभ्यां वषट्। श्रीं अनामिकाभ्यां हुं। श्रीं कनिष्ठाभ्यां वौषट्। श्रीं करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्।

षडंग न्यास—श्रीं हृदयाय नमः। श्रीं शिरसे स्वाहा। श्रीं शिखायै वषट्। श्रीं कवचाय हुं। श्री नेत्रत्रयाय वौषट्। श्रीं अस्त्राय फट्।

न्यास-सम्पादन के पश्चात् निम्नवत् ध्यान करे—

उद्यत्प्रद्योतनशतरुचिं तप्तहेमावदाभं
पार्श्वद्वन्द्वे जलधिसुतया विश्वधात्र्या च जुष्टम्।
नानारत्नोल्लसितविविधाकल्पमापीतवस्त्रं
विष्णुं वन्दे दरकमलकौमोदकीं चक्रपाणिम्।।

उदीयमान सौ सूर्यों के समान तेज, तपे हुए सोने जैसी आभा है। इनके दोनों ओर क्रमशः लक्ष्मी और वसुमती हैं। विविध रत्नाभूषणों से विभूषित हैं। कमर में पीला वस्त्र है। हाथों में शंख, कमल, गदा और चक्र हैं। ऐसे भगवान् विष्णु की मैं वन्दना करता हूँ।

केशवकीर्त्यादिन्यास—

ललाटे—अं केशवाय कीर्त्यै नमः।
मुखे—आं नारायणाय कान्त्यै नमः।
दक्षनेत्रे—इं माधवाय तुष्ट्यै नमः।
वामनेत्रे—ईं गोविन्दाय पुष्ट्यै नमः।
दक्षकर्णे—उं विष्णवे धृत्यै नमः।
वामकर्णे—ऊं मधुसूदनाय शान्त्यै नमः।
दक्षनासापुटे—ऋं त्रिविक्रमाय क्रियायै नमः।
वामनासापुटे—ॠं वामनाय दयायै नमः।
दक्षगण्डे—ऌं श्रीधराय मेधायै नमः।
वामगण्डे—ॡं हृषीकेशाय हर्षायै नमः।
उपरि ओष्ठे— एं पद्मनाभाय श्रद्धायै नमः।
अधरोष्ठे— ऐं दामोदराय लज्जायै नमः।
ऊर्ध्वदन्तपंक्तौ—ओं वासुदेवाय लक्ष्म्यै नमः।
अधोदन्तपंक्तौ—औं सङ्कर्षणाय सरस्वत्यै नमः।
मस्तके—अं प्रद्युम्नाय प्रीत्यै नमः।
मुखे—अः अनिरुद्धाय रत्यै नमः।
दक्षकरमूले—कं चन्द्रिणे जयायै नमः।
कूर्परे—खं गदिने दुर्गायै नमः।
मणिबन्धे—गं शार्ङ्गिणे प्रभायै नमः।
अंगुलिमूले—घं खड्गिने सत्यायै नमः।
अंगुल्यग्रे—ङं शंखिने चण्डायै नमः।

वामकरमूले—चं हलिने वाण्यै नम:।
कूर्परे—छं मूसलिने विलासिन्यै नम:।
मणिबन्धे—जं शूलिने विजयायै नम:।
अंगुलिमूले—झं पाशिने विरजायै नम:।
अंगुल्यग्रे—ञं अंकुशिने विश्वायै नम:।
दक्षपादमूले—टं मुकुन्दाय विनदायै नम:।
जानुनि—ठं नन्दजाय सुनदायै नम:।
गुल्फे—डं नन्दिने स्मृत्यै नम:।
अंगुलिमूले—ढं नराय ऋद्धये नम:।
अंगुल्यग्रे—णं नरकजिते समृद्धये नम:।
वामपादमूले—तं हरये शुद्धये नम:।
जानुनि—थं कृष्णाय बुद्धये नम:।
गुल्फे—दं सत्याय भक्त्यै नम:।
अंगुलिमूले—धं सात्वताय मत्यै नम:।
अंगुल्यग्रे—नं शौरये क्षमायै नम:।
दक्षपार्श्वे—पं शूराय रमायै नम:।
वामपार्श्वे—फं जनार्दनाय उमायै नम:।
पृष्ठे—बं भूधराय क्लेदिन्यै नम:।
नाभौ—भं विश्वमूर्तये क्लिन्नायै नम:।
उदरे—मं वैकुण्ठाय वसुदायै नम:।
हृदये—यं त्वगात्मने पुरुषोत्तमाय वसुधायै नम:।
दक्षांसे—रं असृगात्मने बलिने परायै नम:।
ककुदि—लं भासात्मने बलानुजाय परायणायै नम:।
वामांसे—वं मेदात्मने बलाय सूक्ष्मायै नम:।
हृदादिदक्षकरे—शं अस्थ्यात्मने वृषघ्नाय सन्ध्यायै नम:।
हृदादिवामकरे—षं मज्जात्मने वृषाय प्रज्ञायै नम:।
हृदादिदक्षपादे—सं शुक्रात्मने हंसाय प्रभायै नम:।
हृदादिवामपादे—हं प्राणात्मने वराहाय निशायै नम:।
हृदाद्युदरे—लं जीवात्मने विमलाय अमोघायै नम:।
हृदादिमुखे—क्षं क्रोधात्मने नृसिंहाय विद्युतायै नम:।

शारदातिलक में लिखा है कि केशव आदि देव के साथ कीर्ति आदि एक-एक शक्ति का नामोल्लेख कर न्यास करने के कारण इसे केशवकीर्त्यादि न्यास कहते हैं। केशव

से अनिरुद्ध तक की १६ स्वरमूर्ति, चक्री से नृसिंह तक ३५ व्यंजनमूर्ति से कुल ५१ देवता हैं। ये सभी श्याम वर्ण हैं और इनके हाथों में शंख और चक्र हैं। इसी प्रकार कीर्ति से रति तक की १६ स्वरशक्तियाँ और जया से विद्युता तक ३५ व्यंजन शक्तियाँ कुल ५१ शक्तियाँ हैं। ये सभी मूर्तियाँ सभी मनोरथों को पूर्ण करती हैं। सभी अपने पतियों के अंगों में निमग्न हैं। हंसमुखी और विद्युत् जैसी शोभा से सम्पन्न हैं। इनके हाथों में कमल और अभयमुद्रा है।

गौतमीये—

केशवादिरयं न्यासो न्यासमात्रेण देहिनाम् ।
अच्युतत्वं ददात्येव सत्यं सत्यं न संशयः ॥
मातृकार्णं समुच्चार्य केशवाय इति स्मरेत् ।
कीर्त्यै च नमसा युक्तमित्यादि न्यासमाचरेत् ॥

आगमकल्पद्रुमे—

आदिक्षान्तान्विन्दुयुक्तान्मातृकार्णान्यथाक्रमम् ।
ङेऽन्तं देवं तथा शक्तिं पश्चान्नम इति क्रमः ।
केशवाय ततः कीर्त्यै कान्त्यै नारायणाय च ॥

इत्याद्यगस्त्यसंहितावचनादयं क्रमः। न तु केशवकीर्त्तिभ्यां नमः इत्यादि। तथा भुक्तिमिच्छता अयं न्यासः कर्त्तव्यः श्रीबीजादिकः। यथा—ॐ श्रीं अं केशवाय कीर्त्यै नमः इत्यादि। तथा च गौतमीये—

प्रणवं पूर्वमुच्चार्य श्रीबीजं तदनन्तरम् ।
मातृकार्णं ततो न्यस्येद्वक्ष्यामि तत्प्रकारकम् ॥
वाग्भवाद्यं न्यसेद्वाथ वागीशत्वमवाप्नुयात् ।
यद्यदाद्यं यसेन्न्यासं तद्बीजेनाङ्गकल्पना ॥
एवं प्रविन्यसेन्न्यासं लक्ष्मीबीजपुरःसरम् ।
स्मृतिं धृतिं महालक्ष्मीं प्राप्यान्ते हरितां व्रजेत् ॥

ततस्तत्त्वन्यासः—

मादिकान्तानथार्णांश्च बीजान्येकैकशो वदेत् ।
नमः परायेत्युच्चार्य ततस्तत्त्वात्मने नमः ॥

इति गौतमीयदर्शनात्सर्वत्र तत्त्वपदप्रयोगः। यथा—मं नमः पराय जीवतत्त्वात्मने नमः। भं नमः पराय प्राणतत्त्वात्मने नमः। एतद्द्वयं सर्वगात्रे। बं नमः पराय मतितत्त्वात्मने नमः। फं नमः परायाहंकारतत्त्वात्मने नमः। पं नमः पराय

मनस्तत्त्वात्मने नमः। एतत्त्रितयं हृदि। नं नमः पराय शब्दतत्त्वात्मने नमो मस्तके। धं नमः पराय स्पर्शतत्त्वात्मने नमो मुखे। दं नमः पराय रूपतत्त्वात्मने नमो हृदि। थं नमः पराय रसतत्त्वात्मने नमो गुह्ये। तं नमः पराय गन्धतत्त्वात्मने नमः पादयोः। णं नमः पराय श्रोत्रतत्त्वात्मने नमः कर्णयोः। ढं नमः पराय त्वक्तत्त्वात्मने नमः त्वचि। डं नमः पराय नेत्रतत्त्वात्मने नमो नेत्रयोः। ठं नमः पराय जिह्वातत्त्वात्मने नमो जिह्वायाम्। टं नमः पराय घ्राणतत्त्वात्मने नमो घ्राणयोः। ञं नमः पराय वाक्तत्त्वात्मने नमो वाचि। झं नमः पराय पाणितत्त्वात्मने नमः पाण्योः। जं नमः पराय पादतत्त्वात्मने नमः पादयोः। छं नमः पराय वायुतत्त्वात्मने नमो गुह्ये। चं नमः पराय उपस्थतत्त्वात्मने नमो लिङ्गे। ङं नमः पराय आकाशतत्त्वात्मने नमो मूर्ध्नि। घं नमः पराय वायुतत्त्वात्मने नमो मुखे। गं नमः पराय तेजस्तत्त्वात्मने नमो हृदि। खं नमः पराय जलतत्त्वात्मने नमो लिङ्गमूले। कं नमः पराय पृथिवीतत्त्वात्मने नमः पादयोः। तथा च दीपिकायाम्—

इत्यच्युतीकृततनुर्विदधीत तत्त्वन्यासं मपूर्वकपराक्षरनत्युपेतम् ।
भूयः पराय च तदाह्वयमात्मने च नत्यन्तमुद्धरत तत्त्वमनुक्रमेण ॥

सकलवपुषि जीवं प्राणमायोज्य मध्ये
न्यसतु मतिमहंकारं मनश्चेति मन्त्री ।
कमुखहृदयगुह्यांघ्रिष्वथो शब्दपूर्वं
गुणगणमथ कर्णादिस्थितं श्रोत्रपूर्वम् ॥
वागादीन्द्रियवर्गमात्मनि नयेदाकाशपूर्वं गणं ।
मूर्द्धास्ये हृदये शिरे चरणयोर्हृत्पुण्डरीकं हृदि ॥

शं नमः पराय हृत्पुण्डरीकतत्त्वात्मने नमो हृदि। हं नमः पराय द्वादश-कलाव्याप्तसूर्यमण्डलतत्त्वात्मने नमो हृदि। सं नमः पराय षोडशकलाव्याप्त-सोममण्डलतत्त्वात्मने नमो हृदि। रं नमः पराय दशकलाव्याप्तवह्निमण्डलतत्त्वात्मने नमो हृदि। षं नमः पराय परमेष्ठितत्त्वात्मने वासुदेवाय नमः शिरसि। यं नमः पराय पुरुषतत्त्वात्मने सङ्कर्षणाय नमो मुखे। लं नमः पराय विश्वतत्त्वात्मने प्रद्युम्नाय नमो हृदि। वं नमः पराय निवृत्तितत्त्वात्मने अनिरुद्धाय नमो लिङ्गे। लं नमः पराय सर्वतत्त्वात्मने नारायणाय नमः पादयोः। क्ष्रौं नमः पराय कोपतत्त्वात्मने नृसिंहाय नमः सर्वगात्रे। तथा च गौतमीये—

शं-बीजं हृत्पुण्डरीकतत्त्वं हृदि प्रविन्यसेत् ।
हं-बीजं सूर्यमण्डलतत्त्वं हृदि प्रविन्यसेत् ॥
सं-बीजं चन्द्रमण्डलतत्त्वं हृदि प्रविन्यसेत् ।

रं-बीजं वह्निमण्डलतत्त्वं तत्र प्रविन्यसेत् ॥
यं-बीजं परमेष्ठितत्त्वं वासुदेवञ्च मूर्धनि ।
यं-बीजमथ पुंस्तत्त्वं सङ्कर्षणमथो मुखे ॥
लं-बीजं विश्वतत्त्वञ्च प्रद्युम्नञ्च हृदि न्यसेत् ।
वं-बीजं निवृत्तितत्त्वञ्च अनिरुद्धमुपस्थके ।
लं-बीजं सर्वतत्त्वञ्च पादे नारायणं न्यसेत् ॥
क्ष्रौं-बीजं कोपतत्त्वञ्च नृसिंहं सर्वगात्रके ।
एवं तत्त्वानि विन्यस्य प्राणायामं समाचरेत् ॥

फलन्तु तत्रैव—

तत्त्वन्यासं ततः कुर्यात्साधकः सिद्धिहेतवे ।
कृतेन येन देवस्य रूपतामेव यात्यसौ ॥

ततो यथाविधि प्राणायामं कृत्वा पीठन्यासं विधाय केशरेषु पूर्वादि प्रादक्षिण्येन मध्ये च ॐ विमलायै नमः। एवं उत्कर्षिण्यै ज्ञानायै क्रियायै योगायै प्रह्व्यै सत्यायै ईशानायै अनुग्रहायै। तदुपरि ॐ नमो विष्णवे भगवते सर्वभूतात्मने वासुदेवाय सर्वात्मसंयोगयोगपद्मपीठात्मने नमः। तथा च निबन्धे—

विमलोत्कर्षिणी ज्ञाना क्रिया योगा च शक्तयः ।
प्रह्वी सत्या तथेशानानुग्रहा नवमी स्मृता ॥

पीठमन्त्रोच्चारणमाह—

नमो भगवते ब्रूयाद्विष्णवेऽथ पदं वदेत् ।
सर्वभूतात्मने वासुदेवायेति वदेत्ततः ॥
सर्वात्मसंयोगपदाद्योगपद्मपदं ततः ।
पीठात्मने हृदन्तोऽयं मन्त्रस्तारादिको हरेः ॥

ततः ऋष्यादिन्यासः। तद्यथा—शिरसि साध्यनारायणाय ऋषये नमः। मुखे देवीगायत्रीच्छन्दसे नमः। हृदि श्रीविष्णवे देवतायै नमः। तथा च—

साध्यनारायणः प्रोक्त ऋषिश्छन्द उदाहृतम् ।
मन्त्रस्य देवी गायत्री देवता विष्णुरव्ययः ॥

ततः कराङ्गन्यासौ—क्रुद्धोल्काय अंगुष्ठाभ्यां नमः। महोल्काय तर्जनीभ्यां स्वाहा। वीरोल्काय मध्यमाभ्यां वषट्। अत्युल्काय अनामिकाभ्यां हुं। सहस्रोल्काय कनिष्ठाभ्यां फट्। एवं हृदयादिषु। तथा च प्रपञ्चसारे—

क्रुद्धोल्काय हृदाख्यातं महोल्काय शिरः स्मृतम् ।

वीरोल्काय शिखा प्रोक्तात्युल्काय कवचं स्मृतम् ।
सहस्रोल्कायास्त्रमुक्तमङ्गक्लृप्तिरियं मता ।।

ततो मन्त्रेण षडङ्गन्यासं कुर्यात्। ॐ हृदयाय नमः, नं शिरसे स्वाहा, मों शिखायै वषट्, नां कवचाय हुं, रां नेत्रत्रयाय वौषट्, यं अस्त्राय फट्। णां नमो दक्षपार्श्वे, यं नमो वामपार्श्वे।

गौतमतन्त्र और आगमकल्पद्रुम के अनुसार केशवकीर्त्यादि न्यास करने मात्र से मनुष्य विष्णुत्व प्राप्त करता है, इसमें सन्देह नहीं है। मुक्ति की इच्छा वाला व्यक्ति मन्त्र के प्रारम्भ में श्रीबीज 'श्रीं' लगाकर न्यास करे। जैसे 'ॐ श्रीं अं केशवाय कीर्त्यै नमः' इत्यादि। इस प्रकार न्यास करने से स्मृति, धृति, महालक्ष्मी की प्राप्ति होती है और अन्त में विष्णुत्द का लाभ होता है। तब निम्न प्रकार से तत्त्वन्यास करे—

मं नमः पराय जीवतत्त्वात्मने नमः सर्वगात्रे।
भं नमः पराय प्राणतत्त्वात्मने नमः सर्वगात्रे।
बं नमः पराय मतितत्त्वात्मने नमो हृदि।
फं नमः पराय अहङ्कारतत्त्वात्मने नमो हृदि।
पं नमः पराय मनस्तत्त्वात्मने नमो हृदि।
नं नमः पराय रूपतत्त्वात्मने नमो मस्तके।
धं नमः पराय स्पर्शतत्त्वात्मने नमो मुखे।
दं नमः पराय रूपतत्त्वात्मने नमो हृदि।
थं नमः पराय रसतत्त्वात्मने नमो गुह्ये।
तं नमः पराय गन्धतत्त्वात्मने नमो पादयोः।
णं नमः पराय श्रोत्रतत्त्वात्मने नमो कर्णयोः।
ढं नमः पराय त्वक्तत्त्वात्मने नमो त्वचि।
डं नमः पराय नेत्रतत्त्वात्मने नमः नेत्रयोः।
ठं नमः पराय जिह्वातत्त्वात्मने नमः जिह्वायाम्।
टं नमः पराय घ्राणतत्त्वात्मने नमः घ्राणयोः।
ञं नमः पराय वाक्तत्त्वात्मने नमः वाचि।
झं नमः पराय पाणितत्त्वात्मने नमः पाण्योः।
जं नमः पगय पादतत्त्वात्मने नमः पादयोः।
छं नमः पराय पायुतत्त्वात्मने नमः गुह्ये।
चं नमः पराय उपस्थतत्त्वात्मने नमः लिङ्गे।
ङं नमः पराय आकाशतत्त्वात्मने नमः मूर्ध्नि।
घं नमः पराय वायुतत्त्वात्मने नमः मुखे।

गं नम: पराय तेजस्तत्त्वात्मने नम: हृदि।
खं नम: पराय जलतत्त्वात्मने नम: लिङ्गमूले।
कं नम: पराय पृथ्वीतत्त्वात्मने नम: पादयो:।
शं नम: हृत्पुण्डरीकतत्त्वात्मने नम: हृदि।
हं नम: द्वादशकलाव्याप्तसूर्यमण्डलाय नम: हृदि।
सं नम: षोडशकलाव्याप्तचन्द्रमण्डलाय नम: हृदि।
रं नम: दशकलाव्याप्तवह्नितत्त्वात्मने नम: हृदि।
षं नम: परमेष्ठितत्त्वात्मने वासुदेवाय नम: शिरसि।
यं नम: पुरुषतत्त्वात्मने संकर्षणाय नम: मुखे।
लं नम: विश्वतत्त्वात्मने प्रद्युम्नाय नम: हृदि।
वं नम: निवृत्तितत्त्वात्मने अनिरुद्धाय नम: लिङ्गे।
लं नम: सर्वतत्त्वात्मने नारायणाय नम: पादयो:।
क्ष्रौं नम: कोपतत्त्वात्मने नृसिंहाय नम: सर्वगात्रे।

यह न्यास दीपिका और गौतमतन्त्र के अनुसार है। इस न्यास का फल गौतम-तन्त्र के अनुसार सिद्धिलाभ है। इस न्यास से साधक विष्णुरूप प्राप्त करता है।

इसके बाद प्राणायाम करे। पीठन्यास करे। केशरों में पूर्वादि दिशाओं में प्रादक्षिण्य क्रम से और मध्य में नौ पीठशक्तियों की पूजा करे। ॐ विमलायै नम:। ॐ उत्कर्षिण्यै नम:। ॐ ज्ञानायै नम:। ॐ क्रियायै नम:। ॐ योगायै नम:। ॐ प्रह्वै नम:। ॐ सत्यायै नम:। ॐ ईशानायै नम:। ॐ अनुग्रहायै नम:। उनके ऊपर ॐ नमो भगवते विष्णवे सर्वभूतात्मने वासुदेवाय सर्वात्मसंयोगपद्मपीठात्मने नम: से विष्णु को आसन देकर पूजा करे। निबन्ध के मत से भी यही क्रम है।

ऋष्यादि न्यास—साध्य नारायणाय ऋषये नम: शिरसि। देवी गायत्रीछन्दसे नम: मुखे। श्रीविष्णवे देवतायै नम: हृदये। निबन्धग्रन्थ और प्रपञ्चसार के अनुसार करांग न्यास इस प्रकार करे—

करन्यास—क्रुद्धोल्काय अंगुष्ठाभ्यां नम:। महोल्काय तर्जनीभ्यां स्वाहा। वीरोल्काय मध्यमाभ्यां वषट्। अत्युल्काय अनामिकाभ्यां हुं। सहस्रोल्काय कनिष्ठाभ्यां फट्।

हृदयादि षडंग न्यास—ॐ हृदयाय नम:। नं शिरसे स्वाहा। मों शिखायै वषट्। नां कवचाय हुं। रां नेत्रत्रयाय वौषट्। णां नमो दक्षपार्श्वे। यं नमो वामपार्श्वे।

तथा च—

भूयो वर्णैर्मनोः षड्भिः षडङ्गानि समाचरेत् ।
अवशिष्टैः पुनर्वर्णैर्विन्यसेत्कुक्षिपार्श्वयोः ॥

ततः ॐ नमः सुदर्शनाय अस्त्राय फट् इति मन्त्रेण दिग्बन्धनं कृत्वा

मन्त्रन्यासं कुर्यात्। तथा च—

मन्त्रन्यासं ततः कुर्यात्सर्वकामफलप्रदम्।
यं विना नैव तत्सम्यगासुरं निष्फलं भवेत्॥

तद्यथा—आधारे ॐ नमः, हृदि नं नमः, वक्त्रे मों नमः, दोर्मूले नां नमः रां नमः, पादयोः यं नमः णां नमः, नाभौ यं नमः। एवं कण्ठे नाभौ हृदि कुचयोः पार्श्वयोः पृष्ठे च। मूर्ध्नि आस्ये नेत्रयोः श्रवणयोर्घ्राणयोः हस्तयोः सन्ध्यङ्गुलीषु। तथा पादयोः सन्ध्यंगुलीषु। हृदये सप्तधातुषु प्राणेषु। धातवस्तु—त्वग्सृङ्मांसमेदोस्थिमज्जशुक्राणि धातवः।

मूर्ध्नि नेत्रे आस्ये हृदि कुक्षौ ऊर्वोः जङ्घयोः पादयोर्गण्डयोरंसयोः ऊर्वोः पादयोश्चक्रे शङ्खे गदायां पद्मे च विन्यसेत्। तथा च निबन्धे—

बद्धदिक्चक्रमन्त्रेण मन्त्रवर्णांस्तनौ न्यसेत्।
आधारे हृदये वक्त्रे दोःपन्मूलेषु नाभिके॥
कण्ठे नाभौ हृदि कुचे पार्श्वे पृष्ठे च तत्परम्।
मूर्द्धास्यनेत्रश्रवणघ्राणेषु तदनन्तरम्॥
दोःपादसन्ध्यंगुलीषु धातुप्राणेषु हृत्स्थले।
मूर्द्धेक्षणास्यहृत्कुक्षिसोरुजङ्घापदद्वये॥
एकैकशो न्यसेद्वर्णान् गण्डांसोरुपदेषु च।
शङ्खचक्रगदाम्भोजपादेष्ववहितो न्यसेत्॥

ततो मूर्तिपञ्जरन्यासः—ललाटे ॐ अं केशवाय धात्रे नमः। कुक्षौ नं आं नारायणाय अर्यम्ने नमः। हृदि षों इं माधवाय मित्राय नमः। गलकूपे भं ईं गोविन्दाय वरुणाय नमः। दक्षपार्श्वे गं उं विष्णवे अंशवे नमः। दक्षिणांसे वं ऊं मधुसूदनाय भगाय नमः। गलदक्षिणभागे तें एं त्रिविक्रमाय विवस्वते नमः। वामपार्श्वे वां ऐं वामनाय इन्द्राय नमः। वामांसे सुं ओं श्रीधराय पूष्णे नमः। गलवामभागे दें औं हृषिकेषाय पर्जन्याय नमः। पृष्ठे वां अं पद्मनाभाय त्वष्ट्रे नमः। ककुदि यं अः दामोदराय विष्णवे नमः। ततो वक्ष्यमाणकिरीटमन्त्रेण व्यापकं कृत्वा शिरसि द्वादशाक्षरमन्त्रं न्यसेत्। तथा च निबन्धे—

अष्टार्णोऽष्टप्रकृत्यर्थो ज्ञेयः स्याच्चतुरात्मनाम्।
संयोगात्सूरीभिः प्रोक्तो विशिष्टो द्वादशाक्षरः।
अतस्तन्मन्त्रवर्णाद्या द्वादशस्वरसंयुताः॥
द्वादशादित्यसहिता मूर्त्तीर्द्वादश विन्यसेत्।
केशवाद्याः क्रमाद्देहे वक्ष्यमाणविधानतः॥

ललाटे केशवं धात्रा कुक्षौ नारायणं पुनः ।
अर्यम्ना हृदि मन्त्रेण माधवं कण्ठदेशतः ॥
वरुणेन च गोविन्दं पुनर्दक्षिणपार्श्वके ।
अंशुना विष्णुमंसे स्याद्भगेन मधुसूदनम् ॥
गले विवस्वता युक्तं त्रिविक्रममनन्तरम् ।
वामपार्श्वस्थमिन्द्रेण वामनाख्यमथांसके ॥
पूष्णा श्रीधरनामानं गले पर्जन्यसंयुतम् ।
हृषीकेशाह्वयं पृष्ठे पद्मनाभं ततः परम् ॥
त्वष्ट्रा दामोदरं पश्चाद्विष्णुना ककुदि न्यसेत् ।
द्वादशार्णं महामन्त्रं ततो मूर्ध्नि प्रविन्यसेत् ।
ततः किरीटमन्त्रेण व्यापकं विन्यसेत्ततः ॥

तथा च गौतमीये—

द्वादशाक्षरं मन्त्रवरं विन्यसेद् ब्रह्मरन्ध्रके ।
वासुदेवो भवेत्साक्षाद्व्यापितस्तस्य तेजसा ॥
त्रिमात्रिकं समुद्धृत्य नमो भगवते लिखेत् ।
वासुदेवं चतुर्थ्यां तु मन्त्रोऽयं सुरपादपः ।
अस्य विज्ञानमात्रेण वासुदेवः प्रजायते ॥

तत अमुं मन्त्रं पठेत्—

चैतन्यामृतवपुरर्ककोटितेजा मूर्ध्निस्थो वपुरखिलं स वासुदेवः ।
उधस्यं सुविमलपाथसीव सिक्तं व्याप्नोति प्रकटितमन्त्रवर्णसङ्कीर्णम् ॥

न्यासफलन्तु—

तन्मूर्त्तिपञ्जरन्यासोऽभिहितः परमेष्ठिना ।
सकृन्न्यासाद्भवेन्मन्त्री विष्णुमूर्त्तिरनुत्तमा ॥

मूर्तिपञ्जरन्यासस्तु बहुधा। ॐ अं धातृसहितकेशवाय नमः इति केचित्। ॐ अं केशवधातृभ्यां नमः इत्यन्ये। ॐ अं केशवसहितधात्रे नमः इत्यपरे। तन्न,

वासुदेवमनोरेकं वर्णं क्लीवविवर्जितम् ।
स्वरैकं विन्दुसंयुक्तं चतुर्थ्या केशवादिकम् ।
तथा धात्र्यादिकञ्चोक्त्वा नमो न्यास उदाहृतः ॥

इति नारदीयतन्त्रात् ॐ अं केशवाय धात्रे नमः इति वदन्ति।

ततः ॐ किरीटकेयूरहारमकरकुण्डलशङ्खचक्रगदाम्भोजहस्तपीताम्बरधर-श्रीवत्साङ्कितवक्षःस्थलश्रीभूमिसहितस्वात्मज्योतिर्मयदीप्तकराय सहस्रादित्यतेजसे नमः—इति मन्त्रेण व्यापकं विन्यस्य मुद्राः प्रदर्श्य ध्यानं कुर्यात्। तथा च प्रपञ्चसारे—

किरीटकेयूरहारपदान्याभाष्य मन्त्रवित् ।
मकारान्ते कुण्डलञ्च शङ्खचक्रगदादिकम् ॥
पद्महस्तपदं प्रोक्त्वा पीताम्बरधरेति च ।
श्रीवत्साङ्कितमाभाष्य वक्षःस्थलमथो वदेत् ॥
श्रीभूमिसहितं स्वात्मज्योतिर्मयपदं वदेत् ।
दीप्तमुक्त्वा करायेति सहस्रादित्यतेजसे ॥
हृदन्तः प्रणवादिः स्यात् किरीटादिमनुद्वयम् ।
एवं न्यासं पुरा कृत्वा ध्यायेन्नारायणं परम् ॥

ध्यानं यथा—

उद्यत्कोटिदिवाकराभमनिशं शङ्खं गदां पङ्कजं
चक्रं बिभ्रतमिन्दिरावसुमतीसंशोभिपार्श्वद्वयम् ।
कोटीराङ्गदहारकुण्डलधरं पीताम्बरं कौस्तुभो-
द्दीप्तं विश्वधरं स्ववक्षसि लसच्छ्रीवत्सचिह्नं भजे ॥

एवं ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्य शङ्खस्थापनं कुर्यात्। तत्र वैष्णवपात्रस्तु गौतमीये—

ताम्रपात्रन्तु विप्रर्षे ! विष्णोरतिप्रियं मतम् ।
तथैव सर्वपात्राणां मुख्यं शङ्खं प्रकीर्त्तितम् ॥
मृत्पात्रञ्च तथा प्रोक्तं सौवर्णं राजतन्तथा ।
पञ्चपात्रं हरेः शुद्धं नान्यत्तत्र नियोजयेत् ॥

नैवेद्यदाने तु तत्र—

स्वर्णे वा ताम्रपात्रे वा रौप्ये वा पङ्कजे दले । इत्यादि।

भक्तिकल्पद्रुमे—

हैरण्यं राजतं कांस्यं ताम्रं मृण्मयमेव वा ।
पालाशं श्रीहरेः पात्रं नैवेद्ये कल्पयेद्बुधः ॥

तथा च पुरश्चरणचन्द्रिकायाम्—सौवर्णे राजते रौप्ये इत्यादि।

ततः सामान्यपीठपूजानन्तरं विमलादिशक्तिसहितपीठपूजां कृत्वा, पुनर्ध्यात्वा, मूलेन कल्पितमूर्त्तावावाहनादिपञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं विधाय आवरणपूजामारभेत्। तद्यथा—

अग्निकोणे ॐ क्रुद्धोल्काय हृदयाय नमः। नैर्ऋते महोल्काय शिरसे स्वाहा। वायुकोणे वीरोल्काय शिखायै वषट्। ईशाने अत्युल्काय कवचाय हुं। दिक्षु सहस्रोल्काय अस्त्राय फट्। ततः केशरेषु पूर्वादि ॐ नमः, नं नमः, मों नमः, नां नमः, रां नमः, यं नमः, णां नमः, यं नमः। ततो दलेषु पूर्वादिदिक्षु ॐ वासुदेवाय नमः, ॐ सङ्कर्षणाय नमः, ॐ प्रद्युम्नाय नमः, ॐ अनिरुद्धाय नमः। आग्नेयादिकोणदलेषु ॐ शान्त्यै नमः। एवं श्रियै, सरस्वत्यै, रत्यै।

ततोऽष्टदलाग्रेषु पूर्वादिदिक्षु ॐ चक्राय नमः, एवं शङ्खाय गदायै पद्माय कौस्तुभाय मुशलाय खड्गाय वनमालायै। तद्बहिरग्रे ॐ गरुडाय नमः, दक्षिणे ॐ शङ्खनिधये, वामे ॐ पद्मनिधये, पश्चिमे ॐ ध्वजाय, अग्निकोणे ॐ विघ्नाय, नैर्ऋते ॐ आर्यायै, वायुकोणे ॐ दुर्गायै, ईशाने ॐ सेनान्यै। नमः सर्वत्र। तद्बहिरिन्द्रादीन् वज्रादींश्च सम्पूज्य धूपदीपौ दत्त्वा नैवेद्यं दद्यात्। तद्यथा—

नैवेद्यमानीय देवाय मूलेन पाद्यार्घ्याचमनीयं दत्त्वा, फडिति मन्त्रेण नैवेद्यं सम्प्रोक्ष्य, चक्रमुद्रया अभिरक्ष्य, यं इति मन्त्रेण दोषसमूहं संशोध्य, रमिति दोषं सन्दह्य, वामकरसौधधाराभिपूर्णं वमित्यमृतीकृतं विभाव्य, मूलमष्टधा जपेत्। ततो वमिति धेनुमुद्रया अमृतीकृत्य, गन्धपुष्पाभ्यां नैवेद्यं सम्पूज्य, देवाय मूलमन्त्रेण पुष्पाञ्जलिं दत्त्वा, कृताञ्जलिः सन् हरिं प्रार्थयेत्। अस्य मुखतो महः प्रसवेदिति विभाव्य, स्वाहान्तं मूलमुच्चार्य, नैवेद्ये जलं दद्यात्। ततो मूलमुच्चार्य एतन्नैवेद्यम् अमुकदेवतायै नमः। ततो नैवेद्यमुद्धृत्य, ॐ निवेदयामि भवते जुषाणेदं हविर्हरे इति नैवेद्यं समर्प्य, अमुकदेवतायै एतज्जलम् अमृतोपस्तरणमसीति जलं दत्त्वा, वामहस्तेन ग्रासमुद्रां प्रदर्श्य दक्षिणहस्तेन प्राणादिमुद्राः प्रदर्शयेत्। यथा—

ॐ प्राणाय स्वाहा इति कनिष्ठानामिके अंगुष्ठेन स्पृशेत्। ॐ अपानाय स्वाहा इति तर्जनीमध्यमे अंगुष्ठेन स्पृशेत्। ॐ व्यानाय स्वाहा इति मध्यमानामिके अंगुष्ठेन स्पृशेत्। ॐ उदानाय स्वाहा इति तर्जनीमध्यमानामा अंगुष्ठेन स्पृशेत्। ॐ समानाय स्वाहा इति सर्वाङ्गुलीरङ्गुष्ठेन स्पृशेत्। ततोऽङ्गुष्ठाभ्यामनामिकाग्रं स्पृशन् ठ्रौं नमः पराय अन्तरात्मने अनिरुद्धाय नैवेद्यं कल्पयामि इति नैवेद्ये मुद्राः प्रदर्श्य, मूलमन्त्रमुच्चार्य, अमुकदेवं तर्पयामि इति चतुर्धा सन्तर्प्य, अमुकदेवतायै एतज्जलं अमृतापिधानमसीति जलं दत्त्वा, तत्तेजो देवतामुखे स्थापयित्वा आचमनीयादिकं दद्यादिति। वैष्णवे तु सर्वत्र नैवेद्यदाने अयं क्रमः। ततः सामान्यपद्धतिक्रमेण विसर्जनान्तं कर्म समापयेत्। अस्य पुरश्चरणं षोडश-लक्षजपः। तथा च—

विकारलक्षं प्रजपेन्मनुमेनं समाहितः ।
तद्दशांशं सरसिजैर्जुहुयान्मधुराप्लुतैः ॥

मन्त्रन्यास—'ॐ सुदर्शनाय अस्त्राय फट्' से दिग्बन्ध करके मन्त्रन्यास करे। इस न्यास से सभी मनोरथ पूर्ण होते हैं। इसके न करने से विष्णु की पूजा आसुरी हो जाती है।

मूलधारे—ॐ नमः
हृदये—नं नमः
मुखे—मों नमः
दक्षबाहुमूले—नां नमः
वामबाहुमूले—रां नमः
दक्षपादे—यं नमः
वामपादे—णां नमः
नाभौ—यं नमः
कण्ठे—ॐ नमः
नाभौ—नं नमः
हृदये—मों नमः
दक्षस्तने—नां नमः
वामस्तने—रां नमः
दशपार्श्वे—यं नमः
वामपार्श्वे—णां नमः
पृष्ठे—यं नमः
मस्तके—ॐ नमः
मुखे—नं नमः
दक्षनेत्रे—मों नमः
वामनेत्रे—नां नमः
दक्षकर्णे—रां नमः
वामकर्णे—यं नमः
दक्षनासिके—णां नमः
वामनासिके—यं नमः
दक्षबाहुमूले—ॐ नमः
कूपरे—नं नमः
मणिबन्धे—मों नमः
अंगुष्ठे—नां नमः
तर्जन्यां—रां नमः
मध्यमायां—यं नमः
अनामिकायां—णां नमः
कनिष्ठायां—यं नमः
वामबाहुमले—ॐ नमः
कूपरि—नं नमः
वामनेत्रे—मों नमः
मुखे—नां नमः
हृदये—रां नमः
जठरे—यं नमः
दक्षोरौ—णां नमः
वामोरौ—यं नमः
दक्षजंघयो—ॐ नमः
वामजंघयो—नं नमः
दक्षपादे—मों नमः
वामपादे—नं नमः
दक्षगण्डे—रां नमः
मणिबन्धे—मों नमः
अङ्गुष्ठे—नां नमः
तर्जन्यां—रां नमः
मध्यमायां—यं नमः
अनामिकायां—णां नमः
कनिष्ठायां—यं नमः
दक्षपादमूले—ॐ नमः
जानुनि—नं नमः
गुल्फे—मों नमः
अंगुष्ठे—नां नमः
तर्जन्यां—रां नमः
मध्यमायां—यं नमः
अनामिकायां—णां नमः
कनिष्ठायां—यं नमः
वामपादमूले—ॐ नमः
जानुनि—नं नमः
गुल्फे—मों नमः
अंगुष्ठे—नां नमः
तर्जन्यां—रां नमः
मध्यमायां—मं नमः
अनामिकायां—णां नमः
कनिष्ठायां—यं नमः
हृदये—ॐ नमः
त्वचि—नं नमः
रक्ते—मों नमः
मांसे—नां नमः
मेदसि—रां नमः
अस्थ्नि—यं नमः
मज्जायां—णां नमः
शुक्रे—यं नमः
मस्तके—ॐ नमः
दक्षनेत्रे—मं नमः
वामगण्डे—यं नमः
दक्षस्कन्धे—णां नमः
वामस्कन्धे—यं नमः
दक्षोरौ—ॐ नमः
वामोरौ—नं नमः
दक्षपादे—मां नमः
वामपादे—नां नमः
शंखे—रां नमः
चक्रे—यं नमः
गदायै—णां नमः
पद्मे—यं नमः

आत्मा, अन्तरात्मा, परमात्मा एवं ज्ञानात्मा—ये चार प्रकार की आत्मायें हैं। आत्मा की अष्ट प्रकृति का द्योतन विष्णु के अष्टाक्षर मन्त्र से और इनसे चारो आत्माओं के संयोग का द्योतन विष्णु के द्वादशाक्षर मन्त्र से होता है। इसी द्वादशाक्षर मन्त्र के एक-एक अक्षर के बाद बारह स्वरों में से एक-एक स्वर को जोड़कर धाता आदि द्वादश आदित्यों के साथ केशवादि द्वादश मूर्तियों का न्यास किया जाता है। इसे मूर्तिपञ्जर न्यास कहते हैं। यथा—

ललाटे—ॐ अं केशवाय धात्रे नम:।
कुक्षौ—नं आं नारायणाय अर्यम्णे नम:।
हृदि—मों रं माधवाय मित्राय नम:।
कण्ठकूपे—भं ईं गोविन्दाय वरुणाय नम:।
दक्षपार्श्वे—गं उं विष्णवे अंशवे नम:।
दक्षिणांसे—वं ऊं मधुसूदनाय भगाय नम:।
गलदक्षिणभागे—तें एं त्रिविक्रमाय विवस्वते नम:।
वामपार्श्वे—वां ऐं वामनाय इन्द्राय नम:।
वामांसे—सुं ओं श्रीधराय पूष्णे नम:।
गलवामभागे—दें औं हृषीकेशाय पर्जन्याय नम:।
पृष्ठे—वां अं पद्मनाभाय त्वष्ट्रे नम:।
ककुदि—यं अ: दामोदराय विष्णवे नम:।

किरीट-केयूर-हार-कुण्डलधरशंखचक्रगदाम्भोजहस्तपीताम्बरधरश्रीवत्साङ्कित-वक्ष:स्थल-श्रीभूमिसहितज्योतिर्मयदीप्तकराय सहस्रादित्यतेजसे नम:—इस किरीट मन्त्र से व्यापक न्यास करके ॐ नमो भगवते वासुदेवाय से मस्तक में न्यास करे। गौतमतन्त्र और प्रपञ्चसार के अनुसार द्वादशाक्षर मन्त्र सभी मन्त्रों में श्रेष्ठ है। ब्रह्मरन्ध्र में इसका न्यास करने से न्यासकर्त्ता साक्षात् वासुदेव हो जाता है। यह मन्त्र कल्पवृक्ष के समान है। इसका ध्यान निम्नवत् करे—

उद्यत्कोटिदिवाकराभमनिशं शंखं गदां पंकजं
चक्रं विभ्रतमिन्दिरावसुमतीसंशोभिपार्श्वद्वयम्।
कोटीरांगदहारकुंडलधरं पीताम्बरं कौस्तुभो—
द्दीप्तं विश्वधरं स्ववक्षसि लसत् श्रीवत्सचिह्नं भजे।।

आभा करोड़ों उदीयमान सूर्यों के समान है। हाथों में शंख, चक्र, गदा और पद्म है। एक ओर लक्ष्मी और एक ओर वसुमती सुशोभित हैं। इन्द्रनीलमणि, अंगद, हार, कुण्डल से अलंकृत हैं। पीताम्बर वस्त्र है। कौस्तुभमणि से उज्ज्वल वक्ष पर श्रीवत्स शोभित है। ऐसे विश्वम्भर भगवान् विष्णु का मैं भजन करता हूँ। ध्यान के बाद मानसोपचारों से पूजन करके शंखस्थापन करे।

विष्णुपूजा में अर्घ्यपात्र के सम्बन्ध में गौतमतन्त्र में वर्णन है कि ताम्बे के पात्र विष्णु को बहुत प्रिय हैं। अन्य सभी पात्रों में शंख प्रधान है। मिट्टी का पात्र, सोने का पात्र, चाँदी और पद्मपात्र भी प्रशस्त हैं। भक्तिकल्पद्रुम के अनुसार स्वर्ण, रजत, कांस्य, ताम्र, मिट्टी और पलाशपात्र में विष्णु की नैवेद्य प्रदान करे। पुरश्चरणचन्द्रिका का भी यही मत है।

सामान्य पूजा पद्धति के अनुसार सर्वसाधारण पीठपूजा के बाद विमलादि पीठशक्तियों सहित पीठपूजा करके पुन: ध्यान करे। तब मूल मन्त्र से कल्पित मूर्ति का आवाहनादि से लेकर पञ्च पुष्पाञ्जलि तक के कर्मों को करके आवरण-पूजन करे।

षट्कोण में—आग्नेय कोण में ॐ क्रुद्धोल्काय हृदयाय नम:। नैर्ऋत्य कोण में ॐ महोल्काय शिरसे स्वाहा। वायव्य कोण में ॐ वीरोल्काय शिखायै वषट्। ईशान में अत्युल्काय कवचाय हुं। दिशाओं में सहस्रोल्काय अस्त्राय फट्।

केशरों में पूर्वादि क्रम से—ॐ नम:, नं नम:, मों नम:, नां नम:, रां नम:, यं नम:, णां नम:, यं नम: से पूजन करे।

पूर्व-दक्षिण-पश्चिम-उत्तर वाले दलों में क्रमश: ॐ वासुदेवाय नम:, ॐ सङ्कर्षणाय नम:, ॐ प्रद्युम्नाय नम:, ॐ अनिरुद्धाय नम: से पूजन करे। आग्नेय, नैर्ऋत्य, वायव्य और ईशान वाले दलों में ॐ शान्त्यै नम:, ॐ श्रियै नम:, ॐ सरस्वत्यै नम:, ॐ रत्यै नम: से पूजा करे।

इसके बाद अष्टदलों के अग्रभाग में पूर्वादि क्रम से आयुधों का पूजन करे। ॐ चक्राय नम:। ॐ शंखाय नम:। ॐ गदायै नम:। ॐ पद्माय नम:। ॐ कौस्तुभाय नम:। ॐ मूसलाय नम:। ॐ खड्गाय नम:। ॐ वनमालायै नम:।

अष्टदल के बाहर भूपुर के अन्दर अग्रभाग में ॐ गरुडाय नम:, दाहिनी ओर ॐ शंखनिधये नम:, बाँईं ओर ॐ पद्मनिधये नम:, पश्चिम में ॐ ध्वजाय नम:, अग्निकोण में ॐ विघ्नाय नम:, नैर्ऋत्य कोण में ॐ आर्यायै नम:, वायव्य में ॐ दुर्गायै नम:, ईशान में ॐ सेनान्यै नम: से पूजा करे। भूपुर में इन्द्रादि दश लोकपालों और वज्रादि आयुधों का पूजन करे। तब धूप-दीप और नैवेद्य अर्पण करे।

नैवेद्य को लेकर देवता को मूल मन्त्र से पाद्य, अर्घ्य और आचमनीय प्रदान करे। 'फट्' से नैवेद्य का प्रोक्षण करे और चक्रमुद्रा से उसकर संरक्षण करे। यं मन्त्र से उसके दोषों का संशोधन करके रं मन्त्र से उन सब दोषों को भस्म करे। तब वं मन्त्र से नैवेद्य को बाँयें हाथ से निकालते हुए सुधारस से पूर्ण और अमृतमय समझते हुए उसके ऊपर मूलमन्त्र का आठ बार जप करे। धेनुमुद्रा से अमृतीकरण करके गन्ध-पुष्प से नैवेद्य का पूजन करे। मूल मन्त्र से देवता को पाँच पुष्पाञ्जलियाँ देकर हाथ जोड़कर प्रार्थना करे। देवता के मुख से तेज निकल रहा है—ऐसी भावना करके ॐ नमो नारायणाय स्वाहा

से जल छोड़कर मूल मन्त्र का उच्चारण करते हुए एतन्नैवेद्यं ॐ नमो नारायणाय नमः से नैवेद्य को निवेदित करते हुए उसे उठाकर 'ॐ निवेदयामि भवते जुषाणेदं हविर्हरि' से समर्पित करे।

इसके बाद 'विष्णुदेवताय एतज्जलं अमृतोपस्तरणमसि' से जल देकर बाँयें हाथ में ग्रासमुद्रा और दाँयें हाथ से प्राणादि पाँच मुद्रायें दिखावे। प्राणादि मुद्रायें इस प्रकार की हैं—

ॐ प्राणाय स्वाहा—अंगूठे से कनिष्ठा-अनामा का स्पर्श करे।
ॐ अपानाय स्वाहा—अंगूठे से तर्जनी-मध्यमा को स्पर्श करे।
ॐ व्यानाय स्वाहा—अंगूठे से मध्यमा-अनामा का स्पर्श करे।
ॐ उदानाय स्वाहा—अंगूठे से तर्जनी-मध्यमा-अनामा का स्पर्श करे।
ॐ समानाय स्वाहा—अंगूठे से सभी अंगुलियों का स्पर्श करे।

इसके बाद अंगूठे से अनामिकाग्र का स्पर्श करते हुए 'ठ्रौं नमः पराय अन्तरात्मने अनिरुद्धाय नैवेद्यं कल्पयामि' से नैवेद्य मुद्रा दिखाकर 'ॐ नमो नारायणाय तर्पयामि' से चार बार तर्पण करे। 'ॐ नमो एज्जलं अमृतपिधानमसि स्वाहा' से जल प्रदान करके पूर्व प्रसृत तेज को देवता के मुख में स्थापित करे। तत्पश्चात् आचमनीय प्रदान करे। सभी प्रकार के विष्णुपूजन में इसी प्रकार नैवेद्य निवेदित करे।

सामान्य पूजा पद्धति-क्रम के अनुसार पूजा करके विसर्जनान्त सभी कार्य करे।

इस मन्त्र का पुरश्चरण सोलह लाख जप से होता है। जप के दशांश एक लाख साठ हजार हवन घी-मधु-शक्करमिश्रित कमल के फूलों से करे।

श्रीराममन्त्राः

अनन्तोऽग्न्यासनः सेन्दुर्बीजं रामाय हृन्मनुः ।
षडक्षरोऽयमादिष्टो भजतां कामदो मणिः ॥

अस्य पूजा—प्रातःकृत्यादिवैष्णवोक्तपीठन्यासान्तं विधाय ऋष्यादिन्यासं कुर्यात्। यथा—शिरसि ब्रह्मणे ऋषये नमः, मुखे गायत्रीच्छन्दसे नमः, हृदि श्रीरामाय देवतायै नमः।

ततः कराङ्गन्यासौ—रां अंगुष्ठाभ्यां नमः, रीं तर्जनीभ्यां स्वाहा, रूं मध्यमाभ्यां वषट्, रैं अनामिकाभ्यां हुं, रौं कनिष्ठाभ्यां वौषट्, रः करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्। एवं हृदयादिषु रां हृदयाय नमः इत्यादि।

ततः मन्त्रन्यासः—ब्रह्मरन्ध्रे रां नमः, भ्रुवोर्मध्ये रां नमः, हृदि मां नमः, नाभौ यं नमः, लिङ्गे नं नमः, पादयोः मं नमः। ततो मूर्त्तिपञ्जरन्यासादिकं पूर्वोक्तं

विधाय ध्यायेत्—

कालाम्भोधरकान्तिकान्तमनिशं वीरासनाध्यासिनं
मुद्रां ज्ञानमयीं दधानमपरं हस्ताम्बुजं जानुनि ।
सीतां पार्श्वगतां सरोरुहकरां विद्युन्निभां राघवं
पश्यन्तं मुकुटाङ्गदादिविविधाकल्पोज्ज्वलाङ्गं भजे ।।

एवं ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्य शङ्खस्थापनं कुर्यात्। ततः पीठपूजां विधाय वैष्णवोक्तपीठशक्तीः पीठमनुञ्च सम्पूज्य, पुनर्ध्यात्वा आवाहनादिपञ्चपुष्पाञ्जलि-दानपर्यन्तं विधायावरणपूजामारभेत्।

देववामपार्श्वे श्रीं सीतायै नमः। अग्रे ॐ शार्ङ्गाय नमः, वामदक्षिणपार्श्वयोः ॐ परेभ्यो नमः, ॐ चापाय नमः। तद्बहिः केशरेषु अग्न्यादिकोणेषु मध्ये दिक्षु च रां हृदयाय नमः इत्यादिना षडङ्गानि पूजयेत्।

ततो दलेषु पूर्वादिदिक्षु ॐ हनूमते नमः, एवं सुग्रीवाय भरताय विभीषणाय लक्ष्मणाय अङ्गदाय शत्रुघ्नाय जाम्बवते। दलाग्रेषु ॐ सृष्टये नमः, एवं जयन्ताय विजयाय सुराष्ट्राय राष्ट्रवर्द्धनाय अकोपाय धर्मपालाय स्वमन्त्राय।

ततः इन्द्रादीन् वज्रादींश्च पूजयेत्। ततो धूपादिविसर्जनान्तं कर्म समापयेत्। अस्य पुरश्चरणं षड्लक्षजपः। तथा च—

ऋतुलक्षं जपेन्मन्त्रं दशांशं कमलैः शुभैः ।
जुहुयादर्चिते वह्नौ ब्राह्मणान् भोजयेत्ततः ।।

अयं मन्त्रः षड्विधः। तथा च—

स्वकामशक्तिवाक्लक्ष्मीताराद्यः पञ्चवर्णकः ।
षडक्षरः षड्विधः स्याच्चतुर्वर्गफलप्रदः ।।
ब्रह्मा सम्मोहनः शक्तिर्दक्षिणामूर्त्तिरव्ययः ।
अगस्त्यः श्रीशिवः प्रोक्तो मुनयोऽत्र क्रमादिमे ।।
अथवा कामबीजादेर्विश्वामित्रमुनिर्मनोः ।
छन्दो गायत्रीसंज्ञञ्च श्रीरामश्चैव देवता ।
ध्यानपूजादिकं सर्वं पूर्ववच्च समाचरेत् ।।

श्रीराममन्त्र—अग्नि = र , अनन्त = आ, इन्द्र = ं इन तीनों के संयोग से बने बीज 'रां' के बाद रामाय नमः पद जोड़ने से 'रां रामाय नमः' यह षडक्षर मन्त्र बनता है। यह मन्त्र साधकों के लिये सभी कामनाओं को पूर्ण करने वाले मणि अर्थात् चिन्तामणि के समान है।

प्रात:कृत्यादि करके विष्णुमन्त्रोक्त पीठन्यास करके ऋष्यादि न्यास करे। ब्रह्मणे ऋषये नम: शिरसि। गायत्री छन्दसे नम: मुखे। श्रीरामाय देवतायै नम: हृदि।

करन्यास—रां अंगुष्ठाभ्यां नम:। रीं तर्जनीभ्यां स्वाहा। रूँ मध्यमाभ्यां वषट्। रैं अनामिकाभ्यां हुं। रौं कनिष्ठाभ्यां वौषट्। र: करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्।

अंगन्यास—रां हृदयाय नम:। रीं शिरसे स्वाहा। रूं शिखायै वषट्। रैं कवचाय हुं। रौं नेत्रत्रयाय वौषट्। र: अस्त्राय फट्।

मन्त्रवर्णन्यास—रां नम: ब्रह्मरन्ध्रे। रां नम: भ्रुवोर्मध्ये। मां नम: हृदि। यं नम: नाभौ। नं नम: लिङ्गे। मं नम: पादयो:।

विष्णुमन्त्रोक्त मूर्तिपञ्जरादि न्यास करके निम्नवत् ध्यान करे—

कालाम्भोधरकान्तिकान्तमनिशं वीरासनाध्यासिनं
मुद्राज्ञानमयीं दधानमपरं हस्ताम्बुजं जानुनि।
सीतां पार्श्वगतां सरोरुहकरां विद्युन्निभां राघवं
पश्यन्तं मुकुटाङ्गदादिविविधाकल्पोज्ज्वलाङ्गं भजे।।

काले मेघ के समान कृष्ण वर्ण, अत्यन्त कोमल अंग, वीरासन में आसीन, एक हाथ में ज्ञानमुद्रा और दूसरा करकमल घुटने पर है। बगल में पद्महस्ता विद्युत् जैसी आभावाली सीता जी हैं। मुकुट, अंगद आदि नाना रत्नाभूषणों से विभूषित हैं। सीता जी को देखने वाले राघव भगवान् श्रीरामचन्द्र का मैं भजन करता हूँ।

इसके बाद मानसोपचारों से पूजन करके शंखस्थापन करे। तब पीठपूजा करके विष्णुमन्त्रोक्त पीठशक्तियों और पीठमन्त्र से पूजा करे। पुन: ध्यान-आवाहनादि से पञ्च पुष्पाञ्जलि तक के कर्मों को करके आवरण-पूजन करे।

यन्त्रमध्य बिन्दु देवता स्थान की बाँईं ओर श्रीसीतायै नम: से, अग्रभाग में शार्ङ्गाय नम: से, वाम-दक्षिण पार्श्वों में क्रमश: ॐ परेभ्यो नम:, ॐ चापाय नम: से पूजा करे। तब केशरों में, अग्न्यादि कोणों में, मध्य में और दिशाओं में षडंग पूजन करे। रां हृदयाय नम:। रीं शिरसे स्वाहा। रूं शिखायै वषट्। रैं कवचाय हुं। रौं नेत्रत्रयाय वौषट्। र: अस्त्राय फट्।

अष्टदल पद्म के दलों में पूर्वादि क्रम से इनका पूजन करे—ॐ हनूमते नम:। ॐ सुग्रीवाय नम:। ॐ भरताय नम:। ॐ विभीषणाय नम:। ॐ लक्ष्मणाय नम:। ॐ अंगदाय नम:। ॐ शत्रुघ्नाय नम:। ॐ जाम्बवते नम:।

दलों के अग्रभाग में इनका पूजन करे—ॐ सृष्ट्यै नम:। ॐ जयन्ताय नम:। ॐ विजयाय नम:। ॐ सुराष्ट्राय नम:। ॐ राष्ट्रवर्द्धनाय नम:। ॐ अकोपाय नम:। ॐ धर्मपालाय नम:। ॐ सुमन्त्राय नम:।

भूपुर में इन्द्रादि दश लोकपालों और उनके वज्रादि दश आयुधों का पूजन करे। इसके बाद धूपादि से विसर्जनान्त तक के कर्म सम्पन्न करके पूजा समाप्त करे।

इस मन्त्र का पुरश्चरण छ: लाख जप और साठ हजार हवन कमलों से करने पर होता है।

राम का षडक्षर मन्त्र छ: प्रकार का है; जैसे—१. रां रामाय नम:, २. क्लीं रामाय नम:, ३. ह्रीं रामाय नम:, ४. ऐं रामाय नम:, ५. श्रीं रामाय नम: और ६. ॐ रामाय नम:। इस सभी मन्त्रों के ऋषि अलग-अलग हैं। इन छहों मन्त्रों के ऋषि क्रमश: ब्रह्मा, सम्मोहन, शक्ति, दक्षिणामूर्ति, अगस्त्य और श्रीशिव हैं। एक मत से 'क्लीं रामाय नम:' मन्त्र के ऋषि विश्वामित्र, छन्द गायत्री और देवता श्रीरामचन्द्र हैं। इन सभी मन्त्रों का ध्यान-पूजादि पूर्ववत् है।

मन्त्रान्तरम्

जानकीवल्लभं ङेऽन्तं वह्निजाया हुमादिकम् ।
दशाक्षरोऽयं मन्त्रः स्याद्वसिष्ठः स्यादृषिर्विराट् ॥
छन्दश्च देवता रामः सीतापाणिपरिग्रहः ।
आद्यं बीजं द्विठः शक्तिः कामेनाङ्गक्रिया मता ॥
शिरोललाटभ्रूमध्यतालुकण्ठेषु हृद्यपि ।
नाभ्यूरुजानुपादेषु दशार्णान्विन्यसेन्मनोः ॥

ततो ध्यानम्—

अयोध्यानगरे रम्ये रत्नसौन्दर्यमण्डपे ।
मन्दारपुष्पैराबद्धवितानतोरणान्विते ॥
सिंहासनसमारूढपुष्पकोपरि राघवम् ।
रक्षोभिर्हरिभिर्देवैर्दिव्ययानगतैः शुभैः ॥
संस्तूयमानं मुनिभिः सर्वज्ञैः परिशोभितम् ।
सीतालंकृतवामाङ्गं लक्ष्मणेनोपसेवितम् ॥
श्यामं प्रसन्नवदनं सर्वाभरणभूषितम् ।
ध्यायन्नेवं जपेन्मन्त्रं वर्णलक्षमनन्यधीः ।
दशांशं जुहुयाद्बिल्वपुष्पैर्मधुरसंयुतैः ॥

अन्यत्सर्वं पूर्ववत्।

अन्य श्रीरामचन्द्रमन्त्र—हुं जानकीवल्लभाय स्वाहा। यह दशाक्षर मन्त्र है। इसका यन्त्र पूर्ववत् है।

ऋष्यादि न्यास—वशिष्ठऋषये नम:। विराट् छन्दसे नम:। रामचन्द्रदेवतायै नम:। हुं

बीजाय नम:। स्वाहा शक्तये नम:।

करन्यास—क्लीं अंगुष्ठाभ्यां नम:। क्लीं तर्जनीभ्यां स्वाहा। क्लीं मध्यमाभ्यां वषट्। क्लीं अनामिकाभ्यां हुं। क्लीं कनिष्ठाभ्यां वौषट्। क्लीं करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्।

हृदयादि षडंग न्यास—क्लीं हृदयाय नम:। क्लीं शिरसे स्वाहा। क्लीं शिखायै वषट्। क्लीं कवचाय हुं। क्लीं नेत्रत्रयाय वौषट्। क्लीं अस्त्राय फट्।

मन्त्रवर्णन्यास—मस्तके हुं नम:। ललाटे जां नम:। भ्रूमध्ये नं नम:। तालुनि कीं नम:। कण्ठे वं नम:। हृदि ल्लं नम:। नाभौ भां नम:। ऊरौ यं नम:। जानुनि स्वां नम:। पादयो: हां नम:।

न्यासोपरान्त निम्नवत् ध्यान करे—

अयोध्यानगरे रम्ये रत्नसौन्दर्यमण्डले।
मन्दारपुष्पैराबद्धवितानतोरणान्विते ।।
सिंहासनसमारूढपुष्पकोपरि राघवम्।
रक्षोभिर्हरिभिर्देवैर्दिव्ययानगतै: शुभै:।।
संस्तूयमानं मुनिभि: सर्वज्ञै: परिशोभितम्।
सीतालंकृतवामाङ्गं लक्ष्मणेनोपसेवितम्।
श्यामं प्रसन्नवदनं सर्वाभरणभूषितम्।।

मनोहर अयोध्या नगर में, रत्नजटित सुन्दर मण्डप में, जो मन्दारपुष्पों से सुशोभित तथा चन्द्रातप एवं तोरणादि से संयुक्त है, सिंहासन पर बिछे हुए पुष्पों के ऊपर श्री रामचन्द्र विराजमान हैं। दिव्य यानों पर सवार राक्षस-वानर-देवगण तथा सर्वज्ञ मुनि उनकी स्तुति कर रहे हैं। उनकी बाँईं ओर सीता जी सुशोभित हैं। वे लक्ष्मण द्वारा निरन्तर सेवित हैं। उनका मुख प्रसन्न है। वर्ण श्याम है। सभी प्रकार के आभूषणों से अलंकृत भगवान् श्रीराम का मैं ध्यान करता हूँ।

पूर्वोक्त विधि से पूजन करके मन्त्र का जप करे। इसका पुरश्चरण चार लाख जप और चालीस हजार हवन त्रिमधुराक्त बेलपत्रों से या केवल बेलपत्रों से करने पर शास्त्रसम्मत होता है।

मन्त्रान्तरम्

वह्निर्नारायणेनाढ्यो जठर: केवलस्तथा ।
द्व्यक्षरो मन्त्रराजोऽयं सर्वाभीष्टफलप्रद: ।।
श्रीमायामन्मथैकैकबीजाद्यन्तगतो मनु: ।
चतुर्वर्ण: स एव स्यात्षड्वर्णो वाञ्छितप्रद: ।।
स्वाहान्तो हुंफडन्तो वा नमोऽन्तो वा भवेन्मनु: ।

तारमायारमानङ्गवाक्स्वबीजैस्तु षड्विधः ।
त्र्यक्षरो मन्त्रराजः स्यात्सर्वाभीष्टफलप्रदः ॥
द्व्यक्षरश्चन्द्रभद्रान्तो मन्त्रोऽयं चतुरक्षरः ।
रामाय हृन्मनुः प्रोक्तो मन्त्रः पञ्चाक्षरः परः ॥
पञ्चाशन्मातृकावर्णप्रत्येकपूर्वको मनुः ।
लक्ष्मीवाङ्मन्मथादिश्च तारादिः स्यादनेकधा ॥

तेन अं रामाय नमः इत्यादि षडक्षरः।

वह्निस्थं शयनं विष्णोरर्द्धचन्द्रविभूषितम् ।
एकाक्षरो मनुः प्रोक्तो मन्त्रराजः सुरद्रुमः ।
ब्रह्मा ऋषिः स्यादगायत्रीच्छन्दो रामश्च देवता ॥

एकाक्षरे तु द्वादशलक्षजपः पुरश्चरणम्। तथा च—'भानुलक्षं जपेन्मन्त्रं' इति वचनात्। अन्येषां षड्लक्षजप इति विशेषः। एतेषां ध्यानपूजादिकं प्रागुक्तषडक्षरवत्।

अन्य श्रीरामचन्द्र मन्त्र—'वह्निर्नारायणेनाढ्यः' आदि श्लोक का उद्धार करने पर जो मन्त्र बनता है, वह 'राम'—इन दो अक्षरों का है। श्रीरामचन्द्र के मन्त्रों में यह प्रधान है। यह साधक को अभीष्ट फल प्रदान करता है। इस दो अक्षरों के मन्त्र 'राम' के आदि और अन्त में 'श्रीं ह्रीं क्लीं' को अलग-अलग लगाने से चार अक्षर के मन्त्र बनते हैं। जैसे—श्रीं राम श्रीं, ह्रीं राम ह्रीं, क्लीं राम क्लीं। ये चतुरक्षर मन्त्र साधक को धर्म, अर्थ, काम, मोक्षरूप चतुर्वर्ग का फल प्रदान करते हैं।

इन चतुरक्षर मन्त्रों के अन्त में 'स्वाहा', 'हुं फट्' या 'नमः' लगाने से ये छः अक्षरों के मन्त्र बन जाते हैं। जैसे—श्रीं राम श्रीं स्वाहा। ह्रीं राम ह्रीं हुं फट्। क्लीं राम क्लीं नमः। ये षडक्षर मन्त्र साधक को वाञ्छित फल प्रदान करते हैं।

'राम' के आदि में ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं या रां में से एक-एक लगाने से छः प्रकार के त्र्यक्षर मन्त्र बनते हैं। जैसे—ॐ राम, ह्रीं राम, श्रीं राम, क्लीं राम, ऐं राम, रां राम। ये सभी छः त्र्यक्षर मन्त्र साधक के सभी अभीष्ट को पूर्ण करते हैं।

राम के परे अर्थात् बाद में चन्द्र और भद्र लगाने से रामचन्द्र और रामभद्र—दो चतुक्षर मन्त्र बनते हैं। 'रामाय नमः' अन्य पञ्चाक्षर मन्त्र बनता है। श्रीं रामाय नमः, ऐं रामाय नमः, क्लीं रामाय नमः, ॐ रामाय नमः—कुल चार षडक्षर मन्त्र बनते हैं। इसी प्रकार ५० मातृका वर्णों में से एक-एक को 'राम' के आगे लगाने से पचास मन्त्र बनते हैं। जैसे—अं रामाय नमः, आं रामाय नमः इत्यादि। इन सभी मन्त्रों के ध्यान-पूजनादि पूर्वोक्त षडक्षर मन्त्र-पद्धति के अनुसार होते हैं। 'रां' एकाक्षर मन्त्र सभी मन्त्रों में प्रधान

कल्पवृक्ष के समान है। इस एकाक्षर मन्त्र के ऋषि ब्रह्मा, छन्द गायत्री और देवता रामचन्द्र हैं। इस मन्त्र का पुरश्चरण बारह लाख जप से होता है। अन्य मन्त्रों का पुरचरण छः-छः लाख जप से होता है।

श्रीकृष्णमन्त्राः

गोपीजनपदस्यान्ते वल्लभाय द्विठावधिः ।
अयं दशाक्षरो मन्त्रो दृष्टादृष्टफलप्रदः ॥

अयं मन्त्रः कामबीजादिः। राशिनक्षत्रविचारे पुनर्बीजरहितेन विचारः।

बीजपूर्वो जपश्चास्य रहस्यं कथितं मुने ।
लुप्तबीजस्वभावत्वाद्दशाक्षर इहोच्यते ॥

इति गौतमीयात्। तथा च बृहद्गौतमीये—

भोगमोक्षैकनिलयो लुप्तबीजो दशाक्षरः ।
उद्धरेत्तु पृथक्त्वेन कामबीजं महामुने ।
तद्योगात्फलदो मन्त्रो नान्यथा सिद्धये भवेत् ॥

अस्य पूजाप्रयोगः—विष्णुमन्त्रोक्तवैष्णवाचमनं कृत्वा प्रातःकृत्यादितत्त्वन्यासान्तं कर्म विधाय प्राणायामं कुर्यात्। तथा च गौतमीये—

एवं तत्त्वानि विन्यस्य प्राणायामत्रयं चरेत् ।

कामबीजस्यैकवारजपेन दक्षिणनासया वायुं रेचयेत्। पुनः सप्तवारजपेन वामनासया वायुं पूरयेत्। ततो नासापुटौ धृत्वा विंशतिवारजपेन वायुं कुम्भयेत्। पुनर्वामनासया रेचयेत्, दक्षिणेन पूरयेत् उभाभ्यां कुम्भयेत्। पुनर्दक्षिणेन रेचयेद्वामेनापूर्य उभाभ्यां कुम्भयेत्। तथा च—

एकेन रेचयेत्कामबीजेनैव पृथक्पृथक् ।
पूरयेत्सप्तजप्तेन विंशत्या तेन धारयेत् ।
सर्वेषु कृष्णमन्त्रेषु बीजेनानेन वा जपेत् ॥

यद्वा मूलेनैव मन्त्रेण सर्वत्र प्राणायामः। तदुक्तं क्रमदीपिकायाम्—

पवनसंयमनस्त्वमुनाचरेत्यमिह जप्तुमसौ मनुमिच्छति ।

यदि दशाक्षरं जपति तदा दशाक्षरेण चेत्तत्र चाष्टाविंशतिवारं रेचयेत् ।

पूरयेद्वामतस्तद्वद्धारयेत्तत्प्रमाणतः ।
प्राणायामे भवेदेको रेचपूरककुम्भकैः ।
अष्टादशाक्षरेण चेद् द्वादशैवं समाचरेत् ॥

अन्यमनुभिर्वर्णानुरूपमित्युक्तत्वात्। तत्तन्मन्त्रवर्णसंख्याकै रेचकादित्रयं कुर्यात्।

रेचयेन्मारुतं दक्षया दक्षिणः पूरयेद्वामया मध्यमाभ्यां पुनर्धारयेदित्यादि। एतत्तु श्रीकृष्णमन्त्रविषयं, नान्यत्र।

ततः पीठन्यासं विधाय केशरेषु मध्ये च विमलादिपीठमन्वन्तं विन्यस्य ऋष्यादिन्यासं कुर्यात्। तद्यथा—शिरसि नारदऋषये नमः, मुखे विराट्छन्दसे नमः, हृदि श्रीकृष्णाय देवतायै नमः, गुह्ये क्लीं बीजाय नमः, पादयोः स्वाहा शक्तये नमः। मन्त्राधिष्ठातृदेवतायै दुर्गायै नमः इति दुर्गां नमस्कुर्यात्।

ततः प्रणवपुटितं मूलमन्त्रं करयोर्मध्ये पृष्ठे पार्श्वे च त्रिंशो विन्यस्य प्रणवपुटितान् सविन्दून् मूलवर्णान् अंगुलीनां पर्वषु नमोऽन्तेन न्यसेत्।

तद्यथा—दक्षिणांगुष्ठे त्रिषु पर्वसु ॐ गों ॐ नमः। दक्षिणतर्जन्यां ॐ पीं ॐ नमः। दक्षिणमध्यमायां ॐ जं ॐ नमः। दक्षिण अनामिकायां ॐ नं ॐ नमः। दक्षिणकनिष्ठायां ॐ वं ॐ नमः। वामकनिष्ठायां ॐ ल्लं ॐ नमः। वामानामिकायां ॐ भां ॐ नमः। वामामध्यमायां ॐ यं ॐ नमः। वामतर्जन्यां ॐ स्वां ॐ नमः। वामांगुष्ठे ॐ हां ॐ नमः। अयं तु सृष्टिन्यासः। एवं दक्षि-णांगुष्ठपूर्वा वामकनिष्ठान्ता स्थितिः। संहृतिश्च वामांगुष्ठादिदक्षिणांगुष्ठान्ता। पुनः सृष्टिस्थितीति पञ्चधा कुर्यात्। तथा च गौतमीये—

संहृतिर्दोषसङ्घानां हारिणी परिकीर्त्तिता ।
विद्याप्रदश्च सृष्ट्यन्तो वर्णिनां शुद्धचेतसाम् ।
स्थित्यन्तः स्याद्गृहस्थानां त्रयं कामानुरूपतः ॥
सहजानौ वानप्रस्थे स्थित्यन्तं कश्चिदिच्छति ।
संहारान्तो मुनीनाञ्च विरक्तस्य च सर्वशः ॥

अशक्तश्चेदेकमात्रं कुर्यात्। तथा च—

न्यासत्रयं सदा कुर्यादशक्तावेक एव हि ।

इति गौतमीयात्। ततः स्थितिक्रमेणांगुलीषु दशाक्षराणि विन्यसेत्। तद्यथा—प्रणवपुटितं सर्वत्र। गों नमो दक्षांगुष्ठे। पीं नमस्तर्जन्याम्। जं नमो मध्यमायाम्। नं नमोऽनामिकायाम्। वं नमः कनिष्ठायाम्। ल्लं नमो वामाङ्गुष्ठे। भां नमो वामतर्जन्याम्। यं नमो वाममध्यमायाम्। स्वां नमो वामानामिकायाम्। हां नमो वामकनिष्ठायाम्। ततः करयोरङ्गुलीषु पञ्चाङ्गन्यासः।

यथा—आचक्राय स्वाहा अंगुष्ठाभ्यां नमः। विचक्राय स्वाहा तर्जनीभ्यां स्वाहा। सुचक्राय स्वाहा मध्यमाभ्यां वषट्। त्रैलोक्यरक्षणचक्राय स्वाहा अनामिकाभ्यां हुं। असुरान्तकचक्राय स्वाहा कनिष्ठाभ्यां फट्।

ततो मूलमन्त्रपुटितान् सविन्दून् मातृकावर्णान् मातृकास्थानेषु न्यसेत्। ततः प्रणवपुटितं मूलमन्त्रं आकेशादापादम् आपादादाकेशं क्रमात्त्रिवारं विन्यस्य संहारसृष्टिभेदेन दशतत्त्वानि विन्यसेत्। तथा च क्रमदीपिकायाम्—

संहृतावनुगतो मनुवर्यः सृष्टिवर्त्मनि भवेत् प्रतियातः ।
उद्धृतिः खलु पुरोक्तवदेषां न्यासकर्म कथयाम्यधुनेति ॥

तद्यथा—पादयोः गों नमः पराय पृथिवीतत्त्वात्मने नमः। लिङ्गे पीं नमः पराय जलतत्त्वात्मने नमः। हृदि जं नमः पराय तेजस्तत्त्वात्मने नमः। मुखे नं नमः पराय वायुतत्त्वात्मने नमः। शिरसि वं नमः परायाकाशतत्त्वात्मने नमः। ल्लं नमः परायाहङ्कारतत्त्वात्मने नमः। भां नमः पराय महत्तत्त्वात्मने नमः। एतद्द्वयं हृदि न्यस्यमिति। यं नमः पराय प्रकृतितत्त्वात्मने नमः। स्वां नमः पराय पुरुषतत्त्वात्मने नमः। हां नमः पराय परतत्त्वात्मने नमः। एतत्त्रितयं सर्वगात्रे। इति संहारन्यासः।

अथ सृष्टिन्यासः—हां नमः पराय परतत्त्वात्मने नमः। स्वां नमः पराय पुरुषतत्त्वात्मने नमः। यं नम पराय प्रकृतितत्त्वात्मने नमः। एतत्त्रितयं सर्वगात्रे। हृदि भां नमः पराय महत्तत्त्वात्मने नमः। ल्लं नमः परायाहङ्कारतत्त्वात्मने नमः। शिरसि वं नमः परायाकाशतत्त्वात्मने नमः। मुखे नं नमः पराय वायुतत्त्वात्मने नमः। हृदि जं नमः पराय तेजस्तत्त्वात्मने नमः। लिङ्गे पीं नमः पराय जलतत्त्वात्मने नमः। पादयोः गों नमः पराय पृथिवीतत्त्वात्मने नमः। इति सृष्टिन्यासः।

श्रीकृष्णमन्त्र—गोपीजनवल्लभाय स्वाहा—यह श्रीकृष्ण का दशाक्षर मन्त्र है। इससे दृष्टादृष्ट सभी प्रकार के फल प्राप्त होते हैं। ऐहिक और पारलौकिक दोनों ही शुभ फल प्राप्त होते हैं। इस मन्त्र के पहले क्लीं बीज लगाकर 'क्लीं गोपीजनवल्लभाय स्वाहा' से जप-पूजा आदि करे। राशि-नक्षत्रादि चक्र के विचार में क्लीं को छोड़कर विचार करे।

इसके विषय में बृहत् गौतमीय तन्त्र में वर्णन है कि भोग-मोक्षप्रद यह दशाक्षर मन्त्र लुप्तबीज है। अत: कामबीज क्लीं लगाकर जप आदि करना चाहिये। यह मन्त्र कामबीज से युक्त होकर ही फल प्रदान करता है; अन्यथा फल प्रदान नहीं करता।

पूजाविधि—विष्णुमन्त्रोक्त वैष्णवार्चन और प्रात:कृत्यादि से तत्त्वन्यासान्त तक के कर्मों को करके प्राणायाम करे। जैसे—क्लीं का एक बार जप करते हुए दाँईं नासा से पूरक करे, बीस बार जप करते हुए कुम्भक करे और एक बार जप करते हुए वामनासा से रेचक करे। फिर सात बार जप करते हुए बाँईं नासा में पूरक करे। बीस बार जपते हुए कुम्भक करे और दाँयीं नासा से एक बार जपते हुए रेचक करे। फिर दाँईं नासा से रेचक, बीस जप से कुम्भक एवं एक-एक जप से बाँईं नासा से रेचक करे। सभी प्रकार के कृष्णमन्त्रों में क्लीं बीज या मूल मन्त्र से प्राणायाम करे।

यन्त्र—इसका पूजनयन्त्र निम्न प्रकार का है—
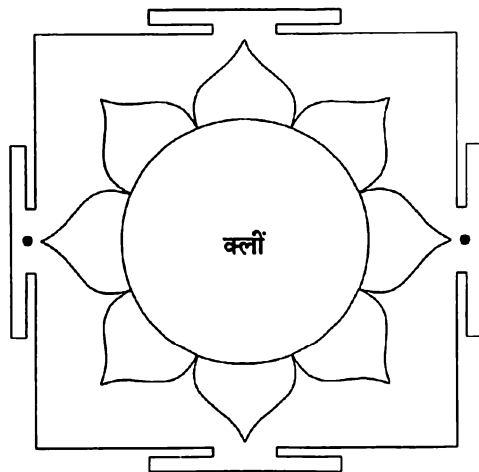
क्रमदीपिका में वर्णन है कि जिस मन्त्र का जप करना हो, उसी मन्त्र से प्राणायाम करना चाहिये। यदि दशाक्षर मन्त्र का जप करना हो तो दशाक्षर मन्त्र से ही प्राणायाम करे; किन्तु पूरक, कुम्भक और रेचक अट्ठाईस बार करना पड़ता है। अट्ठारह अक्षर वाले मन्त्र के जप में बारह बार पूरक, कुम्भक और रेचक करना चाहिये। एक-एक पूरक, कुम्भक और रेचक से एक प्राणायाम होता है। इसी प्रकार तीन प्राणायाम करना आवश्यक है। अन्य किसी मन्त्र के जप में मन्त्रवर्ण की संख्या के अनुसार पूरक, कुम्भक और रेचक करना होता है; लेकिन कृष्णमन्त्र का नियम है कि दाँयें से पूरक, सुषुम्ना से कुम्भक और बाँयें से रेचक करे। अन्य देवता के सम्बन्ध में यह नियम नहीं है।

इसके बाद पीठन्यास करके केशर और मध्य में विमलादि पीठशक्तियों का न्यास करे। तब ऋष्यादि न्यास करे।

ऋष्यादि न्यास—नारदऋषये नम: शिरसि। विराट् छन्दसे नम: मुखे। श्रीकृष्णदेवतायै नम: हृदि। क्लीं बीजाय नम: गुह्ये। स्वाहा शक्तये नम: पादयो:।

मन्त्राधिष्ठात्री देवतायै दुर्गायै नम: से दुर्गा को नमस्कार करके ॐ गोपीजनवल्लभाय ॐ से दोनों हाथों के मध्य, पृष्ठ और पार्श्वों में तीन-तीन बार न्यास करे। तब सृष्टि, स्थिति और संहारन्यास करे। ये तीनों प्रकार के न्यास मन्त्रवर्णों से होते हैं, जैसे—

सृष्टिन्यास—

दक्षांगुष्ठे—ॐ गों ॐ नम: दक्षमध्यमायां—ॐ जं ॐ नम:

दक्षतर्जन्यां—ॐ पीं ॐ नम: दक्षानामायां—ॐ नं ॐ नम:

दक्षकनिष्ठायां—ॐ वं ॐ नम: वाममध्यमायां—ॐ यं ॐ नम:
वामकनिष्ठायां—ॐ ल्लं ॐ नम: वामतर्जन्यां—ॐ स्वां ॐ नम:
वामानामायां—ॐ भां ॐ नम: वामांगुष्ठे—ॐ हां ॐ नम:।

उक्त सृष्टिन्यास को दक्षांगुष्ठ से आरम्भ करके वामांगुष्ठ से होते हुए कनिष्ठा तक करने से स्थितिन्यास होता है। जैसे—

दक्षाङ्गुष्ठे—ॐ गों ॐ नम: वामाङ्गुष्ठे—ॐ ल्लं ॐ नम:
दक्षतर्जन्यां—ॐ पीं ॐ नम: वामतर्जन्यां—ॐ भां ॐ नम:
दक्षमध्यमायां—ॐ जं ॐ नम: वाममध्यमायां—ॐ यं ॐ नम:
दक्षानामायां—ॐ नं ॐ नम: वामानामायां—ॐ स्वां ॐ नम:
दक्षकनिष्ठायां—ॐ वं ॐ नम: वामकनिष्ठायां—ॐ हां ॐ नम: ।

संहारन्यास—वामांगुष्ठ से प्रारम्भ करके दक्षकनिष्ठा से होते हुए अंगुष्ठ तक न्यास करने से संहारन्यास होता है। जैसे—

वामांगुष्ठे—ॐ हां ॐ नम: दक्षकनिष्ठायां—ॐ वं ॐ नम:
वामानामायां—ॐ स्वां ॐ नम: दक्षानामायां—ॐ नं ॐ नम:
वाममध्यमायां—ॐ यं ॐ नम: दक्षमध्यमायां—ॐ जं ॐ नम:
वामतर्जन्यां—ॐ भां ॐ नम: दक्षतर्जन्यां—ॐ पीं ॐ नम:
वामकनिष्ठायां—ॐ ल्लं ॐ नम: दक्षांगुष्ठे—ॐ गों ॐ नम:।

इस प्रकार सृष्टि, स्थिति और संहारन्यास करके पुन: सृष्टि और स्थितिन्यास करे। कुल पाँच न्यास करना आवश्यक होता है।

गौतमीय तन्त्र में लिखा है कि संहृति न्यास से सभी दोषों से मुक्ति मिलती है। सृष्टि और स्थितिन्यास से ज्ञान होता है। उक्त पाँच न्यासों में से ब्रह्मचारी के लिये सृष्टि, स्थिति, संहृति और स्थिति—चार न्यास करना आवश्यक है। गृहस्थ और सस्त्रीक वानप्रस्थी के लिये सृष्टि, स्थिति, संहृति, सृष्टि, स्थिति—पाँचो न्यास करना जरूरी है। मुनिगण और वैरागी के लिए सृष्टिद्ध स्थिति और संहृति—तीनों न्यास विहित हैं, किन्तु उक्त तीनों न्यासों को कामना के अनुसार करना चाहिये। पञ्चविध न्यास करने में असमर्थ होने पर एक ही न्यास से सिद्धि मिलती है अर्थात् तीनों न्यास अवश्य करणीय हैं। तब निम्नवत् दशाक्षरन्यास करे—

गों नमो दक्षांगुष्ठे। ल्लं नमो वामांगुष्ठे।
पीं नमो तर्जन्याम्। भां नमो वामतर्जन्याम्।
जं नमो मध्यमायाम्। यं नमो वाममध्यमायाम्।
नं नमो अनामिकायाम्। स्वां नमो वामानामायाम्।
वं नमो कनिष्ठायाम्। हां नमो वामकनिष्ठायाम्।

इसके बाद पञ्चाङ्गन्यास करे; जैसे—

आचक्राय स्वाहा अंगुष्ठाभ्यां नम:।

विचक्राय स्वाहा तर्जनीभ्यां स्वाहा।

सुचक्राय स्वाहा मध्यमाभ्यां वषट्।

त्रैलोक्यरक्षणचक्राय स्वाहा अनामिकाभ्यां हुं।

असुरान्तकचक्राय स्वाहा कनिष्ठाभ्यां फट्।

बिन्दुयुक्त अं आं इं ईं..........लं-क्षं प्रत्येक पचास मातृकावर्ण के साथ आदि और अन्त में मूल मन्त्र जोड़कर मातृकोक्त न्यासस्थानों में न्यास करे; जैसे—

ब्रह्मरन्ध्रे—गोपीजनवल्लभाय स्वाहा अं गोपीजनवल्लभाय स्वाहा।

मुखे—गोपीजनवल्लभाय स्वाहा आं गोपीजनवल्लभाय स्वाहा।

दक्षनेत्रे—गोपीजनवल्लभाय स्वाहा इं गोपीजनवल्लभाय स्वाहा।

वामनेत्रे—गोपीजनवल्लभाय स्वाहा ईं गोपीजनवल्लभाय स्वाहा।

दक्षकर्णे—गोपीजनवल्लभाय स्वाहा उं गोपीजनवल्लभाय स्वाहा।

इसी प्रकार सभी मातृकाओं से करे।

केश से पैर तक और पैर से केश तक 'ॐ गोपीजनवल्लभाय स्वाहा' से तीन बार व्यापक न्यास करे। तब संहार-सृष्टिभेद से दश तत्त्वन्यास करे—

संहारन्यास—

पादयो:—गों नम: पराय पृथिवीतत्त्वात्मने नम:।

लिंगे—पीं नम: पराय जलतत्त्वात्मने नम:।

हृदि—जं नम: पराय वायुतत्त्वात्मने नम:।

मुखे—नं नम: पराय तेजस्तत्त्वात्मने नम:।

शिरसि—वं नम: पराय आकाशतत्त्वात्मने नम:।

हृदि—ल्लं नम: पराय अहंकारतत्त्वात्मने नम:।

हृदि—मां नम: पराय महत्तत्त्वात्मने नम:।

सर्वगात्रे—यं नम: पराय प्रकृतितत्त्वात्मने नम:।

सर्वगात्रे—स्वां नम: पराय पुरुषतत्त्वात्मने नम:।

सर्वगात्रे—हां नम: पराय परतत्त्वात्मने नम:।

सृष्टिन्यास—

सर्वगात्रे—हां नम: परतत्त्वात्मने नम:।

सर्वगात्रे—स्वां नम: पराय पुरुषतत्त्वात्मने नम:।

सर्वगात्रे—यं नम: पराय प्रकृतितत्त्वात्मने नम:।

हृदि—भां नम: पराय महत्तत्त्वात्मने नम:।

हृदि—ल्लं नमः पराय अहङ्कारतत्त्वात्मने नमः।
शिरसि—वं नमः पराय आकाशतत्त्वात्मने नमः।
मुखे—नं नमः पराय वायुतत्त्वात्मने नमः।
हृदि—जं नमः पराय तेजस्तत्त्वात्मने नमः।
लिंगे —पीं नमः पराय जलतत्त्वात्मने नमः।
पादयोः—गों नम पराय पृथ्वीतत्त्वात्मने नमः।

सृष्ट्यादिन्यासे अंगुलिनियमो निबन्धे—

शिरसि विहिता मध्या सैवाक्ष्णि तर्जनिकान्विता।
श्रवसि रहितांगुष्ठा ज्येष्ठान्वितोपकनिष्ठिका॥
नसि वदने सर्वाः सज्यायसी हृदि तर्जनी।
प्रथमयुता मध्यमा नाभौ श्रवणि विहिता लिङ्गे॥
ता एवांगुलयो जान्वोः सांगुष्ठास्तु पदद्वये।
स्थानार्णयोर्विनिमयो नांगुलिस्थानयोर्भवेत्॥

तद्यथा—शिरसि गों नमो मध्यमांगुल्या। नेत्रयोः पीं नमस्तर्जनीमध्यमाभ्याम्। कर्णयोः जं नमः अंगुष्ठरहिताभिरङ्गुलीभिः। घ्राणे नं नमोऽङ्गुष्ठानामिकाभ्याम्। मुखे वं नमः सर्वाङ्गुलीभिः। हृदि ल्लं नमोऽङ्गुष्ठतर्जनीभ्याम्। नाभौ भां नमः अंगुष्ठमध्यमाभ्याम्। लिङ्गे यं नमोऽङ्गुष्ठरहिताभिरंगुलीभिः। जानुनोः स्वां नमोऽङ्गुष्ठरहिताभिरंगुलीभिः। पादयोः हां नमः सर्वाङ्गुलीभिः। इति सृष्टिक्रमः।

अथ स्थितिक्रमः—हृदि गों नमोऽङ्गुष्ठतर्जनीभ्याम्। नाभौ पीं नमोऽङ्गुष्ठमध्यमाभ्याम्। लिङ्गे जं नमोऽङ्गुष्ठरहिताभिरंगुलीभिः। जानुनोः नं नमोऽङ्गुष्ठरहिताभिरंगुलीभिः। पादयोः वं नमः सर्वाङ्गुलीभिः। शिरसि ल्लं नमो मध्यमया। नेत्रयो भां नमो मध्यमातर्जनीभ्याम्। कर्णयोः यं नमोऽङ्गुष्ठरहिताभिरंगुलीभिः। घ्राणे स्वां नमोऽङ्गुष्ठानामिकाभ्याम्। मुखे हां नमः सर्वाङ्गुलीभिः।

अथ संहारक्रमः—पादयोः गों नमः सर्वाङ्गुलीभिः। जानुनोः पीं नमः अंगुष्ठरहिताभिरंगुलीभिः। लिङ्गे जं नमोऽङ्गुष्ठरहिताभिरंगुलीभिः। नाभौ नं नमोऽङ्गुष्ठमध्यमाभ्याम्। हृदि वं नमोऽङ्गुष्ठतर्जनीभ्याम्। मुखे ल्लं नमः सर्वाङ्गुलीभिः। घ्राणे भां नमोऽङ्गुष्ठानामिकाभ्याम्। कर्णयोः यं नमोऽङ्गुष्ठरहिताभिरंगुलीभिः। नेत्रयोः स्वां नमो मध्यमातर्जनीभ्याम्। मूर्ध्नि हां नमो मध्यमांगुल्या। इति संहारक्रमः।

पुनः सृष्टिस्थिती विन्यसेत्। तथा च—

विद्यार्थी ब्रह्मचारी च पुनः सृष्टिं समाचरेत्।
गृहस्थश्च पुनः सृष्टिस्थिती कुर्याद्विशेषतः।
यतिर्वैराग्ययुक्तश्च संहारान्तं न्यसेत्ततः॥

एतेन विद्यार्थिब्रह्मचारिणां चतुर्द्धा गृहस्थानां पञ्चधा। यतिविरक्तादीनाञ्च त्रिधा न्यासः। तथा च निबन्धे—

न्यासः संहारान्तो मस्करिवैखानसेषु विहितोऽयम्।
स्थित्यन्तो गृहमेधिषु सृष्ट्यन्तो वर्णिनामिति प्राहुः॥
वैराग्ययुजि गृहस्थे संहारान्तं केचिदाहुराचार्याः।
सहजानौ वनवासिनि स्थितिञ्च विद्यार्थिनां तथा सृष्टिः॥

केचित्तु न्यासत्रये विपर्यासमामनन्ति, तेन सर्वैरेव त्रिधा न्यासः कर्त्तव्यः।

निबन्ध ग्रन्थ के अनुसार सृष्ट्यादि न्यासों में अंगुलि-नियम इस प्रकार का है। मस्तक में मध्यमा से, नेत्रों में मध्यमा-तर्जनी से, कानों में तर्जनी-मध्यमा-अनामिका-कनिष्ठा से, नासिका में अंगुष्ठ-अनामा से, मुख में सर्वांगुलियों से, हृदय में अंगुष्ठ-तर्जनी से, नाभि-कान-लिंग में अंगुष्ठ-मध्यमा से, जानु में तर्जनी-मध्यमा-अनामा-कनिष्ठा से और दोनों पैरों में सभी अंगुलियों से न्यास करे। सृष्टि-स्थिति आदि न्यासों में स्थान और वर्ण का परिवर्त्तन है; लेकिन अंगुलि और स्थान में परिवर्तन नहीं है।

सृष्टिक्रमन्यास—

शिरसि—गों नमो मध्यमायाम्।
नेत्रयोः—पीं नमस्तर्जनी-मध्यमाभ्याम्।
कर्णयोः—जं नमः अंगुष्ठरहिताभिरंगुलीभिः।
घ्राणे—नं नमोऽङ्गुष्ठानामिकाभ्याम्।
मुखे—वं नमः सर्वाङ्गुलीभिः।
हृदि—ल्लं नमोऽङ्गुष्ठतर्जनीभ्याम्।
नाभौ—भां नमः अंगुष्ठमध्यमाभ्याम्।
लिंगे—यं नमोऽङ्गुष्ठरहिताभिरंगुलीभिः।
जानुनि—स्वां नमोऽङ्गुष्ठरहिताभिरंगुलीभिः।
पादयोः—हां नमः सर्वांगुलीभिः।

स्थितिक्रमन्यास—

हृदि—गों नमोऽङ्गुष्ठतर्जनीभ्याम्।
नाभौ—पीं नमोऽङ्गुष्ठमध्यमाभ्याम्।
लिङ्गे—जं नमोऽङ्गुष्ठरहिताभिरंगुलीभिः।
जानुनोः—नं नमोऽङ्गुष्ठरहिताभिरङ्गुलीभिः।
पादयोः—वं नमः सर्वाङ्गुलीभिः।
शिरसि—ल्लं मनो मध्यमाभ्याम्।
नेत्रयोः—भां नमो मध्यमातर्जनीभ्याम्।
कर्णयोः—यं नमोऽङ्गुरहिताभिरङ्गुलीभिः।
घ्राणे—स्वां नमोऽङ्गुष्ठानामिकाभ्याम्।
मुखे—हां नमः सर्वाङ्गुलीभिः।

संहारक्रमन्यास—

पादयोः—गों नमः सर्वाङ्गुलीभिः।
जानुनी—पीं नमः अङ्गुष्ठरहिताभिरङ्गुलीभिः।
लिंगे—जं नमोऽङ्गुष्ठरहिताभिरङ्गुलीभिः।
नाभौ—नं नमोऽङ्गुष्ठमध्यमाभ्याम्।
हृदि—वं नमोऽङ्गुष्ठतर्जनीभ्याम्।
मुखे—ल्लं नमो सर्वांगुलीभिः।
घ्राणे—भां नमो अंगुष्ठानामिकाभ्याम्।
कर्णयोः—यं नमो अङ्गुष्ठरहिताभिरङ्गुलीभिः।
नेत्रयोः—स्वां नमो मध्यमातर्जनीभ्याम्।
मूर्ध्नि—हां नमो मध्यमाभ्याम्।

पुनः सृष्टि-स्थितिन्यास करे। विद्यार्थी ब्रह्मचारी को सृष्टि-स्थिति-संहारन्यास करके पुनः सृष्टि-स्थिति न्यास करना चाहिये। यति और वैरागी सृष्टि-स्थिति-संहारन्यास करे। अतः विद्यार्थी-ब्रह्मचारी चतुर्विध, गृहस्थ पञ्चविध और यति तथा वैरागी को त्रिविध न्यास करना चाहिये।

इसके बाद विभूतिपञ्जर न्यास करे। इस न्यास से ऐश्वर्य की वृद्धि होती है।

अथ विभूतिपञ्जरन्यासः निबन्धे—

वच्म्यपरं न्यासवरं विभूत्यभिधं भूतिकरम्।
मन्त्रदशावृत्तिमयं गुप्ततमं मन्त्रिवरैः॥

तद्यथा—आधारे गों नमः, लिङ्गे पीं नमः, नाभौ जं नमः, हृदि नं नमः, गले वं नमः, मुखे ल्लं नमः, अंसयोः भां नमः यं नमः, ऊर्वोः स्वां नमः हां नमः। कन्धरायां गों नमः, नाभौ पीं नमः, कुक्षौ जं नमः, हृदि नं नमः, स्तनयोः वं नमः, ल्लं नमः। पार्श्वयोः भां नमः, यं नमः। श्रोण्योः स्वां नमः, हां नमः। शिरसि गों, मुखे पीं, नेत्रयोः जं नं, कर्णयोः वं ल्लं, नासापुटयोः भां यं, कपोलयोः स्वां हां। एवं दक्षिणकरस्य मूलसन्ध्यग्रकेषु पञ्च, तदंगुलीषु पञ्च। वामकरमूलसन्ध्यग्रकेषु पञ्च, तदंगुलीषु पञ्च। एवं दक्षिणपादमूलसन्ध्यग्रकेषु पञ्च, तदंगुलीषु पञ्च। वामपादमूलसन्ध्यग्रकेषु पञ्च, तदंगुलीषु पञ्च। मूर्ध्नि गों, तत्पूर्वे पीं, तद्दक्षिणे जं, तत्पश्चिमे नं, तदुत्तरे वं, मूर्ध्नि ल्लं, भुजयोः भां यं, ऊर्वोः स्वां हां। शिरसि गों, नेत्रयोः पीं, मुखे जं, कण्ठे नं, हृदि वं, जठरे ल्लं, मूलाधारे भां, लिङ्गे यं, जानुनोः स्वां, पादयोः हां। श्रोत्रयोः गों, गण्डयोः पीं, अंसयोः जं, स्तनयोः नं, पार्श्वयोः वं, लिङ्गे ल्लं, ऊर्वोः भां, जानुनोः यं, जङ्घयोः स्वां, पादयोः हां। एतानि नमोऽन्तानि विन्यसेत्।

विभूतिपञ्जरन्यास—

आधारे—गों नमः	नाभौ—पीं नमः
लिङ्गे—पीं नमः	कुक्षौ—जं नमः
नाभौ—जं नमः	हृदि—नं नमः
हृदि—नं नमः	स्तनयोः—वं नमः ल्लं नमः
गले—वं नमः	पार्श्वयोः—भां नमः यं नमः
मुखे—ल्लं नमः	श्रोत्रयोः—स्वां नमः हां नमः
अंसयोः—भां नमः यं नमः	शिरसि—गों नमः
ऊर्वोः—स्वां नमः हां नमः	मुखे—पीं नमः
कन्धयोः—गों नमः	नेत्रयोः—जं नमः

कर्णयो:—वं नम: ल्लं नम: अङ्गुल्यग्रे—वं नम:
नासापुटयो:—भां नम: यं नम: अङ्गुष्ठे—ल्लं नम:
कपोलयो:—स्वां नम: हां नम: तर्जन्यां—भां नम:
दक्षहस्तमूले—गों नम: मध्यमायां—यं नम:
मध्यसन्धौ—पीं नम: अनामिकायां—स्वां नम:
मणिबन्धे—जं नम: कनिष्ठायां—हां नम:
अङ्गुलिमूले—नं नम:

इसी प्रकार वाम हस्त, दक्ष पाद और वाम पाद के उक्त दसो स्थानों में 'गोपी-जनवल्लभाय स्वाहा' से न्यास करे—

मूर्ध्नि—गों नम: मूलाधारे भां नम:
मूर्धापूर्वे—पीं नम: लिङ्गे—यं नम:
मूर्धादक्षिणे—जं नम: जानुनि—स्वां नम:
मूर्धापश्चिमे—नं नम: पादयो:—हां नम:
मूर्धोत्तरे—वं नम: श्रोत्रयो:—गों नम:
मूर्ध्नि—ल्लं नम: गण्डयो:—पीं नम:
भुजयो:—भां नम: यं नम: अंसयो:—जं नम:
ऊर्वो:—स्वां नम: हां नम: स्तनयो:—नं नम:
शिरसि—गों नम: पार्श्वयो—वं नम:
नेत्रयो:—पीं नम: लिङ्गे—ल्लं नम:
मुखे—जं नम: ऊर्वो:—भां नम:
कण्ठे—नं नम: जानुनि—यं नम:
हृदि—वं नम: जंघयो:—स्वां नम:
जठरे—ल्लं नम: पादयो:—हां नम:

तत्र क्रमो गौतमीये—

हस्तमूलादि सृष्टिः स्यान्मणिबन्धात् स्थितिः स्मृता ।
अंगुल्यग्रात्संहृतिश्च स्थित्यन्तं त्रितयं न्यसेत् ॥

ततः पूर्ववन्मूर्त्तिपञ्जरन्यासः। ततः पूर्ववन्मूर्त्तिपञ्जरस्यैव सृष्टिस्थिती। ततो दशाङ्गपञ्चाङ्गन्यासौ। तद्यथा—हृदि गों, शिरसि पीं, शिखायां जं, सर्वाङ्गे नं, दिक्षु वं, दक्षपार्श्वे ल्लं, वामपार्श्वे भां, कटिदेशे यं, पृष्ठे स्वां, मूर्ध्नि हां।

ततः पञ्चाङ्गन्यासः यथा—आचक्राय स्वाहा हृदयाय नमः। विचक्राय स्वाहा शिरसे स्वाहा। सुचक्राय स्वाहा शिखायै वषट्। त्रैलोक्यरक्षणचक्राय स्वाहा कवचाय हुं। असुरान्तकचक्राय स्वाहा अस्त्राय फट्।

ततो नारायणमन्त्रोक्त-किरीटकेयूरेत्यादिमन्त्रेण व्यापकं विधाय वेणुबिल्वादि-मुद्रां प्रदर्श्य ॐ सुदर्शनाय अस्त्राय फडिति मन्त्रेण दिग्बन्धनं कुर्यात्। किरीटादि-न्यासस्तु सर्वत्र विष्णुमन्त्रे। ततो ध्यायेत्—

स्मेरद्वृन्दावने रम्ये मोहयन्तमनारतम् ।
गोविन्दं पुण्डरीकाक्षं गोपकन्याः सहस्रशः ॥
आत्मनो वदनाम्भोजे प्रेरिताक्षिमधुव्रताः ।
पीडिताः कामवाणेन चिरमाश्लेषणोत्सुकाः ॥
मुक्ताहारलसत्पीनतुङ्गस्तनभरानताः ।
स्रस्तधम्मिल्लवसना मदस्खलितभाषणाः ॥
दन्तपंक्तिप्रभोद्भासिस्पन्दमानाधराञ्चिताः ।
विलोभयन्तीर्विविधैर्विभ्रमैर्भावगर्वितैः ॥
फुल्लेन्दीवरकान्तिमिन्दुवदनं बर्हावतंसप्रियं
श्रीवत्साङ्कमुदारकौस्तुभधरं पीताम्बरं सुन्दरम् ।
गोपीनां नयनोत्पलार्चिततनुं गोगोपसङ्घावृतं
गोविन्दं कलवेणुवादनपरं दिव्याङ्गभूषं भजे ॥

एवं ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्य शङ्खस्थापनं कुर्यात्। ततो वैष्णवोक्तपीठमन्वन्तां पीठपूजां विधाय पुनर्ध्यात्वा आवाहनादिपञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं विधाय देवशरीरे सृष्टिस्थितिदशाङ्गपञ्चाङ्गन्यासक्रमेण पूजयेत्। ततो मुखे ॐ वेणवे नमः, हृदि ॐ वनमालायै नमः, ॐ कौस्तुभाय नमः, ॐ श्रीवत्साय नमः। ततः अपरं पञ्चपुष्पाञ्जलिं दद्यात्। शुक्लचन्दनपङ्किलां श्वेततुलसीं रक्तचन्दनपङ्किलां रक्ततुलसीं मूलेन दक्षिणवामपार्श्वयोर्दद्यात्। तथा तुलसीद्वयं करवीरद्वयं पद्मद्वयञ्च शिरसि दद्यात्। सर्वाणि पुष्पाणि सर्वतनौ दद्यात्। तथा च गौतमीये—

दक्षिणे वासुदेवाख्यं स्वच्छं चैतन्यमव्ययम् ।
वामे च रुक्मिणी रक्ता नित्या रजोगुणान्विता ॥
तुलसीयुगलं पार्श्वद्वये गन्धद्वयान्वितम् ।
हयारियुगलं पार्श्वद्वये दक्षिणवामके ॥
पञ्चपुष्पं मूर्ध्नि देशे मूलेन दक्षवामके ।
षड्भिः सर्वतनौ दद्यात्पुनः शिरसि सर्वतः ॥

तत आवरणं पूजयेत्। पूर्वे ॐ दामाय नमः, दक्षिणे ॐ सुदामाय नमः, पश्चिमे ॐ वासुदेवाय नमः, उत्तरे ॐ किङ्किण्यै नमः, केशरेषु अग्न्यादिकोणे ॐ आचक्राय स्वाहा हृदयाय नमः, नैर्ऋते ॐ विचक्राय स्वाहा शिरसे स्वाहा,

वायुकोणे ॐ सुचक्राय स्वाहा शिखायै वषट्, ईशाने ॐ त्रैलोक्यरक्षणचक्राय स्वाहा कवचाय हुं, चतुर्दिक्षु ॐ असुरान्तकचक्राय स्वाहा अस्त्राय फट्। ततः पत्रेषु पूर्वादि ॐ रुक्मिण्यै नमः, एवं सत्यभामायै नाग्नजित्यै सुनन्दायै मित्रविन्दायै सुलक्षणायै जाम्बवत्यै सुशीलायै। पत्राग्रेषु पूर्वादि ॐ वसुदेवाय नमः, एवं देवक्यै नन्दाय यशोदायै बलभद्राय सुभद्रायै गोपेभ्यः गोपीभ्यः। तद्बाह्ये मध्ये च पूर्वादिक्रमेण ॐ मन्दाराय नमः, एवं सन्तानकाय पारिजाताय कल्पवृक्षाय हरिचन्दनाय। तद्बाह्ये इन्द्रादीन् वज्रादींश्च पूजयेत्। ततः कृष्णाष्टकं पूजयेत्। ॐ श्रीकृष्णाय नमः, एवं वासुदेवाय देवकीनन्दनाय नारायणाय यदुश्रेष्ठाय वार्ष्णेयाय धर्मसंस्थापनाय असुराक्रान्तभारहारिणे। सर्वत्र प्रणवादिनमोऽन्तेन पूजयेत्। अशक्त-१श्चेदङ्गे वज्रादींश्च पूजयेत्। तथा च गौतमीये—

अथवाङ्गं दिक्पतिभिस्तदस्त्रैरपि चार्चयेत् ।
एवमभ्यर्चयन् कृष्णं काममुक्त्योः स भाजनम् ॥

एतद्यजनाशक्तश्चेत्कृष्णाष्टकेन पूजयेत्। ततो धूपादिविसर्जनान्तं कर्म समापयेत्। अस्य पुरश्चरणं दशलक्षजपः। तथा च—

दशलक्षमक्षयफलप्रदं मनुं प्रतिजप्य निर्मलमतिर्दशाक्षरम् ।
जुहुयात्सिताज्यमधुरप्लुतैर्नवैररुणाम्बुजैर्हुताशने दशायुतम् ॥
अथ शुषिरयुगलवर्णं चेन्मनुं पञ्चलक्षं
प्रजपेत्तु जुहुयाच्च प्रोक्तक्लृप्तार्द्धलक्षम् ।
अमलमतिरभावे पायसैरम्बुजानां
ससितघृतसुसिक्तैरारभेद्धोमकर्म ॥

इसके बाद पूर्वोक्त प्रणाली से मूर्तिपञ्जर न्यास के बाद मूर्तिपञ्जर के सृष्टि-स्थिति न्यास करके निम्न न्यास करे। इसके बाद दशांग न्यास और पञ्चाङ्ग न्यास करे, यह गौतमतन्त्र के मतानुसार है।

दशांग न्यास—

हृदि—गों नमः।	दक्षपार्श्वे—ल्लं नमः
शिरसि—पीं नमः।	वामपार्श्वे—भां नमः।
शिखायां—जं नमः।	कटिदेशे—यं नमः।
सर्वाङ्गे—नं नमः।	पृष्ठे—स्वां नमः।
दिक्षु—वं नमः।	मूर्ध्नि—हां नमः।

पञ्चाङ्ग न्यास—आचक्राय स्वाहा हृदयाय नमः। विचक्राय स्वाहा शिरसे स्वाहा। सुचक्राय स्वाहा शिखायै वषट्। त्रैलोक्यरक्षणचक्राय स्वाहा कवचाय हुं। असुरान्तकचक्राय स्वाहा अस्त्राय फट्।

तब ॐ किरीटकेयूरहारमकरकुण्डलशंखचक्रगदापद्महस्तश्रीवत्सवक्षश्रीभूमिसहित-स्वात्मज्योतिर्मयदीप्तकराय सहस्रादित्यतेजसे नमः से व्यापक न्यास करके वेणु-विल्वादि मुद्रायें दिखाते हुए ॐ नमः सुदर्शनाय अस्त्राय फट् से दिग्बन्ध् करके ध्यान करे—

स्मरेद् वृन्दावने रम्ये मोहयन्तमनारतम्।
गोविन्दं पुण्डरीकाक्षं गोपकन्यासहस्रशः।।
आत्मनो वदनाम्भोजे प्रेरिताक्षिमधुव्रताः।
पीड़िता कामवाणेन चिरमाश्लेषणोत्सुकाः ।।
मुक्ताहारलसत्पीनतुङ्गस्तनभरानताः ।
स्रस्तधम्मिलवसना मदस्खलितभाषणा।।
दन्तपंक्तिप्रभोद्भासिस्पन्दमानाधराञ्चिताः ।
विलोभयन्तीर्विविधैर्विभ्रमैर्भावगर्वितैः ।।

सुन्दर वृन्दावन में कमलनयन गोविन्द सहस्रों गोपकन्याओं को निरन्तर मुग्ध कर रहे हैं। गोपियाँ श्रीकृष्ण के मुखकमल की ओर अपने नेत्ररूपी भौरों को प्रेरित कर रही हैं। गोपियाँ कामवाण से पीड़ित होकर श्रीकृष्ण के आलिंगन के लिये अतीव उत्सुक हैं। मोतियों के हार से सुशोभित स्थूल उन्नत उरोजों के भार से वे झुकी हुई हैं। उनके वस्त्र और कंचुकी ढीले पड़ गये हैं। आनन्दातिरेक से वे अटपट वाणी बोल रही हैं। उज्ज्वल दाँतों की पंक्ति की चमक से प्रकाशमान उनके होठ कम्पित हैं। विविध प्रकार की विलासपूर्ण भाव-भंगिमाओं से वे श्रीकृष्ण को लुभा रही हैं।

फुल्लेन्दीवरकान्तिमिन्दुवदनं बर्हावतंसप्रियम्
श्रीवत्साङ्कमुदारकौस्तुभधरं पीताम्बरं सुन्दरम्।
गोपीनां नयनोत्पलार्चिततनुं गोगोपसंघावृतम्
गोविन्दं कलवेणुवादनपरं दिव्याङ्गभूषं भजे।।

विकसित नीलकमल के समान श्रीकृष्ण के शरीर की शोभा है। चन्द्रमा के समान उज्ज्वल मुख है। शिर मोरपंख से विभूषित है। वक्ष पर श्रीवत्स, कण्ठ में कौस्तुभमणि है। सुन्दर पीले वस्त्र हैं। गोपियों के नेत्रकमलों द्वारा पूजित शरीर, गायों और ग्वालों के समूह से घिरे, वंशी से मधुर ध्वनि करने में तत्पर, दिव्य अलंकारों से विभूषित गोविन्द का मैं भजन करता हूँ।

ध्यान के बाद मानसोपचारों से पूजन करे। शंखस्थापन करे। विष्णुमन्त्रोक्त पीठपूजा कर पुनः ध्यान-आवाहनादि से पञ्च पुष्पाञ्जलि अर्पण तक के सभी कार्य करे। देवशरीर में सृष्टि-स्थिति, दशांग, पञ्चाङ्ग न्यास के स्थानों में न्यासमन्त्रों से पूजा करके निम्न प्रकार से पूजा करे—

मुखे ॐ वेणवे नमः। हृदि ॐ वनमालायै नमः, ॐ कौस्तुभाय नमः, ॐ श्री-

वत्साय नमः। तब पाँच पुष्पाञ्जलियाँ देकर कृष्ण के दक्ष पार्श्व में श्वेत चन्दनयुक्त श्वेत तुलसी और वाम पार्श्व में रक्त चन्दनयुक्त रक्ततुलसी मूल मन्त्र से प्रदान करे। शिर पर दो तुलसीपत्र, दो कनैल-पुष्प और दो कमलपुष्प प्रदान करे। देव पर सभी प्रकार के पुष्पों का अर्पण करे।

गौतमीय तन्त्र में वर्णन है कि भगवान् का दक्षिण भाग अक्षय निर्मलस्वरूप है। वाम भाग रजोगुणमयी नित्या रक्षिणी मूर्ति है। इसी से दाँईं ओर श्वेत चन्दनयुक्त श्वेत तुलसी और बाँईं ओर रक्त चन्दनयुक्त रक्ततुलसी प्रदान करने का विधान है।

आवरण-पूजन—कर्णिका में पूर्वे ॐ दामाय नमः। दक्षिणे ॐ सुदामाय नमः। पश्चिमे ॐ वासुदेवाय नमः। उत्तरे ॐ किङ्किण्यै नमः।

केशरों में—अग्निकोण में ॐ आचक्राय स्वाहा हृदयाय नमः। नैर्ऋत्य में ॐ विचक्राय स्वाहा शिरसे स्वाहा। वायव्य में ॐ सुचक्राय स्वाहा शिखायै वषट्। ईशान में ॐ त्रैलोक्यरक्षणचक्राय स्वाहा कवचाय हुं। चारो दिशाओं में ॐ असुरान्तकचक्राय स्वाहा अस्त्राय फट् से पूजन करे।

अष्टदल के दलों में पूर्वादि क्रम से इनका पूजन करे—ॐ रुक्मिण्यै नमः। ॐ सत्यभामायै नमः। ॐ नाग्नजित्यै नमः। ॐ सुनन्दायै नमः। ॐ मित्रविन्दायै नमः। ॐ सुलक्षणायै नमः। ॐ जाम्बवत्यै नमः। ॐ सुशीलायै नमः।

दलों के अग्रभाग में पूर्वादि क्रम से इन सबों का पूजन करे—ॐ वासुदेवाय नमः, ॐ देवक्यै नमः, ॐ नन्दाय नमः, ॐ यशोदायै नमः, ॐ बलभद्राय नमः, ॐ सुभद्रायै नमः, ॐ गोपेभ्यो नमः, ॐ गोपीभ्यो नमः।

अष्टदल और भूपुर के मध्य में पूर्वादि क्रम से इनका पूजन करे—ॐ मन्दाराय नमः। ॐ सन्तानकाय नमः। ॐ पारिजाताय नमः। ॐ कल्पवृक्षाय नमः। ॐ हरिचन्दनाय नमः।

भूपुर में इन्द्रादि दश और वज्रादि दश की पूजा करके कृष्णाष्टक की पूजा यन्त्र-मध्य बिन्दु में करे—ॐ श्रीकृष्णाय नमः। ॐ वासुदेवाय नमः। ॐ देवकीनन्दनाय नमः। ॐ नारायणाय नमः। ॐ यदुश्रेष्ठाय नमः। ॐ वार्ष्णेयाय नमः। ॐ धर्मसंस्थापनाय नमः। ॐ असुराक्रान्तभारहारिणे नमः।

गौतमीय तन्त्र में लिखा है कि पूरे आवरण-पूजन करने में अशक्त हो तो अंगपूजा और इन्द्रादि लोकपालों एवं वज्रादि आयुधों की पूजा करे। इस प्रकार श्रीकृष्णार्चन करने से काम्य विषय के साथ मोक्ष भी प्राप्त करता है। इस पूजा को करने में भी यदि असमर्थ हो तो केवल ॐ कृष्णाय नमः इत्यादि के क्रम से कृष्णाष्टक पूजा करे। इससे भी वह सफल मनोरथ होता है। तदनन्तर धूपादि विसर्जनान्त कर्म करके पूजा पूर्ण करे।

इस दशाक्षर मन्त्र का पुरश्चरण दश लाख जप से होता है। घी, मधु और शक्करयुक्त नव रक्त पद्मों से एक लाख हवन करे। अष्टादशाक्षर मन्त्र के पुरश्चरण में पाँच लाख जप एवं पूर्वोक्त द्रव्य से पचास हजार हवन करे। कमल का अभाव हो तो शक्कर-घी-युक्त पायस से हवन करे।

श्रीकृष्णस्य त्रयोदशाक्षरमन्त्राः

दशाक्षरादौ श्रीमायाकामः मायाश्रीकामः काममायाश्रीस्त्रिविधस्त्रयोदशाक्षरो भवति। तथा च—

श्रीशक्तिमारपूर्वश्च शक्तिश्रीमारपूर्वकः ।
कामशक्तिरमापूर्वो दशार्णो मनवस्त्रयः ॥

इति सनत्कुमारवचनात्। एतेषां पूजाप्रयोगः—प्रातःकृत्यादिवैष्णवोक्तपीठ-न्यासान्तं कर्म विधाय ऋष्यादिन्यासं कुर्यात्। तद्यथा—शिरसि नारदऋषये नमः, मुखे विराड्गायत्रीच्छन्दसे नमः, हृदि श्रीकृष्णाय देवतायै नमः।

ततः कराङ्गन्यासौ—आचक्राय स्वाहा अंगुष्ठाभ्यां नमः, आचक्राय स्वाहा हृदयाय नमः, इत्यादि दशाक्षरवद्विन्यसेत्। ततः फलार्थी चेद्दशतत्त्वमूर्त्तिपञ्जरौ न्यसेत्। ततः किरीटमन्त्रेण व्यापकं विधाय यथाशक्ति मुद्रां प्रदर्श्य ॐ नमः सुदर्शनाय अस्त्राय फडिति दिग्बन्धनं विधाय ध्यायेत्। आद्ये मनौ दशाक्षरवद्ध्यानं द्वितीये रत्नाभिषेकवत्। तृतीये तु ध्यानम्—

शङ्खचक्रधनुर्बाणपाशांकुशधरोऽरुणः ।
वेणुं धमन्धृतो दोर्भ्यां ध्येयः कृष्णो दिवाकरे ॥

गौतमीयमते तु अत्रापि दशाक्षरवद् ध्यानम्। तथा च—

रमादिकामादिमन्त्रद्वयमधिकृत्य
अनयोर्मन्त्रयोर्मन्त्री आचक्राद्यैः षडङ्गकम् ।
कुर्याद्दशार्णवत्सर्वं ध्यानपूजादिकं सुधीः ॥

एवं ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्य शङ्खस्थापनं कुर्यात्।

ततो वैष्णवोक्तपीठपूजां विधाय पुनर्ध्यात्वा आवाहनादिपञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं पूर्वोक्तवेण्वादिपूजनञ्च विधाय आवरणपूजामारभेत्। अस्यावरणानि अङ्गेन्द्रवज्रा-दीनि। ततः कृष्णाष्टकं सम्पूज्य धूपादिविसर्जनान्तं कर्म समापयेत्। एतेषां पुरश्चरणं पञ्चलक्षजपः। तथा च—

पञ्चलक्षं जपेत्तावदयुतं पायसेन च ।
जुहुयात् संस्कृते वह्नौ मन्त्री सर्वार्थसिद्धये ॥

श्रीकृष्ण के त्रयोदशाक्षर मन्त्र—सनत्कुमारतन्त्र में तीन प्रकार के त्रयोदशाक्षर मन्त्र का वर्णन है। यथा—श्रीं ह्रीं क्लीं गोपीजनवल्लभाय स्वाहा, ह्रीं श्रीं क्लीं गोपीजनवल्लभाय स्वाहा एवं क्लीं ह्रीं श्रीं गोपीजनवल्लभाय स्वाहा।

तीनों मन्त्रों की पूजाविधि यह है कि प्रात:कृत्यादि विष्णुमन्त्रोक्त पीठन्यासान्त तक के कर्म करके ऋष्यादि करांग न्यास करे।

ऋष्यादि न्यास—नारदऋषये नम: शिरसि। विराट् गायत्री छन्दसे नम: मुखे। श्रीकृष्णदेवतायै नम: हृदि।

करन्यास—आचक्राय स्वाहा अंगुष्ठाभ्यां नम:। विचक्राय स्वाहा तर्जनीभ्यां स्वाहा। सुचक्राय स्वाहा मध्यमाभ्यां वषट्। त्रैलोक्यरक्षणचक्राय स्वाहा अनामिकाभ्यां हुं। असुरान्तकचक्राय स्वाहा कनिष्ठाभ्यां अस्त्राय फट्।

अंगन्यास—आचक्राय स्वाहा हृदयाय नम:। विचक्राय स्वाहा शिरसे स्वाहा। सुचक्राय स्वाहा शिखायै वषट्। त्रैलोक्यरक्षणचक्राय स्वाहा कवचाय हुं। असुरान्तक-चक्राय स्वाहा अस्त्राय फट्।

तब पूर्वोक्त दश तत्त्वन्यास और मूर्तिपञ्जर न्यास करे। फिर विष्णुमन्त्रोक्त 'ॐ करीट' आदि मन्त्र से व्यापक न्यास करे। यथाशक्ति मुद्राओं को दिखावे। ॐ नम: सुदर्शनाय अस्त्राय फट् से दिग्बन्ध करे।

प्रथम मन्त्र से पूजा करनी हो तो पूर्वोक्त दशाक्षर मन्त्रवत् ध्यान करे। द्वितीय मन्त्र में अष्टादक्षाक्षर मन्त्र के पूर्व 'ह्रीं' और 'श्रीं' का योग करने से जो बीस अक्षरों का मन्त्र बनता है, उसी रत्नाभिषेक मन्त्र से ध्यान करे। तृतीय मन्त्र का ध्यान निम्न प्रकार का है—

शंखचक्रधनुर्वाणपाशाङ्कुशधरोऽरुण: ।
वेणुं धमन् धृतो दोर्भ्यां ध्येय: कृष्णो दिवाकरे।।

शंख, चक्र, धनुष, वाण, पाश और अंकुशधारी, अरुणवर्ण, दोनों हाथों से वंशी बजाते हुए श्रीकृष्ण का ध्यान सूर्यमण्डलमध्य में करना चाहिये।

गौतमीय तन्त्र के अनुसार इस मन्त्र में भी दशाक्षर मन्त्रोक्त ध्यान करे। श्रीबीजादि और कामबीजादि दो मन्त्रों के बारे में वहीं लिखा है कि इन दोनों मन्त्रों में आचक्रं आदि मन्त्रों से अंगन्यास और दशाक्षर मन्त्र के समान ध्यान-पूजादि करे। ध्यान के बाद मानसोपचारों से पूजन करके शंखस्थापन करे।

इसके बाद विष्णुमन्त्रोक्त पीठपूजा करके पुन: ध्यान-आवाहनादि पञ्च पुष्पाञ्जलिदानपर्यन्त सभी कर्म करके पूर्वोक्त वेणु आदि की पूजापूर्वक आवरण-पूजन करे। इस मन्त्र के आवरण-पूजन में केवल अंगपूजा और इन्द्रादि वज्रादि की पूजा करे। तब पूर्वोक्त कृष्णाष्टक पूजा करके धूपादि विसर्जनान्त कर्म समाप्त करे।

उक्त तीनों त्रयोदशाक्षर मन्त्रों के पुरश्चरण में पाँच लाख जप और दश हजार हवन पायस से करे। इस प्रकार पुरश्चरण करने से सर्वार्थ-सिद्धि होती है।

मन्त्रान्तरम्

कृष्णाय पदमाभाष्य गोविन्दाय ततः परम् ।
गोपीजनपदस्यान्ते वल्लभाय द्विठावधि ।
कामबीजादिराख्यातो मनुरष्टादशाक्षरः ॥

अस्य पूजाप्रयोगः—प्रातःकृत्यादि वैष्णवोक्तपीठमन्वन्तं विन्यस्य ऋष्यादिन्यासं कुर्यात्। यथा—शिरसि नारदऋषये नमः। मुखे गायत्रीच्छन्दसे नमः। हृदि कृष्णाय देवतायै नमः। गुह्ये क्लीं बीजाय नमः। पादयोः स्वाहा शक्तये नमः। ततः प्रणवपुटितं मन्त्रं त्रिशः करयोर्व्याप्य कराङ्गन्यासौ कुर्यात्। क्लीं अंगुष्ठाभ्यां नमः। गोविन्दाय तर्जनीभ्यां स्वाहा। गोपीजन मध्यमाभ्यां वषट्। वल्लभाय अनामिकाभ्यां हुम्। स्वाहा कनिष्ठाभ्यां फट्। एवं हृदयादिषु। ततो मूलेन मूर्धादि-पादपर्यन्तं त्रिशो व्याप्य आपादादिमूर्द्धपर्यन्तं प्रणवेन सकृद्व्याप्य मन्त्रन्यासं कुर्यात्। मूर्ध्नि ललाटे भ्रूमध्ये कर्णयोश्चक्षुषोर्घ्राणयोर्वदने ग्रीवायां हृदि नाभौ कट्यां लिङ्गे जानुनोः जङ्घयोः एषु स्थानेषु प्रत्येकमन्त्रवर्णान् नमोऽन्तान्न्यसेत्, शिरसि प्रणवञ्च न्यसेत्।

ततो नयन-मुख-हृदय-गुह्यांघ्रिषु मन्त्रस्य पदपञ्चकं नमोऽन्तं न्यसेत्। पदपञ्च-कञ्च चतुश्चतुस्तथा द्वयम्। ततोऽङ्गन्यासं कुर्यात्। क्लीं कृष्णाय हृदयाय नमः। गोविन्दाय शिरसे स्वाहा। गोपीजन शिखायै वषट्। वल्लभाय कवचाय हुं। स्वाहा अस्त्राय फट्। तथा च—

चतुःकरणवेदाब्धिनेत्रसंख्याक्षरैः क्रमात् ।
पञ्चाङ्गानि मनोः कुर्यान्मन्त्रविज्जातिसंयुतैः ।
नमः स्वाहा-वषट्-वौषट्-हुंफडन्ताश्च जातयः ॥

ततो दशतत्त्वमूर्तिपञ्जरन्यासौ विधाय किरीटमन्त्रेण व्यापकं यथाशक्ति मुद्रां बद्ध्वा ॐ नमः सुदर्शनाय अस्त्राय फडिति दिग्बन्धनं कृत्वा दशाक्षरोक्तं ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्य शङ्खस्थापनं कृत्वा वैष्णवोक्तपीठमन्वन्तां पीठपूजां विधाय पुनर्ध्यात्वा आवाहनादिपञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं विधाय क्लीमित्याद्य-क्षरैस्तत्तदङ्गेषु न्यासक्रमेण क्लीं कृष्णाय हृदयाय नमः इत्यादिना अङ्गमन्त्रेण च पुनः पञ्चपुष्पाञ्जलीन् दद्यात्। ततो वेण्वादिपूजनं कृत्वा दशाक्षरोक्तावरणपूजाञ्च कृत्वा धूपादिविसर्जनान्तं कर्म समापयेत्। अस्य पुरश्चरणं दशाक्षरपटलोक्तम्।

श्रीकृष्ण का अष्टादशाक्षर मन्त्र—क्लीं कृष्णाय गोविन्दाय गोपीजनवल्लभाय स्वाहा। इसमें अट्ठारह अक्षर हैं। प्रात:कृत्यादि विष्णुमन्त्रोक्त पीठन्यास करके ऋष्यादि न्यास करे।

ऋष्यादि न्यास—नारदऋषये नम: शिरसि। गायत्री छन्दसे नम: मुखे। कृष्णाय देवतायै नम: हृदि। क्लीं बीजाय नम: गुह्ये। स्वाहा शक्तये नम: पादयो:। तब 'ॐ क्लीं कृष्णाय गोविन्दाय गोपीजनवल्लभाय स्वाहा ॐ' से तीन बार हाथ शुद्ध करके करांग न्यास करे।

करन्यास—क्लीं कृष्णाय अंगुष्ठाभ्यां नम:। गोविन्दाय तर्जनीभ्यां स्वाहा। गोपीजन मध्यमाभ्यां वषट्। वल्लभाय अनामिकाभ्यां हुं। स्वाहा कनिष्ठाभ्यां फट्।

हृदयादि न्यास—क्लीं कृष्णाय हृदयाय नम:। गोविन्दाय शिरसे स्वाहा। गोपीजन शिखायै वषट्। वल्लभाय कवचाय हुं। स्वाहा अस्त्राय फट्।

इसके बाद क्लीं कृष्णाय गोविन्दाय गोपीजनवल्लभाय स्वाहा मूल मन्त्र से मस्तक से पाँवों तक और पावों से मस्तक तक व्यापक न्यास करके एक बार 'ॐ' से व्यापक न्यास करे। तब मन्त्रन्यास करे।

मन्त्रवर्णन्यास—

मस्तके—क्लीं नम:	नासिकयो:—यं नम: गों नम:	लिंगे—भां नम:
ललाटे—कृं नम:	मुखे—पीं नम:	जानौ—यं नम:
भ्रूमध्ये—ष्णां नम:	ग्रीवायां—जं नम:	पादयो:—स्वां नम: हां नम:
कर्णयो:—यं नम: गों नम:	हृदि—नं नम:	नाभौ—वं नम:
चक्षुषो:—विं नम: न्दां नम:	कटौ—ल्लं नम:।	

मन्त्रपदन्यास—इस प्रकार मन्त्रन्यास करके 'मस्तके ॐ नम:' से न्यास करे। नेत्रयो: क्लीं कृष्णाय नम:। मुखे गोविन्दाय नम:। हृदि गोपीजन नम:। गुह्ये वल्लभाय नम:। पादयो: स्वाहा नम:। मन्त्रपद न्यास करे। उपयुक्त नियम से पुन: अंगन्यास करे।

तदनन्तर दशाक्षर मन्त्रोक्त दश तत्त्वन्यास और मूर्तिपञ्जर न्यास करके पूर्वोक्त 'किरीट-केयूर' इत्यादि मन्त्र से व्यापक न्यास करे। यथाशक्ति मुद्राप्रदर्शन करके ॐ सुदर्शनाय अस्त्राय फट् से दिग्बन्ध करे। दशाक्षर मन्त्रोक्त 'स्मरेद् वृन्दावने रम्ये' इत्यादि से ध्यान करे। मानसोपचारों से पूजन करे। शंखस्थापन करे। विष्णुमन्त्रोक्त पीठपूजा ध्यान-आवाहनादि पञ्च पुष्पाञ्जलि दानपर्यन्त सभी कर्म करे।

उक्त मन्त्रन्यासक्रम से शरीर के स्थानों में मन्त्रवर्णों से पूजा करे। इसके बाद हृदयादि पञ्चाङ्ग पूजा करे—क्लीं कृष्णाय हृदयाय नम:। गोविन्दाय शिरसे स्वाहा। गोपीजन शिखायै वषट्। वल्लभाय कवचाय हुं। स्वाहा अस्त्राय फट्। पाँच पुष्पाञ्जलि देकर वेणवे

नम: इत्यादि दशाक्षर मन्त्रोक्त आवरण देवताओं की पूजा करे। धूपादि विसर्जनान्त सभी कर्म करें।

इसका पुरश्चरण दशाक्षर मन्त्रवत् होता है।

मन्त्रान्तरम्

शक्तिश्रीपूर्वकश्चाष्टादशार्णो विंशदक्षरः ।

अस्य पूजाप्रयोगः—**प्रातःकृत्यादि वैष्णवोक्तपीठमन्वन्तं पीठन्यासं विधाय ऋष्यादिन्यासं कुर्यात्। शिरसि ब्रह्मणे ऋषये नमः, मुखे गायत्रीच्छन्दसे नमः, हृदि श्रीकृष्णाय देवतायै नमः, गुह्ये क्लीं बीजाय नमः, पादयोः स्वाहा शक्तये नमः।**

ततः कराङ्गन्यासौ—ह्रीं श्रीं क्लीं अंगुष्ठाभ्यां नमः। कृष्णाय तर्जनीभ्यां स्वाहा। गोविन्दाय मध्यमाभ्यां वषट्। गोपीजन अनामिकाभ्यां हुं। वल्लभाय कनिष्ठाभ्यां वौषट्। स्वाहा करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्। एवं हृदयादिषु।

ततो मूलेन व्यापकं कृत्वा मन्त्रपुटितान् मातृकावर्णान् तत्तत्स्थानेषु (ललाटादिषु) न्यसेत्। ततो दशतत्त्वानि विन्यस्य पुनर्मूलेन व्यापकं कुर्यात्।

ततो मन्त्रन्यासः—**मूर्ध्नि ह्रीं नमः, ललाटे श्रीं नमः, भ्रूमध्ये क्लीं नमः, नेत्रयोः कृं नमः, कर्णयोः ष्णां नमः, नसोः यं नमः, वदने गों नमः, चिबुके विं नमः, कण्ठे न्दां, दोर्मूले यं नमः, हृदि गों नमः, उदरे पीं नमः, नाभौ जं नमः, लिङ्गे नं नमः, आधारे वं नमः, कट्यां ल्लं नमः, जान्वोः भां नमः, जङ्घयोः यं नमः, गुल्फयोः स्वां नमः, पादयोः हां नमः**—इति सृष्टिः।

हृदि ह्रीं, उदरे श्रीं, नाभौ क्लीं, लिङ्गे कृं, आधारे ष्णां, कट्यां यं, जान्वोः गों, जङ्घयोः विं, गुल्फयोः न्दां, पादयोः यं, मूर्ध्नि गों, कपाले पीं, भ्रूमध्ये जं, नेत्रयोः नं, कर्णयोः वं, नसोः ल्लं, वदने भां, चिबुके यं, कण्ठे स्वां, दोर्मूले हां—इति स्थितिः।

पादयोः ह्रीं, गुल्फयोः श्रीं, जङ्घयोः क्लीं, जान्वोः कृं, कट्यां ष्णां, आधारे यं, लिङ्गे गों, नाभौ विं, उदरे न्दां, हृदि यं, दोर्मूले गों, कण्ठे पीं, चिबुके जं, वदने नं, नसोः वं, कर्णयोः ल्लं, नेत्रयोः भां, भ्रूमध्ये यं, ललाटे स्वां, मस्तके हां । सर्वत्र नमोऽन्तान् न्यसेत्।—इति संहारन्यासः।

पुनः सृष्टिस्थिती कृत्वा मूर्त्तिपञ्जरं विन्यस्य मूर्त्तिपञ्जरस्य सृष्टिस्थिती विन्यस्य षडङ्गानि न्यसेत्। ह्रीं श्रीं क्लीं हृदयाय नमः। कृष्णाय शिरसे स्वाहा। गोविन्दाय

शिखायै वषट्। गोपीजन कवचाय हुं। वल्लभाय नेत्रत्रयाभ्यां वौषट्। स्वाहा अस्त्राय फट्। तथा च—

सृष्टिस्थिती च विन्यस्य षडङ्गानि समाचरेत्।
गुणाग्निवेदकरणकरणाक्ष्यक्षरैर्मनोः ॥

ततः पूर्ववन्मुद्रादिदर्शनं दिग्बन्धनञ्च कृत्वा किरीटमन्त्रेण व्यापकं विधाय यथाशक्ति मुद्रां बद्ध्वा ध्यायेत्। तद्यथा—

द्वारावत्यां सहस्रार्कभासुरैर्भवनोत्तमैः।
अनल्पैः कल्पवृक्षैश्च परीते मणिमण्डपे ॥
ज्वलद्रत्नमयस्तम्भद्वारतोरणकुड्यके।
फुल्लस्रगुल्लसच्चित्रवितानालम्बिमौक्तिके ॥
पद्मरागस्थलीराजद्रत्नद्योश्च मध्यतः।
अनारतगलद्रत्नधारस्य स्वस्तरोरधः ॥
रत्नदीपावलीभिश्च प्रदीपितदिगन्तरे।
उद्यदादित्यसङ्काशमणिसिंहासनाम्बुजे ॥
समासीनोऽच्युतो ध्येयो द्रुतहाटकसन्निभः।
समानोदित - चन्द्रार्क - तडित्कोटिसमद्युतिः ॥
सर्वाङ्गसुन्दरः सौम्यः सर्वाभरणभूषितः।
पीतवासाश्चक्रशङ्खगदापद्मोज्ज्वलद् भुजः ॥
अनारतच्छलद्रत्नधारौघकलशं स्पृशन्।
वामपादाम्बुजाग्रेण मुञ्चता पल्लवच्छविम् ॥
रुक्मिणीसत्यभामे द्वे मूर्ध्नि रत्नौघधारया।
सिञ्चन्त्यौ दक्षवामस्थे स्वदोःस्थकलशोत्थया ॥
नाग्नजिती सुनन्दा च दिशन्त्यौ कलशौ तयोः।
ताभ्याञ्च दक्षवामस्थे मित्रविन्दासुलक्षणे ॥
रत्नद्योः समुद्धृत्य रत्नपूर्णौ घटौ तयोः।
जाम्बवन्ती सुशीला च दिशन्त्यौ दक्षवामके ॥
बहिःषोडशसाहस्र्यसंख्याताः परितः प्रियाः।
ध्येयाः कनकरत्नौघधाराम्बुकलशोज्ज्वलाः ॥
तद्बहिश्चाष्टनिधयः पूरयन्तो धनैर्धराम्।
तद्बहिर्वृष्णयः सर्वे पुरोवच्च सुरादयः ॥

एवं ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्य शङ्खस्थापनं कुर्यात्।

अस्य पूजायन्त्रम्—षट्कोणमध्यमष्टदलपद्मं विलिख्य षट्कोणमध्ये तु ससाध्यं कामबीजं विलिख्य अवशिष्टैः सप्तदशभिरक्षरैर्वेष्टयेत्। ततः षट्कोणस्य प्राग्रक्षोऽनिलकोणेषु श्रीबीजं अवशिष्टेषु भुवनेश्वरीं लिखेत्। ततः षट्सन्धिषु क्लीं कृष्णाय नमः इति षड्वर्णान् लिखेत्। ततः केशरेषु कामदेवाय विद्महे पुष्पबाणाय धीमहि तन्नोऽनङ्गः प्रचोदयात्—इति गायत्र्यास्त्रीणि त्रीण्यक्षराणि पूर्वादिक्रमेण विलिखेत्। ततः पत्रेषु पूर्वादिक्रमेण नमः कामदेवाय सर्वजनप्रियाय सर्वजनसम्मोहनाय ज्वल ज्वल प्रज्वल सर्वजनस्य हृदयं मम वशं कुरु कुरु स्वाहा इति मालामन्त्रस्य षट्षडक्षराणि दलेषु विलिखेत्। मालामन्त्रमाह शारदायाम्—

नमोऽन्ते कामदेवाय वदेत् सर्वजनन्ततः ।
प्रियाय सर्ववर्णान्ते जनसम्मोहनाय च ॥
ज्वलद्वयं प्रज्वलान्तं वदेत् सर्वजनस्य च ।
हृदयं ममशब्दान्ते वशं कुरुयुगं शिरः ।
मालामनुरयञ्चाष्टचत्वारिंशतिकाक्षरैः ॥

तद्बाह्ये मातृकया संवेष्टयेत्। ततो भूविम्बे दिक्षु च श्रीबीजं विदिक्षु मायाबीजं विलिखेत्। तद्बाह्ये अष्टवज्राणि लिखेत्। तथा च—

विलिप्य गन्धपङ्केन लिखेदष्टदलाम्बुजम् ।
कर्णिकायान्तु षट्कोणं ससाध्यं तत्र मन्मथम् ॥
शिष्टैस्तं सप्तदशभिरक्षरैर्वेष्टयेत् स्मरम् ।
प्राग्रक्षोऽनिलकोणेषु श्रियं शिष्टेषु संविदम् ॥
षडक्षरं षट्सन्धिषु केशरेषु त्रिशस्त्रिशः ।
विलिखेत् स्मरगायत्रीं मालामन्त्रं दलाष्टके ॥
षट्शः संलिख्य तद्बाह्ये वेष्टयेन्मातृकाक्षरैः ।
भूविम्बञ्च लिखेद्बाह्ये श्रीमाये दिग्विदिक्ष्वपि ।
भूगृहं चतुरस्रं स्यादष्टवज्रविभूषितम् ॥

एतद्यन्त्रमष्टादशाक्षर-द्वाविंशत्यक्षर-द्वादशाक्षर-दशाक्षर-चतुर्दशाक्षर-एकादशाक्षराणामिति। यत्तु—

पद्ममष्टपलाशन्तु चतुरस्रं सुलक्षणम् ।
चतुर्द्वारसमायुक्तं कामगर्भितकर्णिकम् ।
सामान्ययन्त्रमुद्दिष्टमष्टादशाक्षरे शृणु ॥
चतुरस्रं चतुर्द्वारं पद्ममष्टदलान्वितम् ।

षट्कोणं गर्भकामाख्यं सप्तदशार्णवेष्टितम् ।
षडक्षरं मनुवरं षट्कोणे विलिखेत्ततः ॥

इति गौतमीये अष्टादशाक्षरदशाक्षरयोर्यद्विशेषमुक्तं तदशक्तविषयम्। अन्यथा तापिन्यादिविरोधः स्यात्।

ततः पूर्वोक्तपीठमन्वन्तां पीठपूजां विधाय पुनर्ध्यात्वा आवाहानादि-पञ्चपुष्पापञ्जलिदानपर्यन्तं विधाय सृष्टिं स्थितिं षडङ्गञ्च सम्पूज्य ॐ किरीटाय नमः एवं कुण्डलाभ्यां शङ्खाय चक्राय गदायै पद्माय वनमालायै श्रीवत्साय कौस्तुभाय सर्वत्र प्रणवादिनमोऽन्तेन पूजयेत्। पुनः पञ्चपुष्पाञ्जलीन् दत्त्वा आवरणपूजामारभेत्। यथा—षट्कोणेष्वग्न्यादि ह्रीं श्रीं क्लीं हृदयाय नमः। कृष्णाय शिरसे स्वाहा इत्यादिना षडङ्गानि पूजयेत्। ततो दिक्पत्रस्य मूले ॐ वासुदेवाय नमः। एवं सङ्कर्षणाय प्रद्युम्नाय अनिरुद्धाय प्रणवादि-नमोऽन्तेन पूजयेत्।

एवं विदिक्पत्रमूलेषु—ॐ शान्त्यै नमः। एवं श्रियै सरस्वत्यै रत्यै। पत्रेषु पूर्वादि पूर्ववत् रुक्मिण्याद्याः पूजयेत्। अत्र षोडशसहस्त्रमहिषीभ्यो नमः। तद्बहिः पूर्वादि इन्द्रनिधिं नीलनिधिं मुकुन्दनिधिं मकरनिधिं आनन्दनिधिं कच्छपनिधिं पद्मनिधिं शङ्खनिधिञ्च पूजयेत्। तद्बहिरिन्द्रादीन् वज्रादींश्च पूजयेत्। ततो धूपादिविसर्जनान्तं कर्म समापयेत्। अस्य पुरश्चरणं चतुर्लक्षजपः। तथा च—

ध्यात्वैवं परमात्मानं विंशत्यर्णं मनुं जपेत् ।
चतुर्लक्षं हुनेदाज्यैश्चत्वारिंशत्सहस्त्रकम् ॥

श्रीकृष्ण का विंशाक्षर मन्त्र—ह्रीं श्रीं क्लीं कृष्णाय गोविन्दाय गोपीजनवल्लभाय स्वाहा—यह श्रीकृष्ण का विंशाक्षर मन्त्र है।

सामान्य पूजापद्धति के क्रम से प्रातःकृत्यादि करके विष्णुमन्त्रोक्त पीठन्यास करके ऋष्यादि न्यास करे।

ऋष्यादि न्यास—शिरसि ब्रह्मणे ऋषये नमः। मुखे गायत्री छन्दसे नमः। हृदि श्रीकृष्णाय देवतायै नमः। गुह्ये क्लीं बीजाय नमः। पादयोः स्वाहा शक्तये नमः।

करन्यास—ह्रीं श्रीं क्लीं अंगुष्ठाभ्यां नमः। कृष्णाय तर्जनीभ्यां स्वाहा। गोविन्दाय मध्यमाभ्यां वषट्। गोपीजन अनामिकाभ्यां हुं। वल्लभाय कनिष्ठाभ्यां वौषट्। स्वाहा करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्।

षडंगन्यास—ह्रीं श्रीं क्लीं हृदयाय नमः। कृष्णाय शिरसे स्वाहा। गोविन्दाय शिखायै वषट्। गोपीजन कवचाय हुं। वल्लभाय नेत्रत्रयाय वौषट्। स्वाहा अस्त्राय फट्।

मूल मन्त्र से व्यापक न्यास करे। ह्रीं श्रीं क्लीं कृष्णाय गोपीजनवल्लभाय स्वाहा। अं ह्रीं श्रीं क्लीं कृष्णाय गोविन्दाय गोपीजनवल्लभाय स्वाहा के क्रम से अकारादि क्षकारान्त सभी मातृकावर्णों का मस्तकादि सभी मातृकास्थानों में न्यास करे। तब दशाक्षर मन्त्रोक्त दश तत्त्वन्यास और मूर्तिपञ्जर न्यास करे। तब मूल मन्त्र से न्यास करे। जैसे—

मन्त्रवर्णों से सृष्टिन्यास—

मूर्ध्नि ह्रीं नम:	चिबुके विं नम:	आधारे वं नम:
ललाटे श्रीं नम:	कण्ठे न्दां नम:	कट्यां ल्लं नम:
भ्रूमध्ये क्लीं नम:	नेत्रयो: कृं नम:	जान्वो: भां नम:
नेत्रयो: कृं नम:	कर्णयो: ष्णां नम:	जंघयो: यं नम:
कर्णयो: ष्णां नम:	नासिकायां यं नम:	गुल्फयो: स्वां नम:
नासिकायां यं नम:	नाभौ जं नम:	पादयो: हां नम:
वदने गों नम:	लिंगे नं नम:	

मन्त्रवर्णों से स्थितिन्यास—

हृदि ह्रीं नम:	जंघयो: विं नम:	कर्णयो: वं नम:
उदरे श्रीं नम:	गुल्फयो: न्दां नम:	नासायां: ल्लं नम:
नाभौ क्लीं नम:	पादयो: यं नम:	वदने भां नम:
लिंगे कृं नम:	मूर्ध्नि गों नम:	चिबुके यं नम:
आधारे ष्णां नम:	कपाले पीं नम:	कण्ठे स्वां नम:
कट्यां यं नम:	भ्रूमध्ये जं नम:	दोर्मूले हां नम:
जान्वो: गों नम:	नेत्रयो: नं नम:	

संहारन्यास—

पादयो: ह्रीं नम:	आधारे यं नम:	दोर्मूले गों नम:	कर्णयो: ल्लं नम:
गुल्फयो: श्रीं नम:	लिंगे गों नम:	कण्ठे पीं नम:	नेत्रयो: भां नम:
जंघयो: क्लीं नम:	नाभौ विं नम:	चिबुके जं नम:	भ्रूमध्ये यं नम:
जान्वो: कृं नम:	उदरे न्दां नम:	वदने नं नम:	ललाटे स्वां नम:
कट्यां ष्णां नम:	हृदि यं नम:	नसो: वं नम:	मस्तके हां नम:

सृष्टि-स्थिति-संहृतिन्यास करके पुन: सृष्टि-स्थिति न्यास करे। मूर्तिपञ्जर न्यास करे। तब श्रीं ह्रीं क्लीं हृदयाय नम: आदि से षडंग न्यास करे। तब यथाविधि मुद्रा का प्रदर्शन

करे। ॐ सुदर्शनाय अस्त्राय फट् से दिग्बन्ध करे। किरीटकेयूर आदि मन्त्र से व्यापक न्यास करे। तब निम्नवत् ध्यान करे—

द्वारावत्यां सहस्रार्कभासुरैर्भवनोत्तमैः।
अनल्पैः कल्पवृक्षैश्च परीते मणिमण्डपे।।
ज्वलद्रत्नमयस्तम्भद्वारतोरणकुड्यके ।
फुल्लस्रगुल्लसच्चित्रवितानालम्बिमौक्तिके ।।
पद्मरागस्थलीराजद्रत्ननद्योश्च मध्यतः।
अनारतगलद्रत्नधारस्य स्वस्तरोरधः।।
रत्नदीपावलीभिश्च प्रदीपितदिगन्तरे।
उद्यदादित्यसङ्काशमणिसिंहासनाम्बुजे ।।
समासीनोऽच्युतो ध्येयो द्रुतहाटकसन्निभः।
समानोदितचन्द्रार्कतड़ित्कोटिसमद्युतिः ।।

द्वारका नगरी में सहस्त्रों सूर्य की किरणों जैसी आभा वाला भवन है। बहुत से कल्पवृक्षों द्वारा घिरा हुआ मणिजटित मण्डप है, जिसके खम्भे, द्वार, तोरण और दीवालें उज्ज्वल रत्नों से युक्त हैं। मण्डप के मध्य में विलक्षण वितान अर्थात् चन्दोवा है। उसके चारो ओर विकसित पुष्पों और मोतियों की मालायें लटक रही हैं। पद्मरागमणियों से विभूषित तटों वाली दो रत्ननदियों के मध्य में निरन्तर रत्नों की वर्षा करने वाले कल्प-तरु के नीचे वह मण्डप है। चारो ओर रत्नदीपावली द्वारा सारी दिशायें प्रकाशमान हैं। ऐसे मण्डप के मध्य में उदीयमान सूर्य के समान उज्ज्वल मणिजटित सिंहासन पर पद्मासीन तप्त स्वर्ण के समान शरीराभ वाले अच्युत श्रीकृष्ण का ध्यान करना चाहिये। उदीयमान करोड़ों चन्द्रमा, सूर्य और विद्युत् के समान उनकी आभा है।

सर्वाङ्गसुन्दरः सौम्यः सर्वाभरणभूषितः।
पीतवासाश्चक्रशंखगदापद्मोज्ज्वलद्भुजः ।।
अनारतच्छलद्रत्नधारौघकलशं स्पृशन्।
वामपादाम्बुजाग्रेण मुञ्चता पल्लवच्छविम्।।
रुक्मिणीसत्यभामे द्वे मूर्ध्नि रत्नौघधारया।
सिञ्चन्त्यौ दक्षवामस्थे स्वदोःस्थकलशोत्थया।।
नाग्नजिती सुनन्दा च दिशन्त्यौ कलशौ तयोः।
ताभ्यां च दक्षवामस्थे मित्रविन्दासुलक्षणे।।
रत्ननद्योः समुद्धृत्य रत्नपूर्णौ घटौ तयोः।
जाम्बवन्ती सुशीला च दिशन्त्यौ दक्षवामके।।
बहिः षोडशसाहस्त्र्यसंख्याता परितः प्रियाः।।
ध्येया कनकरत्नौघधाराम्बुकलशोज्ज्वलाः।

तद्वहिश्चाष्टनिधय: पूर्णयन्तो धनैर्धराम्।
तद्वहिर्वृष्णय: सर्वे पुरोवच्च सुरादय:।।

भगवान् अच्युत श्रीकृष्ण का सारा शरीर अतीव सुन्दर और सौम्य है। सभी प्रकार के आभूषणों से विभूषित है। वस्त्र पीताम्बर है। हाथों में शंख, चक्र, गदा और पद्म हैं। दाँयें रुक्मिणी और बाँयें सत्यभामा खड़ी हैं। अपने हाथों में लिये कलशों से निकलती हुई रत्नधारा से उनके मस्तक पर अभिषेक कर रही हैं। नाग्नजिती और सुनन्दा दोनों रुक्मिणी और सत्यभामा को कलश देती हैं। उनके दाँयें और बाँयें खड़ी मित्रविन्दा और सुलक्षणा रत्ननदी से रत्न निकालकर दोनों कलशों को भरती जाती हैं। जाम्बवन्ती और सुशीला उन दोनों के दाँयें-बाँयें खड़ी होकर उन्हें निर्देश कर रही हैं। इन सबके पीछे सोलह हजार सुन्दर स्त्रियाँ रत्नधारा से युक्त स्वर्णकलश अपने हाथों में लिए शोभायमान हैं। उन सबके बाहर अष्टनिधियाँ पृथिवी को धन-वैभव से परिपूर्ण कर रही हैं। उनके बाहर सभी यादवगण एवं देवगण बैठे हैं। इस मन्त्र के लिये श्रीकृष्ण का पूजायन्त्र इस प्रकार का बनता है— पहले षट्कोण बनावे। उसके बाहर अष्टदल पद्म बनावे। इसके बाहर चार द्वारों से युक्त चतुरस्र भूपुर बनावे।

श्रीकृष्णयन्त्र (शारदातिलकोक्त)
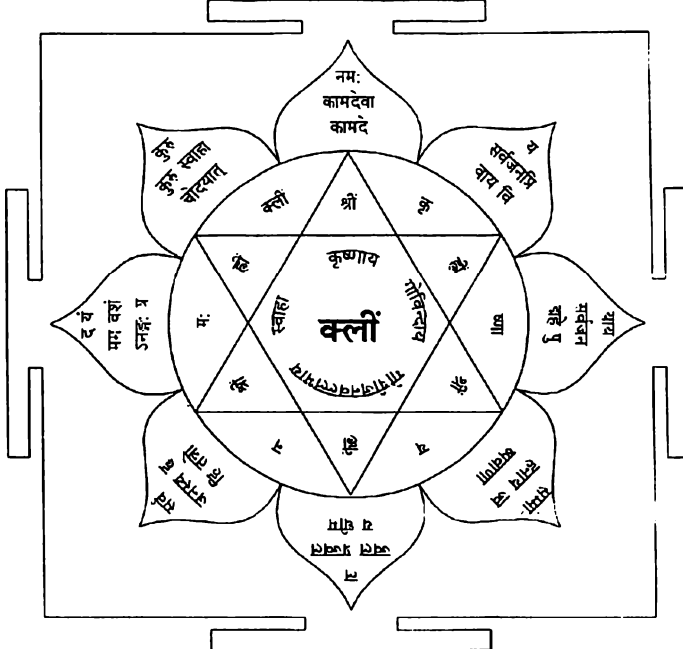
षट्कोण के मध्य में 'क्लीं साध्य' लिखकर इसके चारो ओर 'कृष्णाय गोविन्दाय गोपीजनवल्लभाय स्वाहा'—यह सप्तदशाक्षर मन्त्र लिखे। षट्कोण के पूर्व, नैर्ऋत्य और वायव्य के तीन कोणों में श्रीं और शेष तीन कोणों में 'ह्रीं' लिखे, छहो सन्धियों में क्लीं कृ, ष्णा, य, न, मः—इन छः अक्षरों को लिखे। इसके बाद 'कामदेवाय विद्महे पुष्प-वाणाय धीमहि तन्नोऽनङ्गः प्रचोदयात्' के तीन-तीन अक्षरों को आठों दलों के मूल में लिखे। दलाग्रों में 'नमः कामदेवाय सर्वजनसम्मोहनाय ज्वल ज्वल प्रज्वल सर्वजनस्य हृदयं मम वशं कुरु कुरु स्वाहा—इस मालामन्त्र के छः-छः अक्षरों को लिखे।

शारदातिलक में इस यन्त्र का दूसरा प्रकार है। पद्म के बहिर्भाग में 'अ' से 'क्ष' तक के मातृकावर्णों का वेष्टन है। लिखा है कि अष्टदल पद्म के बाहर चतुरस्र भूपुर अंकित करके पूर्व-दक्षिण-पश्चिम-उत्तर में 'श्रीं' तथा अग्नि, नैर्ऋत्य, वायु और ईशान में 'ह्रीं' अंकित करे। चतुरस्र के बाहर आठ दिशाओं में आठ वज्र बनावे। चन्दन लेप लगाकर यन्त्र बनावे। अट्ठारह, बाईस, बारह, दश, चौदह, ग्यारह वर्णों के मन्त्र से इसी यन्त्र में पूजन करे।

श्रीकृष्णयन्त्र (गौतमीयतन्त्रोक्त)
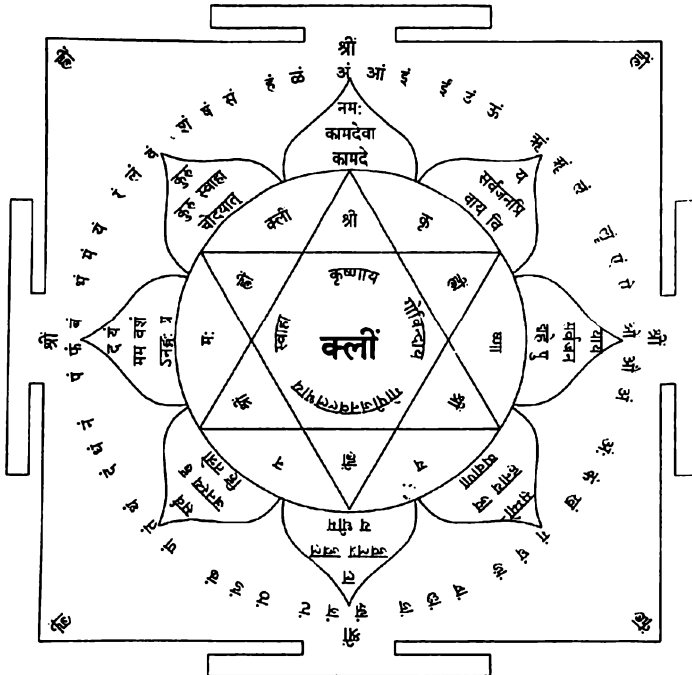
गौतमीय तन्त्र में दशाक्षर और अष्टाक्षर मन्त्रों के सम्बन्ध में दो प्रकार के यन्त्रों का वर्णन है। दशाक्षर के पूजन के लिये जो यन्त्र पहले दिया जा चुका है, उसमें अष्टदल के बाहर चतुरस्र भूपुर है और कर्णिका में क्लीं बीज अंकित है। यह इसी प्रकार का बताया गया है। अष्टादशाक्षर मन्त्र के पूजन यन्त्र में चतुरस्र चतुर्द्वार बनाकर उसके मध्य में अष्टदल पद्म और पद्म के मध्य में षट्कोण बनावे। षट्कोण के मध्य में क्लीं बीज लिखकर 'कृष्णाय गोविन्दाय गोपीजनवल्लभाय स्वाहा'—इस सप्तदशाक्षर मन्त्र से उसे वेष्टित करे। षट्कोणों में क्लीं, कृ, ष्णा, य, न, मः—इन छः वर्णों को लिखे। श्रीकृष्ण की पूजा में उक्त विविध यन्त्रों में से कोई एक यन्त्र बनाकर पूजा करे। बाद के दो यन्त्र असमर्थ साधक के लिये और प्रथम यन्त्र समर्थ साधक के लिये विहित है। अन्यथा तापिन्यादि शक्तियों के विरोध का सामना करना पड़ता है। ऊपर वर्णित चार प्रकार के यन्त्रों में दो तो एक समान हैं, जिनमें अष्टदल और भूपुर हैं। एक यन्त्र दशाक्षर में दिया गया है। दूसरा यन्त्र इस अष्टाक्षर मन्त्र में अंकित है। तीसरा यन्त्र पिछले पृष्ठ पर अंकित है।

पूजन—विष्णुमन्त्रोक्त पीठपूजा करके फिर ध्यान-आवाहनादि से पञ्च पुष्पाञ्जलि तक सभी कर्म करे। तब सृष्टि-स्थिति और षडंग पूजा करके इस प्रकार से पूजन करे—ॐ किरीटाय नमः। ॐ कुण्डलाय नमः। ॐ शंखाय नमः। ॐ चक्राय नमः। ॐ गदाय नमः। ॐ पद्माय नमः। ॐ वनमालायै नमः। ॐ श्रीवत्साय नमः। ॐ कौस्तुभाय नमः। तब पाँच पुष्पाञ्जलि देकर आवरण पूजा करे।

षट्कोण में अग्न्यादि क्रम से षडंग पूजन करे—ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं हृदयाय नमः। ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं कृष्णाय शिरसे स्वाहा। ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं गोविन्दाय शिखायै वषट्। ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं गोपीजन कवचाय हुं। ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं वल्लभाय नेत्रत्रयाय वौषट्। ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं स्वाहा अस्त्राय फट्।

अष्टदल में पूर्वादि चारो दिशाओं के चारो पत्रमूलों में—ॐ वासुदेवाय नमः। ॐ सङ्कर्षणाय नमः। ॐ प्रद्युम्नाय नमः। ॐ अनिरुद्धाय नमः से पूजन करे।

आग्नेयादि चार कोणों के चार पत्रों के मूल में—ॐ शान्त्यै नमः। ॐ श्रियै नमः। ॐ सरस्वत्यै नमः। ॐ रत्यै नमः से पूजा करे।

आठो दलों के मध्य में पूर्वादि क्रम से आठ पटरानियों का पूजन करे—ॐ रुक्मिण्यै नमः। ॐ सत्यभामायै नमः। ॐ नाग्नजित्यै नमः। ॐ सुनन्दायै नमः। ॐ मित्रविन्दायै नमः। ॐ सुलक्षणायै नमः। ॐ जाम्बवत्यै नमः। ॐ सुशीलायै नमः।

आठो दलाग्रों में 'ॐ षोड़शसहस्रमहिषीभ्यो नमः' से दो-दो हजार महिषियों का पूजन करे। अष्टदल और भूपुर के मध्य भागों में पूर्वादि क्रम से इनकी पूजा करे—ॐ इन्द्रनिधये नमः। ॐ नीलनिधये नमः। ॐ मुकुन्दनिधये नमः। ॐ आनन्दनिधये नमः। ॐ कच्छपनिधये नमः। ॐ पद्मनिधये नमः। ॐ शंखनिधये नमः।

भूपुर में इन्द्रादि दश दिक्पालों और वज्रादि दश आयुधों की पूजा करे। इसके बाद धूपादि विसर्जनान्त सभी कर्म करके पूजा पूर्ण करे।

इस मन्त्र के पुरश्चरण में चार लाख जप और घी द्वारा चालीस हजार हवन करे।

मन्त्रान्तरम्

वाग्भवं कामबीजञ्च कृष्णाय भुवनेश्वरी।
गोविन्दाय रमा गोपीजनवल्लभङेशिरः॥
चतुर्दशस्वरोपेतो भृगुः सर्गी तदूर्ध्वतः।
द्वाविंशत्यक्षरो मन्त्रो वागीशत्वप्रदायकः॥

अस्य पूजाप्रयोगः—प्रातःकृत्यादिवैष्णवोक्तपीठमन्वन्तं पीठन्यासं विधाय अष्टादशाक्षरवदृष्यादिन्यासं कराङ्गन्यासौ विधाय मुद्रादिदिग्बन्धनञ्च कृत्वा ध्यायेत्। यथा—

वामोर्ध्वहस्ते दधतं विद्यासर्वस्वपुस्तकम्।
अक्षमालाञ्च दक्षोर्ध्वे स्फाटिकीं मातृकामयीम्॥
शब्दब्रह्ममयं वेणुमधःपाणिद्वयेरितम्।
गायन्तं पीतवसनं श्यामलं कोमलच्छविम्॥
बर्हिबर्हकृतोत्तसं सर्वज्ञं सर्ववेदिभिः।
उपासितं मुनिगणैरुपतिष्ठेद्धरिः सदा॥

एवं ध्यात्वा विंशत्यर्णवत् पूजयेत्। विशेषस्तु—सृष्टिस्थिति तत्पूजनं नास्ति तद्वर्णाभावात्। अस्य पुरश्चरणं चतुर्लक्षजपः। तथा च—

चतुर्लक्षं जपेन्मन्त्रमिमं मन्त्री सुसंयतः।
पलाशपुष्पैः स्वादुक्तैश्चत्वारिंशत्सहस्रकम्।
जुहुयात्कर्मणानेन मन्त्रसिद्धिर्भवेद्ध्रुवम्॥

श्रीकृष्ण का द्वाविंशाक्षर मन्त्र—ऐं क्लीं कृष्णाय ह्रीं गोविन्दाय श्रीं गोपीजनवल्लभाय स्वाहा सौः। श्रीकृष्ण का यह बाईस अक्षरों का मन्त्र साधक को वागीशत्व प्रदान करता है।

यन्त्र—पूर्वोक्त तीनों यन्त्रों में से किसी यन्त्र में इसका पूजन करे।

पूजा—पहले सामान्य पूजा पद्धति से प्रातःकृत्यादि करके वैष्णवोक्त पीठमन्त्र के समान न्यास करके ऋष्यादि न्यास करे। यथाविधि मुद्राप्रदर्शन करके दिग्बन्ध करके निम्नवत् ध्यान करे—

वामोर्ध्वहस्ते दधतं विद्यासर्वस्वपुस्तकम्।
अक्षमालाञ्च दक्षोर्ध्वे स्फाटिकीं मातृकामयीम्।।

शब्दब्रह्ममयं वेणुमध:पाणिद्वयेरितम्।
गायन्तं पीतवसनं श्यामलं कोमलच्छविम्।।
बर्हिबर्हकृतोत्तसं सर्वज्ञं सर्ववेदिभि:।
जपासितं मुनिगणैरुपतिष्ठद्धरिं सदा।।

श्रीकृष्ण अपने बाँयें ऊपरी हाथ में विद्यासर्वस्व पुस्तक धारण किए हुए हैं। दाँयें ऊपरी हाथ में मातृकावर्णमयी स्फटिक की अक्षमाला है। निचले दोनों हाथों में शब्दब्रह्ममयी वंशी बजा रहे हैं। वे पीताम्बरधारी, श्याम वर्ण, कोमल शरीर वाले हैं। शिर पर मोरपंख किरीट है। सभी वेदों को जानने वाले मुनियों के द्वारा उनकी उपासना की जाती है। ऐसे भगवान् श्रीहरि कृष्ण का ध्यान सदैव करना चाहिये।

ध्यान के बाद बीस वर्णात्मक मन्त्रोक्त पूजा प्रणाली से सभी पूजा कर्म करे। केवल सृष्टि-स्थितिन्यास और मातृकास्थान में पूजा न करे।

इस मन्त्र के पुरश्चरण में चार लाख जप और चालीस हजार हवन त्रिमधुराक्त पलाशपुष्पों से करे। इससे निश्चित ही मन्त्रसिद्धि मिलती है।

मन्त्रान्तरम्

वाग्भवं कामबीजञ्च मायालक्ष्मीमनन्तरम् ।
दशार्णो मनुवर्यश्च भवेच्छक्राक्षरो मनुः ॥

ब्रह्मसंहितायाम्—

वाग्भवं भुवनेशानीं श्रीबीजं कामबीजकम् ।
दशार्णो मनुवर्यश्च भवेच्छक्राक्षरोऽपरः ॥

अस्य पूजाप्रयोगः—प्रातःकृत्यादिवैष्णवोक्तपीठन्यासं कृत्वा ऋष्यादिन्यासं कुर्यात्। शिरसि ब्रह्मणे ऋषये नमः, मुखे गायत्रीछन्दसे नमः, हृदि श्रीकृष्णाय देवतायै नमः। अस्य न्यासपूजाजपहोमादि सर्वं दशाक्षरवत्कार्यम्। ध्याने तु विशेषः—

ध्यायेद् वृन्दावने रम्ये काञ्चनीभूमिमध्यगे ।
नानापुष्पलताकीर्णे वृक्षषण्डैश्च मण्डिते ॥
कल्पाटवीतले सम्यक् श्रीमन्माणिक्यमण्डपे ।
नारदाद्यैर्मुनिश्रेष्ठैः स्तवद्भिः परिवारिते ॥
रत्नसिंहासने ध्यायेदुपविष्टं कुजोपरि ।
सजलजलदश्यामं रक्तपद्मायतेक्षणम् ॥
रक्तपद्मस्फुरत्पादपाणिभ्यां परिमण्डितम् ।

नानारत्नसमारब्धभूषणैः परिभूषितम् ॥
श्रीयुक्तवक्षसि भ्राजत्कौस्तुभोद्भासिताम्बरम् ।
तारहारावलीरम्यं श्रीवत्साङ्कितवक्षसम् ॥
रोचनातिलकप्रान्तकुन्तलभ्रमरायितम् ।
कन्दर्पचापसदृशचिल्लिमालाविराजितम् ॥
अनेकरत्नसंयुक्तं स्फुरन्मकरकुण्डलम् ।
बर्हिबर्हकृतोत्तंसं सर्वज्ञं सर्ववेदिभिः ।
उपासितं मुनिगणैरुपतिष्ठेद्धरिं सदा ॥ इति ।

श्रीकृष्ण का चतुर्दशाक्षर मन्त्र—ऐं क्लीं ह्रीं श्रीं गोपीजनवल्लभाय स्वाहा। ब्रह्मसंहिता में श्रीकृष्ण के इस चतुर्दशाक्षर मन्त्र का वर्णन है।

यन्त्र—पूर्ववर्णित तीन यन्त्रों में से कोई।

पूजा—सामान्य पूजा पद्धति के क्रम से प्रात:कृत्यादि करे। विष्णुमन्त्रोक्त पीठन्यास करे। तब निम्नवत् ऋष्यादि न्यास करे—ब्रह्मणे ऋषये नम: शिरसि। गायत्री छन्दसे नम: मुखे। श्रीकृष्णाय देवतायै नम: हृदये।

इस मन्त्र के न्यास-पूजा-जप होमादि सभी कार्य दशाक्षर मन्त्रोक्त पूजा पद्धति से करे। केवल ध्यान भिन्न है—

ध्यायेद् वृन्दावने रम्ये काञ्चनीभूमिमध्यगे।
नानापुष्पलताकीर्णे वृक्षषण्डैश्च मण्डिते।।
कल्पाटवीतले सम्यक् श्रीमन्माणिक्यमण्डपे।
नारदाद्यैर्मुनिश्रेष्ठै: स्तवद्भि: परिवारिते।।
रत्नसिंहासने ध्यायेदुपविष्टं कुजोपरि।
सजलजलदश्यामं रक्तपद्मायतेक्षणम्।।
रक्तपद्मस्फुरत्पादपाणिभ्यां परिमण्डितम्।
नानारत्नसमाबद्धभूषणै: परिभूषितम्।।
श्रीयुक्तवक्षसि भ्राजत्कौस्तुभोद्भासिताम्बरम्।
तारहारावलीरम्यं श्रीवत्सांकितवक्षसम्।।
रोचनातिलकप्रान्तकुन्तलभ्रमरायितम् ।
कन्दर्पचापसदृशचिल्लिमालाविराजितम् ।।
अनेकरत्नसंयुक्तं स्फुरन्मकरकुण्डलम्।
बर्हिबर्हकृतोत्तंसं सर्वज्ञं सर्ववेदिभि:।।
उपासितैर्मुनिगणैरुपतिष्ठेद्धरिं सदा।।

सुन्दर वृन्दावन में स्वर्णाभ भूमि के मध्य विविध पुष्पलताओं से युक्त एवं विशाल वृक्षों से सुशोभित कल्पवृक्ष के नीचे माणिक्य से निर्मित मण्डप है। उस मण्डप में रत्नसिंहासन में कमल पर बैठे हुए श्रीकृष्ण हैं। उनका वर्ण जलपूर्ण मेघ के समान श्याम है। लाल कमल की पंखुड़ियों के समान विस्तृत नेत्रों वाले हरि का ध्यान करना चाहिये। उनके हाथों और पैरों की शोभा लाल कमल के समान है। विविध रत्नों से जटित आभूषणों से वे युक्त हैं। श्रीयुक्त वक्ष पर कौस्तुभमणि से प्रकाशित वस्त्र है। तारों के समान सुन्दर हार गले में है। वक्ष पर श्रीवत्सचिह्न सुशोभित है। गोरोचन के तिलक के इर्द-गिर्द घुंघराले केश भौंरों के समान दिखाई देते हैं। कामदेव के धनुष के समान दोनों भौंहें हैं। कानों में मकराकृत अनेक रत्नों वाले कुण्डल शोभित हैं। मोरपंख का किरीट शिर पर है। सर्वज्ञ मुनिगण इस प्रकार के सर्वज्ञ भगवान् कृष्ण की सदा उपासना करते हैं। नारदादि श्रेष्ठ मुनि भगवान् का स्तवन चारो दिशाओं में खड़े होकर करते हैं।

मन्त्रान्तरम् (एकाक्षरी)

कामाक्षरं धरासंस्थं शान्तिविन्दुविभूषितम् ।
त्रैलोक्यमोहनो विष्णुः कथितस्तव यत्नतः ॥

अस्य पूजाप्रयोगः—प्रातःकृत्यादि-वैष्णवोक्तपीठशक्तिपर्यन्तं विन्यस्य तदुपरि पक्षिराजाय स्वाहेति पीठमनुं न्यसेत्। ततः ऋष्यादिन्यासः। तद्यथा—शिरसि सम्मोहनऋषये नमः, मुखे गायत्रीच्छन्दसे नमः, हृदि त्रैलोक्यसम्मोहनाय विष्णवे नमः। तदुक्तम्—

ऋषिः सम्मोहनच्छन्दो गायत्री परिकीर्त्तिता ।
त्रैलोक्यमोहनो विष्णुर्देवता समुदीरिता ॥

ततः कराङ्गन्यासौ—क्लां अंगुष्ठाभ्यां नमः इत्यादि। क्लां हृदयाय नमः इत्यादि। तथा च निबन्धे—

दीर्घषट्कयुजानेन कामबीजेन कल्पयेत् ।

ततो बाणन्यासः—अंगुष्ठे द्रां शोषणबाणाय नमः। तर्जन्योः द्रीं मोहनबाणाय नमः। मध्यमयोः क्लीं सन्दीपनबाणाय नमः। अनामिकयोः ब्लूं तापनबाणाय नमः। कनिष्ठयोः सः मादनबाणाय नमः। तथा—मस्तकमुखहृदयगुह्यपादेषु न्यसेत्। तथा च निबन्धे—

द्रामाद्यं शोषणं पूर्वं द्रीमाद्यं मोहनं ततः ।
सन्दीपनाख्यं क्लीमाद्यं ब्लूमाद्यं तापनं पुनः ।
सर्गान्तभृगुणा भूयो मादनं पञ्चमं न्यसेत् ॥

ततो ध्यायेत्—

भग्नविद्रुमसङ्काशं सर्वतेजोमयं वपुः ।
किरीटिनं कुण्डलिनं केयूरवलयान्वितम् ।।
मुक्तासद्रत्नसन्नद्धतुलाकोटिसमुज्ज्वलम् ।
नानालङ्कारसुभगं पीताम्बरयुगावृतम् ।।
गरुडोपरिसन्नद्धं रक्तपङ्कजमध्यगम् ।
उत्तप्तहेमसङ्काशां लक्ष्मीं वामोरुसंस्थिताम् ।।
सर्वालङ्कारसुभगां शुक्लवासोयुगावृताम् ।
सकामां लीलया देवं मोहयन्तं पुनः पुनः ।।
शङ्खचक्रगदापद्मपाशांकुशधनुःशरान् ।
धारयन्तं जगन्नाथं रक्तपद्मारुणेक्षणम् ।।

एवं ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्य शङ्खस्थापनं विधाय न्यासक्रमेण दशाक्षर-वत्पीठपूजां कृत्वा पुनर्ध्यानावाहनादिपञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं विधाय षडङ्गानि सम्पूज्य न्यासक्रमेण देवशरीरे पञ्चबाणान् सम्पूज्य ॐ किरीटाय नमः; एवं कुण्डलाय शङ्खाय चक्राय गदायै पद्माय पाशाय अंकुशाय धनुषे शराय इति हस्तेषु पूजयेत्। स्तनोद्र्ध्वे श्रीवत्साय कौस्तुभाय, गले वनमालायै, नितम्बे पीत-वसनाय, वामाङ्गे श्रीं लक्ष्म्यै नमः। सर्वत्र प्रणवादिनमोऽन्तेन पूजयेत्। ततः केशरेषु अग्न्यादिकोणेषु मध्ये दिक्षु च क्लीं हृदयाय नमः, क्लीं शिरसे स्वाहा इत्यादि षडङ्गानि पूजयेत्। ततः पूर्वादिदिक्षु चतुरो बाणान् सम्पूज्य कोणेषु पञ्चमं बाणं पूजयेत्। पत्रेषु ॐ लक्ष्म्यै नमः। एवं सरस्वत्यै रत्यै प्रीत्यै कीर्त्त्यै कान्त्यै तुष्ट्यै पुष्ट्यै तद्बहिर्लोकपालान् पूजयेत्। अत्र वज्रादिपूज्यं नास्ति अनुक्तत्वात्। ततो धूपादिविसर्जनान्तं कर्म समापयेत्। अस्य पुरश्चरणं द्वादशलक्षजपः। तथा च—

रविलक्षं जपेन्मन्त्रं जुहुयात्तद्दशांशतः ।
अमृतत्रयसिक्तेन पायसेन विधानवित् ।
अथवा रविसाहस्त्र्यं हुनेत्तावच्च तर्पयेत् ।।

श्रीकृष्ण का एकाक्षर मन्त्र—श्रीकृष्ण के एकाक्षर मन्त्र 'क्लीं' का जप करके साधक तीनों लोकों को मुग्ध कर सकता है। इसका यन्त्र पूर्ववत् होता है।

पूजा—सामान्य पूजा पद्धति से प्रातःकृत्यादि करके विष्णुमन्त्रोक्त पीठन्यास करे। उसके ऊपर 'पक्षिराजाय स्वाहा' पीठमन्त्र का न्यास करे। तब इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे—सम्मोहनऋषये नमः शिरसि। गायत्री छन्दसे नमः मुखे। त्रैलोक्यसम्मोहनाय विष्णवे नमः हृदये।

करन्यास—क्लां अंगुष्ठाभ्यां नमः। क्लीं तर्जनीभ्यां स्वाहा। क्लूं मध्यमाभ्यां वषट्।

क्लैं अनामिकाभ्यां हुं। क्लौं कनिष्ठाभ्यां वौषट्। क्ल: करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्।

अंगन्यास—क्लां हृदयाय नम:। क्लीं शिरसे स्वाहा। क्लूं शिखायै वषट्। क्लैं कवचाय हुं। क्लौं नेत्रत्रयाय वौषट्। क्ल: अस्त्राय फट्।

वाणन्यास—अंगुष्ठे द्रां शोषणवाणाय नम:। तर्जन्यो: द्रीं मोहनवाणाय नम:। मध्यमयो: क्लीं सन्दीपनवाणाय नम:। ब्लूं तापनवाणाय नम: अनामिकयो:। कनिष्ठयो: स: मादनवाणाय नम:। तब निम्नवत् ध्यान करे—

भग्नविद्रुमसङ्काशं सर्वतेजोमयं वपु:।
किरीटिनं कुण्डलिनं केयूरवलयान्वितम्।।
मुक्तासद्ररत्नसन्नद्धतुलाकोटिसमुज्ज्वलम् ।
नानालङ्कारसुभगं पीताम्बरयुगान्वितम्।।
गरुड़ोपरि सन्नद्धं रक्तपङ्कजमध्यगम्।
उत्तप्तहेमसङ्काशां लक्ष्मीं वामोरुसंस्थिताम्।।
सर्वालङ्कारसुभगां शुक्लवासो युगावृताम्।
सकामां लीलया देवं मोहयन्तं पुन: पुन:।।
शंखचक्रगदापद्मपाशाङ्कुशधनु:शरान् ।
धारयन्त्रं जगन्नाथं रक्तपद्मारुणेक्षणम्।।

भगवान् जगन्नाथ का शरीर सभी प्रकार के तेजों से युक्त है। टूटे हुए मूंगे के समान उसकी कान्ति है। मस्तक पर मुकुट, कानों में कुण्डल, भुजाओं में केयूर और कंगन हैं। दोनों पैर मोतियों और विविध रत्नों वाले नूपुर से शोभित हैं। विविध आभूषणों से सुशोभित दो पीले वस्त्र धारण किए हुए हैं। गरुड़ के ऊपर लाल कमल पर विराजमान हैं। तपे हुए सोने जैसी आभावाली लक्ष्मी देवी उनकी बाँयी जंघा पर आसीन हैं। लक्ष्मी सभी आभूषणों और दो श्वेत वस्त्रों से भूषित हैं। वे सकामा देवी अपनी लीला से भगवान् को निरन्तर मुग्ध किए रहती हैं। भगवान् अपने हाथों में शंख, चक्र, गदा, पद्म, पाश, अंकुश, धनुष और वाण लिए हुए हैं। उनके नेत्र लाल कमल के समान रक्ताभ हैं।

ध्यान के बाद मानसोपचारों से पूजा करके शंखस्थापन करे। तब पीठन्यास के क्रम से पीठपूजा करे। तब ध्यान-आवाहनादि से पञ्च पुष्पाञ्जलिदान तक की सभी क्रियायें करे।

षडंग पूजन करे—ॐ क्लां हृदयाय नम:। ॐ क्लीं शिरसे स्वाहा। क्लूं शिखायै वषट्। क्लैं कवचाय हुं। क्लौं नेत्रत्रयाय वौषट्। क्ल: अस्त्राय फट्।

इसके बाद देवशरीर में पञ्च वाणों की पूजा करे। मस्तके द्रां शोषणवाणाय नम:। मुखे द्रीं मोहनवाणाय नम:। हृदि क्लीं सन्दीपनवाणाय नम:। गुह्ये ब्लूँ तापनवाणाय नम:। पादे स: मादनवाणाय नम:। इसके बाद आवरण पूजन करे।

यन्त्र के मध्य बिन्दु में स्थित देव के शरीर में निम्न मन्त्रों से पूजन करे—ॐ किरीटाय नम:। ॐ कुण्डलाय नम:। ॐ शंखाय नम:। ॐ चक्राय नम:। ॐ गदाय नम:। ॐ पद्माय नम:। ॐ पाशाय नम:। ॐ अंकुशाय नम:। ॐ धनुषाय नम:। ॐ शराय नम:। स्तन के उर्ध्वभाग में—ॐ श्रीवत्साय नम:। ॐ श्रीकौस्तुभाय नम:। गले में—ॐ वनमालायै नम:। नितम्ब में—ॐ पीतवसनाय नम:। वामांग में—श्रीं लक्ष्म्यै नम:।

केशरों में अग्न्यादि कोणों, मध्य और चारो दिशाओं में क्लां हृदयाय नम: इत्यादि से षडंग पूजन करे। तब पूर्वादि चारो दिशाओं में द्रां शोषणवाणाय नम: इत्यादि से चार वाणों का पूजन चार कोणों में करे। स: मादनवाणाय नम: से पञ्चम वाण की पूजा करे।

अष्टदल में पूर्वादि क्रम से—ॐ लक्ष्म्यै नम:। ॐ सरस्वत्यै नम:। ॐ रत्यै नम:। ॐ प्रीत्यै नम:। ॐ कीर्त्यै नम:। ॐ कान्त्यै नम:। ॐ तुष्ट्यै नम:। ॐ पुष्ट्यै नम:।

भूपुर में इन्द्रादि दश लोकपालों का पूजन करे। वज्रादि के पूजन का विधान यहाँ नहीं है। धूपादि से विसर्जन तक के सारे कर्म करके पूजन का समापन करे।

इस यन्त्र के पुरश्चरण में बारह लाख जप और त्रिमधुराक्त खीर से एक लाख बीस हजार हवन करे। यदि अशक्त हो तो बारह हजार हवन और बारह हजार तर्पण करे।

मन्त्रान्तरम्

कामबीजं हृषीकेशाय हृन्मन्त्रोऽष्टाक्षरः परः ।

तथा च—

हृषीकेशपदं ङेऽन्तं नमोऽन्तः कामपूर्वकः ।

अस्य न्यासपूजादिकं सर्वं पूर्ववत्।

लक्ष्मीर्माया कामबीजं ङेऽन्तं कृष्णपदं तथा ।
स्वाहेति मन्त्रराजोऽयं भजतां सुरपादपः ।।

अस्य पूजाप्रयोगः—प्रातःकृत्यादिवैष्णवोक्तपीठमन्वन्तं विन्यस्य ऋष्यादिन्यासं कुर्यात्। यथा—शिरसि नारदऋषये नमः। मुखे अनुष्टुप्छन्दसे नमः। हृदि श्रीकृष्णाय देवतायै नमः। ततः कराङ्गन्यासौ—क्लां अंगुष्ठाभ्यां नमः इत्यादि। एवं क्लां हृदयाय नमः इत्यादि। ततो ध्यानम्—

कलापकुसुमश्यामं वृन्दावनगतं हरिम् ।
गोपगोपीगवावीतं पीतवस्त्रयुगावृतम् ।।
नानालङ्कारसुभगं कौस्तुभोद्भासिवक्षसम् ।
सनकादिमुनिश्रेष्ठैः संस्तुतः परया मुदा ।
शङ्खचक्रलसद्बाहुं वेणुहस्तद्वयेरितम् ।।

एवं ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्य शङ्खस्थापनं कुर्यात्। ततो वैष्णवोक्तपीठमन्वन्तं पीठं सम्पूज्य पुनर्ध्यात्वा आवाहनादि-पञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं विधाय आवरणपूजा-मारभेत्। यथा—केशरेषु अग्न्यादिकोणेषु मध्ये दिक्षु च क्लां हृदयाय नमः इत्यादिना पूजयेत्। तद्बहिरिन्द्रादीन् व्रजादींश्च सम्पूज्य धूपादिविसर्जनान्तं कर्म समापयेत्। अस्य पुरश्चरणं चतुर्लक्षजपः। तथा च—

ध्यात्वेवं परमात्मानं चतुर्लक्षं मनुं जपेत्।
दशांशं जुहुयान्मन्त्री कुसुमैर्ब्रह्मवृक्षजैः ॥

श्रीकृष्ण का अष्टाक्षर मन्त्र—क्लीं हृषीकेशाय नमः। श्रीकृष्ण का यह अष्टाक्षर मन्त्र सभी मन्त्रों में प्रधान है।

यन्त्र—पूर्ववत् तीन यन्त्रों में से किसी यन्त्र में पूजन करे।

इस मन्त्र का न्यास और पूजन पूर्ववत् है। श्रीकृष्ण का अन्य अष्टाक्षर मन्त्र है—श्रीं ह्रीं क्लीं कृष्णाय स्वाहा। यह मन्त्र कल्पवृक्ष के समान है। इस मन्त्र की साधना से साधक की सभी कामनायें पूरी होती हैं।

सामान्य पूजा पद्धति से प्रातःकृत्यादि करके विष्णुमन्त्रोक्त पीठन्यास करे। तब इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे—शिरसि नारदऋषये नमः। मुखे अनुष्टुप्छन्दसे नमः। हृदि कृष्णाय देवतायै नमः।

करन्यास—क्लां अंगुष्ठाभ्यां नमः। क्लीं तर्जनीभ्यां स्वाहा। क्लूं मध्यमाभ्यां वषट्। क्लैं अनामिकाभ्यां हुं। क्लौं कनिष्ठाभ्यां वौषट्। क्लः करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्।

षडंगन्यास—क्लां हृदयाय नमः। क्लीं शिरसे स्वाहा। क्लूं शिखायै वषट्। क्लैं कवचाय हुं। क्लौं नेत्रत्रयाय वौषट्। क्लः अस्त्राय फट्। इस प्रकार न्यास करने के पश्चात् निम्नवत् ध्यान करे—

कलापकुसुमश्यामं वृन्दावनगतं हरिम्।
गोपगोपीगवावीतं पीतवस्त्रयुगावृतम्॥
नानालङ्कारसुभगं कौस्तुभोद्भासिवक्षसम्।
सनकादिमुनिश्रेष्ठैः संस्तुतं परया मुदा।
शंखचक्रलसद् बाहुं वेणुहस्तद्वयेरितम्॥

कलापपुष्प के समान श्याम वर्ण हैं। वृन्दावनवासी गोप, गोपी और बछड़ों से वेष्टित हैं। दो पीताम्बर धारण किए हुए हैं। विविध आभूषणों से अलंकृत भगवान् का ध्यान करे। वक्षःस्थल कौस्तुभ मणि से प्रकाशित है। सनकादि श्रेष्ठ मुनि अतीव आनन्द से उनकी स्तुति कर रहे हैं। उनके एक हाथ में शंख, दूसरे हाथ में चक्र और अन्य दो हाथों से वे मुरली बजा रहे हैं।

ध्यान के बाद मानसोपचारों से पूजा करके शंखस्थापन करे। तब विष्णुमन्त्रोक्त पीठपूजा करके पुनः ध्यान-आवाहनादि से पञ्च पुष्पाञ्जलिदान तक की सारी क्रिया करके आवरण पूजन करे।

केशर में अग्नि, नैर्ऋत्य, वायव्य, ईशान कोनों और मध्य में पूर्वादि चारों दिशाओं में क्लां हृदयाय नमः इत्यादि षडंग न्यासमन्त्रों से षडंग पूजन करे। भूपुर में इन्द्रादि दश लोकपालों और वज्रादि आयुधों का पूजन करके धूपादि से विसर्जन तक के कर्म करके पूजन का समापन करे।

इस मन्त्र के पुरश्चरण में चार लाख जप और चालीस हजार हवन पलाशपुष्पों से करे।

मन्त्रान्तरम्

श्रीशक्तिस्मरकृष्णाय गोविन्दाय शिरो मनुः ।

अस्य पूजाप्रयोगः—प्रातःकृत्यादि-पूर्वोक्तपीठमन्वन्तं पीठन्यासं विधाय रत्नाभिषेकवदृष्यादिन्यासं कुर्यात्।

ततः कराङ्गन्यासौ यथा—श्रीं अंगुष्ठाभ्यां नमः। ह्रीं तर्जनीभ्यां स्वाहा। क्लीं मध्यमाभ्यां वषट्। कृष्णाय अनामिकाभ्यां हुं। गोविन्दाय कनिष्ठाभ्यां वौषट्। स्वाहा करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्। एवं हृदयादिषु श्रीं हृदयाय नमः इत्यादि।

ततो मूर्तिपञ्जरन्यासं विधाय मुद्रादिदिग्बन्धनं कृत्वा विंशत्यर्णोक्तं ध्यात्वा तद्विधानेन पूजयेत्; विशेषस्तु सृष्टिस्थितिक्रमेण न पूजयेत् तत्तद्वर्णाभावात्। अस्य पुरश्चरणं जपहोमश्च तथा।

श्रीकृष्ण का द्वादशाक्षर मन्त्र—श्रीं ह्रीं क्लीं कृष्णाय गोविन्दाय स्वाहा। यन्त्र पूर्ववत्। सामान्य पूजा पद्धति से प्रातःकृत्यादि करके विष्णुमन्त्रोक्त पीठन्यास करे। तब रत्नाभिषेक में वर्णित ऋष्यादि न्यास एवं करांग न्यास करे।

करन्यास—श्रीं अंगुष्ठाभ्यां नमः। ह्रीं तर्जनीभ्यां स्वाहा। क्लीं मध्यमाभ्यां वषट्। कृष्णाय अनामिकाभ्यां हुं। गोविन्दाय कनिष्ठाभ्यां वौषट्। स्वाहा करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्।

हृदयादि न्यास—श्रीं हृदयाय नमः। ह्रीं शिरसे स्वाहा। क्लीं शिखायै वषट्। कृष्णाय कवचाय हुं। गोविन्दाय अस्त्राय फट्। मूर्तिपञ्जर न्यास करे। मुद्राप्रदर्शन करके दिग्बन्ध करे। विंशाक्षर मन्त्र में लिखित ध्यान करे। उसी विधि से पूजन करे। इसमें सृष्टि-स्थितिक्रम से पूजन नहीं होता।

पुरश्चरण में चार लाख जप और चालीस हजार हवन घी से होता है।

मन्त्रान्तरम्

तारं हृद्भगवते रुक्मिणीवल्लभाय स्वाहा ।

तथा च—

तारो हृद्भगवान् ङेऽन्तो रुक्मिणी वल्लभस्तथा ।
शिरोऽन्तः षोडशार्णोऽयं रुक्मिणी वल्लभाह्वयः ॥

अस्य पूजा—प्रातःकृत्यादिवैष्णवोक्तं पीठमन्वन्तं पीठन्यासं विधाय ऋष्यादिन्यासं कुर्यात्। शिरसि नारदऋषये नमः। मुखे अनुष्टुप्छन्दसे नमः। हृदि रुक्मिणीवल्लभाय देवतायै नमः।

ततः कराङ्गन्यासौ—ॐ अंगुष्ठाभ्यां नमः। नमस्तर्जनीभ्यां स्वाहा। भगवते मध्यमाभ्यां वषट्। रुक्मिणीवल्लभाय अनामिकाभ्यां हुं। स्वाहा कनिष्ठाभ्यां फट्। एवं हृदयादिषु। ततो ध्यानम्—

तापिञ्छच्छविरङ्कगां प्रियतमां स्वर्णप्रभामम्बुज-
प्रोद्यद्वामभुजां स्ववामभुजयाश्लिष्यन् सचित्तस्मयाम् ।
श्लिष्यन्तीं स्वयमन्यहस्तविलसत्सौवर्णवेत्रश्चिरं
पायान्नं शणसूनपीतवसनो नानाविभूषो हरिः ॥

एवं ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्य शङ्खस्थापनं कृत्वा वैष्णवोक्तपीठमन्वन्तां पीठपूजां विधाय पुनर्ध्यात्वा आवाहनादिपञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं विधायावरण-पूजामारभेत्। यथा—केशरेषु अग्निनिर्ऋतिवायव्यीशानकोणेषु मध्ये दिक्षु च ॐ हृदयाय नमः। नमः शिरसे स्वाहा। भगवते शिखायै वषट्। रुक्मिणीवल्लभाय कवचाय हुं। स्वाहा अस्त्राय फट्। ततोऽष्टदलेषु पूर्वादि ॐ नारदाय नमः। एवं पर्वतं जिष्णुं निशठं उद्धवं दारुकं विष्वक्सेनं शौनेयञ्च पूजयेत्। तद्बहिरिन्द्रादीन् वज्रादींश्च सम्पूज्य धूपादिविसर्जनान्तं कर्म समापयेत्। अस्य पुरश्चरणं लक्षजपः। तथा च—

ध्यात्वैवं रुक्मिणीकान्तं जपेल्लक्षममुं मनुन् ।
अयुतं जुहुयात् पद्मैररुणैर्मधुराप्लुतैः ॥

श्रीकृष्ण का षोड़शाक्षर मन्त्र—ॐ नमो भगवते रुक्मिणीवल्लभाय स्वाहा। यन्त्र पूर्ववत्। सामान्य पूजापद्धति से प्रातःकृत्यादि करके विष्णुमन्त्रोक्त पीठन्यास करे। तब इस प्रकार ऋष्यादि न्यास करे—शिरसि नारदऋषये नमः। मुखे अनुष्टुप्छन्दसे नमः। हृदि रुक्मिणीवल्लभाय देवतायै नमः।

करन्यास—ॐ अंगुष्ठाभ्यां नमः। नमः तर्जनीभ्यां स्वाहा। भगवते मध्यमाभ्यां वषट्। रुक्मिणीवल्लभाय अनामिकाभ्यां हुं। स्वाहा कनिष्ठाभ्यां फट्।

हृदयादि न्यास—ॐ हृदयाय नमः। नमः शिरसे स्वाहा। भगवते शिखायै वषट्। रुक्मिणीवल्लभाय कवचाय हुं। स्वाहा अस्त्राय फट्।

न्यासोपरान्त निम्नवत् ध्यान करे—

तापिञ्जच्छविरङ्कगां प्रियतमां स्वर्णप्रभामम्बुज-
प्रोद्यद्वामभुजां स्ववामभुजयाश्लिष्यन् सचित्तस्मयाम्।
श्लिष्यन्तीं स्वयमन्यहस्तविलसत्सौवर्णवेत्रश्चिरं
पायात्रं शणसूनपीतवसनो नानाविभूषो हरिः।।

श्रीकृष्ण तमालवृक्ष के समान श्याम वर्ण के हैं। उनकी गोद में स्वर्णाभ प्रिया अपने बाँयें हाथ में कमल लिए और दाँयें हाथ से उनका आलिङ्गन करती हुई विराजमान हैं। श्रीकृष्ण भी अपने बाँयें हाथ से रुक्मिणी का आलिंगन किए हुए हैं। उनके दाँयें हाथ में स्वर्ण वेत हैं। शणकुसुम के समान पीला वस्त्र है। विविध आभूषणों से अलंकृत हैं। ऐसे श्रीकृष्ण हमारी रक्षा करें।

मानसोपचारों से पूजा करके शंखस्थापन करे। विष्णुमन्त्रोक्त पीठपूजा करके पुनः ध्यान करे। आवाहनादि से पञ्च पुष्पाञ्जलि तक की क्रिया करे। तब आवरण पूजा करे।

केशरों में अग्न्यादि चारो कोणों, मध्य और चतुर्दिक् पञ्चाङ्ग पूजा करे—ॐ हृदयाय नमः। ॐ शिरसे स्वाहा। ॐ भगवते शिखायै वषट्। ॐ रुक्मिणीवल्लभाय कवचाय हुं। ॐ अस्त्राय फट्। अष्टदल में पूर्वादि क्रम से ॐ नारदाय नमः। ॐ पर्वताय नमः। ॐ जिष्णवे नमः। ॐ निशठाय नमः। ॐ उद्धवाय नमः। ॐ विष्वक्सेनाय नमः। ॐ शौनेयाय नमः से पूजा करे। भूपुर में इन्द्रादि दश दिक्पालों और उनके वज्रादि आयुधों का पूजन करे। पुरश्चरण में एक लाख जप और त्रिमधुराक्त लाल कमल से दश हजार हवन करे।

मन्त्रान्तराणि

श्रीशक्तिकामपूर्वोऽङ्गजन्मशक्तिरमान्तिकः ।
दशाक्षर एवासौ स्यात् शक्तिरमान्वितः ।
मन्त्रो विकृतिरव्यर्णावाचक्राद्याङ्गनाविमौ ॥

अनयोर्ऋष्यादिपञ्चाङ्गानि दशाक्षरवन्न्यस्त्वा विंशत्यर्णोक्तपूजां कुर्यात्। ध्यानस्तु—

वरदाभयहस्ताभ्यां श्लिष्यन्तं स्वाङ्कगे प्रिये ।
पद्मोत्पलकरे ताभ्यां श्लिष्टं चक्रगदोज्ज्वलम् ॥

अनयोः पुरश्चरणं दशलक्षजपः। आज्यैस्तावत्सहस्रहोमः। तथा च—

दशलक्षं जपेदाज्यैर्हुनेत्तावत्सहस्रकम् ।

श्रीकृष्ण का षोड़शाक्षर एवं द्वादशाक्षर मन्त्र—श्रीं ह्रीं क्लीं गोपीजनवल्लभाय स्वाहा क्लीं ह्रीं श्रीं—षोड़शाक्षर। ह्रीं श्रीं गोपीजनवल्लभाय स्वाहा—द्वादशाक्षर।

यन्त्र—पूर्ववत् तीनों यन्त्रों में से किसी एक में पूजन करे।

इन मन्त्रों की पूजा में दशाक्षर मन्त्रोक्त ऋष्यादि न्यास और आचक्राय स्वाहा हृदयाय नम: इत्यादि से पञ्चाङ्ग न्यास करे। विंशत्यक्षर मन्त्रोक्त विधि से पूजन करके ध्यान करे—

वरदाभयहस्ताभ्यां शिलष्यन्तं स्वाङ्कगे प्रिये।
पद्मोत्पलकरे ताभ्यां शिलष्टं चक्रगदोज्ज्वलम्।।

वर और अभय मुद्रायुक्त दो हाथों से गोद में बैठी प्रिया का आलिंगन किए हुए हैं। अन्य दो हाथों में चक्र और गदा हैं। गोद में बैठी रुक्मिणी अपने दोनों हाथों में कमल ली हुई हैं। ऐसे श्रीकृष्ण का ध्यान करे।

ऋष्यादि न्यास—नारद ऋषये नम: शिरसि। अनुष्टुप्छन्दसे नम: मुखे। श्रीकृष्णदेवतायै नम: हृदि। श्री बीज शक्ति।

करन्यास—आचक्राय स्वाहा अंगुष्ठाभ्यां नम:। विचक्राय स्वाहा तर्जनीभ्यां स्वाहा। सुचक्राय स्वाहा मध्यमाभ्यां वषट्। त्रैलोक्यरक्षणचक्राय स्वाहा अनामिकाभ्यां हुं। असुरान्तकचक्राय स्वाहा कनिष्ठाभ्यां फट्।

पञ्चाङ्ग न्यास—आचक्राय स्वाहा हृदयाय नम:। विचक्राय स्वाहा शिरसे स्वाहा। सुचक्राय स्वाहा शिखायै वषट्। त्रैलोक्यरक्षणचक्राय स्वाहा कवचाय हुं। असुरान्तकचक्राय स्वाहा अस्त्राय फट्।

विंशत्यक्षर मन्त्रोक्त विधि से पूजा करे। इन दोनों मन्त्रों के पुरश्चरण में दस-दस लाख जप और घी से दश हजार हवन करे।

प्रणवं नमसा युक्तं कृष्णगोविन्दकौ तथा ।
श्रीपूर्वौ ङेऽन्तावुच्चार्य हुं फट् स्वाहेति कीर्त्यते ॥

अस्य नारदऋषिरनुष्टुप्छन्दः परमात्मा हरिर्देवता। आचक्राद्यैरङ्गकल्पना। दशाक्षरवदस्य पूजापजहोमादयः। बीजशक्ती च तत्समे।

श्रीकृष्ण का पञ्चदशाक्षर मन्त्र—ॐ गोविन्दाय हुं फट् स्वाहा ॐ नम: कृष्णाय। यन्त्र पूर्ववत्।

ऋष्यादि न्यास—नारद ऋषये नम: शिरसि। अनुष्टुप्छन्दसे नम: मुखे। परमात्माहरिदेवतायै नम: हृदि। श्री बीजाय नम: गुह्ये। आचक्र आदि से करांगन्यास करे। दशाक्षर मन्त्र के समान पूजा-जप-होम आदि करे। दस लाख जप और घी से दश हजार हवन करके पुरश्चरण करे।

बालगोपालमन्त्राः

चक्री वसुस्वरान्वितः सर्गी। कृः। कृष्णेति द्व्यक्षरः कामकृष्ण। कामकृष्णाय। कृष्णाय नमः। कामः कृष्णाय नमोऽन्तकः। कामकृष्णाय कामः। गोपालाय ठद्वयम्। कामः कृष्णाय स्वाहा। कृष्णगोविन्दौ ङेऽन्तौ। कामः कृष्णाय गोविन्दाय। कामः कृष्णगोविन्दौ ङेऽन्तौ कामः। दधिभक्षणाय ठद्वयम्। सुप्रसन्नात्मने हृत्। कामः ग्लौं कामः श्यामलाङ्गाय हृत्। वालवपुषे कृष्णाय वह्निजाया। रमा माया कामः कृष्णाय कामः। वालवपुषे क्लीं कृष्णाय वह्निजाया। तथा च निबन्धे—

चक्री वसुस्वरयुतः सर्ग्येकार्णो मनुर्मतः ।
कृष्णेति द्व्यक्षरः कामपूर्वस्त्र्यर्णः स एव च ॥
स एव चतुर्वर्णः स्यात् ङेऽन्तोऽन्यश्चतुरक्षरः ।
वक्ष्यते पञ्चवर्णः स्यात् कृष्णाय नम इत्यपि ॥
स एव कामपूर्वश्चेत् षडक्षरमनुर्मतः ।
कृष्णायेति स्मरद्वन्द्वमध्ये पञ्चाक्षरोऽपरः ॥
गोपालायाग्निजायान्तः षडक्षरमनुर्मतः ।
कृष्णाय कामबीजाद्यो वह्निजायान्तिकोऽपरः ॥
कृष्णगोविन्दकौ ङेऽन्तौ सप्तार्णो मनुरुत्तमः ।
कृष्णगोविन्दकौ ङेऽन्तौ कामाद्यश्चाष्टवर्णकः ॥
आद्यन्तकामबीजश्चेत् नवाक्षर उदाहृतः ।
दधिभक्षणाय वह्निवल्लमान्तोऽष्टवर्णकः ॥
सुप्रसन्नात्मने प्रोक्तो नमः इत्यपरोऽष्टकः ।
कामबीजं धराबीजं पुनः कामं समुद्धरेत् ॥
श्यामलाङ्गपदं ङेऽन्तं नमोऽन्तोऽयं दशाक्षरः ।
शिरोऽन्तो बालवपुषे कृष्णायान्यो मनुर्मतः ॥
श्रीशक्तिकामकृष्णाय मारः सप्ताक्षरो मनुः ।
शिरोऽन्तो बालवपुषे क्लीं कृष्णाय स्मृतो बुधैः ॥

एतेषां पूजायन्त्रम्—वृत्तमष्टदलं पद्मं भूगृहं चतुर्द्वारं वृत्तमध्यस्थं कामबीजम्। तथा च गौतमीये—

पद्ममष्टपलाशन्तु चतुरस्रं सुलक्षणम् ।
चतुर्द्वारसमायुक्तं कामगर्भितकर्णिकम् ॥

एतेषां पूजाप्रयोगः—प्रातःकृत्यादिवैष्णवोक्तपीठन्यासं विधाय ऋष्यादिन्यासं कुर्यात्। यथा—शिरसि नारदऋषये नमः। मुखे गायत्रीच्छन्दसे नमः। हृदि श्रीकृष्णाय देवतायै नमः।

ततः कराङ्गन्यासौ—क्लां अंगुष्ठाभ्यां नमः। क्लीं तर्जनीभ्यां स्वाहा। क्लूं मध्यमाभ्यां वषट्। क्लैं अनामिकाभ्यां हुं। क्लौं कनिष्ठाभ्यां वौषट्। क्लः करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्। एवं हृदयादिषु क्लां हृदयाय नमः इत्यादि। ततः पूर्ववन्मुद्रादिकं प्रदर्श्य ध्यायेत्। ध्यानम्—

अव्याद्व्याकोषनीलाम्बुजरुचिररुणाम्भोजनेत्रोऽम्बुजस्थो
बालो जङ्घाकटीरस्थलकलितरणत्किङ्किणीको मुकुन्दः ।
दोर्भ्यां हैयङ्गवीनं दधदतिविमलं पायसं विश्ववन्द्यो
गोगोपीगोपवीतोरुरुनखविलसत्कण्ठभूषश्चिरं वः ॥

एवं ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्य शङ्खस्थापनं कुर्यात्। ततो वैष्णवोक्तपीठमन्वन्तां पीठपूजां विधाय पुनर्ध्यात्वा आवाहनादिपञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं विधायावरण-पूजामारभेत्। यथा—केशरेषु अग्न्यादिकोणेषु मध्ये दिक्षु च क्लां हृदयाय नमः इत्यादिना षडङ्गं सम्पूज्य पत्रेषु नारदादीन् तद्बहिरिन्द्रादीन् वज्रादींश्च पूजयेत्। ततो धूपादिविसर्जनान्तं कर्म समापयेत्। एतेषां पुरश्चरणं लक्षजपः। तथा च—

ध्यात्वैवमेकमेतेषां लक्षं जप्यान्मनुं ततः ।
सर्पिःसितोपलोपेतैः पायसैरयुतं हुनेत् ॥

तथा— तर्पयेत्तावदेतेषां मनूनां हुतसंख्यया ।

बालगोपाल मन्त्र—गोपालमन्त्र अनेक प्रकार के हैं। निबन्ध आदि ग्रन्थों के अनुसार इनकी संख्या अट्ठारह है; जैसे—१. कृः, २. कृष्ण, ३. क्लीं कृष्ण, ४. क्लीं कृष्णाय, ५. कृष्णाय नमः, ६. क्लीं कृष्णाय नमः, ७. क्लीं कृष्णाय क्लीं, ८. गोपालाय स्वाहा, ९. क्लीं कृष्णाय स्वाहा, १०. कृष्णाय गोविन्दाय, ११. क्लीं कृष्णाय गोविन्दाय, १२. क्लीं कृष्णाय गोविन्दाय क्लीं, १३. दधिभक्षणाय स्वाहा, १४. सुप्रसन्नात्मने नमः, १५. क्लीं ग्लौं श्यामलाङ्गाय नमः, १६. बालवपुषे कृष्णाय स्वाहा, १७. श्रीं ह्रीं क्लीं कृष्णाय क्लीं, १८. बालवपुषे क्लीं कृष्णाय स्वाहा। इन अट्ठारह मन्त्रों में से किसी एक से गोपाल की उपासना की जा सकती है। इन सभी मन्त्रों का पूजन यन्त्र अष्टदल कमल और चतुरस्र चार द्वारयुक्त भूपुर है। कर्णिका में क्लीं अंकित होता है। यन्त्र अगले पृष्ठ पर अंकित है।

पूजा—सामान्य पूजापद्धति से प्रातःकृत्यादि करके विष्णुमन्त्रोक्त पीठन्यास करे। तब ऋष्यादि न्यास करे—शिरसि नारदऋषये नमः। मुखे गायत्रीछन्दसे नमः। हृदि गोपालदेवतायै नमः।

करन्यास—क्लां अंगुष्ठाभ्यां नमः। क्लीं तर्जनीभ्यां स्वाहा। क्लूं मध्यमाभ्यां वषट्। क्लैं अनामिकाभ्यां हुं। क्लौं कनिष्ठाभ्यां वौषट्। क्लः करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्।

हृदयादि षडंग न्यास—क्लां हृदयाय नमः। क्लीं शिरसे स्वाहा। क्लूं शिखायै वषट्।

क्लैं कवचाय हुं। क्लौं नेत्रत्रयाय वौषट्। क्ल: अस्त्राय फट्। पूर्ववत् मुद्रादि प्रदर्शन करके निम्नवत् ध्यान करे—

अव्याद्व्याकोषनीलाम्बुजरुचिररुणाम्भोजनेत्रोऽम्बुजस्थो
बालो जङ्घाकटीरस्थलकलितरणत्किङ्किणीको मुकुन्द:।
दोर्भ्यां हैयङ्गवीनं दधदतिविमलं पायसं विश्ववन्द्यो
गोगोपीगोपवीतोरुरुनखविलसत्कण्ठभूषश्चिरं व:।।

गोपाल के शरीर की आभा विकसित नीलकमल के समान है। दोनों आँखें लाल कमल के समान सुन्दर हैं। वे बाल वेष में कमल के ऊपर नर्तनरत हैं। पैरों और कमर में नूपुर और करधनी गूंजनरत हैं। एक हाथ में मक्खन और दूसरे हाथ में खीर लिए हुए हैं। जगत् पूज्य बाल गोपाल गायों, ग्वालों और गोपियों से घिरे हुए हैं। गले में बघनखा है। ऐसे बाल गोपाल हमारी रक्षा सदैव करें। इसके बाद मानस पूजन करे। शंखस्थापन करे। विष्णुमन्त्रोक्त पीठन्यास, पीठपूजा करके पुन: ध्यान करे। आवाहनादि से पञ्च पुष्पाञ्जलिदान तक की सभी क्रियायें करे। तब आवरण पूजा करे। पद्मकेशर के अग्नि, नैर्ऋत्य, वायव्य और ईशान कोणों में, मध्य में और चतुर्दिक उपर्युक्त षडंग न्यास मन्त्रों से षडंग पूजन करे। अष्टदल में नारदादि का पूजन करे—ॐ नारदाय नम:। ॐ पर्वताय नम:। ॐ जिष्णवे नम:। ॐ निशठाय नम:। ॐ उद्धवाय नम:। ॐ विष्वक्सेनाय नम:। ॐ शौनेयाय नम:। भूपुर में इन्द्रादि दश दिक्पालों और वज्रादि आयुधों का पूजन करे। तब धूपादि विसर्जन तक की क्रिया करे। पुरश्चरण में एक लाख जप और घी-मिश्रीयुक्त खीर से दश हजार हवन करे।

बालगोपाल यन्त्र
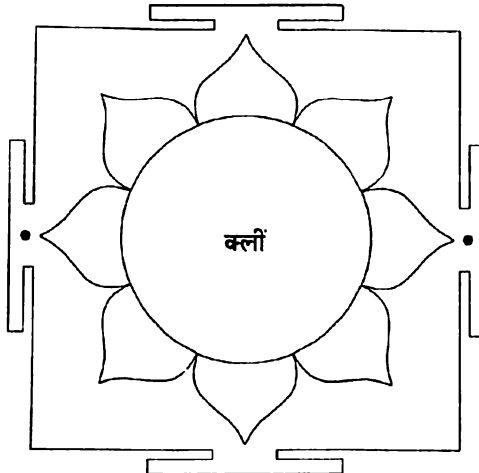
ऊर्ध्वदन्तयुतः शार्ङ्गी चक्री दक्षिणकर्णयुक् ।
मांसं नाथाय नत्यन्तो मूलमन्त्रोऽष्टवर्णकः ॥
ऋषिर्ब्रह्मास्य गायत्रीच्छन्दः कृष्णस्तु देवता ।
वर्णयुग्मैः समस्तेन प्रोक्तं स्यादङ्गपञ्चकम् ॥

ध्यानस्तु—

पञ्चवर्षमतिदृप्तमङ्गने धावमानमतिचञ्चलेक्षणम् ।
किङ्किणीवलयहारनूपुरैरञ्चितं नमत गोपबालकम् ॥
ध्यात्वैवं प्रजपेदष्टलक्षं तावत्सहस्रकम् ।
जुहुयाद्ब्रह्मवृक्षोत्थसमिद्भिः पायसेन वा ॥
प्रासादे स्थापितं कृष्णमनुना नित्यमर्चयेत् ।
द्वारपूजादिपीठान्तं कुर्यात् पूर्वोक्तमार्गतः ॥
मध्येऽर्चयेद्धरिं दिक्षु विदिक्ष्वङ्गानि वै क्रमात् ।
वासुदेवः सङ्कर्षणः प्रद्युम्नश्चानिरुद्धकः ॥
रुक्मिणी सत्यभामा च लक्ष्मणा जाम्बवत्यपि ।
दिग्विदिक्ष्वर्चयेदेतान् इन्द्रवज्रादिकान् बहिः ॥
योऽमूं मनुं जपेन्नित्यं विधिनाभ्यर्चयन् हरिम् ।
स सर्वसम्पत्सम्पूर्णो नित्यं शुद्धं व्रजेत्पदम् ॥

अष्टाक्षर बालगोपालमन्त्र—गोकुलनाथाय नमः—यह अष्टाक्षर मन्त्र है। इसका यन्त्र पूर्ववत् है।

ऋष्यादि न्यास—ब्रह्मणे ऋषये नमः शिरसि। गायत्रीछन्दसे नमः मुखे। कृष्णाय देवतायै नमः हृदये।

करन्यास—गोकु अंगुष्ठाभ्यां नमः। लना तर्जनीभ्यां स्वाहा। थाय मध्यमाभ्यां वषट्। नमः अनामिकाभ्यां हुं। गोकुलनाथाय नमः कनिष्ठाभ्यां फट्।

पञ्चाङ्ग न्यास—गोकु हृदयाय नमः। लना शिरसे स्वाहा। थाय शिखायै वषट्। नमः कवचाय हुं। गोकुलनाथाय नमः अस्त्राय फट्। इसके बाद निम्नवत् ध्यान करें—

पञ्चवर्षमतिदृप्तमङ्गने धावमानमतिचञ्चलेक्षणम्।
किङ्किणीवलयहारनूपुरैरञ्चितं नमत गोपबालकम्।।

बाल गोपाल पाँच वर्ष के बालक हैं। चञ्चल स्वभाव हैं। आंगन में दौड़ रहे हैं। आँखें चंचल हैं। करधनी, कंगन, हार, नूपुर आदि आभूषणों से विभूषित हैं। ऐसे बाल गोपाल भगवान् को नमस्कार है।

उक्त प्रकार से ध्यान करके पूजन करे। पुरश्चरण में आठ लाख जप कर पलाश की समिधा या खीर से आठ हजार हवन करे।

घर में उक्त मूर्ति की स्थापना करके इस मन्त्र से नित्य पूजा करे। पूर्वोक्त विधि से सभी क्रिया करे। आवरण पूजा इस प्रकार का है—

यन्त्र के मध्य बिन्दु में ॐ हरये नमः से पूजा करे। चारो दिशाओं और मध्य में पञ्चाङ्ग न्यास के मन्त्रों से पञ्चाङ्गों का पूजन करे।

अष्टदल में पूर्वादि क्रम से ॐ वासुदेवाय नमः। ॐ सङ्कर्षणाय नमः। ॐ प्रद्युम्नाय नमः। ॐ अनिरुद्धाय नमः। ॐ रुक्मिण्यै नमः। ॐ सत्यभामाय नमः। ॐ लक्ष्मणायै नमः। ॐ जाम्बवत्यै नमः से पूजन करे।

भूपुर में इन्द्रादि दश दिक्पालों और वज्रादि आयुधों की पूजा करे। प्रतिदिन इस मन्त्र के जप से सभी सम्पत्ति का लाभ होता है और अन्त में ब्रह्मपद की प्राप्ति होती है।

मन्त्रान्तरम्

कामयोरन्तःकृष्णपदं मन्त्रः सद्यः फलप्रदः ।

तथा च—

सद्यः फलप्रदं मन्त्रं वक्ष्येऽन्यं चतुरक्षरम् ।
सम्प्रोक्तो मारयुग्मान्तःसंस्थकृष्णपदेन तु ॥

अस्य पूजाप्रयोगः—प्रातःकृत्यादिवैष्णवोक्तपीठमन्वन्तं पीठन्यासं विधाय पूर्ववदृष्यादिन्यासकराङ्गन्यासौ च कृत्वा ध्यायेत्।

श्रीमत्कल्पद्रुमूलोद्गतकमललसत्कर्णिकासंस्थितो य-
स्तच्छाखालम्बिपद्मोदरविसरदसंख्यातरत्नाभिषिक्तः ।
हेमाभः स्वप्रभाभिस्त्रिभुवनमखिलं भासयन् वासुदेवः
पायाद्वः पायसादोऽनवरतनवनीतामृताशीरसीमः ॥

एवं ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्य शङ्खस्थापनं विधाय वैष्णवोक्तपीठमन्वन्तं पीठं सम्पूज्य पुनर्ध्यात्वा आवाहनादिपञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं विधायावरणपूजामारभेत्। पूर्ववदग्न्यादिकोणे मध्ये दिक्षु च क्लां हृदयाय नमः इत्यादिना षडङ्गानि सम्पूज्य पत्रेषु पूर्वादि अष्टनिधीन् तद्बहिरिन्द्रादीन् वज्रादींश्च सम्पूज्य धूपादिविसर्जनान्तं कर्म समापयेत् । अस्य पुरश्चरणं चतुर्लक्षजपः। तथा च—

ध्यात्वैवं प्रजपेल्लक्षचतुष्कं जुहुयात्ततः ।
त्रिमध्वक्तैर्बिल्वफलैश्चत्वारिंशत्सहस्रकम् ॥

चतुरक्षर बालगोपालमन्त्र—क्लीं कृष्णाय क्लीं—यह चतुरक्षर मन्त्र है। यन्त्र

पूर्ववत् हैं। इस चतुरक्षर मन्त्र के जप-अर्चन से शीघ्र फल मिलता है।

सामान्य पूजा पद्धति से प्रात:कृत्यादि करके विष्णुमन्त्रोक्त पीठ पर न्यास करे। पूर्वोक्त ऋष्यादि न्यास करे। करांग न्यास और ध्यान करे—

श्रीमत्कल्पद्रुमूलोद्गतकमललसत्कर्णिकासंस्थितो य:
तच्छाखालम्बिपद्मोदरविसरदसंख्यातरत्नाभिषिक्त: ।
हेमाभ: स्वप्रभाभिस्त्रिभुवनमखिलं भासयन् वासुदेव:
पायाद् व: पायसादोऽनवरतनवनीतामृताशीरसोम:।।

कल्पवृक्ष के मूल से निकले हुए कमल की कर्णिका के मध्य भाग में गोपाल विराजमान हैं। कल्पवृक्ष की शाखा से लम्बमान पद्म के मध्य से निकलते हुए असंख्य रत्नों द्वारा उनका अभिषेक हो रहा है। शरीर से नि:सृत स्वर्णाभा से गोपाल वासुदेव तीनों लोकों को प्रकाशित कर रहे हैं। निरन्तर खीर, मक्खन और अमृत खाने वाले गोपाल हमारी रक्षा करें।

ध्यान के बाद मानसोपचारों से पूजा करके शंखस्थापन करे। उसमें विशेषार्घ्य स्थापित करे। विष्णुमन्त्रोक्त पीठपूजा करके पुन: ध्यान-आवाहन आदि से पञ्च पुष्पाञ्जलिदान तक की सभी क्रियायें करे। तब आवरण पूजा करे।

कर्णिकाकेशर में अग्न्यादि चार कोनों, मध्य और पूर्वादि चतुर्दिक में क्लां हृदयाय नम:। क्लीं शिरसे स्वाहा। क्लूं शिखायै वषट्। क्लैं कवचाय हुं। क्लौं नेत्रत्रयाय वौषट् और क्ल: अस्त्राय फट् से षडंग पूजन करे।

अष्टदल के दलों में पूर्वादि क्रम से अष्टनिधियों का पूजन करे। ॐ इन्द्रनिधये नम:। ॐ नीलनिधये नम:। ॐ मुकुन्दनिधये नम:। ॐ मकरनिधये नम:। ॐ आनन्दनिधये नम:। ॐ कच्छपनिधये नम:। ॐ पद्मनिधये नम:। ॐ शंखनिधये नम:।

भूपुर में इन्द्रादि दश दिक्पालों और वज्रादि दश आयुधों का पूजन करे। धूपादि से विसर्जन तक के सभी कर्मों से पूजन का समापन करे।

पुरश्चरण में चार लाख जप एवं त्रिमधुरोपेत बेलफलों से चालीस हजार हवन करे।

अस्य मन्त्रस्य कामबीजयोर्लकारयोरन्ते रेफश्चेत्तदा मन्त्रचूडामणि:। तथा च निबन्धे—

मारयोरस्य मांसाधो रक्तश्चेदपरो मनु: ।

कामबीजस्य मांसाधो लकारस्याधोभागे रक्तो रेफश्चेत्तदा अयं मनुरित्यर्थ:।

अस्य पूजा—पूर्ववदृष्यादिन्यासं कृत्वा कराङ्गन्यासौ कुर्यात्। यथा—क्लीं अंगुष्ठाभ्यां नम: इत्यादि। क्लीं हृदयाय नम: इत्यादि। अस्य पूजादिकं सर्वं

पूर्ववत्। ध्याने तु विशेषः—

आरक्तोद्यानकल्पद्रुमतलविलसत्स्वर्णदोलाधिरूढं
गोपीभ्यां प्रेक्ष्यमाणं विकसितनवबन्धूकसिन्दूरभासम् ।
बालं लोलालकान्तं कटितटविलसत्क्षुद्रघण्टाघटाढ्यं
वन्दे शार्दूलकामांकुशललितगणाकल्पदीप्तं मुकुन्दम् ॥
ध्यात्वैवं पूर्वरीत्यैनं जप्त्वा रक्तोत्पलैर्नवैः ।
मधुत्रययुतैर्हुत्वा चार्चयेत् पूर्ववद्धरिम् ॥

अन्य चतुरक्षर बालगोपाल मन्त्र—क्लीं कृष्ण क्लीं। यह सर्वश्रेष्ठ मन्त्र है। पूजन यन्त्र पूर्ववत् है। पूर्वोक्त प्रकार से ऋष्यादि न्यास और करांग न्यास करे।

ऋष्यादि न्यास—ब्रह्मणे ऋषये नमः शिरसि। गायत्रीछन्दसे नमः मुखे। कृष्णाय देवतायै नमः हृदि।

करन्यास—क्लां अंगुष्ठाभ्यां नमः। क्लीं तर्जनीभ्यां स्वाहा। क्लूं मध्यमाभ्यां वषट्। क्लैं अनामिकाभ्यां हुं। क्लौं कनिष्ठाभ्यां वौषट्। क्लः करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्।

हृदयादि न्यास—क्लां हृदयाय नमः। क्लीं शिरसे स्वाहा। क्लूं शिखायै वषट्। क्लैं कवचाय हुं। क्लौं नेत्रत्रयाय वौषट्। क्लः अस्त्राय फट्। तदनन्तर ध्यान करे—

आरक्तोद्यानकल्पद्रुमतलविलसत्स्वर्णदोलाधिरूढं
गोपीभ्यां प्रेक्ष्यमाणं विकसितनवबन्धूकसिन्दूरभासम् ।
बालं लोलालकान्तं कटितटविलसत्क्षुद्रघण्टाघटाढ्यं
वन्दे शार्दूलकामांकुशललितगणाकल्पदीप्तं मुकुन्दम् ॥

रक्त वर्ण के पुष्पों के उपवन के मध्य में कल्पवृक्ष के मूल में सोने के झूले पर गोपाल विराजित हैं। दो गोपियाँ उन्हें देख रही हैं। गोपाल की अंगकान्ति विकसित नवबन्धूक पुष्प के समान सिन्दूरी है। बालरूप में चञ्चल एवं अति सुन्दर हैं। कमर में छोटी घंटियों की माला से युक्त करधनी शोभित है। गले में सुन्दर बघनखा है। ऐसे गोपाल की मैं वन्दना करता हूँ।

ध्यान के बाद पूर्वोक्त प्रकार से पूजा करे। इस मन्त्र के पुरश्चरण में पूर्ववत् चार लाख जप करे। घी-मधु-शर्करा त्रिमधुराक्त लाल कमल से चालीस हजार हवन करे।

वासुदेवमन्त्रः

प्रणवो हृद्भगवते वासुदेवाय कीर्त्तितः ।
प्रधानं वैष्णवे तन्त्रे मन्त्रोऽयं सुरपादपः ॥

अस्य पूजा—प्रातःकृत्यादिपूर्वोक्तं पीठमन्वन्तं विन्यस्य ऋष्यादिन्यासं कुर्यात्।

यथा—शिरसि प्रजापतये ऋषये नमः, मुखे गायत्रीच्छन्दसे नमः, हृदि वासुदेवाय देवतायै नमः।

ततः कराङ्गन्यासौ—ॐ अंगुष्ठाभ्यां नमः। नमस्तर्जनीभ्यां स्वाहा। भगवते मध्यमाभ्यां वषट्। वासुदेवाय अनामिकाभ्यां हुं। ॐ नमो भगवते वासुदेवाय कनिष्ठाभ्यां फट्। एवं हृदयादिषु। तथा च निबन्धे—

तारेण हृदयं प्रोक्तं नमसा शिर ईरितम्।
चतुर्वर्णैः शिखा प्रोक्ता पञ्चार्णैः कवचं मतम्।
समस्तेन भवेदस्त्रमङ्गकल्पनमीरितम्॥

ततो मन्त्रन्यासः—

मूर्ध्नि भाले दृशोरास्ये गले दोर्हृदयाम्बुजे।
कुक्षौ नाभौ ध्वजे जानुद्वये पादद्वये तथा॥

द्वादशाक्षराणि विन्यसेत्। ततो मूर्त्तिपञ्जरं विन्यस्य किरीटमन्त्रेण व्यापकं विधाय ध्यायेत्।

विष्णुं शारदचन्द्रकोटिसदृशं शङ्खं रथाङ्गं गदा-
मम्भोजं दधतं सिताजनिलयं कान्त्या जगन्मोहनम्।
आबद्धाङ्गदहारकुण्डलमहामौलिं स्फुरत्कङ्कणं
श्रीवत्साङ्कमुदारकौस्तुभधरं वन्दे मुनीन्द्रैः स्तुतम्॥

एवं ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्य शङ्खस्थापनं कुर्यात्। ततो वैष्णवोक्तपीठपूजां विधाय पुनर्ध्यात्वा आवाहनादिपञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं विधाय आवरण-पूजामारभेत्। अग्निनिर्ऋतिवायव्यीशानकोणेषु मध्ये दिक्षु च ॐ हृदयाय नमः इत्यादिना पञ्चाङ्गानि पूजयेत्। ततः पूर्वादिदलेषु शान्त्यादिशक्तिसहिताम् वासुदेवादीन् केशवादीनिद्रादीन् वज्रादींश्च सम्पूज्य धूपादिविसर्जनान्तं कर्म समापयेत्। अस्य पुरश्चरणं द्वादशलक्षजपः। तथा च—

वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रं दीक्षितो विजितेन्दियः।
तत्सहस्रं प्रजुहुयात्तिलैराज्यपरिप्लुतैः॥

वासुदेवमन्त्र—ॐ नमो भगवते वासुदेवाय—वासुदेव का यह द्वादशाक्षर मन्त्र है। यन्त्र पूर्ववत् है। पूर्वोक्त नियम से प्रातःकृत्यादि से पीठन्यास तक की क्रिया करके ऋष्यादि न्यास करे। प्रजापतये ऋषये नमः शिरसि। गायत्रीछन्दसे नमः मुखे। वासुदेवाय देवतायै नमः हृदि।

करन्यास—ॐ अंगुष्ठाभ्यां नमः। नमस्तर्जनीभ्यां स्वाहा। भगवते मध्यमाभ्यां वषट्।

वासुदेवाय अनामिकाभ्यां हुं। ॐ नमो भगवते वासुदेवाय कनिष्ठाभ्यां फट्।

हृदयादि न्यास—ॐ हृदयाय नम:। नम: शिरसे स्वाहा। भगवते शिखायै वषट्। वासुदेवाय कवचाय हुं। ॐ नमो भगवते वासुदेवाय अस्त्राय फट्।

मन्त्रवर्णन्यास—

मस्तके—ॐ नम:	गले—गं नम:	नाभौ—सुं नम:
कपाले—नं नम:	बाहुद्वये—वं नम:	लिंगे—दें नम:
चक्षुर्द्वये—मं नम:	हृदि—तें नम:	जानुद्वये—वां नम:
मुखे—भं नम:	उदरे—वां नम:	पादद्वये—यं नम:

तब विष्णुमन्त्रोक्त मूर्तिपञ्जर न्यास करके किरीटमन्त्र से व्यापक न्यास करे। तब निम्नवत् ध्यान करे—

विष्णुं शारदचन्द्रकोटिसदृशं शङ्खं रथाङ्गं गदा-
मम्भोजं दधतं सिताजनिलयं कान्त्या जगन्मोहनम् ।
आबद्धाङ्गदहारकुण्डलमहामौलिं स्फुरत्कङ्कणं
श्रीवत्साङ्कमुदारकौस्तुभधरं वन्दे मुनीन्द्रै: स्तुतम् ।।

शरत्कालीन कोटि चन्द्रों के समान उज्ज्वल और मधुर कान्ति है। चारो भुजाओं में शंख-चक्र-गदा-पद्म है। श्वेत पद्म पर विराजमान हैं। अपनी कान्ति से सारे संसार को मुग्ध करने वाले भगवान् वासुदेव की मैं वन्दना करता हूँ। अंगद-हार-कुण्डल-मुकुट और कंगन आदि आभूषणों से विभूषित हैं। वक्ष में श्रीवत्स और गले में कौस्तुभमणि है। श्रेष्ठ मुनिगण उनकी स्तुति करते हैं।

इसके बाद मानसोपचारों से पूजा करे। शंखपात्र में अर्घ्य स्थापित करे। विष्णु-मन्त्रोक्त पीठपूजन करे। तब ध्यान-आवाहनादि से पञ्च पुष्पाञ्जलिदान तक के सभी कर्म करे। आवरण पूजन करे।

यन्त्र के मध्य बिन्दु के अग्नि, नैर्ऋत्य, वायव्य, ईशान कोणों, मध्य और पूर्वादि चार दिशाओं में पञ्चाङ्ग पूजन करे—ॐ हृदयाय नम:। ॐ नम: शिरसे स्वाहा। ॐ भगवते शिखायै वषट्। ॐ वासुदेवाय कवचाय हुं। ॐ नमो भगवते वासुदेवाय अस्त्राय फट्।

अष्टदल में पूर्वादि दल के क्रम से शान्ति आदि शक्तियों के साथ वासुदेवादि की पूजा करे। जैसे—

पूर्वादि दिशाओं के दलों में—ॐ वासुदेवाय नम:। ॐ सङ्कर्षणाय नम:। ॐ प्रद्युम्नाय नम:। ॐ अनिरुद्धाय नम।

आग्नेयादि दलों में—ॐ शान्त्यै नम:। ॐ श्रियै नम:। ॐ सरस्वत्यै नम:। ॐ रत्यै नम:।

यन्त्रमध्यबिन्दु में— ॐ केशवाय नम:। ॐ नारायणाय नम:। ॐ माधवाय नम:। ॐ गोविन्दाय नम:। ॐ विष्णवे नम:। ॐ मधुसूदनाय नम:। ॐ त्रिविक्रमाय नम:। ॐ वामनाय नम:। ॐ श्रीधराय नम:। ॐ हृषीकेशाय नम:। ॐ पद्मनाभाय नम:। ॐ दामोदराय नम:।

भूपुर में इन्द्रादि दश दिक्पालों और वज्रादि दश आयुधों की पूजा करके धूपादि से विसर्जन तक की क्रियायें सम्पन्न करके पूजा समाप्त करे। इस मन्त्र के पुरश्चरण में बारह लाख जप के बाद घृताक्त तिल से बारह हजार हवन करे।

लक्ष्मीनारायणमन्त्रा:

मायाद्वयं रमाद्वयं लक्ष्मीवासुदेवाय नमः। प्रणवादिरयं मन्त्रः। तथा च निबन्धे—

हृल्लेखाबीजयुगलं रमाबीजयुगं पुनः ।
लक्ष्म्यन्ते वासुदेवाय हृदन्तः प्रणवादिकः ।
चतुर्दशाक्षरः प्रोक्तो मन्त्रोऽयं सुरपादपः ॥

अस्य पूजादिकं वासुदेवमन्त्रवत्। ऋष्यादिन्यासे तु लक्ष्मीवासुदेवो देवता। कराङ्गन्यासमन्त्रस्तु—ॐ ह्रीं ह्रीं अंगुष्ठाभ्यां नमः। ॐ श्रीं श्रीं तर्जनीभ्यां स्वाहा। ॐ लक्ष्मी मध्यमाभ्यां वषट्। ॐ वासुदेवाय अनामिकाभ्यां हुं। ॐ नमः कनिष्ठाभ्यां फट्। एवं हृदयादिषु। तथा च—

हृदयं शक्तिबीजाभ्यां रमाभ्यां शिर ईरितम् ।
लक्ष्म्या प्रोक्ता शिखा वर्म वासुदेवाय कीर्त्तितम् ।
नमसास्त्रं समुद्दिष्टं सर्वं तारादि विन्यसेत् ॥

ततो ध्यानम्—

विद्युच्चन्द्रनिभं वपुः कमलजा वैकुण्ठयोरेकतां
प्राप्तं स्नेहरसेन रत्नविलद्भूषाभरालंकृतम् ।
विद्यापङ्कजदर्पणान्मणिमयं कुम्भं सरोजं गदां
शङ्खं चक्रममूनि विभ्रदमितां दिश्याच्छ्रियं वः सदा ॥

अस्य पूजादिकं सर्वं पूर्ववत्। अस्य पुरश्चरणं चतुर्दशलक्षजपः। तथा च—

वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रं तत्सहस्त्रं सरोरुहैः ।
होमं कुर्याद्विकसितैर्मधुरत्रयसंयुतैः ॥

वर्णलक्षं मन्त्रवर्णसमसंख्यलक्षम् ।

लक्ष्मीनारायणमन्त्र— ॐ ह्रीं ह्रीं श्रीं श्रीं लक्ष्मीवासुदेवाय नम:। यह चतुर्दशाक्षर मन्त्र है। यह मन्त्र कल्पवृक्ष के समान है। वासुदेव की पूजापद्धति से इसका भी

पूजनादि करे।

ऋष्यादि न्यास—नारदऋषये नमः शिरसि। गायत्रीछन्दसे नमः मुखे। लक्ष्मीवासुदेवाय नमः शिरसि।

करन्यास—ॐ ह्रीं ह्रीं अंगुष्ठाभ्यां नमः। ॐ श्रीं श्रीं तर्जनीभ्यां स्वाहा। ॐ लक्ष्मी मध्यमाभ्यां वषट्। ॐ वासुदेवाय अनामिकाभ्यां हुं। ॐ नमः कनिष्ठाभ्यां फट्।

हृदयादि पञ्चाङ्ग न्यास—ॐ ह्रीं ह्रीं हृदयाय नमः। ॐ श्रीं श्रीं शिरसे स्वाहा। ॐ लक्ष्मी शिखायै वषट्। ॐ वासुदेवाय कवचाय हुं। ॐ नमः अस्त्राय फट्। तत्पश्चात् ध्यान करे—

विद्युच्चन्द्रनिभं वपुः कमलजा वैकुण्ठयोरेकताम्
प्राप्तं स्नेहरसेन रत्नविलसद् भूषाभरालंकृतम्।
विद्यापंकजदर्पणान् मणिमयं कुम्भं सरोजं गदाम्
शंखं चक्रममूनि विभ्रदमितां दिश्याच्छ्रियं वः सदा।।

विद्युत् जैसी शोभित लक्ष्मी और चन्द्रमा से मनोहर वासुदेव परस्पर स्नेह के रस से ऐक्यभाव को प्राप्त हैं। विविध रत्नजटित आभूषणों द्वारा अलंकृत हैं। लक्ष्मी के हाथों में विद्या, पद्म, दर्पण और मणिमय कलश है। वासुदेव के हाथों में पद्म, गदा, शंख और चक्र है। ये लक्ष्मी-नारायण हमें सदैव अतुल्य श्री प्रदान करें।

ध्यान के बाद अन्य सभी कर्म वासुदेव-पूजा के समान करे। पुरश्चरण में जप चौदह लाख और एक लाख चालीस हजार त्रिमधुराक्त विकसित पद्मों से हवन होता है।

दधिवामनमन्त्र:

ॐ नमो विष्णवे सुरपतये महाबलाय ठद्वयम्। तथा च निबन्धे—

तारो हृद्विष्णवे पश्चात् ङेऽन्तः सुरपतिर्भवेत्।
महाबलाय ठद्वन्द्वं मनुरष्टादशाक्षरः ॥

अस्य पूजा—प्रातःकृत्यादि उं सोममण्डलाय षोडशकलात्मने नमः इत्यन्तं विन्यस्य ऋष्यादिन्यासं कुर्यात्। शिरसि इन्दवे ऋषये नमः, मुखे विराट्छन्दसे नमः, हृदि दधिवामनाय देवातायै नमः। तथा च निबन्धे—

चन्द्रान्तकल्पिते पीठे प्रागुक्तेन समर्चयेत्।

ततः कराङ्गन्यासौ—ॐ अंगुष्ठाभ्यां नमः। नमस्तर्जनीभ्यां स्वाहा। विष्णवे मध्यमाभ्यां वषट्। सुरपतये अनामिकाभ्यां हुं। महाबलाय कनिष्ठाभ्यां वौषट्। स्वाहा करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्। एवं हृदयादिषु। तथा च—

हृदेकेन शिरो द्वाभ्यां शिखा त्रिभिरुदाहृता।
कवचं पञ्चभिः प्रोक्तं नेत्रं तावद्भिरक्षरैः।

द्वाभ्यामस्त्रमिति प्रोक्तं प्रकारोऽङ्गस्य सूरिभिः ॥

ततो मन्त्रन्यासः—शिरसि भाले चक्षुषोः कर्णयोरोष्ठे तालुके कण्ठे बाहुद्वये उदरे नाभौ गुह्ये ऊरुद्वये जानुद्वये जङ्घाद्वये पादद्वये मन्त्रवर्णान्नमोऽन्तान्न्यसेत्। जङ्घाद्वयादौ द्वयं द्वयं वर्णं ततो मूर्त्तिपञ्जरादिकं विधाय ध्यायेत्।

मुक्तागौरं नवमणिलसद्भूषणं चन्द्रसंस्थं
भृङ्गाकारैरलकनिवहैः शोभिवक्त्रारविन्दम् ।
हस्ताब्जाभ्यां कनककलसं शुद्धतोयाभिपूर्णं
दध्यन्नाढ्यं कनकचषकं धारयन्तं भजामः ॥

एवं ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्य शङ्खस्थापनं कुर्यात्। ततश्चन्द्रमण्डलान्तं पीठं सम्पूज्य पुनर्ध्यात्वा आवाहनादिपञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं विधायावरणपूजां कुर्यात्। तथा च—

चन्द्रान्तं कल्पिते पीठे प्रान्तरे तं समर्चयेत् ।

यथा—अग्न्यादिकोणे मध्ये दिक्षु च ॐ हृदयाय नमः इत्यादिना पूजयेत्। ततो दिग्दलेषु वासुदेवादीन् शक्तिसहितान् ध्वजादीन् तदग्रे केशवादीन् सम्पूज्य इन्द्रवज्रादीन् ऐरावतादीन् दिग्गजांश्च पूजयेत्। ॐ ऐरावताय दिग्गजाय नमः इत्यादिक्रमेण पूजयेत्। एवं पुण्डरीकादीन्। ततो धूपादिविसर्जनान्तं कर्म समापयेत्। अस्य पुरश्चरणं लक्षत्रयजपः। तथा च—

गुणलक्षं जपेन्मन्त्रं तद्दशांशं घृतप्लुतम् ।
पायसान्नं प्रजुहुयाद्दध्यन्नं वा यथाविधि ॥

दधिवामनमन्त्र— ॐ नमो विष्णवे सुरपतये महाबलाय स्वाहा। यह अष्टादशाक्षर मन्त्र है। इसका यन्त्र पूर्ववत् है।

प्रात:कृत्यादि से उं सोममण्डलाय षोडशकलात्मने नम: तक पीठन्यास करके ऋष्यादि न्यास करे। इन्दवे ऋषये नम: शिरसि। विराट् छन्दसे नम: मुखे दधिवामनाय देवताय नम: हृदि।

करन्यास— ॐ अंगुष्ठाभ्यां नम:। नम: तर्जनीभ्यां स्वाहा। विष्णवे मध्यमाभ्यां वषट्। सुरपतये अनामिकाभ्यां हुं। महाबलाय कनिष्ठाभ्यां वौषट्। स्वाहा करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्।

षडंग न्यास— ॐ हृदयाय नम:। नम: शिरसे स्वाहा। विष्णवे शिखायै वषट्। सुरपतये कवचाय हुं। महाबलाय नेत्रत्रयाय वौषट्। स्वाहा अस्त्राय फट्।

मन्त्रवर्णन्यास—

शिरसि—ॐ नमः	कण्ठे—सुं नमः	ऊरुद्वये—हां नमः
भाले—नं नमः	बाहुद्वये—रं नमः	जानुद्वये—वं नमः
चक्षुर्द्वयोः—मों नमः	हृदि—पं नमः	जंघाद्वये—लां नमः यं नमः
कर्णद्वयोः—विं नमः	उदरे—तं नमः	पादद्वये—स्वां नमः हां नमः
ओष्ठे—ष्णं नमः	नाभौ—यें नमः	
तालुनि—वें नमः	गुह्ये—मं नमः	

तदनन्तर कृष्णमन्त्रोक्त मूर्तिपञ्जर न्यास करके ध्यान करे—

मुक्तागौरं नवमणिलसद्भूषणं चन्द्रसंस्थं
भृङ्गाकारैरलकनिवहैः शोभिवक्त्रारविन्दम् ।
हस्ताब्जाभ्यां कनककलसं शुद्धतोयाभिपूर्णं
दध्यन्नाढ्यं कनकचषकं धारयन्तं भजामः ।।

भगवान् दधिवामन का वर्ण मोती के समान उज्ज्वल है। नूतन मणियों से जटित अलंकार धारण किए हुए हैं। चन्द्रमण्डल में विराजमान हैं। मुखकमल भौंरों के आकार वाले केशों की लटों से सुशोभित है। एक करकञ्ज में शुद्ध जल से पूर्ण स्वर्णकलश है। दूसरे करकञ्ज में दही और अन्न से पूर्ण स्वर्णपात्र है। ऐसे दधिवामन भगवान् को मैं वन्दना करता हूँ।

इसके बाद मानसोपचारों से पूजा करके शंख स्थापित करे। 'ॐ सोममण्डलाय षोडशकलात्मने नमः' इत्यादि तक पीठपूजा करके फिर ध्यान-आवाहनादि से पञ्च पुष्पाञ्जलिदान तक के कर्मों को करके आवरणा पूजा करे।

कर्णिकाकेशर में अग्न्यादि चार कोणों में, मध्य में और चतुर्दिक षडंग पूजन करे— ॐ हृदयाय नमः। नमः शिरसे स्वाहा। विष्णवे शिखायै वषट्। सुरपतये कवचाय हुं। महाबलाय नेत्रत्रयाय वौषट्। स्वाहा अस्त्राय फट्।

अष्टदल के पूर्वादि दलों में—ॐ वासुदेवाय नमः। ॐ सङ्कर्षणाय नमः। ॐ प्रद्युम्नाय नमः। ॐ अनिरुद्धाय नमः। आग्नेयादि कोनों के दलों में—ॐ शान्त्यै नमः। ॐ श्रियै नमः। ॐ सरस्वत्यै नमः। ॐ रत्यै नमः से पूजन करे।

देव के आगे ध्वजाय नमः से ध्वजा का पूजन करे। बिन्दु में केशवादि की पूजा करे—ॐ केशवाय नमः। ॐ नारायणाय नमः। ॐ माधवाय नमः। ॐ गोविन्दाय नमः। ॐ विष्णवे नमः। ॐ मधुसूदनाय नमः। ॐ त्रिविक्रमाय नमः। ॐ वामनाय नमः। ॐ श्रीधराय नमः। ॐ हृषीकेशाय नमः। ॐ पद्मनाभाय नमः। ॐ दामोदराय नमः।

भूपुर में इन्द्रादि दश दिक्पालों और उनके आयुधों का पूजन करे। भूपुर के बाहर

पूर्वादि क्रम से दिग्गजों की पूजा करे—ॐ ऐरावताय नमः। ॐ पुण्डरीकाय नमः। ॐ वामनाय नमः। ॐ कुमुदाय नमः। ॐ अञ्जनाय नमः। ॐ पुष्पदन्ताय नमः। ॐ सार्वभौमाय नमः। ॐ सुप्रतीकाय नमः। तब धूपादि विसर्जन तक की क्रिया करे। तीन लाख जप से इस मन्त्र का पुरश्चरण करे। जप के पश्चात् घृताक्त पायसान्न या दहीमिश्रित अन्न से तीस हजार हवन करे।

हयग्रीवमन्त्राः

ॐ उद्गिरत्प्रणवोद्गीथ सर्ववागीश्वरेश्वर ।
सर्ववेदमयाचिन्त्य सर्वं बोधय बोधय ॥

तथा च निबन्धे—

उद्गिरत्पदमाभाष्य प्रणवोद्गीथ शब्दतः ।
सर्ववागीश्वरेत्यन्ते प्रवदेदीश्वरेत्यथ ॥
सर्ववेदमयाचिन्त्य शब्दान्ते सर्वमुच्चरेत् ।
बोधयद्वितयान्तोऽयं मन्त्रस्तारादिरीरितः ॥

अस्य पूजा—प्रातःकृत्यादि-वैष्णवोक्तं पीठमन्वन्तं विधाय ऋष्यादिन्यासं कुर्यात्। यथा—शिरसि ब्रह्मणे ऋषये नमः। मुखेऽनुष्टुप्छन्दसे नमः। हृदि श्रीहयग्रीवाय देवतायै नमः।

ततः कराङ्गन्यासौ—ॐ अंगुष्ठाभ्यां नमः। उद्गिगरत्प्रणवोद्गीथ तर्जनीभ्यां स्वाहा। सर्ववागीश्वरेश्वर मध्यमाभ्यां वषट्। सर्ववेदमयाचिन्त्य अनामिकाभ्यां हुं। सर्वं बोधय बोधय कनिष्ठाभ्यां फट्। एवं हृदयादिषु। ततो ध्यानम्—

शरच्छशाङ्कप्रभमश्ववक्त्रं मुक्तामयैराभरणैः प्रदीप्तम् ।
रथाङ्गशङ्खार्चितबाहुयुग्मं जानुद्वयं न्यस्तकरं भजामः ॥

एवं ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्य शङ्खस्थापनं कृत्वा वैष्णवोक्तपीठपूजां विधाय पुनर्ध्यात्वा हसूमित्यसेन मूर्त्तिं सङ्कल्पयेत्। तथा च—

बीजेन मूर्त्तिं सङ्कल्प्य बीजमुद्धरेत् यथा ।
वियद्भृगुस्थमर्घीशबिन्दुमद्बीजमीरितम् ॥

ततः पुनर्ध्यात्वा आवाहनादिपञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं विधायावरणपूजा-मारभेत्। यथा—

केशरेषु चतुर्दिक्षु चतुर्वेदान् ऋग्यजुःसामाथर्वान्, विदिक्षु अङ्गस्मृतिन्यायसर्व-शास्त्राणि पूजयेत्।

अर्चयेत्पत्रमध्येषु विधानेनाङ्गदेवताः ।

तद्बहिरिन्द्रादीन् वज्रादींश्च पूजयेत्। ततो धूपादिविसर्जनान्तं कर्म समापयेत्। अस्य पुरश्चरणं त्रयस्त्रिंशल्लक्षजपः। तथा च—

वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रं कुन्दपुष्पैर्मधुप्लुतैः ।
दशांशं वैष्णवे वह्नौ जुहुयान्मन्त्रवित्तमः ।।

हयग्रीवमन्त्र—मूलोक्त कूटों का उद्धार करने पर हयग्रीव का इस प्रकार का मन्त्र होता है—ॐ उद्गिरद् प्रणवोद्गीथ सर्ववागीश्वरेश्वर सर्ववेदमयाचिन्त्य सर्वं बोधय बोधय। निबन्ध के अनुसार भी मन्त्र इसी प्रकार का बनता है। इसमें चौंतीस अक्षर होते हैं। यन्त्र पूर्ववत् है।

सामान्य पूजा पद्धति से प्रातःकृत्यादि करके विष्णुमन्त्रोक्त पीठन्यास तक के कर्मों को करे। तब ऋष्यादि न्यास करे।

ऋष्यादि न्यास—ब्रह्मणे ऋषये नमः शिरसि। अनुष्टुप्छन्दसे नमः मुखे। श्रीहयग्रीवदेवतायै नमः हृदि।

करन्यास—ॐ अंगुष्ठाभ्यां नमः। उद्गिरद् प्रणवोद्गीथ तर्जनीभ्यां स्वाहा। सर्ववागीश्वरेश्वर मध्यमाभ्यां वषट्। सर्ववेदमयाचिन्त्य अनामिकाभ्यां हुं। सर्वं बोधय बोधय कनिष्ठाभ्यां फट्।

पञ्चाङ्गन्यास—ॐ हृदयाय नमः। उद्गिरद् प्रणवोद्गीथ शिरसे स्वाहा। सर्ववागीश्वरेश्वर शिखायै वषट्। सर्ववेदमयाचिन्त्य कवचाय हुं। सर्वं बोधय बोधय अस्त्राय फट्। इसके बाद ध्यान करे—

शरच्छशाङ्कप्रभमश्ववक्त्रं मुक्तामयैराभरणैः प्रदीप्तम्।
रथाङ्गशंखार्चितबाहुयुग्मं जानुद्वये न्यस्तकरं भजामः।।

भगवान् हयग्रीव की कान्ति शरत्कालीन चन्द्रमा जैसी है। मुख अश्व का है। मोतियों से युक्त आभूषणों से सुशोभित हैं। एक हाथ में चक्र और दूसरे में शंख है। अन्य दोनों हाथ दोनों घुटनों पर हैं। ऐसे भगवान् हयग्रीव की मैं वन्दना करता हूँ।

इसके बाद मानसोपचारों से पूजा करके शंखस्थापन करे। विष्णुमन्त्रोक्त विधि से पीठपूजा करके ध्यान करे। 'हंस' मन्त्र से मूर्ति कल्पित करे। तब पुनः ध्यान-आवाहनादि से पञ्च पुष्पाञ्जलि-दानपर्यन्त कार्य करके आवरण पूजा करे। यन्त्र के अष्टदल पद्म के केशर की चारो दिशाओं में चारो वेदों की पूजा करे—ॐ ऋग्वेदाय नमः। ॐ यजुर्वेदाय नमः। ॐ सामवेदाय नमः। ॐ अथर्ववेदाय नमः। चारो कोणों में अग्न्यादि क्रम से शास्त्रों की पूजा करे—ॐ अङ्गशास्त्राय नमः। ॐ स्मृतिशास्त्राय नमः। ॐ न्याय-शास्त्राय नमः। ॐ सर्वशास्त्राय नमः।

दलों के अग्रभाग में अग्न्यादि चारो कोणों में, चारो दिशाओं में अंगदेवताओं का

पूजन करे। पञ्चाङ्गन्यास में वर्णित मन्त्रों से पञ्चाङ्ग पूजन करे। भूपुर में इन्द्रादि और वज्रादि का पूजन करे। तब धूपादि से विसर्जन तक की क्रियाओं को करे।

पुरश्चरण में तैंतीस लाख जप करे। तीन लाख तीस हजार मधु से अक्त कुन्द-पुष्पों से हवन करे।

हयग्रीवैकाक्षरमन्त्रः

स च हकारसकारषष्ठस्वरविन्द्वात्मकः। तथा च कल्पे—

वियद्भृगुस्थमर्घीशविन्दुमद्बीजमीरितम् ।
एकाक्षरो मनुः प्रोक्तश्चतुर्वर्गफलप्रदः ॥

अस्य ब्रह्मा ऋषिरनुष्टुप्छन्दः हयग्रीवरूपी विष्णुर्देवता हकारो बीजं ऊकारः कीलकं सकारः शक्तिः। ह्सां ह्सीं ह्सूं ह्सैं ह्सौं ह्सः इति षडङ्गकल्पना। ध्यानम्—

धवलनलिननिष्ठं क्षीरगौरं कराब्जै-
र्जपवलयसरोजे पुस्तकाभीष्टदाने ।
दधतममलवस्त्राकल्पजालाभिरामं
तुरगवदनजिष्णुं नौमि विद्याग्रविष्णुम् ॥

अन्यच्च—

शरच्छशाङ्कप्रभमश्ववक्त्रं मुक्तामयैराभरणैरुपेतम् ।
रथाङ्गशङ्खोर्ध्वकरञ्च विद्याव्याख्यानमुद्राढ्यकरं नमामि ॥

एवं ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्य शङ्खस्थापनं कृत्वा पीठपूजां विधाय पुनर्ध्यात्वा आवाहनादिपञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं विधायावरणपूजामारभेत्। तत्राङ्गैः प्रथममावरणम्। प्रज्ञाहय-मेधाहय-स्मृतिहय-विद्याहय-लक्ष्मीहय-वागीशीहय-विद्याविलासहय-नादविमर्दनहयैरष्टाभिर्द्वितीयम्। लक्ष्मी-सरस्वती-रति-प्रीति-कीर्त्ति-तुष्टि-पुष्टिस्तृतीयम्। कुमुदादिभिर्गजैश्चतुर्थम्। इन्द्रादिभिः पञ्चमम्। ततो धूपादिविसर्जनान्तं कर्म समापयेत्। अस्य पुरश्चरणं चतुर्लक्षजपः। तथा च—

वेदलक्षं जपेन्मन्त्रं दशांशं जुहुयात्ततः ।

आज्येन दशांशहोमः।

हयग्रीव का एकाक्षर मन्त्र—'कल्प' के अनुसार हयग्रीव का चतुर्वर्गप्रदायक एकाक्षर मन्त्र 'ह्सूं' है। इसका यन्त्र विष्णुमन्त्रोक्त है।

सामान्य पूजापद्धति से प्रातःकृत्यादि करके विष्णुमन्त्रोक्त पीठन्यास करे। तब ऋष्यादि न्यास करे।

ऋष्यादि न्यास—ब्रह्मणे ऋषये नमः शिरसि। अनुष्टुप्छन्दसे नमः मुखे। हयग्रीवरूपिणी

विष्णुदेवतायै नम: हृदि। हकाराय बीजाय नम: गुह्ये। सकाराय शक्तये नम: पादयो:। ऊकाराय कीलकाय नम:।

करन्यास—ह्सां अंगुष्ठाभ्यां नम:। ह्सीं तर्जनीभ्यां स्वाहा। ह्सूं मध्यमाभ्यां वषट्। ह्सैं अनामिकाभ्यां हुं। ह्सौं कनिष्ठाभ्यां वौषट्। ह्सौ: करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्।

षडंग न्यास— ह्सां हृदयाय नम:। ह्सीं शिरसे स्वाहा। ह्सूं शिखायै वषट्। ह्सैं कवचाय हुं। ह्सौं नेत्रत्रयाय वौषट्। ह्स: अस्त्राय फट्। न्यास के बाद ध्यान करे—

धवलनलिननिष्ठं क्षीरगौरं कराब्जै: जपवलयसरोजे पुस्तकाभीष्टदाने।
दधतममलवस्त्राकल्पजालाभिरामं तुरगवदनजिष्णुं नौमि विद्याग्रविष्णुम्।।

श्वेत कमल पर आसीन हैं। दूध जैसा उज्ज्वल वर्ण है। करकमलों में गोलाकार जपमाला, पद्म, पुस्तक और वरमुद्रा है। वस्त्र श्वेत हैं। रूप अति मनोहर है। विजेता और विद्वान् अश्वमुख विष्णु को मैं नमस्कार करता हूँ। दूसरा ध्यान इस प्रकार का है—

शरच्छशाङ्कप्रभमश्ववक्त्रं मुक्तामयैराभरणैरुपेतम्।
रथाङ्गशंखोर्ध्वकरं च विद्याव्याख्यानमुद्राढ्यकरं नमामि।।

शारदीय चन्द्र जैसी कान्ति है। मोतियों से युक्त अलंकारों से विभूषित हैं। ऊपरी दोनों हाथों में चक्र और शंख है। नीचे के दोनों हाथों में विद्या और ज्ञानमुद्रा है। अश्वमुख भगवान् हयग्रीव को मैं नमस्कार करता हूँ।

मानसोपचारों से पूजा करके शंख स्थापित करे। पीठपूजा करके पुन: ध्यान-आवाहनादि से पञ्च पुष्पाञ्जलि तक की क्रियाओं को करके आवरण-पूजा करे।

षडंग पूजन—प्रथम आवरण में छ: अंगों का पूजन षडंग न्यासोक्त छ: मन्त्रों से करे।

द्वितीय आवरण में अष्टदल में अष्ट अश्वों का पूजन करे—ॐ प्रज्ञाहयाय नम:। ॐ मेधाहयाय नम:। ॐ स्मृतिहयाय नम:। ॐ विद्याहयाय नम:। ॐ लक्ष्मीहयाय नम:। ॐ वागीशीहयाय नम:। ॐ विद्याविशालहयाय नम:। ॐ वादविमर्दनहयाय नम:।

तृतीय आवरण में अष्ट देवियों का पूजन करे—ॐ लक्ष्म्यै नम:। ॐ सरस्वत्यै नम:। ॐ रत्यै नम:। ॐ प्रीत्यै नम:। ॐ कीर्त्यै नम:। ॐ तुष्ट्यै नम:। ॐ पुष्ट्यै नम:।

चतुर्थ आवरण में आठ गजों का पूजन करे—ॐ ऐरावतदिग्गजाय नम:। ॐ पुण्डरीकदिग्गजाय नम:। ॐ वामनदिग्गजाय नम:। ॐ कुमुददिग्गजाय नम:। ॐ अंजनदिग्गजाय नम:। ॐ पुष्पदन्तदिग्गजाय नम:। ॐ सार्वभौमदिग्गजाय नम:। ॐ सुप्रतीकदिग्गजाय नम:।

पञ्चम आवरण में इन्द्रादि दश दिक्पालों का पूजन करे। इसके बाद धूपादि से विसर्जन तक के सभी कार्य करे।

पुरश्चरण में चार लाख जप और चालीस हजार हवन घी से करे।

मन्त्रान्तरम्

हयग्रीवैकाक्षरादिचतुर्थ्यन्तहयशिरःशब्दो नमोऽन्तः। तथा च कल्पे—

हयशिरःपदं ङेऽन्तं हृदन्तञ्च समुद्धरेत्।
स्वबीजादिरयं मन्त्रश्चतुर्वर्गफलप्रदः ॥

अस्य ब्रह्मा ऋषिरनुष्टुप्छन्दो हयग्रीवरूपी विष्णुर्देवता अन्यत्सर्वमेकाक्षरवत्।

अन्य हयग्रीव मन्त्र—हसूं हयशिरसे नमः। यह चतुर्वर्ग फलप्रदायक है। इसका सभी विधान एकाक्षर मन्त्रवत् है। 'कल्प' में इस मन्त्र के सम्बध में यही विचार है।

मन्त्रान्तरम्

उद्गिरत्प्रणवोद्गीथ सर्ववागीश्वरेश्वर।
सर्ववेदमयाचिन्त्य सर्वं बोधय बोधय।
स्वाहान्तो मनुराख्यातो बीजः प्रणवसम्पुटः ॥

मन्त्रान्तरम्

विश्वोत्तीर्णस्वरूपाय चिन्मयानन्दरूपिणे।
तुभ्यं नमो हयग्रीव विद्याराजाय विष्णवे।
स्वाहान्तो मनुराख्यातो हंसेन सम्पुटीकृतः ॥

एतयोर्मन्त्रयोः पूर्वोक्तहयग्रीवमन्त्रवत्सर्वं ज्ञातव्यम्।

अन्य हयग्रीव मन्त्र—मूलोक्त श्लोकों के अनुसार दो मन्त्र बनते हैं—

१. ॐ ह्सूं उद्गिरत् प्रणवोद्गीथ सर्ववागीश्वरेश्वर सर्ववेदमयाचिन्त्य सर्वं बोधय बोधय स्वाहा ह्सूं ॐ।

२. हंसः विश्वोत्तीर्णस्वरूपाय चिन्मयानन्दरूपिणे तुभ्यं नमो हयग्रीवविद्याराजाय विष्णवे स्वाहा हंसः।

इन दोनों मन्त्रों की पूजाविधि पूर्वोक्त हयग्रीव मन्त्र के समान ही है।

नृसिंहमन्त्रः

निबन्धे—

उग्रं वीरं वदेत्पूर्वं महाविष्णुमनन्तरम्।
ज्वलन्तं पदमाभाष्य सर्वतोमुखमीरयेत् ॥
नृसिंहं भीषणं भद्रं मृत्युमृत्युं वदेत्ततः।
नमाम्यहमिति प्रोक्तो मन्त्रराजः सुरद्रुमः ॥

अयं मन्त्रो मायापुटितो भवति तदा सर्वकामफलप्रदः। तथा च कल्पे—

हृल्लेखापुटितश्चेत् स्यात्सर्वकामफलप्रदः।

अस्य पूजा—प्रातःकृत्यादिवैष्णवोक्तपीठमन्वन्तं विधाय ऋष्यादिन्यासं कुर्यात्। शिरसि ब्रह्मणे ऋषये नमः, मुखे अनुष्टुप्छन्दसे नमः, हृदि नृसिंहाय देवतायै नमः। ततः कराङ्गन्यासौ—

चतुर्भिर्हृदयं वर्णैः शिरस्तावद्भिरक्षरैः ।
शिखाष्टाभिः समुद्दिष्टा षड्भिः कवचमीरितम् ।
तावद्भिर्नयनं प्रोक्तं मन्त्रं स्यात्करणाक्षरैः ॥

ततो मन्त्रन्यासः—

शिरोललाटनेत्रेषु मुखबाह्वंघ्रिसन्धिषु ।
साग्रेषु कुक्षौ हृदये गले पार्श्वद्वये पुनः ।
अपराङ्गे च ककुदि न्यसेद्वर्णान्यथाक्रमम् ॥

ततो ध्यानम्—

माणिक्याद्रिसमप्रभं निजरुचा सन्त्रस्तरक्षोगणं
जानुन्यस्तकराम्बुजं त्रिनयनं रत्नोल्लसद्भूषणम् ।
बाहुभ्यां धृतशङ्खचक्रमनिशं दंष्ट्रोग्रवक्त्रोलस-
ज्ज्वालाजिह्वमुदग्रकेशनिचयं वन्दे नृसिंहं विभुम् ॥

एवं ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्य शङ्खस्थापनं विधाय वैष्णवोक्तपीठपूजां कृत्वा पुनर्ध्यात्वा आवाहनादिपञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं विधायावरणपूजामारभेत्। तद्यथा—केशरेष्वग्न्यादिकोणे मध्ये दिक्षु च अङ्गानि पूजयेत्। यथा—

उग्रं वीरं हृदयाय नमः। महाविष्णुं शिरसे स्वाहा। ज्वलन्तं सर्वतोमुखं शिखायै वषट्। नृसिंहं भीषणं कवचाय हुं। भद्रं मृत्युमृत्युं नेत्रत्रयाय वौषट्। नमाम्यहं अस्त्राय फट्। ततः पूर्वादिदले गरुडं शङ्करं शेषं ब्रह्माणञ्च पूजयेत्, विदिग्दलेषु श्रियं ह्रियं धृतिं पुष्टिञ्च प्रणवादिनमोऽन्तेन पूजयेत्। तद्बहिरिन्द्रादीन् वज्रादींश्च पूजयेत्। ततो धूपादिविसर्जनान्तं कर्म समापयेत्। अस्य पुरश्चरणं द्वात्रिंशल्लक्षजपः। तथा च—

वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रं तत्सहस्रं घृतप्लुतैः ।
पायसान्नैः प्रजुहुयाद्विधिवत्पूजितेऽनले ॥

नृसिंह मन्त्र—ह्रीं उग्रं वीरं महाविष्णुं ज्वलन्तं सर्वतोमुखम्। नृसिंहं भीषणं भद्रं मृत्योर्मृत्युं नमाम्यहम् ह्रीं। इस मन्त्र की उपासना से सभी मनोरथ पूर्ण होते हैं। यन्त्र पूर्वोक्त विष्णुयन्त्र के समान होता है।

सामान्य पूजापद्धति से प्रातःकृत्यादि करके विष्णुपूजापद्धति के अनुसार पीठन्यास तक के सारे कर्म करके ऋष्यादि न्यास करे।

ऋष्यादि न्यास—ब्रह्मणे ऋषये नमः शिरसि। अनुष्टुप्छन्दसे नमः मुखे। नृसिंहदेवतायै नमः हृदि।

करन्यास—उग्रं वीरं अंगुष्ठाभ्यां नमः। महाविष्णुं तर्जनीभ्यां स्वाहा। ज्वलन्तं सर्वतोमुखं मध्यमाभ्यां वषट्। नृसिंहं भीषणं अनामिकाभ्यां हुं। भद्रं मृत्योर्मृत्युं कनिष्ठाभ्यां वौषट्। नमाम्यहम् करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्।

अंगन्यास—उग्रं वीरं हृदयाय नमः। महाविष्णुं शिरसे स्वाहा। ज्वलन्तं सर्वतोमुखम् कवचाय हुं। भद्रं मृत्योर्मृत्युं नेत्रत्रयाय वौषट्। नमाम्यहम् अस्त्राय फट्।

मन्त्रवर्णन्यास—

मस्तके—उं नमः	वामकूर्परे—सं नमः	वामजंघानिम्नसन्धौ—भं नमः
ललाटे—ग्रं नमः	वाममणिवन्धे—र्वं नमः	वामपादांगुलिमूले—द्रं नमः
दक्षनेत्रे—वीं नमः	वामांगुलिमूले—तों नमः	वामपादांगुल्यग्रे—मृं नमः
वामनेत्रे—रं नमः	वामांगुल्यग्रे—मुं नमः	उदरे—त्यों नमः
मुखे—मं नमः	दक्षपादोरुसन्धौ—खं नमः	हृदि—र्मृं नमः
दक्षबाहुमूले—हां नमः	जानुनी—नृं नमः	गले—त्युं नमः
दक्षकूर्परे—विं नमः	दक्षजंघायां—सिं नमः	दक्षपार्श्वे—नं नमः
दक्षमणिबन्धे—ष्णुं नमः	दक्षपादांगुलिमूले—हं नमः	वामपार्श्वे—मां नमः
अंगुलिमूले—ज्वं नमः	दक्षपादांगुल्यग्रे—भीं नमः	अपरांगे—म्यं नमः
दक्षांगुल्यग्रे— लं नमः	वामपादोरुसन्धौ—षं नमः	कुकुदि—हं नमः
वामबाहुमूले—न्तं नमः	वामपादमध्यसन्धौ—णं नमः	

न्यास-सम्पादन के पश्चात् निम्नवत् ध्यान करे—

माणिक्याद्रिसमप्रभं निजरुचा सन्त्रस्तरक्षोगणं
जानुन्यस्तकराम्बुजं त्रिनयनं रत्नोल्लसद्भूषणम् ।
बाहुभ्यां धृतशङ्खचक्रमनिशं दंष्ट्रोग्रवक्त्रोलस-
ज्ज्वालाजिह्वमुदग्रकेशनिचयं वन्दे नृसिंहं विभुम् ।।

भगवान् नृसिंह की प्रभा माणिक्य के समान है। उनके तेज से राक्षस भयभीत हैं। रत्नजटित आभूषणों से सुशोभित वे त्रिनेत्र हैं। उनके दो करकमल घुटनों पर और दो हाथों में शंख-चक्र है। अग्निशिखा के समान जीभ दाँतों से उग्र मुख से बाहर निकला हुआ है। दीर्घ केशों से युक्त भगवान् नृसिंह की मैं वन्दना करता हूँ। ध्यान के बाद मानसोपचारों से पूजा करके शंख स्थापित करे। विष्णुपूजापद्धति से पीठपूजा करके पुनः ध्यान-आवाहनादि करके पाँच पुष्पाञ्जलि देकर आवरण-पूजा करे।

अष्टदल पद्मकेशर में अग्न्यादि कोणों में, मध्य में और चतुर्दिक षडंग न्यास में वर्णित मन्त्रों से षडंग पूजन करे।

अष्टदलों में पूजन इस प्रकार करे—पूर्वदले ॐ गरुड़ाय नम:। दक्षिणदले ॐ शंकराय नम:। पश्चिमदले ॐ शेषाय नम:। उत्तरदले ॐ ब्रह्मणे नम:। आग्नेयदले ॐ श्रियै नम:। नैर्ऋत्यदले ॐ ह्रियै नम:। वायव्यदले ॐ धृत्यै नम:। ईशानदले ॐ पुष्ट्यै नम:।

भूपुर में इन्द्रादि और वज्रादि की पूजा करके धूपादि से विसर्जन तक की क्रिया करके पूजन पूरा करे।

पुरश्चरण में बत्तीस लाख जप और घृताक्त पायस से बत्तीस हजार हवन करे।

मन्त्रान्तरम्

निबन्धे—

पाशः शक्तिर्नरहरिरंकुशो वर्म फट् मनुः ।
षडक्षरो नरहरेः कथितः सर्वकामदः ॥

अस्य पूजा—प्रातःकृत्यादिवैष्णवोक्तपीठमन्वन्तं विन्यस्य ऋष्यादिन्यासं कुर्यात्। शिरसि ब्रह्मणे ऋषये नमः, मुखे पंक्तिच्छन्दसे नमः, हृदि नृसिंहाय देवतायै नमः।

ततः कराङ्गन्यासौ—आं अंगुष्ठाभ्यां नमः। ह्रीं तर्जनीभ्यां स्वाहा। क्ष्रौं मध्यमाभ्यां वषट्। क्रौं अनामिकाभ्यां हुं। हुं कनिष्ठाभ्यां वौषट्। फट् करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्। एवं हृदयादिषु। ततो ध्यानम्—

कोपादालोलजिह्वं विवृतनिजमुखं सोमसूर्याग्निनेत्रं
पादादानाभिरक्तप्रभमुपरिसितं भिन्नदैत्येन्द्रगात्रम् ।
शङ्खं चक्रं च पाशांकुशकुलिशगदादारुणान्युद्वहन्तं
भीमं तीक्ष्णोग्रदंष्ट्रं मणिमयविविधाकल्पमीडे नृसिंहम् ॥

एवं ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्य शङ्खस्थापनं कृत्वा वैष्णवोक्तपीठपूजां विधाय पुनर्ध्यात्वा आवाहनादिपञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं विधायावरणपूजामारभेत्।

तद्यथा—केशरेष्वग्न्यादिकोणे मध्ये दिक्षु च आं हृदयाय नमः इत्यादिना षडङ्गानि पूजयेत्। ततः पत्रेषु पूर्वादि शङ्खं चक्रं पाशम् अंकुशं वज्रं गदां खड्गं खेटकञ्च प्रणवादि-नमोऽन्तेन पूजयेत्। तथा च निबन्धे—

अङ्गावृतेर्बहिश्चक्रं शङ्खं पाशांकुशौ पुनः ।
वज्रं कौमोदकीं खड्गं खेटं पत्रेषु पूजयेत् ॥

ततः इन्द्रादीन् वज्रादींश्च पूजयेत्। ततो धूपादिविसर्जनान्तं कर्म समापयेत्। अस्य पुरश्चरणं षड्लक्षजपः। तथा—

ऋतुलक्षं जपेन्मन्त्रं घृतेन जुहुयात्ततः ।
तत्सहस्रं समिद्धेऽग्नौ तोषयेद्वसुना गुरुम् ॥

नृसिंह का षडक्षर मन्त्र—आं ह्रीं क्ष्रौं क्रों हुं फट्। यह नृसिंह का षडक्षर मन्त्र है। यह सभी मनोरथों को पूर्ण करता है।

सामान्य पूजापद्धति से प्रातःकृत्यादि करके विष्णुमन्त्रोक्त पीठन्यास करे। तब ऋष्यादि न्यास करे—ब्रह्मणे ऋषये नमः शिरसि। पंक्तिच्छन्दसे नमः मुखे। नृसिंहाय देवतायै नमः हृदि।

करन्यास—आं अंगुष्ठाभ्यां नमः। ह्रीं तर्जनीभ्यां स्वाहा। क्ष्रौं मध्यमाभ्यां वषट्। क्रों अनामिकाभ्यां हुं। हुं कनिष्ठाभ्यां वौषट्। फट् करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्।

हृदयादि न्यास—आं हृदयाय नमः। ह्रीं शिरसे स्वाहा। क्ष्रौं शिखायै वषट्। क्रों कवचाय हुं। हुं नेत्रत्रयाय वौषट्। फट् अस्त्राय फट्। तब ध्यान करे—

कोपादालोलजिह्वं विकृतनिजमुखं सोमसूर्याग्निनेत्रम्
पादादानाभिरक्तप्रभमुपरिसितं भिन्नदैत्येन्द्रगात्रम् ।
शंखं चक्रं च पाशाङ्कुशकुलिशगदादारुणान्युद्वहन्तम्
भीमं तीक्ष्णोग्रदंष्ट्रं मणिमयविविधाकल्पमीडे नृसिंहम् ।।

भगवान् नृसिंह की जिह्वा क्रोधवश निरन्तर चञ्चल है। मुख खुला हुआ है। चन्द्र, सूर्य, अग्नि के समान तीन नेत्र हैं। दोनों पैरों से लेकर नाभि तक का शरीर लाल रंग का है और उसके ऊपर का भाग गौर वर्ण का है। इन्होंने दैत्यराज हिरण्यकशिपु का शरीर विदीर्ण कर दिया है। हाथों में शंख, चक्र, पाश, अंकुश, भयानक वज्र और गदा है। दाँत भीषण तीक्ष्ण और उग्र हैं। मणिजटित अनेक आभूषणों से सुशोभित नृसिंह भगवान् की मैं स्तुति करता हूँ।

ध्यान के बाद मानसोपचारों से पूजा करके शंख स्थापित करे। विष्णुमन्त्रोक्त पीठपूजा, पुनः ध्यान-आवाहनादि पुष्पाञ्जलिदान करके आवरण पूजन करे।

केशर में अग्न्यादि चारो कोनों में, मध्य में और चतुर्दिक षडंग पूजा करे। यह पूजा षडंग न्यास में वर्णित मन्त्रों से करे।

अष्टदल में पूर्वादि क्रम से आयुधों की पूजा करे—ॐ शंखाय नमः। ॐ चक्राय नमः। ॐ पाशाय नमः। ॐ अंकुशाय नमः। ॐ वज्राय नमः। ॐ गदाय नमः। ॐ खड्गाय नमः। ॐ खेटकाय नमः।

भूपुर में इन्द्रादि और वज्रादि की पूजा करके धूपादि से विसर्जन तक की क्रिया करके पूजा पूर्ण करे।

पुरश्चरण में छः लाख जप और साठ हजार हवन घी से करके गुरु को धन देकर प्रसन्न करे।

मन्त्रान्तरम्

क्षकारो वह्निमारूढो मनुविन्दुसमन्वितः ।
एकाक्षरो मनुः प्रोक्तः सर्वकामफलप्रदः ।।

अस्य पूजादिकं सर्वं मन्त्रराजवत्। विशेषस्तु अत्रिर्ऋषिर्गायत्रीच्छन्दोः नृसिंहो देवता क्षकारो बीजं औकारः शक्तिः षड्दीर्घयुक्तबीजेनाङ्गकल्पना। अस्य पुरश्चरण-मष्टलक्षजपः। तथा च—वसुलक्षं जपेन्मन्त्रं इत्यादिवचनात्।

नृसिंह का एकाक्षर मन्त्र—श्री नृसिंह के इस एकाक्षर मन्त्र 'क्ष्रौं' की उपासना से सभी इच्छायें पूरी होती हैं। इसकी पूजाविधि पूर्वोक्त मन्त्र के समान है। विशेषता यह है कि इसके ऋषि अत्रि, छन्द गायत्री और देवता नृसिंह हैं।

करन्यास—क्ष्रां अंगुष्ठाभ्यां नमः। क्ष्रीं तर्जनीभ्यां स्वाहा। क्ष्रूं मध्यमाभ्यां वषट्। क्ष्रैं अनामिकाभ्यां हुं। क्ष्रौं कनिष्ठाभ्यां वौषट्। क्ष्रः करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्।

षडंग न्यास—क्ष्रां हृदयाय नमः। क्ष्रीं शिरसे स्वाह। क्ष्रूं शिखायै वषट्। क्ष्रैं कवचाय हुं। क्ष्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्। क्ष्रः अस्त्राय फट्।

अन्य सभी पूजाकर्म बत्तीस वर्णात्मक मन्त्र के समान करे। पुरश्चरण में आठ लाख जप और अस्सी हजार हवन होता है।

मन्त्रान्तरम्

तथा च कल्पे—

जयद्वयं समुच्चार्य श्रीपूर्वो नृसिंहेत्यपि ।
अष्टाक्षरो मनुः प्रोक्तो भजतां कामदो मणिः ।।

अस्य ब्रह्मा ऋषिर्गायत्रीच्छन्दो नृसिंहो देवता षड्दीर्घयुक्तबीजेनाङ्गकल्पना। ध्यानार्चनादिकं मन्त्रराजवत्। अस्य पुरश्चरणमष्टलक्षजपः, वसुलक्षं जपेन्मन्त्रं इत्यादिवचनात्।

नृसिंह का अष्टाक्षर मन्त्र—जय जय श्रीनृसिंहः। यह नृसिंह का अष्टाक्षर मन्त्र है। यह चिन्तामणि के समान है। इसका यन्त्र पूर्ववत् है।

ऋष्यादि न्यास—ब्रह्मणे ऋषये नमः शिरसि। गायत्रीछन्दसे नमः मुखे। श्रीनृसिंहाय देवतायै नमः हृदि।

करन्यास—क्ष्रां अंगुष्ठाभ्यां नमः, क्ष्रीं तर्जनीभ्यां स्वाहा, क्ष्रूं मध्यमाभ्यां वषट्, क्ष्रैं अनामिकाभ्यां हुं, क्ष्रौं कनिष्ठाभ्यां वषट्, क्ष्रः करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्।

हृदयादि न्यास—क्षां हृदयाय नमः, क्षीं शिरसे स्वाहा, क्षूं शिखायै वषट्, क्षैं कवचाय हुं, क्षौं नेत्रत्रयाय वौषट्, क्षः अस्त्राय फट्।

पूर्वोक्त बत्तीस अक्षरात्मक मन्त्र के समान सभी पूजन प्रक्रिया अपनावे। पुरश्चरण में आठ लाख जप और अस्सी हजार हवन करे।

हरिहरमन्त्रः

मन्त्रदेवप्रकाशिन्याम्—तारो माया प्रासादं शङ्करनारायणाय नमः प्रासादं माया तारः।

अस्य पूजाप्रयोगः—प्रातःकृत्यादि-वैष्णवोक्तं शैवोक्तं वा पीठन्यासं विधाय ऋष्यादिन्यासं कुर्यात्। शिरसि नारदऋषये नमः। मुखे अनुष्टुप्छन्दसे नमः। हृदि हरिहराय देवतायै नमः। गुह्ये ह्रौं बीजाय नमः। पादयोः ह्रीं शक्तये नमः।

ततः कराङ्गन्यासौ—ह्रां अंगुष्ठाभ्यां नमः इत्यादि षड्दीर्घयुक्तबीजेन। एवं हृदयादिषु। ततो ध्यानम्—

शूलं चक्रं पाञ्चजन्यमभीतिं दधतं करैः।
स्वस्वभूषाच्छलीलार्द्धदेहं हरिहरं भजे॥

एवं ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्य शङ्खस्थापनं कुर्यात्। ततो वैष्णवोक्तां शैवोक्तां वा पीठपूजां विधाय पुनर्ध्यात्वा आवाहनादिपञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं विधायावरण-पूजामारभेत्। केशरेष्वग्न्यादिकोणे मध्ये दिक्षु च ह्रां हृदयाय नमः इत्यादिना पूजयेत्। ततः पत्रेषु ॐ लक्ष्म्यै नमः। एवं सरस्वत्यै नारायण्यै धरायै भूधरायै अम्बिकायै त्र्यम्बकायै गङ्गायै गङ्गाधरायै। तद्बहिरिन्द्रादीन् पूजयेत्। अत्र वज्रादिपूजा नास्ति अनुक्तत्वात्। ततो धूपादिविसर्जनान्तं कर्म समापयेत्। अस्य पुरश्चरणं लक्षजपः। घृतपायसेनायुतहोमः। तथा च—

लक्षमेकं जपेन्मन्त्रं तद्दशांशं घृतप्लुतैः।
पायसैर्हवनं कार्यं संस्कृते हव्यवाहने॥

हरिहरमन्त्र—ॐ ह्रीं ह्रौं शंकरनारायणाय ह्रौं ह्रीं ॐ। यह हरिहर का त्रयोदशाक्षर मन्त्र है। यन्त्र—पूर्ववत् विष्णु या शिवयन्त्र।

प्रातःकृत्यादि करके विष्णु या शिवमन्त्रोक्त पीठन्यास करे। तब ऋष्यादि न्यास करे।

ऋष्यादि न्यास—नारदऋषये नमः शिरसि। अनुष्टुप्छन्दसे नमः मुखे। हरिहराय देवतायै नमः हृदये। ह्रौं बीजाय नमः गुह्ये। ह्रीं शक्तये नमः पादयोः।

करन्यास—ह्रां अंगुष्ठाभ्यां नमः। ह्रीं तर्जनीभ्यां स्वाहा। ह्रूं मध्यमाभ्यां वषट्। ह्रैं अनामिकाभ्यां हुं। ह्रौं कनिष्ठभ्यां वौषट्। ह्रः करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्।

षडंग न्यास—ह्रां हृदयाय नम:। ह्रीं शिरसे स्वाहा। ह्रूं शिखायै वषट्। ह्रैं कवचाय हुं। ह्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्। ह्र: अस्त्राय फट्। न्यासोपरान्त ध्यान करे—

शूलं चक्रं पाञ्चजन्यमभीतिं दधतं करै:।
स्वस्वभूषाच्छलीलार्द्धदेहं हरिहरं भजे।।

हाथों में त्रिशूल, चक्र, पाञ्चजन्य शंख एवं अभयमुद्रा धारण करने वाले भगवान् हरिहर का आधा शरीर शंकर का और आधा विष्णु का है। वे अपने-अपने आभूषणों से अलंकृत हैं। उनकी मैं वन्दना करता हूँ।

इसके बाद मानसोपचार पूजा, विशेषार्घ्यस्थापन, विष्णु या शिवमन्त्रोक्त पीठपूजा, पुन: ध्यान-आवाहनादि से पञ्च पुष्पाञ्जलि तक की क्रियाओं को करके आवरण पूजा करे।

यन्त्र के अष्टदल पद्म के केशर में अग्न्यादि कोणों, मध्य एवं चतुर्दिक षडंग न्यासोक्त मन्त्रों से पूजन करे।

दश दल में पूर्वादि क्रम से इनका पूजन करे—ॐ लक्ष्म्यै नम:। ॐ सरस्वत्यै नम:। ॐ नारायण्यै नम:। ॐ धरायै नम:। ॐ भूधरायै नम:। ॐ अम्बिकायै नम:। ॐ त्र्यम्बकायै नम:। ॐ गंगायै नम:। ॐ गंगाधरायै नम:।

भूपुर में इन्द्रादि की पूजा करे। वज्रादि की पूजा न करे। इसके बाद धूपादि से विसर्जन तक की सभी क्रियायें करे।

पुरश्चरण में जप एक लाख और हवन दश हजार घृताक्त पायस से करे।

वराहमन्त्रा:

तारो नमो भगवते वराहरूपाय भूर्भुव:स्व:पतये भूपतित्वं मे देहि ददापय ठद्वयम्। अयं मन्त्रस्त्रयस्त्रिंशदक्षर:। तथा च निबन्धे—

तारो नमो भगवते वराहपदमीरयेत्।
रूपाय भूर्भुव: स्व: स्यात् पतये तदन्तरम्।।
भूपतित्वं मे पदान्ते देह्यन्ते च ददापय।
वह्निजायावधिर्मन्त्र: स्यात्त्रयस्त्रिंशदशक्षर:।।

अस्य पूजा—प्रात:कृत्यादिवैष्णवोक्तपीठमन्वन्तं विन्यस्य ऋष्यादिन्यास: कुर्यात्। शिरसि भार्गवऋषये नम:। मुखे अनुष्टुप्छन्दसे नम:। हृदि आदिवराहाय देवतायै नम:।

तत: कराङ्गन्यासौ—एकदंष्ट्राय अंगुष्ठाभ्यां नम:। व्योमोल्काय तर्जनीभ्यां स्वाहा। तेजोऽधिपतये मध्यमाभ्यां वषट्। विश्वरूपाय अनामिकाभ्यां हुं। महादंष्ट्राय कनिष्ठाभ्यां फट्। एवं हृदयादिषु। तथा च—

भार्गवो मुनिराख्यातश्छन्दोऽनुष्टुबुदाहृतम् ।
देवतादिवराहश्च मन्त्रस्य कथितो बुधैः ॥
एकदंष्ट्राय हृदयं व्योमोल्काय शिरःस्मृतम् ।
शिखा तेजोऽधिपतये विश्वरूपाय वर्म च ।
महादंष्ट्राय अस्त्रं स्यात्पञ्चाङ्गमिति कल्पयेत् ॥

अस्य यन्त्रं प्रपञ्चसारे—

अष्टपत्रमथ पद्ममुल्लसत्कर्णकं विधिवदारचय्य मण्डलम् ।
रविसहस्रसन्निभं शूकरं यजत तत्र सिद्धये ॥

ततो ध्यानम्—

आपादं जानुदेशाद्वरकनकनिभं नाभिदेशादधस्ता-
न्मुक्ताभं कण्ठदेशात्तरुणरविनिभं मस्तकान्नीलभासम् ।
ईडे हस्तैर्दधानं रथचरणदरौ खड्गखेटौ गदाख्यं
शक्तिं दानाभये च क्षितिधरणलसद्दंष्ट्रमाद्यं वराहम् ॥

एवं ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्य शङ्खस्थापनादि-वैष्णवोक्तं पीठपूजादि कर्म कृत्वा पुनर्ध्यात्वावाहनादिपञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं विधायावरणपूजामारभेत्। केशरेषु अग्न्यादिकोणेषु दिक्षु (पूर्वादिचतुर्दिक्षु) च एकदंष्ट्राय हृदयाय नमः। व्योमोल्काय शिरसे स्वाहा। तेजोऽधिपतये शिखायै वषट्। विश्वरूपाय कवचाय हुं। चतुर्दिक्षु (अग्निनिर्ऋतिवायव्यीशानकोणेषु) महादंष्ट्राय अस्त्राय फट्। तद्बहिः पत्रेषु ॐ चक्राय नमः। एवं शङ्खाय खेटकाय गदायै शक्तये वराय अभयाय। तद्बहिरिन्द्रादीन् वज्रादींश्च पूजयेत्। ततो धूपादिविसर्जनान्तं कर्म समापयेत्। अस्य पुरश्चरणं लक्षजपः। तथा च—

लक्षमेकं जपेन्मन्त्रं मधुराक्तैः सरोरुहै ।
जुहुयात्तद्दशांशेन पीठे विष्णुं प्रपूजयेत् ॥

विष्णुमन्त्रं रात्रौ न जपेत्। तथा च—

न जपेद्वैष्णवं रात्रौ शैवे शाक्ते न दुष्यति ।

इति वैशम्पायनसंहितावचनात्।

इति विष्णुमन्त्रपरिच्छेदः

●

वराहमन्त्र—ॐ नमो भगवते वराहरूपाय भुर्भुवःस्वःपतये भूपतित्वं मे देहि ददापय स्वाहा। यह तैंतीस अक्षरों का मन्त्र है।

यन्त्र—प्रपञ्चसार के अनुसार अष्टदल पद्म में कर्णिका और बाहर भूपुर अंकित करने से पूजायन्त्र बनता है।

वराहयन्त्र
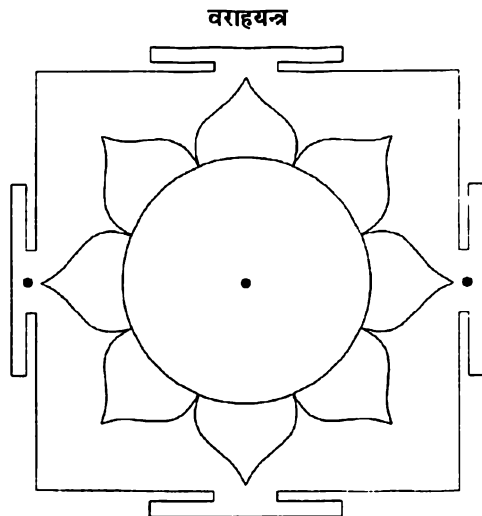
सामान्य पूजापद्धति से प्रात:कृत्यादि करके विष्णुमन्त्रोक्त विधान से पीठन्यास करके ऋष्यादि न्यास करे।

ऋष्यादि न्यास—भार्गवऋषये नम: शिरसि। अनुष्टुप्छन्दसे नम: मुखे। आदिवराह-देवतायै नम: हृदि।

करन्यास—एकदंष्ट्राय अंगुष्ठाभ्यां नम:। व्योमोल्काय तर्जनीभ्यां स्वाहा। तेजोऽधिपतये मध्यमाभ्यां वषट्। विश्वरूपाय अनामिकाभ्या हुं। महादंष्ट्राय कनिष्ठाभ्यां फट्।

पञ्चाङ्गन्यास—एकदंष्ट्राय हृदयाय नम:। व्योमोल्काय शिरसे स्वाहा। तेजोऽधिपतये शिखायै वषट्। विश्वरूपाय कवचाय हुं। महादंष्ट्राय अस्त्राय फट्। इसके बाद ध्यान करे—

आपादं जानुदेशाद् वरकनकनिभं नाभिदेशादधस्ता-
न्मुक्ताभं कण्ठदेशात्तरुणरविनिभं मस्तकान्नीलभासम् ।
ईडे हस्तैर्दधानं रथचरणदरौ खड्गखेटौ गदाख्यम्
शक्तिं दानाभये च क्षितिधरणलसद् दंष्ट्रमाद्यं वराहम् ।।

भगवान् वराह का जानुदेश से पैरों तक का अंग सोने जैसा है। नाभिदेश से जानु तक मोती के समान है। कण्ठ से नाभि तक युवा सूर्य के सदृश है। शिरोदेश से कण्ठ तक नील वर्ण है। उनके हाथों में शंख, चक्र, खड्ग, खेटक, गदा, शक्ति, वर और

अभय है। दाँत पर पृथ्वी सुशोभित है। ऐसे आदिवराह की मैं स्तुति करता हूँ।

इसके बाद मानसोपचारों से पूजन करके शंखस्थापन, वैष्णवोक्त पीठपूजा, पुन: ध्यान-आवाहनादि से पञ्च पुष्पाञ्जलिदान तक की सारी क्रियायें करके आवरण पूजन करे।

केशर में पूर्वादि दिशाक्रम से पञ्चाङ्ग न्यास में वर्णित मन्त्रों से पञ्चाङ्ग पूजन करे। आग्नेयादि कोणों में 'महादंष्ट्राय फट्' से पूजा करे।

अष्टदल में उनके आयुधों का पूजन करे—ॐ चक्राय नम:। ॐ शंखाय नम:। ॐ खड्गाय नम:। ॐ खेटकाय नम:। ॐ गदाय नम:। ॐ शक्तये नम:। ॐ वराय नम:। ॐ अभयाय नम:।

भूपुर में इन्द्रादि वज्रादि का पूजन करे। धूपादि करके विसर्जन करे।

इस मन्त्र का पुरश्चरण एक लाख जप और घी-मधु-शक्कर त्रिमधुराक्त कमलों से दश हजार हवन से होता है।

वैशम्पायनसंहिता के मतानुसार विष्णुमन्त्र का जप रात में न करे। शिव और शक्तिमन्त्र का जप रात में हो सकता है।

शिवमन्त्रा:

उद्दिश्य यं कृतवती गिरिजा तपस्यां
यत्पादपङ्कजरजो विबुधा नमन्ति।
आशाद्वरं भुजगराजविभूषिताङ्गं
तं चन्द्रमौलिममलं मनसा स्मरामि॥
अथ वक्ष्ये महेशस्य मन्त्रान् सर्वसमृद्धिदान्।
यै: पूर्वमृषय: प्राप्ता: शिवसायुज्यमञ्जसा॥
सान्तमौकारसंयुक्तं विन्दुभूषितमस्तकम्।
प्रासादाख्यो मनु: प्रोक्तो भजतां कामदो मणि:॥

अस्य पूजा—प्रात:कृत्यादिप्राणायामान्तं विधाय श्रीकण्ठादिन्यासं मातृकास्थानेषु कुर्यात्। तद्यथा—

अं श्रीकण्ठपूर्णोदरीभ्यां नम:। नम: सर्वत्र। आं अनन्तविरजाभ्यां, इं सूक्ष्मशाल्मलीभ्यां, ईं त्रिमूर्तिलोलाक्षीभ्यां, उं अमरेश्वरवर्त्तुलाक्षीभ्यां, ऊं अर्घीशदीर्घघोणाभ्यां, ऋं भारभूतिसुदीर्घमुखीभ्यां, ॠं अतिथीशगोमुखीभ्यां, ऌं स्थाणुकदीर्घजिह्वाभ्यां, ॡं हरकुण्डोदरीभ्यां, एं झिण्टीशोर्ध्वमुखीभ्यां, ऐं भौतिकेशविकृतमुखीभ्यां, ओं सद्योजातज्वालामुखीभ्यां, औं अनुग्रहेश्वरोल्का-मुखीभ्यां, अं अक्रूरसुश्रीमुखीभ्यां, अ: महासेनविद्यामुखीभ्यां, कं क्रोधीशसर्व-

सिद्धिमहाकालीभ्यां, खं चण्डेशसर्वसिद्धिसरस्वतीभ्यां, गं पञ्चान्तकगौरीभ्यां, घं शिवोत्तमत्रैलोक्यविद्याभ्यां, ङं एकरुद्रमन्त्रशक्तिभ्यां, चं कूर्मात्मशक्तिभ्यां, छं एकनेत्रभूतमातृकाभ्यां, जं चतुराननलम्बोदरीभ्यां, झं अब्जेशद्राविणीभ्यां, ञं सर्वनागरीभ्यां, टं सोमेशखेचरीभ्यां, ठं लाङ्गलिमञ्जरीभ्यां, डं दारुकरूपिणीभ्यां, ढं अर्द्धनारीश्वरवीरिणीभ्यां, णं उमाकान्तकाकोदरीभ्यां, तं आषाढिपूतनाभ्यां, थं दण्डिभद्रकालीभ्यां, दं अद्रियोगिनीभ्यां, धं मीनशङ्खिनीभ्यां, नं मेषगर्जिनीभ्यां, पं लोहितकालरात्रिभ्यां, फं शिखिकुब्जिकाभ्यां, बं छगलण्डकपर्दिनीभ्यां, भं द्विरण्डेशवज्राभ्यां, मं महाकालजयाभ्यां, यं त्वगात्मबालिसुमुखेश्वरीभ्यां, रं असृगात्मभुजङ्गेशरेवतीभ्यां, लं मांसात्मपिनाकीशमाधवीभ्यां, वं मेदआत्मखड्गीश-वारुणीभ्यां, शं अस्थ्यात्मबकेशवायवीभ्यां, यं मज्जात्मश्वेतरक्षोविदारिणीभ्यां, सं शुक्रात्मभृग्वीशसहजाभ्यां, हं प्राणात्मनकुलीशलक्ष्मीभ्यां, लं बीजात्मशिवव्यापि-नीभ्यां, क्षं क्रोधात्मसंवर्त्तकमायाभ्याम्। सर्वत्र नमोऽन्तेन न्यासः। साहित्ये द्विवचनबहुवचने द्वन्द्वसमासो वेति न्यायादविरोधेन एवं वाक्यम्। तथा च निबन्धे—

श्रीकण्ठोऽनन्तसूक्ष्मौ च त्रिमूर्त्तिरमरेश्वरः।
अर्घीशो भारभूतिश्चातिथीशः स्थाणुको हरः॥
झिण्टीशो भौतिकः सद्योजातश्चानुग्रहेश्वरः।
अक्रूरश्च महासेनः षोडशस्वरमूर्त्तयः॥
ततः क्रोधीशचण्डेशपञ्चान्तकशिवोत्तमाः।
तथैकरुद्रकूर्मैकनेत्राः सचतुराननाः॥
अब्जेशः शर्वः सोमेशस्तथा लाङ्गलिदारुकौ।
अर्द्धनारीश्वरश्चोमाकान्तश्चाषाढिदण्डिनौ॥
स्युरद्रिमीनमेषाश्च लोहितश्च शिखी तथा।
छगलण्डद्विरण्डेशौ समहाकलवालिनौ॥
भुजङ्गेशः पिनाकीशः खड्गीशश्च बकस्तथा।
श्वेतभृग्वीशनकुलिः शिवः संवर्त्तकस्तथा।
एते रुद्राः समाख्याता धृतशूलकपालकः॥
पूर्णोदरी स्याद्विरजा शाल्मली तदन्तरम्।
लोलाक्षी वर्त्तुलाक्षी च दीर्घघोणा समीरिता॥
सुदीर्घमुखी गोमुख्यौ दीर्घजिह्वा तथैव च।
कुण्डोदर्यूर्ध्वमुख्यौ च तथा विकृतमुख्यपि॥
ज्वालामुखी ततो ज्ञेया पश्चादुल्कामुखी स्मृता।

सुश्रीमुखी च विद्यामुख्येताः स्युः स्वरशक्तयः ॥
महाकालीसरस्वत्यै सर्वसिद्धिसमन्विते ।
गौरी त्रैलोक्यविद्या स्यान्मन्त्रशक्तिस्ततः परम् ॥
आत्मशक्तिर्भूतमाता तथा लम्बोदरी मता ।
द्राविणी नागरी भूयः खेचरी चापिमञ्जरी ॥
रूपिणी वीरिणी पश्चात् ककोदर्यपि पूतना ।
स्याद्भद्रकालीयोगिन्यौ शङ्खिनी गर्जिनी तथा ॥
कालरात्रिश्च कुब्जिन्या कपर्दिन्यपि वज्रया ।
जया च सुमुखेश्वर्या रेवती माधवी ततः ॥
वारुणी वायवी प्रोक्ता पश्चाद्रक्षोविदारिणी ।
ततश्च सहजा लक्ष्मीर्व्यापिनी माययान्विता ॥
एता रुद्राङ्कपीठस्थाः सिन्दूरारुणविग्रहाः ।
रक्तोत्पलकपालाभ्यामलंकृतकराम्बुजाः ॥

ततः सामान्यपूजापद्धत्युक्तपीठन्यासं कृत्वा पीठशक्तिर्न्यसेत्। यथा—ॐ वामायै नमः। एवं ज्येष्ठायै रौद्र्यै काल्यै कलविकरिण्यै बलविकरिण्यै बलप्रमथन्यै सर्वभूतदमन्यै। एता हृत्पद्मस्य पूर्वादिकेशरेषु विन्यस्य मध्ये ॐ मनोन्मन्यै नमः, तदुपरि ॐ नमो भगवते सकलगुणात्मशक्तियुक्तायानन्ताय योगपीठात्मने नमः। तथा च शारदायाम्—

वामा ज्येष्ठा तथा रौद्री काली कलपदादिका ।
विकरिण्याह्वया प्रोक्ता बलादिविकरिण्यथ ॥
बलप्रमथनी पश्चात् सर्वभूतदमन्यपि ।
मनोन्मनीति सम्प्रोक्ता शिवस्य पीठशक्तयः ॥
नमो भगवते पश्चात्सकलादि वदेत्ततः ।
गुणादिशक्तियुक्ताय ततोऽनन्ताय तत्परम् ॥
योगपीठात्मने भूयो नमोऽन्तरादिको मनुः ।
अमुना मनुना पश्चादासनं गिरिजापतेः ।
मूर्त्तिं मूलेन सङ्कल्प्य तत्रावाह्य यजेच्छिवम् ॥

तत ऋष्यादिन्यासः—शिरसि वामदेवाय ऋषये नमः, मुखे पंक्तिच्छन्दसे नमः, हृदि सदाशिवाय देवतायै नमः। शारदायाम्—

वामदेवो मुनिश्छन्दः पंक्तिर्देवः सदाशिवः ।

शिवमन्त्र—शिवमन्त्रानुष्ठान क्रम में सर्वप्रथम निम्नवत् शिव का ध्यान करे—

उद्दिश्य यं कृतवती गिरिजा तपस्यां यत्पादपङ्कजरजो विबुधा नमन्ति ।
आशाद्वरं भुजगराजविभूषिताङ्गं तच्चन्द्रमौलिममलं मनसा स्मरामि ।।

जिनको पाने लिये गिरिजा ने तपस्या की थी, जिनके पादपंकज के रजों का नमन सभी करते हैं, जो आशाद्वर नागेन्द्र से विभूषित हैं, उन चन्द्रमौलि भगवान् शिव का मैं मन से स्मरण करता हूँ।

मन्त्र—ह्रौं। यह महेश का सर्वसमृद्धिप्रदायक एकाक्षर मन्त्र है। प्राचीन काल में ऋषियों ने इस मन्त्र के बल से सहज में ही शिव का सायुज्य प्राप्त किया था। उक्त एकाक्षर मन्त्र को प्रासादबीज भी कहते हैं।

शिवयन्त्र
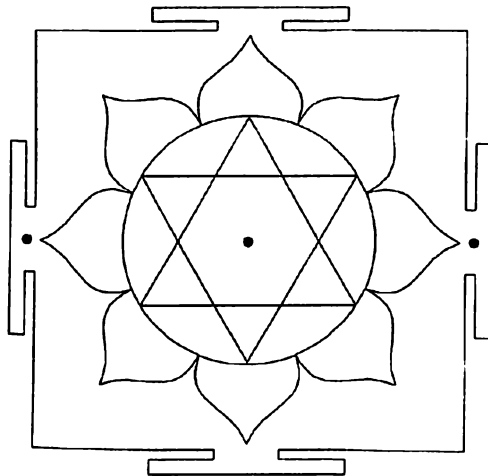
सामान्य पूजा पद्धति से प्रात:कृत्यादि से प्राणायाम तक के कर्म करके मातृका न्यास के बदले श्रीकण्ठादि न्यास करे।

श्रीकण्ठन्यास

शिरसि—ॐ अं श्रीकण्ठपूर्णोदरीभ्यां नम:।
मुखे—ॐ आं अनन्तविरजाभ्यां नम:।
दक्षनेत्रे—ॐ इं सूक्ष्मशाल्मलीभ्यां नम:।
वामनेत्रे—ॐ ईं त्रिमूर्तिलोलाक्षीभ्यां नम:।
दक्षकर्णे—ॐ उं अमरेश्वरवर्तुलाक्षीभ्यां नम:।
वामकर्णे—ॐ ऊं अर्घीशदीर्घघोणाभ्यां नम:।
दक्षनासापुटे—ॐ ऋं भारभूतिसुदीर्घमुखीभ्यां नम:।

वामनासापुटे—ॐ ॠं अतिथीशगोमुखीभ्यां नमः।
दक्षगण्डे—ॐ ऌं स्थाणुकदीर्घजिह्वाभ्यां नमः।
वामगण्डे—ॐ ॡं हरकुण्डोदरीभ्यां नमः।
उर्ध्वोष्ठे—ॐ एं झिंटीशोर्ध्वमुखीभ्यां नमः।
अधरोष्ठे—ॐ ऐं भौतिकेशविकृतमुखीभ्यां नमः।
ऊर्ध्वदन्तपंक्तौ—ॐ ओं सद्योजातज्वालामुखीभ्यां नमः।
अधोदन्तपंक्तौ—ॐ औं अनुग्रहेश्वरोल्कामुखीभ्यां नमः।
जिह्वाग्रे—ॐ अं अक्रूरसुश्रीमुखीभ्यां नमः।
कण्ठे—ॐ अः महासेनविद्यामुखीभ्यां नमः।
दक्षबाहुमूले—ॐ कं क्रोधीशसर्वसिद्धिमहाकालीभ्यां नमः।
कूर्परे—ॐ खं चण्डेशसर्वसिद्धिसरस्वतीभ्यां नमः।
मणिबन्धे—ॐ गं पञ्चातकगौरीभ्यां नमः।
करांगुलिमूले—ॐ घं शिवोत्तमत्रैलोक्यविद्याभ्यां नमः।
करांगुल्यग्रे—ॐ ङं एकरुद्रमन्त्रशक्तिभ्यां नमः।
वामबाहुमूले—ॐ चं कूर्मात्मशक्तिभ्यां नमः।
कूपरि—ॐ छं एकनेत्रभूतमातृकाभ्यां नमः।
मणिबन्धे—ॐ जं चतुराननलम्बोदरीभ्यां नमः।
करांगुलिमूले—ॐ झं अब्जेशद्राविणीभ्यां नमः।
करांगुल्यग्रे—ॐ ञं सर्वनागरीभ्यां नमः।
दक्षोरुमूले—ॐ टं सोमेशखेचरीभ्यां नमः।
दक्षजानुनि—ॐ ठं लांगलिमञ्जरीभ्यां नमः।
दक्षगुल्फे—ॐ डं दारुकरूपिणीभ्यां नमः।
पादांगुलिमूले—ॐ ढं अर्द्धनारीश्वरवीरिणीभ्यां नमः।
पादांगुल्यग्रे—ॐ णं उमाकान्तकाकोदरीभ्यां नमः।
वामोरुमूले—ॐ तं आषाढ़िपूतनाभ्यां नमः।
जानुनि—ॐ थं दण्डिभद्रकालीभ्यां नमः।
गुल्फे—ॐ दं अद्रियोगिनीभ्यां नमः।
अंगुलिमूले—ॐ धं मीनशंखिनीभ्यां नमः।
अंगुल्यग्रे—ॐ नं मेषगर्जिनीभ्यां नमः।
दक्षपार्श्वे—ॐ पं लोहितकालरात्रिभ्यां नमः।
वामपार्श्वे—ॐ फं शिखीकुब्जिकाभ्यां नमः।
पृष्ठे—ॐ वं छगलण्डकपर्दिनीभ्यां नमः।
नाभौ—ॐ भं द्विरण्डेशवज्राभ्यां नमः।

जठरे—ॐ मं महाकालजयाभ्यां नमः।
हृदये—ॐ यं त्वगात्मबालिसुमुखेश्वरीभ्यां नमः।
दक्षकुक्षौ—ॐ रं असृगात्मभुजङ्गेशरेवतीभ्यां नमः।
गलपृष्ठे—ॐ लं मांसात्मपिनाकीशमाधवीभ्यां नमः।
वामकुक्षौ—ॐ वं मेदात्मखड्गीशवारुणीभ्यां नमः।
हृदयादिदक्षकराङ्गुल्यन्तं—ॐ शं अस्थ्यात्मवकेशवायवीभ्यां नमः।
हृदयादिवामकराङ्गुल्यन्तं—ॐ षं मज्जात्मश्वेतरक्षोविदारिणीभ्यां नमः।
हृदयादिदक्षपादाङ्गुल्यन्तं—ॐ सं शुक्रात्मभृग्वीशसहजाभ्यां नमः।
हृदयादिवामपादाङ्गुल्यन्तं—ॐ हं प्राणात्मनकुलीशलक्ष्मीभ्यां नमः।
कट्यादिपादाङ्गुल्यन्तं—ॐ लं बीजात्मशिवव्यापिनीभ्यां नमः।
कट्यादिब्रह्मरन्ध्रान्तं—ॐ क्षं क्रोधात्मसंवर्तकमायाभ्यां नमः।
निबन्धग्रन्थ में भी इसी प्रकार का श्रीकण्ठन्यास बताया गया है।

इस न्यास के श्रीकण्ठादि देवों को रुद्र कहते हैं। ये सभी अपने हाथों में शूल और नरकपाल लिए हुए हैं। पूर्णोदरी आदि इनकी शक्तियाँ इनकी गोद में बैठी हुई हैं। हाथों में लाल कमल और नरकपाल ली हुई हैं। इन देवियों के शरीर का वर्ण सिन्दूर के समान लाल है।

इसके बाद सामान्य पूजापद्धति से पीठन्यास करके पीठशक्तियों का न्यास करे। हृत्पद्मकेशर में पूर्वादि क्रम से पीठशक्तियों का न्यास करे—ॐ वामायै नमः। ॐ ज्येष्ठायै नमः। ॐ रौद्र्यै नमः। ॐ काल्यै नमः। ॐ कलविकरिण्यै नमः। ॐ बलविकरिण्यै नमः। ॐ बलप्रमथिन्यै नमः। ॐ सर्वभूतदमन्यै नमः। मध्य में मनोन्मन्यै नमः। पद्मोपरि ॐ नमो भगवते सकलगुणात्मशक्तियुक्तायानन्ताय योगपीठात्मने नमः। शारदातिलक में भी इसी प्रकार के पीठन्यास का वर्णन है।

मूल मन्त्र से मूर्ति कल्पित करके आवाहन-पूजन करे। तब न्यास करे।

ऋष्यादि न्यास—वामदेवऋषये नमः शिरसि। पंक्तिच्छन्दसे नमः मुखे। सदाशिवदेवतायै नमः हृदये।

ततः कराङ्गन्यासौ—हां अंगुष्ठाभ्यां नमः इत्यादि एवं हां हृदयाय नमः इत्यादि। षड्दीर्घयुक्तहकारेण न्यसेत्। तदुक्तम्—

षड्दीर्घयुक्तबीजेन षडङ्गविधिरीरितः।

तत ईशानाद्याः पञ्चमूर्त्तीर्न्यसेत् करयोरंगुष्ठाद्यंगुलीषु। यथा—अंगुष्ठयोः हों ईशानाय नमः। तर्जन्योः हें तत्पुरुषाय नमः। मध्यमयोः हुं अघोराय नमः। अनामिकयो हिं वामदेवाय नमः। कनिष्ठयोः हं सद्योजाताय नमः। तथा च—

ईशानादीर्न्यसेन्मूर्त्तीरंगुष्ठादिषु देशिकः।

ईशानाख्यं तत्पुरुषमघोरं तदनन्तरम् ॥
वामदेवाह्वयं पश्चात् सद्योजातं क्रमाद्बहिः ।
ओकाराद्यैः पञ्चह्रस्वैर्विलोमात् संयुतं वियत् ।
तत्तदंगुलीभिर्भूयस्तत्तद्बीजादिकान्न्यसेत् ॥

ततस्तत्तदङ्गुलीभिः हों ईशानाय नमः इत्यादि शिरोवदनहृद्गुह्यपादेषु पञ्चमूर्त्तीर्न्यसेत्। तत ऊर्ध्वप्राग्दक्षिणपश्चिमोत्तरेषु मुखेषु तत्तदंगुलीभिस्तत्तद्बीजैस्तत्तन्मूर्तीर्न्यसेत्। शूद्रस्त्वेतत्पर्यन्तं न्यासं कृत्वा ध्यायेत्, अन्यत्रानधिकारात्। तत ऊर्ध्वप्राग्दक्षिणपश्चिमोत्तरेषु मुखेषु ईशानस्य पञ्चकलाः ब्रह्मऋचः पदादिकाः प्रणवादिनमोऽन्ता न्यसेत्। तद्यथा—

ॐ ईशानः सर्वविद्यानाम् ॐ शशिन्यै कलायै नमः। ईश्वरः सर्वभूतानाम् ॐ अङ्गदायै कलायै नमः। ब्रह्माधिपतिर्ब्रह्मणोऽधिपतिः ॐ ब्रह्मेष्टदायै कलायै नमः। शिवो मेऽस्तु ॐ मरीच्यै कलायै नमः। सदाशिवोम् ॐ अंशुमालिन्यै कलायै नमः। चतस्रः पूर्वपश्चिमदक्षिणोत्तरवक्त्रेषु तत्पुरुषस्य चतस्रः कलाः विन्यसेत्। यथा—ॐ तत्पुरुषाय विद्महे ॐ शान्त्यै कलायै नमः। महादेवाय धीमहि ॐ विद्यायै कलायै नमः। तन्नो रुद्रः ॐ प्रतिष्ठायै कलायै नमः। प्रचोदयात् ॐ निवृत्त्यै कलायै नमः। ततो हृदये ग्रीवायाम् अंसद्वये नाभौ कुक्षौ पृष्ठे वक्षसि अघोरस्याष्टौ कलाः न्यसेत्। यथा—ॐ अघोरेभ्यः ॐ उमायै कलायै नमः। अथ घोरेभ्यः मोहायै कलायै नमः। घोर ॐ क्षमायै कलायै नमः। घोरतरेभ्यः ॐ निद्रायै कलायै नमः। सर्वतः सर्व ॐ व्याधये कलायै नमः। सर्वेभ्यः ॐ मृत्यवे कलायै नमः। नमस्तेऽस्तु ॐ क्षुधायै कलायै कलायै नमः। रुद्ररूपेभ्यः ॐ तृष्णायै कलायै नमः। ततो गुह्ये अण्डकोषे ऊरुद्वये जानुद्वये जङ्घाद्वये स्फिग्द्वये कट्यां पार्श्वद्वये वामदेवस्य त्रयोदशकलाः न्यसेत्। यथा— ॐ वामदेवाय नमः ॐ ऊर्जायै कलायै नमः। ज्येष्ठाय नमः ॐ रक्षायै कलायै नमः। रुद्राय नमः ॐ रत्यै कलायै नमः। कालाय नमः ॐ कपालिन्यै कलायै नमः। कल ॐ कामायै कलायै नमः। विकरणाय नमः ॐ संयमिन्यै कलायै नमः। बल ॐ क्रोधायै (क्रियायै) कलायै नमः। विकरणाय नमः ॐ वृद्ध्यै कलायै नमः। बल ॐ स्थिरायै कलायै नमः। प्रमथनाय ॐ रात्र्यै कलायै नमः। सर्वभूतदमनाय नमः ॐ भ्रामर्य्यै कलायै नमः। मन ॐ मोहिन्यै कलायै नमः। उन्मनाय नमः ॐ जरायै कलायै नमः। ततः पार्श्वयोः स्तनयोर्नासिकायां मूर्ध्नि बाहुयुग्मे सद्योजातस्याष्टौ कलाः न्यसेत्। यथा—

ॐ सद्योजातं प्रपद्यामि ॐ सिद्ध्यै कलायै नमः। सद्योजाताय वै नमः ॐ

वृद्ध्यै कलायै नमः। भवे ॐ मत्यै कलायै नमः। अभवे ॐ लक्ष्म्यै कलायै नमः। अनादिभवे ॐ मेधायै कलायै नमः। भजस्व मां ॐ प्रज्ञायै कलायै नमः। भव ॐ प्रभायै कलायै नमः। उद्भवाय नमः ॐ सुधायै कलायै नमः।

ततः पञ्चांगुलीषु ईशानाद्याः पञ्च ऋचो न्यसेत्। ॐ इशानः सर्वविद्यानामीश्वरः सर्वभूतानां ब्रह्माधिपतिर्ब्रह्मणोऽधिपतिर्ब्रह्मा शिवो मेऽस्तु सदाशिवोम्। ॐ तत्पुरुषाय विद्महे महादेवाय धीमहि तन्नो रुद्रः प्रचोदयात्। ॐ अघोरेभ्योऽथ घोरेभ्यो घोरघोरतरेभ्यः सर्वतः सर्वसर्वेभ्यो नमस्तेऽस्तु रुद्ररूपेभ्यः। ॐ वामदेवाय नमो ज्येष्ठाय नमो रुद्राय नमः कालाय नमः बलविकरणाय नमो बलप्रमथनाय नमः सर्वभूतदमनाय नमः मनोन्मनाय नमः। ॐ सद्योजातं प्रपद्यामि सद्योजाताय वै नमः। भवेऽभवेऽनादिभवे भजस्व मां भवोद्भवाय नमः। एवं मूर्ध्नास्यहृदयगुह्यपादेषु एता ऋचो न्यसेत्। ततोऽङ्गन्यासान्तरं कुर्यात्। तद्यथा—

ऐं क्लीं ब्लूं स्त्रीं सः सर्वज्ञाय हृदयाय नमः। अमृते तेजोज्वालामालिने तृप्तये शिखिब्रह्मणे शिरसे स्वाहा। ज्वलितशिखिशिखाय अनादिबोधाय शिखायै वषट्। वज्रिणे वज्रहस्ताय स्वतन्त्राय कवचाय हुं। शौं चौं हौं परतोऽलुप्तशक्तये नेत्रत्रयाय वौषट्। श्लीं पशु हुं फट् अनन्तशक्तये अस्त्राय फट्। तथा च यामले—

सर्वज्ञतातृप्तिरनादिबोधः स्वतन्त्रतानित्यमलुप्तशक्तिः ।
अनन्तशक्तिश्च विभोर्विधिज्ञाः षडाहुरङ्गानि महेश्वरस्य ॥

एवं विन्यस्य ध्यायेत्। यथा—

मुक्तापीतपयोदमौक्तिकजवावर्णैर्मुखैः पञ्चभि-
स्त्र्यक्षैरञ्चितमीशमिन्दुमुकुटं पूर्णेन्दुकोटिप्रभम् ।
शूलं टङ्ककृपाणवज्रदहनान्नागेन्द्रघण्टांकुशान्
पाशं भीतिहरं दधानममिताकल्पोज्ज्वलाङ्गं भजे ॥

एवं ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्यार्घ्यस्थापनं कुर्यात्। अत्र शङ्खनिषेधः—

सर्वत्रैव प्रशस्तोऽब्जः शिवसूर्यार्चनं विना । इति।

ततः शैवोक्तपीठपूजां विधाय पुनर्ध्यात्वा मूलेन मूर्त्तिं सङ्कल्प्य आवाहनादिपञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं विधायावरणपूजामारभेत्। यथा—

ऐशान्यां ॐ ईशानाय नमः। पूर्वे ॐ तत्पुरुषाय नमः। दक्षिणे ॐ अघोराय नमः। उत्तरे ॐ वामदेवाय नमः। पश्चिमे ॐ सद्योजाताय नमः। ईशानादिकोणेषु ॐ निवृत्त्यै नमः। एवं प्रतिष्ठायै विद्यायै शान्त्यै। ततोऽष्टपत्रेषु पूर्वादिक्रमेण ॐ अनन्ताय नमः। एवं सूक्ष्माय शिवोत्तमाय एकनेत्राय एकरुद्राय त्रिमूर्त्तये श्रीकण्ठाय

शिखण्डिने। तद्बाह्ये उत्तरादिक्रमेण ॐ उमायै नमः। एवं चण्डेश्वराय नन्दिने महाबलाय गणेशाय वृषाय भृङ्गरीटाय स्कन्दाय। तद्बाह्ये पूर्वादिक्रमेण इन्द्रादीन् वज्रादींश्च पूजयेत्। ततो धूपादिविसर्जनान्तं कर्म समापयेत्। अस्य पुरश्चरणं पञ्च-लक्षजपः। तथा च—

एवं ध्यात्वा जपेन्मन्त्रं पञ्चलक्षं मधुप्लुतैः।
प्रसूनैः करवीरोत्थैर्जुहुयात्तद्दशांशतः ॥

करन्यास—हां अंगुष्ठाभ्यां नमः। ह्रीं तर्जनीभ्यां स्वाहा। हूं मध्यमाभ्यां वषट्। हैं अनामिकाभ्या हुं। हौं कनिष्ठाभ्यां वौषट्। हः करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्।

षडंग न्यास—हां हृदयाय नमः। ह्रीं शिरसे स्वाहा। हूं शिखायै वषट्। हैं कवचाय हुं। हौं नेत्रत्रयाय वौषट्। हः अस्त्राय फट्।

इसके बाद तीन प्रकार का पञ्चमूर्ति न्यास करे।

१. अंगुष्ठयोः हों ईशानाय नमः। तर्जन्योः हें तपुरुषाय नमः। मध्यमयोः हुं अघोराय नमः। अनामिकयोः हिं वामदेवाय नमः। कनिष्ठयोः हं सद्योजाताय नमः।

२. मस्तक में अंगुष्ठे से—हों ईशानाय नमः। मुख में तर्जनी से—हं तत्पुरुषाय नमः। हृदय में मध्यमा से—हं अघोराय नमः। गुह्य में अनामिका से—हिं वामदेवाय नमः। पैरों में--हं सद्योजाताय नमः।

३. ऊर्ध्वमुख में अंगूठे से—हों ईशानाय नमः। पूर्वमुख में तर्जनी से—हें तत्पुरुषाय नमः। दक्षिणमुख में मध्यमा से—हुं अघोराय नमः। पश्चिममुख में अनामा से—हिं वामदेवाय नमः। उत्तरमुख में—हं सद्योजाताय नमः।

शूद्र साधक यहीं तक न्यास करके ध्यान करे। आगे वर्णित न्यासों को करने का अधिकार उसे नहीं है।

पञ्चकलान्यास—सभी मन्त्रों के अन्त में 'कलायै नमः' जोड़ ले। पहले ऊर्ध्व-पूर्व-दक्षिण-पश्चिम और उत्तरमुख में क्रमशः निम्न ऋचात्मक ईशान की पञ्च कलाओं का न्यास करे। जैसे—

ईशानकलान्यास—ॐ ईशानः सर्वविद्यानां ॐ शशिन्यै कलायै नमः। ईश्वरः सर्व-भूतानां ॐ अंगदायै कलायै नमः। ब्रह्माधिपतिर्ब्रह्मणोऽधिपतिः ॐ ब्रह्मेष्टदायै कलायै नमः। शिवो मेऽस्तु ॐ मरीच्यै कलायै नमः। सदाशिवोम् ॐ अंशुमालिन्यै कलायै नमः।

तत्पुरुषकलान्यास—पूर्व-पश्चिम-दक्षिण-उत्तरमुख में क्रमशः तत्पुरुष की चार कलाओं का न्यास करे—ॐ तत्पुरुषाय विद्महे ॐ शान्त्यै कलायै नमः। महादेवाय धीमहि ॐ विद्यायै कलायै नमः। तन्नो रुद्रः ॐ प्रतिष्ठायै कलायै नमः। प्रचोदयात् ॐ निवृत्त्यै कलायै नमः।

अघोरकलान्यास—इस प्रकार आठ कलाओं का न्यास करे—
हदय में—ॐ अघोरेभ्य ॐ उमायै कलायै नम:।
ग्रीवा में—अथ घोरेभ्य: ॐ मोहायै कलायै नम:।
नाभि में—सर्वत: सर्व ॐ व्याधये कलायै नम:।
उदर में—सर्वेभ्य: ॐ मृत्यवे कलायै नम:।
दोनों कन्धों में—घोरे ॐ क्षमायै कलायै नम:।
नाभि में—घोरतरेभ्य: ॐ निद्रायै कलायै नम:।
पीठ में—नमस्तेऽस्तु ॐ क्षुधायै कलायै नम:।
वक्ष में—रुद्ररूपेभ्य ॐ तृष्णायै कलायै नम:।

वामदेवकलान्यास—तेरह कलाओं का न्यास करे—
गुह्य—वामदेवाय नम: ॐ ऊर्जायै कलायै नम:।
अण्डकोष—ज्येष्ठाय नम: ॐ रक्षायै कलायै नम:।
दक्षोरु—रुद्राय नम: ॐ रत्यै कलायै नम:।
वामोरु—कालाय नम: ॐ कपालिन्यै कलायै नम:।
दक्षजानु—कल नम: ॐ कामायै कलायै नम:।
वामजानु—विकरणाय नम: ॐ संयमिन्यै कलायै नम:।
दक्षजंघा—बलाय नम: ॐ क्रियायै कलायै नम:।
वामजंघा—विकरणाय नम: ॐ वृद्ध्यै कलायै नम:।
दक्षनितम्ब—बलाय नम: ॐ स्थिरायै कलायै नम:।
वामनितम्ब—प्रमथनाय नम: ॐ रात्र्यै कलायै नम:।
कटि—सर्वभूतदमनाय नम: ॐ भ्रामर्य्यै कलायै नम:।
दक्षपार्श्व—मन नम: ॐ मोहिन्यै कलायै नम:।
वामपार्श्व—उन्मनाय नम: ॐ जरायै कलायै नम:।

सद्योजातकलान्यास—आठ कलाओं का न्यास करे—
दक्षपार्श्व में—ॐ सद्योजातं प्रपद्यामि ॐ सिद्ध्यै कलायै नम:।
वामपार्श्व में—ॐ सद्योजाताय वै नम: ॐ वृद्ध्यै कलायै नम:।
दक्षस्तन में—ॐ भवे ॐ मत्यै कलायै नम:।
वामस्तन में—ॐ अभवे ॐ लक्ष्म्यै कलायै नम:।
नासिका में—ॐ अनादिभवे ॐ मेधायै कलायै नम:।
मस्तक में—ॐ भजस्व मां ॐ प्रज्ञायै कलायै नम:।
दक्ष बाँह में—ॐ भव ॐ प्रभायै कलायै नम:।
वाम बाँह में—ॐ उद्भवाय नम: ॐ सुधायै कलायै नम:।

पाँचों अंगुलियों में ईशानादि पाँच ऋचाओं का न्यास करे—

अंगूठों में—ॐ ईशानः सर्वविद्यानाम् ईश्वरः सर्वभूतानां ब्रह्माधिपतिर्ब्रह्मणोऽधिपतिर्ब्रह्मा शिवो मेऽस्तु सदाशिवोम्।

तर्जनियों में—ॐ तत्पुरुषाय विद्महे महादेवाय धीमहि तन्नो रुद्रः प्रचोदयात्।

मध्यमाओं में—ॐ अघोरेभ्योऽथ घोरेभ्यो घोर-घोरतरेभ्यः सर्वतः सर्वसर्वेभ्यो नमस्तेऽस्तु रुद्ररूपेभ्यः।

अनामिकाओं में—ॐ वामदेवाय नमो ज्येष्ठाय नमो रुद्राय नमः कालाय नमः। बलविकरणाय नमो बलप्रमथनाय नमः सर्वभूतदमनाय नमः मनोन्मनाय नमः।

कनिष्ठाओं में—ॐ सद्योजातं प्रपद्यामि सद्योजाताय वै नमः भवेऽभवेऽनादिभवे भजस्व मां भवोद्भवाय नमः।

उपर्युक्त पाँच ऋचाओं से मस्तक, मुख, हृदय, गुह्य और पैरों में न्यास करके अंग-न्यास करे—

ऐं क्लीं व्लूं स्त्रीं सः सर्वज्ञाय हृदयाय नमः।

अमृते तेजोज्वालामालिने तृप्तये शिखिब्रह्मणे शिरसे स्वाहा।

ज्वलितशिखिशिखायै अनादिबोधाय शिखायै वषट्।

वज्रिणे वज्रहस्ताय स्वतन्त्राय कवचाय हुं।

शौं चौं हौं परतोऽलुप्तशक्तये नेत्रत्रयाय वौषट्।

श्लीं पशु हुं फट् अनन्तशक्तये अस्त्राय फट्।

इन न्यासों में यामल की भी सहमति है। अब ध्यान करे—

मुक्तापीतपयोदमौक्तिकजवावर्णैर्मुखैः पञ्चभि-
स्त्र्यक्षैरञ्चितमीशमिन्दुमुकुटं पूर्णेन्दुकोटिप्रभम्।
शूलं टंककृपाणवज्रदहनान्नागेन्द्रघण्टाङ्कुशान्
पाशं भीतिहरं दधानममिताकल्पोज्ज्वलाङ्गं भजे।।

भगवान् शिव का एक मुख मोती जैसा, दूसरा पीला, तीसरा मेघ-सा नीला, चौथा गोरा और पाँचवाँ अड़हुलपुष्प-सा लाल है। प्रत्येक मुख में तीन नेत्र हैं। मस्तकों पर अर्द्धचन्द्र है। करोड़ों पूर्णिमा के चाँद-जैसी शरीर की कान्ति है। दस हाथों में शूल, टंक, खड्ग, वज्र, अग्नि, सर्प, घंटा, अंकुश, पाश और अभयमुद्रा है। विविध प्रकार की वेशभूषा से सभी अंग शोभायमान हैं। ऐसे भगवान् शिव की मैं वन्दना करता हूँ।

ध्यान के बाद मानसोपचार पूजा करके अर्घ्यस्थापन करे। शिवपूजा में शंख का निषेध है। तब शिवोक्त पीठपूजा करके पुनः ध्यान और मूल मन्त्र से मूर्ति कल्पित करके आवाहनादि से पञ्च पुष्पाञ्जलि-दान तक के सारे कार्य करके आवरण पूजा करे।

यन्त्र के मध्य बिन्दु में ईशान में—ॐ ईशानाय नमः। पूरब में—ॐ तत्पुरुषाय नमः। दक्षिण में—ॐ अघोराय नमः। पश्चिम में—ॐ सद्योजाताय नमः। उत्तर में—ॐ वामदेवाय नमः। ईशानादि कोणों में—ॐ निवृत्त्यै नमः। ॐ प्रतिष्ठायै नमः। ॐ विद्यायै नमः। ॐ शान्त्यै नमः से पूजा करे।

अष्टदल में पूर्वादि क्रम से ये पूज्य हैं—ॐ अनन्ताय नमः। ॐ सूक्ष्माय नमः। ॐ शिवोत्तमाय नमः। ॐ एकनेत्राय नमः। ॐ एकरुद्राय नमः। ॐ त्रिमूर्त्तये नमः। ॐ श्रीकण्ठाय नमः। ॐ शिखण्डिने नमः।

आठ दलों के अग्रभाग में—ॐ उमायै नमः। ॐ चण्डेश्वराय नमः। ॐ नन्दिने नमः। ॐ महाबलाय नमः। ॐ गणेशाय नमः। ॐ वृषाय नमः। ॐ भृङ्गरीटाय नमः। ॐ स्कन्दाय नमः से पूजा करे।

भूपुर में इन्द्रादि और वज्रादि का पूजन करे। तब धूपादि विसर्जन तक की सारी क्रिया करे। पुरश्चरण में पाँच लाख जप और पचास हजार हवन मध्वक्त कनेर के फूलों से करे।

मन्त्रान्तरम्

भुवनेशो प्रणवं नमः शिवाय भुवनेशी पुनरष्टाक्षरो मनुः। तथा च निबन्धे—

षडक्षरः शक्तिरुद्धः कथितोऽष्टाक्षरो मनुः ।

अस्य पूजा—प्रातःकृत्यादि-शैवोक्तपीठमन्वन्तं पीठन्यासं विधाय ऋष्यादिन्यासं कुर्यात्। शिरसि वामदेवाय ऋषये नमः, मुखे पंक्तिच्छन्दसे नमः, हृदि उमापतये देवतायै नमः।

ततः कराङ्गन्यासौ—ॐ अंगुष्ठाभ्यां नमः। नं तर्जनीभ्यां स्वाहा। मं मध्यमाभ्यां वषट्। शिं अनामिकाभ्यां हुं। वां कनिष्ठाभ्यां वौषट्। यं करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्। एवं हृदयादिषु। ततो ध्यानम्—

बन्धूकाभं त्रिनेत्रं शशिशकलधरं स्मेरवक्त्रं वहन्तं
हस्तैः शूलं कपालं वरदमभयदं चारुहासं नमामि ।
वामोरुस्तम्भगायाः करतलविलसच्चारुरक्तोत्पलायाः
हस्तेनाश्लिष्टदेहं मणिमयविलसद्भूषणायाः प्रियायाः ॥

एवं ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्यार्घ्यस्थापनं कृत्वा शैवोक्तपीठपूजां विधाय पुनर्ध्यात्वा आवाहनादिपञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं विधायावरणपूजामारभेत्। यथा—

केशरेष्वग्निनिर्ऋतिवायव्यीशानकोणेषु मध्ये दिक्षु च ॐ हृदयाय नमः, नं शिरसे स्वाहा, मं शिखायै वषट्, शिं कवचाय हुं, वां नेत्रत्रयाय वौषट्, यं अस्त्राय फट्। ततो पूर्वादिदिक्षु च ॐ हृल्लेखायै नमः। एवं गगनायै रक्तायै

करालिकायै महोच्छुष्मायै। ततः पत्रेषु पूर्वादि वृषभादीन् पूजयेत्। ॐ वृषभाय नमः। एवं क्षेत्रपालाय चण्डेश्वराय दुर्गायै कार्त्तिकेयाय नन्दिने विघ्ननाशकाय सेनापतये। ततः पूर्ववत्पत्रेषु उमादीन् पूजयेत्। तद्वाह्ये ब्राह्मयाद्या मातरः पूज्याः। ब्राह्मी माहेश्वरी कौमारी वैष्णवी वाराही इन्द्राणी चामुण्डा महालक्ष्मीः। तद्बहिरिन्द्रादीन् वज्रादींश्च पूजयेत्। ततो धूपादिविसर्जनान्तं कर्म समापयेत्। अस्य पुरश्चरणं चतुर्दशलक्षजपः। तथा च—

मनुलक्षं जपेन्मन्त्रं तद्दशांशं यथाविधि।
जुहुयान्मधुरासिक्तैरारग्वधसमिद्वरैः ॥

आरग्वधः शोणालुः।

शिव का अष्टाक्षर मन्त्र—ह्रीं ॐ नमः शिवाय ह्रीं। यह अष्टाक्षर मन्त्र है। यन्त्र पूर्ववत् है।

सामान्य पूजापद्धति से प्रातःकृत्यादि करके शिवोक्त क्रम से पीठन्यास करके ऋष्यादि न्यास करे।

ऋष्यादि न्यास—वामदेवाय ऋषये नमः शिरसि। पंक्तिच्छन्दसे नमः मुखे। उमापतये देवतायै नमः हृदि।

करन्यास—ॐ अंगुष्ठाभ्यां नमः। नं तर्जनीभ्यां स्वाहा। मं मध्यमाभ्यां वषट्। शिं अनामिकाभ्यां हुं। वां कनिष्ठाभ्यां वौषट्। यं अस्त्राय फट्।

षडंग न्यास—ॐ हृदयाय नमः। नं शिरसे स्वाहा। मं शिखायै वषट्। शिं कवचाय हुं। वां नेत्रत्रयाय वौषट्। यं अस्त्राय फट्।

न्यासोपरान्त निम्नवत् ध्यान करे—

बन्धूकाभं त्रिनेत्रं शशिशकलधरं स्मेरवक्त्रं वहन्तम्
हस्तैः शूलं कपालं वरदमभयदं चारुहासं नमामि।
वामोरुस्तम्भगायाः करतलविलसच्चारुरक्तोत्पलायाः
हस्तेनाश्लिष्टदेहं मणिमयविलसद् भूषणायाः प्रियायाः।।

भगवान् शिव के शरीर की कान्ति बन्धूकपुष्प के समान लाल है। तीन नेत्र हैं। मुख पर मुस्कान है। मस्तक पर अर्द्धचन्द्र है। चारो हाथों में शूल, नरकपाल, वर और अभय है। मणिजटित आभूषणों से विभूषित प्रियतमा शक्ति बाँईं जंघा पर समासीन हैं। देवी के एक हाथ में लाल कमल है और दूसरे हाथ से पति का आलिंगन की हुई हैं। ऐसे भगवान् शिव को मेरा नमस्कार है।

ध्यान के बाद मानसोपचार पूजा करके अर्घ्यस्थापन करे। शिवमन्त्रोक्त पीठपूजा करके पुनः आवाहनादि से पञ्च पुष्पाञ्जलि-दान तक का सभा क्रियाओं को करके आवरण पूजा करे।

केशर में अग्नि, नैर्ऋत्य, वायव्य, ईशान, मध्य और चतुर्दिक षडंग पूजन करे—ॐ हृदयाय नम:। नं शिरसे स्वाहा। मं शिखायै वषट्। शिं कवचाय हुं। वां नेत्रत्रयाय वौषट्। यं अस्त्राय फट्।

विन्दु में और उसके चारो दिशाओं में ॐ हृल्लेखायै नम:। ॐ गगनायै नम:। ॐ रक्तायै नम:। ॐ करालिकायै नम:। ॐ महोच्छुष्मायै नम: से पूजन करे।

अष्टदल में पूर्वादि क्रम से दलमूल में ॐ वृषभाय नम:। ॐ क्षेत्रपालाय नम:। ॐ चण्डेश्वराय नम:। ॐ दुर्गायै नम:। ॐ कार्तिकेयाय नम:। ॐ नन्दिने नम:। ॐ विघ्ननाशकाय नम:। ॐ सेनापतये नम: से पूजा करे।

दलों के मध्य भाग में उत्तरादि क्रम से उमादि की पूजा करे—ॐ उमायै नम:। ॐ चण्डेश्वराय नम:। ॐ नन्दिने नम:। ॐ महाबलाय नम:। ॐ गणेशाय नम:। ॐ वृषाय नम:। ॐ भृंगरीटाय नम:। ॐ स्कन्दाय नम:।

दलाग्रों में—ॐ ब्राह्म्यै नम:। ॐ माहेश्वर्यै नम:। ॐ कौमार्यै नम:। ॐ वैष्णव्यै नम:। ॐ इन्द्राण्यै नम:। ॐ वाराह्यै नम:। ॐ चामुण्डायै नम:। ॐ महालक्ष्म्यै नम:।

भूपुर में इन्द्रादि और वज्रादि का पूजन करे। इसके बाद धूपादि से विसर्जन तक की सारी क्रिया करे।

पुरश्चरण में चौदह लाख जप एवं त्रिमधुरोपेत शोणालु की समिधा से एक लाख चालीस हजार हवन करे।

मन्त्रान्तरम्

तारो माया प्रासादं नमः शिवायाष्टाक्षरो मनुः। तथा च निबन्धे—

तारो माया वियद्बिन्दुमनुस्वारसमन्वितम्।
पञ्चाक्षरसमायुक्तो वसुवर्णो मनुर्मतः॥

अस्य पूजा—प्रातःकृत्यादिशैवोक्तपीठन्यासान्तं विधाय पूर्वोक्तऋष्यादिन्यास-कराङ्गन्यासान् कुर्यात्। ततो ध्यानम्—

वन्दे सिन्दूरवर्णं मणिमुकुटलसच्चारुचन्द्रावतंसं
भालोद्यन्नेत्रमीशं स्मितमुखकमलं दिव्यभूषाङ्गरागम्।
वामोरुन्यस्तपाणेररुणकुवलयं सन्दधत्याः प्रियाया
वृत्तोत्तुङ्गस्तनाग्रे निहितकरतलं वेदटङ्केष्टहस्तम्॥

एवं ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्य, अर्घ्यस्थापनादिपीठपूजान्तं विधाय, आवाहनादिपञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं विधायावरणपूजां कुर्यात्। पूर्ववदङ्गादि सम्पूज्य पत्रेष्वनन्तादीन् पत्राग्रेषु उमादीन् पूजयेत्। तद्बहिरिन्द्रादीन् वज्रादींश्च पूजयेत्। ततो

धूपादिविसर्जनान्तं कर्म समापयेत्। अस्य पुरश्चरणमष्टलक्षजपः। तथा च—

अष्टलक्षं जपेदेनं मनुं मन्त्रविदां वरः ।
तत्सहस्रं प्रजुहयात्पायसान्नैर्घृतप्लुतैः ॥

शिव का अन्य अष्टाक्षर मन्त्र—ॐ ह्रीं ह्रौं नम: शिवाय। यह अष्टाक्षर मन्त्र है। यन्त्र पूर्ववत् है।

प्रात:कृत्यादि करके शिवमन्त्रोक्त विधान से ऋष्यादि करांग न्यास करके निम्नवत् ध्यान करे—

वन्दे सिन्दूरवर्णं मणिमुकुटलसच्चारुचन्द्रावतंसं
भालोद्यन्नेत्रमीशं स्मितमुखकमलं दिव्यभूषाङ्गरागम् ।
वामोरुन्यस्तपाणेररुणकुवलयं सन्दधत्या: प्रियाया
वृत्तोत्तुङ्गस्तनाग्रे निहितकरतलं वेदटङ्केष्टहस्तम् ।।

भगवान् शिव का शरीर सिन्दूर-जैसा लाल है। मस्तक पर मणिमुकुट है, उस पर अर्द्धचन्द्र शोभित हो रहा है। ललाट तीसरे नेत्र से प्रदीप्त है। मुखकमल पर मुस्कान है। नाना श्रेष्ठ अलंकारों से सारा शरीर सुशोभित है। उनकी बाँई जंघा पर उनकी प्रियतमा बैठी हैं। उनका एक हाथ बाँई जंघा पर है और दूसरे हाथ में लाल कमल है। प्रियतमा के गोल उच्च स्तनमण्डल पर एक करतल है। शेष तीन हाथों में वेद, टंक और वर मुद्रा है। ऐसे शिव की मैं वन्दना करता हूँ।

ध्यान के बाद मानसोपचार पूजन, अर्घ्यस्थापन, पीठपूजा, पुन: ध्यान-आवाहनादि से पञ्च पुष्पाञ्जलि-दान तक के सारे कार्य करके पूर्ववत् आवरण पूजा करे। षडंग पूजन, पद्मदल में अनन्तादि का, दलाग्र में उमादि का और भूपुर में इन्द्रादि वज्रादि की पूजा करे। धूपादि से विसर्जन तक की सारा क्रियाओं के बाद विसर्जन करे।

पुरश्चरण में आठ लाख जप और आठ हजार हवन घृताक्त पायस से करे।

मृत्युञ्जयमन्त्र:

तारं स्थिरा सकर्णेन्दुर्भृगुः सर्गसमन्वितः ।
त्र्यक्षरात्मा निगदितो मन्त्रो मृत्युञ्जयात्मकः ॥

स्थिरा जकारः, कर्ण ऊकारः, भृगुः सकारः।

अस्य पूजा—प्रातःकृत्यादिशैवोक्तं पीठन्यासान्तं विधाय ऋष्यादिन्यासं कुर्यात्। शिरसि कहोलऋषये नमः। मुखे देवीगायत्रीच्छन्दसे नमः। हृदि मृत्युञ्जयाय महादेवाय देवतायै नमः। तथा च—

ऋषिः कहोलो-देव्यादि-गायत्रीच्छन्द ईरितम् ।
मृत्युञ्जयो महादेवो देवतास्य प्रकीर्त्तिता ॥

ततः कराङ्गन्यासौ—सां अंगुष्ठाभ्यां नमः। सीं तर्जनीभ्यां स्वाहा। सूं मध्यमाभ्यां वषट्। सैं अनामिकाभ्यां हुं। सौं कनिष्ठाभ्यां वौषट्। सः करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्। एवं हृदयादिषु षडदीर्घभाजा सकारेण कुर्यात्। तथा च निबन्धे—

भृगुणा दीर्घयुक्तेन कुर्यादङ्गक्रियां मनोः ।

ततो ध्यानम्—

चन्द्रार्काग्निविलोचनं स्मितमुखं पद्मद्वयान्तःस्थितं
मुद्रापाशमृगाक्षसूत्रविलसत्पाणिं हिमांशुप्रभम् ।
कोटीरेन्दुगलत्सुधाप्लुततनुं हारादिभूषोज्ज्वलं
कान्त्या विश्वविमोहनं पशुपतिं मृत्युञ्जयं भावयेत् ।।

एवं ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्य अर्घ्यस्थापनादि-पीठपूजां विधाय पुनर्ध्यात्वा आवाहनादिपञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं विधायावरणपूजां कुर्यात्। तद्यथा—

केशरेषु अग्न्यादिकोणेषु मध्ये दिक्षु च सां हृदयाय नमः इत्यादिना षडङ्गानि सम्पूज्य, तद्बहिरिन्द्रादीन् वज्रादींश्च पूजयेत्।

ततो धूपादिविसर्जनान्तं कर्म समापयेत्। अस्य पुरश्चरणं लक्षत्रयजपः। तथा च—

गुणलक्षं जपेन्मन्त्रं तद्दशांशं विशालधीः ।
जुहुयादमृताखण्डैः शुद्धदुग्धाज्यलोडितैः ।।

मृत्युञ्जय मन्त्र—ॐ जूं सः। यह त्र्यक्षर मन्त्र है। यन्त्र पूर्ववत् है।

प्रातःकृत्यादि करके शिवमन्त्रोक्त पीठन्यास तक की क्रिया करके न्यास करे ।

ऋष्यादि न्यास—कहोलऋषये नमः शिरसि। गायत्रीछन्दसे नमः मुखे। मृत्युञ्जयाय महादेवाय देवतायै नमः हृदि।

करन्यास—सां अंगुष्ठाभ्यां नमः। सीं तर्जनीभ्यां स्वाहा। सूं मध्यमाभ्यां वषट्। सैं अनामिकाभ्यां हुं। सौं कनिष्ठाभ्यां वौषट्। सः करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्।

हृदयादि न्यास—सां हृदयाय नमः। सीं शिरसे स्वाहा। सूं शिखायै वषट्। सैं कवचाय हुं। सौं नेत्रत्रयाय वौषट्। सः अस्त्राय फट्।

न्यासानन्तर निम्नवत् ध्यान करे—

चन्द्रार्काग्निविलोचनं स्मितमुखं पद्मद्वयान्तःस्थितम्
मुद्रापाशमृगाक्षसूत्रविलसत् पाणिं हिमांशुप्रभम्।
कोटीरेन्दुगलत् सुधाप्लुततनुं हारादिभूषोज्ज्वलम्
कान्त्या विश्वविमोहनं पशुपतिं मृत्युञ्जयं भावयेत्।।

भगवान् मृत्युञ्जय के तीन नेत्र चन्द्र, सूर्य, अग्नि हैं। मुख पर मुस्कान है। दो कमलपुष्पों के मध्य विराजमान हैं। चारो हाथों में से प्रत्येक में मुद्रा, पाश, मृग और अक्षमाला है। चन्द्रमा के समान आभा है। चन्द्रमा से स्रवित अमृत के द्वारा शरीर आर्द्र है। हार आदि अलंकारों से सारे संसार को मुग्ध करने वाले पशुपति भगवान् मृत्युञ्जय का मैं ध्यान करता हूँ।

ध्यान के बाद मानसोपचार पूजा, अर्घ्यस्थापनादि पीठपूजा, पुन: ध्यान-आवाहनादि से पञ्च पुष्पाञ्जलि-दान तक के कर्मों को करके आवरण पूजा करे।

षडंग पूजन—केशर में अग्न्यादि कोणों में मध्य में और चतुर्दिक पूजन करे—सां हृदयाय नम:। सीं शिरसे स्वाहा। सूं शिखायै वषट्। सैं कवचाय हुं। सौं नेत्रत्रयाय वौषट्। स: अस्त्राय फट्।

भूपुर में इन्द्रादि और वज्रादि की पूजा करे। तब धूपादि से विसर्जन तक की क्रिया करके पूजा पूर्ण करे।

इस मन्त्र के पुरश्चरण में तीन लाख जप एवं घी-दूधमिश्रित गुरुचखण्डों से तीस हजार हवन करे।

अपरमृत्युञ्जयमन्त्र:

मृत्युञ्जयं समुद्धृत्य पालयद्वितयं वदेत् ।
मृत्युञ्जयं समुच्चार्य पुनरेवं विलोमतः ॥
द्वादशार्णोऽयं मन्त्रः स्यान्मृत्युञ्जयाभिधोऽपरः ।
ध्यानपूजादिकं सर्वं पूर्ववच्च समाचरेत् ॥

मृत्युञ्जय का द्वादशाक्षर मन्त्र—ॐ जूं स: पालय पालय स: जूं ॐ। यह मृत्युञ्जय का द्वादशाक्षर मन्त्र है। इस मन्त्र का ध्यान-पूजन आदि त्र्यक्षर मन्त्रवत् है।

मन्त्रान्तरम्

प्रणवो हृदयं पश्चात्ततो भगवते पदम् ।
ङेऽन्ताञ्च दक्षिणामूर्त्तिं मह्यं मेधामुदीरयेत् ।
प्रयच्छ ठद्वयान्तोऽयं द्वाविंशत्यक्षरो मनुः ॥

अस्य पूजा—प्रातःकृत्यादिशैवोक्तपीठमन्वन्तं विन्यस्य ऋष्यादिन्यासं कुर्यात्। शिरसि चतुर्मुखाय ऋषये नमः। मुखे देवीगायत्रीच्छन्दसे नमः। हृदि दक्षिणामूर्त्तये देवतायै नमः।

ततः कराङ्गन्यासौ—ॐ आं ॐ अंगुष्ठाभ्यां नमः। ॐ ईं ॐ तर्जनीभ्यां स्वाहा। ॐ ऊं ॐ मध्यमाभ्यां वषट्। ॐ ऐं ॐ अनामिकाभ्यां हुं। ॐ औं ॐ

कनिष्ठाभ्यां वौषट्। ॐ अः ॐ करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्। एवं हृदयादिषु। तथा च निबन्धे—

तारुरुद्धैः स्वरैर्दीर्घैः षड्भिरङ्गानि कल्पयेत् ।
अथवा मन्त्रसम्भूतैः पदैर्वा कल्पयेत् क्रमात् ॥

तथा च मानसोल्लासे—

त्रिभिश्चतुर्भिः षड्भिश्च चतुर्भिस्त्रिभि रक्षिभिः ।
मन्त्रवर्णैर्विभक्तैर्वा कुर्यादङ्गक्रियां मनोः ॥ इति।

ततो ध्यानम्—

वटवृक्षं महोच्छ्रायं पद्मरागफलोज्ज्वलम् ।
गारुत्मतमयैः पत्रैर्विचित्रैरुपशोभितम् ॥
नवरत्नमहाकल्पैर्लम्बमानैरलंकृतम् ।
विचिन्त्य वटमूलस्थं चिन्तयेल्लोकनायकम् ॥
स्फटिकरजतवर्णं मौक्तिकीमक्षमाला-
ममृतकलशविद्याज्ञानमुद्राः कराब्जैः ।
दधतमुरगकक्षं चन्द्रचूडं त्रिनेत्रं
विधृतविविधभूषं दक्षिणामूर्त्तिमीडे ॥

एवं ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्य अर्घ्यस्थापनादिशैवोक्तपीठपूजान्तं विधाय पुनर्ध्यात्वा, आवाहनादिपञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं विधाय, आवरणपूजां कुर्यात्। केशरेषु अग्न्यादिकोणेषु मध्ये दिक्षु च ॐ आं ॐ हृदयाय नमः इत्यादिना षडङ्गानि पूजयेत्। पत्रेषु पूर्वादि ॐ सरस्वत्यै नमः। एवं ब्रह्मणे सनकाय सनन्दाय सनातनाय सनत्कुमाराय शुकाय व्यासाय। तद्बहिः सिद्धाय गन्धर्वाय योगीन्द्राय विद्याधराय। तद्बहिरिन्द्रादीन् वज्रादींश्च पूजयेत्। ततो धूपादिविसर्जनान्तं कर्म समापयेत्। अस्य पुरश्चरणं लक्षजपः। तथा च—

लक्षमेकं जपेन्मन्त्रं ब्रह्मचारी व्रते स्थितः ।
जुहुयात् सघृतैः पद्मैर्दशांशै संस्कृतेऽनले ॥

दक्षिणामूर्त्ति-मन्त्र—ॐ नमो भगवते दक्षिणामूर्त्तये मह्यं मेधां प्रयच्छ स्वाहा। इसमें बाईस अक्षर हैं। प्रात:कृत्यादि करके शिवमन्त्रोक्त पीठन्यास तक के कर्म करके न्यास करे।

ऋष्यादि न्यास—चतुर्मुखाय ऋषये नम: शिरसि। देवी गायत्रीच्छन्दसे नम: मुखे। दक्षिणामूर्त्तिदेवतायै नम: हृदि।

करन्यास—ॐ आं ॐ अंगुष्ठाभ्यां नम:। ॐ ईं ॐ तर्जनीभ्यां स्वाहा। ॐ ऊं ॐ मध्यमाभ्यां वषट्। ॐ ऐं ॐ अनामिकाभ्यां हुं। ॐ औं ॐ कनिष्ठाभ्यां वौषट्। ॐ अ: ॐ करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्।

अंगन्यास—ॐ आं ॐ हृदयाय नम:। ॐ ईं ॐ शिरसे स्वाहा। ॐ ऊं ॐ शिखायै वषट्। ॐ ऐं ॐ कवचाय हुं। ॐ औं ॐ नेत्रत्रयाय वौषट्। ॐ अ: ॐ अस्त्राय फट्।

निबन्ध के अनुसार भी इसी प्रकार न्यास करे या मन्त्र के पदों से न्यास करे। मानसोल्लास के मत से मन्त्रवर्णों के ३, ४, ६, ४, ३, २ वर्णों से षडंग न्यास करे तत्पश्चात् निम्नवत् ध्यान करे—

वटवृक्षं महोच्छ्रायं पद्मरागफलोज्ज्वलम् ।
गारुत्मतमयै: पत्रैर्विचित्रैरुपशोभितम् ।।
नवरत्नमहाकल्पैर्लम्बमानैरलंकृतम् ।
विचिन्त्य वटमूलस्थं चिन्तयेल्लोकनायकम् ।।
स्फटिकरजतवर्णं मौक्तिकीमक्षमाला-
ममृतकलशविद्याज्ञानमुद्रा: कराब्जै: ।
दधतमुरगकक्षं चन्द्रचूडं त्रिनेत्रं
विधृतविविधभूषं दक्षिणामूर्त्तिमीडे ।।

एक विशाल वटवृक्ष है। वह पद्मराग मणि–जैसे फूलों से प्रकाशमान है। मरकत मणि–जैसे अद्भुत पत्तों से सुशोभित है। लटकते हुए विलक्षण नवरत्नों से अलंकृत है। ऐसे वटवृक्ष के मूल भाग में विश्व के स्वामी भगवान् दक्षिणामूर्ति शिव का ध्यान करे। स्फटिक और चाँदी–जैसा उज्ज्वल शरीर है। चार करकञ्जों में मणिमयी जपमाला, अमृत-कलश, विद्या और ज्ञानमुद्रा है। वक्ष में नाग यज्ञोपवीत और मस्तक पर चन्द्रमा है। तीन नेत्र हैं। विविध आभूषणों से विभूषित दक्षिणामूर्ति की मैं वन्दना करता हूँ।

ध्यान के बाद मानसोपचार पूजा, शिवमन्त्रोक्त पीठपूजा तक के सभी कर्म करके पुन: ध्यान-आवाहनादि से पञ्च पुष्पाञ्जलि-दानपर्यन्त कर्म करके आवरण-पूजा करे।

षडंग पूजन—केशर में अग्न्यादि कोणों, मध्य और चतुर्दिक अंगन्यास के मन्त्रों से षडंग पूजन करे।

अष्टदल में पूर्वादि क्रम से इनकी पूजा करे—ॐ सरस्वत्यै नम:। ॐ ब्रह्मणे नम:। ॐ सनकाय नम:। ॐ सनन्दनाय नम:। ॐ सनातनाय नम:। ॐ सनत्कुमाराय नम:। ॐ शुक्राय नम:। ॐ न्यासाय नम:।

अष्टदल और भूपुर के मध्य पूर्वादि दिशाओं में इनकी पूजा करे—ॐ सिद्धाय नमः। ॐ गन्धर्वाय नमः। ॐ योगीन्द्राय नमः। ॐ विद्याधराय नमः।

भूपुर में इन्द्रादि एवं वज्रादि की पूजा करे। तब धूपादि से विसर्जन तक के कर्म करके पूजन पूर्ण करे। पुरश्चरण में ब्रह्मचर्यपूर्वक एक लाख जप और दश हजार हवन घृताक्त कमल-पुष्पों से करे।

मन्त्रान्तरम्

अग्निसंवर्तकादित्यरानिलौ षष्ठविन्दुमत् ।
चिन्तामणिरिति ख्यातं बीजं सर्वसमृद्धिदम् ॥

अस्यार्थः—अग्नी रेफः, संवर्त्तकः क्षकारः, आदित्यो मकारः, रः रेफः, अनिलो यकारः, औ स्वरूपं, षष्ठ ऊकारः।

अस्य पूजा—प्रातःकृत्यादि शैवोक्तं पीठमन्वन्तं विन्यस्य ऋष्यादिन्यासं कुर्यात्। शिरसि कश्यपऋषये नमः। मुखे अनुष्टुप्छन्दसे नमः। हृदि अर्द्धनारीश्वराय देवतायै नमः।

ततः कराङ्गन्यासौ—रं अंगुष्ठाभ्यां नमः। कं तर्जनीभ्यां स्वाहा। यं मध्यमाभ्यां वषट्। मं अनामिकाभ्यां हुं। रं कनिष्ठाभ्यां वौषट्। यं करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्। एवं हृदयादिषु। तथा च निबन्धे—

रेफादिव्यञ्जनैः षड्भिः कुर्यादङ्गानि फट् क्रमात् ।

ततो ध्यानम्—

**नीलप्रवालरुचिरं विलसत्त्रिनेत्रं पाशारुणोत्पलकपालकशूलहस्तम् ।
अर्द्धाम्बिकेशमणिशं प्रविभक्तभूषं बालेन्दुबद्धमुकुटं प्रणमामि रूपम् ॥**

एवं ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्य अर्घ्यस्थापनं कुर्यात्। ततः शैवोक्तपीठपूजां विधाय पुनर्ध्यात्वा आवाहनादिपञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं विधाय आवरणपूजा-मारभेत्। तद्यथा—

केशरेषु अग्न्यादिकोणेषु मध्ये दिक्षु च रं हृदयाय नमः इत्यादिना पूजयेत्। ततः पत्रेषु पूर्ववद् वृषभादीन्, पत्राग्रेषु ब्राह्मीं माहेश्वरीं कौमारीं वैष्णवीं वाराहीं इन्द्राणीं चामुण्डां महालक्ष्मीञ्च पूजयेत्।

तद्बहिरिन्द्रादीन् वज्रादींश्च सम्पूज्य धूपादिविसर्जनान्तं कर्म समापयेत्। अस्य पुरश्चरणं लक्षजपः। तथा च—

**लक्षमेकं जपेन्मन्त्रमित्थं मन्त्री विचिन्तयन् ।
अयुतं मधुरासिक्तैर्जुहुयात्तिलतण्डुलैः ॥**

अर्द्धनारीश्वर-मन्त्र—रं क्षं मं यं औं ऊं—यह षडक्षर मन्त्र है। यह शिवमन्त्र चिन्तामणि है। इसकी उपासना से सभी सिद्धियाँ मिलती हैं। यन्त्र पूर्ववत् है।

प्रात:कृत्यादि करके शिवमन्त्रोक्त पीठन्यास करे। तब ऋष्यादि न्यास करे—कश्यपऋषये नम: शिरसि। अनुष्टुप्छन्दसे नम: मुखे। अर्द्धनारीश्वरदेवतायै नम: हृदि।

करन्यास—रं अंगुष्ठाभ्यां नम:। कं तर्जनीभ्यां स्वाहा। यं मध्यमाभ्यां वषट्। मं अनामिकाभ्यां हुं। रं कनिष्ठाभ्यां फट्। यं करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्।

अंगन्यास—रं हृदयाय नम:। कं शिरसे स्वाहा। यं शिखायै वषट्। मं कवचाय हुं। रं नेत्रत्रयाय वौषट्। यं अस्त्राय फट्।

न्यासोपरान्त निम्नवत् ध्यान करे—

नीलप्रवालरुचिरं विलसत्त्रिनेत्रं पाशारुणोत्पलकपालकशूलहस्तम्।
अर्द्धाम्बिकेशमनिशं प्रविभक्तभूषं बालेन्दुवृद्धमुकुटं प्रणमामि रूपम्।।

आधा शरीर नील वर्ण का और आधा मूँगा के समान सुन्दर है। तीन नेत्र सुन्दर हैं। हाथों में पाश, लाल कमल, नरकपाल और शूल हैं। आधा शरीर अम्बिका का और आधा शिव का है। दोनों अंगों की वेशभूषा रूप के समान अलग-अलग है। मुकुट में द्वितीया का चाँद है। ऐसे रूप वाले अर्द्धनारीश्वर को मैं प्रणाम करता हूँ।

इसके बाद मानसोपचार पूजा, अर्घ्यस्थापन, शिवमन्त्रोक्त पीठपूजा, पुन: ध्यान-आवाहनादि से पञ्च पुष्पाञ्जलि-दान तक की क्रियायें करके आवरण पूजा करे।

केशर में अग्न्यादि कोणों, मध्य में और चतुर्दिक अंगन्यास में ऊपर वर्णित मन्त्रों से षडंग पूजन करे।

अष्टदल में पूर्वादि क्रम से—ॐ वृषभाय नम:। ॐ क्षेत्रपालाय नम:। ॐ चण्डेश्वराय नम:। ॐ दुर्गायै नम:। ॐ कार्तिकेयाय नम:। ॐ नन्दिने नम:। ॐ विघ्ननाशाय नम: से पूजा करे।

दलाग्रों में पूर्वादि क्रम से अष्ट मातृकाओं का पूजन करे—ॐ ब्राह्मयै नम:। ॐ माहेश्वर्यै नम:। ॐ कौमार्यै नम:। ॐ वैष्णव्यै नम:। ॐ इन्द्राण्यै नम:। ॐ वाराह्यै नम:। ॐ चामुण्डायै नम:। ॐ महालक्ष्म्यै नम:।

भूपुर में इन्द्रादि दश और वज्रादि दश की पूजा करे। तब धूपादि से विसर्जन तक के सभी कर्म करके पूजा पूर्ण करे। पुरश्चरण में एक लाख जप और घी-मधु-शक्कर-मिश्रित तिलतण्डुल से दश हजार हवन करे।

मन्त्रान्तरम्

पार्श्वो वह्निसमारूढस्तारवानाद्यबीजकम् ।
धान्तो वह्निसमारूढस्तूर्यस्वरसमन्वित: ।

विन्दुमांस्तु द्वितीयः स्यात् टान्तः सर्गी तृतीयकः ॥

शारदायाम्—

लोहितोऽग्न्यासनः सत्यमिन्दुमान् प्रथमं पुनः ।
द्वितीया वह्निबीजस्था दीर्घा शान्तीन्दुभूषिता ॥
तृतीयो लाङ्गली सर्गी मन्त्रो बीजत्रयान्वितः ।
नीलकण्ठात्मको मन्त्रो विषद्वयहरः परः ॥

अस्य पूजा—प्रातःकृत्यादिशैवोक्तपीठन्यासान्तं विधाय ऋष्यादिन्यासं कुर्यात्। शिरसि अरुणऋषये नमः। मुखे अनुष्टुप्छन्दसे नमः। हृदि नीलकण्ठाय देवतायै नमः।

ततः कराङ्गन्यासौ यथा—हर हर स्वाहा अंगुष्ठाभ्यां नमः। कपर्द्दिने स्वाहा तर्जनीभ्यां स्वाहा। नीलकण्ठाय स्वाहा मध्यमाभ्यां वषट्। कालकूटविषभक्षणाय हुं फट् अनामिकाभ्यां हुं। नीलकण्ठिने स्वाहा कनिष्ठाभ्यां फट्। एवं हृदयादिषु। तथा च निबन्धे—

हरद्वयं वह्निजाया हृदयं परिकीर्तितम् ।
कपर्द्दिने ठद्वयञ्च शिरोमन्त्र उदाहृतः ॥
नीलकण्ठाय ठद्वन्द्वं शिखामन्त्रः समीरितः ।
कालकूटपदस्यान्ते ङेयुतं विषभक्षणम् ॥
हुं फट् कवचमाख्यातं विद्वद्भिर्नीलकण्ठिने ।
स्वाहान्तमन्त्रमेतानि पञ्चाङ्गानि मनोर्विदुः ॥

ततो मन्त्रन्यासः—मस्तके प्रीं नमः, कण्ठे न्त्रीं नमः, हृदि ठं नमः। तथा च—

मूर्ध्नि कण्ठे हृदम्भोजे क्रमाद्बीजत्रयं न्यसेत् ।
ततः समाहितो भूत्वा नीलकण्ठं विचिन्तयेत् ॥ इति ।

ततो ध्यानम्—

बालार्कायुततेजसं धृतजटाजूटेन्दुखण्डोज्ज्वलं
नागेन्द्रैः कृतशेखरं जपवटी शूलं कपालं करैः ।
खट्वाङ्गं दधतं त्रिनेत्रविलसत्पञ्चाननं सुन्दरं
व्याघ्रत्वक्परिधानमब्जनिलयं श्रीनीलकण्ठं भजे ॥

एवं ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्य, अर्घ्यस्थापनं कृत्वा, शैवोक्तपीठपूजां विधाय, पुनर्ध्यात्वा, आवाहनादिपञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं विधाय, आवरणपूजामारभेत्। केशरेष्वग्न्यादिकोणे मध्ये दिक्षु च हर हर स्वाहा हृदयाय नमः इत्यादिना पूजयेत्। ततः इन्द्रादीन् वज्रादींश्च पूजयेत्। ततो धूपादिविसर्जनान्तं कर्म समापयेत्।

अस्य पुरश्चरणं त्रिलक्षजपः। तथा च—

लक्षत्रयं जपेन्मन्त्रं तद्दशांशं ससर्पिषा।
हविषा जुहुयात्सम्यक्संस्कृते हव्यवाहने॥

नीलकण्ठ मन्त्र—प्रीं न्त्रीं ठः। यह त्र्यक्षर मन्त्र है। यह द्विविध विष को दूर करने वाला है।

शारदातिलक में भी इस मन्त्र का वर्णन इसी प्रकार का है। प्रातःकृत्यादि के बाद शिवमन्त्रोक्त पीठन्यास करके न्यास करे।

ऋष्यादि न्यास—अरुणऋषये नमः शिरसि। अनुष्टुप्छन्दसे नमः मुखे। नीलकण्ठाय देवतायै नमः हृदि।

करन्यास—हर हर स्वाहा अंगुष्ठाभ्यां नमः। कपर्दिने स्वाहा तर्जनीभ्यां स्वाहा। नीलकण्ठाय स्वाहा मध्यमाभ्यां वषट्। कालकूटविषभक्षणाय हुं फट् अनामिकाभ्यां हुं। नीलकण्ठिने स्वाहा कनिष्ठाभ्यां फट्।

हृदयादि षडंग न्यास—हर हर स्वाहा हृदयाय नमः। कपर्दिने स्वाहा शिरसे स्वाहा। नीलकण्ठाय स्वाहा शिखायै वषट्। कालकूटविषभक्षणाय हुं फट् कवचाय हुं। नीलकण्ठिने स्वाहा अस्त्राय फट्।

मन्त्रवर्णन्यास—मस्तके प्रीं नमः, कण्ठे न्त्रीं नमः। हृदि ठं नमः। इस प्रकार न्यास करने के उपरान्त निम्नवत् ध्यान करे—

बालार्कायुततेजसं धृतजटाजूटेन्दुखण्डोज्ज्वलं
नागेन्द्रैः कृतशेखरं जपवटीं शूलं कपालं करैः।
खट्वांगं दधतं त्रिनेत्रविलसत् पञ्चाननं सुन्दरं
व्याघ्रत्वक्परिधानमब्जनिलयं श्रीनीलकण्ठं भजे॥

दस हजार उदीयमान सूर्य–जैसा तेज है। शिर पर जटाजाल है। उसमें अर्द्धचन्द्र प्रकाशमान है। नागेन्द्रों का मुकुट है। हाथों में जपमाला, शूल, नरकपाल और खट्वांग (खटिया का पावा) है। पाँच सुन्दर मुख हैं। प्रत्येक मुख में तीन नेत्र हैं। बाघम्बर वस्त्र है। कमल पर विराजमान हैं। ऐसे भगवान् श्री नीलकण्ठ को मेरा नमस्कार है।

इसके बाद मानसोपचार पूजा, अर्घ्यस्थापन, शिवमन्त्रोक्त पीठपूजा, पुनः ध्यान-आवाहनादि से पञ्च पुष्पाञ्जलि-दान तक की क्रिया करके आवरण पूजन करे।

केशर में अग्न्यादि कोणों में, मध्य में और चतुर्दिक् में पंचांग पूजन पञ्चाङ्ग न्यास में वर्णित मन्त्रों से करे। भूपुर में इन्द्रादि और वज्रादि की पूजा करे। तब धूपादि से विसर्जन तक के सारे कार्य करके पूजा समाप्त करे। पुरश्चरण में जप तीन लाख और हवन घी से तीस हजार करे।

मन्त्रान्तरम्

प्रणवो हृन्नीलकण्ठायाष्टाक्षरोऽपर:। कल्पे—

तारो हृन्नीलकण्ठाय मन्त्रश्चाष्टाक्षर: पर: ।

अस्य पूजादिकं सर्वं पूर्ववत्, विशेषस्तु ब्रह्मा ऋषिर्गायत्रीच्छन्द: नीलकण्ठो देवता।

नीलकण्ठ का अन्य मन्त्र—ॐ नमो नीलकण्ठाय। यह अष्टाक्षर मन्त्र है। पूजा पूर्वोक्त प्रकार से करे। केवल ऋष्यादि न्यास इस प्रकार करे—ब्रह्मणे ऋषये नम:। गायत्रीच्छन्दसे नम:। नीलकण्ठ देवतायै नम:।

अपरमन्त्र:

हृदयं वपरं साक्षि लान्तोऽनन्तान्वितो मरुत् ।
पञ्चाक्षरो मनु: प्रोक्तस्ताराद्योऽयं षडक्षर: ।।

अस्य पूजा—प्रात:कृत्यादिशैवोक्तपीठमन्वन्तं समाप्य ऋष्यादिन्यासं कुर्यात्। शिरसि वामदेवाय ऋषये नम:। मुखे पंक्तिच्छन्दसे नम:। हृदि ईशानाय देवतायै नम:।

ततो मूर्त्तिन्यास:—तर्जन्यो: नं तत्पुरुषाय नम:। मध्यमयो: मं अघोराय नम:। कनिष्ठयो: शिं सद्योजाताय नम:। अनामिकयो: वां वामदेवाय नम:। अंगुष्ठयो: यं ईशानाय नम:। तथा च निबन्धे—

ता: स्युस्तत्पुरुषाघोरसद्योवामेशसंज्ञका: ।
मन्त्रवर्णादिका न्यस्येत्पञ्चमूर्तीर्यथाक्रमम् ।
तर्जनीमध्यमयोरन्त्यानामिकांगुष्ठके पुन: ।।

एवं वक्त्रे हृदये पादद्वये गुह्ये मूर्ध्नि ता न्यसेत्। एवं प्राग्याम्यवारुणोदीच्य-मध्यवक्त्रेषु ता: न्यसेत्।

तत: कराङ्गन्यासौ—ॐ अंगुष्ठाभ्यां नम:। नं तर्जनीभ्यां स्वाहा इत्यादि। एवं हृदयादिषु। तथा च निबन्धे—

षड्भिर्वर्णै: षडङ्गानि कुर्यान्मन्त्रस्य देशिक: ।

ततो गोलकन्यास:—हृदि ॐ नम:, वक्त्रे नं नम:, अंसयो: मं नम: शिं नम:, ऊर्वो वां नम:, यं नम:। एवं कण्ठे नाभौ पार्श्वद्वये पृष्ठे हृदि मूर्ध्नि वदने नेत्रयो: नसो:। एवं करपत्सन्धिषु साग्रेषु। एवं शिरोवदनहृत्कुक्षि ऊरुपादद्वयेषु च। एवं हृदि वक्त्रे टङ्कमृगाभयवरेषु। एवं वक्त्रांसहृत्पादोरुजठरेषु। तत: पुनरपि मूर्ध्नि भालोदरहृद्गुह्येषु च ता: पञ्चमूर्त्तीर्न्यसेत्। ततो व्यापकन्यासं कुर्यात्।

ॐ नमोऽस्तु भूताय ज्योतिर्लिङ्गामृतात्मने ।
चतुर्मूर्त्तिवपुश्छायाभासिताङ्गाय शम्भवे ॥

इत्यनेन व्यापकन्यासं कुर्यात्। ततो ध्यानम्—

ध्यायेन्नित्यं महेशं रजतगिरिनिभं चारुचन्द्रावतंसं
रत्नाकल्पोज्ज्वलाङ्गं परशुमृगवराभीतिहस्तं प्रसन्नम् ।
पद्मासीनं समन्तात् स्तुतममरगणैर्व्याघ्रकृत्तिं वसानं
विश्वाद्यं विश्वबीजं निखिलभयहरं पञ्चवक्त्रं त्रिनेत्रम् ॥

एवं ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्य, अर्घ्यस्थापनं कुर्यात्। ततः शैवोक्तपीठपूजां विधाय पुनर्ध्यात्वा आवाहनादिपञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं विधायावरणपूजामारभेत्। यथा—

कर्णिकायां पूर्ववदीशानादि पञ्चमूर्त्तीः सम्पूज्य केशरेषु निवृत्त्यादिकलां पूर्ववत्पूजयेत्। ततोऽग्न्यादिकोणेषु मध्ये दिक्षु च ॐ हृदयाय नमः, नं शिरसे स्वाहा, मं शिखायै वषट्, शिं कवचाय हुं, वां नेत्रत्रयाय वौषट्, यं अस्त्राय फट्—इति पूजयेत्।

ततः पूर्ववदनन्तादीन् पूजयेत्। तत उत्तरादिक्रमेण वामावर्त्तेन उमादीन् पूजयेत्। तत इन्द्रादीन् वज्रादींश्च पूजयेत्।

ततो धूपादिविसर्जनान्तं कर्म समापयेत्। अस्य पुरश्चरणं षट्त्रिंशल्लक्षजपः। पायसैराज्यसम्मिश्रैः षट्त्रिंशत्सहस्र-होमः। तथा च—

तत्त्वलक्षं जपेन्मन्त्रं दीक्षितः शैववर्त्मना ।
तावत्संख्यसहस्राणि जुहुयात्पायसैः शुभैः ॥

अत्र तत्त्वशब्देन षट्त्रिंशत्तत्त्वमुच्यते अन्तरङ्गत्वात्।

ईशानमन्त्र—'नमः शिवाय' और 'ॐ नमः शिवाय' पञ्चाक्षर और षडक्षर मन्त्र भगवान् शिव के हैं। प्रातःकृत्यादि करके शिवमन्त्रोक्त पीठन्यास करे। तब न्यास करे।

ऋष्यादि न्यास—वामदेवाय ऋषये नमः शिरसि। पंक्तिच्छन्दसे नमः मुखे। ईशानाय देवतायै नमः हृदि।

मूर्तिन्यास—तर्जन्योः नं तत्पुरुषाय नमः। मध्यमयोः मं अघोराय नमः। कनिष्ठयोः शिं सद्योजाताय नमः। अनामिकयोः वां वामदेवाय नमः। अंगुष्ठयोः यं ईशानाय नमः। मुखे नं तत्पुरुषाय नमः। हृदये मं अघोराय नमः। पादद्वये शिं सद्योजाताय नमः। गुह्ये वां वामदेवाय नमः। मूर्ध्नि यं ईशानाय नमः।

अपने मस्तक के पूर्व-दक्षिण-पश्चिम-उत्तर और मस्तक पर न्यास करे। पूर्वे नं

तत्पुरुषाय नमः। याम्ये मं अघोराय नमः। वारुणे शिं सद्योजाताय नमः। उदीच्ये वां वामदेवाय नमः। मस्तकोपरिभागे यं ईशानाय नमः।

करन्यास—ॐ अंगुष्ठाभ्यां नमः। नं तर्जनीभ्यां स्वाहा। मं मध्यमाभ्यां वषट्। शिं अनामिकाभ्यां हुं। वां कनिष्ठाभ्यां वौषट्। यं करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्।

षडंग न्यास—ॐ हृदयाय नमः। नं शिरसे स्वाहा। मं शिखायै वषट्। शिं कवचाय हुं। वां नेत्रत्रयाय वौषट्। यं अस्त्राय फट्।

गोलक न्यास—हृदि ॐ नमः। वक्त्रे नं नमः। अंसयोः मं नमः शिं नमः। उर्वोः वां नमः यं नमः। कण्ठे ॐ नमः। नाभौ नं नमः। पार्श्वद्वये मं नमः शिं नमः। पृष्ठे वां नमः। हृदि यं नमः। मूर्ध्नि ॐ नमः। मुखे नं नमः। नेत्रद्वये मं नमः, शिं नमः। नासिकाद्वये वां नमः, यं नमः। दक्षकरमूले नं नमः। कूर्परे मं नमः। मणिबन्धे शिं नमः। अंगुलिमूले वां नमः। अंगुल्यग्रे यं नमः। वामकरमूले नं नमः। कूर्परे मं नमः। मणिबन्धे शिं नमः। अंगुलिमूले वां नमः। अंगुल्यग्रे यं नमः। पादमूलौ नं नमः। जानुनि मं नमः। गुल्फे शिं नमः। अंगुलिमूले वां नमः। अंगुल्यग्रे यं नमः। शिरसि ॐ नमः। मुखे नं नमः। हृदये मं नमः। कुक्षौ शिं नमः। ऊरुद्वये वां नमः यं नमः। हृदि ॐ नमः। वक्त्रे नं नमः। टंके मं नमः। मृगे शिं नमः। अभये वां नमः। वरे यं नमः। मुखे ॐ नमः। अंसद्वये नं नमः। हृदये मं नमः। पादद्वये शिं नमः, वां नमः। जठरे यं नमः। मूर्ध्नि ॐ नमः। भाले नं नमः। उदरे मं नमः। हृदये शिं नमः। गुह्ये वां नमः। पादयो यं नमः।

इसके बाद इस मन्त्र से व्यापक न्यास करे—ॐ नमोस्तु भूताय ज्योतिर्लिङ्गामृतात्मने चतुर्मूर्तिवपुश्छायाभासिताङ्गाय शम्भवे। तब ध्यान करे—

ध्यायेन्नित्यं महेशं रजतगिरिनिभं चारुचन्द्रावतंसं
रत्नाकल्पोज्ज्वलाङ्गं परशुमृगवराभीतिहस्तं प्रसन्नम्।
पद्मासीनं समन्तात् स्तुतममरगणैर्व्याघ्रकृत्तिं वसानं
विश्वाद्यं विश्वबीजं निखिलभयहरं पञ्चवक्त्रं त्रिनेत्रम्।।

चाँदी के पहाड़ जैसा उज्ज्वल वर्ण है। मस्तक पर अर्द्धचन्द्र है। रत्नों की राशि जैसी आभा वाला शरीर है। हाथों में कुठार, मृग, वर और अभय है। प्रसन्नमुख कमल के ऊपर विराजमान हैं। बाघ की खाल का वस्त्र है। चारो ओर से देवगण वन्दना कर रहे हैं। संसार के आदि और कारणभूत भगवान् शिव सभी प्रकार के भयों को नष्ट कर देते हैं। इनके पाँच मुख हैं। प्रत्येक मुख में तीन-तीन नेत्र हैं। ऐसे भगवान् महेश्वर का मैं निरन्तर ध्यान करता हूँ। इसके बाद मानसोपचार पूजा करके अर्घ्य स्थापित करे। शिवमन्त्रोक्त पीठपूजा, पुनः ध्यान-आवाहनादि से पञ्च पुष्पाञ्जलि-दान तक के सभी कर्म करके आवरण-पूजा करे।

यन्त्रमध्य बिन्दु कर्णिका में इनकी पूजा करे—ॐ ईशानाय नमः। ॐ तत्पुरुषाय नमः। ॐ अघोराय नमः। ॐ वामदेवाय नमः। ॐ सद्योजाताय नमः।

केशर में—ॐ निवृत्त्यै नम:। ॐ प्रतिष्ठायै नम:। ॐ विद्यायै नम:। ॐ शान्त्यै नम: आदि कलाओं की पूजा करे। केशर के अग्न्यादि कोणों में, मध्य में, चतुर्दिक—ॐ हृदयाय नम:। नं शिरसे स्वाहा। मं शिखायै वषट्। शिं कवचाय हुं। वां नेत्रत्रयाय वौषट्। यं अस्त्राय फट् से पूजा करे।

अष्टदल में पूर्वादि क्रम से—ॐ अनन्ताय नम:। ॐ सूक्ष्माय नम:। ॐ शिवोत्तमाय नम:। ॐ एकनेत्राय नम:। ॐ एकरुद्राय नम:। ॐ त्रिमूर्तये नम:। ॐ श्रीकण्ठाय नम:। ॐ शिखण्डिने नम: से पूजा करे।

दलाग्रों में इनकी पूजा करे—ॐ उमायै नम:। ॐ चण्डेश्वराय नम:। ॐ नन्दिने नम:। ॐ महाबलाय नम:। ॐ वृषाय नम:। ॐ भृंगरीटाय नम:। ॐ स्कन्दाय नम:।

भूपुर में इन्द्रादि एवं वज्रादि की पूजा करे। धूपादि से विसर्जन तक के सभी कार्य पूर्ण करे। इन दोनों मन्त्रों के पुरश्चरण में तैंतीस लाख जप और तैंतीस हजार हवन घृताक्त पायसान्न से किया जाता है।

मन्त्रान्तरम्

अर्घीशो वह्निशिखरो लान्तस्थो दान्त ईरितः ।
फडन्तश्चण्डमन्त्रोऽयं त्रिवर्णात्मा समीरितः ॥

अस्य पूजा—प्रातःकृत्यादिशैवोक्तपीठन्यासान्तं विधाय ऋष्यादिन्यासं कुर्यात्। यथा—शिरसि त्रितऋषये नमः, मुखे अनुष्टुप्छन्दसे नमः, हृदि चण्डेश्वराय देवतायै नमः। तथा च निबन्धे—

अस्य त्रितो मुनिः प्रोक्तश्छन्दोऽनुष्टुबुदाहृतम् ।
चण्डेश्वरो देवता·························॥ इत्यादि।

ततः कराङ्गन्यासौ—दीप्त फट् अंगुष्ठाभ्यां नमः। ज्वल फट् तर्जनीभ्यां स्वाहा। ज्वालिनि फट् मध्यमाभ्यां वषट्। ज्ञेय फट् अनामिकाभ्यां हुं। हन फट् कनिष्ठाभ्यां वौषट्। सर्वज्वालिनि फट् करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्। एवं हृदयादिषु। तथा च प्रपञ्चसारे—

दीप्तज्वलज्ज्वालिनीति ज्ञेयेन तु हनेन च ।
सर्वज्वालिनिसंयुक्तैः फडन्तैरङ्गमाचरेत् ॥

ततो ध्यानम्—

चण्डेश्वरं रक्ततनुं त्रिनेत्रं रक्तांशुकाढ्यं हृदि भावयामि ।
टङ्कं त्रिशूलं स्फटिकाक्षमालां कमण्डलुं विभ्रतमिन्दुचूडम् ॥

एवं ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्यार्घ्यस्थापनं कुर्यात्। ततः शैवोक्तपीठपूजां विधाय

ठमिति बीजेन मूर्त्तिं सङ्कल्प्य, पुनर्ध्यात्वा आवाहनादिपञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं आवरणपूजामारभेत्। तद्यथा—

अङ्गैः प्रथममावरणं मातृभिर्द्वितीयं इन्द्रादिभिस्तृतीयं वज्रादिभिश्चतुर्थम्। ततो धूपादिविसर्जनान्तं कर्म समापयेत्। अस्य पुरश्चरणं त्रिलक्षजपः। तथा च—

वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रं होमः कुर्याद्दशांशतः।
मधुरत्रयसंयुक्तैः शुद्धैश्च तिलतण्डुलैः॥

इति शिवमन्त्राः

●

चण्डेश्वरमन्त्र—ऊर्ध्वं फट्। यह त्र्यक्षर मन्त्र है। इसका यन्त्र शिवोक्त ही है।

प्रात:कृत्यादि के बाद शिवमन्त्रोक्त पीठन्यास करे। तब न्यास करे।

ऋष्यादि न्यास—शिरसि त्रितऋषये नमः। मुखे अनुष्टुप्छन्दसे नमः। हृदि चण्डेश्वराय देवतायै नमः।

करन्यास—दीप्त फट् अंगुष्ठाभ्यां नमः। ज्वल फट् तर्जनीभ्यां स्वाहा। ज्वालिनि फट् मध्यमाभ्यां वषट्। ज्ञेय फट् अनामिकाभ्यां हुं। हन फट् कनिष्ठाभ्यां वौषट्। सर्वज्वालिनि फट् करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्।

अंगन्यास—दीप्त फट् हृदयाय नमः। ज्वल फट् शिरसे स्वाहा। ज्वालिनि फट् शिखायै वषट्। ज्ञेय फट् कवचाय हुं। हन फट् नेत्रत्रयाय वौषट्। सर्वज्वालिनि फट अस्त्राय फट्। इसके बाद ध्यान करे—

चण्डेश्वरं रक्ततनुं त्रिनेत्रं रक्तांशुकाढ्यं हृदि भावयामि।
टंकं त्रिशूलं स्फटिकाक्षमालां कमण्डलुं विभ्रममिन्दुचूड़म्॥

भगवान् चण्डेश्वर रक्तवर्ण, त्रिनेत्र और लाल वस्त्रधारी हैं। हाथों में टंक, त्रिशूल, स्फटिक जपमाला और कमण्डलु है। मस्तक पर अर्द्धचन्द्र है।

इसके बाद मानसोपचार पूजा, अर्घ्यस्थापन, शिवमन्त्रोक्त पीठपूजा करे। 'ठं' मन्त्र से मूर्ति-कल्पनापूर्वक पुन: ध्यान-आवाहनादि से पञ्च पुष्पाञ्जलि तक के सारे कर्म करके आवरण पूजा करे।

प्रथम षडंग पूजा, द्वितीय ब्राह्मी आदि अष्टमातृका पूजा, तृतीय इन्द्रादि पूजा और चतुर्थ वज्रादि पूजा करे। धूपादि से विसर्जन तक के सारे कर्म करके पूजा का समापन करे। पुरश्चरण में तीन लाख जप एवं त्रिमधुराक्त तिलतण्डुल से तीस हजार हवन करे।

क्षेत्रपालमन्त्रः

मन्त्रदेवप्रकाशिकायाम्—क्षौमिति बीजादिक्षेत्रपालाय इत्युपेतनमोऽन्तः। अयं

प्रणवादिर्वा मन्त्रः। तथा च—

वर्णान्त्यमौ विन्दुयुतं क्षेत्रपालाय हृन्मनुः ।
ताराद्यो वसुवर्णोऽयं क्षेत्रपालस्य ईरितः ॥

अस्य पूजा—प्रातःकृत्यादि-प्राणायामान्तं विधाय धर्मादिकल्पितं पीठं विन्यस्य ऋष्यादिन्यासं कुर्यात्। यथा—अस्य ब्रह्मा ऋषिरनुष्टुप्छन्दः क्षेत्रपालो देवता क्षौं बीजं आत्मेति शक्तिः षड्दीर्घयुक्तेन बीजेनैवाङ्गन्यासम्। ततो ध्यानम्—

भ्राजच्चण्डजटाधरं त्रिनयनं नीलाञ्जनाद्रिप्रभं
दोर्दण्डात्तगदाकपालमरुणस्रग्वस्त्रभूषोज्ज्वलम् ।
घण्टामेखलघर्घरध्वनिमिलज्झङ्कारभीमं विभुं
वन्देऽहं सितसर्पकुण्डलधरं श्रीक्षेत्रपालं सदा ॥

एवं ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्य अर्घ्यस्थापनं कृत्वा धर्मादिकल्पितपीठपूजां विधाय पुनर्ध्यात्वा आवाहनादि-पञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं विधाय आवरणपूजा-मारभेत्। तद्यथा—

अङ्गैः प्रथममावरणम्, अनलाक्ष-अग्निकेश-कराल-घण्टारव-महाक्रोध-पिशिताशन-पिङ्गलाक्ष-ऊर्ध्वकेशैरष्टाभिर्द्वितीयम्, इन्द्रादिभिस्तृतीयं, वज्रादि-भिश्चतुर्थम्। ततो धूपादिविसर्जनान्तं कर्म समापयेत्। अस्य पुरश्चरणं लक्षजपः। साज्येन चरुणा दशांशहोमः। तथा च निबन्धे—

लक्षमेकं जपेन्मन्त्रं जुहुयात्तद्दशांशतः ।
चरुणा घृतसिक्तेन ततः क्षेत्रेशमर्चयेत् ॥

मन्त्रदेवप्रकाशिकायान्तु प्रणवरहितोऽयं मन्त्रः। तस्य पुरश्चरणमयुतसंख्यको जपः।

अथास्य बलिविधानम्—रात्रौ गृहाङ्गने स्थण्डिलं कृत्वा, तत्र देवं सपरिवारं सम्पूज्य, देवस्य करस्थितकपाले बलिमन्त्रेण त्रिवारं बलिं दत्त्वा, परिवारेभ्यः स्वस्वनामभिर्बलिं दद्यात्। बलिमन्त्रस्तु—

एह्येहि विदुषि सुरु सुरु भञ्जय भञ्जय तर्जय तर्जय विघ्न विघ्न महाभैरव क्षेत्रपाल बलिं गृह्ण गृह्ण स्वाहा। तथा च—

पूर्वमेहिद्वयं पश्चाद्विदुषि स्यात् सुरुद्वयम् ।
भञ्जयद्वितयं भूयस्तर्जयद्वितयं पुनः ॥
ततो विघ्नपदद्वन्द्वं महाभैरव तत्परम् ।
क्षेत्रपाल बलिं गृह्णद्वयं पावकसुन्दरी ॥

यद्वा—एह्येहि तुरु तुरु सुरु सुरु जम्भ जम्भ हन हन विघ्नं नाशय नाशय महाबलिं क्षेत्रपाल गृह्ण गृह्ण स्वाहा इति। एष बलिविधि: सर्वग्रहनिवारको विजय-श्रीकरश्च भवति। बलिमपि सोपदंशवृहत्पिण्डेन दद्यात्। फलन्तु—

बलिदानेन सन्तुष्ट: क्षेत्रपाल: प्रयच्छति ।
कान्तिमेधाबलारोग्यतेज:पुष्टियश:श्रिय: ।।

क्षेत्रपालमन्त्र—क्षौं क्षेत्रपालाय नम:। यह अष्टाक्षर मन्त्र है। यन्त्र पूर्ववत् है।

सामान्य पूजापद्धति से प्रात:कृत्यादि से प्राणायाम तक कर्म करके धर्माय नम: इत्यादि से पीठन्यास करके न्यास करे।

ऋष्यादि न्यास—शिरसि ब्रह्मणे ऋषये नम:। मुखे अनुष्टुप्छन्दसे नम:। हृदि क्षेत्रपालाय देवतायै नम:। गुह्ये क्षौं बीजाय नम:। सर्वाङ्गे आत्मने शक्तये नम:।

करन्यास—क्षां अंगुष्ठाभ्यां नम:। क्षीं तर्जनीभ्यां स्वाहा। क्षूं मध्यमाभ्यां वषट्। क्षैं अनामिकाभ्यां हुं। क्षौं कनिष्ठाभ्यां वौषट्। क्ष: करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्।

अंगन्यास—क्षां हृदयाय नम:। क्षीं शिरसे स्वाहा। क्षूं शिखायै वषट्। क्षैं कवचाय हुं। क्षौं नेत्रत्रयाय वौषट्। क्ष: करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्। न्यासोपरान्त ध्यान करे—

भ्राजच्चण्डजटाधरं त्रिनयनं नीलाञ्जनाद्रिप्रभम्
दोर्दण्डात्तगदाकपालमरुणवस्त्रोज्ज्वलाङ्गं शिवम्।
घंटामेखलघर्घरध्वनिमिलं झंकारभीमं विभुं
वन्देऽहं सितसर्पकुण्डलधरं श्रीक्षेत्रपालं सदा।।

शिर पर चमकता हुआ प्रचण्ड जटाजूट है। तीन नेत्र हैं। नील पर्वत जैसी देह की कान्ति है। दो हाथों में गदा और नरकपाल है। लाल पुष्पों की माला एवं लाल वस्त्रों से वे सुशोभित हैं। करधनी की घण्टियों की घर्घर ध्वनि के साथ गूञ्ज रही झञ्कार से वे अति भीषण प्रतीत होते हैं। कानों में श्वेत सर्प का कुण्डल है। ऐसे क्षेत्रपाल की मैं निरन्तर वन्दना करता हूँ।

तब मानसोपचार पूजा, अर्घ्यस्थापन, धर्मादि पीठदेवताओं का पूजन करे। तब ध्यान-आवाहनादि से पञ्च पुष्पाञ्जलि-दान तक की क्रिया करके आवरण पूजन करे।

प्रथम आवरण में षडंग पूजन अंगन्यास के मन्त्रों से करे।

द्वितीय आवरण में अष्टदल में अष्टमूर्तियों की पूजा करे—ॐ अनलाक्षाय नम:। ॐ अग्निकेशाय नम:। ॐ करालाय नम:। ॐ घंटारवाय नम:। ॐ महाक्रोधाय नम:। ॐ पिशिताशनाय नम:। ॐ पिंगलाक्षाय नम:। ॐ ऊर्ध्वकेशाय नम:।

तृतीय आवरण—भूपुर में इन्द्रादि की पूजा करे।

चतुर्थ आवरण—भूपुर के बाहर वज्रादि की पूजा करे।

इसके बाद धूपादि से विसर्जन तक के कर्म पूर्ण करे। पुरश्चरण में एक लाख जप एवं घृताक्त चरु से दश हजार हवन करे।

बलिविधान—रात के समय घर के आँगन में स्थंडिल बनाकर उसमें सपरिवार क्षेत्र-पाल की पूजा करे। क्षेत्रपाल के हाथ में स्थित नरकपाल में बलिमन्त्र से तीन बार बलि प्रदान करे—'एह्येहि विदुषि ! सुरु सुरु भञ्जय भञ्जय तर्जय तर्जय विघ्न विघ्न महाभैरव क्षेत्रपाल बलिं गृह्ण गृह्ण स्वाहा' अथवा दूसरे बलिमन्त्र से बलि प्रदान करे; जैसे—एह्येहि तुरु तुरु सुरु सुरु जम्भ जम्भ हन हन विघ्नं नाशय नाशय महाबलिं क्षेत्रपाल गृह्ण गृह्ण स्वाहा। परिवार के प्रत्येक सदस्य के नाम का उल्लेख करते हुए बलि प्रदान करे। इससे ग्रहदोष दूर होता है। सर्वत्र विजय मिलती है। वैभव बढ़ता है। चबाने के लायक उपयुक्त व्यंजनों के साथ अन्न से बड़ा-सा पिण्ड बनाकर यह बलि देनी चाहिये। इस बलि से प्रसन्न होकर क्षेत्रपाल साधक को कान्ति-मेधा-बल-आरोग्य-तेज-पुष्टि-यश-श्री प्रदान करते हैं।

वटुकभैरवमन्त्रः

चतुर्थ्यन्तवटुकायेति आपदुद्धारणचतुर्थ्यन्तशब्दोपेतकुरुद्वययुक्तचतुर्थ्यन्तवटुक-शब्दोपेतहृल्लेखासम्पुटितमेकविंशत्यक्षरम्। तथा च निबन्धे—

उद्धरेद्वटुकं ङेऽन्तमापदुद्धरणं तथा ।
कुरुद्वयं पुनर्ङेऽन्तं वटुकान्तं समुद्धरेत् ।
एकविंशत्यक्षरात्मा शक्तिरुद्धो महामनुः ॥

अस्य पूजा—प्रातःकृत्यादि प्राणायामान्तं विधाय पीठन्यासं कुर्यात्। तद्यथा—धर्माद्यनैश्वर्यान्तं देहे विन्यस्य ऋष्यादिन्यासं कुर्यात्। शिरसि बृहदारण्यकऋषये नमः, मुखे गायत्रीच्छन्दसे नमः, हृदि वटुकभैरवाय देवतायै नमः।

ततो मूर्त्तिन्यासः—ह्रों वों ईशानाय नमः अंगुष्ठयोः। ह्रें वें तत्पुरुषाय नमः तर्जन्योः। ह्रुं वुं अघोराय नमः मध्यमयोः। ह्रिं विं वामदेवाय नमः अनामिकयोः। ह्रः वः सद्योजाताय नमः कनिष्ठयोः। पुनस्तत्तदंगुलीभिः शिरोवदनहृद्गुह्यपादेषु तत्तद्बीजादिकास्तन्मूर्त्तीर्न्यसेत्। तथा ऊर्ध्वप्राग्दक्षिणोदीच्यपश्चिमेषु च ताः न्यसेत्। तथा च निबन्धे—

अंगुलीदेहवक्त्रेषु मूर्त्तीर्न्यस्येद्यथा पुरा ।
सत्यादिपञ्चह्रस्वाढ्यशक्तिबीजपुरःसरम् ।
वकारं पञ्चह्रस्वाढ्यमीशानादिषु योजयेत् ॥ इति ।

ततः कराङ्गन्यासौ—ॐ ह्रां वां अंगुष्ठाभ्यां नमः इत्यादि। ॐ ह्रां वां हृदयाय नमः इत्यादि। षड्दीर्घभाजा बीजद्वयेन कुर्यात्।

तथा च निबन्धे—

षड्दीर्घयुक्तया शक्त्या वकारेण तत्तथा ।
अङ्गानि जातियुक्तानि प्रणवाद्यानि कल्पयेत् ॥

ततो ध्यानम्—

अस्य ध्यानं त्रिधा प्रोक्तं सात्त्विकादिप्रभेदतः ।

तत्र सात्त्विकं यथा—

वन्दे बालं स्फटिकसदृशं कुण्डलोद्भासिवक्त्रं
दिव्याकल्पैर्नवमणिमयैः किङ्किणीनूपुराद्यैः ।
दीप्ताकारं विशदवदनं सुप्रसन्नं त्रिनेत्रं
हस्ताब्जाभ्यां वटुकमनिशं शूलदण्डौ दधानम् ॥

राजसं यथा—

उद्यद्भास्करसन्निभं त्रिनयनं रक्ताङ्गरागस्रजं
स्मेरास्यं वरदं कपालमभयं शूलं दधानं करैः ।
नीलग्रीवमुदारभूषणशतं शीतांशुचूडोज्ज्वलं
बन्धूकारुणवाससं भयहरं देवं सदा भावये ॥

तामसं यथा—

ध्यायेन्नीलाद्रिकान्तिं शशिशकलधरं मुण्डमालं महेशं
दिग्वस्त्रं पिङ्गलाक्षं डमरुमथ सृणिं खड्गशूलाभयानि ।
नागं घण्टां कपालं करसरसिरुहैर्विभ्रतं भीमदंष्ट्रं
सर्पाकल्पं त्रिनेत्रं मणिमयविलसत् किङ्किणीनूपुराढ्यम् ॥

सात्त्विकं ध्यानमाख्यातमपमृत्युविनाशनम् ।
आयुरारोग्यजननमपवर्गफलप्रदम् ॥
राजसं ध्यानमाख्यातं धर्मकामार्थसिद्धिदम् ।
तामसं शत्रुशमनं कृत्याभूतगदापहम् ॥

एवं ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्यार्घ्यस्थापनं कुर्यात्। अस्य पूजायन्त्रम्—

धर्माधर्मादिभिः क्लृप्तपीठे पङ्कजशोभिते ।
षट्कोणान्तस्त्रिकोणस्थे व्योमपङ्कजशोभिते ॥

वटुकभैरवमन्त्र—ह्रीं वटुकाय आपदुद्धरणाय कुरु कुरु वटुकाय ह्रीं। यह इक्कीस अक्षरों का मन्त्र है। यन्त्र का वर्णन आगे है। सामान्य पूजापद्धति से प्रात:कृत्यादि से प्राणायाम तक की क्रियाओं के बाद ॐ धर्माय नम: इत्यादि से पीठन्यास करने के बाद न्यास करे।

ऋष्यादि न्यास—शिरसि बृहदारण्यकऋषये नम:। मुखे गायत्रीछन्दसे नम:। हृदि वटुकभैरवाय देवतायै नम:।

मूर्तिन्यास—ह्रों वों ईशानाय नमः अंगुष्ठाभ्यां। हें वें तत्पुरुषाय नमः तर्जन्योः। हुं वुं अघोराय नमः मध्यमयोः। ह्रीं विं वामदेवाय नमः अनामिकयोः। हः वः सद्योजाताय नमः कनिष्ठयोः।

अंगूठे से मस्तक में—ह्रों वों ईशानाय नमः। अनामिका से मुख में—हें वें तत्पुरुषाय नमः। मध्यमा से हृदय में—हुं वुं अघोराय नमः। तर्जनी से गुह्य में—ह्रीं विं वामदेवाय नमः। कनिष्ठा से पैरों में—हः वः सद्योजाताय नमः।

इसी क्रम से ऊर्ध्व, पूर्व, दक्षिण, पश्चिम, उत्तरमुखों में भी उक्त मन्त्रों से न्यास करे। निबन्ध ग्रन्थ के अनुसार भी यही क्रम है।

करन्यास—ॐ ह्रां वां अंगुष्ठाभ्यां नमः। ॐ ह्रीं वीं तर्जनीभ्यां स्वाहा। ॐ ह्रूं वूं मध्यमाभ्यां वषट्। ॐ ह्रैं वैं अनामिकाभ्यां हुं। ॐ ह्रौं वौं कनिष्ठाभ्यां वौषट्। ॐ हः वः अस्त्राय फट्।

अंगन्यास—ॐ ह्रां वां हृदयाय नमः। ॐ ह्रीं वीं शिरसे स्वाहा। ॐ ह्रूं वूं शिखायै वषट्। ॐ ह्रैं वैं कवचाय हुं। ॐ ह्रौं वौं नेत्रत्रयाय वौषट्। ॐ हः वः अस्त्राय फट्।

इसके बाद ध्यान करे। वटुकभैरव के ध्यान तीन प्रकार के होते हैं—सात्त्विक, राजसिक एवं तामसिक। इनमें से सात्त्विक ध्यान निम्नवत् है—

वन्दे बालं स्फटिकसदृशं कुण्डलोद्भासिवक्त्रं
दिव्याकल्पैर्नवमणिमयैः किङ्किणीनूपुराद्यैः ।
दीप्ताकारं विशदवदनं सुप्रसन्नं त्रिनेत्रं
हस्ताब्जाभ्यां वटुकमनिशं शूलदण्डौ दधानम् ।।

बालरूप स्फटिक जैसा उज्ज्वल वर्ण एवं कुण्डलों से सुशोभित कान है। कमर में मणिजटित करधनी है। पैरों में मणिजटित नूपुर है। वस्त्र निर्मल हैं। प्रसन्न चित्त त्रिनेत्र हैं। एक हाथ में शूल और दूसरे हाथ में दण्डयुक्त वटुक भैरव का मैं ध्यान करता हूँ।

राजसिक ध्यान इस प्रकार है—

उद्यद्भास्करसन्निभं त्रिनयनं रक्ताङ्गरागस्रजं
स्मेरास्यं वरदं कपालमभयं शूलं दधानं करैः ।
नीलग्रीवमुदारभूषणशतं शीतांशुचूडोज्ज्वलं
बन्धूकारुणवाससं भयहरं देवं सदा भावये ।।

आभा उदीयमान सूर्य के समान लाल है। तीन नयन हैं। लाल अंगराग और लाल पुष्पों की माला है। मुस्कानयुक्त मुख है। चार हाथों में से प्रत्येक में वरमुद्रा, नरकपाल, अभयमुद्रा और शूल है। गर्दन का रंग नीला है। नाना प्रकार के आभूषणों से विभूषित हैं। मस्तक पर चन्द्रमा है। बन्धूकपुष्प के समान लाल वस्त्र है। साधकों के भय को नष्ट

करने वाले वटुकभैरव का मैं ध्यान करता हूँ।

तामसिक ध्यान है—

ध्यायेन्नीलाद्रिकान्तिं शशिशकलधरं मुण्डमालं महेशं
दिग्वस्त्रं पिङ्गलाक्षं डमरुमथ सृणिं खड्गशूलाभयानि ।
नागं घण्टां कपालं करसरसिरुहैर्विभ्रतं भीमदंष्ट्रं
सर्पाकल्पं त्रिनेत्रं मणिमयविलसत् किङ्किणीनूपुराढ्यम् ।।

देह की कान्ति नीले पर्वत के समान है। मस्तक पर अर्द्धचन्द्र है। गले में मुण्डमाला है। वे निर्वस्त्र नग्न हैं। आँखों का वर्ण पिंगल है। आठ हाथों में से प्रत्येक में डमरू, अंकुश, खड्ग, शूल, अभयमुद्रा, सर्प, घंटा और नरकपाल है। दंतपंक्ति भयानक है। तीन नेत्र हैं। मणिजटित करधनी और नूपुर आदि आभूषणों से अलंकृत हैं। ऐसे वटुकभैरव का मैं ध्यान करता हूँ।

तीनों ध्यानों के फल पृथक्-पृथक् हैं। सात्त्विक ध्यान से अपमृत्युनाश, आयु-वृद्धि, आरोग्य और मोक्ष प्राप्त होता है। राजसिक ध्यान से धर्म की वृद्धि, कामनाओं की पूर्ति एवं धन की प्राप्ति होती है। तामसिक ध्यान से शत्रुकृत कृत्या, भूतावेशजनित रोग दूर होते हैं। कामना के अनुसार किसी एक ध्यान को करके मानसोपचारों से पूजन करके अर्घ्य स्थापन करे। वटुकभैरव का पूजनयन्त्र त्रिकोण, इसके बाहर षट्कोण, इसके बाहर अष्टदल पद्म दल मातृकावर्णों से युक्त, तब चतुर्द्वारयुक्त भूपुर से बनता है। वह इस प्रकार का होता है—

वटुकभैरव यन्त्र
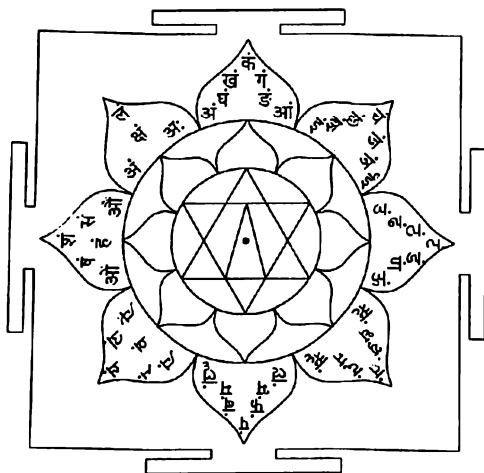
ततो मूलेन मूर्त्तिं सकल्प्य पूर्ववद्ध्यात्वा आवाहनादिकं कुर्यात्। तत्र क्रमः—

मूलादिसद्योजातमन्त्रेणावाहनम्। मूलादिवामदेवेन स्थापनम्। मूलेन सान्निध्यम्। अघोरेण सन्निरोधनम्। तत्पुरुषेण योनिमुद्राप्रदर्शनम्। ईशानेन वन्दनमिति विशेषः। कर्णिकायां दिक्षु कोणेषु ईशानादीन् यजेत्। एतत्प्रथमावरणम्।

ततो व्योमपङ्कजदलेषु असिताङ्गादीन् भैरवान् यजेत्। तद्यथा—

असिताङ्गो रुरुश्चण्डः क्रोधश्चोन्मत्तभैरवः ।
कपाली भीषणश्चैव संहारश्चाष्टभैरवाः ॥

एतैरष्टाभिर्द्वितीयावरणम्।

ततः षट्कोणेषु पूर्वादि ॐ ह्रां वां हृदयाय नमः इत्यादिना षडङ्गानि पूजयेत्। ततः पूर्वादितो डाकिनी-राकिनी-लाकिनी-काकिनी-शाकिनी-हाकिनी-मालिनी-देवीपुत्रान् पूजयेत्, एतत्तृतीयावरणम्।

अष्टदिक्षु उमापुत्रान् रुद्रपुत्रान् मातृपुत्रान् दक्षिणतो यजेत्। ऊर्ध्वे ऊर्ध्वमुखीपुत्रान् अधोऽधोमुखीपुत्रान् पूजयेत्, एतच्चतुर्थावरणम्। तथा च शारदायाम्—

पूर्वादीशानपर्यन्तं तद्बहिः पूजयेदिमान् ।
डाकिनीपुत्रकान् पूर्वं राकिणीपुत्रकांस्ततः ॥
लाकिनीपुत्रकान् पश्चात् काकिनीपुत्रकांस्तथा ।
शाकिनीपुत्रकान् भूयो हाकिनीपुत्रकान् पुनः ॥
मालिनीपुत्रकान् पश्चाद्देवीपुत्रांस्ततः परम् ।
तथोमारुद्रमातॄणां पुत्रान् दक्षिणतो न्यसेत् ॥
ऊर्ध्वमुख्या सुतानूर्ध्वमधोमुखाः सुतानधः ।
इति सम्पूजयेन्मन्त्री पुत्रवर्गास्त्रयोदश ॥ इति ।

तद्बहिरष्टदलेषु दिक्पालान् वटुकरूपान् पूजयेत्। तद्बहिः पूर्वे ॐ ब्रह्माणीपुत्राय नमः, एवं ईशाने माहेश्वरीपुत्राय, उत्तरे वैष्णवीपुत्राय, अनिले कौमारीपुत्राय, पश्चिमे इन्द्राणीपुत्राय, नैर्ऋते महालक्ष्मीपुत्राय, याम्ये वाराहीपुत्राय, अग्निकोणे चामुण्डा-पुत्राय, एतत्पञ्चमावरणम्। तथा च निबन्धे—

ब्रह्माणीपुत्रकं पूर्वे माहेशीपुत्रमैश्वरे ।
वैष्णवीपुत्रकं सौम्ये कौमारीपुत्रमानिले ।
इन्द्राणीपुत्रकं भूयः पश्चिमे पूजयेत्ततः ॥
महालक्ष्मीसुतं पश्चाद्रक्षोदिशि समर्चयेत् ।
वाराहीपुत्रकं याम्ये चामुण्डा पुत्रमानले ॥

तद्बहिर्दशदिक्षु हेतुकं त्रिपुरान्तकं वेतालं वह्निजिह्वं कालान्तकं करालं एकपादं भीमरूपम् अचलं हाटकेश्वरञ्च पूजयेत्। एतत्षष्ठावरणम्।

तत ईशानादिनिर्ऋतिषु सकलेश्वरभूम्यन्तरीक्षस्वर्लोकनिष्ठान् योगीशान् योगिनी-सहितान् पूजयेत्। यथा—योगिनीसहितदिव्ययोगीशाय नमः। एवं योगिनीसहिता-न्तरीक्षयोगीशाय नमः। योगिनीसहितभूमिष्ठयोगीशाय नमः। एतत्सप्तमावरणम्।

अस्य पुरश्चरणमेकविंशतिलक्षजपः। त्रिमधुराप्लुतैर्दशांशहोमः। तथा च—

वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रं हविष्याशी जितेन्द्रियः ।
तद्दशांशं प्रजुहुयत्तिलैस्त्रिमधुराप्लुतैः ।।

मूल मन्त्र से मूर्ति कल्पित करके पुनः ध्यान-आवाहनादि करे।

आवाहन—ह्रीं वटुकाय आपदुद्धरणाय कुरु कुरु वटुकाय ह्रीं सद्योजातं प्रपद्यामि सद्योजाताय वै नमो नमः भवे भवेऽनादिभवे भवस्व मां भवोद्भवाय नमः आवाहयामि।

स्थापन—ह्रीं वटुकाय आपदुद्धरणाय कुरु कुरु वटुकाय ह्रीं वामदेवाय नमः ज्येष्ठाय नमः श्रेष्ठाय नमः रुद्राय नमः कालाय नमः कलविकरणाय नमः बलविकरणाय नमः सर्वभूतदमनाय नमः मनोन्मनाय नमः वटुकभैरवं स्थापयामि।

इसी प्रकार मूल मन्त्र के साथ अघोर मन्त्र का पाठ करके सन्निर्धाकरण और सन्निरोधन, तत्पुरुष मन्त्र से योनिमुद्रा-प्रदर्शन और ईशान मन्त्र से वन्दना करे। तब पूजादि से पञ्च पुष्पाञ्जलि तक के कर्म करके आवरण पूजा करे।

प्रथम आवरण—कर्णिका की चारो दिशाओं और मध्य में ॐ अघोराय नमः। ॐ तत्पुरुषाय नमः। ॐ सद्योजाताय नमः। ॐ वामदेवाय नमः। ॐ ईशानाय नमः से पूजा करे।

द्वितीय आवरण के आठ दलों में आठ भैरवों की पूजा करे—ॐ असिताङ्गभैरवाय नमः। ॐ रुरुभैरवाय नमः। ॐ चण्डभैरवाय नमः। ॐ क्रोधभैरवाय नमः। ॐ उन्मत्तभैरवाय नमः। ॐ कपालीभैरवाय नमः। ॐ भीषणभैरवाय नमः। ॐ संहारभैरवाय नमः।

तृतीय आवरण षट्कोण में—ह्रां वां हृदयाय नमः। ह्रीं वीं शिरसे स्वाहा। ह्रूं वूं शिखायै वषट्। ह्रैं वैं कवचाय हुं। ह्रौं वौं नेत्रत्रयाय वौषट्। ह्रः वः अस्त्राय फट्।

पूर्वादि क्रम से ईशान कोण तक इनका पूजन करे—ॐ डाकिनीपुत्रेभ्यो नमः। ॐ राकिनीपुत्रेभ्यो नमः। ॐ लाकिनीपुत्रेभ्यो नमः। ॐ साकिनीपुत्रेभ्यो नमः । ॐ हाकिनीपुत्रेभ्यो नमः। ॐ मालिनीपुत्रेभ्यो नमः। ॐ देवीपुत्रेभ्यो नमः।

चतुर्थ आवरण—आठो दिशाओं में ॐ उमापुत्रेभ्यो नमः। ॐ रुद्रपुत्रेभ्यो नमः। ॐ

मातृपुत्रेभ्यो नमः से पूजा करे। उर्ध्व दिशा में ॐ ऊर्ध्वमुखीपुत्रेभ्यो नमः और अधो दिशा में ॐ अधोमुखीपुत्रेभ्यो नमः से पूजा करे।

पञ्चम आवरण में भूपुर में वटुकरूपेभ्यो दिक्पालेभ्यो नमः से अष्ट दिक्पाल का पूजन करे। उसके बाहर पूर्व में ब्रह्माणी पुत्राय नमः, ईशान में माहेश्वरी पुत्राय नमः, उत्तर में वैष्णवी पुत्राय नमः, वायव्य में कौमारी पुत्राय नमः, पश्चिम में इन्द्राणी पुत्राय नमः, नैर्ऋत्य में महालक्ष्मी पुत्राय नमः, दक्षिण में वाराही पुत्राय नमः और अग्निकोण में चामुण्डायपुत्राय नमः से पूजन करे।

षष्ठ आवरण में पूर्वादि क्रम से दशो दिशाओं में इनकी पूजा करे—ॐ हेतुकाय नमः। ॐ त्रिपुरान्तकाय नमः। ॐ वेतालाय नमः। ॐ वह्निजिह्वाय नमः। ॐ कालान्तकाय नमः। ॐ कपालाय नमः। ॐ एकपादाय नमः। ॐ भीमरूपाय नमः। ॐ अचलाय नमः। ॐ हाटकेश्वराय नमः।

सप्तम आवरण में ईशान, अग्नि और नैर्ऋत्य कोण में इनका पूजन करे—योगिनीसहितदिव्ययोगीशाय नमः। योगिनीसहितान्तरीक्षयोगीशाय नमः। योगिनीसहितभूमिष्ठयोगीशाय नमः। इसके बाद धूप-दीपादि से विसर्जन तक की प्रक्रिया पूरी करे।

पुरश्चरण में हविष्याशी और जितेन्द्रिय होकर इक्कीस लाख जप करे। घी-मधु-शक्करमिश्रित तिल से दो लाख दस हजार हवन करे।

बलिदानम्

पूर्वं विघ्नं दुर्गां समाराध्य बलिं दद्यात् ।
शाल्यन्नं पललं सर्पिर्लाजचूर्णानि शर्करा ।
गुडमिक्षुरसापूपैर्मध्वक्तैः परिमिश्रितैः ॥
कृत्वा कवलमाराध्य देवं प्रागुक्तवर्त्मना ।
रक्तचन्दनपुष्पाद्यैर्निशि तस्मै बलिं हरेत् ॥

यद्वा—

अन्यूनाङ्गमजं हत्वा राजसं प्रागुदीरितम् ।
बलिप्रदानसमये रिपूणां सर्वसैन्यकम् ।
निवेदयेद्बलित्वेन वटुकाय विशिष्टधीः ॥
विदर्भयेच्छक्रनाम्ना बलिमन्त्रमुदारधीः ।
शत्रुपक्षस्य रुधिरं पिशितञ्च दिने दिने ॥
भक्षय स्वगणैः सार्द्धं सारमेयसमन्वितैः ।
बलिमन्त्रोऽयमाख्यातः सर्वेषां विजयप्रदः ॥
अनेन बलिना तुष्टो वटुकः परसैन्यकम् ।

सर्वं गणेभ्यो विभजेत्सामिषं क्रुद्धमानसः ।
एवं कृते परसैन्यं क्षीयते नात्र संशयः ॥

बलिविधान—पहले गणेश और दुर्गा की पूजा करके बलिदान करे। शालिधान्य का चावल, मांस, घी, लावाचूर्ण, शक्कर, गुड़, ईख का रस, पिष्टक और मधु को मिलाकर पिण्ड बनावे। रात के समय लाल चन्दन तथा पुष्प के साथ बलि निवेदन करे। अथवा सर्वांग शुद्ध एक बकरे का वध करके बलि प्रदान करे। बलि-प्रदान के समान बुद्धिमान साधक शत्रुगण के सैन्य आदि को बलि के रूप में प्रदान करे। बलिमन्त्र में शत्रु का नामोल्लेख कर निम्न मन्त्र से बलि प्रदान करे—

शत्रु पक्षस्य रुधिरं पिशितं च दिने दिने।
भक्षय स्वगणै: सार्द्धं सारमेयसमन्वितम् ।।

इससे प्रसन्न होकर वटुकदेव शत्रु का नाश कर देते हैं, इसमें कोई सन्देह नहीं करना चाहिये।

भैरवी

यत्पादपङ्कजरजोऽमरवृन्दवन्द्यं यद्योगतः परशिवः परमेश्वरोऽभूत् ।
या सृष्टिपालनलयं तनुते त्रिमूर्त्या सा शाम्भवी विजयते जगदेकमाता ।

शारदायाम्—

अज्ञानतिमितरध्वंसि संसारार्णवतारकम् ।
आनन्दबीजमवतादतर्क्यं त्रैपुरं महः ॥
अथ वक्ष्ये महाविद्यां त्रिपुरामतिगोपिताम् ।
यां ज्ञात्वा सिद्धिसङ्घानामधिपो जायते नरः ॥

भैरवी—भैरवी की उपासना के क्रम में ग्रन्थकार ने सर्वप्रथम उनका ध्यान निरूपित किया है, जो निम्नवत् है—

यत्पादपङ्कजरजोऽमरवृन्दवन्द्यं यद्योगतः परशिवः परमेश्वरोऽभूत् ।
या सृष्टिपालनलयं तनुते त्रिमूर्त्या सा शाम्भवी विजयते जगदेकमाता ।

जिनके पादपङ्कजों की वन्दना देवतावृन्द करते हैं और जिनकी कृपा से परमशिव परमेश्वर हो गये हैं, जो तीन रूपों में सृष्टि-स्थिति और प्रलय करती हैं, वही शाम्भवी त्रिपुरीभैरवी जगदम्बा हमें विजय प्रदान करें। हमारा कल्याण करें।

शारदातिलक के अनुसार त्रिपुरभैरवी अज्ञानरूपी अन्धकार का नाश करने वाली हैं। भवसागर से पार उतारने वाली हैं। आनन्द का बीज हैं, अतर्क्य और महान् हैं।

अब उसी त्रिपुरभैरवी के महागुप्त विद्या का वर्णन किया जाता है, जिसे जान कर साधक सिद्धसंघों का अधिपति हो जाता है।

त्रिपुरभैरवीमन्त्राः

अथ त्रिपुरायास्त्रैविध्यं बालाभैरवीसुन्दरीभेदेन। तथा च ज्ञानार्णवे—

त्रिपुरा त्रिविधा देवी त्रिशक्तिः परिगीयते ।

अथ व्युत्पतिमाह प्रपञ्चसारे—

त्रिमूर्त्तिसर्गाच्च पराभवत्वात्त्रयीमयीत्वाच्च परैव देव्याः ।
लये त्रिलोक्यामपि पूरणत्वात्प्रायोऽम्बिकायास्त्रिपुरेति नाम ॥

तथा च वाराहीतन्त्रे—

ब्रह्मविष्णुमहेशाद्यैस्त्रिदशैरर्चिता पुरा ।
त्रिपुरेति सदा नाम कथितं देवतैस्तव ॥

शारदायाम्—

वियद्भृगुहुताशस्थो भौतिको विन्दुशेखरः ।
वियत्तदादिकेन्द्राग्निस्थितं वामाक्षिविन्दुमत् ॥
आकाशभृगुवह्निस्थो मनुः सर्गेन्दुखण्डवान् ।
पञ्चकूटात्मिका विद्या वेद्या त्रिपुरभैरवी ॥
प्रथमं वाग्भवं कूटं द्वितीयं कामराजकम् ।
तृतीयं शक्तिकूटञ्च त्रिभिर्बीजैरुदाहृतम् ॥

अस्यार्थः—शिवचन्द्रवह्निवाग्भवम्। शिवचन्द्रकामपृथ्वीवह्निश्चतुर्थस्वर-विन्दुमान्। शिवचन्द्ररेफयुक्तचतुर्दशस्वरविन्दुविसर्गः।

अस्य पूजा—प्रातःकृत्यादि-प्राणायामान्तं विधाय पीठन्यासं कुर्यात्। तत्र विशेषः—पूर्वोक्तक्रमेण आधारशक्त्यादि ह्रीं ज्ञानात्मने नमः इत्यन्तं विन्यस्य हृत्पद्मस्य पूर्वादिकेशरेषु ॐ इच्छायै नमः।

एवं ज्ञानायै क्रियायै कामिन्यै कामदायिन्यै रत्यै रतिप्रियायै नन्दायै। मध्ये मनोन्मन्यै, तदुपरि ऐं परायै अपरायै परापरायै ह्स्रौः सदाशिवमहाप्रेतपद्मासनाय नमः। इति पीठशक्तीः पीठमनुञ्च विन्यस्य ऋष्यादिन्यासं कुर्यात्। यथा—

शिरसि दक्षिणामूर्त्तये ऋषये नमः, मुखे पंक्तिच्छन्दसे नमः, हृदि त्रिपुरभैरव्यै देवतायै नमः, गुह्ये वाग्भवाय बीजाय नमः, पादयोः तार्तीयशक्तये नमः, सर्वाङ्गे कामबीजाय कीलकाय नमः।

दक्षिणामूर्तिसंहितायाम्—

ऋषिस्तु दक्षिणामूर्तिरहं शिरसि विन्यसेत् ।
छन्दःपक्तिस्तु विज्ञेयं मुखे विन्यस्य देवताम् ॥

हृदये त्रिपुरेशानीं वाग्भवं बीजमुच्यते ।
शक्तिबीजं शक्तिरेव कामबीजञ्च कीलकम् ।।

ततो नाभ्यादिचरणपर्यन्तं हस्रैं नमः, हृदयान्नाभिपर्यन्तं हस्क्ल्रीं नमः, शिरसो हृदयान्तं हस्रौं नमः, एवं आद्यबीजं दक्षिणकरे, द्वितीयं वामकरे, तृतीयमुभयकरे। ततो मूर्ध्नि मूलाधारे हृदि यथासंख्यं त्रीणि बीजानि न्यसेत्। तथा च निबन्धे—

नाभेराचरणं न्यस्येद्वाग्भवं मन्त्रवित्तमः ।
हृदयान्नाभिपर्यन्तं कामबीजं प्रविन्यसेत् ।
शिरसो हृत्प्रदेशान्तं तार्तीयं विन्यसेत्ततः ।।
आद्यं द्वितीयं करयोस्तार्तीयमुभयोर्न्यसेत् ।
मूर्ध्नाधारे हृदि न्यसेद्भूयो बीजत्रयं क्रमात् ।।

ततो नवयोनिन्यासः—आद्यबीजं दक्षकर्णे, द्वितीयबीजं वामकर्णे, तृतीयबीजं चिबुके। एवं गण्डयोर्वदने नेत्रयोर्नसि अंसयोर्जठरे कूर्परयोः कुक्षौ जानुनोर्लिङ्गाग्रे पादयोर्गुह्ये पार्श्वयोः हृदयाम्बुजे स्तनयोः कण्ठे। तथा च निबन्धे—

नवयोन्यात्मकं न्यासं कुर्याद्बीजैस्त्रिभिः क्रमात् ।
कर्णयोश्चिबुके भूयो गण्डयोर्वदने पुनः ।।
नेत्रयोर्नसि विन्यस्य अंसयोर्जठरे पुनः ।
ततः कूर्परयोः कुक्षौ जानुनोर्ध्वजमूर्द्धनि ।।
पादयोर्गुह्यदेशे च पार्श्वयोर्हृदयाम्बुजे ।
स्तनद्वये कण्ठदेशे त्रीणि बीजानि विन्यसेत् ।।

त्रिपुरभैरवीमन्त्र—त्रिपुरभैरवी की उपासना तीन रूपों में होती है—बाला, भैरवी और सुन्दरी। ज्ञानार्णव में वर्णन है कि त्रिपुरा देवी त्रिविधा हैं, उन्हें त्रिशक्ति कहते हैं। प्रपञ्चसार के अनुसार 'त्रिपुरा' शब्द की व्युत्पत्ति यह है कि यह देवी तीन रूप से सृष्टि-स्थिति और लय करती हैं। यह ऋक्, साम, यजुर्वेदस्वरूपा वेदत्रयी हैं। प्रलयकाल में तीनों लोकों में व्याप्त रहती हैं। इसी से अम्बिका का नाम त्रिपुरा पड़ा है।

वाराही तन्त्र में वर्णन है कि ब्रह्मा, विष्णु और महेशादि त्रिदेवों ने प्राचीन काल में त्रिपुरा की पूजा की थी; इसी से इनका नाम त्रिपुरा प्रसिद्ध हुआ।

शारदातिलक में इनके मन्त्र के सम्बन्ध में वर्णन है कि ह् + स् + र् + ऐ के योग से ह्स्रै में बिन्दु लगाने से ह्स्रैं बीज बनता है। ह् + स् + क् + ल् + र् + ई + बिन्दु का यौगिक रूप 'ह्स्क्ल्रीं' बीज बनता है। ह् + स् + र् + औं के योग में बिन्दु और विसर्ग लगाने ह्स्रौंः बीज बनता है। पाँच व्यंजनों ह स क ल र से बनने के कारण इस मन्त्र को पञ्चकूटा कहते हैं। इसके प्रथम बीज ह्स्रैं को वाग्भवकूट, द्वितीय ह्स्क्ल्रीं को

कामराजकूट और तृतीय बीज ह्स्रौं: को शक्तिकूट कहते हैं।

सामान्य पूजा पद्धति से प्रात:कृत्यादि से प्राणायाम तक सभी क्रिया करके पीठ-न्यास करे। पीठन्यास में विशेषता यह है कि आधारशक्तये नम: से ज्ञानात्मने नम: तक न्यास करे; जैसे—

हृदय में—ॐ आधारशक्तये नम:। ॐ प्रकृतये नम:। ॐ कूर्माय नम:। ॐ अनन्ताय नम:। ॐ पृथिव्यै नम:। ॐ क्षीरसमुद्राय नम:। ॐ श्वेतद्वीपाय नम:। ॐ मणिमण्डपाय नम:। ॐ कल्पवृक्षाय नम:। ॐ मणिवेदिकायै नम:। ॐ रत्नसिंहासनाय नम:।

दक्षिण कन्धे में—ॐ धर्माय नम:। वाम कन्धे में—ॐ ज्ञानाय नम:। वामोरौ—ॐ वैराग्याय नम:। दक्षिणोरौ—ॐ ऐश्वर्याय नम:। मुखे—ॐ अधर्माय नम:। वामपार्श्वे—ॐ अज्ञानाय नम:। नाभौ—ॐ अवैराग्याय नम:। दक्षिणपार्श्वे—ॐ अनैश्वर्याय नम:।

पुन: हृदय में—ॐ अनन्ताय नम:। ॐ पद्माय नम:। ॐ सूर्यमण्डलाय द्वादशकलात्मने नम:। ॐ उं सोममण्डलाय षोडशकलात्मने नम: ॐ रं वह्निमण्डलाय दशकलात्मने नम:। सं सत्त्वाय नम:। रं रजसे नम:। तं तमसे नम:। आं आत्मने नम:। अं अन्तरात्मने नम:। पं परमात्मने नम:। ह्रीं ज्ञानात्मने नम:।

इसके बाद हृदयकमल के पूर्वादि केशरों में इनका न्यास करे—ॐ इच्छायै नम:। ॐ ज्ञानायै नम:। ॐ क्रियायै नम:। ॐ कामिन्यै नम:। ॐ कामदायिन्यै नम:। ॐ रत्यै नम:। ॐ रतिप्रियायै नम:। ॐ नन्दायै नम: और मध्य में ॐ मनोन्मन्यै नम:। तब पूरे पीठ पर ऐं परायै अपरायै परापरायै ह्सौ: सदाशिवमहाप्रेतपद्मासनाय नम: से न्यास करके ऋष्यादि न्यास करे।

ऋष्यादि न्यास—शिरसि दक्षिणामूर्तिऋषये नम:। मुखे पंक्तिच्छन्दसे नम:। हृदि त्रिपुर-भैरव्यै देवतायै नम:। पादयो: तार्तीये शक्तये नम:। सर्वांगे कामबीजाय कीलकाय नम:।

इसके बाद नाभि से पैर तक ह्स्रैं नम: से, हृदय से नाभि तक ह्स्क्ल्रीं नम: से और मस्तक से हृदय तक ह्स्रौं: नम: से न्यास करे। दाँयें हाथ में ह्स्रैं नम: से, बाँयें हाथ में ह्स्क्ल्रीं नम: से और दोनों हाथों में ह्स्रौं: नम: से न्यास करे। मस्तक में ह्स्रैं नम: से, मूलाधार में ह्स्क्ल्रीं नम: से और हृदय में ह्स्रौं: नम: से न्यास करके नवयोनिन्यास करे।

नवयोनिन्यास—

१. दक्षकर्णे ह्स्रैं नम:
२. वामकर्णे ह्स्क्ल्रीं नम:
३. दक्षगंडे ह्स्रौं: नम:
४. वामगंडे ह्स्रैं नम:
५. दक्षनेत्रे ह्स्क्ल्रीं नम:
६. वामनेत्रे ह्स्रौं: नम:
७. नासिकायां ह्स्रैं नम:
८. दक्षस्कन्धे ह्स्क्ल्रीं नम:
९. वामस्कन्धे ह्स्रौं: नम:
१०. उदरे ह्स्रौं: नम:
११. दक्षकूर्परे ह्स्क्ल्रीं नम:
१२. वामकूर्परे ह्स्रैं नम:

१३. जठरे ह्स्त्रौं: नम:	२१. वामपादे ह्स्क्ल्रीं नम:
१४. दक्षजानुनि ह्स्क्ल्रीं नम:	२२. गुह्ये ह्स्त्रौं: नम:
१५. वामजानुनि ह्स्त्रं नम:	२३. दक्षपार्श्वे ह्स्त्रैं नम:
१६. लिङ्गे ह्स्त्रौं: नम:	२४. वामपार्श्वे ह्स्क्ल्रीं नम:
१७. दक्षपादे ह्स्क्ल्रीं नम:	२५. हृदये ह्स्त्रौं: नम:
१८. वामपादे ह्स्त्रौं नम:	२६. दक्षस्तने ह्स्त्रैं: नम:
१९. लिंगे ह्स्त्रौं: नम:	२७. वामस्तने ह्स्क्ल्रीं नम:
२०. दक्षपादे ह्स्त्रैं नम:	२८. कण्ठे ह्स्त्रौं: नम:

ततो रत्यादिन्यासः—मूलधारे ऐं रत्यै नमः, हृदि क्लीं प्रीत्यै नमः, भ्रूमध्ये सौः मनोभवायै नमः; पुनर्भ्रूमध्ये सौः अमृतेश्यै नमः, हृदि क्लीं योगेश्यै नमः, मूलाधारे ऐं विश्वयोन्यै नमः। तथा च निबन्धे—

मूले रतिं हृदि प्रीतिं भ्रुवोर्मध्ये मनोभवाम् ।
बालाबीजैस्त्रिभिर्न्यस्येत् स्थानेष्वेषु विलोमतः ॥
अमृतेशीञ्च योगेशीं विश्वयोनिं क्रमादिमाः ।
विलोमबीजैर्विन्यस्य मूर्तिन्यासमथाचरेत् ॥

अथ मूर्तिन्यासः—मूर्ध्नि स्ह्रीं ईशानमनोभवाय नमः, वक्त्रे स्ह्रें तत्पुरुष-मकरध्वजाय नमः, हृदि स्ह्रुं अघोरकुमारकन्दर्पाय नमः, गुह्ये स्ह्रिं वामदेवमन्मथाय नमः, पादयोः स्ह्रं सद्योजात कामदेवाय नमः। एवमूर्ध्वप्राग्याम्योत्तरपश्चिमेषु मुखेषु ईशानमनोभवादिपञ्चमूर्तीस्तत्तद्बीजपूर्विका न्यसेत्। तथा च निबन्धे—

स्वस्वबीजादिकं सर्वं मूर्ध्नीशानमनोभवम् ।
न्यसेद्वक्त्रे तत्पुरुषमकरध्वजमात्मवित् ॥
हृद्यघोरकुमाराख्यं कन्दर्पं तदनन्तरम् ।
गुह्यदेशे प्रविन्यस्येद्वामदेवादिमन्मथम् ॥
सद्योजातं कामदेवं पादयोर्विन्यसेत्ततः ।
ऊर्ध्वप्राग्दक्षिणोदीच्यपश्चिमेषु मुखेषु तान् ॥
प्रविन्यस्येद्यथापूर्वं भृगुव्योमाग्निसंस्थितम् ।
सत्यादिपञ्चह्रस्वाढ्यं लीनमेषां प्रकीर्तितम् ॥

ततो बाणन्यासः—द्रां द्राविण्यै नमः अंगुष्ठयोः। द्रीं क्षोभिण्यै नमः तर्जन्योः। क्लीं वशीकरण्यै नमः मध्यमयोः। ब्लूं आकर्षिण्यै नमः अनामिकयोः। सः सम्मोहिन्यै नमः कनिष्ठयोः।

तथा च ज्ञानार्णवे—

पञ्चबाणान् क्रमेणैव करांगुलीषु विन्यसेत् ।
अंगुष्ठादिकनिष्ठान्तं क्रमेण परमेश्वरि ॥

ततस्तेषु स्थानेषु यथाक्रमं कामन्यासं कुर्यात्। यथा—ह्रीं कामाय नमः, क्लीं मन्मथाय नमः, ऐं कन्दर्पाय नमः, ब्लूं मकरध्वजाय नमः, स्त्रीं मीनकेतनाय नमः। ततो मूर्ध्नि पादे वक्त्रे गुह्ये हृदि पूर्वोक्तबाणान् कामांश्च न्यसेत्। तथा च ज्ञानार्णवे—

थान्तद्वयं समुद्धृत्य वह्निसंस्थं क्रमेण हि ।
मुखवृत्तेन नेत्रेण वामेन परिमण्डितम् ॥
वाणद्वयमिदं प्रोक्तं मादनं भूमिसंस्थितम् ।
चतुर्थस्वरविन्द्वाढ्यं नादरूपं वरानने ॥
फान्तं शक्रसमारूढं वामकर्णविभूषितम् ।
विन्दुनादसमायुक्तं सर्गवांश्चन्द्रमाः प्रिये ॥
पञ्चवाणान् महेशानि नामानि शृणु पार्वति ।
द्रावणक्षोभणौ वश्यस्तथाकर्षणसंज्ञकः ।
तथोन्मादः क्रमेणैव नामानि परमेश्वरि ॥

न्यासे तु सर्वत्र स्त्रीलिङ्गेन प्रयोगः। तथा च निबन्धे—

द्रामाद्यां द्राविणीं मूर्ध्नि द्रीमाद्यां क्षोभणीं पदे ।
क्लीं वशीकरणीं वक्त्रे गुह्ये ब्लूं बीजपूर्विकाम् ॥
आकर्षणीं हृदि पुनः सर्गान्तर्भृगुसंयुताम् ।
सम्मोहनीं क्रमादेवं बाणन्यासोऽयमीरितः ॥

तत्रोन्मादसम्मोहनयोरेकपर्यायत्वम्।

कामास्तत्रैव विज्ञेयास्तेषां बीजानि संशृणु ।
पराबीजं मध्यबाणं वाग्भवं पमेश्वरि ॥
तूर्यबाणं ततश्चैव स्त्रीबीजञ्च क्रमात् प्रिये ।
पञ्चकामा इमे देवि नामानि शृणु वल्लभे ॥
काममन्मथकन्दर्पमकरध्वजसंज्ञकाः ।
मीनकेतुर्महेशानि पञ्चमः परिकीर्तितः ।
पञ्चकामांस्ततो देवि बाणस्थानेषु विन्यसेत् ॥

ततः कराङ्गन्यासौ—हस्रां अंगुष्ठाभ्यां नमः। हस्रीं तर्जनीभ्यां स्वाहा। हस्रें मध्यमाभ्यां वषट्। हस्रैं अनामिकाभ्यां हुं। हस्रौं कनिष्ठाभ्यां वौषट्। हस्रः करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्। एवं हृदयादिषु।

षड्दीर्घयुक्तेनाद्येन बीजेनाङ्गक्रिया मनोः ।

ततः सुभगादिन्यासः—भाले ऐं क्लीं ब्लूं स्त्रीं सः सुभगायै नमः। भ्रूमध्ये ऐं क्लीं ब्लूं स्त्रीं सः भगायै नमः। वदने ऐं क्लीं ब्लूं स्त्रीं सः भगसर्पिण्यै नमः। कण्ठिकायां ऐं क्लीं ब्लूं स्त्रीं सः भगमालिन्यै नमः। कण्ठे ऐं क्लीं ब्लूं स्त्रीं सः अनङ्गायै नमः। हृदि ऐं क्लीं ब्लूं स्त्रीं सः अनङ्गकुसुमायै नमः। नाभौ ऐं क्लीं ब्लूं स्त्रीं सः अनङ्गमेखलायै नमः। लिङ्गमूले ऐं क्लीं ब्लूं स्त्रीं सः अनङ्गमदनायै नमः।

तथा च निबन्धे—

भाल-भ्रूमध्य-वदन-कण्ठिकाकण्ठहृत्सु च ।
नाभ्यधिष्ठानयोः पञ्चताराद्याः सुभगादिकाः ॥
न्यस्तव्या विधिना देव्यो मन्त्रिणा सुभगा भगा ।
भगसर्पिण्यथ परा भगमालिन्यतः परम् ॥
अनङ्गानङ्गकुसुमा भूयश्चानङ्गमेखला ।
अनङ्गमदना सर्वा मदविभ्रमविह्वलाः ।
वाक्कामबीजं ब्लूं स्त्रीं सस्ताराः पञ्चोदितास्त्वमी ॥

ततो भूषणन्यासः; तद्यथा—शिरसि अं नमः। भाले आं नमः। भ्रुवोः इं ईं। कर्णयोः उं ऊं। नेत्रयोः ऋं ॠं। नसि ऌं। गण्डयोः ॡं एं। ओष्ठयोः ऐं ओं। अधोदन्ते औं। ऊर्ध्वदन्ते अं। मुखे अः। चिबुके कं। गले खं। कण्ठे गं। पार्श्वयोः घं ङं। स्तनद्वन्द्वे चं छं। दोर्मूलयोः जं झं। कूर्परयोः ञं टं। पाण्योः ठं डं। कर-पृष्ठयोः ढं णं। नाभौ तं। गुह्ये थं। ऊर्वोः दं धं। जानुनोः नं पं। जङ्घयोः फं बं। स्फिचोः भं मं। पत्तलयोः यं। चरणाङ्गुष्ठयोः रं। काञ्च्यां वं। ग्रीवायां लं। कटके लं। हृदि शं। गुह्ये क्षं। कर्णयोः षं। गण्डयोः सं। मौलौ हं। सर्वत्र नमोऽन्तेन न्यसेत्। तथा च तन्त्रान्तरे—

न्यसेच्छिरसि भालभ्रूकर्णाक्षियुगले नसि ।
गण्डयोरोष्ठयोर्दन्तपंक्त्योरास्ये न्यसेत्स्वरान् ॥
चिबुके च गले कण्ठे पार्श्वयोः स्तनयुग्मके ।
दोर्मूलयोः कूर्परयोः पाण्योस्तत्पृष्ठदेशतः ॥
नाभौ गुह्ये पुनश्चोर्वोर्जानुनोर्जङ्घयोस्ततः ।
स्फिचोः पत्तलयोः पश्चाच्चरणांगुष्ठयोर्द्वयोः ॥
कादिवान्तान्न्यसेद्वर्णान् स्थानेष्वेषु समाहितः ।
काञ्च्यां ग्रैवेयके पश्चात्कटके हृदि गुह्यके ॥

कर्णयोर्गण्डयोर्मौलौ बलवान् शक्षषान्सहौ ।
अष्टाविमान् प्रविन्न्यस्येदेवं देशिकसत्तमः ॥

रत्यादि न्यास—मूलाधारे ॐ रत्यै नमः। हृदि क्लीं प्रीत्यै नमः। भ्रूमध्ये सौः मनो-भवायै नमः। पुनः भ्रूमध्ये सौः अमृतेश्यै नमः। हृदि क्लीं योगेश्यै नमः। मूलाधारे ॐ विश्वयोन्यै नमः।

मूर्तिन्यास—मूर्ध्नि स्ह्रीं ईशानमनोभवायै नमः। वक्त्रे स्ह्रें तत्पुरुषमकरध्वजाय नमः। हृदि स्ह्रूं अघोरकुमारकन्दर्पाय नमः। गुह्ये स्ह्रिं वामदेवाय मन्मथाय नमः। पादयोः स्ह्रं सद्योजातकामदेवाय नमः।

वाणन्यास—द्रां द्राविण्यै नमः अंगुष्ठयोः। द्रीं क्षोभिण्यै नमः तर्जन्योः। क्लीं वशीकरण्यै नमः मध्यमयोः। ब्लूं आकर्षिण्यै नमः अनामिकयोः। सः सम्मोहिन्यै नमः कनिष्ठयोः। ज्ञानार्णवतन्त्र में लिखा है कि द्रावण, क्षोभण, वशीकरण, आकर्षण और उन्माद—ये पञ्च कामवाण हैं। न्यास में इन्हीं का स्त्रीलिंग रूप में प्रयोग किया जाता है।

कामन्यास—ह्रीं कामाय नमः अंगुष्ठयोः। क्लीं मन्मथाय नमः तर्जन्योः। ऐं कन्दर्पाय नमः मध्यमयोः। ब्लूं मकरध्वजाय नमः अनामिकयोः। स्त्रीं मीनकतवे नमः कनिष्ठयोः। इसके बाद मस्तके द्रां द्राविण्यै नमः। पादौ द्रीं क्षोभिण्यै नमः। मुखे क्लीं वशीकरण्यै नमः। गुह्ये ब्लूं आकर्षिण्यै नमः। हृदये सः सम्मोहिन्यै नमः। पुनः पञ्च कामन्यास करे—मस्तके ह्रीं कामाय नमः। पादौ क्लीं मन्मथाय नमः। मुखे ऐं कन्दर्पाय नमः। गुह्ये ब्लूं मकरध्वजाय नमः। हृदये स्त्रीं मीनकेतवे नमः। इसके बाद करांग न्यास करे—ह्स्रां अंगुष्ठाभ्यां नमः। ह्स्रीं तर्जनीभ्यां स्वाहा। ह्स्रूं मध्यमाभ्यां वषट्। ह्स्रैं अनामिकाभ्यां हुं। ह्स्रौं कनिष्ठाभ्यां वौषट्। ह्स्रः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः।

हृदयादि षडंग न्यास—ह्स्रां हृदयाय नमः। ह्स्रीं शिरसे स्वाहा। ह्स्रूं शिखायै वषट्। ह्स्रैं कवचाय हुं। ह्स्रौं: नेत्रत्रयाय वौषट्। ह्स्रः अस्त्राय फट्।

सुभगादि न्यास—भाले ऐं क्लीं ब्लूं स्त्रीं सः सुभगायै नमः। भ्रूमध्ये ऐं क्लीं ब्लूं स्त्रीं सः भगायै नमः। मुखे ऐं क्लीं ब्लूं स्त्रीं सः भगसर्पिण्यै नमः। कण्ठिकायां ऐं क्लीं ब्लूं स्त्रीं सः भगमालिन्यै नमः। कण्ठे ऐं क्लीं ब्लूं स्त्रीं सः अनंगायै नमः। हृदि ऐं क्लीं ब्लूं स्त्रीं सः अनङ्गकुसुमायै नमः। नाभौ ऐं क्लीं ब्लूं स्त्रीं सः अनङ्गमेखलायै नमः। लिंगमूले ऐं क्लीं ब्लूं स्त्रीं सः अनङ्गमदनायै नमः। इसके बाद भूषणन्यास करे—

१. शिरसि अं नमः	५. नेत्रयोः ऋं नमः ॠं नमः
२. भाले आं नमः	६. नसि ऌं नमः
३. भ्रुवोः इं नमः ईं नमः	७. गण्डयोः ॡं नमः एं नमः
४. कर्णयोः उं नम ऊं नमः	८. ओष्ठयोः ऐं नमः ओं नमः

९. अधोदन्ते औं नम:
१०. ऊर्ध्वदन्ते अं नम:
११. मुखे अ: नम:
१२. चिबुके कं नम:
१३. गले खं नम:
१४. कण्ठे गं नम:
१५. पार्श्वयो: घं नम: ङं नम:
१६. स्तनयो: चं नम: छं नम:
१७. बाहुमूलयो: जं नम: झं नम:
१८. कूर्परयो: ञं नम: टं नम:
१९. पाण्यो: ठं नम: डं नम:
२०. करपृष्ठयो: ढं नम: णं नम:
२१. नाभौ तं नम:
२२. गुह्ये थं नम:
२३. ऊर्वो: दं नम धं नम:
२४. जानुनि नं नम: पं नभ:
२५. जंघयो: फं नम: बं नम:
२६. स्फिचो भं नम: मं नम:
२७. चरणतलयो: यं नम:
२८. चरणांगुष्ठयो: रं नम:
२९. काञ्च्यां वं नम:
३०. ग्रीवायां लं नम:
३१. कटके ळं नम:
३२. हृदि शं नम:
३३. गुह्ये क्षं नम:
३४. कर्णयो: षं नम:
३५. गण्डयो: सं नम:
३६. मौलौ हं नम:

ततस्त्रिखण्डां मुद्रां बद्ध्वा ध्यायेत्। यथा—

उद्यद्भानुसहस्रकान्तिमरुणक्षौमां शिरोमालिकां
रक्तालिप्तपयोधरां जपवटीं विद्यामभीतिं वराम् ।
हस्ताब्जैर्दधतीं त्रिनेत्रविलसद्रक्तारविन्दश्रियं
देवीं बद्धहिमांशुरत्नमुकुटां वन्दे समन्दस्मिताम् ॥

एवं ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्य शङ्खस्थापनं कुर्यात्। तत आधारशक्त्यादि ह्रीं ज्ञानात्मने नमः इत्यन्तं सम्पूज्य पूर्वादिकेशरेषु मध्ये च—

इच्छा ज्ञाना क्रिया पश्चात् कामिनी कामदायिनी ।
रती रतिप्रिया नन्दा नन्दिनी स्यान्मनोन्मनी ॥

एताः प्रणवादिनमोऽन्ताः पूजयेत्। तत ऐं परायै अपरायै परापरायै ह्सौः सदाशिवमहाप्रेतपद्मासनाय नमः—इति सम्पूज्य प्राग्योनिमध्ययोन्यन्तराले श्रीविद्योक्तगुरुपंक्तीः पूजयेत्। निबन्धे—

वाग्भवं लोहितो रायै श्रीकण्ठो लोहितोऽनलः ।
दीर्घवान् ये परा पश्चादपरायै ह्सौः पुनः ॥
सदाशिवमहाप्रेतं ङेऽन्तं पद्मासनं नमः ।
अनेन मनुना दद्यादासनं श्रीगुरुक्रमः ॥

प्राङ्मध्ययोन्यन्तराले पूजयेत् कल्पयेत्ततः ।
पञ्चभिः प्रणवैर्मूर्त्तिं तस्यामावाह्य देवताम् ॥
पूजयेदागमोक्तेन विधानेन समाहितः ।
तारा वाक्शक्ति कमला हस्ख्फ्रें हसौः स्मृताः ॥

तदशक्तौ तु ॐ गुरुभ्यो नमः, ॐ गुरुपादुकाभ्यो नमः, ॐ परमगुरुभ्यो नमः, ॐ परमगुरुपादुकाभ्यो नमः, ॐ परापरगुरुभ्यो नमः, ॐ परापरगुरु-पादुकाभ्यो नमः, ॐ परमेष्ठिगुरुभ्यो नमः, ॐ परमेष्ठिगुरुपादुकाभ्यो नमः, ॐ आचार्येभ्यो नमः, ॐ आचार्यपादुकाभ्यो नमः।

अस्य पूजायन्त्रस्तु शारदायाम्—

पद्ममष्टदलोपेतं नवयोन्याढ्यकर्णिकम् ।
चतुर्द्वारसमायुक्तं भूगृहं विलिखेत्ततः ॥

ततः ऐं ह्रीं श्रीं हस्ख्फ्रें हसौः इति मन्त्रेण विन्दुचक्रे देव्या मूर्त्तिं सङ्कल्प्य त्रिखण्डामुद्रया पूर्ववद्देवीं ध्यात्वा आवाहयेत्।

ॐ देवेशि भक्तिसुलभे परिवारसमन्विते ।
यावत्त्वां पूजयिष्यामि तावत्त्वं सुस्थिरा भव ॥
पञ्चभिः प्रणवैर्मूर्त्तिं तस्यामावाह्य देवताम् ।
तारा वाक्शक्तिकमला हस्ख्फ्रें हसौः स्मृताः ॥

इत्यावाह्यावाहनादिपञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं विधायावरणपूजामारभेत्। तद्यथा—देव्या वामकोणे ऐं रत्यै नमः। दक्षिणकोणे क्लीं प्रीत्यै नमः। अग्निकोणे सौः मनोभवायै नमः। ततः केशरेषु अग्न्यादिकोणेषु मध्ये दिक्षु च पूर्वोक्ताङ्गमन्त्रेण पूजयेत्। तथा च ज्ञानार्णवे—

अग्नीशासुरवायव्यमध्ये दिक्ष्वङ्गपूजनम् ।

ततः उत्तरे द्रां द्राविण्यै नमः, द्रीं क्षोभिण्यै नमः, दक्षिणे क्लीं वशीकरण्यै नमः, ब्लूं आकर्षण्यै नमः। अग्रे सः सम्मोहिन्यै नमः। ततः पञ्चकामान् पूजयेत्। यथा—

उत्तरे ह्रीं कामाय नमः, क्लीं मन्मथाय। दक्षिणे ऐं कन्दर्पाय, ब्लूं मकरध्वजाय। अग्रे स्त्रीं मीनकेतवे। नमः सर्वत्र। तथा च ज्ञानार्णवे—

उत्तरस्यां द्वयं देवि दक्षिणस्यां द्वयं दिशि ।
अग्रे चैकं क्रमेणैव पञ्चबाणान् ततो यजेत् ।
पञ्चकामांस्तथा देवि बाणवत् परिपूजयेत् ॥

तथा च तत्रैव पञ्चकामाः—

पराबीजं मध्यबाणं वाग्भवं परमेश्वरि ।
तूर्यबाणं ततश्चैव स्त्रीबीजञ्च क्रमात् प्रिये ॥
पञ्चकामा इमे देवि नामानि शृणु वल्लभे ।
काममन्मथकन्दर्पमकरध्वजसंज्ञकाः ।
मीनकेतुर्महेशानि पञ्चमः परिकीर्तितः ॥

ततोऽष्टयोनिषु पूर्वादिक्रमेण ऐं क्लीं ब्लूं स्त्रीं सः सुभगायै नमः। एवं ऐं क्लीं ब्लूं स्त्रीं सः भगायै। ऐं क्लीं ब्लूं स्त्रीं सः भगसर्पिण्यै। ऐं क्लीं ब्लूं स्त्रीं सः भगमालिन्यै। ऐं क्लीं ब्लूं स्त्रीं सः अनङ्गायै। ऐं क्लीं ब्लूं स्त्रीं सः अनङ्गकुसुमायै। ऐं क्लीं ब्लूं स्त्रीं सः अनङ्गमेखलायै। ऐं क्लीं ब्लूं स्त्रीं सः अनङ्गमदनायै। नमः सर्वत्र।

ततोऽष्टपत्रेषु पूर्वादिक्रमेण ॐ असिताङ्गब्राह्मीभ्यां नमः। एवं ॐ रुद्र-माहेश्वरीभ्याम्, ॐ चण्डकौमारीभ्याम्, ॐ क्रोधवैष्णवीभ्याम्, ॐ उन्मत्त-वाराहीभ्याम्, ॐ कपालीन्द्राणीभ्याम्, ॐ भीषणचामुण्डाभ्याम्, ॐ संहारमहा-लक्ष्मीभ्याम्। तथा च निबन्धे—

अष्टयोनिष्वष्टशक्तीः पूजयेत् सुभगादिकाः ।
मातरो भैरवाङ्कस्था मदविभ्रमविह्वलाः ।
अष्टपत्रेषु सम्पूज्या यथावत् कुसुमादिभिः ॥

ततस्तद्बहिरिन्द्रादीन् वज्रादींश्च सम्पूज्य धूपादिविसर्जनान्तं कर्म समापयेत्। किन्तु नैवेद्यानन्तरं श्रीविद्योक्तबलिचतुष्टयमत्र देयमिति।

अस्य पुरश्चरणं दशलक्षजपः। होमस्तु पलाशकुसुमेन द्वादशसहस्रम्। तथा च निबन्धे—

दीक्षां प्राप्य जपेन्मन्त्रं तत्त्वलक्षं जितेन्द्रियः ।
पुष्पैर्भानुसहस्राणि जुहुयाद् ब्रह्मवृक्षजैः ॥

त्रिखण्डा मुद्रा दिखाकर निम्नवत् ध्यान करे—

उद्यद्भानुसहस्रकान्तिमरुणक्षौमां शिरोमालिकां
रक्तालिप्तपयोधरां जपवटीं विद्यामभीतिं वराम् ।
हस्ताब्जैर्दधतीं त्रिनेत्रविलसद्रक्तारविन्दश्रियं
देवीं बद्धहिमांशुरत्नमुकुटां वन्दे समन्दस्मिताम् ॥

भगवती त्रिपुरभैरवी के शरीर की आभा उदीयमान हजारों सूर्यों के समान है। लाल रंग का रेशमी वस्त्र है। चार करकमलों में जपमाला, पुस्तक, अभयमुद्रा और वरमुद्रा है।

तीन नेत्रों से शोभित मुखमण्डल कमल के समान सुन्दर है। मस्तक पर रत्नजटित मुकुट है। वे मन्द-मन्द मुस्कुरा रही हैं । ऐसी देवी की मैं वन्दना करता हूँ।

इसके बाद मानसोपचार पूजा करके शंखस्थापन करे। सामान्य पूजापद्धति से पूर्वोक्त पीठन्यास के मन्त्रों से ॐ आधारशक्तये नम: से ॐ ज्ञानात्मने नम: तक पीठदेवताओं की पूजा करे।

यन्त्रपद्मकेशरों में पूर्वादि केशरों और मध्य में इन देवताओं की पूजा इस प्रकार से करे—ॐ इच्छायै नम:। ॐ ज्ञानायै नम:। ॐ क्रियायै नम:। ॐ कामिन्यै नम:। ॐ कामदायिन्यै नम:। ॐ रत्यै नम:। ॐ रतिप्रियायै नम:। ॐ नन्दायै नम:। ॐ नन्दिन्यै नम:। ॐ मनोन्मन्यै नम:। और पूरे पीठ की पूजा ॐ ह्सौः सदाशिवमहाप्रेत-पद्मासनाय नम: से करे। यन्त्र स्थापित करे। पूजायन्त्र इस प्रकार का है।

शारदातिलक के अनुसार पहले नवयोन्यात्मक कर्णिका अंकित करे। इसके बाहर अष्टदल पद्म और इसके बाहर चार द्वारयुक्त चतुरस्र भूपुर बनावे।

त्रिपुरभैरवी यन्त्र
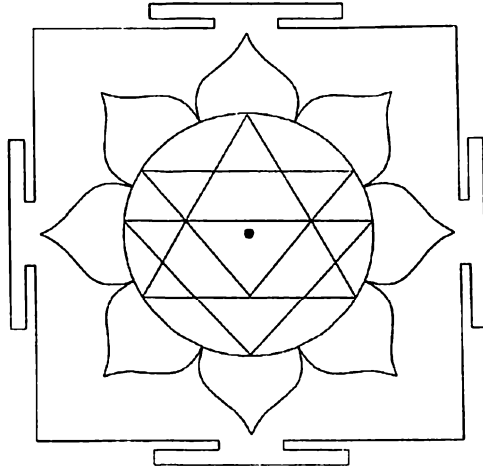
पूर्वयोनि और मध्ययोनि (त्रिकोण) के बीच में श्रीविद्यार्चन के अनुसार गुरु-मण्डलार्चन करे। मध्य त्रिकोण के बिन्दु में ॐ परौघेभ्यो नम: से पुष्पाञ्जलि देकर ऐं ग्लौं ह्स्ख्फ्रें हसक्षमवलरयूं ह्स्रौं सहक्षमलवरयीं स्हौ: श्रीविद्यानन्दनाथात्मकचर्यानन्दनाथश्री-पादुकां पूजायामि।

१. मध्य त्रिकोण के वाम कोण से आरम्भ करके पूर्व रेखा में—

ॐ उड्डीशानन्दनाथाय नमः ॐ प्रकाशानन्दनाथाय नमः।

ॐ विमर्शानन्दनाथाय नमः। ॐ आनन्दनन्दनाथाय नमः।

२. दक्षकोण से आरम्भ करके दक्ष रेखा में—

ॐ षष्ठीशानन्दनाथाय नमः। ॐ ज्ञानानन्दनाथाय नमः।

ॐ सत्यानन्दनाथाय नमः ॐ पूर्णानन्दनाथाय नमः।

३. स्वाग्रकोण से प्रारम्भ करके वाम रेखा में—

ॐ मित्रेशानन्दनाथाय नमः ॐ स्वभावानन्दनाथाय नमः।

ॐ प्रतिभानन्दनाथाय नमः ॐ सुभगानन्दनाथाय नमः।

मध्य त्रिकोण और पूर्व त्रिकोण के मध्य में तीन रेखाओं की कल्पना करके गुरुओं का पूजन करे। ॐ दिव्यौघसिद्धौघमानवौघेभ्यो नमः से पुष्पाञ्जलि प्रदान करे।

प्रथम रेखा में दिव्यौघ गुरुमण्डलार्चन—

ॐ परप्रकाशानन्दनाथाय नमः। ॐ परशिवानन्दनाथाय नमः।

ॐ पराशक्त्यम्बायै नमः। ॐ कौलेश्वरानन्दनाथाय नमः।

ॐ शुक्लदेव्यम्बायै नमः। ॐ कुलेश्वरानन्दनाथाय नमः।

ॐ कामेश्वर्यम्बायै नमः।

द्वितीय रेखा में सिद्धौघ गुरुमण्डलार्चन—

ॐ भोगानन्दनाथाय नमः। ॐ विमलानन्दनाथाय नमः।

ॐ समयानन्दनाथाय नमः। ॐ सहजानन्दनाथाय नमः

तृतीय रेखा में मानवौघ गुरुमण्डलार्चन—

ॐ गगनानन्दनाथाय नमः। ॐ विश्वानन्दनाथाय नमः।

ॐ विमलानन्दनाथाय नमः। ॐ मदनानन्दनाथाय नमः।

ॐ भुवनानन्दनाथाय नमः। ॐ लीलाम्बायै नमः।

ॐ स्वात्मानन्दनाथाय नमः। ॐ प्रियानन्दनाथाय नमः।

इसके बाद प्रथम रेखा में—परमेष्ठिगुरुभ्यो नमः।

द्वितीय रेखा में—परमगुरुभ्यो नमः।

तृतीय रेखा में—स्वगुरुभ्यो नमः।

इस प्रकार का गुरुमण्डलार्चन करने में यदि समर्थ न हो तो निम्न प्रकार से पूजन करे; यह निबन्ध ग्रन्थ के अनुसार है—

ॐ गुरुभ्यो नमः। ॐ परमगुरुपादुकाभ्यो नमः।

ॐ गुरुपादुकाभ्यो नमः। ॐ परापरगुरुपादुकाभ्यो नमः।

ॐ परमगुरुभ्यो नमः। ॐ परमेष्ठिगुरुभ्यो नमः।

ॐ परमेष्ठिगुरुपादुकाभ्यो नमः। ॐ आचार्येभ्यो नमः।
ॐ परापरगुरुभ्यो नमः। ॐ आचार्यपादुकाभ्यो नमः।

इसके बाद ऐं ह्रीं श्रीं ह्स्ख्फ्रें ह्सौः से देवी की मूर्ति कल्पित करके त्रिखण्डा मुद्रा द्वारा पूर्ववत् ध्यान करे। निम्न मन्त्र से आवाहन करे—

ॐ देवेशि भक्तिसुलभे परिवारसमन्विते।
यावत्त्वां पूजयिष्यामि तावत्त्वं सुस्थिरा भव।।

इसके बाद पुष्पाञ्जलिदानपर्यन्त सभी कर्म करके आवरण पूजा करे।

प्रथम मध्य त्रिकोण के वाम कोण में ऐं रत्यै नमः, दक्षिण कोण में क्लीं प्रीत्यै नमः, अग्निकोण में सौः मनोभवायै नमः से पूजा करे। केशर में अग्न्यादि कोणों में चारो दिशाओं में षडंग पूजन करे—ह्सां हृदयाय नमः। ह्सीं शिरसे स्वाहा। ह्सूं शिखायै वषट्। ह्सैं कवचाय हुं। ह्सौं नेत्रत्रयाय वौषट्। ह्सः अस्त्राय फट्।

तब पञ्च वाणों की पूजा करे—उत्तर में द्रां द्राविण्यै नमः, द्रीं क्षोभिण्यै नमः। दक्षिण में क्लीं वशीकरण्यै नमः, ब्लूं आकर्षिण्यै नमः। अग्रभाग में सः सम्मोहिन्यै नमः।

इसके बाद फिर उत्तर में ह्रीं कामाय नमः, क्लीं मन्मथाय नमः। दक्षिण में ऐं कन्दर्पाय नमः, ब्लूं मकरध्वजाय नमः। अग्रभाग में स्त्रीं मीनकेतवे नमः से पञ्च कामदेवों की पूजा करे।

इसके बाद अष्ट त्रिकोणों में पूर्वादि क्रम से निम्न मन्त्रों से पूजन करे—

ऐ क्लीं ब्लूं स्त्रीं सः सुभगायै नमः।
ऐ क्लीं ब्लूं स्त्रीं सः भगायै नमः।
ऐ क्लीं ब्लूं स्त्रीं सः भगसर्पिण्यै नमः।
ऐ क्लीं ब्लूं स्त्रीं सः भगमालिन्यै नमः।
ऐ क्लीं ब्लूं स्त्रीं सः अनङ्गायै नमः।
ऐ क्लीं ब्लूं स्त्रीं सः अनङ्गकुसुमायै नमः।
ऐ क्लीं ब्लूं स्त्रीं सः अनङ्गमेखलायै नमः।
ऐ क्लीं ब्लूं स्त्रीं सः अनङ्गमदनायै नमः।

अष्टदलों में पूर्वादि क्रम से निम्न मन्त्र से पूजन करे—

ॐ असिताङ्गब्राह्मीभ्यां नमः। ॐ उन्मत्तवाराहीभ्यां नमः।
ॐ रुरुमाहेश्वरीभ्यां नमः। ॐ कपालीन्द्राणीभ्यां नमः।
ॐ चण्डकौमारीभ्यां नमः। ॐ भीषणचामुण्डाभ्यां नमः।
ॐ क्रोधवैष्णवीभ्यां नमः। ॐ संहारमहालक्ष्मीभ्यां नमः।

भूपुर में और इसके बाहर इन्द्रादि और वज्रादि की पूजा करे। तब धूपादि से विसर्जन

तक के कर्म पूर्ण करे। इस पूजा में यह विशेषता है कि नैवेद्य-दान के बाद श्रीविद्यापूजन में लिखित पाँचों प्रकार का बलिदान अर्पण करे।

देवतापीठ के ईशान, आग्नेय, नैर्ऋत्य, वायव्य और उत्तर में त्रिकोण वृत्त चतुस्रात्मक पाँच मण्डल बनावे। उनके ऊपर आधार और बलिद्रव्य रखकर दीपक जलावे। तब क्रमशः पूजन करे—

१. ईशानकोण में—वं वटुकभैरवाय नमः, वटुकबलिमण्डलाय नमः, वटुकबलिद्रव्याय नमः से वटुक, उनके मण्डल और बलिद्रव्य का ध्यान-आवाहन-पूर्वक पूजन करे। तब अंगुष्ठ और अनामिका से 'एह्येहि देवीपुत्र वटुकनाथ कपिलजटाभारभासुरपिंगलनेत्रज्वालामुख सर्वविघ्नान् नाशय नाशय सर्वोपचारैः सह बलिं गृहाण गृहाण स्वाहा' कहते हुए बलिपात्र में विशेषार्घ्य से जलबिन्दु छोड़कर बलि प्रदान करे। तब पुष्पाञ्जलि देकर योनिमुद्रा से प्रणाम करे—

बलिदानेन सन्तुष्टो वटुकः सर्वसिद्धिदः।
शान्तिं करोतु मे नित्यं भूतवेतालसेवितः।।

२. आग्नेय कोण में—यां योगिनीभ्यो नमः, योगिनीबलिमण्डलाय नमः, योगिनीबलिद्रव्याय नमः से पूर्ववत् पूजा करके 'यां यीं यूं यैं यौं यः योगिन्यः सर्वाः उपचारसहितं बलि गृह्णन्तु' से अनामा-मध्यमा और अंगूठे से पूर्ववत् बलि देकर पुष्पाञ्जलिसहित प्रणाम करे—

ऊर्ध्वं ब्रह्माण्डतो वा दिवि गगनतले भूतले निस्तले वा
पाताले वाऽनले वा सलिलपवनयोर्यत्र कुत्र स्थिता वा।
क्षेत्रे पीठोपपीठादिषु च कृतपदा धूपदीपादिकेन
प्रीता देव्या सदा नः शुभबलिविधिना पान्तु वीरेन्द्रवन्द्या।
या काचिद् योगिनी रौद्री घोरघोरतरा परा।
खेचरी भूचरी व्योमचरी तुष्टाऽस्तु मे सदा।।

३. नैर्ऋत्य कोण में—क्षं क्षेत्रपालाय नमः, क्षेत्रपालबलिमण्डलाय नमः, क्षेत्रपालबलिद्रव्याय नमः से पूजा करे। ॐ क्षां क्षीं क्षूं क्षैं क्षौं क्षः स्थानक्षेत्रपालसर्वोपचारसहित-मिमं बलिं गृहाण गृहाण स्वाहा से अंगूठे और अनामा से बलि देकर पूर्ववत् प्रणाम करे—

योऽस्मिन् क्षेत्रे निवासी च क्षेत्रपालः स किङ्करः।
प्रीतोऽस्तु बलिदानेन शान्तिं रक्षां करोतु मे।।

४. वायव्य कोण में—ग्लौं गं गणपतये नमः, गणपतिबलिमण्डलाय नमः, गणपति-बलिद्रव्याय नमः से पूजा करे। ग्लां ग्लीं ग्लूं ग्लैं ग्लौं ग्लः गं गणपतये वरवरद सर्वजनं मे वशमानय इमं बलि गृहाण गृहाण स्वाहा से बलि देकर प्रणाम करे—

सर्वदा सर्वकार्याणि निर्विघ्नं साधयेन्मम।
शान्तिं करोतु मे नित्यं गणराज: सशक्तिक:।।

५. उत्तर में—ॐ ह्रीं सर्वभूतेभ्यो नम:, सर्वभूतमण्डलाय नम:, सर्वभूतबलिद्रव्याय नम: से पूजा करके सर्वविघ्नकर्तृभ्य: सुरासुरनरादिभि: सर्वभूतेभ्य: एष बलिं नम: से सभी अंगुलियों द्वारा बलि देकर प्रणाम करे—

भूता ये विविधाकारा दिव्यभूम्यन्तरिक्षगा:।
पातालतलसंस्था च शिवयोगेन भाषिता:।।
क्रूराद्या सप्तसन्धाश्च ऐन्द्राद्येष व्यवस्थिता:।
ध्रुवाद्या सर्वगन्धर्वा इन्द्राद्या: सर्वदेवता:।।
ते सर्वे प्रीतमनसो भूत्वा गृह्णन्त्विमं बलिम्।
शरणागतोऽस्म्यहं तेषां ते सर्वे मे वसुप्रदा।
बलिदानेन सन्तुष्टा प्रयच्छन्तु, ममेप्सितम्।।
भूतानि यानीह वसन्ति भूतले बलिं गृहीत्वा विधिवत्प्रयुक्तम्।
तानि क्षमन्तामिह वा रमन्तां गच्छन्तु चान्यत्र नमोऽस्तु तेभ्य:।।

अन्त में सर्वेभ्यो बलिदेवताभ्यो नम: से मण्डलों का पञ्चोपचार पूजन कर तीन बार फट् का उच्चारण करे। तब हाथ जोड़कर बलिदेवताओं का विसर्जन करे—

बलिदानेन सन्तुष्टा क्षमध्वं बलिदेवता:।
विहरन्तु यथेच्छासु दिशासु च यथासुखम्।।

पुरश्चरण में जप दश लाख एवं हवन बारह हजार पलाश के फूलों से होता है।

सम्पत्प्रदाभैरवी

ज्ञानार्णवे—

यथेयं त्रिपुरा बाला तथा त्रिपुरभैरवी ।
सम्पत्प्रदा नाम तस्या: शृणु निर्मलमानसे ।।
शिवचन्द्रौ वह्निसंस्थौ वाग्भवं तदनन्तरम् ।
कामबीजं तथा देवि शिवचन्द्रान्वितं तत: ।।
पृथ्वीबीजान्तवह्न्याढ्यं तार्तीयं शृणु वल्लभे ।
शक्ति बीजे महेशानि शिववह्नी नियोजयेत् ।।
कुमार्या: परमेशानि हित्वा सर्गन्तु वैन्दवम् ।
त्रिपुराभैरवी देवी महासम्पत्प्रदा मता ।।

अस्यार्थ:—त्रिपुराभैरवी विसर्गरहिता चेत् सम्पत्प्रदा भवति। तन्त्रान्तरे—

सम्पत्प्रदा-भैरवी या तत्र तार्तीयबीजके ।

सर्गं हित्वा ततो विन्दुं निक्षिपेत् सुरसुन्दरि ॥

अस्याः ध्यानम्—

आताम्रार्कसहस्राभां स्फुरच्चन्द्रकलाजटाम् ।
किरीटरत्नविलसच्चित्रचित्रितमौक्तिकाम् ॥
स्रवद्रुधिरपङ्काढ्यां मुण्डमालाविराजिताम् ।
नयनत्रयशोभाढ्यां पूर्णेन्दुवदनान्विताम् ॥
मुताहारलताराजत्पीनोन्नतघटस्तनीम् ।
रक्ताम्बरपरीधानां यौवनोन्मत्तरूपिणीम् ॥
पुस्तकञ्चाभयं वामे दक्षिणे चाक्षमालिकाम् ।
वरदानप्रदां नित्यां महासम्पत्प्रदां स्मरेत् ॥

न्यासपूजादिकञ्च पूर्ववत्। अङ्गमन्त्रे तु विशेषः—

द्विरुक्तैस्तु त्रिभिर्बीजैः कराङ्गन्यासकल्पना ।

अस्य पुरश्चरणं त्रिलक्षजपः। ज्ञानार्णवे—

बालावदस्याः पूजादि कुर्यात्साधकसत्तमः ।
गुणलक्षं जपेन्मन्त्रं जुहुयात्तद्दशांशतः ॥

तन्त्रान्तरे—

न्यासपूजादिकं सर्वं कुमार्या इव सुव्रते ।
एकलक्षं जपेन्मन्त्रं सिद्धये साधकोत्तमः ॥

इति वचनादेकलक्षजपपुरश्चरणमिति केचित्। सिद्धविद्यात्वात्।

सम्पत्प्रदा भैरवीमन्त्र—ज्ञानार्णव के अनुसार और तन्त्रान्तर के मत से त्रिपुरभैरवी के तीसरे कूट 'ह्स्रौः' से विसर्ग हटा देने से सम्पत्प्रदा भैरवी मन्त्र बनता है, जो— ह्स्रैं ह्स्क्ल्रीं ह्स्रौं है। इसी मन्त्र से इस देवी की पूजा होती है। इसका ध्यान इस प्रकार है—

आताम्रार्कसहस्राभां स्फुरच्चन्द्रकलाजटाम् ।
किरीटरत्नविलसच्चित्रचित्रितमौक्तिकाम् ॥
स्रवद्रुधिरपङ्काढ्यां मुण्डमालाविराजिताम् ।
नयनत्रयशोभाढ्यां पूर्णेन्दुवदनान्विताम् ॥
मुताहारलताराजत्पीनोन्नतघटस्तनीम् ।
रक्ताम्बरपरीधानां यौवनोन्मत्तरूपिणीम् ॥
पुस्तकञ्चाभयं वामे दक्षिणे चाक्षमालिकाम् ।
वरदानप्रदां नित्यां महासम्पत्प्रदां स्मरेत् ॥

भगवती सम्पत्प्रदा भैरवी की कान्ति सहस्र तरुण सूर्यों के समान ताँबे जैसी है।

मस्तक पर बद्ध केश अर्द्धचन्द्र से प्रकाशमान है। शिर पर मुकुट है, जिसमें नाना प्रकार के विलक्षण रत्न एवं सुन्दर मोती जटित हैं। गले में रुधिरपंक से लिप्त मुण्डमाला है। मुण्डमाला से रक्त टपक रहा है। पूर्ण चन्द्र के समान दिव्य मुखमण्डल में सुन्दर तीन नेत्र हैं। स्थूल और ऊँचे कलश के समान सुन्दर पयोधरों पर मोतियों का हार सुशोभित है। लाल रेशमी वस्त्र है। तरुणी के गर्वीले भाव से पूर्ण स्वरूप हैं। बाँयें हाथों में पुस्तक और अभयमुद्रा है। दाँयें हाथों में जपमाला और वरमुद्रा है। भक्तों को निरन्तर सम्पत्ति प्रदान करने वाली ऐसी भगवती का मैं ध्यान करता हूँ। ध्यान के बाद त्रिपुरभैरवी की पूजापद्धति के अनुसार न्यास और पूजनादि करे। विशेषता यह है कि करांग न्यास इस प्रकार करे—ह्स्रं अंगुष्ठाभ्यां नम:। ह्स्क्ल्ह्रीं तर्जनीभ्यां स्वाहा। ह्स्रैं मध्यमाभ्यां वषट्। ह्स्रौं अनामिकाभ्या हुं। स्क्ल्रीं कनिष्ठाभ्यां वषट्। ह्स्र: करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्।

अंगन्यास—ह्स्रं हृदयाय नम:। ह्स्क्ल्ह्रीं शिरसे स्वाहा। ह्स्रैं शिखायै वषट्। ह्स्रौं कवचाय हुं। स्क्ल्रीं नेत्रत्रयाय वौषट्। ह्स्र: अस्त्राय फट्।

इस मन्त्र के पुरश्चरण में तीन लाख जप और तीस हजार हवन होता है। तन्त्रान्तर के अनुसार कुमारी पूजा पद्धति से न्यास-पूजनादि करे। मन्त्रसिद्धि के लिये एक लाख जप करे। सिद्ध विद्या होने से इस मन्त्र के पुरश्चरण में एक लाख का जप निर्दिष्ट किया गया है।

कौलेशभैरवी

ज्ञानार्णवे—

सम्पत्प्रदाभैरवीवद्विद्धि कौलेशभैरवीम् ।
हसाद्या सैव देवेशि त्रिषु बीजेषु पार्वति ।
इत्यन्तु सहराद्या स्याद्ध्यानपूजादिकं तथा ।।

अस्यार्थ:—त्रिकूटे सकारादिश्चेत्तदा कौलेशभैरवी भवति। अस्या: पूजाध्यानादिकं सम्पत्प्रदाभैरवीवद्बोध्यम्।

कौलेशभैरवी—ज्ञानार्णव के अनुसार कौलेश भैरवी की पूजा-ध्यान आदि सम्पत्प्रदा भैरवी के समान है। इनका मन्त्र है—स्हैं स्ह्क्ल्रीं स्ह्रौं। इसी मन्त्र से इनका पूजन होता है।

सकलसिद्धिदा-भैरवी

ज्ञानार्णवे—

एतस्या एव विद्याया आद्यन्ते रेफवर्जिते ।
तदेयं परमेशानि नाम्ना सकलसिद्धिदा ।
सम्पत्प्रदाभैरवीवद्ध्यानपूजादिकं प्रिये ।।

अस्यार्थ:—कौलेशभैरवी आद्यन्ते रेफवर्जिता चेत्तदा सकलसिद्धिदा भैरवी भवति। ध्यानपूजादिकन्तु सम्पत्प्रदावत्।

सकलसिद्धिदा भैरवी—इनका मन्त्र है—स्हैं स्ह्क्लीं स्हौं। सकलसिद्धिदा भैरवी की पूजा इसी से होती है। ध्यान-पूजनादि सभी सम्प्रत्प्रदा भैरवी के समान होता है।

भयविध्वंसिनी भैरवी

सम्पत्प्रदा भैरवी आद्यन्ते रेफरहिता चेत् तदा भयविध्वंसिनी भैरवी भवति। दक्षिणामूर्तौ तथा दर्शनात्पूजादिकन्तु सम्पत्प्रदावत्।

भयविध्वंसिनी भैरवी—इनका मन्त्र है—'ह्स्रैं ह्स्रीं ह्सौं'। इसी से इनकी पूजा होती है। सब कुछ सम्पत्प्रदा भैरवी के समान है।

चैतन्यभैरवी

ज्ञानार्णवे—

वाग्भवं बीजमुच्चार्य जीवप्राणसमन्वितम् ।
सकला भुवनेशानि द्वितीयं बीजमुद्धरेत् ।।
जीवं प्राणं वह्निसंस्थं शक्रस्वरविभूषितम् ।
विसर्गाढ्यं महेशानि विद्या त्रैलोक्यमातृका ।।

अस्यार्थः—चन्द्रशिवद्वादशस्वरसंयुक्तं विन्दुनादाढ्यम् इति प्रथमं, चन्द्रकाम-पृथ्वीमहामाया इति द्वितीयम्, चन्द्रशिववह्निबीजं चतुर्दशस्वरयुक्तं विसर्गाढ्यञ्च इति तृतीयाम्।

अस्याः पूजायन्त्रं ज्ञानार्णवे—

त्रिकोणञ्चैव षट्कोणं वसुपत्रं वरानने ।
चतुरस्रं चतुर्द्वारमेवं मण्डलमालिखेत् ।।

अस्याः पूजा—प्रातःकृत्यादिकं विधाय आधारशक्त्यादि ह्रीं ज्ञानात्मने नमः इत्यन्तं कर्म समाप्य हृत्पद्मस्य पूर्वादिक्रमेण केशरेषु ॐ वामायै नमः। एवं ज्येष्ठायै रौद्र्यै अम्बिकायै इच्छायै ज्ञानायै क्रियायै कुब्जिकायै चित्रायै विषघ्निकायै भूचर्यै आनन्दायै। मध्ये हसौः सदाशिवमहाप्रेतपद्मासनाय नमः। सम्पत्प्रदाबाला-कौलेशीसकलसिद्धिदाविद्यानां एता वा पीठशक्तयः ज्ञानार्णवोक्तत्वात्।

ततः ऋष्यादिन्यासः—शिरसि दक्षिणामूर्त्तये ऋषये नमः। मुखे पंक्तिच्छन्दसे नमः। हृदि चैतन्यभैरव्यै देवतायै नमः।

ततः कराङ्गन्यासौ—पूर्वबीजमुच्चार्य अंगुष्ठाभ्यां नमः। द्वितीयबीजमुच्चार्य तर्जनीभ्यां स्वाहा। तृतीयबीजमुच्चार्य मध्यमाभ्यां वषट्। पुनः प्रथमबीमुच्चार्य अनामिकाभ्यां हुं। द्वितीयबीजमुच्चार्य कनिष्ठाभ्यां वौषट्। तृतीयबीजमुच्चार्य करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्। एवं हृदयादिषु। तथा च तत्रैव—

द्विरावृत्त्या षडङ्गानि न्यासं सर्वाङ्गरक्षणम् ।

ततो ध्यानम्—

उद्यद्भानुसहस्राभां नानालङ्कारभूषिताम् ।
मुकुटाग्रलसच्चन्द्ररेखां रक्ताम्बरान्विताम् ॥
पाशांकुशधरां नित्यां वामहस्ते कपालिनीम् ।
वरदाभयशोभाढ्यां पीनोन्नतघनस्तनीम् ॥

एवं ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्य शङ्खस्थापनं कृत्वा आधारशक्त्यादिपीठपूजां विधाय वामाज्येष्ठादिपीठशक्तीः पीठमनुञ्च पूजयेत्। ततो भैरव्युक्तगुरुपंक्तीः सम्पूज्य पुनर्ध्यात्वा आवाहनादिपञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं विधाय आवरणपूजामारभेत्। तद्यथा—

अग्निकोणे प्रथमं बीजमुच्चार्य हृदयाय नमः। ईशाने द्वितीयं बीजमुच्चार्य शिरसे स्वाहा। नैर्ऋते तृतीयं बीजमुच्चार्य शिखायै वषट्। वायुकोणे पुनः प्रथमं बीजमुच्चार्य कवचाय हुं। मध्ये द्वितीयं बीजमुच्चार्य नेत्रत्रयाय वौषट्। चतुर्दिक् तृतीयं बीजमुच्चार्य अस्त्राय फट्। ततः पूर्ववद्रत्यादिकं सम्पूज्य अग्रे ॐ वसन्ताय नमः, वामे ॐ कामदेवाय नमः, दक्षिणे ॐ चापाय नमः। ततः पूर्ववद्बाणान् पूजयेत्।

ततः षट्कोणे पूर्वादि ॐ डाकिन्यै नमः। एवं राकिण्यै लाकिन्यै काकिन्यै शाकिन्यै हाकिन्यै इति प्रणवादिनमोऽन्तेन पूजयेत्। ततोऽष्टदलेषु पूर्वादि पूर्वोक्ताननङ्गकुसुमादीन् पूजयेत्। पत्राग्रेषु पूर्वादि ॐ परभृताय नमः, एवं सारसाय शुकाय मेघाह्वयाय मेघाय इति वा अपाङ्गाय भ्रूविलासाय हावाय भावाय। ततः इन्द्रादीन् वज्रादींश्च पूजयेत्। ततो धूपादिविसर्जनान्तं कर्म समापयेत्। अस्य पुरश्चरणं लक्षजपः। तथा च ज्ञानार्णवे—लक्ष्यसंख्याकं जपेन्मन्त्रमित्यादि।

चैतन्यभैरवी—ज्ञानार्णव के अनुसार मन्त्र है—स्हैं स्क्ल्हीं स्हौः। इस मन्त्र को त्रैलोक्यमातृका चैतन्यभैरवी विद्या कहते हैं। ज्ञानार्णव के अनुसार पूजनयन्त्र में त्रिकोण, उसके बाहर षट्कोण, उसके बाहर अष्टदल पद्म, उसके बाहर चार द्वारयुक्त चतुरस्र भूपुर होते हैं।

पूजा—सामान्य पूजापद्धति के अनुसार प्रातःकृत्यादि करके ह्रीं आधारशक्तये से ह्रीं ज्ञानात्मने नमः तक पीठपूजा करे। सामान्य पूजापद्धति परिच्छेद दो में अंकित है। हृदयकमल के केशर में पूर्वादि क्रम से पीठन्यास करे—ॐ वामायै नमः। ॐ ज्येष्ठायै नमः। ॐ रौद्र्यै नमः। ॐ अम्बिकायै नमः। ॐ इच्छायै नमः। ॐ ज्ञानायै नमः। ॐ क्रियायै नमः। ॐ कुब्जिकायै नमः। ॐ चित्रायै नमः। ॐ विषघ्निकायै नमः। ॐ भ्रामर्यै नमः।

ॐ आनन्दायै नमः। तब मध्य पीठ में ह्सौः सदाशिवमहाप्रेतपद्मासनाय नमः से पूजन करे। ज्ञानार्णव की उक्ति के अनुसार सम्पत्प्रदा, बाला, कौलेशी, सकलसिद्धिदा विद्याओं की पीठशक्ति इसी प्रकार की है।

चैतन्यभैरवी यन्त्र
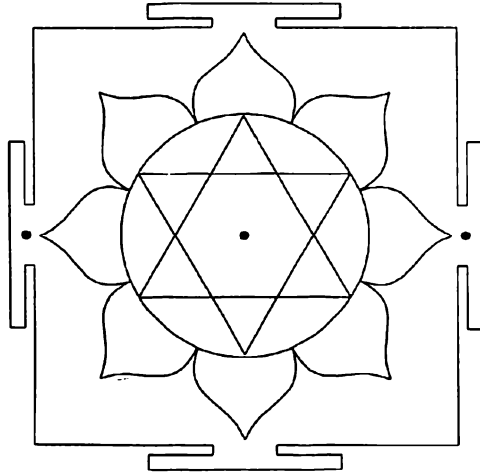
ऋष्यादि न्यास—शिरसि दक्षिणामूर्तिऋषये नमः। मुखे पंक्तिछन्दसे नमः। हृदि चैतन्यभैरवीदेवतायै नमः।

करन्यास—स्हैं अंगुष्ठाभ्यां नमः। स्क्ल्हीं तर्जनीभ्यां स्वाहा। स्ह्रौः मध्यमाभ्यां वषट्। स्हैं अनामिकाभ्यां हुं। स्क्स्ह्रीं कनिष्ठाभ्यां वौषट्। स्ह्रौं करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्।

हृदयादि न्यास—स्हैं हृदयाय नमः। स्क्ल्हीं शिरसे स्वाहा। स्ह्रौः शिखायै वषट्। स्हैं कवचाय हुं। स्क्ल्हीं नेत्रत्रयाय वौषट्। स्ह्रौः अस्त्राय फट्। इस न्यास से सभी अंगों की रक्षा होती है। तब निम्नवत् ध्यान करे—

उद्यद्भानुसहस्राभां नानालङ्कारभूषिताम्।
मुकुटाग्रलसच्चन्द्ररेखां रक्ताम्बरान्विताम्।।
पाशांकुशधरां नित्यां वामहस्ते कपालिनीम्।
वरदाभयशोभाढ्यां पीनोन्नतघनस्तनीम्।।

चैतन्यभैरवी के देह की कान्ति उदीयमान हजारों सूर्यों के समान है। सभी अंग नाना अलंकारों से अलंकृत हैं। मस्तक पर मुकुट और ललाट में चन्द्रकला है। वस्त्र लाल रंग के हैं। चार हाथ हैं। बाँयें हाथों में पाश और अंकुश है। दाँयें हाथों में वर और अभय है। उनके स्तन अति स्थूल और उन्नत हैं।

ध्यान के बाद मानसोपचारों से पूजन करके शंखस्थापन, पीठपूजा, पीठशक्ति और पीठमनु की पूजा, गुरुमण्डलार्चन, पुनः ध्यान-आवाहनादि पञ्च पुष्पाञ्जलि-दान करके आवरण पूजा करे।

षडंग पूजा अग्निकोण में—स्हैं हृदयाय नमः। ईशान में—स्क्ल्हीं शिरसे स्वाहा। नैर्ऋत्य कोण में—स्हौः शिखायै वषट्। वायव्य में— स्हैं कवचाय हुं। मध्य में—स्क्ल्हीं नेत्रत्रयाय वौषट्। चारो ओर—स्हैः अस्त्राय फट्।

इसके बाद त्रिपुरभैरवी की पूजापद्धति में लिखित रत्यादि देवताओं की पूजा करे। तब देवता के आगे ॐ वसन्ताय नमः, बाँयें भाग में ॐ कामदेवाय नमः, दाँयें भाग में ॐ चापाय नमः से पूजा करे। पूर्ववत् पञ्च वाणों की पूजा करे।

षट्कोण में पूर्वादिक्रम से—ॐ डाकिन्यै नमः। ॐ राकिन्यै नमः। ॐ लाकिन्यै नमः। ॐ काकिन्यै नमः। ॐ साकिन्यै नमः। ॐ हाकिन्यै नमः से पूजा करे।

अष्टदल में पूर्वादि क्रम से—ॐ सुभगायै नमः। ॐ भगायै नमः। ॐ भगसर्पिण्यै नमः। ॐ भगमालिन्यै नमः। ॐ अनंगायै नमः। ॐ अनङ्गकुसुमायै नमः। ॐ अनङ्ग-मेखलायै नमः। ॐ अनङ्गमदनायै नमः।

दलों के अग्रभाग में ॐ परभृताय नमः। ॐ सारसाय नमः। ॐ शुकाय नमः। ॐ मेघाह्वयाय नमः। ॐ मेघाय नमः। ॐ अपांगाय नमः। ॐ भ्रूविलासाय नमः। ॐ हावाय नमः। ॐ भावाय नमः।

भूपुर में इन्द्रादि और वज्रादि की पूजा करके धूपादि से विसर्जन तक की क्रिया करके पूजा पूर्ण करे। पुरश्चरण में इस मन्त्र का जप एक लाख है। ज्ञानार्णव के अनुसार भी इतना ही जप अपेक्षित है।

कामेश्वरीभैरवी

ज्ञानार्णवे—

कामेश्वरी च रुद्रार्णा पूर्वसिंहासने स्थिता।
एतस्या एव विद्याया बीजद्वयमुदाहृतम्॥
तदन्ते परमेशानि नित्यक्लिन्ने मदद्रवे।
एतस्या एव तार्तीयं रुद्रार्णा परमेश्वरी॥
पूजाध्यानादिकं सर्वं चैतन्या इव पूर्ववत्।
त्रिकोणेषु विशेषोऽस्ति कथयामि वरानने॥
अग्रकोणे क्रमेणैव नित्यां क्लिन्नां मदद्रवाम्।
षडङ्गावरणं पश्चात् पूजयेत् सर्वसिद्धये॥

कामेश्वरी भैरवी—ज्ञानार्णव में लिखा है कि कामेश्वरी भैरवी पञ्च सिंहासनों में से

एक पूर्व दिशा में स्थित सिंहासन पर विराजमान रहती हैं। इनका ग्यारह अक्षरों का मन्त्र है—स्हैं स्क्ल्ह्रीं नित्यक्लिन्ने मदद्रवे स्ह्रौः। इसी मन्त्र से इनकी पूजा होती है। इनका ध्यान-पूजनादि चैतन्यभैरवी की पूजापद्धति से होता है। केवल आवरणपूजा में थोड़ा अन्तर है। वह अन्तर यह है कि त्रिकोण के अग्रादि कोणों में क्रमशः ॐ नित्यायै नमः, ॐ क्लिन्नायै नमः, ॐ मदद्रवायै नमः से पूजा के बाद षडंग पूजन होता है। तब अन्य पूजा करके समापन होता है।

षट्कूटाभैरवी

ज्ञानार्णवे—

डाकिनी राकिणी बीजे लाकिनी काकिनी युगम् ।
शाकिनी हाकिनी बीजे आहृत्य सुरसुन्दरि ।।
आद्यमैकारसंयुक्तमन्यदीकारमण्डितम् ।
शत्रुस्वरान्वितं देवि तार्तीयं बीजमालिखेत् ।
विन्दुनादकलाक्रान्तं तृतीयं शैलसम्भवे ।।

तृतीयं बीजं सविसर्गमिति केचित्। तन्त्रान्तरे—

उरौ क्ष्मामादनं बीजं शिवमत्र त्रिधा लिखेत् ।
अर्केण मायाशक्राभ्यां क्रमं तन्मण्डितं कुरु ।
विन्दुनादान्वितञ्चाद्ययुग्ममन्त्यं विसर्गवत् ।।
ध्यानमस्याः प्रवक्ष्यामि सर्वभूतनिकृन्तनम् ।
बालसूर्यप्रभां देवीं जवाकुसुमसन्निभाम् ।
मुण्डमालावलीरम्यां बालसूर्यसमांशुकाम् ।।
सुवर्णकलशाकारपीनोन्नतपयोधराम् ।
पाशांकुशौ पुस्तकञ्च तथा च जपमालिकाम् ।।

दधतीमिति शेषः।

द्विरावृत्त्या षडङ्गानि विधाय परमेश्वरि ।
यन्त्रमस्याः प्रवक्ष्यामि त्रिकोणं तत्पुटं लिखेत् ।।
बहिरष्टदलं पद्मं रविपत्रं ततो लिखेत् ।
चतुरस्रं चतुर्द्वारमेवं मण्डलमालिखेत् ।।
षडङ्गावरणं देवि पूर्ववत् पूजयेत् शिवे ।
रत्यादित्रितयं देवि त्रिकोणे परिपूजयेत् ।।
डाकिन्याद्यस्तु षट्कोणे वसुपत्रे ततः परम् ।
ब्राह्म्यादियुगलं पश्चात् रविपत्रे ततः परम् ।।

बालाया: पीठशक्तिस्तु वामाद्य: पूजयेत्क्रमात् ।
चतुरस्रे लोकपालान् सायुधान् परमेश्वरि ।
अनेनैव विधानेन नित्याख्यां भैरवीं यजेत् ।।

षट्कूटा भैरवी—ड्र्ल्क्स्हैं ड्र्ल्क्स्हीं ड्र्ल्क्स्हौं—इन तीन कूटों का इनका मन्त्र है। कोई-कोई तृतीय बीज को ड्र्ल्क्स्हौ: के रूप में ग्रहण करते हैं।

ज्ञानार्णव में वर्णन है कि डाकिनीबीज 'ड', राकिनीबीज 'र', लाकिनीबीज 'ल', काकिनीबीज 'क', साकिनीबीज 'स' और हाकिनीबीज 'ह' को एकत्र करके प्रथम बीज में ऐकार, द्वितीय बीज में ईकार और तृतीय बीज में औकार जोड़कर प्रत्येक को बिन्दु युक्त करे तो यह मन्त्र बन जाता है। किसी के मत से तृतीय बीज में विसर्ग को लगाया जाता है। इनका ध्यान निम्नवत् है—

बालसूर्यप्रभां देवीं जवाकुसुमसन्निभाम् ।
मुण्डमालावलीरम्यां बालसूर्यसमांशुकाम् ।।
सुवर्णकलशाकारपीनोन्नतपयोधराम् ।
पाशांकुशौ पुस्तकञ्च तथा च जपमालिकाम् ।।

षट्कूटा भैरवी उदीयमान सूर्य के समान लाल वर्ण की हैं। उनका वर्ण अड़हुल के फूलों के समान लाल है। गले में मनोहर मुण्डमाला है। उनके वस्त्र अरुण रंग के हैं। स्वर्णकुम्भ के समान स्थूल और उन्नत उरोज हैं। हाथों में पाश, अंकुश, पुस्तक और जपमाला है।

करन्यास—ड्र्ल्क्स्हैं अंगुष्ठाभ्यां नम:। ड्र्ल्क्स्हीं तर्जनीभ्यां स्वाहा। ड्र्ल्क्स्हौं मध्यमाभ्यां वषट्। ड्र्ल्क्स्हैं अनामिकाभ्यां हुं। ड्र्ल्क्स्हौं कनिष्ठाभ्यां वौषट्। ड्र्ल्क्स्हौं करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्।

हृदयादि न्यास—ड्र्ल्क्स्हैं हृदयाय नम:। ड्र्ल्क्स्हीं शिरसे स्वाहा। ड्र्ल्क्स्हौं शिखायै वषट्। ड्र्ल्क्स्हैं कवचाय हुं। ड्र्ल्क्स्हीं नेत्रत्रयाय वौषट्। ड्र्ल्क्स्हौं अस्त्राय फट्। यह न्यास दो बार करे।

षट्कूटा भैरवी के पूजनयन्त्र में त्रिकोण, इसके बाहर षट्कोण, इसके बाहर अष्टदल, इसके बाहर द्वादशदल पद्म और इसके बाहर चारद्वार युक्त चतुरस्र भूपुर होता है। (चित्र अगले पृष्ठ पर अंकित है।)

ध्यान के बाद मानसोपचार पूजन करके शंखस्थापन, पीठपूजा, पीठशक्ति पूजा, गुरुमण्डलार्चन के बाद पुन: ध्यान-आवाहनादि से पञ्च पुष्पाञ्जलि-दान तक के कार्य करके आवरण पूजा करे।

षडंग पूजन—ड्र्ल्क्स्हैं हृदयाय नम:। ड्र्ल्क्स्हीं शिरसे स्वाहा। ड्र्ल्क्स्हौं शिखायै

वषट्। ड्र्ल्क्स्हैं कवचाय हुं। ड्र्ल्क्स्हीं नेत्रत्रयाय वौषट्। ड्र्ल्क्स्हौं अस्त्राय फट्।

त्रिकोण में ऐं रत्यै नम:। क्लीं प्रीत्यै नम:। सौ: मनोभवायै नम: से पूजा करे। षट्-कोण में ॐ डाकिन्यै नम:। ॐ राकिन्यै नम:। ॐ लाकिन्यै नम:। ॐ काकिन्यै नम: ॐ साकिन्यै नम:। ॐ हाकिन्यै नम: से पूजा करे।

अष्टदल में इनकी पूजा करे—ॐ असितांगब्राह्मीभ्यां नम:। ॐ रुरुमाहेश्वरीभ्यां नम:। ॐ चण्डकौमारीभ्यां नम:। ॐ क्रोधभैरवीभ्यां नम:। ॐ उन्मत्तवाराहीभ्यां नम:। ॐ कपालीन्द्राणीभ्यां नम:। ॐ भीषणचामुण्डाभ्यां नम:। ॐ संहारमहालक्ष्मीभ्यां नम:। द्वादश दल में इनकी पूजा करे—ॐ वामायै नम:। ॐ ज्येष्ठायै नम:। ॐ रौद्र्यै नम:। ॐ अम्बिकायै नम:। ॐ इच्छायै नम:। ॐ ज्ञानायै नम:। ॐ क्रियायै नम:। ॐ कुब्जिकायै नम:। ॐ विचित्रायै नम:। ॐ विषघ्निकायै नम:। ॐ भूचर्यै नम:। ॐ आनन्दायै नम:। चतुरस्र भूपुर में इन्द्रादि दश दिक्पालों और वज्रादि दश आयुधों का पूजन करे।

षट्कूटाभैरवी यन्त्र
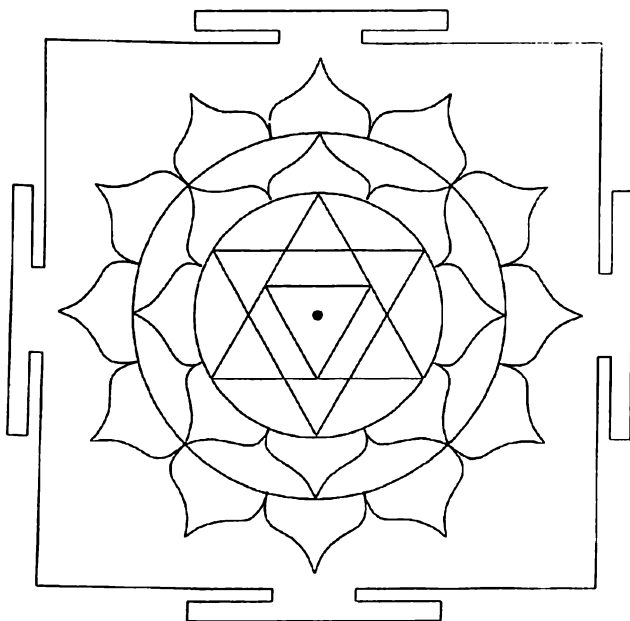
नित्याभैरवी

ज्ञानार्णवे—

एतस्या एव विद्याया: षड्वर्णान् क्रमश: स्थितान् ।

विपरीतान् तथा प्रौढे विद्येयं भोगमोक्षदा ।
न्यासपूजादिकं सर्वमस्याः पूर्ववदाचरेत् ॥

नित्या भैरवी—इनका मन्त्र है—ह्स्क्ल्र्डैं ह्स्क्ल्र्डीं ह्स्क्ल्र्डौं। इसी मन्त्र से नित्या भैरवी की पूजा करे। ज्ञानार्णव में वर्णन है कि षट्कूटा भैरवी के मन्त्रबीजों वर्णों के विलोम उच्चारण से नित्या भैरवी का मन्त्र बनता है। इनकी पूजा षट्कूटा भैरवी की पूजापद्धति से की जाती है।

रुद्रभैरवी

ज्ञानार्णवे—

शिवचन्द्रौ मदनान्तं पान्तं वह्निसमन्वितम् ।
शक्तिभिन्नं विन्दुनादकलाढ्यं वाग्भवं प्रिये ॥
सम्पत्प्रदायै भैरव्याः कामराजं तदेव हि ।
सदाशिवस्य बीजन्तु महासिंहासनस्य च ।
एषा विद्या महेशानि वर्णितुं नैव शक्यते ॥

अस्यार्थः—शिवचन्द्रकान्तपान्तवह्नियुक्तम् एकादशस्वरविशिष्टं विन्दुनादकलान्वितं वाग्भवं बीजम्। शिवचन्द्रकामपृथ्वीवह्निचतुर्थस्वरविशिष्टं नादविन्दुकलान्वितं कामराजबीजं प्रेतबीजं शक्तिकूटं तृतीयम्। अस्याः पूजायन्त्रम्—

त्रिकोणञ्चैव वृत्तञ्च वृत्ताष्टदलपङ्कजम् ।
वृत्तभूमण्डलञ्चेति······················॥ इत्यादि।

अस्याः पूजा—प्रातःकृत्यादिप्राणायामान्तं विधाय चैतन्यभैरवीवत् पीठन्यासं कुर्यात्। यथा—

आधारशक्त्यादि ह्रीं ज्ञानात्मने नमः इत्यन्तं विन्यस्य, पूर्वादिक्रमेण ॐ वामायै नमः। एवं ज्येष्ठायै रौद्र्यै काल्यै कलविकरिण्यै बलप्रमथिन्यै सर्वभूतदमन्यै। मध्ये ॐ मनोन्मन्यै इति पीठशक्तीर्विन्यस्य पीठमनुं न्यसेत्। अत्र पीठमन्त्रस्तु—

अघोरे ऐं घोरे ह्रीं सर्वतः सर्वसर्वेभ्यो घोरघोरतरे श्रीं नमोऽस्तु रुद्ररूपेभ्यः ऐं ह्रीं श्रीं। तथा च ज्ञानार्णवे—

अघोरे वाग्भवं पश्चाद् घोरे तु भुवनेश्वरी ।
सर्वतः सर्वसर्वेभ्यो घोर-घोरतरे रमाम् ॥
नमोऽस्तु रुद्ररूपेभ्यो देव्या बीजत्रयं लिखेत् ।
त्रिंशद्भिश्च त्रिभिर्वर्णैर्विद्येयं कथिता प्रिये ॥

ततः ऋष्यादिन्यासः—शिरसि दक्षिणामूर्तये ऋषये नमः। मुखे पंक्तिच्छन्दसे

नमः। हृदि रुद्रभैरव्यै देवतायै नमः।

ततः कराङ्गन्यासौ—प्रथमं बीजमुच्चार्य अंगुष्ठाभ्यां नमः। द्वितीयं बीजमुच्चार्य तर्जनीभ्यां स्वाहा। तृतीयं बीजमुच्चार्य मध्यमाभ्यां वषट्। पुनः प्रथमं बीजमुच्चार्य अनामिकाभ्यां हुं। द्वितीयं बीजमुच्चार्य कनिष्ठाभ्यां वौषट्। तृतीयं बीजमुच्चार्य करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्। एवं हृदयादिषु। ततो ध्यानम्—

उद्यद्भानुसहस्राभां चन्द्रचूडां त्रिलोचनाम् ।
नानालङ्कारसुभगां सर्ववैरिनिकृन्तनीम् ॥
वमद्रुधिरमुण्डालीकलितां रक्तवाससीम् ।
त्रिशूलं डमरुं खड्गं तथा खेटकमेव च ॥
पिनाकञ्च शरान् देवीं पाशांकुशयुगं क्रमात् ।
पुस्तकञ्चाक्षमालाञ्च शिवसिंहासनस्थिताम् ॥

एवं ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्य पूर्ववत् शङ्खस्थापनं कुर्यात्। ततश्चैतन्यभैरव्युक्त-पीठपूजां विधाय एतन्मन्त्रोक्तपीठमन्त्रेण पीठं सम्पूज्य पुनर्ध्यात्वा आवाहनादिपञ्च-पुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं विधाय, आवरणपूजामारभेत्। यथा—

अग्निकोणे प्रथमं बीजमुच्चार्य हृदयाय नमः। ईशाने द्वितीयं बीजमुच्चार्य शिरसे स्वाहा। नैर्ऋते तृतीयं बीजमुच्चार्य शिखायै वषट्। वायौ पुनः प्रथमं बीज-मुच्चार्य कवचाय हुम्। मध्ये पुनर्द्वितीयं बीजमुच्चार्य नेत्रत्रयाय वौषट्। चतुर्दिक्षु पुनस्तृतीयं बीजमुच्चार्य अस्त्राय फट्। ततस्त्रिकोणे रत्यादिकमभ्यर्च्य पत्रमूले अनङ्ग-कुसुमादिकं पूजयेत्। पत्रेषु पूर्वादि असिताङ्गब्राह्म्यादीन् सम्पूज्य भूगृहे इन्द्रादि-लोकपालान् वज्रादींश्च पूजयेत्। ततो धूपादिविसर्जनान्तं कर्म समापयेत्। अस्य पुरश्चरणं लक्षजपः। तथा च—

लक्षं सम्पूज्य मन्त्रज्ञो मन्त्रं मन्त्रविदां वरः ।

इति वचनात्।

रुद्रभैरवी—ह्स्ख्फ्रें ह्स्क्ल्रीं ह्सौः रुद्रभैरवी का मन्त्र है। इसी मन्त्र से इनकी पूजा होती है—पूजन यन्त्र इस प्रकार का होता है पहले त्रिकोण बनावे। उसके बाहर दो वृत्त बनावे और बाहर अष्टदल पद्म बनावे। इसके बाहर वृत्त और चार द्वारयुक्त चतुरस्र भूपुर बनावे।

सामान्य पूजा पद्धति से प्रात:कृत्यादि से प्राणायाम तक के सभी कर्मों को करके निम्न प्रकार से पीठन्यास करे—

पहले आधारशक्ति से ह्रीं ज्ञानात्मने नमः तक पीठ में न्यास करे। तब पूर्वादि क्रम से पीठशक्तियों का न्यास करे। जैसे—ॐ वामायै नमः। ॐ ज्येष्ठायै नमः। ॐ रौद्र्यै

नम:। ॐ काल्यै नम:। ॐ कलविकरिण्यै नम:। ॐ बलविकरिण्यै नम:। ॐ बलप्रमथिन्यै नम:। ॐ सर्वभूतदमन्यै नम:। मध्य में—ॐ मनोन्मन्यै नम:। इसके बाद पीठमन्त्र का न्यास करे—अघोरे ऐं घोरे ह्रीं सर्वत: सर्वसर्वेभ्यो घोरघोरतरे श्रीनमोऽस्तु रुद्ररूपेभ्य: ऐं ह्रीं श्रीं।

ऋष्यादि न्यास—शिरसि दक्षिणामूर्तिऋषये नम:। मुखे पंक्तिच्छन्दसे नम:। हृदये रुद्रभैरव्यै देवतायै नम:।

करन्यास—ह्स्ख्फ्रें अंगुष्ठाभ्यां नम:। ह्स्क्ल्रीं तर्जनीभ्यां स्वाहा। ह्सौ: मध्यमाभ्यां वषट्। ह्स्ख्फ्रें अनामिकाभ्यां हुं। ह्स्क्ल्रीं कनिष्ठाभ्यां वौषट्। ह्सौं करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्।

हृदयादि न्यास—ह्स्ख्फ्रें हृदयाय नम:। ह्स्क्ल्रीं शिरसे स्वाहा। ह्सौ: शिखायै वषट्। ह्स्ख्फ्रें कवचाय हुं। ह्स्क्ल्रीं नेत्रत्रयाय वौषट्। ह्सौ: अस्त्राय फट्।

न्यास करने के पश्चात् निम्नवत् ध्यान करे—

उद्यद्भानुसहस्राभां चन्द्रचूडां त्रिलोचनाम् ।
नानालङ्कारसुभगां सर्ववैरिनिकृन्तनीम् ।।
वमद्रुधिरमुण्डालीकलितां रक्तवाससीम् ।
त्रिशूलं डमरुं खड्गं तथा खेटकमेव च ।।
पिनाकञ्च शरान् देवीं पाशांकुशयुगं क्रमात् ।
पुस्तकञ्चाक्षमालाञ्च शिवसिंहासनस्थिताम् ।।

रुद्रभैरवी के शरीर की कान्ति हजार उदीयमान सूर्यों के समान लाल वर्णों की है। ललाट पर चन्द्रकला है। तीन नेत्र हैं। नाना आभूषणों से विभूषित हैं। सर्वशत्रुविनाशिनी हैं। रुधिर वमन करते हुए मुण्डों की माला पहनी हुई हैं। इनके वस्त्र लाल रंग के हैं। हाथों में त्रिशूल, डमरु, खड्ग, गदा, धनुष, वाण, दो पाश, दो अंकुश, पुस्तक और अक्षमाला है। शिवसिंहासन पर विराजमान हैं।

ध्यान के बाद मानसोपचारों से पूजन करके शंखस्थापन करे। इसके बाद चैतन्य भैरवी के समान पीठदेवता की पूजा करे। पुन: ध्यान-आवाहनादि से पञ्च पुष्पाञ्जलि तक के सभी कार्य करके आवरण पूजा करे।

केशर में षडंग पूजा करे। अग्निकोण में ह्स्ख्फ्रें हृदयाय नम:, ईशान कोण में ह्स्क्ल्रीं शिरसे स्वाहा। नैर्ऋत्य कोण में ह्सौ: शिखायै वषट्। वायव्य कोण में ह्स्ख्फ्रें कवचाय हुं। बीच में ह्स्क्ल्रीं नेत्रत्रयाय वौषट्। चारो ओर ह्सौ: अस्त्राय फट्।

त्रिकोण के तीनों कोणों में ऐं रत्यै नम:, क्लीं प्रीत्यै नम:, सौ: मनोभवायै नम: से पूजन करे।

अष्टदल में—ॐ असितांगब्राह्मीभ्यां नमः। ॐ रुरुमाहेश्वरीभ्यां नमः। ॐ चण्डकौमारीभ्यां नमः। ॐ क्रोधवैष्णवीभ्यां नमः। ॐ कपालीन्द्राणीभ्यां नमः। ॐ भीषणचामुण्डाभ्यां नमः। ॐ संहारमहालक्ष्मीभ्यां नमः। अष्टभैरव और अष्टमातृकाओं का पूजन करे। भूपुर में इन्द्रादि और वज्रादिकों की पूजा करे। इसके बाद धूपादि से विसर्जन तक की क्रिया पूर्ण करे।

पुरश्चरण में एक लाख जप एवं दश हजार हवन पलाश के फूलों से करे।

त्रिपुरभैरवी यन्त्र
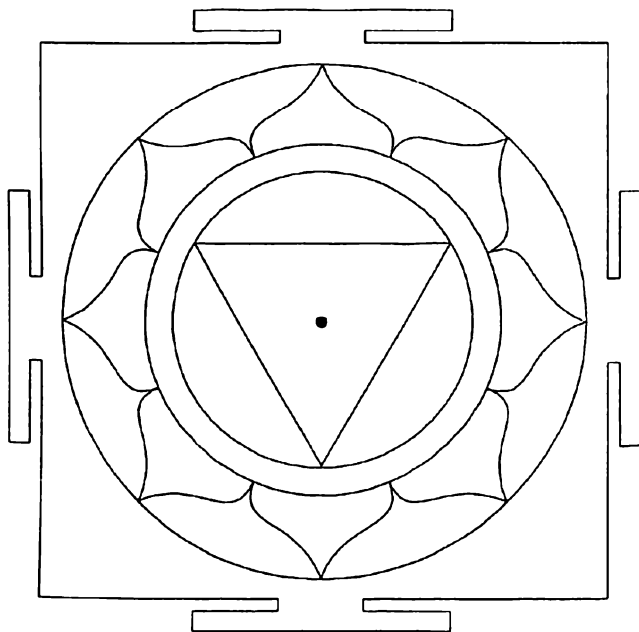
भुवनेश्वरीभैरवी

ज्ञानार्णवे—

हसाद्यं वाग्भवञ्चाद्यं हसकान्ते सुरेश्वरि ।
भूबीजं भुवनेशानी द्वितीयं बीजमुद्धृतम् ।
शिवचन्द्रौ महेशानि भुवनेशी च भैरवी ॥

तथा च त्रिपुरार्णवे—

हंसास्त्रयो दन्त्यसकाररूढा वस्वब्धिपंक्तिस्वरसंविभिन्नाः ।
आदौ सविन्दुं परतो विसर्गी मध्यो विरञ्चीन्द्रहराग्नियुक्तः ॥

अस्यार्थः—शिवचन्द्रवाग्भवमिति प्रथमं बीजम्। शिवचन्द्रकामपृथिवीमहामाया इति द्वितीयं बीजम्। शिवचन्द्रचतुर्दशस्वरः सविसर्ग इति तृतीयं बीजम्। अस्याः पूजायन्त्रं चैतन्यभैरवीवद्बोध्यम्।

पूजनन्तु—प्रातःकृत्यादिप्राणायामान्तं विधाय चैतन्यभैरव्युक्तपीठन्यासं कृत्वा ऋष्यादिन्यासं कुर्यात्। यथा—शिरसि दक्षिणामूर्तये ऋषये नमः। मुखे पंक्तिच्छन्दसे नमः। हृदि भुवनेश्वरीभैरव्यै देवतायै नमः। ततः कराङ्गन्यासौ; तथा च ज्ञानार्णवे—

षड्दीर्घभाजा मध्येन कुर्यादङ्गक्रियां मनोः ।

तेन षड्दीर्घयुक्तेन मध्यबीजेन कराङ्गन्यासः। यथा—हस्क्ल्ह्रां अंगुष्ठाभ्यां नमः। एवं हस्क्ल्ह्रीं तर्जनीभ्यां स्वाहा इत्यादिना न्यसेत्। एवं हृदयादिषु। ततो ध्यानम्—

जवाकुसुमसङ्काशां दाडिमीकुसुमोपमाम् ।
चन्द्ररेखां जटाजूटां त्रिनेत्रां रक्तवाससीम् ॥
नानालङ्कारसुभगां पीनोन्नतघनस्तनीम् ।
पाशांकुशवराभीतीर्धारयन्तीं शिवां श्रये ॥

अन्यत् सर्वं चैतन्यभैरवीवत् करणीयम्। भुवनेश्या भेदान्तरम्—

भुवनेश्याश्च भैरव्या भेदान्तरमथोच्यते ।
सहाद्या सैव देवेशि तथा सा सकलेश्वरी ।
ध्यानपूजादिकं सर्वमेतस्या एव पूर्ववत् ॥

इयं सहाद्या चेत् सकलेश्वरी। ध्यानपूजादिकन्तु पूर्ववत्।

भुवनेश्वरी भैरवी—ज्ञानार्णव और त्रिपुरार्णव के अनुसार भुवनेश्वरी भैरवी का मन्त्र है—ह्सैं ह्स्क्ल्ह्रीं ह्सौः। पूजन यन्त्र चैतन्य भैरवी के समान है।

सामान्य पूजापद्धति से प्रातःकृत्य से प्राणायाम तक करके चैतन्य भैरवी की पूजा में लिखित विधि से पीठन्यास तक के सभी कार्य करे। तब न्यास करे।

ऋष्यादि न्यास—शिरसि दक्षिणामूर्तिऋषये नमः। मुखे पंक्तिच्छन्दसे नमः। हृदि भुवनेश्वरीभैरव्यै देवतायै नमः।

करन्यास—ह्स्क्ल्ह्रां अंगुष्ठाभ्यां नमः। ह्स्क्ल्ह्रीं तर्जनीभ्यां स्वाहा। ह्स्क्ल्ह्रूं मध्यमाभ्यां वषट्। ह्स्क्ल्ह्रैं अनामिकाभ्यां हुं। ह्स्क्ल्ह्रौं कनिष्ठाभ्यां वौषट्। ह्स्क्ल्ह्रः करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्।

हृदयादि न्यास—ह्स्क्ल्ह्रां हृदयाय नमः। ह्स्क्ल्ह्रीं शिरसे स्वाहा। ह्स्क्ल्ह्रूं शिखायै वषट्। ह्स्क्ल्ह्रैं कवचाय हुं। ह्स्क्ल्ह्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्। हस्क्ल्ह्रः अस्त्राय फट्।

न्यासोपरान्त ध्यान करे—

जवाकुसुमसङ्काशां दाडिमीकुसुमोपमाम् ।
चन्द्ररेखां जटाजूटां त्रिनेत्रां रक्तवाससीम् ।।
नानालङ्कारसुभगां पीनोन्नतघनस्तनीम् ।
पाशांकुशवराभीतीर्धारयन्तीं शिवां श्रये ।।

भुवनेश्वरी भैरवी का वर्ण अड़हुल के फूल और अनार के फूल के समान लाल है। ललाट पर चन्द्रकला है। मस्तक पर बालों का चूड़ा है। आँखें तीन हैं। वस्त्र लाल है। नाना अंलकारों से अलंकृत हैं। स्तन स्थूल और उन्नत हैं। हाथों में पाश, अंकुश, वर और अभयमुद्रा है।

ध्यान के बाद शेष पूजा चैतन्य भैरवी की पूजा पद्धति से करे। मन्त्रान्तर है—स्हैं ह्स्क्ल्ह्रीं स्हौः। इस मन्त्र से भी पूजा हो सकती है। इनकी पूजा पद्धति भुवनेश्वरी भैरवी के समान है।

त्रिपुराबालामन्त्रः

शारदायाम्—

अधरो विन्दुमानाद्यं ब्रह्मेन्द्रस्थः शशीयुतः ।
द्वितीयं भृगुसर्गाढ्यो मनुस्तार्तीय ईरितः ।
एषा बालेति विख्याता त्रैलोक्यवशकारिणी ॥

अस्यार्थः—वाग्भवं कामबीजं चन्द्रबीजञ्च सविसर्गं चतुर्दशस्वरयुक्तम्। अस्याः पूजादिकन्तु त्रिपुराभैरवीवत्, शारदायामुक्तत्वात्। ज्ञानार्णवे तु विशेष उक्तः। न्यासादिकन्तु एतद्बीजेनैव कर्त्तव्यम्। यथा—

षडङ्गमाचरेद्देवि द्विरावृत्त्या क्रमेण तु ।

अस्य पुरश्चरणं त्रिलक्षजपः। तथा च ज्ञानार्णवे—

वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रं दशांशं हवनं भवेत् ।
तर्पणन्तु तथा कुर्यात्सर्वसौभाग्यभाग्भवेत् ॥

इतरेषां लक्षजपः श्रीविद्योक्तत्वात् ।

त्रिपुरा बाला का मन्त्र है—ऐं क्लीं सौः। इस मन्त्र से त्रिपुरा बाला भैरवी की पूजादि करे। करांग न्यास इस प्रकार करे—

करन्यास—ऐं अंगुष्ठाभ्यां नमः। क्लीं तर्जनीभ्यां स्वाहा। सौः मध्यमाभ्यां वषट्। ऐं अनामिकाभ्यां हुं। क्लीं कनिष्ठाभ्यां वौषट्। सौः करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्।

हृदयादि न्यास—ऐं हृदयाय नमः। क्लीं शिरसे स्वाहा। सौः शिखायै वषट्। ऐं कवचाय हुं। क्लीं नेत्रत्रयाय वौषट्। सौः अस्त्राय फट्।

इनकी पूजा त्रिपुरभैरवी की पूजा के समान होती है। ऐसा मत ज्ञानार्णव एवं 'शारदातिलक' का है। शारदातिलक और ज्ञानार्णव के अनुसार इस मन्त्र का पुरश्चरण तीन लाख जप, जप का दशांश तीस हजार हवन और हवन का दशांश तीन हजार तर्पण से होता है। श्रीविद्यार्णव के अनुसार एक लाख ही जप होता है। इसका साधक सर्वसौभाग्यशाली होता है।

मन्त्रान्तरम्

ज्ञानार्णवे—

सूर्यस्वरं समुच्चार्य विन्दुनादकलात्मकम् ।
स्वरान्तं पृथिवीसंस्थं तुर्यस्वरसमन्वितम् ॥
विन्दुनादकलाक्रान्तं सर्गवान् भृगुरव्ययः ।
शक्रस्वरसमायुक्ता विद्येयं त्र्यक्षरी मता ॥

अव्ययो विन्दुः। दक्षिणामूर्तिसंहितायामप्येवम्। एषा विसर्गविन्द्वन्ता शप्ता। एतां विद्यामधिकृत्य सारसमुच्चयादौ शापबोधनात्। तद्यथा—

विद्यामूलोत्पत्तिरेषा मयोक्ता ज्ञातव्येयं सर्वदा सिद्धिकामैः ।
देव्या शप्ता येन विद्येयमाद्या पूर्वं तेन प्राणहीना भवेत्सा ॥ इति।

मुण्डमालातन्त्रेऽपि—

कुमारी या च विद्येयं त्वया शप्ता पतिव्रते ।
तथाद्येन तु लुप्ताऽसौ मध्यमेन तु कीलिता ।
अन्तिमेन तु सम्भिन्ना तेन विद्या न सिध्यति ॥

न चैवं शारदोक्तविद्यापि शप्ता स्यादिति वाच्यम्। तस्या ज्ञानार्णवोक्त-विन्दुघटितस्य शप्तव्यत्वात्। शापोद्धारमाह मुण्डमालातन्त्रे—

केवलं शिवरूपेण शक्तिरूपेण केवलम् ।
मया प्रतिष्ठिता विद्या.................॥ इति।

तेन हकारसकारौ वाग्भवे कामराजे च तृतीयबीजे च हकारः। वक्ष्यमाण-सारसमुच्चये तथा दर्शनात्। त्रिपुरासारेऽपि—

शिवशक्तिबीजमतएव शम्भुना निहितं तयोरुपरि पूर्वबीजयोः ।
स्वकुलं परोपरि च मध्यमाधरे दहनं ततःप्रभृति सोऽर्जिताभवत् ॥

मध्यमाधारे मध्यबीजस्य पश्चात्। रुद्रयामलेऽपि—

वाग्भवं प्रथमं देवि कामबीजं द्वितीयकम् ।
तृतीयं शक्तिबीजन्तु शिवयुक्तं सदा भवेत् ॥
एषा बाला समाख्याता सर्वदोषविवर्जिता ।

(आदिबीजं भवेन्मध्ये मध्यञ्चादौ नियोजयेत् ।
एवं यो जपते मन्त्रं त्रैलोक्यैश्वर्यभाग्भवेत् ।।
साध्यमध्येऽन्तिमं मध्ये मध्यञ्चादौ नियोजयेत् ।
एवं कृत्वा जपेन्मन्त्रं सर्वसिद्धिमवाप्नुयात् ।।)

मन्त्रान्तरं श्रीक्रमे—

वाग्भवं क्लेदिनीबीजमीकारान्तं पठेत् ।
शक्तिमौकारसंयुक्तं विसर्गं तदधः पठेत् ।
विन्दुनादशिखाक्रान्तं बीजं परमदुर्लभम् ।।
एतद्बीजत्रयं देवि सौः क्लीञ्च तदनन्तरम् ।
इयं पञ्चाक्षरी विद्या कथिता भुवि दुर्लभा ।।

मन्त्रान्तरं तत्रैव—

बालाबीजत्रयं देवि हंसाद्यं वा जपेत्सुधीः ।
हंसान्तं वा महाभागे सुप्तादिदोषशुद्धये ।।

अत्रैव— पाशबीजं महेशानि शक्तिशैवं सवह्निकम् ।
द्वादशस्वरसंयुक्तं नादविन्दुविभूषितम् ।।
कामराजं प्रवक्ष्यामि ह्लींकारं शक्तिशैवकम् ।
मादनञ्चेन्द्रबीजञ्च वह्निवामाक्षिविन्दुमत् ।।
शक्तिकूटं महादेवि क्रीङ्कारं शक्तिशैवकम् ।
वह्निबीजं मनोर्युक्तं नादविन्दुससर्गकम् ।।
चतुर्दशाक्षरी विद्या षोडशीं शृणु चाम्बिके ।
हंसबीजं ततः पश्चात्षोडशी कथिता मया ।।

त्रिपुरा बाला का अन्य मन्त्र—इनका दूसरा मन्त्र है—ऐं सौः क्लीं। यह ज्ञानार्णव के अनुसार है। दक्षिणा- मूर्तिसंहिता के अनुसार यह मन्त्र अभिशप्त है। शापविमोचन के बाद जप का अधिकार होता है। यह विद्या उत्पत्ति का मूल है। सिद्धिकामियों को यह जानने योग्य है। इसीलिये देवी के द्वारा इसे शापित कर दिया गया है।

मुण्डमालातन्त्र के अनुसार शिवजी कहते हैं कि हे पतिव्रते ! तुमने कुमारी विद्या को शापित किया। इससे आद्य अक्षर लुप्त हो गया। मध्य अक्षर कीलित हो गया और अन्तिम बीज सम्भिन्न है। इसलिये यह विद्या सिद्ध नहीं होती। शारदातिलक के अनुसार भी यह विद्या अभिशप्त है। ज्ञानार्णवोक्त विधि से शापविमुक्त होता है। मुण्डमाला के अनुसार केवल शिव रूप से और केवल शक्ति रूप ही से यह विद्या प्रतिष्ठित होती है। इससे ह्सैं क्लीं हः से इसका शाप दूर होता है। सारसमुच्चय से भी यह समर्थित है। त्रिपुरासार

का भी यही मत है। रुद्रयामल के अनुसार ऐं क्लीं सौः सदैव शिवयुक्त होता है। यही बालामन्त्र सभी दोषों से मुक्त है। क्लीं ऐं सौः का जो जप करता है, वह तीनों लोकों में ऐश्वर्य प्राप्त करता है। क्लीं सौः ऐं का जो जप करता है, उसे सभी सिद्धियाँ मिलती हैं।

ऐं क्लीं सौः सौः क्लीं—यह पञ्चाक्षर मन्त्र परम दुर्लभ है, ऐसा कहा जाता है। हंसः ऐं क्लीं सौः एवं ऐं क्लीं सौः हंसः—इन दोनों मन्त्रों के जप से बालामन्त्रों के सुप्तादि दोषों की शुद्धि होती है।

आं सहरैः ह्रीं सहकलरीं क्रों सहरौं—यह भगवती बाला का चतुर्दशाक्षर मन्त्र है।

आं सहरैं ह्रीं सहकलरीं क्रों सहरौं हंसः—यह षोडशाक्षर मन्त्र है।

नवकूटाबाला

तत्रैव—

बालाबीजत्रयं देवि कूटत्रयं नवाक्षरी ।
वियत्कूटत्रयं देवि भैरव्या नवकूटकम् ॥

मन्त्रान्तरं श्रीक्रमे—

शिवः शक्तिश्च वाग्बीजं नादविन्दुकलान्वितम् ।
वाग्भवं कथितं देवि कामराजं शृणु प्रिये ॥
शिवशक्तिमादनेन्द्रवह्निमायासमन्वितम् ।
नादविन्दुकलाक्रान्तं कूटं परमदुर्लभम् ॥
शिवश्चन्द्रश्च सत्यान्तः सर्गविन्दुकलान्वितम् ।
एषा नवाक्षरी बाला सर्वदोषविवर्जिता ॥

अस्यार्थः—शिवश्चन्द्रवाग्भवं प्रथमम्, शिवचन्द्रकामभूवह्नितुर्यस्वरविन्दुयुक्तं द्वितीयम्। शिवचन्द्रचतुर्दशस्वरविन्दुसर्गयुक्तं तृतीयम्। अपरा चन्द्रादिः। तथा च त्रिपुरासारे—

भैरवीयमुदिताऽकुलपूर्वा देशिकैर्यदि भवेत् कुलपूर्वा ।
सैव शीघ्रफलदा भुवि विद्येत्युच्यते पशुजनेष्वतिगोप्या ॥

नवकूटा बाला त्रिपुरा—श्रीक्रम के अनुसार नवकूटा बालामन्त्र है—ऐं क्लीं सौः ह्सैं ह्स्क्लरीं ह्सौं ह्स्रैं ह्स्क्लरीं ह्स्रौः। त्रिपुरासार के अनुसार यह मन्त्र शीघ्र फलदायक है। पशुजनों से इसे गुप्त रखना चाहिये।

मन्त्रान्तरं त्रिपुरासारे—

शिवाष्टमं केवलमादिबीजं भगस्य पूर्वाष्टमबीजमन्यत् ।
परं शिवोऽन्तं गणिता त्रिवर्णा सङ्केतविद्या गुरुवक्त्रगम्या ॥

अस्यार्थः—बाला तु त्रिविधा विन्द्वन्ता विन्दुविसर्गान्ता विसर्गान्ता च। अत्र विन्द्वन्तमुद्धरति—शिवाष्टमम् ऐकारः, सम्मोहनाख्यं शिवाष्टममिति। शिव ऊकारः तस्याष्टमम् ऐकारः केवलं विन्दुः के मस्तके वलते इति व्युत्पत्त्या अनुस्वारस्तद्युक्तम् अर्श आदित्वात्। प्रथमबीजम् एतेन वाग्भवं बीजम्। भग एकारः तस्य पूर्वाष्टमं बीजम् इकारं द्वितीयम्। एवं शिरसि न्यासयोन्यम् ओकारस्तस्यान्ते यत् औकारं तृतीयं बीजं केवलम् एतेन बीजत्रयं विन्दुनादविशिष्टम्।

त्रिपुरा बाला का अन्य मन्त्र—बाला मन्त्र तीन प्रकार का होता है—ऐं क्लीं सौं, ऐं क्लीं सौंः और ऐं क्लीं सौः। ऐं क्लीं सौं में बिन्दु से अन्त है। ऐं क्लीं सौंः में बिन्दु-विसर्ग दोनों अन्त में हैं एवं ऐं क्लीं सौः के अन्त में केवल विसर्ग है।

मन्त्रान्तरं तत्रैव—

शक्तिः शिवो वह्निबीजं द्वादशस्वरविन्दुकम् ।
शक्तिर्महेशः कामश्च इन्द्रो वह्नीन्दुमायया ॥
शक्तिः शिवश्च वह्निश्च मनुस्वरविसर्गकः ।
नादविन्दुकलायुक्तं बीजमेतत्प्रकीर्तितम् ॥

एतासां यन्त्रध्यानपूजादिकं भैरवीवत्। पुरश्चरणन्तु लक्षजपः। श्रीक्रमादौ तथा दर्शनात्।

त्रिपुरा बाला का अन्य मन्त्र—स्हैं ह्स्क्ल्रीं स्ह्रौः—यह त्रिपुरा बाला का अन्य मन्त्र है। इन सभी मन्त्रों का ध्यान पूजनादि त्रिपुरभैरवी के समान होता है। पुरश्चरण में एक लाख जप होता है। शेष श्रीक्रम के अनुसार होता है।

एतासां दीपनीविद्या श्रीक्रमे—

वदयुग्मं महेशानि वाग्वादिनि ततः परम् ।
एषा त्वष्टाक्षरी विद्या वाग्भवाद्ये नियोजयेत् ॥
क्लिन्ने क्लेदिनि देवेशि महाक्षोभं ततः कुरु ।
कामराजं समुच्चार्य प्रणवं तदनन्तरम् ॥
महामोक्षं कुरु पश्चाच्छक्तिकूटं तथोच्चरेत् ।
जपेदादौ जपेत्पश्चात्सप्तवारमनुक्रमात् ॥

दीपनी विद्या—जप से पहले वक्ष्यमाण तीन मन्त्रों से तीनों बीजों का दीपन करे। इस प्रकार के जप से अभीष्ट सिद्ध होता है।

वाग्भव बीज का दीपनी मन्त्र—वद वद वाग्वादिनी ऐं।

कामबीज का दीपनी मन्त्र—क्लिन्ने क्लेदिनी महाक्षोभं कुरु।

तीसरे बीज सौः का दीपनी मन्त्र—ॐ महामोक्षं कुरु।

बाला मन्त्र के तीनों बीजों के साथ उनके दीपनी मन्त्रों को लगाकर सात बार जप करने से विद्या दीप्त होती है।

अन्नपूर्णाभैरवी

तारश्च भुवनेशानी श्रीबीजं कामबीजकम् ।
हृदन्ते भगवत्यन्ते माहेश्वरिपदं ततः ।
अन्नपूर्णे ठयुगलं विद्येयं विंशदक्षरी ॥

तथा च कल्पे—

कामबीजं विना देवि श्रीबीजपूर्विका यदा ।
ऊनविंशाक्षरी देवि धनधान्यसमृद्धिदा ॥

अस्याः पूजा—प्रातःकृत्यादि-सामान्यपूजापद्धत्युक्तपीठन्यासान्तं विधाय, केशरेषु पूर्वादि ॐ वामायै नमः। एवं ज्येष्ठायै रौद्र्यै काल्यै कलविकरण्यै बलविकरण्यै बलप्रमथन्यै, सर्वभूतदमन्यै, मध्ये मनोन्मन्यै; तत्समीपे ॐ जयायै विजयायै अजितायै अपराजितायै नित्यायै विलासिन्यै दोग्ध्र्यै अघोरायै; मध्ये मङ्गलायै। सर्वत्र ॐकारादिनमोऽन्तेन पूजयेत्। तदुपरि ह्सौः सदाशिवमहाप्रेत-पद्मासनाय नमः।

ततः ऋष्यादिन्यासः—शिरसि ब्रह्मणे ऋषये नमः, मुखे पंक्तिच्छन्दसे नमः, हृदि अन्नपूर्णेश्वर्यै भैरव्यै देवतायै नमः, गुह्ये ह्रीं बीजाय नमः, पादयोः श्रीं शक्तये नमः, सर्वाङ्गे क्लीं कीलकाय नमः। तथा च ज्ञानार्णवे—

बीजञ्च भुवनेशानी श्रीबीजं शक्तिरुच्यते ।
कीलकं कामबीजं स्यात्················॥ इत्यादि।

ततः कराङ्गन्यासौ—ह्रां अंगुष्ठाभ्यां नमः इत्यादिना। एवं हृदयादिषु ह्रां हृदयाय नमः इत्यादिना च। तथा च ज्ञानार्णवे—

भुवनेश्या महेशानि षड्दीर्घस्वरयुक्तया ।
षडङ्गानि································॥ इत्यादि।

ततः पदन्यासः—मूर्ध्नि ॐ नमः। चक्षुषोः ह्रीं नमः श्रीं नमः। कर्णयोः क्लीं नमः नमो नमः। नसोर्भगवति नमः माहेश्वरि नमः। मुखे अन्नपूर्णे नमः। गुह्ये स्वाहा नमः। पुनर्गुह्यादि मूर्द्धान्तं न्यसेत्। ज्ञानार्णवे—

एकं एकं पुनश्चैकं पुनरेकं द्वयं ततः ।
चतुश्चतुस्तथा द्वाभ्यां पदान्येतानि पार्वति ॥
पदान्येतानि देवेशि नवद्वारेषु विन्यसेत् ।
गुह्यादि ब्रह्मरन्ध्रान्तं पदानां नवकं न्यसेत् ॥

ततो ब्रह्मरन्ध्रमुखहृदयमूलाधारेषु चतुर्बीजानि विन्यस्य, शेषं भ्रूमध्यनासिका-कण्ठनाभिलिङ्गेषु पञ्चसु सर्वत्र नमोऽन्तानि न्यसेत्। तदुक्तं तत्रैव—

ब्रह्मरन्ध्रास्यहृदयमूलाधारेष्वनुक्रमात् ।
चतुर्बीजानि विन्यस्य परेष्वन्यांश्च विन्यसेत्॥
भ्रूमध्यनासिकाकण्ठनाभिलिङ्गेषु पञ्चसु ।
पूर्ववत्क्रमतो देवि नमःप्रभृतिकं न्यसेत् ॥

ततो मूलेन व्यापकं विन्यस्य ध्यानं कुर्यात्। तद्यथा—

तप्तकाञ्चनवर्णाभां बालेन्दुकृतशेखराम् ।
नवरत्नप्रभादीप्तमुकुटां कुंकुमारुणाम् ॥
चित्रवस्त्रपरीधानां सफराक्षीं त्रिलोचनाम् ।
सुवर्णकलशाकारपीनोन्नतपयोधराम् ॥
गोक्षीरधामधवलं पञ्चवक्त्रं त्रिलोचनम् ।
प्रसन्नवदनं शम्भुं नीलकण्ठविराजितम् ॥
कपर्दिनं स्फुरत्सर्पभूषणं कुन्दसन्निभम् ।
नृत्यन्तमनिशं हृष्टं दृष्ट्वानन्दमयीं पराम् ॥
सानन्दमुखलोलाक्षीं मेखलाढ्यनितम्बिनीम् ।
अन्नदानरतां नित्यां भूमिश्रीभ्यामलंकृताम् ॥

एवं ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्य शङ्खस्थापनं कुर्यात्। अस्याः पूजायन्त्रम्—

त्रिकोणञ्च चतुःपत्रं वसुपत्रं ततः परम् ।
कलापत्रञ्च भूविम्बं चतुर्द्वारं समालिखेत् ॥

ततः पीठपूजां विधाय पुनर्ध्यात्वा आवाहनादिपञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं विधाय आवरणपूजामारभेत्। कर्णिकायामग्नीशासुरवायुमध्येषु दिक्षु च ह्रां हृदयाय नमः इत्यादिना पूजयेत्।

ततस्त्रिकोणाग्रे ॐ हौं नमः शिवाय नम इति शिवं पूजयेत्। वायुकोणे ॐ नमो भगवते वराहरूपाय भूर्भूवःस्वःपतये भूपतित्वं मे देहि ददापय स्वाहा इति मन्त्रेण वराहं पूजयेत्। ज्ञानार्णवे—

ॐ नमः पदमाभाष्य ततो भगवते पदम् ।
ततो वराहरूपाय भूर्भूवःस्वःपतिन्तथा ॥
ङेऽन्तञ्च भूपतित्वञ्च मे देहीति ददापय ।
वह्निजायान्वितो मन्त्रो वराहस्य वरानने ॥

दक्षिणकोणे ॐ नमो नारायणायेति नारायणं पूजयेत्। ततो दक्षिणे वामे च ॐ ग्लौं श्रीं अन्नं मे देह्यन्नाधिपतये ममान्नं प्रदापय स्वाहा श्रीं ग्लौं इत्यनेन भूमि-श्रियौ पूजयेत्। ततश्चतुर्दलेषु पुरत आरभ्य ॐ परविद्यायै नमः ह्रीं भुवनेश्वर्यै नमः, श्रीं कमलायै नमः क्लीं सुभगायै नमः। तथा च ज्ञानार्णवे—

तारेण परविद्याञ्च भुवनेशीं तदात्मना ।
कमलां रमया भद्रे कामेन सुभगां यजेत् ।।

अष्टपत्रेषु पश्चिमादितः ब्राह्म्याद्या मातृः पूजपेत्। षोडशदलेषु पूर्वादि नं अमृतायै अन्नपूर्णायै नमः, मों मदनायै अन्नपूर्णायै नमः। एवं भं तुष्ट्यै गं पुष्ट्यै वं प्रीत्यै तिं रत्यै मां ह्रियै (क्रियायै) हें श्रियै श्वं सुधायै रिं रात्र्यै अं ज्योत्स्नायै त्रं हैमवत्यै पूं छायायै र्णे पूर्णिमायै स्वां नित्यायै हां अमावस्यायै। एता अन्नपूर्णा-शब्दान्ता नमोऽन्ताश्च पूजयेत्। तथा च ज्ञानार्णवे—

शेषैर्वर्णैः प्रपूज्याश्च अन्नपूर्णान्तशब्दिताः ।

ततश्चतुरस्रे लोकपालान् पूजयेत्। तत्रैव—

चतुरस्रे लोकपालान् क्रमेण परिपूजयेत् ।

ततो धूपादिविसर्जनान्तं कर्म समापयेत्। अस्याः पुरश्चरणं लक्षजपः। तथाच—

एवं ध्यात्वा जपेन्मन्त्रं लक्षसंख्यमनन्यधीः ।
साज्येनान्नेन जुहुयात्तद्दशांशमनन्तरम् ।।

इति भैरवीमन्त्राः

●

अन्नपूर्णा भैरवी—ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं नमो भगवति माहेश्वरि अन्नपूर्णे स्वाहा—यह विंशाक्षर अन्नपूर्णा-मन्त्र है। कल्प के अनुसार उन्नीस अक्षरों का मन्त्र है—ॐ ह्रीं श्रीं नमो भगवति माहेश्वरि अन्नपूर्णे स्वाहा। इस मन्त्र के जप से **धन-धान्य-समृद्धि** प्राप्त होती है।

इस ग्रन्थ के द्वितीय परिच्छेद में वर्णित सामान्य पूजापद्धति से प्रात:कृत्य से पीठन्यास तक के कर्मों को पूरा करके पीठन्यास करे। यन्त्र के केशर में पीठशक्तियों का न्यास करे—ॐ वामायै नम:। ॐ ज्येष्ठायै नम:। ॐ रौद्र्यै नम:। ॐ काल्यै नम:। ॐ कलविकरण्यै नम:। ॐ बलविकरण्यै नम:। ॐ बलप्रमथन्यै नम:। ॐ सर्वभूतदमन्यै नम:। मध्य में ॐ मनोन्मन्यै नम:। तब इन्हीं के पास इन शक्तियों का न्यास करे—ॐ जयायै नम:। ॐ विजयायै नम:। ॐ अजितायै नम:। ॐ अपराजितायै नम:। ॐ नित्यायै नम:। ॐ विलासिन्यै नम:। ॐ दोग्ध्र्यै नम:। ॐ अघोरायै नम:। मध्य में ॐ मंगलायै नम:। तब उनके ऊपर ह्सौ: सदाशिवमहाप्रेतपद्मासनाय नम: मन्त्र से न्यास करे।

इसके बाद न्यास करे।

ऋष्यादि न्यास—शिरसि ब्रह्मणे ऋषये नमः। मुखे पंक्तिछन्दसे नमः। हृदि अन्नपूर्णेश्वर्यै भैरव्यै देवतायै नमः। गुह्ये ह्रीं बीजाय नमः। पादयोः श्रीं शक्तये नमः। सर्वाङ्गे क्लीं कीलकाय नमः।

करन्यास—ह्रां अंगुष्ठाभ्यां नमः। ह्रीं तर्जनीभ्यां स्वाहा। ह्रूं मध्यमाभ्यां वषट्। ह्रैं अनामिकाभ्यां हुं। ह्रौं कनिष्ठाभ्यां वौषट्। ह्रः करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्।

षडंग न्यास—ह्रां हृदयाय नमः। ह्रीं शिरसे स्वाहा। ह्रूं शिखायै वषट्। ह्रैं कवचाय हुं। ह्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्। ह्रः अस्त्राय फट्।

मन्त्रपदन्यास—मूर्ध्नि ॐ नमः। नेत्रयोः ह्रीं नमः श्रीं नमः। कर्णयोः क्लीं नमः नमो नमः। नसोः भगवति नमः माहेश्वरि नमः। मुखे अन्नपूर्णे नमः। गुह्ये स्वाहा नमः।

मन्त्रपद से विलोमन्यास—गुह्ये स्वाहा नमः। मुखे अन्नपूर्णे नमः। नसोः भगवति नमः माहेश्वरि नमः। कर्णयोः क्लीं नमः नमो नमः। नेत्रयोः ह्रीं नमः श्रीं नमः । मूर्ध्नि ॐ नमः।

चतुर्बीज न्यास—ब्रह्मरन्ध्रे ॐ नमः। मुखे ह्रीं नमः। हृदये श्रीं नमः। मूलाधारे क्लीं नमः। भ्रूमध्ये नमो नमः। नसोः भगवति नमः। कण्ठे माहेश्वरि नमः। नाभौ अन्नपूर्णे नमः। लिंगे स्वाहा नमः।

व्यापक न्यास मूल मन्त्र से करे। तब निम्नवत् ध्यान करे—

तप्तकाञ्चनवर्णाभां बालेन्दुकृतशेखराम् ।
नवरत्नप्रभादीप्तमुकुटां कुंकुमारुणाम् ।।
चित्रवस्त्रपरीधानां सफराक्षीं त्रिलोचनाम् ।
सुवर्णकलशाकारपीनोन्नतपयोधराम् ।।
गोक्षीरधामधवलं पञ्चवक्त्रं त्रिलोचनम् ।
प्रसन्नवदनं शम्भुं नीलकण्ठविराजितम् ।।
कपर्दिनं स्फुरत्सर्पभूषणं कुन्दसन्निभम् ।
नृत्यन्तमनिशं हृष्टं दृष्ट्वानन्दमयीं पराम् ।।
सानन्दमुखलोलाक्षीं मेखलाढ्यनितम्बिनीम् ।
अन्नदानरतां नित्यां भूमिश्रीभ्यामलंकृताम् ।।

अन्नपूर्णा भैरवी के शरीर की कान्ति तप्त सोने के समान है। मस्तक पर द्वितीया का चाँद है। नवीन रत्नों की चमक से मुकुट प्रकाशित है। शरीर का वर्ण कुंकुम के समान लाल है। विचित्र वस्त्र पहनी हुई हैं। तीन नेत्र हैं। दोनों स्तन कनककलश के समान स्थूल और उन्नत हैं। ऐसी भगवती भैरवी श्वेत वर्ण के पाँच मुख वाले, त्रिनेत्र, प्रसन्न मुख, नील-

कण्ठ सर्पों से विभूषित, कुन्दपुष्प के समान आभा वाले शिव को नृत्यरत देखकर अति आनन्दित हो रही हैं। इनके आनन्दित मुखमण्डल में चञ्चल नेत्र सुशोभित है। कमर में मेखला शोभित है। देवी अन्न प्रदान कर रही हैं। इनके अगल-बगल में लक्ष्मी और पृथ्वी इनकी शोभा बढ़ा रही हैं। ध्यान के बाद मानसोपचार पूजा करके शंखस्थापन करे। इनका पूजनयन्त्र इस प्रकार है—त्रिकोण के बाहर चतुर्दल, तब अष्टदल, तब षोड़श दल, तब चार द्वारयुक्त चतुरस्र भूपुर से बना हुआ है।

अन्नपूर्णाभैरवी यन्त्र
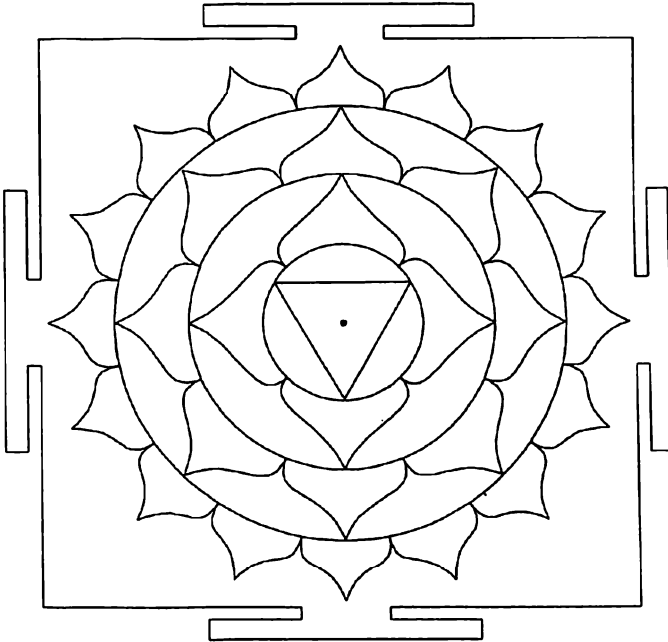
पीठपूजा, पुनः ध्यान-आवाहनादि से पञ्च पुष्पाञ्जलि-दान तक के सभी कर्म करके आवरण-पूजा करे। कर्णिका में, अग्नि, ईशान, नैर्ऋत्य, वायु कोणों में, मध्य में तथा चतुर्दिक षडंग पूजन करे। ऊपर वर्णित षडंग न्यासमन्त्रों से यह पूजा करे। मध्य बिन्दु के आगे ॐ हौं नमः शिवाय से पूजा करे।

वायुकोण में इससे पूजा करे—ॐ नमो भगवते वराहरूपाय भुर्भुवः स्वः पतये भूपतित्वं मे देहि ददापय स्वाहा।

चतुर्दल के पूर्व दल में ॐ परविद्यायै नमः। दक्षिणदल में ह्रीं भुवनेश्वर्यै नमः। पश्चिम

दल में श्रीं कमलायै नमः। उत्तरदल में क्लीं सुभगायै नमः से पूजा करे।

अष्टदल में पूर्वादि क्रम से अष्टमातृकाओं की पूजा करे—ॐ ब्राह्म्यै नमः। ॐ माहेश्वर्यै नमः। ॐ कौमार्यै नमः। ॐ वैष्णव्यै नमः। ॐ इन्द्राण्यै नमः। ॐ वाराह्यै नमः। ॐ चामुण्डायै नमः। ॐ महालक्ष्म्यै नमः।

षोड़श दल में—नं अमृतायै अन्नपूर्णायै नमः। मों मानदायै अन्नपूर्णायै नमः। भं तुष्ट्यै अन्नपूर्णायै नमः। गं पुष्ट्यै अन्नपूर्णायै नमः। वं प्रीत्यै अन्नपूर्णायै नमः। तिं रत्यै अन्नपूर्णायै नमः। मां क्रियायै अन्नपूर्णायै नमः। हें श्रियै अन्नपूर्णायै नमः। श्वं सुधायै अन्नपूर्णायै नमः। रिं रात्र्यै अन्नपूर्णायै नमः। अं ज्योत्स्नायै अन्नपूर्णायै नमः। त्रं हैमवत्यै अन्नपूर्णायै नमः। पूं छायायै अन्नपूर्णायै नमः। र्णें पूर्णिमायै अन्नपूर्णायै नमः। स्वां नित्यायै अन्नपूर्णायै नमः। हां अमावास्यायै अन्नपूर्णायै नमः।

चतुरस्र भूपुर में दश दिक्पालों की पूजा करके धूपादि से विसर्जन तक के कर्म करके पूजन समाप्त करे। पुरश्चरण में एक लाख जप और घृताक्त अन्न से दस हजार हवन होता है।

श्रीविद्यामन्त्राः

तत्र मेरुः। ज्ञानार्णवे—

भूमिश्चन्द्रः शिवो माया शक्तिः कृष्णाध्वमादनौ ।
अर्द्धचन्द्रश्च विन्दुश्च नवार्णो मेरुरुच्यते ।
महात्रिपुरसुन्दर्या मन्त्रा मेरुसमुद्भवा ॥
सकला भुवनेशानी कामेशीबीजमुद्धृतम् ।
अनेन सकलां विद्याः कथयामि वरानने ॥
शक्त्यन्तस्तुर्यवर्णोऽयं कलमध्ये सुलोचने ।
वाग्भवं पञ्चवर्णाढ्यं कामराजमथोच्यते ॥
मादनं शिवचन्द्राढ्यं शिवाद्यं मीनलोचने ।
कामराजमिदं भद्रे षड्वर्णं सर्वमोहनम् ॥
शक्तिबीजं वरारोहे चन्द्राद्यं सर्वमोहनम् ।
चतुरक्षररूपन्तु त्र्यक्षरा त्रिपुरा भवेत् ॥
एतामुपास्य देवेशि कामः सर्वाङ्गसुन्दरः ।
कामराजो भवेद्देवि विद्येयं ब्रह्मरूपिणी ॥

अस्यार्थः—शक्तिरेकारः, तूर्य ईकारः, तेन ककार-एकार-ईकार-लकार-महामाया इति वाग्भवकूटम्। शिवो हकारः चन्द्रः सकारः तेन हकार-सकार-

ककार-हकार-लकार-महामाया इति कामराजकूटम्। चन्द्र सकारः तेन सकार-ककार-लकार-महामाया इति शक्तिकूटम्। तेन त्रिभिः कूटैः कामराजविद्येयम्।

श्रीविद्या (कामदेव उपासिता विद्या पञ्चदशी)—ज्ञानार्णव में वर्णन है कि भूमि = ल, चन्द्र = स, शिव = ह, माया = ई, शक्ति = ए, कृष्णाध्व = र, मादन = क, अर्द्ध-चन्द्र = ँ और बिन्दु अर्थात् ल स ह ई ए र क ँ ये नव अक्षर का मन्त्र ही महात्रिपुरसुन्दरी का मेरु मन्त्र है। अर्द्धचन्द्र और बिन्दु की गणना अलग-अलग वर्ण के रूप में करने से यह नवाक्षर मन्त्र बनता है। देवी के सभी मन्त्र इसी मेरुमन्त्र से उत्पन्न हैं।

'क' 'ल' और भुवनेश्वरी बीज—'ह्रीं' इन्हीं तीन वर्णों से कामेश्वरी-बीज बनता है। इसके द्वारा कामराज आदि सभी मन्त्रों का उद्धार होता है। 'क' और 'ल' के मध्य में शक्ति 'ए' और इनके अन्त में ईकार लगा कर सबके अन्त में ह्रीं मायाबीज जोड़ने से वाग्भव कूट—कएईलह्रीं पञ्चाक्षर बनता है। ह शिव, स चन्द्र, क मादन और ह—चार वर्णों में ल और ह्रीं का योग करने से कामराज षडक्षर कूट हसकहलह्रीं बनता है।

प्रारम्भ में स, तब क ल ह्रीं चार वर्णों से शक्तिकूट बनता है। वाग्भव, कामराज, शक्ति—इन तीन कूटों से पञ्चदशी कामराज विद्या बनती है, जो कएईलह्रीं, हसकहलह्रीं, सकलह्रीं है।

ज्ञानार्णवे—

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि लोपामुद्राभिधां पराम् ।
कामराजाख्यविद्यायाः शक्तिं तूर्याञ्च सुन्दरि ।
हित्वा मुखे शिवेन्द्वाढ्या लोपामुद्रा प्रकाशिता ॥

अस्यार्थः—कामराजाख्यविद्याया वाग्भवे एकारं ईकारञ्च हित्वा आदौ हकारं सकारञ्च दद्यात्। अन्यत्समानम्। इयमगस्त्योपासिता। अनयोर्भेदमग्रे वक्ष्यामः।

लोपामुद्रा विद्या—कामराज विद्या पञ्चदशी के शक्ति = ए और चतुर्थ स्वर = ई का त्याग करने से और आदि में शिव = ह तथा चन्द्र = स लगाने से लोपामुद्रा विद्या बनती है। कामराज के वाग्भव कूट के ए और ई को छोड़कर प्रारम्भ में ह और स को जोड़े। अन्य सभी सामान्य रहे, तब जो विद्या बनती है, वह—हसकलह्रीं, हसकहलह्रीं, सकलह्रीं। यही अगस्त्योपासिता लोपामुद्रा विद्या है।

मन्त्रान्तरम्

कामराजाख्यविद्याया वाग्भवेन वरानने ।
विद्योद्धारं प्रवक्ष्यामि शक्तिमादनमध्यगम् ॥
शिवं कुर्याद्वाग्भवे तु शिवाद्यं कामराजकम् ।
चन्द्राद्यन्तु तृतीयं स्याद्विद्येयं मनुपूजिता ॥

अस्यार्थः—कामस्ततः शिवस्तत एकारस्तत ईकारादित्रयं वाग्भवे कूटे। मध्यकूटं शिवाद्यं तृतीयकूटं चन्द्राद्यम्। तथा च चन्द्रपीठे—

कशिवौ भगतूर्ये च क्षमामायेति वाग्भवम् ।
शिवकामौ भगं तूर्यं लपरा शक्तिकूटकम् ।
मानवीयं समुदिता सर्वाम्नायैर्नमस्कृता ।।

मनुपूजिता श्रीविद्या—कामराज विद्या के वाग्भव कूट से मनु, चन्द्र और कुवेर द्वारा उपासित तीन विद्याओं का उद्धार करने पर उनका स्वरूप निम्न प्रकार का होता है—

मनु उपासिता—वाग्भव कूट 'कएईलह्रीं' के ए और क के मध्य में ह लगाने से प्रथम कूट कहएईलह्रीं बनता है। वाग्भव कूट के पहले ह लगाने से दूसरा कूट हकए-ईलह्रीं बनता है। वाग्भव कूट के पहले स लगाने से तीसरा कूट सकएईलह्रीं बनता है। इस प्रकार मनुपूजित मन्त्र होता है—कहएईलह्रीं, हकएईलह्रीं तथा सकएईलह्रीं। यह अट्ठारह अक्षरों का है।

सहाद्यं वाग्भवं देवि चन्द्राद्यं शिवमध्यगम् ।
मादनं कामराजे तु शक्तिबीजं सहाननम् ।
चन्द्राराधितविद्येयं भोगमोक्षफलप्रदा ।।

अस्यार्थः—सकारहकारादिकामराजविद्याया वाग्भवं कूटम् अस्या वाग्भवम्। आदौ सकारस्ततो हकारस्ततो मादनं ततः शिवस्तत एकारस्तत ईकारस्तत लकारस्ततो महामाया इति कामराजकूटम्। अस्या वाग्भवकूटमेव शक्तिकूटं विद्येयं चन्द्राराधिता।

चन्द्रपूजिता श्रीविद्या—कामराजोपासित पञ्चदशी के वाग्भव कूट के पहले सह लगाने से सहकएईलह्रीं बनता है। कामकूट के पहले स और दो हकारों के बीच में क लगाने से सहकहईलह्रीं दूसरा कूट बनता है। वाग्भव कूट के आदि में सह लगाने से तीसरा कूट बनता है—सहकएईलह्रीं। इस प्रकार चन्द्रोपासित मन्त्र होता है—सहकएईलह्रीं, सहकहईलह्रीं एवं सहकएईलह्रीं।

हसाननं वाग्भवन्तु शिवाद्यं सहमध्यगम् ।
मादनं कामराजे तु तार्त्तीयं शृणु पार्वति ।
हसाद्यं शक्तिबीजन्तु कुवेरेण प्रपूजिता ।।

अस्यार्थः—कामराजाख्यविद्याया वाग्भवं हसाद्यं चेत्तदा अस्य वाग्भवम्। शिवचन्द्रौ ततः कामस्ततः शिवस्तत एकारस्तत ईकारस्ततो लकारस्ततो महामाया इति कामराजकूटम्। अस्य वाग्भवकूटमेव शक्तिकूटम्। इयं कुबेरपूजिता।

कुवेरोपासिता श्रीविद्या—कामराज विद्या के वाग्भव कूट के पहले हस लगावे। कामकूट के पहले ह, तब स, तब क, तब एईलह्रीं लगावे। शक्तिकूट में पहले ह और स के बाद क लगावे। इससे जो मन्त्र बनता है, वह है—हसकएईलह्रीं हसकएईलह्रीं हसकहएईलह्रीं।

कामराजाख्यविद्यायास्तार्तीयं सुरवन्दिते ।
सहाद्यं शक्तिबीजं स्याद्विद्यागस्त्यप्रपूजिता ॥

अस्यार्थः—कामराजाख्यविद्याया यदेव वाग्भवं कूटं कामराजकूटञ्चात्रापि तदेव। शक्तिकूटन्तु सहाद्यमिति शेषः। इयन्तु द्वितीया लोपामुद्रा।

अगस्त्यपूजिता श्रीविद्या—कएईलह्रीं, हसकहलह्रीं एवं सहसकलह्रीं यह अगस्त्य-पूजिता श्रीविद्या-मन्त्र है। यह कामराज विद्या के समान ही है। केवल तीसरे शक्तिकूट के पहले 'सह' लगाया जाता है। यह विद्या देवताओं के द्वारा वन्दित है। यह दूसरी लोपामुद्रा विद्या है।

कामराजाख्यविद्याया वाग्भवे मादनं त्यज ।
चन्द्रं तत्रैव संयोज्य कामराजे ततः परम् ।
हित्वा चन्द्रं मुखे कुर्यात् विद्येयं नन्दिपूजिता ॥

अस्यार्थः—कामराजाख्यविद्यायां वाग्भवे कामं त्यक्त्वा चन्द्रं दद्यात्, कामराजे पुनः शिवान्ते चन्द्रं त्यक्त्वा चन्द्राद्यं कुर्यात्। अन्यत् समानम्।

नन्दीपूजिता श्रीविद्या—सएईलह्रीं, सहकहलह्रीं, सकलह्रीं यह नन्दीपूजिता श्रीविद्या का मन्त्र है। कामराज विद्या के वाग्भव कूट में 'क' के स्थान पर 'स' और कामराजकूट के 'ह' के स्थान पर 'स' और 'स' के स्थान पर 'ह' करके शक्तिकूट ज्यों का त्यों करने से यह मन्त्र बनता है।

कामराजाख्यविद्याया हित्वा भूमिं तृतीयके ।
शक्तिबीजे स्थितां देविं चन्द्राधः कुरु तत्र च ॥

तेन शक्तिकूटं चन्द्रेन्द्रकाममहामायात्मकम्। विद्येयमिन्द्रोपासिता। अन्यत् समानम्।

इन्द्रपूजिता श्रीविद्या—कएईलह्रीं, हसकहलह्रीं, सकलह्रीं यह इन्द्रपूजिता श्रीविद्या का मन्त्र है। कामराज विद्या के शक्तिकूट के स को ह के स्थान पर और ह को स के स्थान पर रखने से यह मन्त्र बनता है।

लोपामुद्राख्यविद्याया द्वितीयाया महेश्वरि ।
कामराजे भृगुं हित्वा मुखे कुर्यात्तमेव हि ।

शिवं विना चतुर्थन्तु तार्तीये सकलः शिवः ॥

दक्षिणामूर्तिसंहितायाञ्च—

सहाद्यमन्त्यसहयोर्मध्ये कः सूर्यपूजितः ।

अस्यार्थः—द्वितीयलोपामुद्रायाः कामराजकूटे हकारादधः सकारं त्यक्त्वा तमादौ कृत्वा द्वितीयहकारं त्यजेत्। तृतीयकूटे अन्त्यसकारोपरि ककारं दद्यात्। विद्येयं सूर्यपूजिता।

सूर्यपूजिता श्रीविद्या—कएईलह्रीं, सहकलह्रीं, सहकसकलह्रीं—यह सूर्यपूजिता श्रीविद्या का मन्त्र है। कामोपासित विद्या के प्रथम कूट को ज्यों का त्यों रहने दे। द्वितीय कूट में ह के स्थान पर स और स के स्थान पर ह रक्खे। क के बाद वाले ह को छोड़ दे। तृतीय कूट के पहले हसक लगावे। तब सूर्यपूजिता मन्त्र बनता है।

लोपामुद्रां द्वितीयान्तु विलिख्य सुरसुन्दरि ।
पुनर्विलिख्य तामेव चतुर्थपञ्चमे स्थिताम् ॥
हित्वा तु भुवनेशानीमेकोच्चारेण चोच्चरेत् ।
चतुःकूटा महाविद्या शङ्करेण प्रपूजिता ॥

अस्यार्थः—द्वितीयां लोपामुद्रां विलिख्य, पुनरपि तामेव विलिख्य, चतुर्थकूटे पञ्चमकूटे च स्थितां भुवनेशीं त्यक्त्वा एकोच्चारणे चोच्चरेत्। उच्चारणन्तु पूर्वं त्रिकूटमुच्चार्य कामैकारतूर्येन्द्र-शम्भु-शशाङ्क-कन्दर्प-शिवेन्द्र-चन्द्र-शिवचन्द्र-कन्दर्पेन्द्र-महामाया चोच्चरेत्।

शंकरपूजिता चतुष्कूटा श्रीविद्या—कएईलह्रीं, हसकलह्रीं, सहसकलह्रीं, कएईल-हसकहलसकसकलह्रीं—यह शंकरपूजिता चतुष्कूटा श्रीविद्या-मन्त्र है। द्वितीय लोपामुद्रा विद्या के कामराज कूट में से ह्रीं निकाल दे और तीसरा कूट ज्यों का त्यों रहने दे। इससे शंकरोपासित विद्या बनती है।

लोपामुद्रां पुनर्देवि विलिखेत्तदनन्तरम् ।
नन्दिकेश्वरविद्याञ्च षट्कूटा वैष्णवी भवेत् ॥

अस्यार्थः—पुनः शब्दस्वरसाद्द्वितीयां लोपामुद्रामित्यर्थः। प्रक्रमादिति तन्त्र-कौमुदीकारः। वस्तुतस्तु अगस्त्यस्य द्विधां विद्यां विलिख्य नन्दिपूजितामिति दक्षिणामूर्तिवचनात्।

विष्णुपूजिता षट्कूटा विद्या—कएईलह्रीं, हसकहलह्रीं, सहसकलह्रीं, सएईलह्रीं, सहकहलह्रीं, सकलह्रीं—यह षट्कूटा श्रीविद्या-मन्त्र है। लोपामुद्रा विद्या और नन्दीपूजिता विद्या को मिलाने से यह षट्कूटा विष्णुपूजिता विद्या बनती है।

कामराजाख्यविद्यायास्त्रिकूटेषु वरानने ।
या स्थिता भुवनेशानी द्विधा कुरु महेश्वरि ।
विन्दुहीना नादहीना दुर्वासःपूजिता भवेत् ॥

दक्षिणामूर्तौ च—

मायास्थाने हरी वर्णयुगलं च क्रमाल्लिखेत् ।

अस्यार्थः—त्रिकूटस्थभुवनेश्वरीं द्विधा कृत्वा नादविन्दुहीनां कृत्वोच्चरेत्। इति द्वादशभेदाः।

दूर्वासापूजिता श्रीविद्या—कामराज मन्त्र के तीनों कूटों में भुवनेश्वरी बीज 'ह्रीं' है। उसको दो भागों में बाँट कर लिखे। उसमें से नाद-बिन्दु हटा दे। ह्रीं में ह+र+ई+नाद+बिन्दु— पाँच हैं। इसमें नाद बिन्दु छोड़ना है। तब दो भाग ह और री, 'हरी' होता है। इस प्रकार जो मन्त्र बनता है वह है— कएईलहरी, हसकहलहरी, सकलहरी।

दक्षिणामूर्तिसंहिता में स्पष्ट लिखित है कि 'ह्रीं' के स्थान पर 'हरी' लिखा जाय।

बीजानां पञ्चदशीमाह नवरत्नेश्वरे—

माया (ह्रीं) श्री (श्रीं) मदनै (क्लीं)-र्देवि श्रीमायामदनैरपि ।
मदनो मायया श्रीश्च श्रीश्च मदनमायया ॥
मायया मदनः श्रीस्तु कथिता परमेश्वरि ।
त्रिपुरा बीजसंरूपा गदिता मृत्युनाशिनी ॥

इति पञ्चदशी।

पञ्चदशी—नवरत्नेश्वर के अनुसार पन्द्रह अक्षरों का मन्त्र निम्न प्रकार का बनता है—ह्रीं श्रीं क्लीं श्रीं ह्रीं क्लीं, क्लीं ह्रीं श्रीं, श्रीं क्लीं ह्रीं ह्रीं, क्लीं श्रीं। यह त्रिपुरा बीजरूपा विद्या मृत्युविनाशिनी है।

पारिभाषिकी षोडशी

ज्ञानार्णवे—

चन्द्रान्तं वरुणान्तञ्च शक्रादिसहितं पृथक् ।
वामाक्षिविन्दुनादाढ्यं विश्वमातृकलात्मकम् ।
विद्यादौ योजयेद्देवि साक्षाद्ब्रह्मस्वरूपिणी ॥
त्रिकूटाः सकला भेदाः पञ्चकूटा भवन्ति हि ।
वैष्णवी वसुकूटा स्यात् षट्कूटा शाङ्करी भवेत् ॥

अस्यार्थः—चन्द्रान्तं हकारः, वरुणान्तं शकारः, शक्रादी रेफः, वामाक्षि ईकारः। विद्यादौ पूर्वोक्तद्वादशविद्यादौ।

वेदादिमण्डिता देवि शिवशक्तिमयी यदा ।
तस्या भेदास्तु सकलाः षट्कूटा परमेश्वरि ।
वैष्णवो नवकूटा स्यात् सप्तकूटा तु शाङ्करी ॥

अस्यार्थः—शिवशक्तिमयी पूर्वोक्तबीजद्वयवती। वेदादिः प्रणवः, मण्डिता आदौ भूषिता।

पारिभाषिकी षोड़शी—ज्ञानार्णव में वर्णन है कि स = चन्द्र के अन्त्य वर्ण ह, व=वरुण के बाद का वर्ण 'श' इन दोनों 'ह-श' में शुक्र = ल का आदि वर्ण 'र' जोड़कर उसमें 'ई' और बिन्दु लगावे। इस प्रकार ह्रीं और श्रीं दो बीज बनते हैं।

पूर्वोक्त बारह मन्त्रों में से प्रत्येक के आदि में ह्रीं-श्रीं बीजद्वय लगाने से जो मन्त्र बनते हैं, वे पारिभाषिकी षोड़शी मन्त्र कहलाते है। सभी मन्त्र साक्षात् ब्रह्मस्वरूप हैं। इन दो बीजों के योग से भी त्रिकूट, पञ्चकूट, सभी वैष्णवमन्त्र, अष्टकूट और चतुष्कूट शंकरमन्त्र षट्कूट बनते हैं।

पूर्वोक्त सभी मन्त्रों के प्रारम्भ में ॐ ह्रीं श्रीं तीन बीजों को लगाने से भी षोडशी मन्त्र बनते हैं। इन तीनों के योग से त्रिकूट षट्कूट बनते हैं। षट्कूट मन्त्र नवकूट हो जाते हैं। चतुष्कूट शिवमन्त्र षट्कूट हो जाते हैं। ये सभी मन्त्र शिव-शक्तिस्वरूप हैं।

महाषोडशी

भेदत्रयस्तु कथितं महाविद्यां शृणु प्रिये ।
आद्यबीजद्वयं भद्रे विपरीतक्रमेण हि ॥
विलिख्य परमेशानि ततोऽन्यानि समुद्धरेत् ।
अन्तर्मुखी वरारोहे कुमारी त्रिपुरेश्वरी ॥
एभिस्तु पञ्चसंख्याकैर्बीजैः सम्पुटिता यजेत् ।
षट्कूटां परमेशानि विद्येयं षोडशाक्षरी ॥
त्रिकूटाः सकला भद्रे षोडशार्णा भवन्ति हि ।
वैष्णव्येकोनविंशार्णा शैवी सप्तदशाक्षरी ॥

अस्यार्थः—आद्यबीजद्वयं माया रमात्मकं तस्य विपरीतक्रमः आदौ रमा पश्चान्माया अन्तर्मध्ये स्थितं कामबीजं मुखे आदौ यस्याः कुमार्याः। एतैः पञ्च-संख्यकैर्बीजैः षट्कूटां सप्तकूटां नवकूटां वा सम्पुटितां सम्पुटवत् कृतां तेनानु-लोमविलोमतः पुटितामित्यर्थः।

केचित्तु अनुलोमतः सम्पुटितामाहुः। तन्न, सर्वतन्त्रविरोधात्। तथा च योगिनी-तन्त्रे—

श्रीबीजमायास्मरयोनिशक्तिस्तारञ्च माया कमलाथ विद्या ।
शक्त्यादिबीजैश्च विलोमतः सा श्रीषोडशीयञ्च शिवप्रदिष्टा ।।

तथा च रुद्रयामले—

श्रीर्माया मदनो वाणी परा तारं शिवप्रिया ।
हरिप्रिया त्रिकूटा सा परा वाणी मनोभवः ।
माया लक्ष्मीर्महाविद्या श्रीविद्या षोडशी परा ।।

दक्षिणामूर्तौ च—

द्वितीयस्यादियुग्मन्तु विपरीतं लिखेत् सुधीः ।
बालाञ्चान्तर्मुखीं कृत्वा विलिखेत्तदनन्तरम् ।।
तारं मायां ततो लक्ष्मीं तथा कूटत्रयं लिखेत् ।
कलया सम्पुटां कुर्याद्रमाख्यां परमेश्वरि ।।

कलया पूर्वोक्तशक्त्यादिपञ्चकलया। रमाख्यां पूर्वोक्तप्रणवादिषट्कूटाम्। उमाख्यामिति पाठेऽप्ययमेवार्थः।

केचित्तु कलयास्थाने बालयेति पाठं कुर्वन्तस्तत्र परमेश्वरीमिति च बालया अर्न्तमुख्या सम्पुटां वदन्ति। रमाख्यां श्रीं परमेश्वरीं ह्रीमिति च। तेनोत्तरदले क्लीं ऐं सौः श्रीं ह्रीमिति वदन्ति, तन्न, सम्पुटशब्दार्थापरिज्ञानात्। नवरत्नेश्वरे—

मन्त्रमादौ वदेत् सर्वं साध्यसंज्ञमनन्तरम् ।
विपरीतं पुनश्चान्ते मन्त्रं तत् सम्पुटं स्मृतम् ।।

इति सम्पुटलक्षणात् अनन्वयापत्तेः सर्वतन्त्रविरोधाच्च। तथा च श्रीक्रम-संहितायाम्—

श्रीर्माया मदनो वाणी परैतानि मुखे कुरु ।
वेदादिर्भुवनेशानीं श्रीबीजञ्च त्रिकूटकम् ।
षट्कूटां सम्पुटीकुर्यादाद्यैः पञ्चभिरक्षरैः ।।

मायातन्त्रे च—

लक्ष्मीः परा मदनयोनियुता च शक्ति-
स्तारं परा च कमलाप्यथ मूलविद्या ।
शक्त्यादिभिश्च विपरीततया प्रदिष्टं
श्रीमन्त्रराजमुदितं परदेवतायाः ।।

एतेनानुलोमतः पञ्चबीजैः सम्पुटितामिति मतं हेयम्।

महाषोडशी मन्त्र—शिवजी कहते हैं कि हे प्रिये! विद्या के तीन भेदों को बतलाया

जा चुका है। अब महाविद्या का वर्णन सुनो। 'ह्रीं एवं श्रीं' दो बीजों को विपरीतक्रम में लिखे; यथा—श्रीं ह्रीं, तब बालाबीज ऐं क्लीं सौ: के मध्य बीज क्लीं को पहले लिखने से क्लीं ऐं सौ: बनता है। इन दोनों को एकत्र करने पर श्रीं ह्रीं क्लीं ऐं सौ: पञ्चबीज बनते हैं। पञ्चबीजों द्वारा अनुलोम-विलोमक्रम से षट्कूट मन्त्र को पुटित करने से षोडशाक्षर मन्त्र बनता है। इसी प्रकार सारे त्रिकूट मन्त्र इन बीजों के योग से षट्कूट बनते हैं। अत: उनके साथ अनुलोम-विलोम से उक्त पञ्चबीजों का योग करने से षोडशाक्षर मन्त्र होता है। उक्त पञ्चबीज से सप्तकूट को पुटित करे तो सप्तदशाक्षर और नवकूट को पुटित करे तो ऊनविंशाक्षर मन्त्र बनते हैं। इस प्रकार षट्कूट षोडशाक्षर, वैष्णव मन्त्र ऊनविंशाक्षर और शैवमन्त्र सप्तदशाक्षर होता है।

कुछ मन्त्रवित् केवल अनुलोम से ही पुटित करने को कहते हैं; विलोम में पुटित नहीं करने को कहते हैं; किन्तु यह ठीक नहीं है; क्योंकि इससे सभी तन्त्रों में विरोध उठ खड़ा होगा। योगिनीतन्त्र में वर्णन है कि श्रीबीज श्रीं, मायाबीज ह्रीं, स्मरबीज क्लीं, योनिबीज ऐं, शक्तिबीज ह्रीं, तार ॐ और ह्रीं, श्रीशक्त्यादि बीजों को विलोम लगाना चाहिये। इसी से षोडशी बनती है और यह शिवप्रद इष्ट है।

रुद्रयामल में वर्णन है कि श्रीं ह्रीं क्लीं ऐं सौ: ॐ—सभी शिवप्रिया हैं। ये सभी हरिप्रिया भी हैं। त्रिकूटा परा वाणी मनोभव है, ह्रीं लक्ष्मी महाविद्या है। श्रीविद्या परा षोडशी है।

दक्षिणामूर्तिसंहिता में वर्णन है कि ह्रीं श्रीं को विपरीतक्रम से श्रीं ह्रीं लिखे। बाला ऐं क्लीं सौ: को क्लीं ऐं सौ: लिखे। इसके बाद ॐ ह्रीं श्रीं और कूटत्रय लिखे। शक्त्यादि पञ्चकला ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं सौ: से पुटित करे। रमाख्या ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं सौ: को कहते हैं। यही षट्कूटा विद्या है।

कुछ लोग 'कलया सम्पुटं कुर्यात्' के स्थान पर 'बालया' का पाठ मानकर मध्यमादि बाला बीज क्लीं ऐं सौ: से पुटित करते हैं, किन्तु ऐसा करने से सम्पुट शब्द की अर्थसंगति नहीं बैठती।

नवरत्नेश्वर में लिखा है कि पहले सभी सम्पुटमन्त्र को कहे तब सम्पुटित होने वाले मन्त्र को कहे, तब सम्पुट मन्त्र का उच्चारण विपरीतक्रम से करे। इसी को सम्पुट कहते हैं।

श्रीक्रमसंहिता में भी महाषोडशी के मन्त्रोद्धार के बारे में इस प्रकार वर्णन किया गया है—श्रीबीज, मायाबीज, कामबीज, वाग्भवबीज और पराबीज श्रीं ह्रीं क्लीं ऐं सौ: को मन्त्र के पहले रक्खे। प्रणव ॐ, भुवनेश्वरी ह्रीं, लक्ष्मी श्रीं और त्रिकूट क्लीं ऐं सौ: अर्थात् 'ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं सौ:' षट्कूट को प्रथम पाँच अक्षरों से पुटित करे।

मायातन्त्र में वर्णन है कि लक्ष्मीबीज श्रीं, मायाबीज ह्रीं, कामबीज क्लीं, वाग्भवबीज ऐं, शक्तिबीज सौ:, प्रणव ॐ, मायाबीज ह्रीं और श्रीबीज श्रीं के बाद कामराज विद्या लिखे। तब इन्हीं पञ्च बीजों को विपरीतक्रम से पुटित करे अर्थात् श्रीं ह्रीं क्लीं ऐं सौ: ॐ ह्रीं श्रीं कएईलह्रीं, हसकहलह्रीं, सकलह्रीं सौ: ऐं क्लीं ह्रीं श्रीं—यह महाषोडशी मन्त्र बनता है।

श्रुतौ तु—रमा माया तारः परा लक्ष्मीः कुमारिका विद्या व्यस्ता बाला श्रीपरा तथा। व्यस्ता विपरीता तथेति व्यस्तेत्यर्थः। कुमारी चान्तर्मुखी बोध्या। अत्र कुमारिकानन्तरं तारादित्रिबीजसम्बन्धः तन्त्रैकवाक्यताबलात्, त्रैपुरीश्रुति-बलाच्च। तथा च—श्रीमाये मध्यादिबालिका । तारो माया श्रीविद्या परादिपञ्च-बीजान्यन्ते चेति। श्रीपरा चेति पाठे न केवलं बाला व्यस्ता श्रीपरा चेति। विद्यायाः षोडशबीजानां स्वरूपकथनं वा। क्रमोक्तत्वाभावात्। एतेन श्रीर्माया तारं माया श्रीबाला त्रिकूटं व्यस्ता बाला रमा मायेति मतञ्च हेयम्। कुलामृते—

श्रीबीजं शक्तिबीजञ्च कामबीजञ्च वाग्भवम् ।
बालान्तसंस्थितं बीजं प्रणवञ्च ततः परम् ॥
शक्तिबीजं रमाञ्चैव विद्याञ्च परमेश्वरि ।
लोपाम्बा कामराजं वा त्रिकूटामथवा पराम् ॥
विन्यस्य पुनराद्यानि पञ्च बीजानि सुन्दरि ।
विपरीतक्रमेणैव विन्यस्य षोडशी परा ॥

यामले च—

लक्ष्मी परा मदनवाग्भवशक्तिबीजं
तारञ्च भूतिकमलेऽप्यथ मूलविद्या ।
कूटत्रयञ्च विपरीततया नियुक्तं
श्रीषोडशाक्षरमिहागमसुप्रसिद्धम् ॥

कूटत्रयं कामादिबालायाः। चकारात् रमां मायाञ्च। निबन्धे—

सान्तान्तं शिवपूर्वसप्तमयुतं सूक्ष्मान्तमस्तान्वितं
देवीं दक्षिणबाहुशक्रनयनं कामं कलालाञ्छितम् ।
दन्तास्तोर्ध्वमुखं सशेषदशनं जीवं मुखेनान्वितं
बीजं पञ्चकमित्थमेवमुदितं सर्वार्थसिद्धिप्रदम् ॥
वेदाद्यं त्रिगुणां रमामथ वदेत्कामेन संसेवितां
लोपाम्बा पुनरेव पञ्चकमथो पूर्वं विलोमक्रमैः ।
एषा श्रीः परात्परतरा सर्वार्थसिद्धिप्रदा

सारात्सारतमा समस्तजगतामुत्पत्तिभूतापरा ।।
सेयं ब्रह्मस्वरूपा सकलगुणमयी निर्गुणा निष्प्रपञ्चा
साक्षात्कामदुघा सुरासुरगणैर्वन्दितानन्दरूपा ।।

अस्यार्थः—स एव अन्तो यस्य तेन सान्तः षकारः स एवान्तो यस्य तेन सान्तान्तः शकारः शिवो हकारः तस्य पूर्वं सप्तमो रेफः सूक्ष्मान्तमीकारः मस्तमनुस्वारः, तेन रमाबीजम्। देवीं मायाम्। दक्षिणबाहुः ककारः, शक्रो लकारः, नयनं मेलनम्। कामः विन्दुः, कला कामकला ईकारः, तेन कामबीजम्। दन्तान्त ऐकारः ऊर्ध्वमुखं मुखस्योर्ध्वं विन्दुः, तेन वाग्बीजम्। जीवः सकारः शेषदशनमौकारः, मुखं विसर्गः तेन पराबीजम्। वेदाद्यं प्रणवः। त्रिगुणा माया।

श्रुति में वर्णन है कि श्रीबीज, मायाबीज, प्रणव, मायाबीज, श्रीबीज, बालाबीज (ऐं क्लीं सौः) विपरीतक्रम से अर्थात् सौः क्लीं ऐं के बाद मूल विद्या, तब बालाबीज, श्रीबीज तथा मायाबीज लिखे। इस वचन में बालाबीज के बाद प्रणव, माया और श्रीबीज के रखने के बारे में अन्य तन्त्रों के साथ ऐक्यभाव का ध्यान रखते हुए विचार करना चाहिये।

त्रैपुरी श्रुति में भी इसी प्रकार का वर्णन है। श्रीबीज, मायाबीज, बालाबीज के मध्य बीज को पहले और पहले बीज को मध्य में करके, प्रणवबीज, मायाबीज, श्रीबीज के बाद मूल विद्या और मूल विद्या के बाद आदि पञ्चबीज लेने से महाषोडशी बनती है। वस्तुतः बालाबीज को ही विपरीतक्रम में नहीं ग्रहण करना है; श्रीबीज और मायाबीज को भी विपरीतक्रम में ग्रहण करना है। उक्त वचन से विद्या का स्वरूपमात्र बतलाया गया है। इससे बीजों का क्रम निश्चित नहीं होता है। इस प्रकार श्रुतिकथित यह क्रम ठीक नहीं है। श्रीबीज, मायाबीज, प्रणव, मायाबीज, श्रीबीज, बालाबीज, त्रिकूट विपरीत वाला श्रीबीज, मायाबीज का क्रम ठीक है।

कुलामृत में वर्णन है कि श्रीबीज, मायाबीज, कामबीज, वाग्भवबीज, बाला का अन्तिम बीज, प्रणव, मायाबीज, श्रीबीज, लोपामुद्रा, कामराज, त्रिकूट अथवा परा; इसके बाद प्रथम पाँच बीज विपरीत क्रम में लेने से षोडशी मन्त्र होता है।

यामल में कथन है कि श्रीबीज, मायाबीज, कामबीज, वाग्भवबीज, शक्तिबीज (सौः) प्रणव, मायाबीज, श्रीबीज, कामराजादि विद्या विपरीत क्रम से बाला के कूटत्रय और विपरीतक्रम से श्रीबीज और मायाबीज से ही आगमशास्त्र का सुप्रसिद्ध षोडशाक्षर मन्त्र बनता है।

रमादि पञ्च बीज से षट्कूट मन्त्र को पुटित करके मन्त्रोद्धार करना होता है। षट्कूट शब्द का अर्थ है—ॐ ह्रीं श्रीं त्रिकूट, क ए ई ल ह्रीं इत्यादि त्रिकूट। इन्हीं षट्कूटों को छः अक्षर मानकर षोडशाक्षर कहा जाता है।

निबन्ध ग्रन्थ में अन्य प्रकार का षोडशी मन्त्र बतलाया गया है। शान्तान्त (श) शिव (ह) का पूर्ववर्त्ती सप्तम वर्ण 'र' सूक्ष्मान्त ई मान्त अनुस्वार—इससे रमाबीज हुआ। देवी ह्रीं, दक्षिण बाहु क और शक्र ल—दो वर्णों के संयोग से क्ल उसमें कला ई का योग कर उसमें कामबिन्दु लगाने से क्लीं बनता है। दन्तान्त ए, उसमें मुख का ऊर्ध्व वर्ण बिन्दु मिलाने से वाग्बीज ऐं बनता है। जीव (स) में शेष दन्त औ का योग कर उसमें मुख (विसर्ग) लगाने से परा बीज सौः बनता है। ये पाँच बीज—श्रीं ह्रीं क्लीं ऐं सौः सर्वार्थसिद्धिप्रदायक हैं। पहले इन पाँचो बीजों का उल्लेख करके प्रणव, माया, श्रीबीज, कामबीज, प्रथम लोपामुद्रा विपरीतक्रम से उपर्युक्त पाँच बीज एकत्र करने से जो श्रीविद्या बनती है, वह अत्यन्त श्रेष्ठ, परात्परतरा, सर्वार्थसिद्धिदात्री, सारभूता और सारे संसार को उत्पन्न करंने वाली है। यह विद्या ब्रह्मस्वरूपा है। सगुणा, निर्गुणा और प्रपञ्च से अतीत है। सभी सुरासुरों ने इसकी सेवा की है। यह साधक की कामना पूर्ण करने वाली है।

भेदान्तरमाह कुब्जिकातन्त्रे—

परा च कमला कामो वाग्भवं शक्तिरेव च ।
तारशक्ती च कमला त्रिकूटां योजयेत्ततः ॥
शक्त्याद्यं व्युत्क्रमान्यस्येत् स्यान्महाषोडशी परा ।
इमां विद्यां महादेवि योगी भूपोऽथवा जपेत् ।
भुक्तिमुक्तिप्रदा विद्या अन्ते कैवल्यदायिनी ॥
पराद्या भुवनेशानि ज्ञेया भुवनसुन्दरी ।
कमलाद्या महाविद्याः ज्ञेया कमलसुन्दरी ॥
कामाद्या च महाविद्या विज्ञेया कामसुन्दरी ।
वाग्भवाद्या महाविद्या परा वाक्सुन्दरीमता ॥
शक्त्याद्या च महाविद्या विज्ञेया शक्तिसुन्दरी ।
ताराद्या च महाविद्या विज्ञेया तारसुन्दरी ॥
आनन्दसुन्दरी विद्या प्रथमा गुप्तरूपिणी ।
कामराजेन देवेशि लोपया च विशेषतः ।
स्यान्महाषोडशीमन्त्रश्चतुराद्यविपर्ययात् ॥

योगिनीतन्त्रे—

श्रीबीजं शक्तिबीजञ्च कामबीजञ्च वाग्भवम् ।
बालान्तसंस्थितं बीजं प्रणवञ्च ततः परम् ॥
शक्तिबीजं रमाञ्चैव विन्यसेत्परमेश्वरि ।
लोपाम्बा कामराजाम्बा भैरवीमथवा पराम् ॥
विन्यस्य पुनराद्यानि बीजानि पञ्च सुन्दरि ।

व्युत्क्रमेण समेतानि षोडशी भुवि दुर्लभा ।
तुरीयाया मनुं लक्षं जप्त्वा सिद्धीश्वरो भवेत् ॥

व्युक्रमेणेति पञ्चबीजानि विन्यस्य इत्यन्वयः। ज्ञानार्णवे—

वक्त्रकोटिसहस्रैस्तु जिह्वाकोटिशतैरपि ।
वर्णितुं नैव शक्येयं श्रीविद्या षोडशाक्षरी ॥
वैखरी वाच्यभावत्वादशक्ता गुणवर्णने ।
यतो निरक्षरं वस्तु परा तत्रैव कारणम् ॥
मूकीभूता हि पश्यन्ति मध्यमा मध्यमाभवत् ।
ब्रह्मविद्यास्वरूपा हि भुक्तिमुक्तिफलप्रदा ॥
एकोच्चारेण देवेशि वाजपेयस्य कोटयः ।
अश्वमेधसहस्राणि प्रादक्षिण्यं भुवस्तथा ॥
काश्यादितीर्थयात्राः स्युः सार्द्धकोटित्रयान्विताः ।
तुलां नार्हन्ति देवेशि नात्र कार्या विचारणा ॥
एकोच्चारेण गिरिजे किं पुनर्ब्रह्म केवलम् ।
षोडशार्णा महाविद्या न प्रकाश्या कदाचन ।
गोपनीया त्वया भद्रे स्वयोनिरिव पार्वति ॥

कुब्जिका तन्त्र में षोड़शी मन्त्र के उद्धार का वर्णन इस प्रकार का है—परा (ह्रीं), श्रीबीज, कामबीज, वाग्भवबीज, शक्ति (सौः), प्रणव, माया, श्रीबीज के बाद त्रिकूटा तब सौः आदि पाँच बीजों को विलोमक्रम से रक्खे। इसी को महाषोडशी और भुवनसुन्दरी मन्त्र कहते हैं। योगियों और राजाओं ने इसी मन्त्र का जप किया है। यह विद्या भोग और मोक्ष दोनों को देने वाली है। अन्त में कैवल्य प्रदान करती है। आदि में ह्रीं बीज लगाने से 'भुवनसुन्दरी' श्रीबीज लगाने से 'कमलसुन्दरी' के नाम से जाना जाता है। आदि में कामबीज लगाने से इसका नाम 'कामसुन्दरी' हो जाता है। आदि में 'ऐं' लगाने से 'वाक्सुन्दरी' हो जाता है। शक्तिबीज सौः के योग से 'शक्तिसुन्दरी' मन्त्र कहा जाता है। आदि में प्रणव लगाने से 'तारसुन्दरी' मन्त्र कहलाता है। प्रथमोक्त षोडशी मन्त्र में कामराज या लोपामुद्रा के कूट के सन्निवेश से प्रथम चतुष्टय मन्त्र के विपर्यय में इसका नाम 'आनन्दसुन्दरी' विद्या होता है।

योगिनीतन्त्र में वर्णन है कि श्रीबीज, मायाबीज, कामबीज, वाग्बीज, बाला का सौः, प्रणव के बाद लोपा, कामराज या भैरवी विद्या तब प्रथमोक्त पाँच बीज का विपरीत-क्रम से विन्यास करने से षोडशी विद्या होती है। इस मन्त्र का एक लाख जप करने से साधक सिद्धीश्वर हो जाता है। यह मन्त्र इस प्रकार का कामराज के साथ होता है—श्रीं ह्रीं क्लीं ऐं सौं ॐ कएईलह्रीं हसकहलह्रीं सकलह्रीं ॐ सौः ऐं क्लीं ह्रीं श्रीं।

ज्ञानार्णव में वर्णन है कि सहस्र कोटि मुखों और शतकोटि जिह्वाओं से भी षोडशाक्षरी श्रीविद्या का माहात्म्य कहा नहीं जा सकता है। कण्ठ में स्थित रहने वाली शब्दों की जननी वैखरी शक्ति भी इस मन्त्र का गुण वर्णन करने में असमर्थ है; क्योंकि वैखरी द्वारा केवल इन्द्रियग्राह्य वस्तुओं के गुण का ही वर्णन किया जा सकता है। षोड़शी विद्या इन्द्रियग्राह्य नहीं है। इस मन्त्र का प्रतिपाद्य तो निरक्षर तत्त्व है। अतः केवल परा शक्ति ही इसके गुणों को बताने में समर्थ है। पश्यन्ती शक्ति इसके गुणगान में मूक रह जाती है। मध्यमा शक्ति भी गुणवर्णन में प्रवृत्त होकर असमर्थतावश उदासीन हो जाती है। यह मन्त्र तो साक्षात् ब्रह्मविद्यास्वरूप है। इससे भोग और मोक्ष-जैसे फल प्राप्त होते हैं। इस मन्त्र का एक बार उच्चारण करने से जो फल मिलता है, वह कोटि वाजपेय यज्ञ, सहस्त्र अश्वमेध यज्ञ, सारे भूमण्डल की प्रदक्षिणा और साढ़े तीन करोड़ बार काशी आदि तीर्थयात्रा से भी प्राप्त नहीं होता। इस षोडशाक्षरी विद्या को कभी प्रकट नहीं करना चाहिये; अपितु सदैव गुप्त ही रखना चाहिये।

बीजावली षोडशी

रुद्रयामले—

श्रीबीजमाये संलिख्य तथैव च कुमारिकाम् ।
श्रीबीजमाये कामञ्च वाङ्माया कमलान्तथा ।
परां कामञ्च वाग्बीजं मायां श्रीबीजमेव च ॥
बीजावली षोडशीयं सर्वतन्त्रेषु गोपिता ।
राज्यं देयं शिरो देयं न देया बीजषोडशी ॥

ब्रह्मयामले—

आदौ लक्ष्मीं पराञ्चैवं तथैव च कुमारिकाम् ।
श्रीबीजञ्च पराबीजं कामं वाग्भवमेव च ।
पराश्रीबालिकाञ्चैव लिखेद्व्युत्क्रमयोगतः ॥
अन्ते दद्यात्परां श्रीञ्च सम्पूर्णा कथिता त्वयि ।
बाला प्रधाना विद्या च सर्वशास्त्रे च गोपिता ॥

तन्त्रान्तरे मन्त्रान्तरमाह—

आद्या कुण्डलिनी शक्तिः शक्तिराद्या ततः पराः ।
निवेशयेत्तयोर्मध्ये देवि गोविन्दवल्लभाम् ॥
ततस्तु मन्मथं बीजं बालाद्यं तदनन्तरम् ।
हृल्लेखारमयोर्वक्त्रे वेदवक्त्रं विनिक्षिपेत् ॥
ततो लोपां न्यसेद्देवि त्रिकूटामथवा पराम् ।

आद्यानि पञ्चबीजानि पश्चाद्विन्यस्य सुन्दरि ।
षोडशीयं सुगोप्या हि स्नेहाद्देवि प्रकाशिता ।।
अस्या माहात्म्यमतुलं जिह्वाकोटिशतैरपि ।
वक्तुं न शक्यते देवि किं पुनः पञ्चभिर्मुखैः ।।
अपि प्रियतमं देयं सुतदारधनादिकम् ।
राज्यं देयं शिरो देयं न देया षोडशाक्षरी ।।

बीजावली षोडशी—रुद्रयामल में वर्णन है कि क्रमश: श्री, माया, बाला, श्री, माया, काम, वाग, माया, श्री, परा, काम, वाग, माया और श्री को एकत्र करने से जो मन्त्र बनता है, वह इस प्रकार का है—श्रीं ह्रीं ऐं क्लीं सौ: श्रीं ह्रीं क्लीं ऐं ह्रीं सौ: क्लीं ऐं ह्रीं श्रीं। इसे बीजावली षोड़शी मन्त्र कहते हैं। इसे सभी तन्त्रों में गोपनीय बतलाया गया है। राज्य और अपना मस्तक भले ही दे दे; किन्तु इसे किसी को नहीं देना चाहिये।

ब्रह्मयामल के अनुसार श्री, माया, बाला, श्री, माया, काम, वाग्, विलोम बाला, श्री, माया; फिर माया और श्री को मिलाकर जो मन्त्र बनता है, वह है—श्रीं ह्रीं ऐं क्लीं सौ: श्रीं ह्रीं क्लीं ऐं सौ: क्लीं ऐं श्रीं ह्रीं ह्रीं श्रीं। यह पूरा षोड़शी मन्त्र है। यह विद्या सभी शास्त्रों में गोपनीय है। शिवजी कहते हैं कि हे देवि! आपके स्नेह से विवश होकर मैंने यह मन्त्र प्रकाशित किया है। सौ करोड़ जिह्वाओं से भी इसके माहात्म्य का वर्णन नहीं किया जा सकता। तब मैं अपने पाँच मुखों से क्या कह सकता हूँ। अपना प्रिय, सुत, दारा, धनादि दे देवे; राज्य और शिर भी दे दे; पर इस मन्त्र को किसी को न दे।

प्रकारान्तरेण षोडशीमाह सिद्धयामले—

कामो माया रमा बाला त्रिकूटा स्त्री भगाङ्कुशौ ।
काली कामकला कूर्चं सर्वादौ प्रणवः प्रिये ।।
श्रीमहाषोडशीयञ्च या ख्याता भुवनत्रये ।
ज्ञानेन मृत्युहा विद्या सर्वाम्नायैर्नमस्कृता ।।
सप्तलक्षमहाविद्यास्तन्त्रादौ कथिताः प्रिये ।
सारात्सारतराभूता या या विद्याः सुगोपिताः ।।
बहुना किमिहोक्तेन तासां सारा तु षोडशी ।
प्रकाशिता महादेवि या पृष्टा ते पुनः पुनः ।।

रुद्रयामले—

लोपामुद्रावाग्भवं तु पृथ्वान्ते शिवयोजनात् ।
सकारं कामराजादौ लोपा तु षोडशाक्षरी ।
अनया सदृशी विद्या न विद्यार्णवगोचरे ।।

तत्रैव—

विद्याराज्ञी वाग्भवे तु कान्तेऽनन्तनियोजनात् ।
षोडशार्णा महाविद्या चिद्‌ब्रह्मैक्यमयी शुभा ॥
लोपावाग्भवशक्रान्ते शिवबीजं नियोजयेत् ।
तथैव शक्तिबीजे तु लोपा सप्तदशाक्षरी ॥
लोपायाः शक्तिकूटान्ते हंसबीजयुता यदि ।
तदा सप्तदशी विद्या साक्षाज्ज्ञानस्वरूपिणी ॥
अस्याः स्मरणमात्रेण शिवो भवति नान्यथा ।
अणिमाद्यष्टसिद्धीशः साक्षाद्भूमिपुरन्दरः ॥

तत्रैवाष्टादशाक्षरी यथा लोपामुद्रामधिकृत्य—

अधरं विन्दुना युक्तं वाग्भवाद्ये नियोजयेत् ।
मादनं कामराजाद्ये तार्तीयाद्ये महेश्वरि ।
भृगुः सर्गान्वितो देवि मनुना च समन्वितः ॥
अष्टादशाक्षरी ह्येषा श्रीविद्या भुवि दुर्लभा ।
श्रीगुरोः कृपया देवि नित्यसिद्धिप्रदायिनि ॥
नवलक्षं जपित्वा तु लोपामुद्रां महेश्वरीम् ।
अष्टदशाक्षरी विद्या पश्चाद्राध्या वरानने ।
अन्यथा शापमाप्नोति कुलं तस्य विनश्यति ॥
सर्वकल्याणदा विद्या सर्वविघ्नविनाशिनी ।
सर्वसौभाग्यदा देवि सर्वमङ्गलकारिणी ।
अनया सदृशी विद्या त्रैलोक्ये चातिदुर्लभा ॥

तत्रैव—

कामराजाख्यविद्याया वाग्भवादौ तु वाग्भवम् ।
भुवनेशीं कामराजे श्रीबीजं शक्तिपूर्वतः ॥
एषाप्यष्टादशी प्रोक्ता सर्वसिद्धिप्रदायिका ।
भोगमोक्षप्रदा साक्षात् पुरुषार्थप्रदायिका ॥
अनया सदृशी विद्या त्रैलोक्ये चातिदुर्लभा ।
नास्ति नास्ति पुनर्नास्ति सत्यं सत्यं वदामि ते ॥

मन्त्रान्तरम्—

प्रणवं पूर्वमुद्धृत्य ततो वै कुलसुन्दरीम् ।
कामाक्षरं शक्तिवर्णं पुरन्दरहरौ ततः ॥

भुवनेशीं समुद्धृत्य विलोमां बालिकां ततः ।
प्रणवं सविसर्गन्तु ततो वै कुलसुन्दरीम् ॥
लोपावाग्भवमुद्धृत्य विलोमं बालिकां ततः ।
प्रणवं सविसर्गन्तु ततो वै कुलसुन्दरीम् ॥
शक्तिकूटमध्यभागे हकारं योजयेच्छिवे ।
विलोमां बालिकां तत्र ब्रह्मार्णः सविसर्गकः ॥
इति श्रीपरमा विद्या केवला मोक्षदायिनी ।
अस्या लक्षजपेनैव किं न सिध्यति भूतले ।
अस्याः स्मरणमात्रेण शिवो भवति नान्यथा ॥

कुलसुन्दरी बाला। ब्रह्मार्णः प्रणवः। योगिनीजालन्धरे कामराज विद्यामधिकृत्य—

वाङ्मारशक्तिबीजाद्यत्रिकूटाक्रमयोगतः ।
त्रिपुरामालिनी नाम्ना भवेदष्टादशाक्षरी ।
वर्णसंख्यार्द्धलक्षेण पुरश्चरणमिष्यते ॥

सिद्धयामल में मन्त्रकूटोक्तियों के उद्धार करने पर मन्त्र होता है—ॐ क्लीं ह्रीं श्रीं ऐं क्लीं सौः कएईलह्रीं हसकहलह्रीं सकलहीं स्त्रीं ऐं क्रों क्रीं ईं हुं। इस मन्त्र के ज्ञान से मृत्यु पराजित होती है। यह विद्या सभी आम्नायों में पूजित है। इसके मन्त्रोद्धार से ये बीज बनते हैं—प्रणव = ॐ, काम = क्लीं, माया = ह्रीं, बाला = ऐं क्लीं सौः, त्रिकूटा, पञ्चदशी, स्त्री, भग = ए, अंकुश = क्रों, काली = क्रीं, कामकला = ई और कूर्च = हुं। शिवजी कहते हैं कि हे देवि ! मैंने पहले आपको सात लाख विद्याओं को बतला दिया है। यह विद्या सारों का सार है और अत्यन्त ही गोपनीय है। अधिक कहने की क्या जरूरत है, उन सबों का सार यह षोड़शी विद्या है। तुम्हारे बार-बार पूछने पर मैंने इसे प्रकाशित किया है।

रुद्रयामल का मन्त्रोद्धार इस प्रकार का है। लोपामुद्रा के वागभव कूट के धराबीज ल के बाद शिवबीज ह जोड़े और कामकूट के पहले स लगावे। इससे यह मन्त्र बनता है—हसकलहह्रीं सहकहलह्रीं सकलह्रीं। विद्यासागर में इसके समान दूसरी कोई विद्या नहीं है।

रुद्रयामल के अनुसार ही इस प्रकार के तीन मन्त्र बनते हैं। उनमें पहला है—कअएईलह्रीं हसकलहह्रीं सकलह्रीं। इसे चिद्ब्रह्मैकमयी विद्या कहते हैं। दूसरा है—हसकलहह्रीं हसकहलह्रीं सकलहह्रीं। यह सप्तदशाक्षर मन्त्र है। यह साक्षात् ज्ञानस्वरूप है। तीसरा मन्त्र भी सप्तदशाक्षर है—हसकलह्रीं हसकहलह्रीं सकलह्रीं हंसः। इस मन्त्र

के स्मरणमात्र से साधक शिवतुल्य हो जाता है। उसे अणिमादि अष्ट सिद्धियाँ प्राप्त हो जाती हैं।

रुद्रयामल के अनुसार ही अष्टादशाक्षर मन्त्र इस प्रकार का है—ऐं हसकलह्रीं क्लीं हसकहलह्रीं सौः सकलह्रीं। यह तीनों लोकों में दुर्लभ है। यह गुरुकृपा से नित्य सिद्धि-दायिनी होती है। पहले लोपामुद्रा मन्त्र का नौ लाख जप करे। तब इस अष्टादशाक्षर मन्त्र का जप करे। ऐसा न करने से देवी शाप देती हैं और साधक के कुल का नाश हो जाता है। यह विद्या सभी प्रकार से कल्याण करने वाली है। सब विघ्नों को दूर करने वाली है। सभी सौभाग्यों को देने वाली है। सर्वमंगलमयी है। इसके समान विद्या तीनों लोकों में दुष्प्राप्य है।

रुद्रयामल के अनुसार ही एक और अष्टादशाक्षरी विद्या होती है, जो सर्वसिद्धिदायिनी है। वह विद्या है—ऐं कएईलह्रीं ह्रीं हसकहलह्रीं श्रीं सकलह्रीं। इसकी उपासना से भोग और मोक्ष दोनों की प्राप्ति होती है। यह पुरुषार्थ को सफल करती है। इसके समान दूसरी कोई विद्या नहीं है। नहीं है, नहीं है, नहीं है; मैं सच-सच कहता हूँ।

रुद्रयामल के अनुसार ही एक और विद्या है; वह है—ॐ ऐं क्लीं सौः कएलहह्रीं सौः क्लीं ऐं सौः ऐं क्लीं सौः हसकलह्रीं सौः क्लीं ऐं औः ऐं क्लीं सौः सकलहलह्रीं हसौः क्लीं ऐं औः। यह परमा विद्या मोक्षदायिनी है। इस मन्त्र का एक लाख जप करने से साधक के सभी कार्य सिद्ध होते हैं। वह शिव के समान हो जाता है।

योगिनीजालन्धर में वर्णन है कि कामराज विद्या के कूटत्रय के पहले वाग्बीज, कामबीज और शक्तिबीज लगाने से जो अष्टादशाक्षर मन्त्र बनता है, उसका नाम त्रिपुरमालिनी मन्त्र है। वह मन्त्र है—ऐं कएईलह्रीं क्लीं हसकहलह्रीं सौः सकलह्रीं। इसका पुरश्चरण नौ लाख जप से होता है।

श्रीक्रमे—

तां विद्यां शृणु देवेशि काममिन्द्रसमन्वितम् ।
नादविन्दुकलाभेदात्तुरीयस्वरसंयुतम् ।
महाश्रीसुन्दरी विद्या महात्रिपुरसुन्दरी ॥
ककारे सर्वमुत्पन्नं कामकैवल्यदायकम् ।
लकारे सकलैश्वर्यमीकारे सर्वसिद्धिदम् ।
एवं बीजत्रयं भद्रे विद्यानां सारसंग्रहम् ॥
वाग्भवं कामराजञ्च शक्तित्वे न नियोजयेत् ।
एकाक्षरेण कथिता ब्रह्मविद्यैव केवला ॥

कामराजलोपामुद्रयोर्विशेषमाह कुलोड्डीशे—

श्रीपरावाग्भवाख्यैश्च ईश्वरीतारमन्मथैः ।
आद्यभूतैर्भिद्यमाना सुन्दरी षड्विधा भवेत् ॥

तथा अनयोराद्ये कामो माया श्रीबीजं, मायाश्रीकामबीजं तथा त्रिविधा चाष्टादशाक्षरी। तथा च कुलोड्डीशे—

काममायारमापूर्वो माया लक्ष्मीः स्मरस्तथा ।
रमा माया तथा कामो वसुचन्द्राक्षरी त्रिधा ॥

'स्मरं योनिं लक्ष्मीं त्रितयमिदमाद्ये तव मनो'रिति भगवदाचार्येण प्रतिपादितम्। शक्तिकामराजन्तु श्रीक्रमे—

मायाबीजं ततो झिण्टी कामं शक्रं वियत्क्रमात् ।
जातवेदो मृगाङ्केन लाञ्छितं परमेश्वरी ॥
एतद्वाग्भवकूटञ्च पूर्वकं कामराजकम् ।
तत्रैव शक्तिबीजञ्च सुन्दर्येषा प्रकीर्तिता ॥

अत्रापि पूर्ववद्बीजसंयोगः। माया ईकारः। झिण्टी एकारः। पुनः शक्तिमाह—

एतद्भगं ततो माया ब्रह्मा शक्रो हरोऽग्निना ।
वामनेत्रेण संयुक्तो नादविन्दुविभूषितः ।
एतद्वाग्भवमुद्दिष्टं पूर्ववत् कामशक्तिकम् ॥

भग एकारः। अत्रापि पूर्ववद्बीजसंयोगः। अत्र विशेषः—

ब्रह्मबीजं यदा दद्यात्त्रिकूटेषु वरानने ।
प्रथमा सुन्दरी देवि द्वितीया ब्रह्मसुन्दरी ॥
शक्तिकूटे महेशानि अनन्तसुन्दरी मता ।
एषा तु षोडशी विद्या मतभेदेन दर्शिता ॥

श्रीक्रम में वर्णन है कि एकाक्षर मन्त्र 'क्लीं' महाश्रीसुन्दरी विद्या है। इसके ककार से सभी की उत्पत्ति होती है। यह भोग और मोक्ष को देने वाली है। लकार से सभी ऐश्वर्यो का उद्भव होता है। ईकार से सभी सिद्धियाँ मिलती हैं। यही बीजत्रय विद्या का सारसंग्रह है। इसका प्रथम वर्ण वाग्भवकूट, द्वितीय कामराजकूट और तृतीय शक्तिकूट है। अत: क्लीं मन्त्र से ही त्रिकूटात्मिका विद्या का कथन हुआ है।

कुलोड्डीश में वर्णन है कि श्रीबीज, बाला का अन्तिम बीज, वाग्बीज, मायाबीज, प्रणव और कामबीज—कुल छ: बीजों में से एक-एक को पूर्वोक्त मन्त्र के पहले लगाने से छ: प्रकार के सुन्दरी मन्त्र बनते हैं। कामराजमन्त्र और लोपामुद्रामन्त्र के पहले क्रमशः क्लीं ह्रीं श्रीं—तीन बीज, ह्रीं श्रीं क्लीं—तीन बीज और श्रीं ह्रीं क्लीं—ये तीन बीज लगाने

से तीन प्रकार के अष्टादशाक्षर मन्त्र बनते हैं। आचार्य ने इस बात की पुष्टि की है कि क्लीं ऐं श्रीं—ये तीन बीज कामराज और लोपामुद्रा मन्त्र के पहले लगाकर मन्त्रोद्धार करे।

श्रीक्रम में शक्ति कामराज मन्त्र इस प्रकार का है—माया = ई, झिंटी = ए, काम = क, इन्द्र = ल, वियत् = ह, अग्नि = र, मृगांक = ई—इन सबों को मिलाने से ई ए क ल ह्रीं बनता है। इसे वाग्भव कूट कहते हैं। तब पूर्वोक्त कामराज मन्त्र के कामकूट और शक्तिकूट लगाने से सुन्दरी मन्त्र बनता है। इसमें भी श्रीं सौ: ऐं ह्रीं ॐ क्लीं—इन बीजों को अलग-अलग लगाने से छ: प्रकार के मन्त्र बनते हैं। क्लीं ह्रीं श्रीं, ह्रीं श्रीं क्लीं, श्रीं ह्रीं क्लीं का योग करने से तीन प्रकार के मन्त्र बनते हैं।

पुन: शक्ति कामराज मन्त्र का वर्णन इस प्रकार का है—भग = ए, माया = ई, ब्रह्म = क, शक्र = ल, हर = ह में अग्नि = र और वाम नेत्र = ई लगाकर अन्त में बिन्दु लगाने से वाग्भव कूट होता है; जो है—एईकलह्रीं। इसके साथ कामराज मन्त्र के कामकूट और शक्तिकूट पूर्ववत् लगाने से मन्त्र बनता है—एईकलह्रीं हसकहलह्रीं सकलह्रीं। इसमें भी पूर्वोक्त बीजों का योग करने से छ: प्रकार के और तीन प्रकार के मन्त्र बनते हैं। कूटत्रय के प्रथम कूट में ब्रह्मबीज ॐ लगाने से सुन्दरी, द्वितीय कूट के पहले ॐ लगाने से ब्रह्मसुन्दरी और तीसरे कूट के पहले ॐ लगाने से अनन्तसुन्दरी मन्त्र होता है।

मन्त्रान्तरम्

त्रिकूटान्ते हंसबीजं विन्दुसर्गविभूषितम् ।
एषा श्रीप्राणसंयुक्ता दारिद्र्यदु:खमोचनी ॥

शक्तिलोपामुद्रा तु—

शक्तिर्महेश: कामश्च इन्द्रबीजं तत: परम् ।
महामाया तत: पश्चात्तव स्नेहाद्वदाम्यहम् ॥
पूर्ववत् कामशक्ताख्यौ वर्णौ निष्कीलितात्मकौ ।
इति शाक्ता महाविद्या पश्चिमाम्नाययोजिता ॥

शक्ति: सकार:, पूर्ववत् कामराजविद्यावत्। अत्रापि पूर्ववद्बीजसंयोग:।

त्रिकूट के अन्त में 'हंस' बीज जोड़ने से कएईलह्रीं हसकलहह्रीं सकलह्रीं हंस: मन्त्र बनता है। इसकी उपासना से साधक दरिद्रता के दु:ख से मुक्त हो जाता है।

पश्चिमाम्नाय में शक्ति लोपामुद्रा इस प्रकार का है—सहकलह्रीं हसकलह्रीं सकलह्रीं। इस मन्त्र के पहले पूर्ववत् बीजों को लगाने से अन्य मन्त्र बनते हैं।

अन्य प्रकार के लोपामुद्रा मन्त्र का प्रथम कूट हससकलह्रीं है। कामकूट और शक्तिकूट पूर्ववत् होते हैं। इस प्रकार मन्त्र है—हससकलह्रीं हसकलह्रीं सकलह्रीं । इसमें भी पूर्ववत् बीजों के संयोग से मन्त्र बनते हैं।

मन्त्रान्तर १—पूर्वाम्नाय में वाग्भव कूट शिवशक्ति माया हसह्रीं है। कामकूट कहह्रीं है और शक्तिकूट में सहह्रीं है। इस प्रकार मन्त्र है—हसह्रीं कहह्रीं सहह्रीं। यह नवाक्षर है।

मन्त्रान्तरम्

शिवबीजं शक्तिसोमं मादनञ्च पुरन्दरम् ।
व्योमवह्निसमायुक्तं तुरीयस्वरविन्दुकम् ।।
पूर्ववत् कामराजन्तु शक्तिबीजं समुद्धरेत् ।
एषा विद्या महेशानि वर्णितुं नैव शक्यते ।।

शक्ति सकार:, सोम: सकार:। पूर्ववत् कामराजविद्यावत्। अत्रापि पूर्ववद्बीजसंयोग:।

शिवशक्तिर्भुवनेशी वाग्भवं बीजमुत्तमम् ।
कामं व्योमं च देवेशि महामाया तत: परम् ।।
सोमं व्योम महामाया नवार्णा परिकीर्तिता ।
रुद्रशक्तिरियं देवि पूर्वाम्नाये हि नायिका ।।

मन्त्रान्तर २—इसके वाग्भव कूट में कलह्रीं, कामकूट में कहलह्रीं और शक्तिकूट में सकलह्रीं है। इसमें मन्त्र बनता है—कलह्रीं कहलह्रीं सकलह्रीं। यह एकादशाक्षरी विद्या अभीष्टसिद्धि प्रदान करती है।

मन्त्रान्तरम्

मादनं गोत्रभित् सास्तो रेफवामाक्षिचन्द्रवान् ।
नादविन्दुसमायुक्त: कथित: परमेश्वरि ।।
ब्रह्मा च गगनं शक्रो नकुलीशोऽनलस्तथा ।
मायाविन्दुसनादेन कामराजं समुद्धरेत् ।।
शक्तिर्मादनशक्रश्च हरो वह्निश्च मायया ।
नादविन्दुसमाक्रान्त: कथित: कामदो मनु: ।।
एषा विद्या महेशानि कथितैकादशाक्षरी ।।

मन्त्रान्तर ३—इस मन्त्र के वाग्भवकूट में कहक्षमलह्रीं है। शेष कामकूट और शक्तिकूट कामोपासिता विद्या के ही होते हैं। इससे मन्त्र होता है—कहक्षमलह्रीं हसकहलह्रीं सकलह्रीं।

मन्त्रान्तरम्

मादनं पञ्चवक्त्रञ्च लोहिता रुद्रयोगिनी ।
पुरन्दरो महामाया वाग्भवं बीजमुत्तमम् ।

पूर्ववत् कामशक्त्याख्यमुद्धरेद्देवि सुन्दरीम् ॥

लोहिता क्षकारः, रुद्रयोगिनी मकारः। पूर्ववत् कामराजविद्यावत्।

भृग्वीशं गगनं हान्तं कालमिन्द्रं महेश्वरम् ।
वामाक्षिवह्निविन्द्वाढ्यं वाग्भवं परमेश्वरि ।
कामराजं शक्तिकूटं पूर्ववत्तु समुद्धरेत् ॥

भृग्वीशः सकारः, हान्तः क्षकारः, कालो मकारः। पूर्ववत् कामराजविद्यावत्। सर्वत्र एवं क्रमः।

मन्त्रान्तर ४—इस मन्त्र के वाग्भव कूट में सहक्षमह्रीं होता है। शेष दो कूट पूर्ववत् होते हैं। मन्त्र है—सहक्षमह्रीं हसकहलह्रीं सकलह्रीं।

मन्त्रान्तरम्

विष्णुरीशस्ततो हान्तः कालेशः पृथिवी ततः ।
भुवनेशी ततः पश्चाद्वाग्भवं कथितं त्वयि ।
कामराजं शक्तिकूटं पूर्ववत् कथितं प्रिये ॥

विष्णुरीशः अकारयुक्तहकारः कालेशो मकारः ।

सुभगोदयां विद्यामाह श्रीक्रमे—

शक्तिः स्वयम्भूः शम्भुश्च शक्रश्च भुवनेश्वरी ।
शिवो मादनरुद्रेन्द्रमहामायास्ततः परम् ।
कामः शिवस्ततो ब्रह्मा इन्द्रश्च भुवनेश्वरी ॥
एषा तु परमेशानि सुन्दरी सुभगोदया ।
त्रिकूटान्ते हंसबीजं तदा सप्तदशी भवेत् ॥
वाग्बीजं विजया माया ब्रह्मा शक्रश्च पार्वती ।
मान्मथं शिवशक्तिं च मादनं हर इन्द्रकः ॥
महामाया ततः पश्चाच्छक्तिर्मनुः ससर्गकः ।
चन्द्रः प्रजापतिः शक्रो महामाया ततः परा ॥
अष्टादशाक्षरी विद्या महात्रिपुरसुन्दरी ।
सर्वान्ते हंससंयुक्ता विंशाक्षरी भवेत्तदा ॥

मन्त्रान्तर ५—इस मन्त्र के वाग्भव कूट में हक्षमलह्रीं होते हैं। शेष दो कूट पूर्ववत् होते हैं। मन्त्र है—हक्षमलह्रीं हसकहलह्रीं सकलह्रीं।

श्रीक्रम में सुभगोदय मन्त्र इस प्रकार का है—सहकलह्रीं हकहलह्रीं कहकलह्रीं। सुन्दरी का यह मन्त्र सौभाग्यदायक है। इस मन्त्र के अन्त में हंसः लगाने से यह सप्तदशाक्षर हो जाता है।

षोडशी का अष्टादशाक्षर मन्त्र इस प्रकार का है—ऐं एईकलह्रीं क्लीं हसकहलह्रीं, सौः सकलह्रीं। इसके अन्त में हंसः लगाने से यह विंशाक्षर हो जाता है।

श्रीदेव्युवाच—

भाषा सृष्टिः स्थितिहृती निराख्या पञ्चसुन्दरीः ।
कथयस्व प्रभो देव यदि ते रोचते मतिः ॥

ईश्वर उवाच—

शिवो मादन इन्द्रश्च शक्तिश्च भुवनेश्वरी ।
ब्रह्मा शिवेन्द्रौ शक्तिश्च महामाया ततः परा ।
मादनेन्दौ शक्तिशिवो महामाया तदन्तके ॥

शक्तिः सकारः। एषा भाषा।

शिवश्चन्द्रस्तथा कामः शक्रश्च भुवनेश्वरी ।
शिवेन्द्रौ कामरुद्रौ च चन्द्रश्च परमेश्वरी ।
शक्तिः कामश्च शक्रश्च महामाया ततः परा ॥

इयं सृष्टिः।

शिवेन्द्रौ कामशक्ती च महामाया ततः परम् ।
कामश्चन्द्रौ महेशश्च इन्द्रः शक्तिश्च पार्वती ।
ब्रह्मा महेश्वरः शक्तिः शक्रश्च भुवनेश्वरी ॥

स्थितिरेषा।

शिवेन्द्रौ कामशक्ती च तत्परा परमेश्वरी ।
शिवशक्तौ मादनेन्द्रौ शिवो वह्नीन्दुमायया ।
शिवः शक्तिश्च क-ल-हा वह्निमायेन्दुभूषिताः ॥

एषा संहृतिः।

शक्रो ब्रह्मा चन्द्रबीजं महामाया ततः परम् ।
वाग्भवं कथितञ्चैव कामराजं ततः शृणु ॥
शक्तिः शिवो मादनेन्द्रौ तत्परा परमेश्वरी ।
शिवः शक्तिश्च सोमश्च शून्यो ब्रह्मा महेश्वरी ॥

एषा निराख्या। शून्यो हकारः।

देव्युवाच—

स्वप्नावतीं मधुमतीं कथयस्व मयि प्रभो ।
इदानीं श्रोतुमिच्छामि यदि तेऽस्ति कृपा मयि ॥

ईश्वर उवाच—

शिवो मादनशक्रौ च शक्तिस्तु भुवनेश्वरी ।
महेशो ब्रह्मा हंसश्च इन्द्रोऽपि भुवनेश्वरी ॥
महेशः शक्तिः कामश्च पुरन्दरो वियत्तथा ।
अग्निमायाकलायुक्तं नादविन्दुविभूषितम् ॥

हंसो हकारः। मायाकला ईकारः।

एषा स्वप्नावती ख्याता कला पञ्चदशी च या ।

एषा स्वप्नावती।

ब्रह्मा महेश इन्द्रश्च शक्तिश्च भुवनेश्वरी ।
ब्रह्मा वियन्मरुच्छक्रस्तत्परा परमेश्वरी ।
मादनं सोमचन्द्रौ च शक्रश्च परमेश्वरी ॥

मरुत् यकारः।

एषा मधुमती ख्याता सर्वतन्त्रेषु गोपिता ।

एषा मधुमती।

श्रीक्रमे—

कामकेश्वरीविद्यैव त्रिकूटक्रमपाठिता ।
सौभाग्यायास्त्रिकूटेन पञ्चम्याः पञ्चकूटकम् ॥
त्रिपुरा या महाविद्या कूटैकादशनिर्मिता ।
सारात्सारतरा विद्या कथितैकादशाक्षरी ॥

पार्वती ने शिव से कहा कि हे प्रभो! मुझे भाषा, सृष्टि, स्थिति, संहार और निराख्या—पाँच प्रकार के सुन्दरी मन्त्र बताइये। शिव ने क्रमशः कहा—

भाषासुन्दरी मन्त्र में ह, क, ल, स, ह्रीं, क, ह, ल, स, ह्रीं, क, ल, स, ह, ह्रीं वर्ण होते हैं। इन्हें एकत्र करने पर मन्त्र होता है—हकलसह्रीं कहलसह्रीं कलसहह्रीं।

शिवो मादन इन्द्रश्च शक्तिश्च भुवनेश्वरी ।
ब्रह्मा शिवेन्द्रौ शक्तिश्च महामाया ततः परा ।
मादनेन्दौ शक्तिशिवो महामाया तदन्तके ।।

श्लोक के प्रतीकों का उद्धार करने पर यह मन्त्र बना है।

सृष्टिसुन्दरी—

शिवश्चन्द्रस्तथा कामः शक्रश्च भुवनेश्वरी ।
शिवेन्द्रौ कामरुद्रौ च चन्द्रश्च परमेश्वरी ।
शक्तिः कामश्च शक्रश्च महामाया ततः परा ।।

श्लोक के प्रतीकों का उद्धार करने पर इस मन्त्र में ह, स, क, ल, ह्रीं, ह, ल, क, ह, स, ह्रीं, स, क, ल, ह्रीं पन्द्रह वर्ण होते हैं। सभी को एकत्र करने पर मन्त्र होता है—हसकलह्रीं हलकहसह्रीं सकलह्रीं।

स्थितिसुन्दरी—

शिवेन्द्रौ कामशक्ती च तत्परा परमेश्वरी ।
शिवशक्तौ मादनेन्द्रौ शिवो वह्नीन्दुमायया ।
शिव: शक्तिश्च क-ल-हा वह्निमायेन्दुभूषिता: ।।

श्लोक के अनुसार इसमें प्रतीक है—शिव, इन्द्र, काम, शक्ति, माया। इनका उद्धार करने पर वाग्भव कूट में ह, ल, क, स, ह्रीं पाँच वर्ण होते हैं। इससे वाग्भव कूट हलकसह्रीं होता है। कामकूट में प्रतीक हैं—काम, चन्द्र, महेश, इन्द्र, शक्ति, माया। इनका उद्धार करने पर इस कूट में क स ह ल स ह्रीं वर्ण होते हैं। इससे कामकूट इस प्रकार का बनता है—कसलहसह्रीं। शक्तिकूट में प्रतीक हैं—ब्रह्मा, महेश, शक्ति, शक्र, माया। उद्धार करने पर इनमें क ह स ल ह्रीं वर्ण होते हैं। एकत्र करने पर कूट मन्त्र होता है—कहसलह्रीं। इन तीनों कूटों को एकत्र करने पर स्थितिसुन्दरी-मन्त्र होता है—हलकसह्रीं कसहलह्रीं कहसलह्रीं। यह पञ्चदशाक्षर है।

संहृतिसुन्दरी के वाग्भव कूट में शिव = ह, इन्द्र = ल, काम = क, शक्ति = स, माया = ह्रीं हैं। कूट हुआ—हलकसह्रीं। कामकूट में हैं—शिव = ह, शक्ति = स, मादन = क, इन्द्र = ल, शिव = ह, वह्नि = र, माया = ह्रीं। इससे कामकूट हुआ—हसकलहरह्रीं। शक्तिकूट में शिव = ह, शक्ति = स क ल ह र, माया = ह्रीं। इससे शक्तिकूट बनता है—हसकलहरह्रीं। तीनों कूटों को मिलाने पर मन्त्र बनता है—हलकसह्रीं हसकलहरह्रीं हसकलहरह्रीं।

निराख्या सुन्दरी—

शक्रो ब्रह्मा चन्द्रबीजं महामाया तत: परम् ।
वाग्भवं कथितञ्चैव कामराजं तत: शृणु ।।
शक्ति: शिवो मादनेन्द्रौ तत्परा परमेश्वरी ।
शिव: शक्तिश्च सोमश्च शून्यो ब्रह्मा महेश्वरी ।।

श्लोक के प्रतीकों का उद्धार करने पर निराख्या सुन्दरी मन्त्र बनता है। मन्त्र होता है—लकसह्रीं ऐं सहकलह्रीं हससहकह्रीं।

पार्वती ने कहा कि हे प्रभो ! स्वप्नावती और मधुमती मन्त्र मुझे बतलाने की कृपा करें। महादेव जी ने कहा कि **स्वप्नावती** मन्त्र में शिव, मादन, शक्र, शक्ति, माया, महेश, ब्रह्मा, हंस, पुरन्दर, माया, महेश, शक्ति, काम, इन्द्र, अग्नि, माया ई से युक्त ह है। प्रतीकों के उद्धार करने पर मन्त्र होता है—हकलसह्रीं हकहलह्रीं हसकलह्रीं।

मधुमती मन्त्र में हैं—ब्रह्मा-महेश-इन्द्र-शक्ति-माया, ब्रह्मा-वियत-मरुत-शक्र-परा, मादन-सोम-चन्द्र-शक्र-माया। इन प्रतीकों के उद्धार करने पर मन्त्र होता है—कहलसह्रीं कहयलह्रीं कससलह्रीं।

एकादश कूट मन्त्र—कामराज विद्या के तीन कूट के बाद सुभगा के तीन कूट, इसके बाद पञ्चमी विद्या के पाँच कूट को मिलाने से एकादश कूटा महाविद्या बनती है। यह इस प्रकार की है—कएईलह्रीं हसकहलह्रीं सकलह्रीं हसकलह्रीं हसकहलह्रीं सकलह्रीं कएईलह्रीं हसकलह्रीं हसहलह्रीं कहसलह्रीं हकलसह्रीं।

पञ्चमी

कामं विष्णुयुतं देवि शक्तिर्मायेन्द्र एव च।
महामाया ततः पश्चाद्वाग्भवं बीजमुद्धरेत्॥

विष्णुयुतमकारयुतमित्यर्थः। शक्तिरेकारः, माया ईकारः।

वियच्चन्द्रस्तथा पश्चात्कलौ नकुलि-वह्नि च।
मायास्वरेण संयुक्तं नादविन्दुकलान्वितम्।
प्रथमं कामराजस्य कूटं परमदुर्लभम्॥
वियद्विष्णुयुतं कामो हंसः शक्रस्ततः परम्।
महामाया ततः पश्चात् स्वप्नावतीति कथ्यते॥

एतद् द्वितीयकामराजकूटम्। हंसो हकारः।

मादनं शिवबीजञ्च वायुबीजं ततः परम्।
इन्द्रबीजं ततः पश्चान्महामायां समुद्धरेत्॥

इति तृतीयकूटम्। इयं मधुमती।

शिवबीजं ततः कामं इन्द्रं देवीं नियोजयेत्।
महामायां ततः पश्चाच्छक्तिकूटं समुद्धरेत्॥

देवी सकारः। कुलोड्डीशे—

वाग्भवं प्रथमं कूटं शक्तिकूटञ्च पञ्चमम्।
मध्यकूटत्रयं देवि कामराजं मनोहरम्।
कथिता पञ्चमी विद्या त्रैलोक्यसुभगोदया॥

ईश्वर उवाच—

शृणु देवि महाभागे शक्तिकूटं सुदुर्लभम्।
वाग्भवं प्रथमं कूटं कामराजं त्रिकूटकम्॥
शक्तिकूटं प्रवक्ष्यामि तव स्नेहाद्विशेषतः।

जीवप्राणौ महेशानि मादनं तदनन्तरम् ।
इन्द्रबीजं ततः पश्चाद् भुवनेशी तु पञ्चमम् ॥

इति वा शक्तिकूटम्। जीवः सकारः, प्राणो हकारः।

अथवा देवदेवेशि सौभाग्यायाश्च वाग्भवम् ।
कूटत्रयं कामराजं शक्तिबीजञ्च पूर्ववत् ॥
वामनेत्रादिकूटं वा भगादिकूटमेव वा ।
अरिहा सिद्धिदा विद्या सर्वदोषविवर्जिता ॥

भग एकारः। एतेनाष्टधा पञ्चमी वाग्भवशक्तिकूटभेदेन।

यामले—

द्विविधा पञ्चमी विद्या पञ्चपञ्चाक्षरी परा ।
मध्ये षडक्षरी चैव शक्तिश्च चतुरक्षरी ॥

षडिति कामराजविद्यामध्यकूटमित्यर्थः। शक्तिकूटमिति कामराजस्य शक्ति-कूटमित्यर्थः। एषा चतुर्द्धा वाग्भवकूटभेदात्। एतयोरष्टधा-चतुर्द्धा-व्यवस्थितयोः। कामराजस्य तृतीयकूटन्तु तत्रैव—

कामराजं महेशानि शिवबीजं ततः परम् ।
तदधो हंसबीजन्तु इन्द्रबीजं विचिन्तयेत् ।
महामाया ततः पश्चात्कूटं परमदुर्लभम् ॥

एषापि पूर्ववदष्टधा अन्या चतुर्द्धा। तथाच तत्त्वबोधे—

कामाकाशपराशक्रः संस्थानकृतरूपिणी ।

परा सकारः। संस्थानकृतरूपिणी महामाया। तथा च तन्त्रे—

कामबीजं महेशानि शम्भुबीजं ततः परम् ।
तदधश्चन्द्रबीजन्तु पृथ्वीबीजं ततो लिखेत् ।
तदन्ते च महामाया कूटं परमदुर्लभम् ॥

एषा पूर्ववदष्टधा, अन्या चतुर्द्धा, तेन षट्त्रिंशद्रूपिणी पञ्चमी। श्रीक्रमे—

एतासाञ्चैव विद्यानां प्राणं शृणु वरानने ।
रमां मायां हंसबीजं वाग्भवाद्ये नियोजयेत् ॥
शक्त्यन्ते महादेवि हंसं मायां रमान्तथा ।
एभिर्युक्तेन देवेशि विद्याजपनमाचरेत् ॥

जपश्च सप्तवारमेव दीपन्यां तथा दर्शनात्। एतासामिति पूर्वोक्तश्रीक्रमोक्त-विद्यानाम्। पञ्चम्यान्तु विशेषो यथा—

रमां मायां हंसबीजं वाग्भवाद्ये नियोजयेत् ।
शक्त्यन्ते तु महेशानि हंसं मायां रमान्तथा ॥
कामराजत्रये देवि ककारं शक्रसंयुतम् ।
मायाविन्द्वीश्वरयुतं सूर्यकोटिसमप्रभम् ॥
प्रथमं कामकूटस्य चाद्ये नियोजयेदिदम् ।
वान्तं वह्निसमायुक्तं वामनेत्रविभूषितम् ॥
नादविन्दुसमायुक्तं श्रियो बीजमुदाहृतम् ।
द्वितीयं कामराजन्तु जपेदुक्त्वा च सुन्दरि ॥
गगनं वह्निसंयुक्तं वामनेत्रविभूषितम् ।
नादविन्दुसमायुक्तं मायाबीजं प्रकीर्तितम् ।
मधुमतीं जपेच्चापि सर्वकामफलप्रदाम् ॥

पञ्चमी मन्त्र—१. विष्णुयुक्त काम = क, शक्ति = ए, माया = ई, इन्द्र = ल, माया = ह्रीं—इनको मिलाने से 'कएईलह्रीं' वाग्भव कूट बनता है।

२. वियत् = ह, चन्द्र, स, क, ल, नकुली = ह ई चन्द्रविन्दु से युक्त = ह्रीं। इनको एकत्र करने पर हसकलह्रीं कामराज कूट प्रथम होता है।

३. विष्णुयुक्त वियत् = ह, काम = क, हंस = ह, शक्र = ल, माया = ह्रीं। इनको एकत्र करने पर हकहलह्रीं दूसरा कामकूट बनता है। इसे स्वप्नावती भी कहते हैं।

४. मादन = क शिव = ह, वायु = य, इन्द्र = ल, माया = ह्रीं। इन सबों को मिलाकर कहयलह्रीं बनता है, जो तीसरा कामराज कूट है। यह मधुमती मन्त्र का मध्य कूट है।

५. शिव = ह, इन्द्र = ल, देवी = स, माया = ह्रीं को मिलाने से हलसह्रीं बनता है, जिसे शक्तिकूट कहते हैं।

उपर्युक्त पाँचों कूटों से पञ्चमी विद्या होती है। कुलोड्डीश में वर्णन हैं कि पहले वाग्भव कूट रक्खे, मध्य में तीनों कूटों को रक्खे, तब अन्त में पाँचवाँ कूट रक्खे, तब पञ्चमी विद्या बनती है। इसे 'सुभगोदया' मन्त्र भी कहते हैं। पाँचों कूटों के मिलाने पर मन्त्र का स्वरूप होता है—कएईलह्रीं हसकलह्रीं हकहलह्रीं कहयलह्रीं हलसह्रीं। यह पञ्चमी विद्या तीनो लोकों में सौभाग्यदायिनी है।

श्री महादेव ने कहा कि देवि! अब दुर्लभ शक्तिकूट का वर्णन सुनिये। पहले वाग्भव कूट, तब तीन कामराजकूट, तब शक्तिकूट होता है। शक्तिकूट में जीव = स, प्राण = ई, मादन = क, इन्द्र = ल, माया = ह्रीं होते हैं। इससे शक्तिकूट बनता है—सईकलह्रीं। इसके लगाने से दूसरे प्रकार की पञ्चमी विद्या बनती है। वह है—कएईलह्रीं हसकलह्रीं हकहलह्रीं कहयलह्रीं सईकलह्रीं।

शक्तिकूट दो प्रकार के हैं। अत: पूर्वोक्त क्रम के पञ्चमी विद्या के दो रूप होते हैं। इस पञ्चमी के वाग्भव के स्थान पर प्रथम लोपामुद्रा के वाग्भव कूट को रक्खे, तब पूर्ववत् कामराज विद्या के तीन कूट और तब शक्तिकूट रक्खे। ऐसा करने से द्विविध पञ्चमी के दो-दो करके चार रूप होते हैं। पहले के पञ्चमी के दो रूपों के वाग्भव कूट के स्थान पर में यदि शक्ति, कामराज कूट के ईकारादि कूट रक्खे तो दो और रूप होकर पञ्चमी के आठ रूप होते हैं। यह विद्या शत्रुनाशिनी, सिद्धिदायिनी और सभी दोषों से रहित है।

यामल में वर्णन है कि पञ्चमी विद्या के दो रूप हैं। पाँच कूटों में पाँच-पाँच अक्षर लेकर एक प्रकार की पञ्चकूटा होती है। उसके मध्य में तृतीय कूट के साथ स्वप्नावती के षडक्षर कूट हसकहलह्रीं को रक्खे। ऐसा करने से पञ्चमी विद्या पच्चीस अक्षरों की होती है। वह है—कएईलह्रीं हसकलह्रीं हसकहलह्रीं कहयलह्रीं सकलह्रीं। इसके वाग्भव कूट के स्थान पर प्रथम लोपामुद्रा का वाग्भव कूट ईकारादि या एकारादि कूट को जोड़े तब यह पञ्चमी चार रूपों वाली हो जाती है।

पूर्वोक्त आठ और इन चार रूपों के त्रिकूटात्मक कामराज कूट के तृतीय कूट में 'कहहलह्रीं' इन पाँच वर्णों की योजना करे तो आठ रूपों में आठ प्रकार और चार प्रकार होकर पञ्चमी चौबीस रूपों वाली होती है।

तत्त्वबोध के अनुसार कहसलह्रीं मन्त्र है। काम = क, आकाश = ह, परा = स, इन्द्र = ल, संस्थानकृत माया = ह्रीं को मिलाने से यह मन्त्र बना है।

तन्त्र में वर्णन है कि काम = क, शम्भु = ह, चन्द्र = स, पृथ्वी = ल, माया = ह्रीं से जो कूट—कहसलह्रीं बनता है, यह कूट दुर्लभ है। यह विद्या भी पूर्ववत् आठ रूपों की है। पञ्चमी चार रूपों की है। अत: पञ्चमी विद्या के छत्तीस रूप होते हैं।

श्रीक्रम में वर्णन है कि हे देवि ! सभी विद्याओं का जो मन्त्र प्राण है, उसे सुनो। श्रीं ह्रीं हंस: को वाग्भव कूट के पहले और हंस: ह्रीं श्रीं के शक्तिकूट के अन्त में लगाकर सात बार जप करे। ऐसा निर्देश दीपनी में है।

पञ्चमी विद्या के वाग्भव कूट के पहले श्रीबीज, मायाबीज और हंसबीज लगावे, शक्तिकूट के अन्त में हंसबीज, मायाबीज और श्रीबीज जोड़े तथा कामराज के कूटत्रय में कामबीज लगावे। अर्थात् पञ्चमी विद्या के वाग्भव कूट के पहले श्रीं ह्रीं हंस: लगाकर वाग्भव कूट का जप करे। फिर कामबीज क्लीं का जप कर कामराज के प्रथम कूट का जप करे। श्रीबीज 'श्रीं' का जप करके कामराज के द्वितीय कूट का जप करे। मायाबीज ह्रीं का जप कर कामराज के तृतीय कूट का जप करे। तब शक्तिकूट का जप करके हंस: ह्रीं श्रीं का जप करे। जप के पूर्व सात बार जप करे। आदि में ह्रीं लगाकर मधुमती मन्त्र का जप करने से सर्वाभीष्ट सिद्ध होते हैं।

दीपनी

तारं लक्ष्मीञ्च वाग्बीजं मन्मथं भुवनेश्वरीम् ।
एतज्जप्त्वा ततः पश्चाद्वाग्भवाख्यं समुच्चरेत् ॥
प्रणवं भुवनेशानीं रमां कामञ्च वाग्भवम् ।
कामराजं ततो जप्त्वा त्रैलोक्यक्षोभकारकः ॥
ॐकारञ्चैव वाग्बीजं रमां मन्मथमायया ।
स्वप्नावतीं महादेवि जपेत्तत्र समाहितः ॥
प्रणवं चाधरं कामं रमाञ्च भुवनेश्वरीम् ।
मधुमतीं ततो जप्त्वा मायां श्रीं कूर्चबीजकम् ॥
प्रणवाद्यञ्च देवेशि हंसबीजपुटीकृतम् ।
एतद्बीजं समुच्चार्य शक्तिकूटं ततो जपेत् ।
एषा तु दीपनी विद्या अजपा प्राणरूपिणी ॥

जपनियमस्तु—

जपेदादौ जपेत् पश्चात् सप्तवारमनुक्रमात् ।
कामराजादिविद्यानां दीपनीञ्चैव कारयेत् ।
वाग्भवे कामराजे तु शक्तिकूटे सुरेश्वरि ॥

अत्र पञ्चमीवद्बोध्या वाग्भवशक्तिकूटयोर्दीपनी। कामकूटे पुनः—

प्रणवं भुवनेशानीं रमां कामञ्च वाग्भवम् ।

दीपनीमिति। सर्वत्र कूटे स्वरसम्बन्धः। तथा च सौभाग्यादिविद्यामधिकृत्य योगिनीहृदये—

स्वरव्यञ्जनभेदेन सप्तत्रिंशत्प्रभेदिनी ।
सप्तत्रिंशत्प्रभेदेन षट्त्रिंशत्तत्त्वरूपिणी ।
तत्त्वातीतस्वभावा च विद्येषा भाव्यते सदा ॥
श्रीकण्ठदशकं तद्वदव्यक्तस्य हि वाचकम् ।
प्राणभूतस्थितो देवि तत्तदेकादशः परः ॥

दीपनी मन्त्र—प्रणव, श्रीबीज, वाग्बीज, कामबीज, मायाबीज अर्थात् ॐ श्रीं ऐं क्लीं ह्रीं—इस पञ्चाक्षर मन्त्र का जप करके वाग्भव कूट का उच्चारण करे।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं का जप करके कामराज कूट का जप करने से तीनों लोकों को क्षुब्ध किया जा सकता है। स्वप्नावती मन्त्र के पहले प्रणव, वाग्बीज, श्रीबीज, कामबीज, मायाबीज अर्थात् ॐ ऐं श्रीं क्लीं ह्रीं का जप करके तब स्वप्नावती का जप करे।

ॐ ऐं क्लीं श्रीं ह्रीं का जप करके मधुमती मन्त्र का जप करे। हंस: ॐ ह्रीं श्रीं हूं हंस: का जप करके शक्तिकूट का जप करे। इन सारे मन्त्रों को दीपनी विद्या कहते हैं। यही मन्त्र सभी विद्याओं का प्राणस्वरूप है। इस मन्त्र का जप अलग से न करे। उक्त सभी मन्त्रों के साथ जोड़कर इसका जप करे।

उक्त मन्त्र के जप के पहले सात बार और अन्त में सात बार जप करे। कामराजकूट, वाग्भवकूट और शक्तिकूट के दीपनी मन्त्रों का भी जप करे।

वाग्भव और शक्तिकूट का दीपनी मन्त्र उक्त पञ्चमी मन्त्र के दीपनी मन्त्र के समान ही है। कामराजकूट का दीपनी मन्त्र है—ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं।

इसके विषय में योगिनीहृदय तन्त्र में वर्णन है कि स्वर-व्यञ्जनभेद से उक्त विद्यासमूह सैंतीस प्रकार का है। इनमें छत्तीस प्रकार और छत्तीस स्वरूप हैं।

इस विद्या का ध्यान निरन्तर छत्तीस तत्त्वों के परे करे। क्लीब स्वर को छोड़कर अकारादि स्वर व्यंजन वर्ण के बोधक दस हैं। एकादश स्वर अनुस्वार मावनीय विद्याओं के प्राण के समान है।

श्रीयन्त्रम्

यथा—विन्दुमष्टास्रमष्टकोणं एतत्त्रितयं संहारचक्रम्। द्विदशारं चतुर्दशारम्। स्थितिचक्रमेतत्त्रयम्। अष्टपद्मं षोडशदलं वृत्तत्रयं भूसदनत्रयम् चतुर्द्वारसंयुक्तमेतत्सृष्ट्यात्मकम्। तदुक्तं यामले—

विन्दुत्रिकोण-वसुकोण-दशारयुग्म-
मन्वस्र-नागदलसङ्गतषोडशारम् ।
वृत्तत्रयञ्च धरणीसदनत्रयञ्च
श्रीचक्रराजमुदितं परदेवतायाः ॥

चक्रराजं सिन्दूरकुङ्कुमादिना लिखितम्। सुवर्णरजतपञ्चरत्नस्फटिकताम्राद्युत्कीर्णं वा कुर्यात्। श्रीक्रमे—

अकृत्वा सुसमां रेखां नालिख्यसुसमं मुखम् ।
योऽत्र यन्त्रे प्रवर्त्तेत तस्य सर्वं हराम्यहम् ॥
यस्या यत्र स्थितिर्देवि तत्र तां नार्चयेद्यदि ।
तन्मांसरुधिरेणैव पारणा तस्य जायते ॥
पशोरालोकनं न स्यात्तथा कुरुत यत्नतः ।
यदि दैवात् पशोरग्रे लिखितं विद्यते क्वचित् ।
ममाङ्गक्षतिरेवात्र क्रियते पापबुद्धिना ॥

तथा भूतभैरवे—

> **योऽस्मिन्यन्त्रे महेशानि केशराणि प्रकल्पयेत् ।**
> **योगिनीसहितास्तेषां हिंसां कुर्वन्ति भैरवाः ॥**

इति वचनान्नात्र केशराणि।

> **न रात्रावङ्कयेद्यन्त्रं साधकश्च कदाचन ।**
> **प्रमादादङ्किते यन्त्रे शापो भवति तत्क्षणात् ॥**
> **तत्रापराजितापुष्पे करवीरे जवासु च ।**
> **तत्र देवि वसेन्नित्यं तद्यन्त्रे पूजनं मम ॥**

श्रीयन्त्र—एक त्रिकोण बनाकर उसके मध्य में बिन्दु बनावे। उसके बाहर अष्टकोण बनावे। इन तीनों का नाम संहारचक्र है। इसके बाहर दो दशकोण और उसके बाहर चर्तुदश कोण बनावे। इन तीनों का नाम स्थितिचक्र है। इसके बाहर अष्टदल पद्म, उसके बाहर षोडश दल पद्म बनाकर उसके बाहर तीन वृत्त बनावे। उसके बाहर चार द्वारों से युक्त तीन भूपुर बनावे। इनका नाम है—सृष्टिक्रम।

श्रीयन्त्र
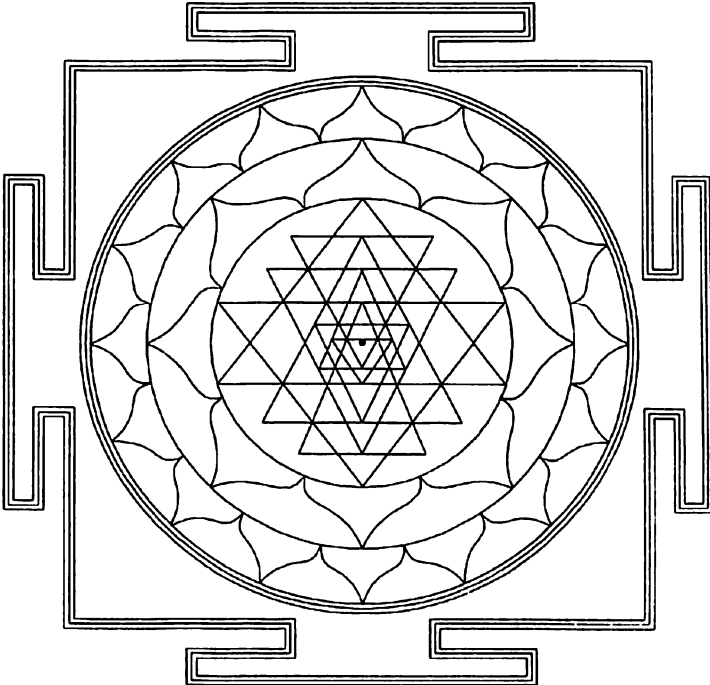
सिन्दूर या कुंकुम से इस यन्त्र को लिखे अथवा स्वर्ण, रौप्य, पञ्चरत्न, स्फटिक या ताम्रादि पर उत्कीर्ण कराकर यन्त्र बनबाए।

श्रीक्रम में महादेव ने कहा है कि जो साधक समरेखा न बनाकर समान मुख न बनाकर इस यन्त्र का निर्माण करता है, उसका सर्वस्व मैं हर लेता हूँ।

जिस स्थान पर जिस देवता की स्थिति निर्दिष्ट की गई है, वहाँ उस देवता की पूजा न करने से साधक के मांस और रक्त द्वारा उस देवता की पारणा होती है।

इस यन्त्र पर पशुभाव वालों की दृष्टि नहीं पड़नी चाहिये। ऐसी सतर्कता रखकर इसे अंकित करे। यदि दैवात् कोई पशुभाव के आगे इस यन्त्र को अंकित करता है तो वह मन्द बुद्धि साधक मेरे अंगक्षय से होने वाले पाप का भागी होता है।

भूतभैरव में वर्णन है कि इस यन्त्र को बनाते समय पद्म में केशर न बनावे। यदि कोई पद्म में केशर की कल्पना करता है, तब भैरवगण योगिनियों की सहायता से उसका नाश कर देते हैं। इस यन्त्र को रात के समय न लिखे। रात में लिखने से देवी तत्काल शाप देती हैं।

अपराजिता, कनैल और अड़हुल के फूलों में देवी का निवास होता है। अत: इन तीनों में से किसी एक में पुष्पयन्त्र के रूप में पूजन किया जा सकता है।

तथा स्वच्छन्दभैरवे—

कुर्याच्च स्थण्डिले यन्त्रं हस्तमात्रं सुसुन्दरम् ।
रत्नादिषु विनिर्मायमानमिच्छावशाद्भवेत् ॥
एकतोलं द्वितोलं वा त्रितोलं वेदतोलकम् ।
इतोऽधिकं नरः कृत्वा प्रायश्चित्ती भवेद्ध्रुवम् ॥
रक्तेन रजसापूर्य श्रीचक्रं भुवि पूजयेत् ।
नश्यन्ति सर्वविघ्नानि प्राप्यते च यथेप्सितम् ॥
दशभागं सुवर्णस्य ताम्रस्य द्वादशन्तथा ।
षड्दशं रजतस्यार्थं चैतल्लोहत्रयं भवेत् ॥
चक्रेऽस्मिन् पूजयेद्यो हि स सौभाग्यमवाप्नुयात् ।
अणिमाद्यष्टसिद्धीनामधिपो जायतेऽचिरात् ॥
विद्रुमै रचिते यन्त्रे पद्मरागेऽथवा प्रिये ।
इन्द्रनीलेऽथ वैदूर्ये स्फाटिके मरकतेऽपि वा ।
धनं पुत्रं तथा दारान् यशांसि लभते ध्रुवम् ॥
ताम्रन्तु कान्तिदं प्रोक्तं सुवर्णं शत्रुनाशनम् ।
राजतं क्षेमदञ्चैव स्फाटिकं सर्वसिद्धिदम् ॥

एतद्यन्त्रमात्रे ज्ञेयम्।

स्वच्छन्दभैरव में वर्णन है कि स्थण्डिल के ऊपर एक हाथ के मान में इस यन्त्र को बनावे। रत्नादि के द्वारा बनवाना हो तो इच्छानुसार १० ग्राम, २० ग्राम, ३० ग्राम या ४० ग्राम का रत्न लेकर यन्त्र बनवाया जा सकता है। इससे अधिक तौल में रत्न द्वारा यन्त्र बनवाने से साधक प्रायश्चित्त का भागी होता है।

भूमि में यन्त्र बनाकर लाल मिट्टी से उसे पूर्ण करे। पूजा करे। इससे साधक के सभी विघ्न दूर होते हैं एवं वांछितार्थ प्राप्त होता है।

सोना, चाँदी, ताम्बा को त्रिलोह कहते हैं। दस भाग सोना, बारह भाग ताम्बा और सोलह भाग चाँदी को मिलाकर उससे यन्त्र बनवावे। इस प्रकार के यन्त्र में पूजा करने से साधक सौभाग्यशाली होता है एवं शीघ्र ही वह अणिमादि अष्ट सिद्धियों का स्वामी होता है।

मूँगा, पुखराज, इन्द्रनीलमणि, नीलकान्तमणि, स्फटिक या मरकतमणि में यन्त्र बनवाकर पूजा करने से धन, पुत्र, पत्नी के साथ यश मिलता है। ताम्रयन्त्र में पूजा करने से कान्ति, सोने के यन्त्र में पूजन से शत्रुनाश एवं चाँदी के यन्त्र में कल्याण होता है। स्फटिक के यन्त्र में पूजा करने से सभी कार्यों में सफलता मिलती है। यह व्यवस्था सभी देव-देवियों के यन्त्र के बारे में है। यह नियम सबों के लिये हैं।

अथ श्रीचक्रनाशे प्रायश्चित्तम्—

दग्धञ्च स्फुटितं यन्त्रं हृतं चौरेण वा प्रिये।
उपवासं प्रकुर्वीत दिनमेकमतन्द्रितः॥
लक्षमात्रं जपेद्विद्यां होमतर्पणपूर्वकम्।
सद्भक्त्या च गुरुं तोष्य ब्राह्मणानपि भोजयेत्॥

लक्षं जप्त्वा दशांशतो होमं तद्दशांशं तर्पणञ्च कुर्यात्। लक्षमयुतमित्येके।

कदाचिल्लुप्तचिह्नं वा स्फुटितादिविदूषणम्।
भग्नं करोति यो मर्त्यो मृत्युस्तस्य ध्रुवं भवेत्॥
तस्माच्च तीर्थराजे वा गङ्गादिसरितां वरे।
समुद्रे वा क्षिपेद्देवि चान्यथा दुःखमाप्नुयात्॥

इदन्तु यन्त्रमात्रविषयम्।

अथ श्रीचक्रपादोदकमाहात्म्यम्—

गङ्गापुष्करनर्मदासु यमुना-गोदावरी-गोमती-
गङ्गाद्वार-गया-प्रयाग-बदरी-वाराणसी-सिन्धुषु।
रेवा-सेतु-सरस्वतीप्रभृतिषु ब्रह्माण्डभाण्डोदरे
तीर्थस्नान-सहस्रकोटिफलदं श्रीचक्रपादोदकम्॥

अथ श्रीचक्रदर्शनफलम्—

सम्यक् शतक्रतून् कृत्वा यत्फलं समवाप्नुयात् ।
तत्फलं लभते भक्त्या कृत्वा श्रीचक्रदर्शनम् ।।
षोडशं वा महादानं कृत्वा यल्लभते फलम् ।
तत्फलं समवाप्नोति कृत्वा श्रीचक्रदर्शनम् ।।
सार्द्धत्रिकोटितीर्थेषु स्नात्वा यल्लभते फलम् ।
तत्फलं लभते भक्त्या कृत्वा श्रीचक्रदर्शनम् ।।

श्रीचक्र यदि नष्ट हो जाय तब प्रायश्चित्त करना चाहिये। यन्त्र दग्ध हो जाय, टूट-फूट जाय या चोर द्वारा चुरा लिया जाय तो साधक एक दिन उपवास रहकर एक लाख जप करे। जप का दशांश हवन और हवन का दशांश तर्पण करे। तब भक्तिपूर्वक गुरुदेव को सन्तुष्ट करके ब्राह्मणभोजन करावे। कुछ लोग एक लाख के बदले दश हजार जप ही मानते हैं। किसी यन्त्र के लुप्त चिह्न, फूट जाने या भग्न होने पर उस यन्त्र को गंगादि नदियों के जल में, तीर्थ या सागर में विसर्जित कर दे। ऐसा न करने से साधक की मृत्यु हो जाती है। उसे विविध दुःख उठाने पड़ते हैं। सभी यन्त्रों के सम्बन्ध में यही नियम लागू है।

श्रीयन्त्रपादोदकमाहात्म्य—गंगा, पुष्कर, नर्मदा, यमुना, गोदावरी, गोमती, हरिद्वार, प्रयाग, वदरिकाश्रम, वाराणसी, सिन्धु, रेवा, सेतुबन्ध, सरस्वती आदि जितने भी तीर्थ पृथ्वी पर हैं, उन सबके स्नान से सहस्र कोटि गुना फल श्रीचक्रपादोदक के सेवन से मिलता है।

श्रीयन्त्र के दर्शन का फल—विधिवत् एक सौ यज्ञ करने पर जो फल होता है, वह श्रीयन्त्र के एक बार दर्शन करने से मिलता है। सोलह महादानों को करने से जो फल होता है, पुण्य मिलता है, वह श्रीचक्र के केवल एक बार के दर्शन से मिलता है। साढ़े तीन करोड़ तीर्थों में स्नान करने से जो फल होता है, वह श्रीचक्र का भक्तिपूर्वक केवल एक बार दर्शन करने से प्राप्त हो जाता है। यह व्यवस्था सभी यन्त्रों के बारे में समझनी चाहिये।

संक्षेपश्रीविद्यापद्धति:

प्रातःकृत्यादिप्राणायामान्तं कर्म विधाय ऋष्यादिन्यासं कुर्यात्। यथा— अस्य त्रिपुरसुन्दरीमन्त्रस्य दक्षिणामूर्त्तिर्ऋषिः पंक्तिच्छन्दः त्रिपुरसुन्दरी देवता वाग्भवं बीजं कामराजं कीलकं तार्तीयं शक्तिः पुरुषार्थचतुष्टयसिद्ध्यर्थे विनियोगः। तथा च ज्ञानार्णवे—

बीजञ्च वाग्भवं शक्तिस्तार्तीयं कीलकं ततः ।
कामराजं महेशानि बीजन्यासस्ततः परम् ।।

तद्यथा—शिरसि दक्षिणामूर्तये ऋषये नमः। मुखे पंक्तिच्छन्दसे नमः। हृदि त्रिपुरसुन्दर्यै देवतायै नमः। गुह्ये वाग्भवाय बीजाय नमः। पादयोस्तार्तीयाय शक्तये नमः। सर्वाङ्गे कामराजाय कीलकाय नमः।

तथा समयाङ्के—

त्रिपुरसुन्दरीमन्त्रस्य दक्षिणामूर्तये तथा ।
ऋषये नमः शिरसि पंक्तये छन्दसे नमः ।
मुखे त्रिपुरसुन्दर्यै देवायै नमो हृदि ॥

वाग्भवादिस्वरूपं दक्षिणामूर्तौ—

निःसरन्ति महामन्त्रा महाग्नेश्च स्फुलिङ्गवत् ।
तथैव मातृकावर्णा निःसृता वाग्भवात्प्रिये ।
अतएव तदेवास्या वाग्भवं बीजमुच्यते ॥
योषिं पुरुषरूपेण स्फुरन्ती विश्वमातृका ।
महामोहेन देवेशि कीलयन्ति जगत्त्रयम् ॥
अतस्तत्कीलकं देवि तेन सौभाग्यगर्विता ।
पालयन्ती जगत्सर्वं तेनेयं शक्तिरुच्यते ॥

संक्षिप्त श्रीविद्या-पूजापद्धति—इस ग्रन्थ के द्वितीय परिच्छेद में अंकित सामान्य पूजा पद्धति के अनुसार प्रातःकृत्य से प्राणायाम तक की सभी कियायें करके न्यास करे।

ऋष्यादि न्यास—अस्य त्रिपुरसुन्दरीमन्त्रस्य दक्षिणामूर्ति ऋषिः पंक्तिच्छन्दः त्रिपुरसुन्दरी देवता वाग्भव बीजं, कामराज कीलकं, तार्तीया शक्तिः, पुरुषार्थचतुष्टयसिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः।

ज्ञानार्णव में लिखा है कि हे महेशि! वाग्भव इसका बीज है, तृतीय कूट शक्ति और कामराज कीलक है। तब ऋष्यादि न्यास करे। जैसे—शिरसि दक्षिणामूर्तिऋषये नमः। मुखे पंक्तिच्छन्दसे नमः। हृदि त्रिपुरसुन्दर्यै नमः। गुह्ये वाग्भवाय बीजाय नमः। पादयोस्तार्तीयाय शक्तये नमः। सर्वांगे कामराजाय कीलकाय नमः।

समयांक में वर्णन है कि त्रिपुरसुन्दरी के न्यासकाल में 'दक्षिणामूर्तये ऋषये नमः' कह कर मस्तक में, 'पंक्तये छन्दसे नमः' कहकर मुख में और 'त्रिपुरसुन्दर्यै नमः' कहकर हृदय में न्यास करे।

दक्षिणामूर्तिसंहिता में वाग्भव का स्वरूप बताया गया है कि महाग्नि से जैसे क्षुद्र चिनगारियाँ निकलती हैं, वैसे ही वाग्भव बीज से सभी मातृकाओं का अविर्भाव होता है। अतः वाग्भव ही बीज कहा गया है। विश्वमातृका देवी स्त्री-पुरुष रूपों में आविर्भूत होकर

काम के मोह में तीनों जगत् को सम्बद्ध करती है। अत: कामराज कीलक कहा गया है। यह देवी तीनों जगत् का पालन करती है, इससे इसे शक्ति कहते हैं। तब वशिन्यादि का न्यास करे।

अथ वशिन्यादिन्यासः; यथा—अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं लृं लॄं एं ऐं ओं औं अं अः रवलुं वशिनी-वाग्देवतायै नमः ब्रह्मरन्ध्रे। कं खं गं घं ङं कलह्रीं कामेश्वरीवाग्देवतायै नमो ललाटे। चं छं जं झं ञं नवलीं मोदिनीवाग्देवतायै नमो भ्रूमध्ये। टं ठं डं ढं णं यलूं विमलावाग्देवतायै नमः कण्ठे। तं थं दं धं नं जमलीं अरुणावाग्देवतायै नमो हृदि। पं फं बं भं मं हसलवयूं जयिनी वाग्देवतायै नमो नाभौ। यं रं लं वं झमरयूं सर्वेश्वरीवाग्देवतायै नमो मूलाधारे। शं षं सं हं लं क्षं क्षमरीं कौलिनीवाग्देवतायै नमः सर्वाङ्गे। तथा च ज्ञानार्णवे—

अवर्गान्ते लिखेद्बीजं वह्निफान्तक्षमान्वितम् ।
वामकर्ण-विभूषाढ्यं विन्दुनादान्तिकं प्रिये ।
वशिनीं पूजयेद्वाचां देवतां देवि सुव्रते ॥
कवर्गान्ते महेशानि कलह्रीं बीजमुत्तमम् ।
कामेश्वरीं समुच्चार्य वाग्देवीं पूजयेत्ततः ॥
चवर्गान्ते धान्तफान्तक्षमातूर्यस्वरान्वितम् ।
मोदिनीं पूजयेद्वाचां नादविन्दुविभूषिताम् ॥
टवर्गान्ते वायुबीजं भूमिपूर्वं महेश्वरि ।
वामकर्णेन्दुविन्द्वाढ्यं विमलां वागधीश्वरीम् ॥
तवर्गान्ते जमक्ष्मान्तं वामनेत्रविभूषितम् ।
विन्दुनादान्वितं बीजं वाग्देवीमरुणां यजेत् ॥
पवर्गान्ते व्योमचन्द्रक्ष्मातोयानिलसंयुतम् ।
ऊकारस्वरसंयुक्तं विन्दुनादकलान्वितम् ॥
जयिनीं पूजयेद्वाचां देवतां वीरवन्दिते ।
यवर्गान्ते जान्तकालरेफवायुसमन्वितम् ॥
वामकर्णेन्दुशोभाढ्यं सर्वेशीं परिपूजयेत् ।
क्षमवह्निगतं तूर्यस्वरेण परिवेष्टितम् ॥
नादविन्दुकलाक्रान्तं कौलिनीं वाचमर्चयेत् ।
शवर्गान्ते महेशानि न्यसेत्सर्वार्थसिद्धये ॥
शिरोललाटभ्रूमध्यकण्ठहृन्नाभिदेशके ।
आधारे व्यूहके न्यासान्वर्गैरष्टभिराचरेत् ॥

ततः कराङ्गन्यासौ—अं मध्यमाभ्यां नमः। आं अनामिकाभ्यां नमः। सौः कनिष्ठाभ्यां नमः। अः अंगुष्ठाभ्यां नमः। आं तर्जनीभ्यां नमः। सौः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः। एवं ऐं हृदयाय नमः। क्लीं शिरसे स्वाहा। सौः शिखायै वषट्। ऐं कवचाय हुं। क्लीं नेत्रत्रयाय वौषट्। सौः अस्त्राय फट्। ततो मूलेन व्यापकं कृत्वा ध्यायेत्।।

बालार्कमण्डलाभासां चतुर्बाहुं त्रिलोचनाम् ।
पाशांकुशशरांश्चापं धारयन्तीं शिवां श्रये ॥

एवं ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्य आनन्दोऽहमिति विभाव्य शङ्खस्थापनं कुर्यात्।

वाग्देवतान्यास—अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं लृं ॡं एं ऐं ओं औं अं अ: वशिनी वाग्देवतायै नम: ब्रह्मरन्ध्रे। कं खं गं घं ङं कलह्रीं कामेश्वरी वाग्देवतायै नमो ललाटे। चं छं जं झं ञं नवलीं मोदिनी वाग्देवतायै नमो भ्रूमध्ये। टं ठं डं ढं णं यलूं विमला वाग्देवतायै नम: कण्ठे। तं थं दं धं नं जमलीं अरुणावाग्देवतायै नमो हृदि। पं फं बं भं मं हसलवयूं जयिनी वाग्देवतायै नमो नाभौ। यं रं लं वं झमरयूं सर्वेश्वरी वाग्देवतायै नमो मूलाधारे। शं षं सं हं ळं क्षं क्षमरीं कौलिनी वाग्देवतायै नम: सर्वांगे।

ज्ञानार्णव में वर्णन है कि इस न्यास के करने से साधक के सभी कार्य सिद्ध होते हैं। तब करन्यास और षडंग न्यास करे।

करन्यास—अं मध्यमाभ्यां नम:। आं अनामिकाभ्यां नम:। सौ: कनिष्ठाभ्यां नम:। अ: अंगुष्ठाभ्यां नम:। आं तर्जनीभ्यां नम:। सौ: करतलकरपृष्ठाभ्यां नम:।

हृदयादि न्यास—ऐं हृदयाय नम:। क्लीं शिरसे स्वाहा। सौ: शिखायै वषट्। ऐं कवचाय हुं। क्लीं नेत्रत्रयाय वौषट्। सौ: अस्त्राय फट्।

इसके बाद मूल मन्त्र से व्यापक न्यास करके ध्यान करे—

बालार्कमण्डलाभासां चतुर्बाहुं त्रिलोचनाम्।
पाशांकुशशरांश्चापं धारयन्तीं शिवां श्रये।।

श्रीविद्या देवी के शरीर की कान्ति लाल सूर्यमण्डल की कान्ति के समान है। वे चतुर्भुजा और त्रिनेत्रा हैं। हाथों में पाश, अंकुश, शर और चाप हैं। ऐसी शिवा का मैं भजन करता हूँ।

इस प्रकार का ध्यान करके मानसोपचारों से पूजा करे। तब आनन्दोऽहम् की भावना करके शंखस्थापन करे।

यथा—श्रीचक्रपुरतः स्ववामे षट्कोणमध्ये त्रिकोणं विलिख्य, तत्र त्रिपदिकां संस्थाप्य मूलेन षट्कोणं पूजयेत्। ततः फडिति शङ्खं प्रक्षाल्य, तत्र गन्धपुष्पादिकं

निक्षिप्य, मूलेन जलेनापूर्य, मण्डलादिकं पूजयेत्। मं वह्निमण्डलाय दशकलात्मने नमः, इति त्रिपदिकायाम्, अं सूर्यमण्डलाय द्वादशकलात्मने नमः इति शङ्खे, उं सोममण्डलाय षोडशकलात्मने नमः इति जले। तथा च निबन्धे—

प्रणवस्य त्रिभिर्भागैर्वह्निसूर्येन्दुमण्डलान् ।

ततः—

गङ्गे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति ।
नर्मदे सिन्धु कावेरि जलेऽस्मिन् सन्निधिं कुरु ॥

इति सूर्यमण्डलात्तीर्थमावाह्य हुमित्यवगुण्ठ्य षडङ्गेन पूजयेत्। ततो धेनुमुद्रां प्रदर्श्य मूलमष्टधा जप्त्वा तज्जलं किञ्चित्प्रोक्षणीतोये निक्षिप्य, तेनोदकेनात्मानं पूजोपकरणञ्चाभ्युक्षयेत्। तद्दक्षिणे पाद्यादिपात्रं संस्थाप्यासनपूजामारभेत्। यथा— उपर्युपरि यन्त्रस्थ ॐ आधारशक्तये नमः।

एवं प्रकृतये, कूर्माय, अनन्ताय, पृथिव्यै, रसाम्बुधये, रत्नद्वीपाय, नन्दनोद्यानाय, रत्नमण्डपाय, कल्पवृक्षाय, मणिवेदिकायै, रत्नसिंहासनाय। सर्वत्र ओङ्कारादि-नमोऽन्तेन पूजयेत्। पीठोपरि वैन्दवे चक्रे हसोः सदाशिवमहाप्रेतपद्मासनाय नमः।

ततो वैन्दवे ह् स् रैं, ह् स् क् ल् रीं, हसौं इति मन्त्रेण मूर्त्तिं सङ्कल्प्य, त्रिखण्डां मुद्रां बद्ध्वा पुनर्ध्यात्वा, प्रवहन्नासापुटेन तेजोमयं पुष्पाञ्जलावानीय—

ॐ महापद्मवनान्तःस्थे कारणानन्दविग्रहे ।
सर्वभूतहिते मातरेह्येहि परमेश्वरि ॥

इति मूर्त्तौ संस्थाप्य, आवाहनादि यथाशक्त्युपचारेण पूजां विधाय षडङ्गानि पूजयेत्।

श्रीचक्र के सामने अपने वाम भाग में षट्कोण के मध्य में त्रिकोण बनावे। उसमें त्रिपद स्थापित करे। मूल मन्त्र से षट्कोण की पूजा करे। फट् से शंख को धोकर उसमें गन्ध-पुष्पादि छोड़े। मूल मन्त्र से उसमें जल भरे। मण्डलादि की पूजा करे। मं वह्नि-मण्डलाय दशकलात्मने नमः से त्रिपद पर, अं सूर्यमण्डलाय द्वादशकलात्मने नमः से शंख में, उं सोममण्डलाय षोडशकलात्मने नमः से जल में पूजा करे। फिर जल में सूर्य-मण्डल से अंकुशमुद्रा द्वारा तीर्थों का आवाहन करे—

गंगे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति।
नर्मदे सिन्धु कावेरि जलेऽस्मिन् सन्निधिं कुरु।।

हुं से उसका अवगुण्ठन करके षडंग पूजन करे। धेनुमुद्रा दिखाकर मूल मन्त्र का आठ बार जप करके उस जल में से कुछ जल प्रोक्षणी पात्र के जल में छोड़े। उसका जल अपने

शरीर पर और पूजासामग्री पर छोड़े। तब उसके दाँयें भाग में पाद्यादि पात्रों की स्थापना करे। आसन पूजा प्रारम्भ करे।

आसन पूजा—ॐ आधारशक्तये नम:। ॐ प्रकृतये नम:। ॐ कूर्माय नम:। ॐ अनन्ताय नम:। ॐ पृथिव्यै नम:। ॐ रसाम्बुधये नम:। ॐ रत्नद्वीपाय नम:। ॐ नन्द-नोद्यानाय नम:। ॐ रत्नमण्डलाय नम:। ॐ कल्पवृक्षाय नम:। ॐ मणिवेदिकायै नम:। ॐ रत्नसिंहासनाय नम:। पीठ के ऊपर वैन्दव चक्र में हसौ: सदाशिवमहाप्रेत-पद्मासनाय नम: से पूजा करे।

इसके बाद वैन्दव चक्र में हस्रैं हसकलरीं हसौ: मन्त्र से देवी की मूर्ति कल्पित करके त्रिखण्डा मुद्रा दिखावे और ध्यान करके प्रवाहित नासाछिद्र से पुष्पाञ्जलि में देवी के तेज का आवाहन करे। तब यह मन्त्र बोलकर यन्त्रमूर्ति पर पुष्पाञ्जलि के साथ उक्त तेज को स्थापित करे। मन्त्र है—

ॐ महापद्मवनान्त:स्थे कारणानन्दविग्रहे।
सर्वभूतहिते मात एह्येहि परमेश्वरि।।

इसके बाद आवाहन आदि करके यथाशक्ति उपचारों से पूजा करे।

अग्नीशासुरवायव्यमध्ये दिक्षु च वाग्भवकूटमुच्चार्य हृदयाय नमः, कामराज-मुच्चार्य शिरसे स्वाहा, शक्तिकूटमुच्चार्य शिखायै वषट्, पुनर्वाग्भवमुच्चार्य कवचाय हुं, कामराजमुच्चार्य नेत्रत्रयाय वौषट्, शक्तिकूटमुच्चार्य अस्त्राय फट्। तथा च ज्ञानार्णवे—

अथाङ्गावरणं कुर्यात् श्रीविद्यामन्त्रसम्भवम् ।
ततो मध्यप्राक्त्र्यस्रमध्ये गुरुपंक्तिः प्रपूजयेत् ॥

यथा—ऐं ह्रीं श्रीं गुरुभ्यो नमः। एवं ऐं ह्रीं श्रीं गुरुपादुकाभ्यो नमः, ऐं ह्रीं श्रीं परमगुरुभ्यो नमः, ऐं ह्रीं श्रीं परमगुरुपादुकाभ्यो नमः, ऐं ह्रीं श्रीं परापरगुरुभ्यो नमः, ऐं ह्रीं श्रीं परापरगुरुपादुकाभ्यो नमः, ऐं ह्रीं श्रीं परमेष्ठिगुरुभ्यो नमः, ऐं ह्रीं श्रीं परमेष्ठिगुरुपादुकाभ्यो नमः, ऐं ह्रीं श्रीं आचार्येभ्यो नमः, ऐं ह्रीं श्रीं आचार्यपादुकाभ्यो नमः। सर्वत्र ऐं ह्रीं श्रीमिति बीजत्रयपूर्वकं पूजयेत्।

इसके बाद अग्नि, ईशान, नैर्ऋत्य, वायुकोणों में, मध्य में और चारो दिशाओं में षडंग पूजन करे।

प्रथम आवरण—षडंग पूजा—कएईलह्रीं हृदयाय नम:। हसकहलह्रीं शिरसे स्वाहा। सकलह्रीं शिखायै वषट्। कएईलह्रीं कवचाय हुं। हसकहलह्रीं नेत्रत्रयाय वौषट्। सकलह्रीं अस्त्राय फट्।

मध्य त्रिकोण और पूर्वत्रिकोण के मध्य में गुरुमण्डलार्चन करे—ऐं ह्रीं श्रीं गुरुभ्यो नमः। ऐं ह्रीं श्रीं गुरुपादुकाभ्यो नमः। ऐं ह्रीं श्रीं परमगुरुभ्यो नमः। ऐं ह्रीं श्रीं परमगुरु-पादुकाभ्यो नमः। ऐं ह्रीं श्रीं परापरगुरुभ्यो नमः। ऐं ह्रीं श्रीं परापरगुरुपादुकाभ्यो नमः। ऐं ह्रीं श्रीं परमेष्ठिगुरुभ्यो नमः। ऐं ह्रीं श्रीं परमेष्ठिगुरुपादुकाभ्यो नमः। ऐं ह्रीं श्रीं आचार्येभ्यो नमः। ऐं ह्रीं श्रीं आचार्यपादुकाभ्यो नमः।

ततश्चतुरस्रस्य प्रथमरेखायां ऐं ह्रीं श्रीं अणिमाद्यष्टसिद्धिश्रीपादुकां पूजयामि नमः। एवं मध्यरेखायां ऐं ह्रीं श्रीं ब्रह्माण्याद्यष्टदेवीश्रीपादुकां पूजयामि नमः। अन्तरेखायां ऐं ह्रीं श्रीं सर्वसंक्षोभिण्यादिमुद्राश्रीपादुकां पूजयामि नमः। सर्वत्रा-वरणपूजायां श्रीपादुकापदप्रयोगः। तथा च ज्ञानार्णवे—

श्रीपदं पूर्वमुच्चार्य पादुकापदमुद्धरेत् ।
पूजयामि नमः पश्चात्पूजयेदङ्गदेवताः ॥

चक्राग्रे ऐं ह्रीं श्रीं त्रिपुराचक्रनायिकाश्रीपादुकां पूजयामि नमः। अत्र त्रैलोक्य-मोहनचतुरस्रचक्रे त्रिपुराचक्रनायिकाधिष्ठिते एता अणिमाद्याः प्रकटयोगिन्यः समुद्राः सायुधाः सपरिवाराः सवाहनाः पूजितास्तर्पिताः सन्तु, इत्यर्घ्यजलेन मूलदेव्यै समर्पयेत् । त्रिपुरापदव्युत्पत्तिस्तु वाराहीये—

ब्रह्मविष्णुमहेशाद्यैस्त्रिदशैरर्चिता पुरा ।
त्रिपुरेति तदा नाम कथितं दैवतैरपि ॥

तर्पणन्तु वामहस्तकृततत्त्वमुद्रया। तथा च स्वतन्त्रे—

अंगुष्ठानामिकायोगाद्वामहस्तेन पार्वति ।
तर्पयेत्सुन्दरीं देवीं समुद्राञ्च सवाहनाम् ॥

द्वितीय आवरण—भूपुर की प्रथम रेखा में ऐं ह्रीं श्रीं अणिमाद्यष्टसिद्धिश्रीपादुकां पूजयामि नमः, मध्य रेखा में ऐं ह्रीं श्रीं ब्रह्माण्याद्यष्टदेवीश्रीपादुकां पूजयामि नमः। तीसरी रेखा में ऐं ह्रीं श्रीं सर्वसंक्षोभण्यादिमुद्राश्रीपादुकां पूजयामि नमः।

ज्ञानार्णव में लिखा है कि श्रीपादुकां पूजयामि नमः कहकर अंगदेवताओं की पूजा करे। चक्र के अग्रभाग में त्रिपुराचक्रनायिकाश्रीपादुकां पूजयामि नमः से पूजा करे। यहाँ त्रैलोक्यमोहन चक्र में त्रिपुरचक्रनायिकाऽधिष्ठिते एताः अणिमाद्याः प्रकटयोगिनिभ्यः समुद्राः सायुधाः सपरिवाराः सवाहनाः पूजितास्तर्पिताः सन्तु नमः—इस मन्त्र से अर्घ्य जल छोड़ कर मूल देवी को समर्पित करे।

वाराही तन्त्र में त्रिपुरा शब्द की व्युत्पत्ति बतलायी गयी है कि प्राचीन काल में ब्रह्मा, विष्णु और महेश आदि देवताओं ने इनका पूजन किया था। इसी से इनका नाम त्रिपुरा पड़ा। देवताओं का एक नाम त्रिदश है। इसमें भी त्रि लगा है। ब्रह्मा, विष्णु, महेश देवत्रय

ने त्रिदशगणों के साथ पूजन किया। अत: पूज्य का नाम त्रिपुरा हो गया।

बाँयें हाथ में तत्त्वमुद्रा बाँधकर तर्पण किया जाता है। स्वतन्त्रतन्त्र में लिखा है कि बाँयें हाथ के अँगूठे और अनामिका को मिलाने से तत्त्वमुद्रा होती है। इसी तत्त्वमुद्रा से सवाहना देवी की पूजा होती है।

ततः षोडशपत्रेषु ऐं ह्रीं श्रीं अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं लृं लॄं एं ऐं ओं औं अं अः कामाकर्षिण्यादिषोडशनित्याकलाश्रीपादुकां पूजयामि नमः। चक्राग्रे ऐं ह्रीं श्रीं त्रिपुरेशीश्रीचक्रनायिकाश्रीपादुकां पूजयामि नमः। अथ सर्वाशापरिपूरके षोडशदलचक्रे त्रिपुरेशीचक्रनायिकाधिष्ठिते एताः कामाकर्षिण्याद्याः गुप्तयोगिन्यः समुद्रा इत्यादि पुनर्मूलदेव्यै समर्पयेत्।

तृतीय आवरण—षोडशपत्र में ऐं ह्रीं श्रीं अं आं इं ई उं ऊं ऋं ॠं लृं लॄं एं ऐं ओं औं अं अ: कामाकर्षिण्यादिषोडशनित्याकलाश्रीपादुकां पूजयामि नम: से पूजन करे। अग्र-भाग में ऐं ह्रीं श्रीं त्रिपुरेशीश्रीचक्रनायिकाश्रीपादुकां पूजयामि नम: से पूजा करे। तब सर्वाशापरिपूरके षोडशदलचक्रत्रिपुरेशीचक्रनायिकाऽधिष्ठिते एता: कामाकर्षिण्याद्या: गुप्त-योगिन्य: समुद्रा:, सायुधा: सपरिवारा: सवाहना: पूजितास्तर्पिता: सन्तु नम: इस मन्त्र से अर्घ्य जल छोड़कर पूर्ववत् पूजा मूलदेवी को समर्पित करे।

ततोऽष्टदले ऐं ह्रीं श्रीं अनङ्गकुसुमाद्यष्टदेवी-श्रीपादुकां पूजयामि नमः। चक्राग्रे ऐं ह्रीं श्रीं त्रिपुरसुन्दरीचक्रनायिकाश्रीपादुकां पूजयामि नमः। अत्र सर्वसंक्षोभकरे अष्टदलचक्रे त्रिपुरसुन्दरीचक्रनायिकाधिष्ठिते एता अनङ्गकुसुमाद्या गुप्ततरयोगिन्यः समुद्रा इत्यादि मूलदेव्यै समर्पयेत्।

चतुर्थ आवरण—अष्टदल में ऐं ह्रीं श्रीं अनंगकुसुमाद्यष्टदेवीश्रीपादुकां पूजयामि नम: से पूजा करे। चक्र के अग्रभाग में ऐं ह्रीं श्रीं त्रिपुरसुन्दरीचक्रनायिकाश्रीपादुकां पूजयामि नम: से पूजा करे। तब सर्वसंक्षोभकरे अष्टदलचक्रे त्रिपुरसुन्दरीचक्रनायिकाऽधिष्ठिते एता: अनंगकुसुमाद्या: गुप्ततरयोगिन्य: समुद्रा: सायुधा: सपरिवारा: सवाहना: पूजितास्तर्पिता: सन्तु से अर्घ्यजल देकर पूजा मूलदेवी को समर्पित करे।

ततश्चतुर्दशारचक्रे ऐं ह्रीं श्रीं सर्वसंक्षोभिण्यादिचतुर्दशदेवीश्रीपादुकां पूजयामि नमः। चक्राग्रे ऐं ह्रीं श्रीं त्रिपुरवासिनीचक्रनायिकाश्रीपादुकां पूजयामि नमः। अत्र सर्वसौभाग्यदायके चतुर्दशारचक्रे त्रिपुरवासिनीचक्रनायिकाधिष्ठिते एताः सर्व-संक्षोभिण्यादिशक्तयः सम्प्रदाययोगिन्यः समुद्रा इत्यादि मूलदेव्यै समर्पयेत्।

पञ्चम आवरण—चतुदर्शार चक्र में ऐं ह्रीं श्रीं सर्वसंक्षोभिण्यादिचतुर्दशदेवीश्रीपादुकां पूजयामि नम: से पूजा करे। चक्र के अग्रभाग में ऐं ह्रीं श्रीं त्रिपुरवासिनीचक्रनायिकाश्रीपादुकां

पूजयामि नम: से पूजा करे। तब इस मन्त्र से अर्घ्यजल देकर पूजा देवी को समर्पित करे। सर्वसौभाग्यदायिके चतुर्दशारचक्रे त्रिपुरवासिनीचक्रनायिकाऽधिष्ठिते एता: सर्वसंक्षोभिण्यादि-शक्तय: सम्प्रदाययोगिन्य: समुद्रा: सायुधा: सपरिवारा: सवाहना: पूजितास्तर्पिता: सन्तु नम:।

बहिर्दशारचक्रे ऐं ह्रीं श्रीं सर्वसिद्धिप्रदादेवीश्रीपादुकां पूजयामि नमः। चक्राग्रे ऐं ह्रीं श्रीं त्रिपुराश्रीचक्रनायिकाश्रीपादुकां पूजयामि नमः। अत्र सर्वार्थसाधके बहिर्दशारचक्रे त्रिपुराचक्रनायिकाधिष्ठिते एताः सर्वसिद्धिप्रदादिदेव्यः कुलकौलिनी-योगिन्यः समुद्रा इत्यादि मूलदेव्यै समर्पयेत्।

षष्ठ आवरण—बहिर्दशार चक्र में ऐं ह्रीं श्रीं सर्वसिद्धिप्रदादेवीश्रीपादुकां पूजयामि नम: से पूजा करे। चक्र के अग्रभाग में ऐं ह्रीं श्रीं त्रिपुराश्रीचक्रनायिकाश्रीपादुकां पूजयामि नम: से पूजा करे। तब इस मन्त्र से अर्घ्य जल देकर पूजा देवी को समर्पित करे—सर्वार्थ-साधिके बहिर्दशारचक्रे त्रिपुरानायिकाऽधिष्ठिते एता: सर्वसिद्धिप्रदादिदेव्य: कुलकौलिनीयोगिन्य: समुद्रा: सायुधा: सपरिवारा: सवाहना: पूजितास्तर्पिता: सन्तु।

अन्तर्दशारचक्रे ऐं ह्रीं श्रीं सर्वज्ञादिदेवीश्रीपादुकां पूजयामि नमः। चक्राग्रे ऐं ह्रीं श्रीं त्रिपुरमालिनीचक्रनायिकाश्रीपादुकां पूजयामि नमः। अत्र सर्वरक्षाकरा-न्तर्दशारचक्रे त्रिपुरमालिनीचक्रनायिकाधिष्ठिते एताः सर्वज्ञाद्या देव्यो निगर्वयोगिन्यः समुद्रा इत्यादि मूलदेव्यै समर्पयेत्।

सप्तम आवरण—अन्तर्दशार चक्र में ऐं ह्रीं श्रीं सर्वज्ञादिदेवीश्रीपादुकां पूजयामि नम: से पूजा करे। चक्र के अग्रभाग में ऐं ह्रीं श्रीं त्रिपुरमालिनीचक्रनायिकाश्रीपादुकां पूजयामि नम: से पूजा करे। तब यह मन्त्र पढ़कर अर्घ्यजल छोड़े—सर्वरक्षाकरे अन्तर्दशारचक्रे त्रिपुरमालिनीचक्रनायिका अधिष्ठिते एता: सर्वज्ञाद्या: देव्यो निगर्भयोगिन्य: समुद्रा: सायुधा: सपरिवारा: सवाहना: पूजितास्तर्पिता: सन्तु नम:। पूजा मूल देवी को समर्पित करे।

अष्टारचक्रे ऐं ह्रीं श्रीं वशिन्याद्यष्टवाग्देवताश्रीपादुकां पूजयामि नमः। चक्राग्रे ऐं ह्रीं श्रीं त्रिपुरसिद्धाचक्रनायिकाश्रीपादुकां पूजयामि नमः। अत्र सर्वरोगहराष्टारचक्रे त्रिपुरसिद्धाचक्रनायिकाधिष्ठिते एता वशिन्याद्या रहस्ययोगिन्यः समुद्रा इत्यादि मूलदेव्यै समर्पयेत्।

अष्टम आवरण—अष्टार चक्र में ऐं ह्रीं श्रीं वशिन्यादि अष्टवाग्देवताश्रीपादुकां पूजयामि नम: से पूजा करे। चक्र के अग्रभाग में ऐं ह्रीं श्रीं त्रिपुरसिद्धाचक्रनायिकाश्रीपादुकां पूजयामि नम: से पूजा करे। तब यह मन्त्र पढ़कर अर्घ्यजल देवे—सर्वरोगहरे अष्टारचक्रे त्रिपुरसिद्धाचक्रनायिका अधिष्ठिते एता: वशिन्यादिरहस्ययोगिन्य: समुद्रा: सायुधा: सपरिवारा: सवाहना: पूजितास्तर्पिता: सन्तु। पूजा मूल देवी को समर्पित करे।

तत्रान्तरालत्र्यस्रे मूलषडङ्गानि पूजयेत्। ततोऽग्रकोणे ऐं ह्रीं श्रीं कामेश्वरी-नित्याश्रीपादुकां पूजयामि नमः। दक्षिणकोणे ऐं ह्रीं श्रीं वज्रेश्वरीनित्याश्रीपादुकां पूजयामि नमः। वामकोणे ऐं ह्रीं श्रीं भगमालिनीनित्याश्रीपादुकां पूजयामि नमः। चक्राग्रे ऐं ह्रीं श्रीं त्रिपुराम्बिकाश्रीपादुकां पूजयामि नमः।

अत्र सर्वसिद्धिप्रदे त्र्यस्रचक्रे वाणचापपाशाङ्कुशविभूषितान्तराले त्रिपुराम्बिका-चक्रनायिकाधिष्ठिते एताः कामेश्वर्याद्याः रहस्यातिरहस्ययोगिन्यः समुद्रा इत्यादि मूलदेव्यै समर्पयेत्।

नवम आवरण—त्र्यस्र के अन्तराल में मूल षडंगों की पूजा करे। तब अग्रकोण में ऐं ह्रीं श्रीं कामेश्वरी नित्याश्रीपादुकां पूजयामि नमः से पूजा करे। दक्षिण कोण में ऐं ह्रीं श्रीं वज्रेश्वरी नित्याश्रीपादुकां पूजयामि नमः से पूजा करे। वामकोण में ऐं ह्रीं श्रीं भगमालिनी नित्याश्रीपादुकां पूजयामि नमः से पूजा करे। तब अग्रभाग में त्रिपुराम्बिकाश्रीपादुकां पूज-यामि नमः से पूजा करे। तब सर्वसिद्धिप्रदे त्र्यस्रचक्रे वाणचापपाशांकुशविभूषितान्तराले त्रिपुराम्बिकाचक्रनायिका अधिष्ठिते एताः कामेश्वर्यादिरहस्यातिरहस्ययोगिन्यः समुद्राः सायुधाः सपरिवाराः सवाहनाः पूजितास्तर्पिताः सन्तु से अर्घ्यजल देकर मूल देवी को पूजा समर्पित करे।

ततो विन्दुमध्ये ऐं ह्रीं श्रीं श्रीमहात्रिपुरसुन्दरीनित्याश्रीपादुकां पूजयामि नमः। इति त्रिवारं पूजयेत्। वामे ऐं ह्रीं श्रीं योनिमुद्राश्रीपादुकां पूजयामि नमः। चक्राग्रे ऐं ह्रीं श्रीं त्रिपुरभैरवीचक्रनायिकाश्रीपादुकां पूजयामि नमः। अत्र सर्वानन्दमये परब्रह्मस्वरूपिणी वैन्दवे चक्रे त्रिपुरभैरवीचक्रनायिकाधिष्ठिते एताः सर्वचक्रेश्वरी-योगिन्यः समुद्राः सायुधाः सवाहनाः सपरिवाराः पूजितास्तर्पिताः सन्तु इति मूल-देव्यै समर्पयेत्।

ततो धूपादिविसर्जनान्तं कर्म समापयेत्। अस्य पुरश्चरणं लक्षजपः। तथा च वामकेश्वरतन्त्रे—

तत्र स्थित्वा जपेल्लक्षं साक्षाद्देवीस्वरूपधृक् ।
किंशुकैर्हवनं कुर्याद्दशांशञ्च वरानने ।
कुसुम्भकुसुमैर्वापि मधुरत्रयमिश्रितैः ॥

दशम आवरण —बिन्दु में ऐं ह्रीं श्रीं महात्रिपुरसुन्दरी नित्याश्रीपादुकां पूजयामि नमः से तीन बार पूजन करके वाम भाग में ऐं ह्रीं श्रीं योनिमुद्राश्रीपादुकां पूजयामि नमः से पूजा करे। चक्र के अग्रभाग में ऐं ह्रीं श्रीं त्रिपुरभैरवीचक्रनायिकाश्रीपादुकां पूजयामि नमः से पूजा करे।

सर्वानन्दमये परब्रह्मस्वरूपिणी वैन्दवचक्रे त्रिपुरभैरवीचक्रनायिका अधिष्ठिते एताः

सर्वचक्रेश्वरीयोगिन्यः समुद्राः सायुधाः सवाहनाः सपरिवाराः पूजितास्तर्पिताः सन्तु से अर्घ्यजल देकर मूलदेवी को पूजा समर्पित करे।

इसके बाद धूपादि से विसर्जन तक के कर्म करे। वामकेश्वर तन्त्र में लिखा है कि एक लाख जप से इस मन्त्र का पुरश्चरण होता है। जप के बाद त्रिमधुर समन्वित पलाशपुष्प या कुसुम्भपुष्प से जप का दशांश दश हजार हवन करे।

श्रीविद्याविशेषपद्धतिः

यथा—ब्राह्मे मुहूर्ते उत्थाय मुक्तस्वापो रात्रिवासः परित्यज्य, गुरुं यथोक्तरूपं ध्यात्वा, ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसक्षमलवरयूं सहक्षलवरयीं ह्सौः श्री अमुकानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि स्त्री चेद् गुरुः अमुकशक्त्यम्बाश्रीपादुकां पूजयामीति स्मृत्वा, मानसैर्गन्धादिभिः पूजयेत्। यथा—

ऐं ह्रीं श्रीं लं पृथिव्यात्मकं गन्धं समर्पयामि नमः—इति कनिष्ठाभ्याम्। एवं ऐं ह्रीं श्री हं आकाशात्मकं पुष्पं समर्पयामि नमः—इति अंगुष्ठाभ्याम्। ऐं ह्रीं श्रीं यं वाय्वात्मकं धूपं समर्पयामि नमः—इति तर्जनीभ्याम्। ऐं ह्रीं श्रीं रं वह्न्यात्मकं दीपं समर्पयामि नमः—इति मध्यमाभ्याम्। ऐं ह्रीं श्रीं वं अमृतात्मकं नैवेद्यं समर्पयामि नमः—इति अनामिकाभ्याम्। ऐं ह्रीं श्रीं ऐं ताम्बूलं समर्पयामि नमः—इत्यञ्जलिना ताम्बूलम्। यथा विशुद्धेश्वरे—

**एवं ध्यात्वा पुनश्चैवं पञ्चभूतात्मकैर्यजेत् ।
गन्धतत्त्वं पार्थिवञ्च कनिष्ठांगुलियोगतः ॥
शब्दमयं महापुष्पं प्रथमांगुलियोगतः ।
वाय्वात्मकं महाधूपं तर्जनीभ्यां नियोजयेत् ॥
तेजोरूपं महादीपं मध्यमाद्वययोगतः ।
नमस्कारेणाञ्जलिना ताम्बूले वाग्भवं स्मृतम् ।
सर्वत्र स्वस्वबीजान्ते नमस्कारेण योजयेत् ॥**

प्रथमांगुलिर्वृद्धा। स्वस्वबीजान्ते तत्तद्भूतबीजान्ते।

ततो योन्यञ्जलिमुद्रे प्रदर्श्य नमस्कृत्य स्तुतिं कुर्यात्—अखण्डमण्डलाकारमित्यादि। शेषं सामान्यपूजापद्धत्युक्तक्रमेण कुर्यात्।

श्रीविद्या विशेष पद्धति—ब्राह्म मुहूर्त में उठकर रात में पहने सोने वाले वस्त्र को बदल कर यथोक्त रूप में गुरु का ध्यान करे—ऐं ह्रीं श्रीं ह्स्ख्फ्रें हसक्षमलवरयूं सहक्षलवरयीं हसौं: श्री अमुकानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि। यदि स्त्री गुरु हो तो अमुकशक्त्यम्बाश्रीपादुकां पूजयामि। इस ध्यान के बाद मानसोपचारों से पूजन करे। जैसे—

ऐं ह्रीं श्रीं लं पृथिव्यात्मकं गन्धं समर्पयामि नमः—कनिष्ठा से।
ऐं ह्रीं श्रीं हं आकाशात्मकं पुष्पं समर्पयामि नमः—अंगुष्ठ से।
ऐं ह्रीं श्रीं यं वाय्वात्मकं धूपं समर्पयामि नमः—तर्जनी से।
ऐं ह्रीं श्रीं रं वह्न्यात्मकं दीपं समर्पयामि नमः—मध्यमा से।
ऐं ह्रीं श्रीं वं अमृतात्मकं नैवेद्यं समर्पयामि नमः—अनामिका से।
ऐं ह्रीं श्रीं ऐं ताम्बूलं समर्पयामि नमः—अञ्जलि से।

विशुद्धेश्वर तन्त्र में वर्णन है कि इस प्रकार ध्यान करके पञ्चभूतात्मक तत्त्वों से पूजन करे। गन्धतत्त्व पार्थिव होता है, इसे कनिष्ठा अंगुलि से देना चाहिये। शब्दमय महापुष्प अंगूठे से समर्पित करे। वाय्वात्मक महाधूप तर्जनी से समर्पित करे। तेजोरूप महादीप दोनों मध्यमाओं के योग से समर्पित करे। अञ्जलि बद्ध करके वाग्भव कूट से नमस्कारपूर्वक ताम्बूल समर्पित करे। इन सभी तत्त्वात्मक उपचारों से तत्त्व के बीजमन्त्र पहले लगावे और बाद में नमः लगावे। सभी अंगुलियों के साथ अंगूठा लगावे। योनिमुद्रा से प्रणाम कर स्तुति करे। इसके अनुसार पूजामन्त्र निम्न प्रकार का होता है—

लं पृथिव्यात्मकं गन्धं समर्पयामि। (कनिष्ठा-अंगुष्ठयोग से)
हं आकाशात्मकं पुष्पं समर्पयामि। (अंगूठा-तर्जनीयोग से)
यं वाय्वात्मकं धूपं आघ्रापयामि। (तर्जनी-अंगूठे के योग से)
रं वह्न्यात्मकं दीपं दर्शयामि। (अंगुष्ठ-मध्यमायोग से)
वं अमृतात्मकं नैवेद्यं निवेदयामि। (अंगुष्ठ-अनामिकायोग से)
सं सर्वात्मकं ताम्बूलादिसर्वोपचारान् समर्पयामि (अंगुष्ठ-सर्वांगुलियोग से)

अखण्डमण्डलाकारं से स्तुति करे। शेष क्रिया इस ग्रन्थ में पूर्वोक्त परिच्छेद दो की सामान्य पूजा पद्धति से सम्पादित करे।

श्रीविद्यायां विशेषस्नानम्

वैदिकस्नानं विधाय, आचमनं कृत्वा, षडङ्गानि विधाय, क्रोमित्यङ्कुशमुद्रया सवितृमण्डलात्तीर्थमावाह्य, मूलविद्याशक्तिबीजमुच्चार्य, योनिमुद्रां तज्जले निक्षिप्य, धेनुयोनिमुद्रे प्रदर्श्य, मूलवाग्भवबीजेन दशवारमभिमन्त्र्य आनन्दामृतवारिमध्यस्थां देवीं विचिन्त्य, मूलविद्यया सप्तवारमभिमन्त्र्य, तन्मुखारविन्दनिर्गतामृतधाराबुद्ध्या मूलेन सप्तवारमात्मानमभिषिच्य, पुनरेकविंशतिवारं मूलविद्यामुच्चरन् तज्जले देवीपादारविन्दाधोगलदमृतधारया त्रिवारं निमज्ज्य, उत्थाय पुनर्योनिमुद्रया सप्तवारं त्रिवारं वा शिरस्यभिषेकं विधाय, तथैवाचम्य तीरमागत्य अनुपहते वाससी परिधाय, मूलमन्त्राभिमन्त्रितशुद्धयज्ञीयभस्मना त्रिपुण्ड्रं त्रिरेखात्मकमर्द्धचन्द्ररूपं विधाय, पूर्ववत् श्रीगुरुं स्मृत्वा, तान्त्रिकाघमर्षणान्तं कर्म कृत्वा तर्पणं कुर्यात्। तद्यथा—

षडङ्गान्यपि विन्यस्य तीर्थमङ्कुशमुद्रया ।
क्रों मन्त्रेण समाकृष्य ततः सवितृमण्डलात् ॥
शक्तिबीजं समुच्चार्य निक्षिपेद्योनिमुद्रया ।
धेनुमुद्रां योनिमुद्रां ततस्तत्र प्रदर्शयेत् ॥
मूलवाग्भवबीजेन मन्त्रयित्वाथ देवताम् ।
आनन्दामृतवारीणां मध्यस्थां परिचिन्तयेत् ॥
मूलेन विद्यया देवि सप्तवाराभिमन्त्रणम् ।
देवीमुखारविन्दाच्च निर्गतामृतधारया ।
सप्तकृत्वो जपेद्विद्यामभिषिञ्चेत् स्वकां तनूम् ॥
एकविंशतिवाराणि जपेद्विद्यामनन्तरम् ।
देवीपादारविन्दाधो निमज्ज्योत्तीर्य साधकः ॥
योनिना च तथा देवि मूर्ध्निसेकं समाचरेत् ।
त्रिःसप्त वा तथा वारान् सेचयेत्साधकाग्रणी ॥
ततस्तीरं समासाद्य कर्म कुर्याद्यथेप्सितम् ।
उचिते वाससी पश्चात्परिदध्यादनन्तरम् ॥
आचम्य प्राङ्मुखो भूत्वा मूलमन्त्राभिमन्त्रितम् ।
धृत्वा भालतले भस्म पूर्ववत् श्रीगुरुं स्मरेत् ॥
सूर्यमण्डलवासिन्यै देवतायै नमः परम् ।
अर्घ्यमञ्जलिमादाय गायत्र्या च त्रिरुत्क्षिपेत् ।
यथाशक्ति जपेद्देवीं गायत्रीं तदनन्तरम् ॥
तर्पणार्थं समाचम्य प्राणानायम्य साधकः ।
वसून् रुद्रांस्तथादित्यांस्तथैवाङ्गिरसं ततः ॥
देवान् गाश्च ततो ब्रह्मविष्णुरुद्रान् ग्रहानपि ।
लोपामुद्रामहल्याञ्चानसूयामृषितीर्थकैः ॥
नक्षत्रराशियोगांश्च करणानि यथाक्रमम् ।
चतुर्थीवह्निजायान्तं देवतीर्थेन तर्पयेत् ॥
मरीचिमत्रिं पुलहं पुलस्त्यं क्रतुमेव च ।
वसिष्ठञ्च भरद्वाजं गौतमागस्त्यनामकौ ॥
अग्निष्वात्ता बर्हिषदः स्वपितॄंश्च पितृक्रमात् ।
त्रिधा ङेऽन्तान् हृदन्तांश्च पितृतीर्थेन तर्पयेत् ॥
भैरवान् क्षेत्रपालांश्च कुमारीयोगिनीगणम् ।

भूतानि सर्वसत्त्वानि तृप्यन्त्वेतानि तर्पयेत् ॥

ततो देवीं तर्पयेत्।

श्रीविद्या विशेष स्नान—वैदिक स्नान करके, षडंग न्यास करके 'क्रों' मन्त्र से अंकुशमुद्रा द्वारा सूर्यमण्डल से तीर्थों का आवाहन करे।

मूल विद्या के शक्तिबीज का उच्चारण करके उस जल में योनिमुद्रा का निक्षेप करे। धेनुमुद्रा और योनिमुद्रा दिखावे। मूल मन्त्र के वाग्भव बीज का दश बार जप करके जल को अभिमन्त्रित करे। आनन्दामृत जल के मध्य में देवी का चिन्तन करे। मूल विद्या दश बार जप कर अभिमन्त्रित करे।

तब भावना करे कि देवी के मुख से अमृतधारा निकल रही है। उसे मूल मन्त्र के सात जप से अभिमन्त्रित करके अपने शरीर को अभिषिक्त करे। तब इक्कीस बार मूल विद्या का उच्चारण करके भावना करे कि उस जल में देवी के पदकमल से अमृत निकल कर मिल गया है। ऐसे जल से तीन बार स्नान करे।

स्नान के बाद उठकर योनिमुद्रा से सात बार या तीन बार अपने शिर पर मार्जन करे। तब आचमन करके तट पर आकर शुद्ध वस्त्र पहन कर मूल मन्त्र से अभिमन्त्रित शुद्ध यज्ञीय भस्म से त्रिरेखात्मक त्रिपुण्ड्र अर्द्धचन्द्र के समान ललाट में लगावे। पूर्ववत् गुरु को स्मरण करके तान्त्रिक अघमर्षण कर्म करके तर्पण करे। यथा—

षडंग न्यास करके 'क्रों' मन्त्रोच्चारणपूर्वक अंकुशमुद्रा से सूर्यमण्डल से तीर्थों का आवाहन करे। शक्तिबीजोच्चारणपूर्वक योनिमुद्रा का जल में निक्षेप करे। तब योनिमुद्रा और धेनुमुद्रा दिखावे। उस जल को मूल वाग्भव बीज से अभिमन्त्रित करे। उस आनन्दा-मृत जल के मध्य में देवता का चिन्तन करे।

मूल विद्या का सात बार जप करके अभिमन्त्रित करे। देवी-मुखारविन्द से निर्गत अमृतधारा को विद्या के सात जप से अभिमन्त्रित करके अपने शरीर को अभिषिञ्चित करे। तब विद्या का जप इक्कीस बार करे। देवीपादारविन्द के नीचे उस तीर्थजल में स्नान करके साधक ऊपर उठे। योनिमुद्रा से देवी के मूर्धा पर अभिषेक करे। यह अभिषेक तीन बार या सात बार करे।

इसके बाद जल से बाहर तट पर आकर अपेक्षित कर्म करे। तब शुद्ध वस्त्र पहन कर आगे की क्रिया करे। पूर्वाभिमुख होकर मूल मन्त्र से अभिमन्त्रित जल से आचमन करे। ललाट में भस्म लगावे और श्रीगुरु का स्मरण करे। तब सूर्यमण्डलवासिन्यै देवतायै नम: बोलकर अञ्जलि में अर्घ्यजल लेकर तीन बार गायत्री-जपपूर्वक अर्घ्य प्रदान करे।

इसके बाद गायत्री का जप यथाशक्ति करे। तर्पण के लिये आचमन करके प्राणायाम करे। तब इन मन्त्रों से इन देवताओं का तर्पण करे—

ॐ वसुभ्यः स्वाहा तर्पयामि
ॐ रुद्रेभ्यः स्वाहा तर्पयामि
ॐ आदित्येभ्यः स्वाहा तर्पयामि
ॐ आंगिरसेभ्यः स्वाहा तर्पयामि
ॐ देवेभ्यः स्वाहा तपर्यामि
ॐ गोभ्यः स्वाहा तर्पयामि
ॐ ब्रह्मणे स्वाहा तर्पयामि
ॐ विष्णवे स्वाहा तर्पयामि
ॐ रुद्रेभ्यः स्वाहा तर्पयामि
ॐ ग्रहेभ्यः स्वाहा तर्पयामि
ॐ लोपामुद्रायै स्वाहा तर्पयामि
ॐ अहल्यायै स्वाहा तर्पयामि
ॐ अनुसूयायै स्वाहा तर्पयामि
ॐ नक्षत्रेभ्यः स्वाहा तर्पयामि
ॐ राशिभ्यः स्वाहा तर्पयामि
ॐ योगेभ्यः स्वाहा तर्पयामि
ॐ करणेभ्यः स्वाहा तर्पयामि
ॐ मरीचये स्वाहा तर्पयामि
ॐ अत्रये स्वाहा तर्पयामि
ॐ पुलहाय स्वाहा तर्पयामि
ॐ पुलस्त्याय स्वाहा तर्पयामि
ॐ क्रतवे स्वाहा तर्पयामि
ॐ वसिष्ठाय स्वाहा तर्पयामि
ॐ भारद्वाजाय स्वाहा तर्पयामि
ॐ गौतमाय स्वाहा तर्पयामि
ॐ अगस्त्याय स्वाहा तर्पयामि
ॐ अग्निष्वात्ताय स्वाहा तर्पयामि
ॐ बर्हिषदे स्वाहा तर्पयामि

अमुक गोत्र अस्मत्पिता अमुक शर्मा तृप्यन्ताम्।
अमुक गोत्र अस्मत्पितामह अमुकशर्मा तृप्यन्ताम्।
अमुक गोत्र अस्मत्प्रपितामह अमुक शर्मा तृप्यन्ताम्।
अमुक गोत्रास्मन्माता अमुकीदेवी तृप्यन्ताम्।
अमुक गोत्रास्मत्पितामही अमुकी देवी तृप्यन्ताम्।
अमुक गोत्रास्मत्प्रपितामही अमुकी देवी तृप्यन्ताम्।
इनका तर्पण पितृतीर्थ से करे। इसके पश्चात् देवी का तर्पण निम्नवत् करे—

ॐ भैरवाय स्वाहा तर्पयामि
ॐ क्षेत्रपालाय स्वाहा तर्पयामि
ॐ कुमारीभ्यः स्वाहा तर्पयामि
ॐ योगिनिभ्यः स्वाहा तर्पयामि
ॐ भूतेभ्यः स्वाहा तर्पयामे
ॐ सर्वसत्त्वाय स्वाहा तर्पयामि

दक्षिणामूर्त्तिसंहितायाम्—

तर्पणन्तु शुचिः कुर्याद्देवर्षिपितृपूर्वकम् ।

तस्मिन् जले त्रिकोणवृत्तं चतुरस्त्रं विभाव्य गणेशवटुकौ चक्रवामदक्षिणतः सन्तर्प्य, त्रिकोणे वृत्तचतुरस्रान्तराले ईशानादिवायव्यान्तां वक्ष्यमाणं गुरुपंक्तिं तर्पयेत्। ततस्त्रिकोणमध्ये साध्यसिद्धासनमन्त्रैर्वक्ष्यमाणैः सन्तर्प्य, जले भगवती-

मावाह्य, परमामृतधारया त्रिवारं पूर्वोक्तक्रमेण सन्तर्प्य त्रिकोणेषु कामेश्वर्यादिदेवीत्रयं वक्ष्यमाणसमयविद्यया सन्तर्प्य चतुरस्रकोणेष्वङ्गदेवतास्तर्पयेत्। तत आवरणदेवतानां तर्पणम्। ततः सूर्यायार्घ्यं दत्त्वा हंसः सोऽहमित्युपस्थानं कृत्वा, सवितृमण्डले तीर्थं विसृज्य नियतवचनो यागस्थानमागच्छेदिति। यागस्थानन्तु कालीकुलसद्भावे—

अरण्यं स्वल्पकामानां सिद्ध्यर्थं पूजने हितम्।
निष्कामानां मुमुक्षूणां गृहे शस्तं सदार्चनम्॥
ऋषीणां मुनिमुख्यानां दीक्षितानां द्विजन्मनाम्।
गृहेऽपि यजनं शस्तं रसैर्वार्क्षेक्षुसम्भवैः॥

कुलार्णवे—

एकान्ते निर्जने रम्ये देशे बाधाविवर्जिते।
सुखासनसमासीनः प्राङ्मुखो वाप्युदङ्मुखः॥

तत्रादौ सूर्यपूजा; तदुक्तं रुद्रयामले—

आदित्यं पूजयेदादौ प्रत्यक्षं लोकसाक्षिणम्।
अन्यथा नैव सिद्धिः स्यात् कल्पकोटिशतैरपि॥

बृहत्स्तवराजेऽपि—

स्नानन्तु विधिवत् सन्ध्यां तर्पणं सूर्यपूजनम्।
कृत्वा पूजालये चात्र पञ्चमीं पूजयाम्यहम्॥ इति।

ततो गृहद्वारि गत्वा ॐ आत्मतत्त्वाय स्वाहा। ॐ विद्यातत्त्वाय स्वाहा। ॐ शिवतत्त्वाय स्वाहा। इत्याचम्य सामान्यार्घ्यं विधाय द्वारपूजां कुर्यात्। तद्यथा—

बालया द्वारमभ्युक्ष्य, दक्षिणवामपार्श्वयोरुपर्यधः ऐं ह्रीं श्रीं गां गणपतये नमः। ऐं ह्रीं श्रीं दुं दुर्गायै नमः। एवं ऐं ह्रीं श्रीं वां वटुकाय नमः। ऐं ह्रीं श्रीं क्षां क्षेत्रपालाय नमः। ऐं ह्रीं श्रीं द्वारश्रियै नमः। ऐं ह्रीं श्रीं देहल्यै नमः। ततो वामपदपुरःसरं गृहं प्रविश्याग्न्यादिकोणेषु ऐं ह्रीं श्रीं गां गणपतये नमः। एवं ऐं ह्रीं श्रीं दुं दुर्गायै नमः। ऐं ह्रीं श्रीं वां वटुकाय नमः। ऐं ह्रीं श्रीं क्षां क्षेत्रपालाय नमः। मध्ये ऐं ह्रीं श्रीं रत्नमण्डपाय नमः। दिक्षु ऐं ह्रीं श्रीं कामदेवाय रत्यै नमः। ऐं ह्रीं श्रीं वसन्ताय प्रीत्यै नमः। ऐं ह्रीं श्रीं सां सरस्वत्यै नमः। ऐं ह्रीं श्रीं श्रियै नमः।

सोमभुजगावल्याम्—

सरस्वतीं श्रियं मायां दुर्गाञ्च तदनन्तरम्।
भद्रकालीं ततः स्वस्तिं स्वाहाञ्चैव शुभङ्करीम्।
गौरीञ्च लोकधात्रीञ्च तथा वागीश्वरीमपि।

एताः पूजयेत्। ततः ऐं ह्रीं श्रीं रक्तद्वादशशक्तियुक्ताय दीपनाथाय नमः इति पुष्पाञ्जलित्रयं मुञ्चेत्। विश्वसारे—

समुद्रमेखले देवि पर्वतस्तनमण्डले ।
विष्णुपत्नि नमस्तुभ्यं पादस्पर्शं क्षमस्व मे ॥

इति प्रसाद्य,

पृथिवी त्वया धृता लोका देवि त्वं विष्णुना धृता ।
त्वञ्च धारय मां नित्यं पवित्रं कुरु चासनम् ॥

इति आसनं संस्थाप्य ततोऽस्त्रेण वामपार्ष्णिघातत्रयेण भौमान् विघ्नानुत्सार्या-स्त्रेण जलेनान्तरीक्षगान् श्रीबालान्यस्ततीक्ष्णदृष्ट्या अवलोकनेन दिव्यान् विघ्नानु-त्सार्य सिद्धार्थाक्षतकुसुमान्यादाय ऐं ह्रीं श्रीं अपसर्पन्तु ते भूता इत्यादिना क्षिप्त्वा विघ्नानुत्सारयेत्। ततो नैर्ऋत्यां ऐं ह्रीं श्रीं ब्रह्मणे नमः, ऐं ह्रीं श्रीं वास्त्वधिपतये नमः, ऐं ह्रीं श्रीं आधारशक्तिकमलासनाय नमः इत्यासनं सम्पूज्य, तत्रोपविश्य भूतशुद्धिं कुर्यात्।

यद्यपि कल्पसूत्रे 'वायव्यग्निसलिलात्मकप्राणायामैः, शोषणदहनप्लावनञ्च भूतशुद्धिं विधाय त्रिः प्राणानायम्ये'ति तथापि मातृकान्यासानन्तरं प्राणायामो बोद्धव्यः। तथा च तन्त्रान्तरे—

भूतशुद्धिं विधायेत्थं मातृकान्यासमाचरेत् ।
प्राणायामत्रयं कृत्वा न्यासानन्यान् समाचरेत् ॥

ततो मातृकान्यासं प्राणायामान्तं विधाय ऋष्यादिन्यासं कुर्यात्। तद्यथा— शिरसि दक्षिणामूर्तये ऋषये नमः। मुखे पंक्तिच्छन्दसे नमः। हृदि श्रीत्रिपुरसुन्दर्यै देवतायै नमः। गुह्ये वाग्बीजाय नमः। पादयोः शक्तिकूटाय शक्तये नमः। सर्वाङ्गे कामराजाय कीलकाय नमः। तन्त्रान्तरे—

ऋषिं न्यसेन्मूर्ध्निदेशे छन्दस्तु मुखपङ्कजे ।
देवता हृदये चैव बीजन्तु गुह्यदेशके ।
शक्तिञ्च पादयोश्चैव सर्वाङ्गे कीलकं न्यसेत् ॥

ततः कराङ्गन्यासौ यथा—अं मध्यमाभ्यां नमः। आं अनामिकाभ्यां नमः। सौः कनिष्ठाभ्यां नमः। अं अंगुष्ठाभ्यां नमः। आं तर्जनीभ्यां नमः। सौः करतल-करपृष्ठाभ्यां नमः। तथा च—

एतद्बीजं द्विरुच्चार्य मध्यमाद्यङ्गुलीषु च ।
शुद्धिं करस्य कुर्वीत तलयोः पृष्ठयोरपि ।
चतुर्थीमितिसंयुक्तनाममन्त्रैः पृथक् पृथक् ॥

दक्षिणामूर्तिसंहिता के अनुसार तर्पण से पवित्रता प्राप्त होती है। देवर्षि और पितरों के तर्पणपूर्वक यह तर्पण करना चाहिये। तालाब या नदी के जल में त्रिकोण के बाहर वृत्त और उसके बाहर चतुरस्र कल्पित करके चक्र के वाम भाग में गणेश का और दक्षिण भाग में बटुक का तर्पण करे। त्रिकोण, वृत्त और चतुरस्र के अन्तराल में ईशान से वायव्य तक वक्ष्यमाण गुरुपंक्तियों का तर्पण करे। तब त्रिकोण के मध्य में साध्य सिद्धासन मन्त्र के द्वारा वक्ष्यमाण क्रम से तर्पण करे। जल में भगवती का आवाहन करके परमातृका धारा से पूर्वोक्त क्रम से तीन बार तर्पण करे। तीनों कोणों में कामेश्वरी आदि तीन देवियों का तर्पण करे। यह तर्पण वक्ष्यमाण समय विद्या से करे। चतुरस्र के कोणों में षडंग देवताओं का तर्पण करे। तब आवरण देवताओं का तर्पण करे। इसके बाद सूर्य को अर्घ्य देकर हंस: सोऽहं मन्त्र से उपस्थान करे। तब सूर्यमण्डल में तीर्थ का विसर्जन नियत वचनों से करके यागस्थान में प्रवेश करे।

यागस्थान में कालीकुलसद्भाव के अनुसार क्षुद्र कामनाओं की सिद्धि के लिये जंगल में पूजा करना श्रेयस्कर होता है। निष्काम कर्मियों और मुमुक्षुओं के लिये गृह में अर्चन सदैव प्रशस्त होता है। ऋषियों, मुख्य मुनियों, दीक्षितों और द्विजातियों के लिये गृह में पूजन उत्तम होता है। ईख के रस से तर्पण अति प्रशस्त होता है।

कुलार्णव में वचन है कि एकान्त, निर्जन, बाधाविमुक्त, रम्य देश में सुखासन पर पूर्वाभिमुख या उत्तराभिमुख बैठे। तब पहले सूर्य की पूजा करे। रुद्रयामल में लिखा है कि सबसे पहले सूर्य का पूजन करे, जो प्रत्यक्ष लोकसाक्षी हैं। अन्य की एक सौ करोड़ कल्पों तक साधना करने पर भी सिद्धि नहीं मिलती।

वृहत्स्तवराज में लिखा है कि विधिवत् स्नान करके सन्ध्या, तर्पण और सूर्य-पूजन करे। यहाँ पर 'पञ्चमीं पूजयाम्यहम्' कह कर पूजा करे। तब गृहद्वार पर जाकर 'ॐ आत्मतत्त्वाय स्वाहा, ॐ विद्यातत्त्वाय स्वाहा, ॐ शिवतत्त्वाय स्वाहा' से आचमन करके सामान्यार्घ्य स्थापित करके द्वारपूजा करे। यह इस प्रकार करे—

ऐं क्लीं सौ: से द्वार का अभ्युक्षण करे। तब द्वार के दक्षिण-वाम पार्श्वों, ऊपर और नीचे इन मन्त्रों से पूजन करे—ऐं ह्रीं श्रीं गं गणपतये नम:। ऐं ह्रीं श्रीं दुं दुर्गायै नम:। ऐं ह्रीं श्रीं वं वटुकाय नम:। ऐं ह्रीं श्रीं क्षं क्षेत्रपालाय नम:। ऐं ह्रीं श्रीं द्वारश्रियै नम:। ऐं ह्रीं श्रीं देहल्यै नम:। इसके पश्चात् बाँयाँ पाँव आगे करके गृह में प्रवेश करे। अग्न्यादि कोण के क्रम से ऐं ह्रीं श्री गं गणपतये नम:। ऐं ह्रीं श्रीं दुं दुर्गायै नम:। ऐं ह्रीं श्रीं व वटुकाय नम:। ऐं ह्रीं श्रीं क्षं क्षेत्रपालाय नम:। मध्ये ऐं ह्रीं श्रीं रत्नमण्डलाय नम:। पूर्वादि दिशाओं में ऐं ह्रीं श्रीं कामदेवाय रत्यै नम:। ऐं ह्रीं श्रीं वसन्ताय प्रीत्यै नम:। ऐं ह्रीं श्रीं सां सरस्वत्यै नम:। ऐं ह्रीं श्रीं श्रियै नम: से पूजा करे।

सोमभुजगावली में लिखा है कि इसके बाद सरस्वती, श्री, माया, दुर्गा, भद्रकाली, स्वस्ति, स्वाहा, शुभंकरी, गौरी, लोकधात्री, वागीश्वरी देवियों का पूजन करे। तब ऐं ह्रीं श्रीं रक्तद्वादशशक्तियुक्ताय दीपनाथाय नमः से दीपनाथ को पुष्पाञ्जलि प्रदान करे।

विश्वसारतन्त्र में वर्णन है कि इसके बाद पृथ्वी की प्रार्थना निम्न श्लोक से करे—

समुद्रमेखले देवि पर्वतस्तनमण्डले।
विष्णुपत्नि नमस्तुभ्यं पादस्पर्शं क्षमस्व मे।।

इस प्रकार प्रार्थना करके आसन का स्थापन निम्न मन्त्र पढ़कर करे—

पृथिवी त्वया धृता लोका देवि त्वं विष्णुना धृता।
त्वं च धारय मां नित्यं पवित्रं कुरु चासनम्।।

इस प्रकार आसन स्थापित करके अस्त्रमन्त्र बोल कर बाँयीं ऐंड़ी से पृथ्वी पर तीन बार आघात करके भौम विघ्नों का उत्सारण करे। अस्त्रमन्त्र से अन्तरिक्ष में जल निक्षिप्त का विघ्नोत्सारण करे। ऐं क्लीं सौः बोलकर तीक्ष्ण दृष्टि से दिशाओं का अवलोकन करके दिव्य विघ्नों का उत्सारण करे। इसके बाद सरसो, अक्षत और फूल हाथ में लेकर चारों ओर छींटते हुए ऐं ह्रीं श्रीं अपसर्पन्तु ते भूता इत्यादि मन्त्रों से विघ्नोत्सारण करे। तब नैर्ऋत्य में ऐं ह्रीं श्रीं ब्रह्मणे नमः। ऐं ह्रीं श्रीं वास्त्वधिपतये नमः। ऐं ह्रीं श्री आधारशक्ति-कमलासनाय नमः से आसन का पूजन करे। तब उस आसन पर बैठकर भूतशुद्धि करे। कल्पसूत्र में वर्णन है कि वायु-अग्नि-सलिलात्मक प्राणायाम करे। शोषण-दहन-प्लावन से भूतशुद्धि करके तीन प्राणायाम करे। तथापि मातृकान्यास के बाद प्राणायाम करना चाहिये। तन्त्रान्तर में कथन है कि इस प्रकार भूतशुद्धि करके मातृकान्यास करे। तब तीन प्राणायाम करके अन्य न्यासों को करे। न्यास के बाद प्राणायाम करके ऋष्यादि न्यास करे। यथा—

ऋष्यादि न्यास—शिरसि दक्षिणामूर्ति ऋषये नमः। मुखे पंक्तिछन्दसे नमः। हृदि त्रिपुरसुन्दर्यै देवतायै नमः। गुह्ये वाग्बीजाय नमः। पादयोः शक्तिकूटाय शक्तये नमः। सर्वांगे कामराजाय कीलकाय नमः।

तन्त्रान्तर में कथन है कि ऋषि का न्यास मूर्धा में करे। छन्द का न्यास मुखपंकज में एवं देवता का न्यास हृदय में करे। बीज का न्यास गुह्य देश में करे। शक्ति का न्यास पावों में करे। सर्वांग में कीलक का न्यास करे।

करन्यास—अं मध्यमाभ्यां नमः। आं अनामिकाभ्यां नमः। सौः कनिष्ठाभ्यां नमः। अं अंगुष्ठाभ्यां नमः। आं तर्जनीभ्यां नमः। सौः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः।

करशुद्धि न्यास—अं अं मध्यमाभ्यां नमः। आं आं अनामिकाभ्यां नमः। सौः सौः कनिष्ठाभ्यां नमः। अं अं अंगुष्ठाभ्यां नमः। आं आं कनिष्ठाभ्यां नमः। सौ सौः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः।

ततो निवृत्त्यादिन्यासः—गुह्ये क्रां निवृत्त्यै नमः। हृदये क्रीं प्रतिष्ठायै नमः। कण्ठे ऐं विद्यायै नमः। भ्रूमध्ये हौं शान्त्यै नमः। ब्रह्मरन्ध्रे ह्रौं अमृतायै नमः। तथा च कुलामृते भूतशुद्धिमभिधाय—

ततो दिव्यशरीरोऽसौ साधकः शीघ्रसिद्धिभाक् ।
जायते नात्र सन्देहो न्यासांस्तान् प्रवदाम्यहम् ॥
निवृत्तिश्च प्रतिष्ठा च विद्या शान्तिस्तथामृता ।
गुह्यहृत्कण्ठभ्रूमध्यब्रह्मरन्ध्रेषु विन्यसेत् ॥
कामाग्निसंयुतौ द्वौ द्वौ आस्यवामदृगन्वितौ ।
वाणी मनुविसर्गाभ्यां युतं व्योमद्वयं पुनः ॥
द्वितीयाधो भवेदग्निरेवं पञ्च महेश्वरि ।
अर्द्धचन्द्रेन्दुसर्गानि सर्वाण्येव क्रमेण हि ॥
बीजन्यासं नियोज्यानि पूर्वतः परमेश्वरि ।
ततो बालां समुच्चार्य महात्रिपुरसुन्दरि ॥

आत्मानं रक्ष रक्ष इति हृदये अञ्जलिं दद्यात्। पुनः ऐं क्लौं सौः अस्त्राय फडिति दिग्बन्धनं कुर्यात्। तथा च—

बालाबीजत्रयं पूर्वं महात्रिपुरसुन्दरी ।
आत्मानं रक्ष रक्षेति कुर्याद्रक्षां हृदि स्पृशन् ।
तथैवास्त्रेण मुद्रया कुर्याद्दिग्बन्धनं ततः ॥

ततो बालान्ते अमृतार्णवासनाय नमः इति पादयोः। बालान्ते त्रिपुरेश्वरीपीताम्बुजासनाय नमः इति जानुद्वये। तथा च यामले—

अमृतार्णवशब्दपूर्व आसनाय महामनुः ।
पादयोर्विन्यसेत् पश्चाद्बालान्ते त्रिपुरेश्वरि ।
पीताम्बुजासनायान्ते नमो जानुनि विन्यसेत् ॥

ह्रीं क्लीं सौः त्रिपुरसुन्दरीदेव्यासनाय नमः इत्यूरुद्वये। तथा च—

ह्रीं क्लीं सौः त्रिपुरेत्युक्त्वा सुन्दरीति पदन्ततः ।
ङेऽन्तं देव्यासनञ्चान्ते नम ऊरुद्वये न्यसेत् ॥

ततो हैं हक्लीं हसौः त्रिपुरवासिनीचक्रासनाय नमः इति स्फिग्द्वये। हसैं हसक्लीं हसौः त्रिपुराश्रीसर्वमन्त्रासनाय नमः इति गुह्ये। ह्रीं श्रीं क्लीं ब्लें त्रिपुरमालिनीसाध्यसिद्धासनाय नमः इति नाभिदेशे। हस्रैं हसक्लीं हस्रौः त्रिपुराम्बापर्यङ्कशक्तिपीठासनाय नमः इति स्ववक्षसि। त्रिकूटविद्यानां बीजान्ते श्रीमहात्रिपुरभैरवीसदाशिवमहाप्रेतपद्मासनाय नमः ब्रह्मरन्ध्रे। तथा च यामले—

हैं हक्लीं हसौरन्ते त्रिपुरवासिनीति च ।
चक्रासनाय नमः इत्यमुना स्फिग्द्वये न्यसेत् ।।
हसैं हसक्लीं हसौश्चेति त्रिपुराश्रीपदन्ततः ।
सर्वमन्त्रासनायान्ते नमो गुह्ये प्रविन्यसेत् ।।
ह्रीं श्रीं क्लीं ब्लें ततो दद्यात्त्रिपुरमालिनीति च ।
साध्यसिद्धासनं ङेऽन्तं नाभिदेशे प्रविन्यसेत् ।।
हसैं ह स क्लीं हस्रौरन्ते त्रिपुराम्बापदन्ततः ।
पर्यङ्कशक्तिपीठासनाय नमो वक्षसि विन्यसेत् ।।
त्रिकूटविद्याबीजान्ते महात्रिपुरभैरवी ।
सदाशिवमहाप्रेतपदात्पद्मासनाय च ।।

नम इत्यमुना ब्रह्मरन्ध्रस्थाने प्रविन्यसेत्।

अथ षडङ्गन्यासः—ऐं सर्वज्ञाशक्तिश्रीमहात्रिपुरसुन्दरी हृदयाय नमः। क्लीं नित्यसुतृप्तिशक्तिश्रीमहात्रिपुरसुन्दरी शिरसे स्वाहा। सौः अनादिबोधशक्तिश्रीमहा-त्रिपुरसुन्दरी शिखायै वषट्। ऐं स्वतन्त्रशक्तिश्रीमहात्रिपुरसुन्दरी कवचाय हुं। क्लीं अलुप्तशक्तिश्रीमहात्रिपुरसुन्दरी नेत्रत्रयाय वौषट्। सौः अनन्तशक्तिश्रीमहात्रिपुरसुन्दरी अस्त्राय फट्। तथा नवरत्नेश्वरे—

सर्वज्ञता नित्यसुतृप्तता च अनादिबोधश्च स्वतन्त्रता च ।
अलुप्तशक्तित्वमनन्तता च षडाहुरङ्गानि शिवयोः शिवाद्याः ।।
बीजान्ते नाम संयोज्य जातियुक्तं षडङ्गकम् ।।

ततो वशिन्यादिन्यासः; स च संक्षेपप्रयोग उक्तः। ततो नवयोन्यात्मकन्यासः। तथा च—

बालायास्त्रिपुरेशान्या नवयोन्यात्मकं न्यसेत् ।

प्रयोगस्तु भैरवीप्रकरणे उक्तः।

पुनर्बालां समुच्चार्य गोलकत्वेन चिन्तयेत् ।
पुनर्बालां समुच्चार्य चतुरस्रं विचिन्तयेत् ।।

निवृत्त्यादि न्यास—गुह्ये क्रां निवृत्त्यै नमः। हृदये क्रीं प्रतिष्ठायै नमः। कण्ठे ऐं विद्यायै नमः। भ्रूमध्ये हौं शान्त्यै नमः। ब्रह्मरन्ध्रे ह्रौं अमृतायै नमः। 'कुलामृत' के अनुसार भूतशुद्धि से साधक का शरीर दिव्य हो जाता है और शीघ्र सिद्धि मिलती है। इसमें कोई सन्देह नहीं है। इसलिये उन न्यासों का वर्णन किया जाता है। निवृत्ति, प्रतिष्ठा, विद्या, शान्ति, अमृता का न्यास गुह्य, हृदय, कण्ठ, भ्रूमध्य और ब्रह्मरन्ध्र में करे। इनके पहले क्रां क्रीं ऐं हौं ह्रौं पाँचो बीज लगा ले। इसी प्रकार से निवृत्त्यादि न्यास उपर्युक्त है। इसके

बाद आत्मरक्षान्यास करे। जैसे—ऐं ह्रीं श्रीं ऐं क्लीं सौं श्रीमहात्रिपुरसुन्दरि आत्मानं रक्ष रक्ष कह कर पुष्पाञ्जलि अपने हृदय पर दे। फिर ऐं क्लीं सौः अस्त्राय फट् से दिग्बन्ध करना चाहिए।

पहले बालाबीज बोलकर तब महात्रिपुरसुन्दरी, तब आत्मानं रक्ष रक्ष बोलकर हृदय का स्पर्श करे। तब अस्त्रमुद्रा से दिग्बन्ध करे। तब 'ऐं क्लीं सौं अमृतार्णवासनाय नमः से पावों का स्पर्श करे। तब ऐं क्लीं सौः त्रिपुरेश्वरी पीताम्बुजासनाय नमः से दोनों जानुओं का स्पर्श करे।

'यामल' के अनुसार अमृतार्णव आसनाय नमः से पैरों में न्यास करे। इसके बाद ऐं क्लीं सौं त्रिपुरेश्वरी पीताम्बुजासनाय नमः से घुटनों में न्यास करे। ह्रीं क्लीं सौः त्रिपुरसुन्दरी देव्यासनाय नमः से दोनों जाँघों में न्यास करे।

एक और मत से ह्रीं क्लीं सौः त्रिपुरसुन्दरी देव्यासनाय नमः से जंघों में न्यास करे। तब ह्क्लीं ह्सौः त्रिपुरवासिनी चक्रासनाय नमः से दोनों टखनों में न्यास करे। ह्सैं: ह्स्क्लीं ह्सौः त्रिपुराश्री सर्वमन्त्रासनाय नमः से गुह्य में न्यास करे। ह्रीं श्रीं क्लीं ब्लें त्रिपुरमालिनी साध्यसिद्धासनाय नमः से नाभि में न्यास करे। ह्स्रैं ह्स्क्लीं ह्स्रौः त्रिपुराम्बापर्यंकशक्तिपीठासनाय नमः से अपने वक्ष में न्यास करे। ह्स्रैं ह्स्क्रीं ह्स्रौं महात्रिपुरभैरवी सदाशिवमहाप्रेतपद्मासनाय नमः से ब्रह्मरन्ध्र में न्यास करे।

यामल के अनुसार हैं ह्क्लीं हसौः त्रिपुरवासिनी चक्राय नमः से स्फिकद्वय में न्यास करना चाहिये।

ह्सैं ह्सक्लीं ह्सौः त्रिपुराश्रीसर्वमन्त्रासनाय नमः से गुह्य में न्यास करे। ह्रीं श्रीं क्लीं ब्लें त्रिपुरमालिनी साध्यसिद्धासनाय नमः से नाभि में न्यास करे। ह्सैं ह्सक्लीं ह्स्रौः त्रिपुराम्बापर्यंकशक्तिपीठासनाय नमः से वक्ष में न्यास करे। ह्स्रैं ह्स्करीं ह्स्रौं महात्रिपुरभैरवी सदाशिवमहाप्रेतपद्मासनाय नमः से ब्रह्मरन्ध्र में न्यास करे।

षडंग न्यास—ऐं सर्वज्ञा शक्ति महात्रिपुरसुन्दरी हृदयाय नमः। क्लीं नित्यसुतृप्तिशक्ति-श्रीमहात्रिपुरसुन्दरी शिरसे स्वाहा। सौः अनादिबोधशक्तिश्रीमहात्रिपुरसुन्दरी शिखायै वषट्। ऐं स्वतन्त्रशक्तिश्रीमहात्रिपुरसुन्दरी कवचाय हुं। क्लीं अलुप्तशक्तिश्रीमहात्रिपुरसुन्दरी नेत्र-त्रयाय वौषट्। सौः अनन्तशक्तिश्रीमहात्रिपुरसुन्दरी अस्त्राय फट्।

नवरत्नेश्वर में वर्णन है कि सर्वज्ञा, नित्यसुतृप्ता, अनादिबोध, स्वतन्त्र, अलुप्तशक्ति, अनन्त शक्ति से षडंग न्यास करे।

आदि में शिव और शिवा का बीज, तब नाम जोड़कर जातियुक्त षडंग न्यास करे। तब वशिनी आदि का न्यास करे। यह प्रयोग संक्षेप में है। बाला मन्त्र ऐं क्लीं सौः से नवयोन्यात्मक न्यास करे। जैसे—

दक्षकर्णे—ऐं नम:
वामकर्णे—क्लीं नम:
चिबुके—सौ: नम:
दक्षगण्डे—ऐं नम:
वामगण्डे—क्लीं नम:
मुखे—सौ: नम:
दक्षनेत्रे—ऐं नम:
वामनेत्रे—क्लीं नम:
नासिकायां—सौ: नम:
दक्षस्कन्धे—ऐं नम:
वामस्कन्धे—क्लीं नम:
उदरे—सौ: नम:
दक्षकूर्परे—ऐं नम:
वामकूर्परे—क्लीं नम:
जठरे—सौ: नम:
दक्षजानुनि—ऐं नम:
वामजानुनि—क्लीं नम:
लिङ्गे—सौ: नम:
दक्षपादे—ऐं नम:
वामपादे—क्लीं नम:
गुह्ये—सौ: नम:
दक्षपार्श्वे—ऐं नम:
वामपार्श्वे—क्लीं नम:
हृदये—सौ: नम:
दक्षस्तने—ऐं नम:
वामस्तने—क्लीं नम:
कण्ठे—सौ नम:

तब बालामन्त्र का उच्चारण करके गोलक का चिन्तन करे। फिर बालामन्त्र उच्चारण करके चतुरस्र का चिन्तन करे।

अथ पीठतत्त्वन्यासौ; यथा—मूलवाग्भवमुच्चार्य अग्निचक्रे कामगिर्यालये मित्रीशनाथात्मके रुद्रात्मशक्तिश्रीकामेश्वरीदेवीश्रीपादुकायै नमः इति आधारे। द्वितीयकूटमुच्चार्य सूर्यचक्रे जालन्धरपीठे षष्ठीशनाथात्मके विष्ण्वात्मशक्ति-श्रीवज्रेश्वरीदेवीश्रीपादुकायै नमो हृदये। तृतीयकूटमुच्चार्य सोमचक्रे पूर्णागिरिपीठे उड्डीशनाथात्मके ब्रह्मात्मशक्तिश्रीभगमालिनीदेवीश्रीपादुकायै नमो ललाटे। त्रिकूट-मुच्चार्य परब्रह्मचक्रे उड्डीयानपीठे श्रीचर्यानाथात्मके ब्रह्मात्मशक्तिश्रीमहात्रिपुर-सुन्दरीदेवीश्रीपादुकायै नमो ब्रह्मरन्ध्रे। कलामृते—

**पीठान् सिद्धिप्रदान् मूले प्रथमं बीजमुच्चरन्।
अग्निचक्रे योजयेच्च कामगिर्यालये पुनः ॥
मित्रीशेति ततो नाथात्मके कामेश्वरी पुनः।
देवी रुद्रात्मशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि च ॥
नमः पदं द्वितीयञ्च बीजमुच्चार्य पार्वति।
सूर्यचक्रे योजयेच्च जालन्धरपदं ततः ॥
पीठे च षष्ठीशनाथात्मके वज्रेश्वरीपदम्।
देवी विष्ण्वात्मशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि च ॥
नमः पदं तृतीयञ्च बीजमुच्चार्य पार्वति।**

सोमचक्रे योजयेच्च पूर्णागिरपदं ततः ॥
पीठे उड्डीशनाथात्मके भगमालिनीपदम् ।
देवी ब्रह्मात्मशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि च ॥
नमःपदं समस्तञ्च मन्त्रमुच्चार्य पार्वति ।
परं ब्रह्मपदं चक्रे उड्डीयानपदं ततः ॥
पीठे पदं योजयित्वा चर्यानाथात्मके पदम् ।
महात्रिपुरशब्दान्ते सुन्दरीति पदन्ततः ॥
देवीब्रह्मपदात्मान्ते शक्तिश्रीपादुकां ततः ।
पूजयामि नमश्चान्ते पर्यायः प्रथमं शिवे ॥

स्थानानि च—

मूलाधारे च हृदये ललाटे ब्रह्मरन्ध्रके ।

ततस्तत्त्वन्यासः यथा—वाग्भवकूटमुच्चार्य आत्मतत्त्वव्यापिकायै श्रीमहात्रिपुरसुन्दर्यै नमः आधारे। द्वितीयकूटमुच्चार्य विद्यातत्त्वव्यापिकायै श्रीमहात्रिपुरसुन्दर्यै नमः हृदये। तृतीयकूटमुच्चार्य शिवतत्त्वव्यापिकायै श्रीमहात्रिपुरसुन्दर्यै नमः भ्रूमध्ये। त्रिकूटमुच्चार्य सर्वतत्त्वव्यापिकायै श्रीमहात्रिपुरसुन्दर्यै नमो ब्रह्मरन्ध्रे।

ततः पञ्चदशीन्यासः; तद्यथा—मूलाधारे हृदि चक्षुषोः कर्णयोर्नसोः मुखभुजयुगपृष्ठजानुयुगलनाभिषु प्रत्येकं नमोऽन्तं मूलमन्त्रवर्णं न्यसेत्।

पीठतत्त्वन्यास—कएईलह्रीं अग्निचक्रे कामगिर्यालये मित्रीशनाथात्मके रुद्रात्मशक्तिश्रीकामेश्वरीदेवी श्रीपादुकायै नमः से मूलाधार में न्यास करे। हसकहलह्रीं सूर्यचक्रे जालन्धरपीठे षष्ठीशनाथात्मके विष्ण्वात्मशक्तिश्रीवज्रेश्वरीपादुकायै नमः से हृदय में न्यास करे। सकलह्रीं सोमचक्रे पूर्णगिरिपीठे उड्डीशनाथात्मके ब्रह्मात्मशक्तिश्रीभगमालिनीदेवीश्रीपादुकायै नमः से ललाट में न्यास करे। कएईलह्रीं हसकहलह्रीं सकलह्रीं परब्रह्मचक्रे उड्डीयानपीठे श्रीचर्यानाथात्मके ब्रह्मात्मशक्तिश्रीमहात्रिपुरसुन्दरीदेवीश्रीपादुकायै नमः से ब्रह्मरन्ध्र में न्यास करे।

कुलामृत में कथन है कि पीठसिद्धिप्रदायक हों, इसलिये न्यास में पहले बीज, तब अग्निचक्र, तब कामगिर्यालय, तब मित्रीश, तब नाथात्मक, तब कामेश्वरी, पुनः देवीरुद्रात्मशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि नमः से मन्त्र बनता है—मूलाधारे—कएईलह्रीं अग्निचक्रे कामगिर्यालये मित्रीशनाथात्मके कामेश्वरी देवी रुद्रात्मशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि नमः। इसी प्रकार दूसरा मन्त्र है—(हृदये) हसकहलह्रीं सूर्यचक्रे जालन्धरपीठे षष्ठीशनाथात्मके वज्रेश्वरी देवी विष्ण्वात्मकशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि नमः। इसी प्रकार तीसरा मन्त्र है—(ललाटे) सकलह्रीं सोमचक्रे पूर्णगिरिपीठे उड्डीशनाथात्मके भगमालिनीदेवीब्रह्मात्मशक्ति श्रीपादुकां पूजयामि नमः। चौथा मन्त्र होता है—ब्रह्मरन्ध्रे—कएईलह्रीं हसकहलह्रीं सकलह्रीं परब्रह्मचक्रे उड्डीयानपीठे

चर्यानाथात्मके शक्तिमहात्रिपुरसुन्दरीदेवीब्रह्मात्मशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि नमः। इनके पूजन का स्थान मूलाधार, हृदय, ललाट और ब्रह्मरन्ध्र है। इसके बाद तत्त्व न्यास करे—

कएईलह्रीं आत्मतत्त्वव्यापिकायै श्रीमहात्रिपुरसुन्दर्यै नमः मूलाधारे।
हसकहलह्रीं विद्यातत्त्वव्यापिकायै श्रीमहात्रिपुरसुन्दर्यै नमः हृदये।
सकलह्रीं शिवतत्त्वव्यापिकायै श्रीमहात्रिपुरसुन्दर्यै नमः भ्रूमध्ये।

कएईलह्रीं हसकहलह्रीं सकलह्रीं सर्वतत्त्वव्यापिकायै महात्रिपुरसुन्दर्यै नमः ब्रह्मरन्ध्रे।

इसके बाद पञ्चदशी मन्त्रवर्णन्यास करे—

ऐं ह्रीं श्रीं कं नमः शिरसि।
ऐं ह्रीं श्रीं एं नमः मूलाधारे।
ऐं ह्रीं श्रीं ईं नमः हृदि।
ऐं ह्रीं श्रीं लं नमः दक्षनेत्रे।
ऐं ह्रीं श्रीं ह्रीं नमः वामनेत्रे।
ऐं ह्रीं श्रीं हं नमः भ्रूमध्ये।
ऐं ह्रीं श्रीं सं नमः दक्षश्रोत्रे।
ऐं ह्रीं श्रीं कं नमः वामश्रोत्रे।
ऐं ह्रीं श्रीं हं नमः मुखे।
ऐं ह्रीं श्रीं लं नमः दक्षभुजे।
ऐं ह्रीं श्रीं ह्रीं नमः वामभुजे।
ऐं ह्रीं श्रीं सं नमः पृष्ठे।
ऐं ह्रीं श्रीं कं नमः दक्षजानुनि।
ऐं ह्रीं श्रीं लं नमः वामजानुनि।
ऐं ह्रीं श्रीं ह्रीं नमः नाभौ।

षोडशीन्यासः

निबन्धे—

ब्रह्मरन्ध्रे पूर्णविद्यां रक्तवर्णां विचिन्तयेत्।
सौभाग्यदण्डिनीं मुद्रां वामांसे भ्रामयेत्सुधीः ॥
रिपुजिह्वाग्रहां मुद्रा वामपादतले न्यसेत्।
व्यापकान्ते योनिमुद्रां मुखे क्षिप्त्वाभिवन्द्य च ॥

पुनर्ब्रह्मरन्ध्रे मणिबन्धे ललाटे मालिकां तां षोडशवर्णान्न्यसेत्।

अथ संहारन्यासः ततः—

पादयोर्जङ्घयोर्जान्वोः कट्यामंगुलिपृष्ठके।
नाभौ पार्श्वद्वये चापि स्तनयोरंसयोस्तथा ॥
करयोर्ब्रह्मरन्ध्रे च वदने भ्रुवि पार्वति।
ततः कर्णप्रदेशे च करवेष्टनयोः क्रमात् ॥

इति संहारन्यासः।

अथ स्थितिक्रमः—करयोरङ्गुलीषु पञ्च ब्रह्मरन्ध्रे मुखे हृदि त्रयम्। नाभ्यादि-पादपर्यन्तमेकम्। कण्ठान्नाभिपर्यन्तमेकम्। ब्रह्मरन्ध्रात्कण्ठपर्यन्तमेकम्। पादयोरङ्गुलीषु पञ्च इति स्थितिन्यासः।

अथ सृष्टिन्यासः—ब्रह्मरन्ध्रे ललाटे नेत्रे श्रवणे घ्राणे मस्तके ओष्ठे दन्ताध-ऊर्ध्वे जिह्वायां चिबुके पृष्ठे सर्वाङ्गे हृदि स्तनयोः कुक्षौ लिङ्गे च षोडशवर्णान् प्रविन्यसेत्।

अथ नादन्यासः—शिरसि अविकृन्नादाय नमः, ललाटे शून्यनादाय नमः, भ्रूमध्ये स्पर्शनादाय नमः, नासायां नादनादाय नमः, वदने ध्वनिनादाय नमः, कण्ठे विन्दुनादाय नमः, हृदये शक्तिनादाय नमः, नाभौ जीवनादाय नमः, मूलाधारे अक्षरात्मकनादाय नमः। तथा च कुलामृते—

प्रथमञ्चाविकृन्नादं शून्यनादमतः परम् ।
स्पर्शनादं नादनादं ध्वनिनादमतः परम् ॥
विन्दुनादं शक्तिनादं जीवनादं ततः शिवे ।
अक्षरात्मकनादञ्च नमोऽन्तञ्च क्रमेण हि ॥
शिरोललाटभ्रूमध्यनासावदनकण्ठके ।
हृन्नाभिमूलदेशेषु नवनादं न्यसेत्सुधीः ॥

षोडशी न्यास—निबन्ध ग्रन्थ के अनुसार षोडशी के उपासकों के के लिये विशेष न्यास का प्रावधान है। पञ्चदशी के पहले ह्रीं या श्रीं लगाने से षोडशी मन्त्र बनता है; जैसे—ह्रीं कएईलह्री हसकहलह्रीं सकलह्रीं—षोडशाक्षर।

श्रीं कएईलह्रीं हसकहलह्रीं सकलह्रीं—षोड़शाक्षर।

ऐं ह्रीं श्रीं मूलं नमः दक्ष मध्यमानामा से शिर में न्यास करे। न्यास के समय ध्यान करे। श्री षोडशी दीपाभां स्रवत् सुधारसा महासौभाग्यदा।

ऐं ह्रीं श्रीं मूलं नमः महासौभाग्यं मे देहि परसौभाग्यं दण्डयामि। सौभाग्यदण्डिनी मुद्रा से वामकर्ण से वेष्टनपूर्वक मस्तक से चरण तक वामांग में न्यास करे।

ऐं ह्रीं श्रीं मूलं नमः मम शत्रून्निगृह्णासि। रिपुजिह्वाग्र मुद्रा से वाम पादतल में न्यास करे।

ऐं ह्रीं श्रीं मूलं नमः। त्रैलोकस्याहं कर्ता। त्रिखण्डा मुद्रा से काल में न्यास करे।

ऐं ह्रीं श्रीं मूलं नमः। त्रिखण्डा मुद्रा से मुख वेष्टित करके न्यास करे।

ऐं ह्रीं श्रीं मूलं नमः। त्रिखण्डा मुद्रा से दक्ष कर्ण से वाम कर्ण तक मुखवेष्टन करके न्यास करे।

ऐं ह्रीं श्रीं मूलं नमः। त्रिखण्डा मुद्रा से गले से ऊपर मस्तक तक न्यास करे।

ऐं ह्रीं श्रीं मूलं नमः। त्रिखण्डा मुद्रा से मस्तक से पादपर्यन्त और पैरों से मस्तक तक न्यास करे।

ऐं ह्रीं श्रीं मूलं नमः। योनिमुद्रा से मुख में न्यास करे।

ऐं ह्रीं श्रीं नमः। योनिमुद्रा से ललाट में न्यास करे।

संहारन्यास—

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं श्रीं नम: पादयो:
ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ह्रीं नम: जंघयो:
ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं नम: जान्वो:
ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऐं नम: कटिभागद्वये
ॐ ऐं ह्रीं श्रीं सौ: नम: पृष्ठे
ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ॐ नम: लिङ्गे
ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ह्रीं नम: नाभौ
ॐ ऐं ह्रीं श्रीं श्रीं नम: पार्श्वयो:
ॐ ऐं ह्रीं श्रीं कएईलह्रीं नम: स्तनयो:
ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसकहलह्रीं नम: अंसयो:
ॐ ऐं ह्रीं श्रीं सकलह्रीं नम: कर्णयो:
ॐ ऐं ह्रीं श्रीं सौ: नम: मूर्ध्नि
ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऐं नम: मुखे
ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं नम: नेत्रयो:
ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ह्रीं नम: कर्णयुगसन्निधौ
ॐ ऐं ह्रीं श्रीं श्रीं नम: कर्णवेष्टनयो:

सृष्टिन्यास—

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं श्रीं नम: ब्रह्मरन्ध्रे
ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ह्रीं नम: फाले
ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं नम: नेत्रयो:
ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऐं नम: कर्णयो:
ॐ ऐं ह्रीं श्रीं सौ: नम: नासापुटयो:
ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ॐ नम: गण्डयो:
ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ह्रीं नम: दन्तपंक्तौ
ॐ ऐं ह्रीं श्रीं श्रीं नम: ओष्ठयो:
ॐ ऐं ह्रीं श्रीं कएईलह्रीं नम: जिह्वायाम्।
ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसकहलह्रीं नम: कण्ठे।
ॐ ऐं ह्रीं श्रीं सकलह्रीं नम: पृष्ठे।
ॐ ऐं ह्रीं श्रीं सौ: नम: सर्वांगे।
ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऐं नम: हृदि।
ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं नम: स्तनयो:।
ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ह्रीं नम: उदरे।
ॐ ऐं ह्रीं श्रीं श्रीं नम: लिङ्गे।

स्थितिन्यास—

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं श्रीं नम: अंगुष्ठयो:
ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ह्रीं नम: तर्जन्यो:
ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं नम: मध्यमयो:
ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऐं नम: अनामिकयो:
ॐ ऐं ह्रीं श्रीं सौ: नम: कनिष्ठयो:
ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ॐ नम: मूर्ध्नि
ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ह्रीं नम: मुखे
ॐ ऐं ह्रीं श्रीं श्रीं नम: हृदि
ॐ ऐं ह्रीं श्रीं कएईलह्रीं नम: नाभौ।
ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसकहलह्रीं नम: कंठादिनाभ्यन्तम्।
ॐ ऐं ह्रीं श्रीं सकलह्रीं नम: मूर्धादिकण्ठान्तम्।
ॐ ऐं ह्रीं श्रीं सौं नम: पादांगुष्ठयो:।
ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऐं नम: पादतर्जन्यो:।
ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं नम: पादमध्यमयो:।
ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ह्रीं नम: पादानामिकयो:।
ॐ ऐं ह्रीं श्रीं श्रीं नम: पादकनिष्ठयो:।

नादन्यास—

शिरसि अविकृन्नादाय नम:
ललाटे शून्यनादाय नम:
नासायां नादनादाय नम:
वदने ध्वनिनादाय नम:
कण्ठे बिन्दुनादाय नम:
हृदये जीवनादाय नम:
मूलाधारे अक्षरात्मकनादाय नम:

कुलामृत में लिखा है कि पहले अविकृन्नाद, तब शून्यनाद, तब स्पर्शनाद, तब नादनाद, तब ध्वनिनाद, तब विन्दुनाद, तब शक्तिनाद, तब जीवनाद और तब अक्षरात्मक नाद होता है। अन्त में नम: लगाकर शिर, ललाट, भ्रूमध्य, नासा, मुख, कण्ठ, हृदय, नाभि में नव नादों का न्यास करे।

षोढान्यास:

ज्ञानार्णवे—

गणेशो प्रथमो न्यासो द्वितीयश्च ग्रहैर्मत: ।
नक्षत्रैस्तु तृतीय: स्याद्योगिनीभिश्चतुर्थक: ॥
राशिभि: पञ्चमी न्यास: षष्ठ: पीठैर्निगद्यते ।
षोढान्यासस्त्वयं प्रोक्त: सर्वत्रैवापराजित: ॥

एवं—

योगिन्यस्तस्य गात्रस्था: स पूज्य: सर्वयोगिभि: ।
नास्त्यस्य पूज्यो लोकेषु पितृमातृमुखोज्ज्वल: ।
स एव पूज्य: सर्वेषां स स्वयं परमेश्वर: ॥
षोढान्यासविहीनो य: प्रणमेद्देवि पार्वतीम् ।
सोऽचिरान्मृत्युमाप्नोति नरकञ्च प्रपद्यते ॥

बृहदारण्यकऋषिरनुष्टुप्छन्दो गणेशो देवता न्यासकर्मणि जपे विनियोग:। ऐं ह्रीं श्रीं अं विघ्नेश्वरश्रीभ्यां नम: इति शिरसि। ३ (ऐं ह्रीं श्री) आं विघ्नराजह्रीभ्यां नम: इति मुखे। ३ इं विनायकतुष्टिभ्यां नम: इति दक्षचक्षुषि। ३ ईं शिवोत्तमशान्तिभ्यां नम: इति वामनेत्रे। ३ उं विघ्नहृत्पुष्टिभ्यां नमो दक्षकर्णे। ३ ऊं विघ्नकर्त्तृसरस्वतीभ्यां नमो वामकर्णे। ३ ऋं विघ्नराड्रतिभ्यां नमो दक्षनसि। ३ ॠं गणनायकमेधाभ्यां नमो वामनसि। ३ लृं एकदन्तकान्तिभ्यां नमो दक्षगण्डे। ३ लॄं द्विदन्तकामिनीभ्यां नमो वामगण्डे। ३ एं गजवक्त्रमोहिनीभ्यां नम: ओष्ठे। ३ ऐं निरञ्जनजटाभ्यां नमोऽधरे। ३ ओं कन्दर्पभृत्तीव्राभ्यां नम: ऊर्ध्वदन्ते। ३ औं दीर्घवक्त्रज्वालिनीभ्यां नमोऽधोदन्ते। ३ अं सङ्कर्षणनन्दाभ्यां नमो ब्रह्मरन्ध्रे। ३ अ: वृषध्वजसुरसाभ्यां नमो मुखे। ३ कं गणनाथकामरूपिणीभ्यां नमो दक्षस्कन्धे। ३ खं गजेन्द्रशुभाभ्यां नमो दक्षकूर्परे। ३ गं सूर्पकर्णजयिनीभ्यां नमो मणिबन्धे। ३ घं त्रिनेत्रसत्याभ्यां नमोऽङ्गुलिमूले। ३ ङं लम्बोदरविघ्नेशीभ्यां नमोऽङ्गुल्यग्रे। ३ चं महामोदस्वरूपिणीभ्यां नमो वामस्कन्धे। ३ छं चतुर्मूर्त्तिकामदाभ्यां नमो वामकूर्परे। ३ जं सदाशिवमदविह्वलाभ्यां नमो मणिबन्धे। ३ झं आमोदविकटाभ्यां नमोऽङ्गुलिमूले। ३ ञं दुर्मुखघूर्णाभ्यां नमोऽङ्गुल्यग्रे। ३ टं सुमुखभूतिनीभ्यां नमो दक्षकटाध:। ३ ठं प्रमोदभूमिभ्यां नमो दक्षजानुनि। ३ डं एकपादमतिभ्यां नमो गुल्फे। ३ ढं

द्विजिह्वरमाभ्यां नमोऽङ्गुल्यधः। ३ गं शूरमानुषीभ्यां नमोऽङ्गुल्यग्रे। ३ तं वीरमकरध्वजाभ्यां नमो वामकट्यधः। ३ थं षण्मुखविकर्णाभ्यां नमो जानुनि। ३ दं वरदभृकुटिभ्यां नमो गुह्ये। ३ धं वामदेवलज्जाभ्यां नमोऽङ्गुल्यधः। ३ नं वक्रतुण्डदीर्घघोणाभ्यां नमः इति अंगुल्यग्रे। ३ पं द्विरण्डधनुर्धराभ्यां नमो दक्षपार्श्वे। ३ फं सेनानीयामिनीभ्यां नमो वामपार्श्वे। ३ बं ग्रामणीरात्रिभ्यां नमः पृष्ठे। ३ भं मत्तचन्द्रिकाभ्यां नमो नाभौ। ३ मं विमलशशिप्रभाभ्यां नमः उदरे। ३ यं मत्तवाहनलोलाभ्यां नमो हृदि। ३ रं जटिचपलाक्षिभ्यां नमो दक्षस्कन्धे। ३ लं मुण्डिऋद्धिभ्यां नमः ककुदि। ३ वं खड्गिदुर्भगाभ्यां नमो वामस्कन्धे। ३ शं वरेण्यसुभगाभ्यां नमो हृदादिदक्षहस्ते। ३ षं वृषकेतुशिवाभ्यां नमो हृदादिवामहस्ते। ३ सं भक्ष्यप्रियदुर्गाभ्यां नमो हृदादिदक्षपादे। ३ हं मेघनादकामिनीभ्यां नमो हृदादिवामपादे। ३ लं गजेशकान्यकुब्जाभ्यां नमो हृदाद्युदरे। ३ क्षं गणेशविघ्नहारिणीभ्यां नमो हृदादिमुखे। तथा च ज्ञानार्णवे—

विश्वेश्वरस्तथा श्रीश्च विघ्नराजस्तथा ह्रिया।
विनायकस्तथा तुष्टिः शान्तियुक्तः शिवोत्तमः ॥
विघ्नहृत्पुष्टियुक्तश्च विघ्नकर्त्तृ सरस्वती।
विघ्नराड्रतियुक्तश्च मेधा च गणनायकः ॥
एकदन्तश्च कान्तिश्च द्विदन्तः कामिनीयुतः।
गजवक्त्रो मोहिनी च निरञ्जनजटैकतः ॥
कन्दर्पभृत्तथा तीव्रा दीर्घवक्त्रस्तथा प्रिये।
ज्वालिनीसहितः पश्चात् नन्दासङ्कर्षणौ तथा ॥
वृषध्वजश्च सुरसा गणनाथेन संयुता।
कामरूपिणिका पश्चाद्गजेन्द्रः शुभया ततः ॥
सूर्पकर्णस्तु जयिनी त्रिनेत्रः सत्यया युतः।
लम्बोदरश्च विघ्नेशी महामोदःस्वरूपिणी ॥
चतुर्मूर्त्तिः कामदा च सदाशिवयुता ततः।
मदविह्वलनाम्नी च आमोदविकटे तथा ॥
दुर्मुखश्च तथा घूर्णा सुमुखी भूतिनी ततः।
प्रमोदश्च तथा भूमिरेकपादस्तथा मतिः ॥
द्विजिह्वश्च रमायुक्तः शूरश्चैव तु मानुषी।
वीरेणसहिता पश्चात् शैलजे मकरध्वजा ॥
षण्मुखश्च विकर्णा च वरदो भृकुटी ततः।

वामदेवस्तथा लज्जा वक्रतुण्डस्ततः परम् ॥
दीर्घघोणान्वितः पश्चाद् द्विरण्डकधनुर्धरे ।
सेनानीर्यामिनीयुक्ता ग्रामणी रात्रिसंयुतः ॥
मत्तश्च चन्द्रिकायुक्तो विमलश्च शशिप्रभा ।
मत्तवाहनलोले च जटी च चपलाक्षिणी ॥
मुण्डी ऋद्धियुतः पश्चात्खड्गी दुर्भगया युतः ।
वरेण्यश्चैव सुभगा वृषकेतुस्तथा शिवा ॥
भक्ष्यप्रियश्च दुर्गा च मेघनादश्च कामिनी ।
गजेशः कान्यकुब्जा च गणेशो विघ्नहारिणी ॥

इति गणेशन्यासः।

षोढ़ा न्यास—ज्ञानार्णव के अनुसार छः प्रकार के न्यासों में पहला गणेशन्यास, दूसरा ग्रहन्यास, तीसरा नक्षत्रन्यास, चौथा योगिनीन्यास, पाँचवाँ राशिन्यास और छठा पीठन्यास होता है। इस षोढ़ा न्यास के करने से साधक सर्वत्र अपराजित रहता है। उसके शरीर में योगिनियाँ रहती हैं, अतः सभी योगियों के द्वारा ये पूज्य हैं। इनके पूजन से साधक के माता-पिता का मुख उज्ज्वल होता है। वह साधक सर्वपूज्य हो जाता है और स्वयं परमेश्वर हो जाता है। षोढ़ा न्यास के विना जो देवी को प्रणाम करता है, उसकी मृत्यु शीघ्र होती है। वह नरक में जाता है।

गणेश न्यास—इस न्यास के ऋषि बृहदारण्यक, छन्द अनुष्टुप्, देवता गणेश एवं न्यास कर्म में जप के लिये विनियोग होता है। विनियोग के पश्चात् न्यास निम्नवत् किया जाता है—

ऐं ह्रीं श्रीं अं श्रींयुक्ताय विघ्नेशाय नमः शिरसि।
ऐं ह्रीं श्रीं आं ह्रींयुक्ताय विघ्नराजाय नमः ललाटे।
ऐं ह्रीं श्रीं इं तुष्टियुक्ताय विनायकाय नमः दक्षनेत्रे।
ऐं ह्रीं श्रीं ईं शान्तियुक्ताय शिवोत्तमाय नमः वामनेत्रे।
ऐं ह्रीं श्रीं उं पुष्टियुक्ताय विघ्नहर्त्रे नमः दक्षकर्णे।
ऐं ह्रीं श्रीं ऊं सरस्वतीयुक्ताय विघ्नकर्त्रे नमः वामकर्णे।
ऐं ह्रीं श्रीं ऋं रतियुक्ताय विघ्नराजाय नमः दक्षनासापुटे।
ऐं ह्रीं श्रीं ॠं मेधायुक्ताय गणनायकाय नमः वामनासापुटे।
ऐं ह्रीं श्रीं लृं कान्तियुक्ताय एकदन्ताय नमः दक्षगण्डे।
ऐं ह्रीं श्रीं लॄं कामिनीयुक्ताय द्विदन्ताय नमः वामगण्डे।
ऐं ह्रीं श्रीं एं मोहिनीयुक्ताय गजवक्त्राय नमः ऊर्ध्वोष्ठे।
ऐं ह्रीं श्रीं ऐं जटायुक्ताय निरञ्जनाय नमः अधरोष्ठे।

ऐं ह्रीं श्रीं ओं तीव्रायुक्ताय कपर्दभृते नमः ऊर्ध्वदन्तपंक्तौ।
ऐं ह्रीं श्रीं औं ज्वालिनीयुक्ताय दीर्घमुखाय नमः अधोदन्तपंक्तौ।
ऐं ह्रीं श्रीं अं नन्दायुक्ताय शंकुकर्णाय नमः जिह्वाग्रे।
ऐं ह्रीं श्रीं अः सुरसायुक्ताय वृषध्वजाय नमः कण्ठे।
ऐं ह्रीं श्रीं कं कामरूपिणीयुक्ताय गणनाथाय नमः दक्षबाहुमूले।
ऐं ह्रीं श्रीं खं सुभ्रूयुक्ताय गजेन्द्राय नमः दक्षकूर्परे।
ऐं ह्रीं श्रीं गं जयिनीयुक्ताय सूर्पकर्णाय नमः दक्षमणिबन्धे।
ऐं ह्रीं श्रीं घं सत्यायुक्ताय त्रिलोचनाय नमः दक्षकरांगुलिमूले।
ऐं ह्रीं श्रीं ङं विघ्नेशीयुक्ताय लम्बोदराय नमः दक्षकरांगुल्यग्रे।
ऐं ह्रीं श्रीं चं सुरूपायुक्ताय महानादाय नमः बामबाहुमूले।
ऐं ह्रीं श्रीं छं कामदायुक्ताय चतुर्मूर्त्तये नमः वामकूर्परे।
ऐं ह्रीं श्रीं जं मदविह्वलायुक्ताय सदाशिवाय नमः वाममणिबन्धे।
ऐं ह्रीं श्रीं झं विकटायुक्ताय आमोदाय नमः वामकरांगुलिमूले।
ऐं ह्रीं श्रीं ञं पूर्णायुक्ताय दुर्मुखाय नमः वामकरांगुल्यग्रे।
ऐं ह्रीं श्रीं टं भूतिदायुक्ताय सुमुखाय नमः दक्षोरुमूले।
ऐं ह्रीं श्रीं ठं भूमियुक्ताय प्रमोदाय नमः दक्षजानुनि।
ऐं ह्रीं श्रीं डं शक्तियुक्ताय एकपादाय नमः दक्षगुल्फे।
ऐं ह्रीं श्रीं ढं रमायुक्ताय द्विजिह्वाय नमः दक्षपादांगुलिमूले।
ऐं ह्रीं श्रीं णं मानुषीयुक्ताय शूराय नमः दक्षपादांगुल्यग्रे।
ऐं ह्रीं श्रीं तं मकरध्वजायुक्ताय वीराय नमः वामोरुमूले।
ऐं ह्रीं श्रीं थं वीरणीयुक्ताय षण्मुखाय नमः वामजानुनि।
ऐं ह्रीं श्रीं दं भ्रुकुटीयुक्ताय वरदाय नमः वामगुल्फे।
ऐं ह्रीं श्रीं धं लज्जायुक्ताय वामदेवाय नमः वामपादांगुलिमूले।
ऐं ह्रीं श्रीं नं दीर्घघोणायुक्ताय वक्रतुण्डाय नमः वामपादांगुल्यग्रे।
ऐं ह्रीं श्रीं पं धनुर्धरायुक्ताय द्विरण्डकाय नमः दक्षपार्श्वे।
ऐं ह्रीं श्रीं फं यामिनीयुक्ताय सेनान्यै नमः वामपार्श्वे।
ऐं ह्रीं श्रीं बं रात्रियुक्ताय ग्रामण्यै नमः पृष्ठे।
ऐं ह्रीं श्रीं भं चन्द्रिकायुक्ताय मत्ताय नमः नाभौ।
ऐं ह्रीं श्रीं मं शशिप्रभायुक्ताय विमत्ताय नमः जठरे।
ऐं ह्रीं श्रीं यं लोलायुक्ताय मत्तवाहनाय नमः हृदये।
ऐं ह्रीं श्रीं रं चपलायुक्ताय जटिने नमः दक्षस्कन्धे।
ऐं ह्रीं श्रीं लं ऋद्धियुक्ताय मुण्डिने नमः गलपृष्ठे।
ऐं ह्रीं श्रीं वं दुर्भगायुक्ताय खड्गिने नमः वामस्कन्धे।

ऐं ह्रीं श्रीं शं सुभगायुक्ताय वरेण्याय नमः हृदयादिदक्षकरांगुल्यन्तम्।
ऐं ह्रीं श्रीं षं शिवायुक्ताय वृषकेतनाय नमः हृदयादिवामकरांगुल्यन्तम्।
ऐं ह्रीं श्रीं सं दुर्गायुक्ताय भक्ष्यप्रियाय नमः हृदयादिदक्षपादांगुल्यन्तम्।
ऐं ह्रीं श्रीं हं कालीयुक्ताय गणेशाय नमः हृदयादिवामपादांगुल्यन्तम्।
ऐं ह्रीं श्रीं लं कालकुब्जिकायुक्ताय मेघनादाय नमः हृदयादिगुह्यान्तम्।
ऐं ह्रीं श्रीं क्षं विघ्नहारिणीयुक्ताय गणेश्वराय नमः हृदयादिमूर्धान्तम्।
ज्ञानार्णव के अनुसार भी गणेशन्यास इसी प्रकार का होता है।

ग्रहन्यासः

३ (ऐं ह्रीं श्रीं) अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं लृं ॡं एं ऐं ओं औं अं आं आदित्यरुचिभ्यां नमो हृदये। ३ यं रं लं वं सों सोमामराभ्यां नमो भ्रूमध्ये। ३ कं खं गं घं ङं अं अङ्गारकरक्ताभ्यां नमो नेत्रे। ३ चं छं जं झं ञं बुं बुधज्ञानरूपाभ्यां नमो हृदयोपरि। ३ टं ठं डं ढं णं वृं वृहस्पतियशस्विनीभ्यां नमः कण्ठे। ३ तं थं दं धं नं शुं शुक्राह्लादिनीभ्यां नमो गले। ३ पं फं बं भं मं शं शनैश्चरशक्तिभ्यां नमो नाभौ। ३ शं षं सं हं रां राहुकृष्णाभ्यां नमो वक्त्रे। ३ लं क्षं कें केतुवायवीभ्यां नमो गुह्ये। तथा च ज्ञानार्णवे—

स्वरैरर्कं हृदि न्यस्येद्यवर्गेण शशी ततः ।
भ्रूमध्ये च कवर्गेण भौमं नेत्रत्रये न्यसेत् ॥
चवर्गेण बुधो हृदि टवर्गेण वृहस्पतिः ।
हृदयोपरि देवेशि तवर्गेण गले भृगुः ॥
पवर्गेण शनिर्नाभौ राहुर्वक्त्रे शवर्गगः ।
लक्षाभ्यान्तु गुदे केतुं न्यसेदेवं वरानने ॥

ग्रहन्यास—ऐं ह्रीं श्रीं अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं लृं ॡं एं ऐं ओं औं अं आं आदित्यरुचिभ्यां नमोहृदि।
ऐं ह्रीं श्रीं यं रं लं वं सों सोमामराभ्यां नमो भ्रूमध्ये।
ऐं ह्रीं श्रीं कं खं गं घं ङं अं अंगारकरक्ताभ्यां नमो नेत्रे।
ऐं ह्रीं श्रीं चं छं जं झं ञं बुं बुधज्ञानरूपाभ्यां नमो हृदयोपरि।
ऐं ह्रीं श्रीं टं ठं डं ढं णं वृं वृहस्पतियशस्विनीभ्यां नमः कण्ठे।
ऐं ह्रीं श्रीं तं थं दं धं नं शुं शुक्राह्लादिनीभ्यां नमो गले।
ऐं ह्रीं श्रीं पं फं बं भं मं शं शनैश्चरशक्तिभ्यां नमो नाभौ।
ऐं ह्रीं श्रीं शं षं सं हं रां राहुकृष्णाभ्यां नमो वक्त्रे।
ऐं ह्रीं श्रीं लं क्षं कें केतुवायवीभ्यां नमो गुह्ये।

ज्ञानार्णव के अनुसार भी इसी प्रकार से ग्रहन्यास करना चाहिये।

नक्षत्रन्यासः

३ (ऐं ह्रीं श्रीं) अं आं अश्विन्यै नमो ललाटे। ३ इं ईं भरण्यै नमो दक्षनेत्रे। ३ उं ऊं कृत्तिकायै नमो वामनेत्रे। ३ ऋं ॠं लृं ॡं रोहिण्यै नमो दक्षकर्णे। ३ एं मृगशिरसे नमो वामकर्णे। ३ ऐं आर्द्रायै नमो दक्षनासायाम्। ३ ओं औं पुनर्वसवे नमो वामनासायाम्। ३ कं पुष्याय नमः कण्ठे। ३ खं गं आश्लेषायै नमो दक्षस्कन्धे। ३ घं ङं मघायै नमो वामस्कन्धे। ३ चं पूर्वफल्गुन्यै नमो दक्षभुजमध्ये। ३ छं जं उत्तरफल्गुन्यै नमो वामभुजमध्ये। ३ झं ञं हस्तायै नमो दक्षमणिबन्धे। ३ टं ठं चित्रायै नमो वाममणिबन्धे। ३ डं स्वात्यै नमो दक्षहस्ततले। ३ ढं णं विशाखायै नमो वामहस्ततले। ३ तं थं दं अनुराधायै नमो नाभौ। ३ धं ज्येष्ठायै नमो दक्षकटिदेशे। ३ नं पं फं मूलायै नमो वामकटिदेशे। ३ बं पूर्वाषाढायै नमो दक्षोरौ। ३ भं उत्तराषाढायै नमो वामोरौ। ३ मं श्रवणायै नमो दक्षजानुनि। ३ यं रं धनिष्ठायै नमो वामजानुनि। ३ लं शतभिषायै नमो दक्षजङ्घायाम्। ३ वं शं पूर्वभाद्रपदायै नमो वामजङ्घायाम्। ३ षं सं हं उत्तरभाद्रपदायै नमो दक्षपादे। ३ लं क्षं अं अः रेवत्यै नमो वामपादे।

नक्षत्रन्यास—ऐं ह्रीं श्रीं अं आं अश्विन्यै नमः ललाटे।
ऐं ह्रीं श्रीं इं ईं भरण्यै नमः दक्षनेत्रे।
ऐं ह्रीं श्रीं उं ऊं कृत्तिकायै नमः वामनेत्रे।
ऐं ह्रीं श्रीं ऋं ॠं लृं ॡं रोहिण्यै नमः दक्षकर्णे।
ऐं ह्रीं श्रीं एं मृगशिरसे नमः वामकर्णे।
ऐं ह्रीं श्रीं ऐं आर्द्रायै नमः दक्षनासापुटे।
ऐं ह्रीं श्रीं ओं औं पुनर्वसवे नमः वामनासापुटे।
ऐं ह्रीं श्रीं कं पुष्याय नमः कण्ठे।
ऐं ह्रीं श्रीं खं गं आश्लेषायै नमः दक्षस्कन्धे।
ऐं ह्रीं श्रीं घं ङं मघायै नमः वामस्कन्धे।
ऐं ह्रीं श्रीं चं पूर्वफल्गुन्यै नमः दक्षभुजमध्ये।
ऐं ह्रीं श्रीं छं जं उत्तरफल्गुन्यै नमः वामभुजमध्ये।
ऐं ह्रीं श्रीं झं ञं हस्ताय नमः दक्षमणिबन्धे।
ऐं ह्रीं श्रीं टं ठं चित्रायै नमः वाममणिबन्धे।
ऐं ह्रीं श्रीं डं स्वात्यै नमः दक्षहस्ततले।
ऐं ह्रीं श्रीं ढं णं विशाखायै नमः वामहस्ततले।
ऐं ह्रीं श्रीं तं थं दं अनुराधायै नमः नाभौ।

ऐं ह्रीं श्रीं धं ज्येष्ठायै नमः दक्षकटिदेशे।

ऐं ह्रीं श्रीं नं पं फं मूलाय नमः वामकटिदेशे।

ऐं ह्रीं श्रीं बं पूर्वाषाढ़ायै नमः दक्षोरौ।

ऐं ह्रीं श्रीं भं उत्तराषाढ़ायै नमः वामोरौ।

ऐं ह्रीं श्रीं मं श्रवणायै नमः दक्षजानुनि।

ऐं ह्रीं श्रीं यं रं धनिष्ठायै नमः वामजानुनि।

ऐं ह्रीं श्रीं लं शतभिषायै नमः दक्षजंघायाम्।

ऐं ह्रीं श्रीं वं शं पूर्वभाद्रपदायै नमः वामजंघायाम्।

ऐं ह्रीं श्रीं षं सं हं उत्तरभाद्रपदायै नमः दक्षपादे।

ऐं ह्रीं श्रीं लं क्षं अं अः रेवत्यै नमः वामपादे।

योगिनीन्यासः

३ (ऐं ह्रीं श्री) अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं ऌं ॡं एं ऐं ओं औं डां डीं डुं ड म ल व र यूं डाकिन्यै मां रक्ष रक्ष त्वगात्मने नमः कण्ठे। ३ कं खं गं घं ङं चं छं जं झं ञं टं ठं रां रीं र म ल व र यूं राकिण्यै मां रक्ष रक्षासृगात्मने नमो हृदये। ३ डं ढं णं तं थं दं धं नं पं फं नां नीं न म ल व र यूं लाकिन्यै मां रक्ष रक्ष मांसात्मने नमो नाभौ।

३ बं भं मं यं रं लं कां कीं क म ल व र यूं काकिन्यै मां रक्ष रक्ष मेद आत्मने नमः स्वाधिष्ठाने। ३ वं शं षं सं सां सीं स म ल व र यूं शाकिन्यै मां रक्ष रक्ष अस्थ्यात्मने नमो मूलाधारे। ३ हं लं क्षं हां हीं ह म ल व र यूं हाकिन्यै मां रक्ष रक्ष मज्जात्मने नमो भ्रूमध्ये।

योगिनीन्यास—ऐं ह्रीं श्री अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं ऌं ॡं एं ऐं ओं औं डां डीं डुं डमलवरयूं डाकिन्यै मां रक्ष रक्ष त्वगात्मने नमः कण्ठे।

ऐं ह्रीं श्रीं कं खं गं घं ङं चं छं जं झं ञं टं ठं रां रीं रमलवरयूं राकिन्यै मां रक्ष रक्ष रक्षासृगात्मने नमो हृदये।

ऐं ह्रीं श्रीं डं ढं णं तं थं दं धं नं पं फं नां नीं नमलवरयूं लाकिन्यै मां रक्ष रक्ष मांसात्मने नमो नाभौ।

ऐं ह्रीं श्रीं बं भं मं यं रं लं कां कीं कमलवरयूं काकिन्यै मां रक्ष-रक्ष मेदात्मने नमः स्वाधिष्ठाने।

ऐं ह्रीं श्रीं वं शं षं सं सां सीं समलवरयूं शाकिन्यै मां रक्ष रक्ष अस्थ्यात्मने नमो मूलाधारे।

ऐं ह्रीं श्रीं हं लं क्षं हां हीं हमलवरयूं हाकिन्यै मां रक्ष रक्ष मज्जात्मने नमो भ्रूमध्ये।

राशिन्यासः

३ (ऐं ह्रीं श्रीं) अं आं इं ईं मेषराशये नमो दक्षगुल्फे। ३ उं ऊं ऋं वृषराशये नमो दक्षजानुनि। ३ ॠं लृं ॡं मिथुनराशये नमो दक्षवृषणे। ३ एं ऐं कर्कटराशये नमो दक्षकुक्षौ। ३ ओं औं सिंहराशये नमो दक्षस्कन्धे। ३ अं अः शं षं सं हं लं क्षं कन्याराशये नमो दक्षमस्तके। ३ कं खं गं घं ङं तुलाराशये नमो वाममस्तके। ३ चं छं जं झं ञं वृश्चिकराशये नमो वामबाहुमूले। ३ टं ठं डं ढं णं धनुराशये नमो वामकुक्षौ। ३ तं थं दं धं नं मकरराशये नमो वामवृषणे। ३ पं फं बं भं मं कुम्भराशये नमो वामजानुनि। ३ यं रं लं वं मीनराशये नमो वामगुल्फे।

राशिन्यास—ऐं ह्रीं श्रीं अं आं इं ईं मेषराशये नमो दक्षगुल्फे।
ऐं हीं श्रीं उं ऊं ऋं वृषराशये नमो दक्षजानुनि।
ऐं ह्रीं श्रीं ॠं लृं ॡं मिथुनराशये नमो दक्षवृषणे।
ऐं ह्रीं श्रीं एं ऐं कर्कटाय नमो दक्षकुक्षौं।
ऐं ह्रीं श्रीं ओं औं सिंहराशये नमो दक्षस्कन्धे।
ऐं ह्रीं श्रीं अं अः शं षं सं हं लं क्षं कन्याराशये नमो दक्षमस्तके।
ऐं ह्रीं श्रीं कं खं गं घं ङं तुलाराशये नमो वाममस्तके।
ऐं ह्रीं श्रीं चं छं जं झं ञं वृश्चिकराशये नमो वामबाहुमूले।
ऐं ह्रीं श्रीं टं ठं डं ढं णं धनुराशये नमो वामकुक्षौं।
ऐं ह्रीं श्रीं तं थं दं धं नं मकरराशये नमो वामवृषणे।
ऐं ह्रीं श्रीं पं फं बं भं मं कुम्भराशये नमो वामजानुनि।
ऐं ह्रीं श्रीं यं रं लं वं मीनराशये नमो वामगुल्फे।

पीठन्यासः

**सितासितारुणश्यामहरित्पीतान्यनुक्रमात् ।
पुनः पुनः क्रमाद्देवि पञ्चाशत् स्थानसञ्चयः ।
श्यामान् वराभयकरान् सर्वालङ्कारभूषितान् ॥**

एवं ध्यात्वा पीठे न्यसेत्। ३ (ऐं ह्रीं श्रीं) अं कामरूपपीठाय नमः शिरसि। ३ आं वाराणसीपीठाय नमो मुखवृत्ते। ३ इं नेपालपीठाय नमो दक्षचक्षुषि। ३ ईं पौण्ड्रवर्द्धनपीठाय नमो वामचक्षुषि। ३ उं काश्मीरपीठाय नमो दक्षकर्णे। ऊं कान्यकुब्जपीठाय नमो वामकर्णे। ३ ऋं पुरस्थितपीठाय नमो दक्षिणनसि। ॠं चरस्थितपीठाय नमो वामनसि। ३ लृं पूर्णशैलपीठाय नमो दक्षगण्डे। ३ ॡं अर्बुदपीठाय नमो वामगण्डे। ३ एं आम्रातकेश्वरपीठाय नमः ओष्ठे। ३ ऐं एकाम्रपीठाय

नमोऽधरे। ३ ओं त्रिस्रोत:पीठाय नमः ऊर्ध्वदन्ते। ३ औं कामकोट्टपीठाय नमोऽ-धोदन्ते। ३ अं कैलासपीठाय नमो ब्रह्मरन्ध्रे। ३ अः भृगुपीठाय नमो मुखे। ३ कं केदारपीठाय नमो दक्षबाहुमूले। ३ खं चन्द्रपुरपीठाय नमः दक्षकूर्परे। ३ गं श्रीपीठाय नमो दक्षमणिबन्धे। ३ घं ओंकारपीठाय नमः दक्षिणांगुलिमूले। ३ ङं जालन्धरपीठाय नमः दक्षांगुल्युग्रे। ३ चं मानवपीठाय। ३ छं कूपान्तकपीठाय। ३ जं देवीकोट्टीपीठाय। ३ झं गोकर्णपीठाय। ३ ञं मारुतेश्वरपीठाय—वामबाहुमूलसन्ध्यग्रकेषु। ३ टं अट्ट-हासपीठाय नमः दक्षपादमूले। ३ ठं विजयपीठाय नमो दक्षजानुनि। ३ डं राज-गृहपीठाय नमो दक्षगुल्फे। ३ ढं कोल्वगिरिपीठाय नमो दक्षपादांगुलिमूले। ३ णं एलापुरपीठाय नमो दक्षपादांगुल्यग्रे। ३ तं कामेश्वरपीठाय नमो वामपादमूले। ३ थं जयन्तीपीठाय नमः वामजानुनि। ३ दं उज्जयिनीपीठाय नमो वामगुल्फे। ३ धं क्षीरिकापीठाय नमो वामपादांगुलिमूले। ३ नं हस्तिनापुरपीठाय नमो वाम-पादांगुल्यग्रे। ३ पं उड्डीशपीठाय नमो दक्षपार्श्वे। ३ फं प्रयागपीठाय नमो वामपार्श्वे। ३ बं विन्ध्यपीठाय नमः पृष्ठे। ३ भं मायापुरपीठाय नमो नाभौ। ३ मं जलेश्वरपीठाय नमः उदरे। ३ यं मलयपीठाय नमो हृदये। ३ रं श्रीशैलपीठाय नमो दक्षिणस्कन्धे। ३ लं मेरुपीठाय नमः ककुदि। ३ वं गिरिपीठाय नमो वामस्कन्धे। ३ शं महेन्द्र-पीठाय नमो हृदादि दक्षिणकरे। ३ यं वामनपीठाय नमो हृदादिवामकरे। ३ सं हिरण्यपुरपीठाय नमो हृदादिदक्षिणपादे। ३ हं महालक्ष्मीपुरपीठाय नमो हृदादि-वामपादे। ३ लं उड्डीयानपीठाय नमो हृदाद्युदरे। ३ क्षं छायाछत्रपुरपीठाय नमो हृदादिमुखे। सर्वत्र मातृकास्थानेषु नमोऽन्तेन न्यसेत्। अयं षोढान्यासो मातृका-न्यासकाले कर्त्तव्यः इति सम्प्रदायविदः।

पीठन्यास—ध्यान—

सितासितारुणश्यामहरित्पीतान्यनुक्रमात् ।
पुन: पुन: क्रमाद्देवि पञ्चाशत् स्थानसञ्चय:।।
श्यामान् वराभयकरान् सर्वालङ्कारभूषितान्।

इस प्रकार ध्यान करते हुये निम्नवत् पीठ पर न्यास करे—

ऐं ह्रीं श्रीं अं कामरूपाय नम: शिरसि।
ऐं ह्रीं श्रीं आं वाराणस्यै नम: मुखवृत्ते।
ऐं ह्रीं श्रीं इं नेपालाय नम: दक्षनेत्रे।
ऐं ह्रीं श्रीं ईं पौण्ड्रवर्द्धनाय नम: वामनेत्रे।
ऐं ह्रीं श्रीं उं पुरस्थितकाश्मीराय नम: दक्षकर्णे।
ऐं ह्रीं श्रीं ऊं कान्यकुब्जाय नम: वामकर्णे।

ऐं ह्रीं श्रीं ऋं पुरस्थितपीठाय नमः दक्षनासापुटे।
ऐं ह्रीं श्रीं ॠं नरस्थितपीठाय नमः वामनासापुटे।
ऐं ह्रीं श्रीं ऌं पूर्णशैलपीठाय नमः दक्षगण्डे।
ऐं ह्रीं श्रीं ॡं अर्बुरपीठाय नमः वामगण्डे।
ऐं ह्रीं श्रीं एं आम्रातकेश्वरपीठाय नमः ऊर्ध्वोष्ठे।
ऐं ह्रीं श्रीं ऐं एकाम्रपीठाय नमः अधरोष्ठे।
ऐं ह्रीं श्रीं ओं त्रिस्रोतपीठाय नमः ऊर्ध्वदन्तपंक्तौ।
ऐं ह्रीं श्रीं औं कामकोट्टपीठाय नमः अधोदन्तपंक्तौ।
ऐं ह्रीं श्रीं अं कैलासपीठाय नमः ब्रह्मरन्ध्रे।
ऐं ह्रीं श्रीं अः भृगुपीठाय नमः मुखे।
ऐं ह्रीं श्रीं कं केदारपीठाय नमः दक्षबाहुमूले।
ऐं ह्रीं श्रीं खं चन्द्रपुरपीठाय नमः दक्षकूर्परे।
ऐं ह्रीं श्रीं गं श्रीपीठाय नमः दक्षमणिबन्धे।
ऐं ह्रीं श्रीं घं ओङ्कारपीठाय नमः दक्षकरांगुलिमूले।
ऐं ह्रीं श्रीं ङं जालन्धरपीठाय नमः दक्षकरांगुल्यग्रे।
ऐं ह्रीं श्रीं चं मानवपीठाय नमः वामबाहुमूले।
ऐं ह्रीं श्रीं छं कूपान्तपीठाय नमः वामकूर्परे।
ऐं ह्रीं श्रीं जं देवीकोट्टिपीठाय नमः वाममणिबन्धे।
ऐं ह्रीं श्रीं झं गोकर्णपीठाय नमः वामकरांगुलिमूले।
ऐं ह्रीं श्रीं ञं मारुतेश्वरपीठाय नमः वामकरांगुल्यग्रे।
ऐं ह्रीं श्रीं टं अट्टहासपीठाय नमः दक्षपादमूले।
ऐं ह्रीं श्रीं ठं विजयापीठाय नमः दक्षजानुनि।
ऐं ह्रीं श्रीं डं राजगृहपीठाय नमः दक्षगुल्फे।
ऐं ह्रीं श्रीं ढं कोल्वगिरिपीठाय नमः दक्षपादांगुलिमूले।
ऐं ह्रीं श्रीं णं एलापुरपीठाय नमः दक्षपादांगुल्यग्रे।
ऐं ह्रीं श्रीं तं कामेश्वरपीठाय नमः वामपादमूले।
ऐं ह्रीं श्रीं थं जयन्तिपीठाय नमः वामजानुनि।
ऐं ह्रीं श्रीं दं उज्जयिन्यै नमः वामगुल्फे।
ऐं ह्रीं श्रीं धं क्षीरिकायै नमः वामपादांगुलिमूले।
ऐं ह्रीं श्रीं नं हस्तिनापुराय नमः वामपादांगुल्यग्रे।
ऐं ह्रीं श्रीं पं उड्डीशाय नमः दक्षपार्श्वे।
ऐं ह्रीं श्रीं फं प्रयागाय नमः वामपार्श्वे।
ऐं ह्रीं श्रीं बं विन्ध्यपीठाय नमः पृष्ठे।

ऐं ह्रीं श्रीं भं मायापुर्यै नम: नाभौ।
ऐं ह्रीं श्रीं मं जलेशाय नम: उदरे।
ऐं ह्रीं श्रीं यं मलयाय नम: हृदये।
ऐं ह्रीं श्रीं रं श्रीशैलाय नम: दक्षस्कन्धे।
ऐं ह्रीं श्रीं लं मेरवे नम: ककुदि।
ऐं ह्रीं श्रीं वं गिरिवराय नम: वामस्कन्धे।
ऐं ह्रीं श्रीं शं महेन्द्राय नम: हृदयादिदक्षकरांगुल्यन्तम्।
ऐं ह्रीं श्रीं षं वामनाय नम: हृदयादिवामकरांगुल्यन्तम्।
ऐं ह्रीं श्रीं सं हिरण्याय नम: हृदयादिदक्षपादांगुल्यन्तम्।
ऐं ह्रीं श्रीं हं महालक्ष्मीपुराय नम: हृदयादिवामपादांगुल्यन्तम्।
ऐं ह्रीं श्रीं ळं ओड्याणाय नम: हृदयाद्युदये।
ऐं ह्रीं श्रीं क्षं छायाच्छत्राय नम: हृदयादिमूखे।

त्रिपुरान्यास:

तन्त्रे—

त्रिपुरन्यासं ततः कुर्यात् सर्वकामार्थसिद्धये ।
अस्यास्तु न्यासमात्रेण जीवन्मुक्तो भवेन्नरः ॥

यथा—ऐं ह्रीं श्रीं अं कामिनीत्रिपुरायै नमो ललाटे। सर्वत्र एवं क्रमेण त्रिपुरायै नमः इत्यन्तेन मातृकास्थानेषु न्यसेत्।

३ आं मालिनी। ३ इं मदना। ३ ईं उन्मादिनी। ३ उं द्राविणी। ३ ऊं खेचरी। ३ ऋं झटिका। ३ ॠं कलावती। ३ लृं क्लेदिनी। ३ ॡं शिवदूती। ३ एं सुभगा। ३ ऐं भगावहा। ३ ओं विद्येश्वरी। ३ औं महालक्ष्मी। ३ अं कौलिनी। ३ अः कालेश्वरी। ३ कं कुलमालिनी। ३ खं व्यापिनी। गं भगा। ३ घं वागीश्वरी। ३ ङं कालिका। ३ चं पिङ्गला। ३ छं भगसर्पिणी। ३ जं सुन्दरी। ३ झं नीलपताका। ३ ञं सिद्धेश्वरी। ३ टं महासिद्धेश्वरी। ३ ठं अघोरा। ३ डं रत्नमाला। ३ ढं मङ्गला। ३ णं भगमालिनी। ३ तं रौद्री। थं योगेश्वरी। ३ दं अम्बिका। ३ धं अट्टहासा। ३ नं व्योमरूपिणी। ३ पं वज्रेश्वरी। ३ फं क्षोभिणी। ३ बं शाकम्भरी। ३ भं अनङ्गा। ३ मं लोकेश्वरी। ३ यं रक्ता। ३ रं सुस्था। ३ लं शुक्रा। ३ वं अपराजिता। ३ शं सं वर्ता। ३ षं विमला। ३ सं अघोरा। ३ हं भैरवी। ३ लं अघोरा। ३ क्षं सर्वाकर्षिणी। इति पञ्चाशत्त्रिपुरा मातृकास्थानेषु नमोऽन्तेन न्यसेत्।

त्रिपुरान्यास—तन्त्र में वर्णन है कि इसके बाद त्रिपुरा न्यास करे। इससे सभी कामार्थ सिद्ध होते हैं। इस न्यासमात्र से मनुष्य जीवन्मुक्त हो जाता है।

ऐं ह्रीं श्रीं अं कामिनीत्रिपुरायै नमः ललाटे।
ऐं ह्रीं श्रीं आं मालिनीत्रिपुरायै नमः मुखवृत्ते।
ऐं ह्रीं श्रीं इं मदनात्रिपुरायै नमः दक्षनेत्रे।
ऐं ह्रीं श्रीं ईं उन्मादिनीत्रिपुरायै नमः वामनेत्रे।
ऐं ह्रीं श्रीं उं द्राविणीत्रिपुरायै नमः दक्षकर्णे।
ऐं ह्रीं श्रीं ऊं खेचरीत्रिपुरायै नमः वामकर्णे।
ऐं ह्रीं श्रीं ऋं झटिकात्रिपुरायै नमः दक्षनासापुटे।
ऐं ह्रीं श्रीं ॠं कलावतीत्रिपुरायै नमः वामनासापुटे।
ऐं ह्रीं श्रीं ऌं क्लेदिनीत्रिपुरायै नमः दक्षगण्डे।
ऐं ह्रीं श्रीं ॡं शिवदूतीत्रिपुरायै नमः वामगण्डे।
ऐं ह्रीं श्रीं एं सुभगात्रिपुरायै नमः ऊर्ध्वोष्ठे।
ऐं ह्रीं श्रीं ऐं भगावहात्रिपुरायै नमः अधरोष्ठे।
ऐं ह्रीं श्रीं ओं विद्येश्वरीत्रिपुरायै नमः ऊर्ध्वदन्तपंक्तौ।
ऐं ह्रीं श्रीं औं महालक्ष्मीत्रिपुरायै नमः अधोदन्तपंक्तौ।
ऐं ह्रीं श्रीं अं कौलिनीत्रिपुरायै नमः जिह्वाग्रे।
ऐं ह्रीं श्रीं अः कालेश्वरीत्रिपुरायै नमः कण्ठे।
ऐं ह्रीं श्रीं कं कुलमालिनीत्रिपुरायै नमः दक्षबाहुमूले।
ऐं ह्रीं श्रीं खं व्यापिनीत्रिपुरायै नमः दक्षकूर्परे।
ऐं ह्रीं श्रीं गं भगात्रिपुरायै नमः दक्षमणिबन्धे।
ऐं ह्रीं श्रीं घं वागीश्वरीत्रिपुरायै नमः दक्षकरांगुलिमूले।
ऐं ह्रीं श्रीं ङं कालिकात्रिपुरायै नमः दक्षकरांगुल्यग्रे।
ऐं ह्रीं श्रीं चं पिंगलात्रिपुरायै नमः वामबाहुमूले।
ऐं ह्रीं श्रीं छं भगसर्पिणीत्रिपुरायै नमः वामकूर्परे।
ऐं ह्रीं श्रीं जं सुन्दरीत्रिपुरायै नमः वाममणिबन्धे।
ऐं ह्रीं श्रीं झं नीलपताकात्रिपुरायै नमः वामकरांगुलिमूले।
ऐं ह्रीं श्रीं ञं सिद्धेश्वरीत्रिपुरायै नमः वामकरांगुल्यग्रे।
ऐं ह्रीं श्रीं टं महासिद्धेश्वरीत्रिपुरायै नमः दक्षोरुमूले।
ऐं ह्रीं श्रीं ठं अघोरात्रिपुरायै नमः दक्षजानुनि।
ऐं ह्रीं श्रीं डं रत्नमालात्रिपुरायै नमः दक्षगुल्फे।
ऐं ह्रीं श्रीं ढं मंगलात्रिपुरायै नमः दक्षपादांगुलिमूले।
ऐं ह्रीं श्रीं णं भगमालिनीत्रिपुरायै नमः दक्षपादांगुल्यग्रे।
ऐं ह्रीं श्रीं तं रौद्रीत्रिपुरायै नमः वामोरुमूले।

ऐं ह्रीं श्रीं थं योगेश्वरीत्रिपुरायै नमः वामजानुनि।
ऐं ह्रीं श्रीं दं अम्बिकात्रिपुरायै नमः वामगुल्फे।
ऐं ह्रीं श्रीं धं अट्टहासात्रिपुरायै नमः वामपादांगुलिमूले।
ऐं ह्रीं श्रीं नं व्योमरूपिणीत्रिपुरायै नमः वामपादांगुल्यग्रे।
ऐं ह्रीं श्रीं पं वज्रेश्वरीत्रिपुरायै नमः दक्षपार्श्वे।
ऐं ह्रीं श्रीं फं क्षोभिणीत्रिपुरायै नमः वामपार्श्वे।
ऐं ह्रीं श्रीं बं शाकम्भरीत्रिपुरायै नमः पृष्ठे।
ऐं ह्रीं श्रीं भं अनंगात्रिपुरायै नमः नाभौ।
ऐं ह्रीं श्रीं मं लोकेश्वरीत्रिपुरायै नमः जठरे।
ऐं ह्रीं श्रीं यं रक्तात्रिपुरायै नमः हृदये।
ऐं ह्रीं श्रीं रं सुस्थात्रिपुरायै नमः दक्षस्कन्धे।
ऐं ह्रीं श्रीं वं शुक्रात्रिपुरायै नमः गलपृष्ठे।
ऐं ह्रीं श्रीं वं अपराजितात्रिपुरायै नमः वामस्कन्धे।
ऐं ह्रीं श्रीं शं संवर्त्तात्रिपुरायै नमः हृदयादिदक्षकरांगुल्यन्तम्।
ऐं ह्रीं श्रीं षं विमलात्रिपुरायै नमः हृदयादिवामकरांगुल्यन्तम्।
ऐं ह्रीं श्रीं सं अघोरात्रिपुरायै नमः हृदयादिपादांगुल्यन्तम्।
ऐं ह्रीं श्रीं हं भैरवीत्रिपुरायै नमः हृदयादिवामपादांगुल्यन्तम्।
ऐं ह्रीं श्रीं लं अघोरात्रिपुरायै नमः हृदयादिगुह्यान्तम्।
ऐं ह्रीं श्रीं क्षं सर्वाकर्षिणीत्रिपुरायै नमः हृदयादिमूर्धान्तम्।

कामरतिन्यासः

ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं अं कामरतिभ्यां नमः। सर्वत्र ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं नमोऽन्तेन मातृकास्थानेषु न्यसेत्। ४ आं कामप्रीतिभ्याम्। ४ इं कान्तकामिनीभ्याम्। ४ ईं भ्रान्तमोहिनीभ्याम्। ४ उं कामधुक्कमलाभ्याम्। ४ ऊं कामचारिविलासिनीभ्याम्। ४ ऋं कन्दर्पकल्पलताभ्याम्। ४ ॠं कोमलश्यामलाभ्याम्। ४ ऌं कामवर्द्धक-शुचिस्मिताभ्याम्। ४ ॡं कामविजयाभ्याम्। ४ एं रणविशालाक्षीभ्याम्। ४ ऐं रमणलेलिहाभ्याम्। ४ ओं रतिनाथदिगम्बराभ्याम्। ४ औं रतिप्रियरमाभ्याम्। ४ अं रात्रिनाथकुब्जिकाभ्याम्। ४ अः स्मरकान्ताभ्याम्। ४ कं रमणसत्याभ्याम्। ४ खं निशाचरकल्याणीभ्याम्। ४ गं नन्दनभोगिनीभ्याम्। ४ घं नन्दीशकामदाभ्याम्। ४ ङं मदनसुलोचनाभ्याम्। ४ चं नन्दयितृस्वलावण्याभ्याम्। ४ छं निशाचरमर्दिनी-भ्याम्। ४ जं रतिहंसकलहंसप्रियाभ्याम्। ४ झं पुष्पगन्धर्वकांक्षिणीभ्याम्। ४ ञं महाधनुःसुखीभ्याम्। ४ टं ग्रामणीनलिनीभ्याम्। ४ ठं भीमजटिनीभ्याम्। ४ डं भ्रामणज्वालिनीभ्याम्। ४ ढं भ्रमणशिखिनीभ्याम्। ४ णं श्यामामुग्धाभ्याम्। ४

तं भ्रामणरमाभ्याम्। ४ थं भृगुभ्रमाभ्याम्। ४ दं भ्रान्तकामकलाभ्याम्। ४ धं भ्रमावहसुचञ्चलाभ्याम्। ४ नं मोहनदीर्घजिह्वाभ्याम्। ४ पं मेषकमहामतिभ्याम्। ४ फं मुग्धलोलाक्षीभ्याम्। ४ बं मोहवर्द्धनभृङ्गिनीभ्याम्। ४ भं मोहकचपेटाभ्याम्। ४ मं मन्मथनाथाभ्याम्। ४ यं मतङ्गमालिनीभ्याम्। ४ रं भृङ्गीशकलहंसिनीभ्याम्। ४ लं गायकविश्वतोमुखीभ्याम्। ४ वं गीतिगजनन्दिकाभ्याम् ४ शं नर्तकरञ्जिनी-भ्याम्। ४ षं मेषकान्तिभ्याम्। ४ सं उन्मत्तकलकण्ठाभ्याम्। ४ हं संवर्तक-वृकोदरीभ्याम्। ४ लं मेघश्यामाभ्याम्। ४ क्षं विमलश्रीमतीभ्याम्। मातृकास्थाने-ष्वेतान्नमोऽन्तान्न्यसेत्। ज्ञानार्णवे—

न्यसेत्कामरती पश्चात्कामप्रीति महेश्वरि ।
कान्तश्च कामिनीयुक्तो भ्रान्तो वै मोहिनीयुतः ॥
कामधुक्कमला तद्वत्कामचारो विलासिनी ।
कन्दर्पः कल्पलतया कोमलश्यामले तथा ॥
कामवर्द्धकसंयुक्ता विज्ञेया तु शुचिस्मिता ।
कामश्च विजयायुक्तो विशालाक्षीयुतो रणः ॥
रमणो लेलिहायुक्तो रतिनाथदिगम्बरे ।
रतिप्रियरमे चैव रात्रिनाथश्च कुब्जिका ॥
स्मरेण संयुता कान्ता रमणः सत्यया युतः ।
निशाचरश्च कल्याणी नन्दनो भोगिनी तथा ॥
नन्दीशः कामदायुक्तो मदनश्च सुलोचना ।
स्वलावण्ययुतो देवि तथा नन्दयिता प्रिये ॥
निशाचरश्च मर्दिन्या रतिहंसस्ततः परम् ।
कलहंसप्रियायुक्तः पुष्पधन्वा च कांक्षिणी ॥
महाधनुश्च सुमुखी ग्रामणीर्नलिनीयुतः ।
भीमश्च जटिनीयुक्तो भ्रामणो ज्वालिनीयुतः ॥
भ्रामणः शिखिनीयुक्तो श्याममुग्धे ततः परम् ।
भ्रामणो रमया युक्तो भृगुर्भ्रमा ततः परम् ॥
भ्रान्तः कामकलायुक्तो भ्रमावहसुचञ्चला ।
मोहनी दीर्घजिह्वा च मेषकश्च महामतिः ॥
तथा मुग्धश्च लोलाक्षी मोहवर्द्धनभृङ्गिनी ।
मोहकश्च चपेटा च मन्मथो नाथया युतः ॥
मतङ्गो मालिनीयुक्तो भृङ्गीशः कलहंसिनी ।

गायकेन समायुक्तस्ततो वै विश्वतोमुखी ॥
गजनन्दिकया युक्तो गीतिश्च तदनन्तरम् ।
नर्त्तकः सह रञ्जिन्या मेषः कान्तिसमन्वितः ॥
उन्मत्तः कलकण्ठा च संवर्त्तकवृकोदरी ।
मेघः श्यामान्वितो देवि विमलः श्रीमती प्रिये ।
मातृकार्णान्न्यसेद्देवि मातृकास्थान एव च ॥

कामरति-न्यास—

ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं अं कामरतिभ्यां नम: ललाटे।
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं आं कामप्रीतिभ्यां नम: मुखवृत्ते।
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं इं कान्तकामिनीभ्यां नम: दक्षनेत्रे।
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ईं भ्रान्तमोहिनीभ्यां नम: वामनेत्रे।
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं उं कामधुक्कमलाभ्यां नम: दक्षकर्णे।
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ऊं कामचारिविलासिनीभ्यां नम: वामकर्णे।
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ऋं कन्दर्पकल्पलताभ्यां नम: दक्षनासापुटे।
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ॠं कोमलश्यामलाभ्यां नम: वामनासापुटे।
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ऌं कामवर्द्धकशुचिस्मिताभ्यां नम: दक्षगण्डे।
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ॡं कामविजयाभ्यां नम: वामगण्डे।
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं एं रणविशालाक्षीभ्यां नम: ऊर्ध्वोष्ठे।
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं रमणलेलिहाभ्यां नम: अधरोष्ठे।
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ओं रतिनाथदिगम्बराभ्यां नम: ऊर्ध्वदन्तपंक्तौ।
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं औं रतिप्रियरमाभ्यां नम: अधोदन्तपंक्तौ।
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं अं रात्रिनाथकुब्जिकाभ्यां नम: जिह्वाग्रे।
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं अं: स्मरकान्ताभ्यां नम: कण्ठे।
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं कं रमणसत्याभ्यां नम: दक्षबाहुमूले।
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं खं निशाचरकल्याणीभ्यां नम: दक्षकूर्परे।
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं गं नन्दनभोगिनीभ्यां नम: दक्षमणिबन्धे।
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं घं नन्दीशकामदाभ्यां नम: दक्षकरांगुलिमूले।
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ङं मदनसुलोचनाभ्यां नम: दक्षकरांगुल्यग्रे।
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं चं नन्दयितृस्वलावण्याभ्यां नम: वामबाहुमूले।
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं छं निशाचरमर्दिनीभ्यां नम: वामकूर्परे।
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं जं रतिहंसकलहंसप्रियाभ्यां नम: वाममणिबन्धे।
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं झं पुष्पगन्धर्वकांक्षिणीभ्यां नम: करांगुलिमूले।

ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ञं महाधनु:सुखीभ्यां नम: वामकरांगुल्यग्रे।
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं टं ग्रामणीनलिनीभ्यां नम: दक्षोरुमूले ।
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ठं भीमजटिनीभ्यां नम: दक्षजानुनि।
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं डं भ्रामणज्वालिनीभ्यां नम: दक्षगुल्फे।
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ढं भ्रमणशिखिनीभ्यां नम: दक्षपादांगुलिमूले।
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं णं व्योममुग्धाभ्यां नम: दक्षपादांगुल्यग्रे।
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं तं भ्रामणरमाभ्यां नम: वामोरुमूले।
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं थं भृगुभ्रमाभ्यां नम: वामजानुनि।
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं दं भ्रान्तकामकलाभ्यां नम: वामगुल्फे।
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं धं भ्रमावहसुचञ्चलाभ्यां नम: वामपादांगुलिमूले।
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं नं मोहनदीर्घजीह्वाभ्यां नम: वामपादांगुल्यग्रे।
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं पं मेषकमहामतीभ्यां नम: दक्षपार्श्वे।
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं फं मुग्धलोलाक्षीभ्यां नम: वामपार्श्वे।
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं वं मोहवर्द्धनभृंगिनीभ्यां नम: कण्ठे।
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं भं मोहकचपेटाभ्यां नम: नाभौ।
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं मं मन्मथनाथाभ्यां नम: जठरे।
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं यं मतंगमालिनीभ्यां नम: हृदये।
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं रं भृंगीशकलहंसिनीभ्यां नम: दक्षस्कन्धे।
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं लं गायकविश्वतोमुखीभ्यां नम: गलपृष्ठे।
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं वं गीतिगजनन्दिकाभ्यां नम: वामस्कन्धे।
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं शं नर्तकरञ्जिनीभ्यां नम: हृदयादिदक्षकरांगुल्यन्तम्।
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं षं मेषकान्तिभ्यां नम: हृदयादिवामकरांगुल्यन्तम्।
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं सं उन्मत्तकलकण्ठाभ्यां नम: हृदयादिदक्षपादांगुल्यन्तम्।
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं हं संवर्तकवृकोदरीभ्यां नम: हृदयादिवामपादांगुल्यन्तम्।
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ळं मेघश्यामाभ्यां नम: हृदयादिगुह्यान्तम्।
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं क्षं विमलश्रीमतीभ्यां नम: हृदयादिमूर्धान्तम्।
ज्ञानार्णव में भी इसी प्रकार के न्यास का वर्णन है।

षोडशनित्यान्यास:

ज्ञानार्णवे—

प्रथमो सुन्दरी नित्या महात्रिपुरसुन्दरी ।
कामेश्वरी समाख्याता तथैव भगमालिनी ।।
नित्यक्लिन्ना च भेरुण्डा तथैव वह्निवासिनी ।

वज्रेश्वरी च दूती च त्वरिता कुलसुन्दरी ॥
नित्या नीलपताका च विजया सर्वमङ्गला ।
ज्वालामाला विचित्रान्ताः पञ्चदश प्रकीर्त्तिताः ॥

एतासां मन्त्राः ज्ञानार्णवे—

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि नित्यामन्त्रमनुत्तमम् ।
बालान्तारञ्च हृत्प्रान्ते कामेश्वरिपदं वदेत् ॥
इच्छाकामफलप्रान्ते प्रदे सर्वपदं वदेत् ।
ततः सत्त्ववशं ब्रूयात्करि सर्वजगत्पदम् ॥
क्षोभणान्ते करि ब्रूयात् हुंकारत्रयमालिखेत् ।
पञ्च बाणान् समालिख्य संहारेण कुमारिकाम् ॥
एषा कामेश्वरी नित्या प्रसङ्गात्कथिता शिवे ।
वाग्भवं भगशब्दान्ते भगे भगिनि चालिखेत् ॥
भगोदरि भगाङ्गे च भगमाले भगावहे ।
भगगुह्ये भगप्रान्ते योनिप्रान्ते भगान्तिके ॥
निपातिनी च सर्वान्ते ततो भगवशङ्करि ।
भगरूपे ततो लेख्यं नीरजायतलोचने ॥
नित्यक्लिन्ने भगप्रान्ते स्वरूपे सर्वमालिखेत् ।
भगानि मे ह्यानयान्ते वरदेऽथ समालिखेत् ॥
रेते सुरेते च भगक्लिन्ने क्लिन्नद्रवे ततः ।
क्लेदय द्रावयाथो च सर्वसत्त्वान् भगेश्वरि ॥
अमोघे भगविच्छे च क्षुभ क्षोभय सर्व च ।
सत्त्वान् भगेश्वरि ब्रूयाद्वाग्भवं ब्लूं जमादिकम् ॥
भें ब्लूं मों हें ब्लूं क्लिन्ने च ततः परम् ।
सर्वाणि च भगान्यन्ते मे वशञ्चानयेति च ॥
स्त्रीबीजञ्च हरप्रान्ते वेदमात्मकमक्षरम् ।
भुवनेशीं समालिख्य विद्येयं भगमालिनी ॥
पराबीजं समुच्चार्य नित्यक्लिन्ने मदद्रवे ।
अग्निजायान्वितो मन्त्रो नित्यक्लिन्नेयमीरिता ॥
प्रणवं पूर्वमुच्चार्य तथाङ्कुशयुगं वदेत् ।
तन्मध्ये विलिखेद्देवि भरोमात्मकमक्षरम् ॥
चवर्गमन्त्यहीनन्तु विलिखेद्वह्निसंस्थितम् ।

चतुर्दशस्वरोपेतं विन्दुनादान्वितं पृथक् ।
वह्निजायान्विता विद्या भेरुण्डा देवता भवेत् ॥
परां विलिख्य वह्न्यन्ते वासिन्यै नम इत्यपि ।
अष्टार्णोऽयं महेशानि देवता वह्निवासिनी ॥
प्रणवं भुवनेशानीं फरेमात्मकमक्षरम् ।
सविसर्गः शशी पश्चान्नित्यक्लिन्ने मदद्रवे ॥
वह्निजायान्विता विद्या सर्वैश्वर्यप्रदायिनी ।
चतुर्दशाक्षरी विद्या ज्ञेया वज्रेश्वरी तथा ॥
पराबीजं समुच्चार्य शिवदूती च ङेयुता ।
हृदन्तोऽयं मनुर्देवि दूती सर्वसमृद्धिदा ॥
ॐकारबीजमुच्चार्य परां कवचमालिखेत् ।
खेचछेक्षं समालिख्य श्रीबीजञ्च समालिखेत् ॥
हूंकारं क्षे परा चास्त्रं विद्येयं त्वरिता भवेत् ।
सर्वसिंहासनमयी बालैव कुलसुन्दरी ॥
बालया पुटितां कुर्यात्तथा वै नित्यभैरवीम् ।
पञ्चबाणांश्च देवेशि नित्या शक्राक्षरी भवेत् ॥

अथवा—

पञ्चाक्षरी बाणबीजैर्नित्येयमपरा भवेत् ।
प्रणवं भुवनेशानीं फरेमात्मकमक्षरम् ॥
ब्लूमात्मकं द्वितीयन्तु भुवनेश्यंकुशं ततः ।
नित्यशब्दं समुद्धृत्य सम्बोध्या च मदद्रवा ॥
कवचं चाङ्कुशं माया नित्या नीलपताकिनी ।
वान्तं कालसमायुक्तं रेफं शक्रस्वरान्वितम् ।
विन्दुनादाङ्कितं देवि विद्येयं विजया भवेत् ॥

यद्वा—

वान्तं कालाग्निवायुश्च शक्रस्वरविभूषितः ।
नादविन्दुकलायुक्तो विद्येयं विजया भवेत् ॥
चन्द्रं वरुणसंयुक्तं तारस्थञ्च समालिखेत् ।
चतुर्थ्यन्तं ततो देवि विलिखेत्सर्वमङ्गलाम् ॥
हृदन्तोऽयं मनुर्देवि नित्येयं सर्वमङ्गला ।
तारं हृद्भगवत्यन्ते ज्वालामालिनी देवि च ॥

द्विरुच्चार्य च सर्वान्ते भूतसंहारकारिके ।
जातवेदसि संलिख्य ज्वलन्तिपदयुग्मकम् ॥
ज्वलेति प्रज्वलद्वन्द्वं हुंकारत्रयमालिखेत् ।
वह्निबीजत्रयं कूर्चमन्त्रं स्वाहान्वितो मनुः ॥
इयं नित्या महादेवि ज्वालामालिनिका परा ।
कवर्गान्तं स्वरान्तञ्च शक्रस्वरविभूषितम् ॥
विन्दुनादकलाक्रान्तं विचित्रा परमेश्वरी ।
अकारादिषु सर्वेषु स्वरेषु क्रमतो यजेत् ॥
अः स्वरे परमेशानि श्रीविद्यां विश्वमातृकाम् ।
स्वरवद्विन्यसेद्विद्यां नीरजायतलोचने ॥

एताः षोडशस्वरन्यासस्थानेषु विन्यसेत्। मन्त्रो यथा—ऐं ह्रीं श्रीं अं ऐं क्लीं सौः ओं नमः कामेश्वरि इच्छाकामफलप्रदे सर्वसत्त्ववशङ्करि सर्वजगत्क्षोभणकरि हुं हुं हुं द्रां द्रीं क्लीं ब्लूं सः सौः क्लीं ऐं कामेश्वरीनित्याकलायै नमः (१)। ऐं ह्रीं श्रीं आं ऐं भगभुगे भगिनि भगोदरि भगाङ्गे भगमाले भगावहे भगगुह्ये भगयोनि भगनिपातिनि सर्वभगवशङ्करि भगरूपे नित्यक्लिन्ने भगस्वरूपे सर्वभगानि मे ह्यानय वरदे रेते सुरेते भगक्लिन्ने क्लिन्नद्रवे क्लेदय द्रावय सर्वसत्त्वान् भगेश्वरि अमोघे भगविच्छे क्षुभ क्षोभय सर्वसत्त्वान् भगेश्वरि ऐं ब्लूं जं भें ब्लूं मों ब्लूं हें ब्लूं क्लिन्ने सर्वाणि भगानि मे वशमानय स्त्रीं हर ब्लौं ह्रीं भगमालिनी-नित्याकलायै नमः (२)। ऐं ह्रीं श्रीं इं ह्रीं नित्यक्लिन्ने मदद्रवे स्वाहा नित्यक्लिन्ना नित्याकलायै नमः (३)। ऐं ह्रीं श्रीं ईं ओं क्रों क्रों द्रौं च्रौं छ्रौं ज्रौं झ्रौं स्वाहा भेरुण्डानित्याकलायै नमः (४)। ऐं ह्रीं श्रीं उं ह्रीं वह्निवासिन्यै नमः वह्नि-वासिनीनित्याकलायै नमः (५)। ऐं ह्रीं श्रीं ऊं ओं ह्रीं फ्रें सः नित्यक्लिन्ने मदद्रवे स्वाहा वज्रेश्वरी नित्याकलायै नमः (६)। ऐं ह्रीं श्रीं ऋं ह्रीं शिवदूत्यै नमः दूती-नित्याकलायै नमः (७)। ऐं ह्रीं श्रीं ॠं ओं ह्रीं हुं खेचछेक्ष स्त्रीं हूं क्षे ह्रीं फट् त्वरितानित्याकलायै नमः (८)। ऐं ह्रीं श्रीं लृं ऐं क्लीं सौः कुलसुन्दरीनित्याकलायै नमः (९)। ऐं ह्रीं श्रीं ॡं ऐं क्लीं सौः ह स क ल र डैं ह स क ल र डीं ह स क ल र डौः द्रां द्रीं क्लीं ब्लूं सः सौः क्लीं ऐं विमलानित्याकलायै नमः। अथवा—ऐं ह्रीं श्रीं ॡं द्रां द्रीं क्लीं ब्लूं सः विमलानित्याकलायै नमः (१०)। ऐं ह्रीं श्रीं एं ओं ह्रीं फ्रें ब्लूं आं ह्रीं क्रों नित्ये मदद्रवे हुं क्रों ह्रीं नीलपताकिनी नित्याकलायै नमः (११)। ऐं ह्रीं श्रीं ऐं झ्म्र्यूं ऐं विजयानित्याकलायै नमः। अथवा—ऐं ह्रीं श्रीं ऐं झ्म्र्यौं विजयानित्याकलायै नमः (१२)। ऐं ह्रीं श्रीं ओं

स्वों सर्वमङ्गलायै नमः सर्वमङ्गलानित्याकलायै नमः (१३)। ऐं ह्रीं श्रीं औं ओं नमो भगवति ज्वालामालिनि देवि ज्वालामालिनि देवि सर्वभूतसंहारकारिके जातवेदसि ज्वलन्ति ज्वलन्ति ज्वल ज्वल प्रज्वल प्रज्वल हुं हुं हुं रं रं रं हुं फट् स्वाहा ज्वालामालिनीनित्याकलायै नमः (१४)। ऐं ह्रीं श्रीं अं चं कौं विचित्रानित्याकलायै नमः (१५)। ऐं ह्रीं श्रीं अः मूलविद्यामुच्चार्य श्रीमहात्रिपुरसुन्दरीनित्याकलायै नमः। यद्वा—ऐं ह्रीं श्रीं अः ओं कामेश्वरीनित्याकलायै नमः (१६)। इति षोडशनित्या न्यसेत्। अस्मिन् काले वा सृष्टिस्थितिन्यासः। इति षोडशनित्यान्यासः।

षोड़शनित्या न्यास—ज्ञानार्णव के अनुसार महात्रिपुरसुन्दरी प्रथम सुन्दरी नित्या है। तब कामेश्वरी, भगमालिनी, नित्यक्लिन्ना, भेरुंडा, वह्निवासिनी, वज्रेश्वरी, शिवदूती, त्वरिता, कुलसुन्दरी, नित्या, नीलपताका, विजया, सर्वमंगला, ज्वालामालिनी, विचित्रा—ये पन्द्रह नित्यायें हैं।

इनके मन्त्रों का वर्णन ज्ञानार्णव में किया गया है। इसके उद्धार करने पर इन पन्द्रह नित्याओं के जो मन्त्र बनते हैं, वे मूल में अंकित हैं।

सोलहवीं नित्या महात्रिपुरसुन्दरी है। सोलह स्वरों के न्यासस्थानों में इनका न्यास इस प्रकार का होता है—

१. ऐं ह्रीं श्रीं अं ऐं क्लीं सौः ओं नमः कामेश्वरि इच्छाकामफलप्रदे सर्वसत्त्ववशंकरि सर्वजगत्क्षोभणकरि हुं हुं हुं द्रां द्रीं क्लीं ब्लूं सः सौः क्लीं ऐं कामेश्वरीनित्याकलायै नमः शिरसि।

२. ऐं ह्रीं श्रीं आं ऐं भगभुगे भगिनी भगोदरि भगांगे भगमाले भगावहे भगगुह्ये भगयोनि भगनिपातिनि सर्वभगवशंकरि भगरूपे नित्यक्लिन्ने भगस्वरूपे सर्वभगानि मे ह्यानय वरदे रेते सुरेते भगक्लिन्ने क्लिन्नद्रवे क्लेदय द्रावय सर्वसत्त्वान् भगेश्वरि अमोघे भगविच्छे क्षुभ क्षोभय सर्वसत्त्वान् भगेश्वरि ऐं ब्लूं जं भें ब्लूं मों ब्लूं हें ब्लूं क्लिन्ने सर्वाणि भगानि मे वशमानय स्त्रीं हर ब्लौं ह्रीं भगमालिनीनित्याकलायै नमः मुखवृत्ते।

३. ऐं ह्रीं श्रीं इं ह्रीं नित्यक्लिन्ने मदद्रवे स्वाहा नित्यक्लिन्ना नित्याकलायै नमः दक्षनेत्रे।

४. ऐं ह्रीं श्रीं ईं ओं क्रों क्रों द्रौं त्रौं छ्रौं झ्रौं स्वाहा भेरुण्डानित्याकलायै नमः वामनेत्रे।

५. ऐं ह्रीं श्रीं उं ह्रीं वह्निवासिन्यै नमः वह्निवासिनीनित्याकलायै नमः दक्षकर्णे।

६. ऐं ह्रीं श्रीं ऊं ओं ह्रीं फ्रें सः नित्यक्लिन्ने मदद्रवे स्वाहा वज्रेश्वरीनित्याकलायै नमः वामकर्णे।

७. ऐं ह्रीं श्रीं ऋं ह्रीं शिवदूत्यै नमः दूतीनित्याकलायै नमः दक्षनासापुटे।

८. ऐं ह्रीं श्रीं ॠं ओं ह्रीं हुं खे च छे क्ष स्त्रीं हूं क्षे ह्रीं फट् त्वरिता नित्याकलायै नमः वामनासापुटे।

९. ऐं ह्रीं श्रीं ऌं ऐं क्लीं सौ: कुलसुन्दरीनित्याकलायै नम: दक्षगण्डे।

१०. ऐं ह्रीं श्रीं ॡं ऐं क्लीं सौ: हसकलरडैं हसकलरडीं हसकलरडौ: द्रां द्रीं क्लीं ब्लूं स: सौ: क्लीं ऐं नित्यानित्याकलायै नम: वामगण्डे।

अन्य तन्त्रों में नित्यानित्या कहा गया है; इसलिये यहाँ नित्यानित्या ही रक्खा गया है। इस ग्रन्थ में ज्ञानार्णव के अनुसार एक और मन्त्र भी दिया गया है: यथा—ऐं ह्रीं श्रीं ॡं द्रां द्रीं क्लीं ब्लूं स: विमलानित्याकलायै नम:। इसमें भी नित्यानित्या के बदले विमला है।

११. ऐं ह्रीं श्रीं एं ओं ह्रीं फ्रें ब्लूं आं ह्रीं क्रों नित्ये मदद्रवे हुं क्रों ह्रीं नीलपताकिनी नित्याकलायै नम: ऊर्ध्वोष्ठे।

१२. ऐं ह्रीं श्रीं ऐं झ्म्र्यूं ऐं विजयानित्याकलायै नम: अथवा ऐं ह्रीं श्रीं ऐं झ्म्र्यौं विजयानित्याकलायै नम: अधरोष्ठे।

१३. ऐं ह्रीं श्रीं ओं स्वों सर्वमंगलायै नम: सर्वमंगलानित्याकलायै नम: ऊर्ध्वदन्तपंक्तौ।

१४. ऐं ह्रीं श्रीं औं ॐ नमो भगवति ज्वालामालिनि देवि ज्वालामलिनि देवि सर्वभूत-संहारकारिके जातवेदसि ज्वलन्ति ज्वलन्ति ज्वल ज्वल प्रज्वल प्रज्वल हुं हुं हुं रं रं रं हुं फट् स्वाहा ज्वालामालिनीनित्याकलायै नम: अधोदन्तपंक्तौ।

१५. ऐं ह्रीं श्रीं अं चं कौं विचित्रानित्याकलायै नम: जिह्वाग्रे।

१६. ऐं ह्रीं श्रीं अ: कएईलह्रीं हसकहलह्रीं सकलह्रीं महात्रिपुरसुन्दरीनित्याकलायै नम: अथवा ऐं ह्रीं श्रीं अ: ओं कामेश्वरीनित्याकलायै नम: कण्ठे।

प्रकटयोगिनीन्यास:

मूलाधारे ऐं ह्रीं श्रीं प्रकटयोगिनीभ्यो नमः। स्वाधिष्ठाने ३ गुप्तयोगिनीभ्यो नमः। नाभौ ३ गुप्ततरयोगिनीभ्यो नमः। हृदये ३ सम्प्रदाययोगिनीभ्यो नमः। कण्ठे ३ कुलकौलिनीयोगिनीभ्यो नमः। भ्रूमध्ये ३ निगर्भयोगिनीभ्यो नमः। नादे ३ रहस्ययोगिनीभ्यो नमः। नादान्ते ३ अतिरहस्ययोगिनीभ्यो नमः। ब्रह्मरन्ध्रे ३ परमातिरहस्ययोगिनीभ्यो नमः।

प्रकटयोगिनी इत्यादि न्यास—

मूलाधारे—ऐं ह्रीं श्रीं प्रकटयोगिनीभ्यो नमः।
स्वाधिष्ठाने—ऐं ह्रीं श्रीं गुप्तयोगिनीभ्यो नमः।
नाभौ—ऐं ह्रीं श्रीं गुप्ततरयोगिनीभ्यो नमः।
हृदये—ऐं ह्रीं श्रीं सम्प्रदाययोगिनीभ्यो नमः।
कण्ठे—ऐं ह्रीं श्रीं कुलकौलिनीयोगिनीभ्यो नमः।
भ्रूमध्ये—ऐं ह्रीं श्रीं निगर्भयोगिनीभ्यो नमः।
नादे—ऐं ह्रीं श्रीं रहस्ययोगिनीभ्यो नमः।

नादान्ते—ऐं ह्रीं श्रीं अतिरहस्ययोगिनीभ्यो नमः।

ब्रह्मरन्ध्रे—ऐं ह्रीं श्रीं परमातिरहस्ययोगिनीभ्यो नमः।

आयुधन्यासः

द्रां द्रीं क्लीं ब्लूं सः यां रां लां वां शां धं सम्मोहनाय कामेश्वरधनुषे नमः। यां ५ द्रां ५ थं सम्मोहनाय कामेश्वरीधनुषे नमः। एतद्द्वयं स्ववामाधोहस्ते। द्रां ५ यां ५ जं जम्भलेभ्यः कामेश्वरबाणेभ्यो नमः। यां ५ द्रां ५ जं जम्भलेभ्यः कामेश्वरीवाणेभ्यो नमः। एतद्द्वयं दक्षिणाधःकरे। द्रां ५ यां ५ आं वशीकरणाय कामेश्वरपाशाय नमः। द्रां ५ यां ५ ह्रीं वशीकरणाय कामेश्वरीपाशाय नमः। एतद्-द्वयं वामोर्ध्वहस्ते। द्रां ५ यां ५ क्रों सर्वस्तम्भनाय कामेश्वराङ्कुशाय नमः। द्रां ५ यां ५ सर्वस्तम्भनाय कामेश्वर्यङ्कुशाय नमः। एतद्द्वयं दक्षोर्ध्वे। इति तु वक्ष्यमाणक्रमेण कामकलां ध्यात्वा न्यसेत्। तथा च ज्ञानार्णवे—

एवं कामकलारूपं देवतामयमात्मनः।
वपुर्विचिन्त्य शिवयोरायुधन्यासमाचरेत्॥

तथा च—

द्रां द्रीं क्लीं ब्लूं सः इत्येते कामबाणाः प्रकीर्तिताः।
यां रां लां वां शाम् इदं कामेश्वरीबाणपञ्चकम्॥
द्रादीनि पश्चाद्यादीनि धं सम्मोहनशब्दतः।
ङेऽन्तात्कामेश्वरधनुर्ङेऽन्तं नमोऽन्तमुद्धरेत्॥
अनेन च स्ववामाधोहस्ते सन्धारयेद्धनुः।
यादिद्रादीनि थं ङेऽन्तसम्मोहनपदोपरि॥
कामेश्वरीधनुर्ङेऽन्तं नमोऽन्तमित्यधःकरे।
वामे देव्यास्तथा मन्त्री धारयेदैक्षवं धनुः॥
द्रादियादीनि जं जम्भलेभ्यः कामेश्वरपदान्तिके।
वाणेभ्यो नमः इत्यन्तं दक्षिणाधःकरे निजे॥
शैवान् प्रविन्यसेद्बाणान् पौष्पान् साधकसत्तमः।
यादिद्रादीनि जं जम्भलेभ्यः कामेश्वरीपदात्ततः॥
बाणेभ्यो नमः इत्येतान् दक्षिणाधःकरे निजे।
देव्याः प्रविन्यसेद्बाणान् पौष्पानिति च साधकः॥
द्रादियादीनि भूयोऽपि मुखवृत्तं सविन्दुकम्।
स्याद्वशीकरणायेति कामेश्वरपदं ततः॥
पाशाय नम इत्येवं वामोर्ध्वे विन्यसेत्करे।
यादिद्रादीनि गगनं वह्निवामाक्षिविन्दुमत्॥

स्याद्वशीकरणायेति ततः कामेश्वरीति च।
पाशाय नम इत्येवं वामोर्ध्वे विन्यसेत्करे ॥
द्रादियादीनि क्रों सर्वस्तम्भनाय पदं ततः।
कामेश्वरपदात्पश्चादङ्कुशाय नमो लिखेत् ॥
दक्षिणोर्ध्वकरे शैवं विन्यसेदङ्कुशं ततः।
यादिद्रादीनि क्रों सर्वस्तम्भनाय ततः परम् ॥
कामेश्वरीपदादूर्ध्वमङ्कुशाय नमो लिखेत्।
दक्षिणोर्ध्वकरे देव्या विन्यसेदङ्कुशं ततः ॥

ततो मूलेन व्यापकं नवमुद्राः प्रदर्शयेत्। तद्यथा—द्रां सर्वसंक्षोभिणीं द्रीं सर्वद्राविणीं क्लीं आकर्षिणीं ब्लूं सर्ववशिनीं सः सर्वोन्मादिनीं क्रों महाङ्कुशां ह स ख फ्रें खेचरीं ह्सौः बीजमुद्राम् ऐं योगिनीमुद्राम्।

न्यासकालस्तु योगिनीहृदये—

प्रातःकालेऽथवा 'पूजासमये होमकर्मणि।
जपकालेऽपि वा तेषां विनियोगः पृथक्पृथक्।
पूजाकाले समस्तं वा कुर्यात्साधकसत्तमः ॥

आयुधन्यास—

द्रां द्रीं क्लीं ब्लूं सः यां रां लां वां शां धं सम्मोहनाय कामेश्वरधनुषे नमः।
द्रां द्रीं क्लीं ब्लूं सः यां रां लां वां शा ध्रं सम्मोहनाय कामेश्वरीधनुषे नमः।
ये दोनों के निचले बाँयें हाथों में हैं।
द्रां द्रीं क्लीं ब्लूं सः यां रां लां वां शां जं जम्भनेभ्यः कामेश्वरवाणेभ्यो नमः।
द्रां द्रीं क्लीं ब्लूं सः यां रां लां वां शां जं जम्भनेभ्यः कामेश्वरीवाणेभ्यो नमः।
ये दोनों के निचले दाँयें हाथों में हैं।
द्रां द्रीं क्लीं ब्लूं सः यां रां लां वां शां आं वशीकरणाय कमेश्वरपाशाय नमः।
द्रां द्रीं क्लीं ब्लूं सः यां रां लां वां शां ह्रीं वशीकरणाय कामेश्वरीपाशाय नमः।
ये दोनों ऊपरी बाँयें हाथों में हैं।
द्रां द्रीं क्लीं ब्लूं सः यां रां लां वां शां क्रों सर्वस्तम्भनाय कामेश्वरांकुशाय नमः।
द्रां द्रीं क्लीं ब्लूं सः यां रां लां वां शां क्रों सर्वस्तम्भनाय कामेश्वर्यंकुशाय नमः।
ये दोनों ऊपरी दाँयें हाथों में हैं।

इसके बाद वक्ष्यमाण क्रम से कामकला का ध्यान करके न्यास करे। ज्ञानार्णव के अनुसार कामकलारूप देवतामय आत्मा है। इस प्रकार से शरीर का चिन्तन करके शिव का आयुध न्यास करे। और भी कथन है कि द्रां द्रीं क्लीं ब्लूं सः कामदेव के वाण हैं।

यां रां लां वां शां कामेश्वरी के वाणपञ्चक हैं। आयुधन्यास में उपर्युक्त मन्त्रों का उद्धार इस प्रकार बतलाया गया है। इस न्यास के बाद मूल मन्त्र से व्यापक न्यास करे। नव मुद्रा दिखावे। नव मुद्रायें और उनके मन्त्र इस प्रकार हैं—

द्रां सर्वसंक्षोभिणीमुद्रायै नमः। द्रीं सर्वद्राविणीमुद्रायै नमः। क्लीं आकर्षिणीमुद्रायै नमः। ब्लूं सर्ववशिनीमुद्रायै नमः। सः सर्वोन्मादिनीमुद्रायै नमः। क्रों महांकुशामुद्रायै नमः। हसखफ्रें खेचरीमुद्रायै नमः। ह्सौः बीजमुद्रायै नमः। ऐं योनिमुद्रायै नमः।

न्यास करने का समय योगिनीहृदय के अनुसार इस प्रकार है—प्रातःकाल में अथवा पूजा के समय, हवन के समय, जप के समय इनका विनियोग करे। विनियोग अलग-अलग करे या एक ही साथ सभी का करे।

ततो ध्यानम्—

ततः पद्मनिभां देवीं बालार्ककिरणोज्ज्वलाम् ।
जवाकुसुमसङ्काशां दाडिमीकुसुमोपमाम् ॥
पद्मरागप्रतीकाशां कुङ्कुमारुणसन्निभाम् ।
स्फुरन्मुकुटमाणिक्यकिङ्किणीजालमण्डिताम् ॥
कालालिकुलसङ्काशकुटिलालकपल्लवाम् ।
प्रत्यग्रारुणसङ्काशवदनाम्भोजमण्डलाम् ॥
किञ्चिदर्द्धेन्दुकुटिलललाटमृदुपट्टिकाम् ।
पिनाकिधनुराकारभ्रूलतां परमेश्वरीम् ॥
आनन्दमुदितोल्लासलीलान्दोलितलोचनाम् ।
स्फुरन्मयूखसङ्काशविलसद्धेमकुण्डलाम् ॥
सुगण्डमण्डलाभोगजितेन्द्वन्मृतमण्डलाम् ।
विश्वकर्मविनिर्माणसूत्रसुस्पष्टनासिकाम् ॥
ताम्रविद्रुमविम्बाभरक्तोष्ठीममृतोपमाम् ।
स्मितमाधुर्यविजितमाधुर्यरससागराम् ॥
अनौपम्यगुणोपेतचिबुकोद्देशशोभिताम् ।
कम्बुग्रीवां महादेवीं मृणाललतितैर्भुजैः ॥
रक्तोत्पलदलाकारसुकुमारकराम्बुजाम् ।
रक्ताम्बुजनखज्योतिर्वितानितनभस्तलाम् ॥
मुक्ताहारलतोपेतसमुन्नतपयोधराम् ।
त्रिवलीवलयायुक्तमध्यदेशसुशोभिताम् ॥
लावण्यसरिदावर्ताकारनाभिविभूषिताम् ।

अनर्घरत्नघटिकाकाञ्चीयुतनितम्बिनीम् ॥
नितम्बविम्बद्विरदरोमराजिवराङ्कुशाम् ।
कदलीललितस्तम्भसुकुमारोरुमीश्वरीम् ॥
लावण्यकुसुमाकारजानुमण्डलबन्धुराम् ।
लावण्यकदलीतुल्यजङ्घायुगलमण्डिताम् ॥
गूढगुल्फपदद्वन्द्वप्रपदाजितकच्छपाम् ।
तनुदीर्घाङ्गुलिस्वच्छनखराजिविराजिताम् ॥
ब्रह्मविष्णुशिरोरत्ननिघृष्टचरणाम्बुजाम् ।
शीतांशुशतसङ्काशकान्तिसन्तानहासिनीम् ॥
लौहित्याजितसिन्दूरजवदाडिमरूपिणीम् ।
रक्तवस्त्रपरीधानां पाशाङ्कुशकरोद्यताम् ॥
रक्तपद्मनिविष्टान्तु रक्ताभरणभूषिताम् ।
चतुर्भुजां त्रिनेत्रान्तु पञ्चबाणधनुर्धराम् ॥
कर्पूरशकलोन्मिश्रताम्बूलपूरिताननाम् ।
महामृगमदोद्दामकुङ्कुमारुणविग्रहाम् ॥
सर्वश्रृङ्गारवेशाढ्यां सर्वाभरणभूषिताम् ।
जगदाह्लादजननीं जगद्रञ्जनकारिणीम् ॥
जगदाकर्षणकरीं जगत्कारणरूपिणीम् ।
सर्वमन्त्रमयीं देवीं सर्वसौभाग्यसुन्दरीम् ।
सर्वलक्ष्मीमयीं नित्यां सर्वशक्तिमयीं शिवाम् ॥

एवं रूपमात्मानं ध्यात्वा मानसैः सम्पूजयेत्। तद्यथा—हृत्पद्ममध्ये देवीं विभाव्य, कुण्डलीपात्रसंस्थेन सहस्रारामृतेन पाद्यं देव्याश्चरणे दद्यात्। ततो मनश्चार्घ्यं दत्त्वा सहस्रदलपद्मभृङ्गारगलितपरमामृतजलेनाचमनीयं मुखे। चतुर्विंशतितत्त्वेन गन्धञ्च। अहिंसां विज्ञानं क्षमां दयाञ्च अलोभम् अमोहम् अमात्सर्यम् अमायाम् अनहङ्कारम् अरागमद्वेषम् इन्द्रियाणि च दशैतानि पुष्पाणि प्रदापयेत्। ततो वायुरूपं धूपं तेजोरूपञ्च दीपं दद्यात्। अम्बरं चामरं सूर्यं दर्पणं चन्द्रं छत्रं पद्मन्तु मेखलाम् आनन्दं हारमुत्तमम्। अनाहतध्वनिमयीं घण्टां निवेदयेत्। ततः सुधारसाम्बुधिं मांसपर्वतं ब्रह्माण्डपूरितपायसञ्च दत्त्वा,

मनोनर्तकसत्तालैः श्रृङ्गारादिरसोद्भवैः ।
नृत्यैर्गीतैश्च वाद्यैश्च तोषयेत् परमेश्वरीम् ।

एवं सम्पूज्याभेदेन जपः कार्यः। ततो बहिःपूजामारभेत् ततोऽर्घ्यस्थापनम्।

प्रथमं सामान्यार्घ्यम्; तत्र क्रमः—आदौ स्ववामे जलेन चतुरस्त्रं विधाय तदन्तर्वृत्तमालिखेत्। ततः ॐ मण्डलाय नमः इति पुष्पैस्तदभ्यर्च्य, तत्र साधारं पात्रं संस्थाप्य बालया तमभ्यर्च्य शुद्धजलेन तमापूर्य, ऐं सर्वज्ञाशक्तिश्रीमत्त्रि-पुरसुन्दरीहृदयाय नमः इत्यादिक्रमेण षडङ्गानि सम्पूज्य, तदुपरि मूलमष्टधा जप्त्वा विशेषार्घ्यस्थापनं कुर्यात्। तत्पात्रन्तु तन्त्रान्तरे—

पात्रं काञ्चनकाचरूप्यजनितं मुक्ताकपालोद्भवं
विश्वामित्रमयञ्च कामदमिदं हैमं प्रियं स्फाटिकम्।
ताम्रं प्रीतिदमिष्टसिद्धिजनकं श्रीनारिकेलोद्भवं
कापालं स्फुटमन्त्रसिद्धिजनकं मुक्तिप्रदं मौक्तिकम्॥

नवरत्नेश्वरे—

नरपात्रं महेशानि विज्ञेयञ्चोत्तमोत्तमम्।
नारिकेलोद्भवं पात्रं ज्ञेयञ्चोत्तमकल्पकम्॥
रत्नपात्रञ्च सुश्रोणि ज्ञेयञ्चोत्तममध्यमम्।
मध्यमोत्तमगं बैल्वं ब्रह्मवृक्षजमेव च।
कल्पं सुमध्यमं प्रोक्तं मृण्मयं कल्पमध्यमम्॥
वश्याकर्षणकर्माणि हेमपात्रे सुशोभने।
शान्तिके पौष्टिके वापि राजतं कारयेत् प्रिये॥
लौहपात्रं विजानीयान्मारणोच्चाटने तथा।
स्तम्भकार्येषु पाषाणं विद्वेषे लौहमृण्मयम्॥
सर्वकार्येषु कर्त्तव्यं विश्वामित्रञ्च सुव्रते।
कुलोत्सादनकार्येषु काचपात्रं विशिष्यते॥
काष्ठपात्रं विजानीयान्मन्त्राराधनकर्मणि।
नरपात्रस्तु गृह्णीयाद्भुक्तिमुक्तिप्रदायकम्॥
दृष्ट्वार्घ्यपात्रं देवेशि ब्रह्माद्या देवताः सदा।
नृत्यन्ति सर्वयोगिन्यः प्रीताः सिद्धिं ददत्यपि॥

पूर्वोक्त न्यास करने के पश्चात् इस प्रकार ध्यान करे—देवी उदीयमान सूर्यकिरणों के समान, रक्तकमल के समान, अड़हुल के फूल के समान, अनार के फूल के समान, पद्मराग के समान, कुंकुम के समान लाल वर्ण की हैं। माथे पर माणिक्य का मुकुट है। किंकिणी-जाल से मण्डित हैं। काले भ्रमरों के समूह के समान केश कुञ्चित हैं। मुख-मण्डल प्रत्यग् अरुण के समान है। ललाट में अर्द्धचन्द्र है, जो कोमल पट्टी से बँधा है। भवें पिनाक धनुष के आकार की हैं। आँखें आनन्दमुदित उल्लासलीला से चञ्चल हैं।

विमल मयूख के समान शुद्ध सोने के कुण्डल हैं, जो सुन्दर कपोल के अमृत का भोग कर रहे हैं, जो विश्वकर्मा द्वारा निर्मित हैं। सुन्दर नासिका है। ताम्बे और मूँगे के समान लाल ओठ अमृतोपम हैं। अधरों पर मुस्कान माधुर्य रससागर को भी लजा रहा है। उनका चिबुक देश अनुपम सुन्दर है। उनका कण्ठ शंख के आकार का है। भुजायें मृणाल के समान हैं। करकमल रक्तोत्पलदलाकार कोमल है। नखज्योति लाल कमल के समान है। करतल उससे वितानित सुन्दर हो रहा है। समुन्नत पयोधर मोतियों के हार से सुशोभित है। कटि त्रिवली से युक्त सुन्दर है। नाभि लावण्य सरिता के आवर्तन के समान सुन्दर है। शुद्ध रत्नों से जड़ा कांची रेशमी साड़ी से नितम्ब शोभायमान है। नितम्बविम्ब द्विरद रोमराजीव वरांकुश के समान है। ईश्वरी के जाँघ केले के खम्भे के आकार वाले कोमल ललित हैं। घुटने लावण्य कुसुमाकार हैं, जो सुन्दर केले के समान जंघायुगल से मण्डित हैं। गूढ़ गुल्फ कछुये के आकार के हैं। लम्बी अंगुलियों में नख स्वच्छ है। चरणकमल ब्रह्मा, विष्णु के शिरोरत्न से निघृष्ट है। सैकड़ों चन्द्र के किरणों की कान्ति के समान मुस्कान है।

सिन्दूर और अनारदाने के समान वर्ण लाल है। वस्त्र लाल हैं। हाथों में पाश-अंकुश है। लाल कमल के समान आभूषणों से विभूषित हैं। चार भुजायें हैं। तीन नेत्र हैं। पाँच वाण और धनुष हाथों में हैं। कर्पूरादि से युक्त ताम्बूल से मुख पूर्ण है। महामृगमदोद्दाम कुंकुम के समान अरुण श्रीविग्रह है। सभी शृङ्गारों से युक्त उनका वेश सभी आभरणों से विभूषित है। वे संसार को आह्लादित करने वाली और संसार को आनन्दित करने वाली हैं। संसार का आकर्षण करने वाली और जगत् की कारणस्वरूपा हैं। देवी सर्वमन्त्रमयी और सर्वसौभाग्यसुन्दरी हैं। सभी लक्ष्मीमयी नित्या सर्वशक्तिमयी शिवा हैं। इसी रूप को अपने में भावित करके मानसोपचारों से पूजन करे। जैसे—

हृदयकमल में देवी को विराजमान मानकर कुण्डलिनी पात्र में सहस्रार के अमृत से देवी के चरणों में पाद्य समर्पण करे। मानसिक अर्घ्य प्रदान करे। सहस्रदल पद्म से भृङ्गों द्वारा प्राप्त परमामृत जल से आचमनीय प्रदान करे। चौबीस तत्त्वों से प्राप्त गन्ध प्रदान करे। अहिंसा, विज्ञान, क्षमा, दया, अलोभ, अमोह, अमात्सर्य, अमाया, अनहंकार, अराग, अद्वेष दशों इन्द्रियों को पुष्प के रूप से समर्पित करे। इसके बाद वाय्वात्मक धूप और वह्न्यात्मक दीपक प्रदान करे। आकाश का चामर, सूर्य का दर्पण, चन्द्रमा का छत्र, कमल की मेखला, आनन्द का उत्तम हार प्रदान करे। अनाहत ध्वनिमयी घंटी बजाये। सुधासागर का मांसपर्वत, ब्रह्माण्डपूरित पायस नैवेद्य में समर्पित करे। तब मननर्तक का ताल शृंगारादि रसोद्भूत नृत्य-गीत-वाद्य से परमेश्वरी को सन्तुष्ट करे। इस प्रकार से पूजा करके जप करे। तब बाह्य पूजन प्रारम्भ करे। सबसे पहले अर्घ्य स्थापित करे।

सामान्यार्घ्य—अपने बाँयें भाग में जल से चतुरस्र बनाकर उसमें वृत्त बनावे। तब

मण्डलाय नम: से फूलों द्वारा उस मण्डल की पूजा करे। तब आधार स्थापित करके उस पर पात्र रक्खे। पात्र का ऐं क्लीं सौ: से अर्चन करे। तब उसे शुद्ध जल से पूर्ण करे। तब ऐं सर्वज्ञाशक्तिश्रीमत्त्रिपुरसुन्दरीहृदयाय नम:। ऐं सर्वज्ञाशक्तिश्रीमत्त्रिपुरसुन्दरी शिरसे स्वाहा। ऐं सर्वज्ञाशक्तिश्रीमत्त्रिपुरसुन्दरी शिखायै वषट्। ऐं सर्वज्ञाशक्तिश्रीमत्त्रिपुरसुन्दरी कवचाय हुं। ऐं सर्वज्ञाशक्तिश्रीमत्त्रिपुरसुन्दरी नेत्रत्रयाय वौषट्। ऐं सर्वज्ञाशक्तिश्रीमत्त्रिपुरसुन्दरी अस्त्राय फट् से षडंग पूजन करे। उसके ऊपर मूल मन्त्र का आठ बार जप करके विशेषार्घ्य स्थापन करे।

विशेषार्घ्य-पात्र के सम्बन्ध में तन्त्रों में मतान्तर है। पात्र सोना, काँच, चाँदी का या मुक्ताकपालोद्भूत विश्वामित्रमय कामद हेमंप्रिय या स्फटिक का प्रशस्त होता है। ताम्बा का पात्र प्रीतिदायक एवं इष्टसिद्धिप्रद होता है। नारियल और कपालपात्र स्फुट मन्त्रों का सिद्धिदायक होता है। मोती का पात्र मोक्षप्रद होता है। नवरत्नेश्वर के अनुसार शिवजी कहते हैं कि हे महेशि! नरकपाल उत्तमोत्तम होता है। नारियलपात्र उत्तम होता है। रत्नपात्र उत्तम-मध्यम होते हैं। वेल और पलाश के पात्र मध्यमोत्तम होते हैं। मिट्टी के पात्रकल्प मध्यम होते हैं। वश्य-आकर्षण के लिये स्वर्णपात्र प्रशस्त है। शान्तिक-पौष्टिक कार्य में चाँदी का पात्र बनाना चाहिये। मारण-उच्चाटन में लौहपात्र ग्राह्य है। स्तम्भनकार्य में पत्थर का पात्र ग्राह्य है। विद्वेषण में लौह और मिट्टी का पात्र लेना चाहिये। विश्व के कल्याण के लिये सभी कार्य करना चाहिये। कुलोत्सादन कार्य में काँचपात्र विशिष्ट होता है। मन्त्राराधन में काष्ठपात्र ग्रहण करना चाहिये। नरकपाल भोग-मोक्षप्रदायक है। अर्घ्यपात्र को देखकर ब्रह्मादि देवता नाचने लगते हैं। सभी योगियों को ये प्रिय हैं। ये सिद्धिप्रदायक हैं।

सामान्यविशेषार्घ्ययोरावश्यकत्वमाह नवरत्नेश्वरे—

एकपात्रं न कुर्वीत यदि साक्षान्महेश्वरः ।
मन्त्राः पराङ्मुखा यान्ति आपदश्च पदे पदे ।
इहलोके दरिद्रः स्यान्मृते च पशुतां व्रजेत् ।

तत आत्मश्रीचक्रयोर्मध्ये सामान्यार्घ्यजलेन त्रिकोणवृत्तषट्कोणचतुरस्रमण्डलं कृत्वा, त्रिकोणमध्ये मूलविद्यया मध्यं सम्पूज्य, त्रिकोणे प्रत्येककूटैः पूजयेत्। अग्न्यादिकोणक्रमेण षट्कोणे मूलविद्यया द्विरावृत्त्या षडङ्गानि पूजयेत्। तत्र त्रिपदिकां संस्थाप्य, ऐं ह्रीं श्रीं मं वह्निमण्डलाय दशकलात्मने अर्घ्यपात्राधाराय नमः इत्याधारं सम्पूज्य, तत्र वृत्ताकारेण वह्नेर्दशकलाः पूजयेत्। तद्यथा—

ऐं ह्रीं श्रीं यं धूम्रायै नमः। एवं ३ रं नीलायै। ३ लं कपिलायै। ३ वं विस्फुलिङ्गिन्यै। ३ शं ज्वालिन्यै। ३ यं हैमवत्यै। ३ सं हव्यवाहिन्यै। ३ हं कव्यवाहिन्यै। ३ लं रात्र्यै। ३ क्षं सङ्कर्षिण्यै। इति सम्पूज्य तदुपरि अस्त्रान्तं मूल-

मुच्चार्य प्रक्षालितमर्घ्यपात्रं संस्थाप्य, पूर्ववत्तत्र मन्त्रमालिख्य, सम्पूज्य, ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं अं सूर्यमण्डलाय द्वादशकलात्मने अर्घ्यपात्राय नमः इति सम्पूज्य वृत्ताकारेण सूर्यस्य द्वादशकलाः पूजयेत्। यथा—

ऐं ह्रीं श्रीं कं भं तपिन्यै नमः। एवं ३ खं बं तापिन्यै। ३ गं फं धूम्रायै। ३ घं पं विबुधायै। ३ ङं नं बोधिन्यै। ३ चं थं कलिन्यै। ३ छं दं शोषिण्यै। ३ जं थं वरेण्यायै। ३ झं तं आकर्षिण्यै। ३ ञं णं मायायै। ३ टं ढं विवस्वत्यै। ३ ठं डं हेमप्रभायै। नमः सर्वत्र। इति सम्पूज्य, मूलेन जलादिनापूर्य, पूर्ववद्यन्त्रमालिख्य, त्रिकोणे अकथादित्रिरेखां मध्ये हलक्षाणि च चिन्तयेत्। ततः पूर्ववत् सम्पूज्य, सौः ऐं ह्रीं श्रीं उं सोममण्डलाय षोडशकलात्मने अर्घ्यपात्रामृताय नमः इति सम्पूज्य, सोमस्य षोडशकलां वृत्ताकारेण पूजयेत्। यथा—

ऐं ह्रीं श्रीं अं अमृतायै नमः। एवं ३ आं मदनायै। ३ इं तुष्ट्यै। ३ ईं पुष्ट्यै। ३ उं प्रीत्यै। ३ ऊं रत्यै। ३ ऋं श्रियै। ॠं क्रियायै। ३ ऌं सुधायै। ३ ॡं रात्र्यै। ३ एं ज्योत्स्नायै। ३ ऐं हैमवत्यै। ३ ओं छायायै। ३ औं पूर्णिमायै। ३ अं विद्यायै। ३ अः अमावस्यायै। नमः सर्वत्र। इति सम्पूज्य तीर्थमावाह्य मध्ये हंसात्मने नमः। ततो ह स क्ष म ल व र यूं आनन्दभैरवाय वषट्। ह स क्ष म ल व र यीं सुधादेव्यै वषट्। इति सम्पूज्य, मत्स्यमुद्रया तज्जलमाच्छाद्य मूलविद्यामष्टधा जप्त्वा, धूपदीपौ दत्त्वा, नवमुद्राः प्रदर्श्य, ब्रह्ममयं तज्जलं किञ्चित् पात्रान्तरे प्रक्षिप्य, मूलेनात्मानं पूजाद्रव्याणि च सम्प्रोक्ष्य, सर्वं ब्रह्ममयं कुर्यात्। पूजासमाप्तिर्यावत् स्यात् तावदर्घ्यं न चालयेत्।

समयाङ्के—सुन्दरीदेवताया अङ्गदेवतापूजनन्त्वर्घ्यस्थापनानन्तरम्। तथा च—

आत्मानं यागवस्तूनि प्रोक्षयित्वा यथाक्रमम् ।
चिन्मयं तत् सदा भक्त्या चिन्तयेन्मन्त्रवित्तमः ॥
तस्माच्चक्रचतुर्दिशिक्रमवशान्निर्माय चक्रं शुभं
सूर्यं हस्तिमुखं परं स्मरहरं गोपालमेवं तथा ।
ध्यात्वावाह्य च तांस्ततो बहुविधैः पुष्पैश्च पाद्यादिभि-
र्नानाद्रव्यसुगन्धिमोदकफलैरुद्वासयेत् स्वे हृदि ॥

ततो महाचक्रे ऐं ह्रीं श्रीं अमृताम्भोनिधये नमः। एवं ३ रत्नद्वीपाय। ३ नानावृक्षमहोद्यानाय। ३ सन्तानवाटिकायै। ३ कल्पवृक्षवाटिकायै। ३ हरिचन्दनवाटिकायै। ३ मन्दारवाटिकायै। ३ पारिजातवाटिकायै। ३ कदम्बवनवाटिकायै। ३ पुष्परागरत्नप्राकाराय। ३ पद्मरागरत्नप्राकाराय। ३ गोमेदरत्नप्राकाराय। ३ इन्द्रनीलरत्नप्राकाराय। ३ वज्ररत्नप्राकाराय। ३ वैदूर्यरत्नप्राकाराय। ३ मुक्तारत्नप्राकाराय।

३ विद्रुमरत्नप्राकाराय। ३ माणिक्यरत्नप्राकाराय। ३ माणिक्यमण्डपाय। ३ सहस्र-स्तम्भमण्डपाय। ३ अमृतवापिकायै। ३ आनन्दवापिकायै। ३ विमर्षवापिकायै। ३ बालातपोद्धाराय। ३ चन्द्रिकोदराय। ३ महाशृङ्गारपरिखायै। ३ महापद्माटव्यै। ३ चिन्तामणिगृहराजाय। ३ पूर्वाम्नायपूर्वद्वाराय। ३ दक्षिणाम्नायदक्षिणद्वाराय। ३ पश्चिमाम्नायपश्चिमद्वाराय। ३ उत्तराम्नायोत्तरद्वाराय। ३ रत्नद्वीपवलयाय। ३ महा-सिंहासनाय। ३ ब्रह्ममयैकमञ्चपादाय। ३ विष्णुमयैकमञ्चपादाय। ३ रुद्रमयैकमञ्च-पादाय। ३ ईश्वरमयैकमञ्चपादाय। ३ सदाशिवमयैकमञ्चफलकाय। ३ हंसतूल-तनिनाय। ३ हंसतूलमहोपधानाय। ३ कौसुम्भास्तरणाय। ३ महावितानिकायै। ३ महायमनिकायै। सर्वत्र नमोऽन्तेन पूजयेत्। तदुपरि ऐं ह्रीं श्रीं ह्सौः सदाशिव-महाप्रेतपद्मासनाय नमः।

ततः पूर्ववद्ध्यात्वा, त्रिखण्डां मुद्रां कृत्वा तदुपरि शिखरे मातृकायन्त्रे समानीय ऐं ह्रीं श्रीं सौः त्रिपुरसुन्दरीमूर्त्तिं कल्पयामीति विन्दौ कल्पितमूर्त्तावावाहयेत्। ह्स्रैं हसक्लीं ह्स्रौं इत्युच्चार्य,

ॐ महापद्मवनान्तःस्थे कारणानन्दविग्रहे ।
सर्वभूतहिते मातरेह्येहि परमेश्वरि ।।

इति वैन्दवचक्रे परिचितिमावाह्यावाहनादिप्राणप्रतिष्ठान्तं कर्म विधाय वाणकोदण्डपाशाङ्कुशादि मुद्राः प्रदर्शयेत्। ततो यथोपचारैः सम्पूज्य त्रिधा सन्तर्पयेत्।

तत्रायं क्रमः--सव्यहस्तानामिकांगुष्ठनखाग्रेण धृतश्रीपात्राम्भसा अन्यहस्त-क्षिप्तपुष्पाक्षतैः श्रीमहात्रिपुरसुन्दरीं तर्पयामीति त्रिस्तर्पयेत्। तदुक्तं स्वतन्त्रे—

अंगुष्ठानामिकायोगाद्वामहस्तस्य पार्वति ।
तर्पयेत् सुन्दरीं देवीं समुद्राञ्च सवाहनाम् ।।
तर्पयामि मुखे देव्यास्त्रिवारं मूलविद्यया ।
अंगुष्ठानामिकायोगान्नखैर्निर्दिष्टमुद्धृतम् ।।
श्रीपात्रस्योदकं विन्दुं तर्पयेत् कुलनायिकाम् ।
अंगुष्ठो भैरवो देवि अनामा चण्डिका प्रिये ।
सव्येन हस्तयोगेन तर्पयेद्वा कुलेश्वरीम् ।।

विशेषस्तु—

अंगुष्ठानामिकाभ्यान्तु वश्यकर्मणि तर्पयेत् ।
अङ्गुष्ठमध्यमाभ्यान्तु तर्पयेच्छान्तिकर्मणि ।।
तर्जन्यङ्गुष्ठयोगेन तर्पयेदभिचारके ।
कनिष्ठाङ्गुष्ठयोगेन स्तम्भने तर्पयेत् प्रिये ।।

नवरत्नेश्वर के अनुसार सामान्यार्घ्य और विशेषार्घ्य पात्रों की आवश्यकता— यदि साक्षात् महेश्वर भी हों तो एक पात्र से पूजा न करे। इससे मन्त्र पराङ्मुख हो जाते हैं और पग-पग पर विपदायें आती हैं। इस लोक में दरिद्रता होती है और मरने पर नरक मिलता है। अत: अपने और श्रीचक्र के बीच में सामान्यार्घ्य जल से त्रिकोण, वृत्त, षट्-कोण, चतुरस्र मण्डल बनाकर त्रिकोण मध्य बिन्दु में मूल विद्या से पूजा करे। त्रिकोण के कोणों में मन्त्र के एक-एक कूट से पूजा करे। षट्कोण में अग्न्यादिक्रम से मूल विद्या की दो आवृत्ति से षडंग पूजा करे। उस मण्डल पर त्रिपदिका स्थापित करके ऐं ह्रीं श्रीं मं वह्निमण्डलाय दशकलात्मने अर्घ्यपात्राधाराय नम: से आधार की पूजा करे। तब वृत्ताकार में अग्नि की दश कलाओं का पूजन करे। जैसे—

ऐं ह्रीं श्रीं यं धूम्रायै नम:। ऐं ह्रीं श्रीं रं नीलायै नम:। ऐं ह्रीं श्रीं लं कपिलायै नम:। ऐं ह्रीं श्रीं वं विस्फुलिंगिन्यै नम:। ऐं ह्रीं श्रीं शं ज्वालिन्यै नम:। ऐं ह्रीं श्रीं यं हैमवत्यै नम:। ऐं ह्रीं श्रीं सं हव्यवाहिन्यै नम:। ऐं ह्रीं श्रीं हं कव्यवाहिन्यै नम:। ऐं ह्रीं श्रीं लं रात्र्यै नम:। ऐं ह्रीं श्रीं क्षं संकर्षिण्यै नम:। इस प्रकार पूजा करके उसके ऊपर कएईलह्रीं हसकहलह्रीं सकलह्रीं फट् से प्रक्षालित अर्घ्यपात्र स्थापित करे। पूर्ववत् मन्त्र लिखकर पूजा करे। इसके बाद ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं अं सूर्यमण्डलाय द्वादशकलात्मने अर्घ्यपात्राय नम: से पूजा कर वृत्ताकार में सूर्य की बारह कलाओं का निम्नवत् पूजन करे—

ऐं ह्रीं श्रीं कं भं तपिन्यै नम:।
ऐं ह्रीं श्रीं खं बं तापिन्यै नम:।
ऐं ह्रीं श्रीं गं फं धूम्रायै नम:।
ऐं ह्रीं श्रीं धं पं विबुधायै नम:।
ऐं ह्रीं श्रीं ङं नं बोधिन्यै नम:।
ऐं ह्रीं श्रीं चं धं कलिन्यै नम:।
ऐं ह्रीं श्रीं छं दं शोषिण्यै नम:।
ऐं ह्रीं श्रीं जं थं वरेण्यायै नम:।
ऐं ह्रीं श्रीं झं तं आकर्षिण्यै नम:।
ऐं ह्रीं श्रीं ञं णं मायायै नम:।
ऐं ह्रीं श्रीं टं ढं विवस्वत्यै नम:।
ऐं ह्रीं श्रीं ठं डं हेमप्रभायै नम:।

इस प्रकार पात्र का पूजन करके उसे जल से पूर्ण करे।

सोमकलापूजन—पूर्ववत् त्रिकोण, वृत्त, षट्कोण, चतुरस्र बनाकर त्रिकोण में अकथादि तीन रेखाओं के मध्य में हलक्ष का चिन्तन करे। पूर्ववत् उनकी पूजा करे। तब सौ: ऐं ह्रीं श्रीं उं सोममण्डलाय षोडशकलात्मने अर्घ्यपात्रामृताय नम: से अर्घ्यपात्र का पूजन करे। इसके बाद सोलह सोमकलाओं का पूजन वृत्ताकार में निम्नवत् करे—

ऐं ह्रीं श्रीं अं अमृतायै नम:।
ऐं ह्रीं श्रीं आं मदनायै नम:।
ऐं ह्रीं श्रीं इं तुष्ट्यै नम:।
ऐं ह्रीं श्रीं ईं पुष्ट्यै नम:।
ऐं ह्रीं श्रीं उं प्रीत्यै नम:।
ऐं ह्रीं श्रीं ऊं रत्यै नम:।
ऐं ह्रीं श्रीं ऋं श्रियै नम:।
ऐं ह्रीं श्रीं ॠं क्रियायै नम:।
ऐं ह्रीं श्रीं ऌं सुधायै नम:।
ऐं ह्रीं श्रीं ॡं रात्र्यै नम:।
ऐं ह्रीं श्रीं एं ज्योत्स्नायै नम:।
ऐं ह्रीं श्रीं ऐं हैमवत्यै नम:।

ऐं ह्रीं श्रीं ओं छायायै नमः। ऐं ह्रीं श्रीं अं विद्यायै नमः।
ऐं ह्रीं श्रीं औं पूर्णिमायै नमः। ऐं ह्रीं श्रीं अः अमावस्यायै नमः।

तब जल में तीर्थों का आवाहन करके मध्य में हंसात्मने नमः कहकर हसक्षमलवरयूं आनन्दभैरवाय वषट्। हसक्षमलवरयीं सुधादेव्यै वषट् से पूजन करे। पूजन के बाद जल को मत्स्यमुद्रा से आच्छादित करे। मूल विद्या का जप आठ बार करे। धूप- दीप प्रदान करे। तब मुद्रा दिखावे। ब्रह्ममय उस जल में से कुछ जल दूसरे पात्र में लेकर मूल मन्त्र से अपने शरीर का, पूजन सामग्रियों का प्रोक्षण करके ब्रह्ममय बना दे। जब तक पूजा समाप्त न हो तब तक इस अर्घ्य जल को हिलावे-डुलावे नहीं।

'समयांक' में वर्णन है कि अर्घ्यस्थापन के बाद सुन्दरी के अंगदेवताओं का पूजन करे। अपना और यागवस्तुओं का प्रोक्षण यथाक्रम करके मन्त्रज्ञ भक्तिपूर्वक उसका चिन्मय के रूप में चिन्तन करे। चक्र की चारो दिशाओं में सूर्य-गणेश-कामदेव-गोपाल का ध्यान-आवाहन करके उनका पूजन विविध पुष्पों, पाद्यादि, नाना द्रव्य, सुगन्धि, मोदक, फल से करके अपने हृदय में विसर्जन करे। इसके बाद महाचक्र में इनका पूजन करे। यथा—

ऐं ह्रीं श्रीं अमृताम्भोनिधये नमः।
ऐं ह्रीं श्रीं रत्नद्वीपाय नमः।
ऐं ह्रीं श्रीं नानावृक्षमहोद्यानाय नमः।
ऐं ह्रीं श्रीं सन्तानवाटिकायै नमः।
ऐं ह्रीं श्रीं कल्पवृक्षवाटिकायै नमः।
ऐं ह्रीं श्रीं हरिचन्दनवाटिकायै नमः।
ऐं ह्रीं श्रीं मन्दारवाटिकायै नमः।
ऐं ह्रीं श्रीं पारिजातवाटिकायै मनः।
ऐं ह्रीं श्रीं कदम्बवनवाटिकायै नमः।
ऐं ह्रीं श्रीं पुष्परागरत्नप्राकाराय नमः।
ऐं ह्रीं श्रीं पद्मरागरत्नप्राकाराय नमः।
ऐं ह्रीं श्रीं गोमेदरत्नप्राकाराय नमः।
ऐं ह्रीं श्रीं इन्द्रनीलरत्नप्राकाराय नमः।
ऐं ह्रीं श्रीं वज्ररत्नप्राकाराय नमः।
ऐं ह्रीं श्रीं वैडूर्यरत्नप्राकाराय नमः।
ऐं ह्रीं श्रीं मुक्तारत्नप्राकाराय नमः।
ऐं ह्रीं श्रीं विद्रुमरत्नप्राकाराय नमः।
ऐं ह्रीं श्रीं माणिक्यरत्नप्राकाराय नमः।
ऐं ह्रीं श्रीं माणिक्यमण्डपाय नमः।
ऐं ह्रीं श्रीं सहस्रस्तम्भमण्डपाय नमः।
ऐं ह्रीं श्रीं अमृतवापिकायै नमः।
ऐं ह्रीं श्रीं आनन्दवापिकायै नमः।
ऐं ह्रीं श्रीं विमर्षवापिकायै नमः।
ऐं ह्रीं श्रीं बालातपोद्धाराय नमः।
ऐं ह्रीं श्रीं चन्द्रिकोदराय नमः।
ऐं ह्रीं श्रीं महाशृंगारपरिखायै नमः।
ऐं ह्रीं श्रीं महापद्माटव्यै नमः।
ऐं ह्रीं श्रीं चिन्तामणिगृहराजाय नमः।
ऐं ह्रीं श्रीं पूर्वाम्नायपूर्वद्वाराय नमः।
ऐं ह्रीं श्रीं दक्षिणाम्नायदक्षिणद्वाराय नमः।
ऐं ह्रीं श्रीं पश्चिमान्यायपश्चिमद्वाराय नमः ।
ऐं ह्रीं श्रीं उत्तराम्नायोत्तरद्वाराय नमः।
ऐं ह्रीं श्रीं रत्नद्वीपवलयाय नमः।
ऐं ह्रीं श्रीं महासिंहासनाय नमः।
ऐं ह्रीं श्रीं ब्रह्ममयैकमञ्चपादाय नमः।
ऐं ह्रीं श्रीं विष्णुमयैकमञ्चपादाय नमः।
ऐं ह्रीं श्रीं रुद्रमयैकमञ्चपादाय नमः।
ऐं ह्रीं श्रीं ईश्वरमयैकमञ्चपादाय नमः।

ऐं ह्रीं श्रीं सदाशिवमयैकमञ्चफलकाय नम:। ऐं ह्रीं श्रीं कौस्तुभास्तरणाय नम:।
ऐं ह्रीं श्रीं हंसतूलतनिनाय नम:। ऐं ह्रीं श्रीं महावितानिकायै नम:।
ऐं ह्रीं श्रीं हंसतूलमहोपधानाय नम:। ऐं ह्रीं श्रीं महायमनिकायै नम:।

इसके ऊपर ऐं ह्रीं श्रीं ह्सौ: सदाशिवमहाप्रेतपद्मासनाय नम: से पूजा करे।

इस बाद पूर्ववत् ध्यान करके त्रिखण्डा मुद्रा से मातृका यन्त्र को लाकर यन्त्र के मध्य बिन्दु में ऐं ह्रीं श्रीं सौ: त्रिपुरसुन्दरीमूर्त्तिं कल्पयामि से मूर्ति कल्पित करके उसमें आवाहन करे। हस्रैं हस्क्ल्रीं हस्रौं बोलकर यह श्लोकमन्त्र पढ़े—

ॐ महापद्मवनान्त:स्थे कारणानन्दविग्रहे।
सर्वभूतहिते मातरेह्येहि परमेश्वरि।।

तब वैन्दव चक्र में परिचिति का आवाहन करके प्राणप्रतिष्ठान्त कर्म करे। वाण, कोदण्ड, पाश, अंकुशमुद्रा दिखावे। तब यथोपचार से पूजन करके तीन बार तर्पण करे। इसका क्रम इस प्रकार का है—

बाँयें हाथ की अनामिका अङ्गुष्ठा के नखाग्र से श्रीजलपात्र लेकर जल छोड़े और दाँयें हाथ से पुष्पाक्षत से श्रीमहात्रिपुरसुन्दरीं तर्पयामि बोलते हुए तीन बार तर्पण करे। सुन्दरीं देवीं समुद्रां सवाहनां तर्पयामि कहकर देवीमुख में मूल विद्या से तीन बार तर्पण करे। श्रीपात्र के जल से बिन्दु में अंगुष्ठ-अनामिकायोग से कुलनायिकाओं का तर्पण करे। अंगूठा भैरवरूप है और अनामिका चण्डिकारूपा है। बाँयें हाथ का योग कर कुलेश्वरी का तर्पण करे।

विशेष—वश्य कर्म में अंगूठा-अनामिका से तर्पण करे। शान्ति कर्म में अंगूठे और मध्यमा से तर्पण करे। अभिचार कर्म में अंगूठा और तर्जनी के योग से तर्पण करे। स्तम्भन में अंगूठे और कनिष्ठा के योग से तर्पण करे।

ततोऽग्नीशासुरवायव्यमध्ये दिक्षु च देव्या देहे वा षडङ्गानि पूजयेत्। तद्यथा— ऐं सर्वज्ञाशक्तिश्रीमहात्रिपुरसुन्दरी हृदयाय नम:। क्लीं नित्यतृप्तिशक्तिश्रीमहा-त्रिपुरसुन्दरी शिरसे स्वाहा। सौः अनादिबोधशक्तिश्रीमहात्रिपुरसुन्दरी शिखायै वषट्। ऐं स्वतन्त्रशक्तिश्रीमहात्रिपुरसुन्दरी कवचाय हुं। क्लीं अलुप्तशक्तिश्रीमहा-त्रिपुरसुन्दरी नेत्रत्रयाय वौषट्। सौः अनन्तशक्तिश्रीमहात्रिपुरसुन्दरी अस्त्राय फट्। ततः स्वशरीरे कामकलां भावयेत्। तथा च—

विन्दुं सङ्कल्प्य वक्त्रन्तु तदधस्तात् कुचद्वयम् ।
तदधः सपरार्द्धञ्च चिन्तयेत्तदधोमुखम् ।।

ततस्तिथिनित्यां पूजयेत्। महात्र्यस्रे वामावर्तेन अकारादिपञ्च उकारादिपञ्च

एकारादिपञ्च विभाव्य मध्ये विसर्गं तेषु वामावर्तेन शुक्लपक्षे कामेश्वर्यादिविचित्रान्तं कृष्णपक्षे विचित्रादिकामेश्वर्यन्तं पूजयेत्। तद्यथा—

प्रतिपदि अकारे ऐं ह्रीं श्रीं तत्तन्मन्त्रमुच्चार्य कामेश्वरीनित्याकलाश्रीपादुकां पूजयामि नमः। एवमाकारे द्वितीयायां ३ भगमालिनीम्। इकारे तृतीयायां ३ नित्यक्लिन्नाम्। ईकारे चतुर्थ्यां ३ भेरुण्डाम्। उकारे पञ्चम्यां ३ वह्निवासिनीम्। ऊकारे षष्ठ्यां ३ महाविश्वेश्वरीम्। ऋकारे सप्तम्यां ३ शिवदूतीम्। ॠकारे अष्टम्यां ३ त्वरिताम्। ऌकारे नवम्यां ३ कुलसुन्दरीम्। ॡकारे दशम्यां ३ नित्याम्। एकारे एकादश्यां ३ नीलपताकाम्। ऐकारे द्वादश्यां ३ विजयाम्। ओकारे त्रयोदश्यां ३ सर्वमङ्गलाम्। औकारे चतुर्दश्यां ३ ज्वालामालिनीम्। अंकारे पौर्णमास्यां ३ विचित्राम्। विसर्गे ३ त्रिपुरसुन्दरीं पूजयेत्। कृष्णपक्षे विचित्रादिकामेश्वर्यन्तं पूजयेत्। पूजामन्त्रस्तु तन्त्रान्तरे—

श्रीपदं पूर्वमुच्चार्य पादुकापदमुच्चरेत् ।
पूजयामि नमः पश्चात् पूजयेदङ्गदेवताः ॥

ततो मध्यप्राक्त्र्यस्रमध्येषु गुरुपंक्ति पूजयेत्—

आनन्दनाथशब्दान्ता विज्ञेयाः परमेश्वरि ।
मन्वन्ता गुरवः प्रोक्ताः स्त्रीलिङ्गा वीरवन्दिते ॥

तद्यथा—ऐं ह्रीं श्रीं परप्रकाशानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि नमः। एवं ३ परशिवम्। तथा परशक्त्यम्बाश्रीपादुकां पूजयामि नमः। एवं ३ कौलेश्वरं शुक्लादेवीम्। ३ परेशानम्। ३ कामेश्वर्यम्बिकाम्—एते दिव्यौघाः। भोगं क्रीडं समयं वेदं सहजम्—एते सिद्धौघाः। गगनं विश्वं विमलं मदनं भुवनं नीलं आत्मानं प्रियम्—एते मानवौघाः। ततो गुरुं परमगुरुं परापरगुरुं परमेष्ठिगुरुं केवलं गुरुं वा। एते कामराजविद्यायास्तद्घटितायाश्च गुरवः। लोपायास्तद्घटितायास्तु परशिवं कामेश्वर्यम्बां दिव्यौघं महौघं सर्वानन्दं प्रज्ञादेवीं प्रकाशम्—एते दिव्यौघाः। दिव्यं चित्रं कैवल्यं दिव्याम्बां महोदयम्—एते सिद्धौघाः। चिद्विश्वशक्तिईश्वरकमलपरमानन्दमनोहरसुखानन्दप्रतिभान्—एते मानवौघाः। इति पूजयेत्। ततः पूर्ववद्गुरुत्रयं एकं वा पूजयेत्। अथवा सामान्यगुरुपंक्तिं पूजयेत्। तद्यथा—

ऐं ह्रीं श्रीं गुरुभ्यो नमः। ३ गुरुपादुकाभ्यो नमः। ३ परमगुरुभ्यो नमः। ३ परमगुरुपादुकाभ्यो नमः। ३ परापरगुरुभ्यो नमः। ३ परापरगुरुपादुकाभ्यो नमः। ३ परमेष्ठिगुरुभ्यो नमः। ३ परमेष्ठिगुरुपादुकाभ्यो नमः। ३ आचार्येभ्यो नमः। ३ आचार्यपादुकाभ्यो नमः। ३ सर्वत्रादौ द्वितार्या त्रितार्या वा प्रयोगः। तथा च ज्ञानार्णवे—

मायालक्ष्मीमयं बीजयुग्मं पूर्वक्रमेण हि ।
कथितं योजयेद्देवि त्रयं वा परमेश्वरि ॥

कल्पसूत्रेऽपि—सर्वत्रादौ त्रितारीप्रयोगः। त्रितारी च—

वाङ्माया कमला चेति त्रितारी समुदाहृता ।

ततस्त्रैलोक्यमोहनादिसृष्टिचक्रे ऐं ह्रीं श्रीं हस्रीं स्ह्रीं श्रीं कलह्रीं पूर्वाम्नाय-उन्मनीदेवी श्रीपादुकां पूजयामि नमः। स्थितिचक्रे ३ ऐं क्लिन्ने क्लीं मदद्रवे कूले ह्सौः दक्षिणाम्नायभोगिनीदेवीश्रीपादुकां पूजयामि नमः। ततः सर्वसौभाग्यादिसंहारात्मकत्रिचक्रे ३ ह स ख फ्रें ह्सौः भगवत्यम्ब ह स ख फ्रें कुब्जिके ह्स्रां ह्स्रीं ह्स्रं अघोरे घोरे घोरमुखि चव्रां चव्रीं चव्रूं किलि किलि विलोमतः पूर्वोक्तानि पञ्च बीजानि पश्चिमाम्नायकुब्जिकादेवी श्रीपादुकां पूजयामि नमः। सर्वचक्रे ३ ह स ख फ्रें महाचण्डयोगेश्वरि उत्तराम्नायकालिकादेवीश्रीपादुकां पूजयामि नमः। वैन्दवचक्रे ३ हसैं हसकलरीं ह्सौः ऊर्ध्वाम्नाय सकलसिद्धिदा-देवीश्रीपादुकां पूजयामि नमः।

ततोऽग्नीशासुरवायव्यमध्ये दिक्षु च मूलेन षडङ्गानि पूजयेत् । तथा च ज्ञानार्णवे—

अथाङ्गावरणं कुर्यात् श्रीविद्यामनुसम्भवम् ।
अग्नीशासुरवायव्यमध्ये दिक्ष्वङ्गपूजनम् ॥

ततो वाह्यचतुरस्रे पश्चिमादिद्वारचतुष्टयेषु अणिमाद्यष्टसिद्धीः पूजयेत्। पश्चिमादिदिङ्नियमस्तु गुप्तार्णवे—

यदाशाभिर्मुखो मन्त्री त्रिपुरां परिपूजयेत् ।
देवीपश्चात्तदा प्राची प्रतीची त्रिपुरापुरः ॥

विशुद्धेश्वरे च—

उत्तराभिमुखो मन्त्री यदि चक्रं प्रपूजयेत् ।
उत्तराशा तदा देवी पूर्वाशैव न संशयः ॥
दक्षिणं पश्चिमं प्रोक्तं देव्या दक्षे तथोत्तरम् ।
तद्वामं दक्षिणन्तु स्यात् सर्वत्र नियमः स्मृतः ।
ईशानकोणं देवेशि तदाग्नेयं न संशयः ॥

ऐं ह्रीं श्रीं अणिमासिद्धिश्रीपादुकां पूजयामि नमः। एवं ३ लघिमासिद्धि-श्रीपादुकां पूजयामि नमः। ३ महिमासिद्धिश्रीपादुकां पूजयामि नमः। ३ ईशित्व-सिद्धिश्रीपादुकां पूजयामि नमः। वायव्यादिकोणचतुष्टयेषु ३ वशित्वसिद्धिश्री-

पादुकां पूजयामि नमः। ३ प्राकाम्यसिद्धिश्रीपादुकां पूजयामि नमः। ३ इच्छा-सिद्धिश्रीपादुकां पूजयामि नमः। ३ भुक्तिसिद्धिश्रीपादुकां पूजयामि नमः। अधः ३ प्राप्तिसिद्धिश्रीपादुकां पूजयामि नमः। ऊर्ध्वे ३ सर्वज्ञानसिद्धिश्रीपादुकां पूज-यामि नमः। मध्यचतुरस्रस्य पश्चिमादिद्वारचतुष्टयेषु ३ आं ब्रह्माणीश्रीपादुकां पूजयामि नमः। एवं ३ ईं माहेश्वरीश्रीपादुकां पूजयामि नमः। ३ ऊं कौमारीश्रीपादुकां पूजयामि नमः। ३ ॠं वैष्णवीश्रीपादुकां पूजयामि नमः। वायव्यादिचतुष्कोणेषु ३ ॡं वाराहीश्रीपादुकां पूजयामि नमः। ३ ऐं इन्द्राणीश्रीपादुकां पूजयामि नमः। ३ औं चामुण्डाश्रीपादुकां पूजयामि नमः। ३ अः महालक्ष्मीश्रीपादुकां पूजयामि नमः। अभ्यन्तरे चतुरस्रस्य पश्चिमादिद्वारचतुष्टयेषु ३ द्रां सर्वसंक्षोभिणीमुद्रा-श्रीपादुकां पूजयामि नमः। एवं ३ द्रीं सर्वविद्राविणीमुद्राश्रीपादुकां पूजयामि नमः। ३ क्लीं सर्वाकर्षिणीमुद्राश्रीपादुकां पूजयामि नमः। ३ ब्लूं सर्ववशङ्करी-मुद्राश्रीपादुकां पूजयामि नमः। वायव्यादिकोणचतुष्टयेषु ३ सः सर्वोन्मादिनीमुद्रा-श्रीपादुकां पूजयामि नमः। ३ क्रों महाङ्कुशामुद्राश्रीपादुकां पूजयामि नमः। ३ ह स ख फ्रें खेचरीमुद्राश्रीपादुकां पूजयामि नमः। ३ ह्सौः सबीजमुद्राश्रीपादुकां पूजयामि नमः। अधः ३ ऐं योनिमुद्राश्रीपादुकां पूजयामि नमः। ऊर्ध्वे ३ औं त्रिखण्डामुद्राश्रीपादुकां पूजयामि नमः। चक्राग्रे सम्पूर्णचक्रे ३ त्रैलोक्यमोहन-चतुरस्रचक्राय नमः। ३ अं आं सौः त्रिपुराश्रीपादुकां पूजयामि नमः। एतस्या दक्षिणे ३ द्रां सर्वसंक्षोभिणीमुद्राश्रीपादुकां पूजयामि नमः। देव्या वामे ३ अः अणिमादिसिद्धिश्रीपादुकां पूजयामि नमः। ३ चार्वाकदर्शनाय नमः। अत्र त्रैलोक्य-मोहनचतुरस्रचक्रे त्रिपुराचक्रनायिकाधिष्ठिते एता अणिमाद्याः प्रकटयोगिन्यः समुद्राः ससिद्धयः सायुधाः सवाहनाः सपरिवाराः सर्वोपचारैः पूजितास्तर्पिताः सन्तु इत्यर्घ्यजलेन मूलदेव्यै समर्पयेत्।

ततो द्रामिति सर्वसंक्षोभिणीं मुद्रां प्रदर्श्य, ऐं आत्मतत्त्वाय स्वाहा। क्लीं विद्यातत्त्वाय स्वाहा। सौः शिवतत्त्वाय स्वाहा। इति त्रिवारमर्घ्योदकेन तर्पयेत्।

तत्पश्चात् अग्नि, ईशान, नैर्ऋत्य, वायव्य में; मध्य में; चारो दिशाओं में; देवी के देह में षडंग पूजन करे। जैसे—

ऐं सर्वज्ञाशक्तिश्रीमहात्रिपुरसुन्दरी हृदयाय नमः—हृदय में पूजा करे।

क्लीं नित्यतृप्तिशक्तिश्रीमहात्रिपुरसुन्दरी शिरसे स्वाहा—शिर पर पूजा करे।

सौः अनादिबोधशक्तिश्रीमहात्रिपुरसुन्दरी शिखायै वषट्—शिखा में पूजा करे।

ऐं स्वतन्त्रशक्तिश्रीमहात्रिपुरसुन्दरी कवचाय हुं—कवच का पूजन करे।

क्लीं अलुप्तशक्तिश्रीमहात्रिपुरसुन्दरी नेत्रत्रयाय वौषट्—नेत्रों का पूजन करे।

सौ: अनन्तशक्तिश्रीमहात्रिपुरसुन्दरी अस्त्राय फट्—अस्त्र का पूजन करे।
तब अपने शरीर में कामकला होने की भावना करे।

बिन्दु में मुख, उसके नीचे दो स्तन, उसके नीचे सपरार्द्ध का चिन्तन अधोमुख रूप में करे। तब तिथिनित्याओं का पूजन करे। मध्य के महात्रिकोण की तीन रेखाओं में वामावर्त्तक्रम से अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ ऌ ॡ ए ऐ ओ औं अं और मध्य में अ: की कल्पना करके शुक्ल पक्ष में कामेश्वरी से विचित्रा तक की और कृष्ण पक्ष में विचित्रा से कामेश्वरी तक की नित्याओं का पूजन करे। जैसे शुक्ल पक्ष में—

१. प्रतिपदा तिथि—ऐं ह्रीं श्रीं अं ऐं सकलह्रीं नित्यक्लिन्ने मदद्रवे सौ: अं कामेश्वरी-नित्याश्रीपादुकां पूजयामि नम:।

२. द्वितीया तिथि—ऐं ह्रीं श्रीं आं ऐं भगभुगे भगिनि भगोदरि भगमाले भगावहे भगगुह्ये भगयोनि भगनिपातिनि सर्वभगवशंकरि भगरूपे नित्यक्लिन्ने भगस्वरूपे सर्वाणि भगानि मे ह्यानय वरदे रेते सुरेते भगक्लिन्ने क्लिन्नद्रवे क्लेदय द्रावय अमोघे भगविच्चे क्षुभ क्षोभय सर्वसत्वान् भगेश्वरि ऐं ब्लूं जं ब्लूं भं ब्लूं मो ब्लूं भं ब्लूं हें ब्लूं हें क्लिन्ने सर्वाणि भगानि मे वशमानय स्त्रीं हर ब्लें ह्रीं आं भगमालिनीनित्याश्रीपादुकां पूजयामि नम:।

३. तृतीया तिथि—ऐं ह्रीं श्रीं इं ॐ ह्रीं नित्यक्लिन्ने मदद्रवे स्वाहा इं नित्यक्लिन्ना-नित्याश्रीपादुकां पूजयामि नम:।

४. चतुर्थी तिथि—ऐं ह्रीं श्रीं ईं ॐ क्रों म्रों क्रौं झ्रौं छ्रौं ज्रौं स्वाहा ईं भेरुण्डा-नित्याश्रीपादुकां पूजयामि नम:।

५. पञ्चमी तिथि—ऐं ह्रीं श्रीं उं ॐ ह्रीं वह्निवासिन्यै नम: उं वह्निवासिनीनित्याश्रीपादुकां पूजयामि नम:।

६. षष्ठी तिथि—ऐं ह्रीं श्रीं ॐ ह्रीं क्लिन्ने ऐं क्रों नित्यमदद्रवे ह्रीं ऊं महावज्रेश्वरी नित्याश्रीपादुकां पूजयामि नम:।

७. सप्तमी तिथि—ऐं ह्रीं श्रीं ऋं ह्रीं शिवदूत्यै नम: ऋं शिवदूतीनित्याश्रीपादुकां पूजयामि नम:।

८. अष्टमी तिथि—ऐं ह्रीं श्रीं ॠं ॐ ह्रीं हुं खे च छे क्ष: स्त्रीं हुं क्षें ह्रीं फट् ॠं त्वरितानित्याश्रीपादुकां पूजयामि नम:।

९. नवमी तिथि—ऐं ह्रीं श्रीं ऌं ऐं क्लीं सौ: ऌं कुलसुन्दरीनित्याश्रीपादुकां पूजयामि नम:।

१०. दशमी तिथि—ऐं ह्रीं श्रीं ॡं हसकलरडैं हसकलरडीं हसकलरडौ: ॡं नित्यानित्याश्रीपादुकां पूजयामि नम:।

११. एकादशी तिथि—ऐं ह्रीं श्रीं एं ह्रीं फ्रें स्त्रूं क्रों आं ह्रीं ऐं ब्लूं नित्यमदद्रवे हुं फ्रें ह्रीं एं नीलपताकानित्याश्रीपादुकां पूजयामि नम:।

१२. द्वादशी तिथि—ऐं ह्रीं श्रीं ऐं झम्र्यूं ऐं विजयानित्याश्रीपादुकां पूजयामि नम:।

१३. त्रयोदशी तिथि—ऐं ह्रीं श्रीं ओं स्वौं ओं सर्वमङ्गलानित्याश्रीपादुकां पूजयामि नमः।

१४. चतुर्दशी तिथि—ऐं ह्रीं श्रीं औं ॐ नमो भगवति ज्वालामालिनी देवि सर्वभूत-संहारकारिके जातवेदसि ज्वलन्ति ज्वल ज्वल प्रज्वल प्रज्वल ह्रां ह्रीं ह्रूं र र र र र र र र हुं फट् स्वाहा औं ज्वालामालिनीनित्याश्रीपादुकां पूजयामि नमः।

१५. पूर्णिमा तिथि—ऐं ह्रीं श्रीं अं च्क्रौं अं चित्रानित्याश्रीपादुकां पूजयामि नमः।

१६. ऐं ह्रीं श्रीं अः कएईलह्रीं हसकहलह्रीं सकलह्रीं अः ललितामहानित्याश्रीपादुकां पूजयामि नमः।

इसी प्रकार कृष्ण पक्ष में चित्रा से प्रारम्भ करके कामेश्वरी तक अपने-अपने मन्त्र से पूजा करके बिन्दु में महानित्या त्रिपुरसुन्दरी का पूजन करे। इसके बाद गुरुमण्डलार्चन करे। यह पूजन मध्य त्रिकोण की रेखाओं में करे। यह पूजा इस प्रकार करे—

ऐं ह्रीं श्रीं परप्रकाशानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि नमः।

ऐं ह्रीं श्रीं परशिवश्रीपादुकां पूजयामि नमः।

ऐं ह्रीं श्रीं परशक्त्यम्बाश्रीपादुकां पूजयामि नमः।

ऐं ह्रीं श्री कौलेश्वरानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि नमः।

ऐं ह्रीं श्रीं शुक्लदेव्यम्बाश्रीपादुकां पूजयामि नमः।

ऐं ह्रीं श्रीं परेशानपादुकां पूजयामि नमः।

ऐं ह्रीं श्रीं कामेश्वर्यम्बिकापादुकां पूजयामि नमः।

ये सभी दिव्यौघ हैं। भोग क्रीड समय वेद सहज सिद्धौघ हैं। गगन विश्व विमल भुवनलीला आत्मानन्द मानवौघ हैं। तब गुरु, परमगुरु, परापरगुरु, परमेष्ठिगुरु और गुरु हैं। ये कामराज विद्या के गुरु हैं। इनका पूजन निम्न प्रकार से करे—

सिद्धौघ—

ऐं ह्रीं श्रीं भोगानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि नमः।

ऐं ह्रीं श्रीं क्लिन्नानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि नमः।

ऐं ह्रीं श्रीं समयानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि नमः।

ऐं ह्रीं श्रीं सहजानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि नमः।

मानवौघ—

ऐं ह्रीं श्रीं गगनानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि नमः।

ऐं ह्रीं श्रीं विश्वानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि नमः।

ऐं ह्रीं श्रीं विमलानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि नमः।

ऐं ह्रीं श्रीं भुवनानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि नमः।

ऐं ह्रीं श्रीं लीलाम्बाश्रीपादुकां पूजयामि नमः।

ऐं ह्रीं श्रीं स्वात्मानन्दनाथश्रीपादुकां पूजयामि नम:।

ऐं ह्रीं श्रीं परमेष्ठिगुरुश्रीपादुकां पूजयामि नम:। परमगुरुश्रीपादुकां पूजयामि नम:। स्वगुरुश्रीपादुकां पूजयामि नम:।

लोपामुद्रा मन्त्र के अनुसार परशिव कामेश्वर्यम्बा दिव्यौघ हैं। महौघ में सर्वानन्द, प्रज्ञादेवी और प्रकाशानन्द हैं। सिद्धौघ में दिव्य चित्र कैवल्य दिव्यम्बा हैं। मानवौघ में चित्त, विश्व शक्ति ईश्वर कमल परमानन्द मनोहर सुखानन्द प्रतिभा है। तब तीनों गुरुओं की पूजा करे या एक की ही पूजा करे अथवा सामान्य गुरुपंक्ति की पूजा करे; जैसे—

ऐं ह्रीं श्रीं गुरुभ्यो नम:। ऐं ह्रीं श्रीं गुरुपादुकाभ्यो नम:। ऐं ह्रीं श्रीं परमगुरुभ्यो नम:। ऐं ह्रीं श्रीं परमगुरुपादुकाभ्यो नम:। ऐं ह्रीं श्रीं परापरगुरुभ्यो नम:। ऐं ह्रीं श्रीं परापरगुरुपादुकाभ्यो नम:। ऐं ह्रीं श्रीं परमेष्ठिगुरुभ्यो नम:। ऐं ह्रीं श्रीं परमेष्ठिगुरुपादुकाभ्यो नम:। ऐं ह्रीं श्रीं आचार्येभ्यो नम:। ऐं ह्रीं श्रीं आचार्यपादुकाभ्यो नम:। पूजन में सर्वत्र मन्त्र के पहले द्वितारी या त्रितारी का प्रयोग करे। ज्ञानार्णव के अनुसार ह्रीं श्रीं बीजयुग्म को मन्त्र के पहले रक्खे या ऐं ह्रीं श्रीं तीनों बीजों का प्रयोग करे। कल्पसूत्र के अनुसार भी सभी मन्त्रों के पहले त्रितारी का प्रयोग प्रशस्त है। त्रितारी में ऐं ह्रीं श्रीं बीज आते हैं। इसके बाद त्रैलोक्यमोहनादि सृष्टिचक्र के अनुसार पूजन करे। ऐं ह्रीं श्रीं ह्स्रीं स्ह्रीं श्रीं कलह्रीं पूर्वाम्नाये उन्मनीदेवीश्रीपादुकां पूजयामि नम:। स्थितिचक्रे—ऐं ह्रीं श्रीं ऐं क्लिन्ने क्लीं मदद्रवे कूले हसौः दक्षिणाम्नाये भोगिनीदेवीश्रीपादुकां पूजयामि नम:। सर्वसौभाग्यादिसंहारात्मकत्रिचक्रे—ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें हसौः भगवत्यम्ब हसखफ्रें कुब्जिके ह्स्रां ह्स्रीं ह्स्रः अघोरे घोरे घोरमुखि चव्रां चव्रीं चव्रूं किलि किलि हसौः फ्रेखसह पश्चिमाम्नायकुब्जिकादेवीश्रीपादुकां पूजयामि नम:। सर्वचक्रे— ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें महाचण्डयोगेश्वरी उत्तराम्नायकालिकादेवीश्रीपादुकां पूजयामि नम:। वैन्दवचक्रे—ऐं ह्रीं श्रीं हसैं हसकलरीं हसौः ऊर्ध्वाम्नायसकलसिद्धिदादेवीश्रीपादुकां पूजयामि नम:। इसके बाद अग्नि, ईशान, नैर्ऋत्य, वायव्य, मध्य दिशाओं में मूल मन्त्र से षड़ंग पूजन करे।

ज्ञानार्णव का कथन है कि षडंग श्रीविद्यामन्त्र से करे। अग्नीशासुरवायव्य मध्य दिशाओं में अंगपूजन करे। तब बाह्य चतुरस्र में पश्चिमादि द्वारचतुष्टय में अणिमादि अष्टसिद्धियों का पूजन करे।

गुप्तार्णव में पश्चिमादि दिशा का निर्णय है। मन्त्री का मुख जिधर हो उसी ओर त्रिपुरा का पूजन करे। देवी के पीछे प्राची, प्रतीची त्रिपुरापुर है। विशुद्धेश्वर में लिखा है कि मन्त्री यदि उत्तराभिमुख होकर चक्र की पूजा करता है तब उत्तराशा देवी पूर्वाशा होती है, इसमें संशय नहीं है। दक्षिण-पश्चिम देवी के दाँयें-बाँयें होते हैं। देवी के बाँयें दक्षिण दिशा सर्वत्र नियम मान्य है। ईशान कोण तथा अग्निकोण इसी प्रकार से होते हैं।

दिशाओं में पूजन प्रथम चतुरस्र में प्रथम आवरण—

ऐं ह्रीं श्रीं अणिमासिद्धिश्रीपादुकां पूजयामि।
ऐं ह्रीं श्रीं लघिमासिद्धिश्रीपादुकां पूजयामि।
ऐं ह्रीं श्रीं महिमासिद्धिश्रीपादुकां पूजयामि।
ऐं ह्रीं श्रीं ईशित्वसिद्धिश्रीपादुकां पूजयामि।

कोणों में वायव्यादि क्रम से—
ऐं ह्रीं श्रीं वशित्वसिद्धिश्रीपादुकां पूजयामि।
ऐं ह्रीं श्रीं प्राकाम्यसिद्धिश्रीपादुकां पूजयामि।
ऐं ह्रीं श्रीं इच्छासिद्धिश्रीपादुकां पूजयामि।
ऐं ह्रीं श्रीं भुक्तिसिद्धिश्रीपादुकां पूजयामि।

नैर्ऋत्य-पश्चिम मध्य में अध: नीचे—
ऐं ह्रीं श्रीं प्राप्तिसिद्धिश्रीपादुकां पूजयामि।

ईशान-पूर्वमध्य में ऊर्ध्व—
ऐं ह्रीं श्रीं सर्वज्ञानसिद्धिश्रीपादुकां पूजयामि।

मध्य चतुरस्र में पश्चिमादि चार द्वारों में—
ऐं ह्रीं श्रीं आं ब्राह्मीश्रीपादुकां पूजयामि।
ऐं ह्रीं श्रीं ईं माहेश्वरीश्रीपादुकां पूजयामि।
ऐं ह्रीं श्रीं ऊं कौमारीश्रीपादुकां पूजयामि।
ऐं ह्रीं श्रीं ॠं वैष्णवीश्रीपादुकां पूजयामि।

वायव्यादि चारो कोणों में—
ऐं ह्रीं श्रीं ॡं वाराहीश्रीपादुकां पूजयामि।
ऐं ह्रीं श्रीं ऐं इन्द्राणीश्रीपादुकां पूजयामि।
ऐं ह्रीं श्रीं औं चामुण्डाश्रीपादुकां पूजयामि।
ऐं ह्रीं श्रीं अ: महालक्ष्मीश्रीपादुकां पूजयामि।

तृतीय चतुरस्र में पश्चिमादि चारो द्वारों में इनका पूजन करे—
ऐं ह्रीं श्रीं द्रां सर्वसंक्षोभिणीमुद्राश्रीपादुकां पूजयामि।
ऐं ह्रीं श्रीं द्रीं सर्वविद्राविणीमुद्राश्रीपादुकां पूजयामि।
ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं सर्वाकर्षिणीमुद्राश्रीपादुकां पूजयामि।
ऐं ह्रीं श्रीं ब्लूं सर्ववशंकरीमुद्राश्रीपादुकां पूजयामि।

वायव्यादि चारो कोणों में—
ऐं ह्रीं श्रीं स: सर्वोन्मादिनीमुद्राश्रीपादुकां पूजयामि नम:।
ऐं ह्रीं श्रीं क्रों महांकुशामुद्राश्रीपादुकां पूजयामि नम:।

ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें खेचरीमुद्राश्रीपादुकां पूजयामि नमः।

ऐं ह्रीं श्रीं हसौः सर्वबीजमुद्राश्रीपादुकां पूजयामि नमः।

ऊपर में—ऐं ह्रीं श्रीं औं त्रिखण्डामुद्राश्रीपादुकां पूजयामि नमः।

चक्र के आगे सम्पूर्ण चक्र में—ऐं ह्रीं श्रीं त्रैलोक्यमोहनचतुरस्रचक्राय नमः। ऐं ह्रीं श्रीं अं आं सौः त्रिपुराश्रीपादुकां पूजयामि नमः। इसके दक्षिण भाग में ऐं ह्रीं श्रीं द्रां सर्वसंक्षोभिणीमुद्राश्रीपादुकां पूजयामि नमः। देवी के वाम भाग में ऐं ह्रीं श्रीं अः अणिमादिसिद्धिश्रीपादुकां पूजयामि नमः। ऐं ह्रीं श्रीं चार्वाकदर्शनाय नमः।

अत्र त्रैलोक्यमोहनचतुरस्रचक्रे त्रिपुराचक्रनायिकाऽधिष्ठिते एताः अणिमाद्याः प्रकटयोगिन्यः समुद्राः ससिद्धयः सायुधाः सवाहनाः सपरिवाराः सर्वोपचारैः पूजितास्तर्पिताः सन्तु। अर्घ्य जल से मूल देवी को पूजा समर्पित करे। इसके बाद द्रां से सर्वसंक्षोभिणी मुद्रा दिखावे। अर्घ्योदक से तीन बार तर्पण करे; जैसे—ऐं आत्मतत्त्वाय स्वाहा। क्लीं विद्यातत्त्वाय स्वाहा। सौः शिवतत्त्वाय स्वाहा।

ततः षोडशदलेषु पश्चिमदलादारभ्य वामावर्तेन ३ अं कामाकर्षिणीनित्याकलाश्रीपादुकां पूजयामि। ३ आं बुद्ध्याकर्षिणीनित्याकलाश्रीपादुकां पूजयामि। एवं सर्वत्र नित्याकलाश्रीपादुकां पूजयामीति पदप्रयोगः। तथा च नवरत्नेश्वरे—

विलोमेन यजेदेताः क्रमान्नित्याकलाः पुनः ।

३ (ऐं ह्रीं श्री) इं अहङ्काराकर्षिणी। ३ ईं शब्दाकर्षिणी। ३ उं स्पर्शाकर्षिणी। ३ ऊं रूपाकर्षिणी। ३ ऋं रसाकर्षिणी ३ ॠं गन्धाकर्षिणी। ३ लृं चित्ताकर्षिणी। ३ ॡं धैर्याकर्षिणी। ३ एं स्मृत्याकर्षिणी। ३ ऐं नामाकर्षिणी। ३ ओं बीजाकर्षिणी। ३ औं आत्माकर्षिणी। ३ अं अमृताकर्षिणी। ३ अः शरीराकर्षिणी। चक्राग्रे ३ सर्वाशापरिपूरकषोडदलचक्राय नमः। ३ ऐं क्लीं सौः त्रिपुरेश्वरीचक्रनायिकाश्रीपादुकां पूजयामि। सर्वत्रान्ते श्रीपादुकां पूजयामि, आदौ ऐं ह्रीं श्रीं! एतस्या दक्षिणे ३ द्रीं सर्वविद्राविणीमुद्राश्रीपादुकां पूजयामि। वामे ३ लघिमासिद्धिश्रीपादुकां पूजयामि। बौद्धदर्शनाय नमः। अत्र सर्वाशापरिपूरकषोडशदलचक्रे त्रिपुरेश्वरीचक्रनायिकाधिष्ठिते एताः कामाकर्षिण्याद्याः गुप्तयोगिन्यः समुद्रा इत्यादि मूलदेव्यै समर्पयेत्। द्रीमिति सर्वविद्राविणी मुद्रां प्रदर्श्य, ऐं आत्मतत्त्वाय स्वाहेति पूर्ववत्।

अष्टदलचक्रे पूर्वादिचतुर्दलेषु वामावर्तेन ३ कं ५ अनङ्गकुसुमादेवीश्रीपादुकां पूजयामि। ३ चं ५ अनङ्गमेखलादेवीश्रीपादुकां पूजयामि। ३ टं ५ अनङ्गमदनादेवीश्रीपादुकां पूजयामि। ३ तं ५ अनङ्गमदनातुरादेवीश्रीपादुकां पूजयामि। आग्नेयादिदलेषु ३ पं ५ अनङ्गरेखादेवीश्रीपादुकां पूजयामि। ३ यं ४ अनङ्गवेगिनी-

देवीश्रीपादुकां पूजयामि। ३ शं षं सं हं अनङ्गाङ्कुशादेवीश्रीपादुकां पूजयामि। ३ लं क्षं अनङ्गमालिनीदेवीश्रीपादुकां पूजयामि। चक्राग्रे ३ सर्वसंक्षोभणाष्टदल-चक्राय नमः। ३ ह्रीं क्लीं सौः त्रिपुरसुन्दरीचक्रनायिकाश्रीपादुकां पूजयामि। एतस्या दक्षिणे ३ क्लीं सर्वाकर्षिणीमुद्राश्रीपादुकां पूजयामि। वामे ३ महिमासिद्धि-श्रीपादुकां पूजयामि। जिनेन्द्रदर्शनाय नमः। अत्र सर्वसंक्षोभणाष्टदलचक्रे श्रीमहा-त्रिपुरसुन्दरीचक्रनायिकाधिष्ठिते एता अनङ्गकुसुमाद्या गुप्ततरयोगिन्यः समुद्रा इत्यादि मूलदेव्यै समर्पयेत्। क्लीमिति सर्वाकर्षिणीमुद्रां प्रदर्शयेत्। ऐं आत्म-तत्त्वाय स्वाहेत्यादि पूर्ववत्।

चतुर्दशारचक्राग्रात्समारभ्य वामावर्तेन पश्चिमादिदक्षिणान्तं यावत् ३ सर्व-संक्षोभिणीशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि। ३ सर्वविद्राविणी। ३ सर्वाकर्षिणी। ३ सर्वाह्लादिनी। ३ सर्वसम्मोहनी। ३ सर्वस्तम्भिनी। ३ सर्वजृम्भणी। ३ सर्वसत्त्व-वशङ्करी। ३ सर्वरञ्जनी। ३ सर्वोन्मादिनी। ३ सर्वार्थसाधिनी। ३ सर्वसम्पत्ति-पूरणी। ३ सर्वमन्त्रमयी। ३ सर्वदुःखक्षयङ्करी। सर्वत्र शक्तिश्रीपादुकापदप्रयोगः। चक्राग्रे ३ सर्वसौभाग्यदायकचतुर्दशारचक्राय नमः। हैं ह क्लीं हसौः त्रिपुरवासिनी-चक्रनायिकाश्रीपादुकां पूजयामि। एतस्या दक्षिणे ३ ब्लूं सर्ववशङ्करीमुद्राश्री-पादुकां पूजयामि। वामे ३ ईशित्वादिसिद्धिश्रीपादुकां पूजयामि। सांख्यमीमांसा-न्यायदर्शनिभ्यो नमः। अत्र सर्वसौभाग्यदायकचतुर्दशारचक्रे त्रिपुरवासिनीचक्र-नायिकाधिष्ठिते एताः सर्वसंक्षोभिण्याद्याः शक्तयः सम्प्रदाययोगिन्यः समुद्रा इत्यादि मूलदेव्यै समर्पयेत्। ब्लूं सर्ववशङ्करीमुद्रां प्रदर्श्य ऐं आत्मतत्त्वाय स्वाहे-त्यादि पूर्ववत्।

बहिर्दशारचक्राग्रात्समारभ्य वामावर्तेन पश्चिमाद्दक्षिणान्तम्। ३ सर्वसिद्धि-प्रदादेवीश्रीपादुकां पूजयामि। एवं सर्वत्र देवीश्रीपादुकां पूजयामि। ३ सर्वसम्पत्प्रदा। ३ सर्वप्रियङ्करी। ३ सर्वमङ्गलकरी। ३ सर्वकामप्रदा। ३ सर्वदुःखविमोचिनी। ३ सर्वमृत्युप्रशमिनी। ३ सर्वविघ्ननिवारिणी। ३ सर्वाङ्गसुन्दरी। ३ सर्वसौभाग्य-दायिनी। चक्राग्रे सर्वार्थसाधकबहिर्दशारचक्राय नमः। ३ हसैं ह स क्लीं ह्सौः त्रिपुराश्रीचक्रनायिकाश्रीपादुकां पूजयामि। एतस्या दक्षिणे ३ सः सर्वोन्मादिनी-मुद्राश्रीपादुकां पूजयामि। वामे ३ वशित्वादिसिद्धिश्रीपादुकां पूजयामि। ब्राह्म्य-वैद्यकदर्शनाय नमः।

अथ सर्वार्थसाधके बहिर्दशारचक्रे त्रिपुराश्रीचक्रनायिकाधिष्ठिते एताः सर्व-सिद्धिप्रदा देव्यः कुलकौलिनीयोगिन्यः समुद्रा इत्यादि मूलदेव्यै समर्पयेत्। ततः सः सर्वोन्मादिनीं मुद्रां प्रदर्श्य, ऐं आत्मतत्त्वाय स्वाहेति पूर्ववत्। अन्तर्दशारचक्राच्च

समारभ्य पश्चिमाद्दक्षिणान्तं यावत् ऐं ह्रीं श्रीं सर्वज्ञादेवीश्रीपादुकां पूजयामि। एवं सर्वत्र देवीश्रीपादुकां पूजयामि। ३ सर्वशक्तिमयी। ३ सर्वैश्वर्यप्रदायिनी। ३ सर्वज्ञानमयी। ३ सर्वव्याधिविनाशिनी। ३ सर्वाधारस्वरूपिणी। ३ सर्वपापहरा। ३ सर्वानन्दमयी। ३ सर्वरक्षास्वरूपिणी। ३ सर्वेप्सितफलप्रदा। चक्राग्रे ३ सर्वरक्षाकरान्तर्दशारचक्राय नमः। ह्रीं क्लीं ब्लूं त्रिपुरमालिनीचक्रनायिकाश्रीपादुकां पूजयामि। एतस्या दक्षिणे ३ क्रों महाङ्कुशमुद्राश्रीपादुकां पूजयामि। वामे ३ प्राकाम्यसिद्धिश्रीपादुकां पूजयामि। ३ सौरदर्शनाय नमः।

अत्र सर्वरक्षाकरान्तर्दशारचक्रे त्रिपुरमालिनीचक्रनायिकाधिष्ठिते एताः सर्वज्ञाद्या देव्यो निगर्भयोगिन्यः समुद्रा इत्यादि मूलदेव्यै समर्पयेत्। क्रों महाङ्कुशमुद्रां प्रदर्श्य ऐं आत्मतत्त्वाय स्वाहेति पूर्ववत्।

ततोऽष्टारचक्राग्राच्च समारभ्य पश्चिमाद्दक्षिणान्तं यावत्। ३ अं १६ वरलूं वशिनीवाग्देवताश्रीपादुकां पूजयामि। एवं ३ वाग्देवताश्रीपादुकां पूजयामि। एवं सर्वत्र। ३ कं ५ क ल ह्रीं कामेश्वरी। ३ चं ५ न व लीं मोदिनी। ३ टं ५ य्लूं विमला। ३ तं ५ ज म रीं अरुणा। ३ पं ५ ह स ल व यूं जयिनी। ३ यं ४ झ म र यूं सर्वेश्वरी। ३ शं षं सं हं लं क्षमरीं कौलिनीवाग्देवताश्रीपादुकां पूजयामि। चक्राग्रे सर्वरोगहराष्टारचक्राय नमः। ह्रीं श्रीं सौः त्रिपुरासिद्धानित्याश्रीपादुकां पूजयामि। एतस्या दक्षिणे ३ ह स ख फ्रें खेचरीमुद्राश्रीपादुकां पूजयामि। वामे भुक्तिसिद्धश्रीपादुकां पूजयामि। वैष्णवदर्शनाय नमः। अत्र सर्वरोगहरे अष्टारचक्रे त्रिपुरासिद्धाचक्रनायिकाधिष्ठिते एता वशिन्याद्या योगिन्यः समुद्रा इत्यादि मूलदेव्यै समर्पयेत्। ३ ह स ख फ्रें खेचरीमुद्रां प्रदर्श्य ऐं आत्मतत्त्वाय स्वाहेति पूर्ववत्।

त्रिकोणबाह्ये अग्रतः वामावर्तेन पश्चिमादिदक्षिणान्तं यावत्। ३ द्रां द्रीं क्लीं ब्लूं सः यां रां लां वां शां कामेश्वरकामेश्वरीजृम्भणवाणेभ्यो नमः। ३ द्रां ५ यां ५ थं थं सर्वसम्मोहनाय कामेश्वरकामेश्वरीधनुषे नमः। ३ द्रां ५ यां ५ आं ह्रीं वशीकरणाय कामेश्वरकामेश्वरीपाशाय नमः। ३ द्रां ५ यां ५ क्रों सर्वस्तम्भनाय कामेश्वरकामेश्वर्यङ्कुशाय नमः। ततस्त्रिकोणाग्रदक्षिणवामेषु मूलवाग्भवमुच्चार्याग्निचक्रे कामगिर्यालये मित्रीशनाथात्मके रुद्रात्मशक्तिकामेश्वरीदेवीश्रीपादुकां पूजयामि। कामराजमुच्चार्य सूर्यचक्रे जालन्धरपीठे षष्ठीशनाथात्मके विष्णवात्मशक्तिवज्रेश्वरीदेवीश्रीपादुकां पूजयामि। शक्तिकूटमुच्चार्य सोमचक्रे पूर्णगिरिपीठे उड्डीशनाथात्मके ब्रह्मात्मशक्तिभगमालिनीदेवीश्रीपादुकां पूजयामि। चक्राग्रे ३ सर्वसिद्धिप्रदाद्यचक्राय नमः। हस्रैं हस्क्ल्रीं हस्रौः त्रिपुराम्बानित्याश्रीपादुकां पूजयामि।

एतस्या दक्षिणे ३ ह्सौः बीजमुद्राश्रीपादुकां पूजयामि। वामे ३ इच्छासिद्धिश्रीपादुकां पूजयामि। ३ शक्तिदर्शनाय नमः। अत्र सर्वसिद्धिप्रदाद्यचक्रे बाणचापपाशाङ्कुशभूषितान्तराले त्रिपुराम्बाचक्रनायिकाधिष्ठिते एताः कामेश्वर्याद्या अतिरहस्ययोगिन्यः समुद्रा इत्यादि मूलदेव्यै समर्पयेत्। ह्सौः बीजमुद्रां प्रदर्श्य ऐं आत्मतत्त्वाय स्वाहेति पूर्ववत्।

ततो वैन्दवचक्रे मूलमुच्चार्य श्रीमहात्रिपुरसुन्दरीनित्याश्रीपादुकां पूजयामि। इति त्रिः सम्पूज्य चक्राग्रे सर्वानन्दमयवैन्दवचक्राय नमः। मूलमुच्चार्य श्रीमहात्रिपुरसुन्दरीचक्रनायिकाश्रीपादुकां पूजयामि। एतस्या दक्षिणे ऐं योनिमुद्राश्रीपादुकां पूजयामि। वामे ३ प्राप्तिसिद्धिश्रीपादुकां पूजयामि। ३ मोक्षसिद्धिश्रीपादुकां पूजयामि। ३ शैवदर्शनाय नमः।

कुलोड्डीशे यथा—

ततो मूलं समुच्चार्य महात्रिपुरसुन्दरीम् ।
पूजयेद्देवतारूपां विन्दौ चक्रेश्वरीं पुनः ॥

यद्वा नवरत्नेश्वरे—

बौद्धं ब्राह्मं तथा सौरं शैवं वैष्णवमेव च ।
शाक्तं षष्ठन्तु विज्ञेयं चक्रं षड्दर्शनात्मकम् ॥

रुद्रयामलेऽपि—

चतुरस्रं बौद्धभेदं ब्रह्मं वै षोडशच्छदम् ।
वैष्णवं शैवभेदञ्च मन्वस्रं सौरमुच्यते ।
अष्टास्रं द्विदशारन्तु मध्यं शाक्तं समीरितम् ॥

इत्युक्तस्थाने तत्तद्दर्शनं पूज्यम् ।

अत्र सर्वानन्दमये वैन्दवचक्रे परब्रह्मस्वरूपिणी परापरशक्तिमहात्रिपुरसुन्दरीसमस्तचक्रनायिकासंवित्तिरूपचक्रनायिकाधिष्ठिते त्रैलोक्यमोहनसर्वाशापरिपूरकसर्वसंक्षोभकारकसर्वभौभाग्यदायकसर्वार्थसाधकसर्वरक्षाकरसर्वरोगहरसर्वसिद्धिप्रद(सर्वानन्दमय)श्रीचक्रसमुन्मीलितसमस्तप्रकटगुप्तगुप्ततरसम्प्रदायकुलकौलिनीनिगर्भरहस्यातिरहस्यपरापररहस्यसमस्तयोगिनीपरिवृत्तश्रीत्रिपुरात्रिपुरेशीत्रिपुरसुन्दरीत्रिपुरवासिनीत्रिपुराश्रीत्रिपुरमालिनीत्रिपुरसिद्धात्रिपुराम्बा तत्तच्चक्रनायिकावन्दितचरणकमलश्रीमहात्रिपुरसुन्दरीनित्यादेवी सर्वचक्रेश्वरी-सर्वमन्त्रेश्वरी-सर्वविद्येश्वरी-सर्वपीठेश्वरी-सर्वकामेश्वरी-सर्वतत्त्वेश्वरी-सर्ववीरेश्वरी-त्रैलोक्यमोहिनी-जगदुत्पत्तिमातृका-सर्वचक्रमयी-तच्चक्रनायिकासहिताः समुद्राः ससिद्धयः

सायुधाः सवाहनाः सपरिवाराः सर्वोपचारैः श्रीमहात्रिपुरसुन्दरी-परापरया सपर्यया पूजितास्तर्पिताः सन्तु। इति विशेषार्घ्योदकाक्षतकुसुमैः प्रधानदेव्या वामहस्ते समर्पयेत्। ततो नवमुद्राः प्रदर्श्य, ऐं आत्मतत्त्वाय स्वाहेत्यादि त्रिरर्घ्योदकेन पूर्ववत्तर्पयेत्।

ततो गन्धपुष्पदूर्वाक्षतमालादीन् दत्वा ऐं इत्युक्त्वा घण्टां वादयन् मूलमुच्चार्य—

ॐ वनस्पतिरसो दिव्यो गन्धाढ्यो गन्ध उत्तमः ।
आघ्रेयः सर्वदेवानां धूपोऽयं प्रतिगृह्यताम् ।

इति धूपं दद्यात्। ततो मूलमुच्चार्य—

ॐ सुप्रकाशो महादीपः सर्वतस्तिमिरापहः ।
सवाह्याभ्यन्तरं ज्योतिर्दीपोऽयं प्रतिगृह्यताम् ॥

इति दीपं दद्यात्। ततो मूलमुच्चार्य श्रीमहात्रिपुरसुन्दर्यै नैवेद्यं कल्पयामि नमः इति नैवेद्यं दद्यात्। ततो नित्यहोमं कुर्यात्। तद्यथा—

परिषिच्य भूमौ मूलमुच्चार्य ॐ प्राणाय स्वाहा, ॐ अपानाय स्वाहा, ॐ समानाय स्वाहा, ॐ उदानाय स्वाहा, ॐ व्यानाय स्वाहा। षडङ्गेनापि आहुति-षट्कं दद्यात्। तथा च—

परिषिच्य ततो भूमौ नित्यहोमं समाचरेत् ।
मूलमन्त्रेण देवेशि हुनेत्पञ्चाहुतीं क्रमात् ॥
प्राणापानौ तथा व्यान उदानश्च समानकः ।
एतत्स्वरूपं जानीयादाहुतीनाञ्च पञ्चकम् ।
षडाहुतीः षडङ्गेषु नित्यहोमोऽयमीरितः ॥

ततः स्ववामे त्रिकोणवृत्तं चतुरस्त्रं कृत्वा ऐं ह्रीं श्रीं व्यापकमण्डलाय नमः इति सम्पूज्य—

अर्द्धान्नपूर्णसलिलं स्थापयेत्तत्र भाजनम् ।
त्रिधा पठन् कलावर्णमनुं दद्याद्बलिं ततः ॥

ॐ ह्रीं सर्वविघ्नकृद्भ्यः सर्वभूतेभ्यः हूं स्वाहा इति सामान्यार्घ्योदकेन दत्वा तत्त्वमुद्रां प्रदर्शयेत्।

ततो वटुकादिभ्यो बलिं दद्यात्। ईशाने वायु-निर्ऋति-अग्निकोणेषु त्रिकोण-वृत्तमण्डलानि कृत्वा तेषु वां वटुकाय नमः। यां योगिनीभ्यो नमः। गां गणपतये नमः। क्षां क्षेत्रपालाय नमः इति पाद्यादिभिः सम्पूज्य तेषु द्रव्यभरितपात्राणि निक्षिप्य बलिं दद्यात्। तदुक्तम्—

वामादिवटुकं ङेऽन्तं नमोऽन्तो मनुरीरितः ।
पाद्यादिभिश्च सम्पूज्य बलिं दद्यादनेन तु ॥

एवमन्यत्राऽपि। एह्येहि देवीपुत्र वटुकनाथ कपिलजटाभारभास्वरत्रिनेत्र ज्वालमुख सर्वविघ्नान्नाशय सर्वोपचारसहितं बलिं गृह्ण गृह्ण स्वाहा इत्यनेन मन्त्रेण वटुकाय बलिं दद्यात्। वामांगुष्ठानामायोगेन मुद्रां प्रदर्शयेत्।

ऊर्ध्वं ब्रह्माण्डतो वा दिवि गगनतले भूतले निष्कले वा
पाताले वा तले वा पवनसलिलयोर्यत्र कुत्र स्थिता वा ।
क्षेत्रे पीठोपपीठादिषु च कृतपदा धूपदीपादिकेन
प्रीता देव्यः सदा नः शुभबलिविधिना पान्तु वीरेन्द्रवन्द्याः ॥

यां योगिनीभ्यः स्वाहा, सर्वयोगिनीभ्यः हुं फट् स्वाहा इत्यनेन बलिं दद्यात्। वामहस्तांगुष्ठतर्जनीमध्यमानामाभिर्योन्याकारेण मुद्राः प्रदर्शयेत्। क्षां क्षीं क्षूं क्षैं क्षौं क्षः क्षेत्रस्थाने क्षेत्रपाल धूपादिसहितबलिं गृह्ण गृह्ण स्वाहा, इत्यनेन क्षेत्रपालबलिं हरेत्। याममुष्टेस्तर्जनीं सरलां कृत्वा मुद्रां प्रदर्शयेत्। गां गीं गं गणपतये वरवरद सर्वजनं मे वशमानय बलिं गृह्ण गृह्ण स्वाहा इत्यनेन गणपतये बलिं हरेत्। वाममुष्टेर्मध्यमांगुलिं दण्डवत् कृत्वा मुद्रां प्रदर्शयेत्। भैरवीविद्याया अपि एतद्बलिचतुष्टयं कर्त्तव्यम्। सर्वान्ते वा सर्वभूतबलिं दद्यात्। तन्त्रे बलिमधिकृत्य—

अदत्वा वटुकादीनां यः पूजयति चण्डिकाम् ।
पूजा च विफला तस्य देवीशापः प्रजायते ॥

ततो मूलदेव्यै आचमनीयादिकं दत्वा सुवासितताम्बूलं दद्यात्। ततः आरार्तिकं दद्यात्। यथा—

कांसादिभाजने कुङ्कुमादिना बालायाश्चक्रं विलिख्य, कर्पूरगर्भिण्या वर्त्त्या घृतपूरितानष्टयोनिष्वष्टप्रदीपान् निधाय मध्ये पिष्टकादिरचितमस्तकोपरि महादीपं संस्थाप्य, श्रीं ह्रीं ग्लूं स्लूं, म्लूं, प्लूं, ल्लूं, ह्रीं श्रीं इति मन्त्रेण चाभ्यर्च्य, तत्पात्रं मस्तकान्तं समुद्धृत्य नववारं नीराजयेत्। तथा च ज्ञानार्णवे—

आरार्तिकमतः कुर्यात्सर्वकामार्थसिद्धये ।
सौवर्णे राजते कांस्ये स्थानके परमेश्वरि ॥
कुङ्कुमेन लिखेद्यन्त्रं नवकोणं मनोहरम् ।
चन्द्ररूपं चरुं कृत्वा तन्मध्ये मस्तके शिवे ॥
दीपमेकं विनिक्षिप्य वसुकोणेऽष्टदीपकान् ।
यवगोधूममुद्गादिरचितान् शर्करायुतान् ।

चषकाहितशोभाभिः शोभितान् घृतपूरितान् ॥
अभिमन्त्र्य महेशानि रत्नेश्वर्यास्ततः परम् ।
श्रीबीजञ्च पराबीजं संलिख्य वरवर्णिनि ॥
गसौ च मपलाः पश्चादिन्द्रस्द्रथाः क्रमतः प्रिये ।
वामकर्णसमायुक्ता नादविन्दुविभूषिताः ॥
बीजपञ्चकमेतत्तु पञ्चरत्नानि सुन्दरि ।
पूर्वबीजविलोमेन रत्नेशीयं नवाक्षरी ॥

ततो मूलमुच्चार्य—

समस्तचक्रचक्रेशि शुभे देवि नवात्मिके ।
आरार्तिकमिदं देवि गृहाण मम सिद्धये ॥

ततश्चक्रमुद्रां प्रदर्शयेत् ।

आरार्तिके महादेवि चक्रमुद्रां प्रदर्शयेत् ।
ततो विसर्जनान्तं कर्म समापयेत् ।

इति श्रीविद्याप्रकरणम्

●

द्वितीय आवरण षोड़श दल में पश्चिमादि क्रम से वामावर्त—
ऐं ह्रीं श्रीं अं कामाकर्षिणीनित्याकलाश्रीपादुकां पूजयामि।
ऐं ह्रीं श्रीं आं बुद्ध्याकर्षिणीनित्याकलाश्रीपादुकां पूजयामि।
ऐं ह्रीं श्रीं इं अंहकाराकर्षिणीनित्याकलाश्रीपादुकां पूजयामि।
ऐं ह्रीं श्रीं ईं शब्दाकर्षिणीनित्याकलाश्रीपादुकां पूजयामि।
ऐं ह्रीं श्रीं उं स्पर्शाकर्षिणीनित्याकलाश्रीपादुकां पूजयामि।
ऐं ह्रीं श्रीं ऊं रूपाकर्षणीनित्याकलाश्रीपादुकां पूजयामि।
ऐं ह्रीं श्रीं ऋं रसाकर्षिणीनित्याकलाश्रीपादुकां पूजयामि।
ऐं ह्रीं श्रीं ॠं गन्धाकर्षिणीनित्याकलाश्रीपादुकां पूजयामि।
ऐं ह्रीं श्रीं ऌं चित्ताकर्षिणीनित्याकलाश्रीपादुकां पूजयामि।
ऐं ह्रीं श्रीं ॡं धैर्याकर्षिणीनित्याकलाश्रीपादुकां पूजयामि।
ऐं ह्रीं श्रीं एं स्मृत्याकर्षिणीनित्याकलाश्रीपादुकां पूजयामि।
ऐं ह्रीं श्रीं ऐं नामाकर्षिणीनित्याकलाश्रीपादुकां पूजयामि।
ऐं ह्रीं श्रीं ओं बीजाकर्षिणीनित्याकलाश्रीपादुकां पूजयामि।
ऐं ह्रीं श्रीं औं आत्माकर्षिणीनित्याकलाश्रीपादुकां पूजयामि।
ऐं ह्रीं श्रीं अं अमृताकर्षिणीनित्याकलाश्रीपादुकां पूजयामि।

ऐं ह्रीं श्रीं अं: शरीराकर्षिणीनित्याकलाश्रीपादुकां पूजयामि।

श्रीचक्र के आगे ऐं ह्रीं श्रीं ऐं क्लीं सौ: त्रिपुरेश्वरीचक्रनायिका श्रीपादुकां पूजयामि। इसके दक्षिण में ऐं ह्रीं श्रीं द्रीं सर्वविद्राविणीमुद्राशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि। इसके बाँयें में ऐं ह्रीं श्रीं द्रीं लघिमासिद्धिश्रीपादुकां पूजयामि।

बौद्धदर्शनाय नम:

सर्वाशापरिपूरकषोडशदलचक्रे त्रिपुरेश्वरीचक्रनायिकाऽधिष्ठिते एता: कामाकर्षिण्याद्या: गुप्तयोगिन्य: समुद्रा: ससिद्धय: सायुधा: सवाहना: सपरिवारा: सर्वोपचारै: पूजितास्तर्पिता: सन्तु। अर्घ्य जल से मूल देवी को पूजन समर्पित करे। तब 'द्रीं' से सर्वविद्राविर्णा मुद्रा दिखाकर ऐं आत्मतत्त्वाय स्वाहादि तीन तर्पण करे।

तृतीय आवरण अष्टदल चक्र में पूर्वादि चाद दलों में वामावर्त—

ऐं ह्रीं श्रीं कं खं गं घं ङं अनंगकुसुमादेवीश्रीपादुकां पूजयामि।

ऐं ह्रीं श्रीं चं छं जं झं ञं अनंगमेखलादेवीश्रीपादुकां पूजयामि।

ऐं ह्रीं श्रीं टं ठं डं ढं णं अनंगमदनादेवीश्रीपादुकां पूजयामि।

ऐं ह्रीं श्रीं तं थं दं धं नं अनंगमदनातुरादेवीश्रीपादुकां पूजयामि।

ऐं ह्रीं श्रीं पं फं बं भं मं अनंगरेखादेवीश्रीपादुकां पूजयामि।

ऐं ह्रीं श्रीं यं रं लं वं अनंगवेगिनीदेवीश्रीपादुकां पूजयामि।

ऐं ह्रीं श्रीं शं षं सं हं अनंगांकुशादेवीश्रीपादुकां पूजयामि।

ऐं ह्रीं श्रीं लं क्षं अनंगमालिनीदेवीश्रीपादुकां पूजयामि।

चक्र के आगे ऐं ह्रीं श्रीं सर्वसंक्षोभणाष्टदलचक्राय नम:।

ऐं ह्रीं श्रीं ह्रीं क्लीं सौ: त्रिपुरसुन्दरीचक्रनायिकाश्रीपादुकां पूजयामि।

इसके दाँयें भाग में ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं सर्वाकर्षिणीमुद्राश्रीपादुकां पूजयामि।

बाँयें भाग में ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं महिमासिद्धिश्रीपादुकां पूजयामि।

जिनेन्द्रदर्शनाय नम:

सर्वसंक्षोभणाष्टदलचक्रे श्रीमहात्रिपुरसुन्दरीचक्रनायिकाऽधिष्ठिते एता: अनंगकुसुमाद्या गुप्ततरयोगिन्य: समुद्रा: ससिद्धय: सायुधा: सवाहना: सपरिवारा: सर्वोपचारै: पूजितास्तर्पिता: सन्तु। अर्घ्य जल से मूलदेवी को पूजा समर्पित करे। 'द्रीं' बोलकर सर्वविद्राविणी मुद्रा दिखावे। तीन बार इन मन्त्रों से तर्पण करे—ऐ आत्मतत्त्वाय स्वाहा। क्लीं विद्यातत्त्वाय स्वाहा। सौ: शिवतत्त्वाय स्वाहा।

चतुर्थ आवरण चतुर्दशार चक्र के अग्रभाग में वामावर्त पश्चिम से प्रारम्भ करके दक्षिण तक पूजन करे—

ऐं ह्रीं श्रीं सर्वसंक्षोभिणीशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि।

ऐं ह्रीं श्रीं सर्वविद्राविणीशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि।

ऐं ह्रीं श्रीं सर्वाकर्षिणीशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि।
ऐं ह्रीं श्रीं सर्वाह्लादिनीशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि।
ऐं ह्रीं श्रीं सर्वस्तम्भिनीशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि।
ऐं ह्रीं श्रीं सर्वसम्मोहिनीशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि।
ऐं ह्रीं श्रीं सर्वजृम्भिनीशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि।
ऐं ह्रीं श्रीं सर्वसत्त्ववशंकरीशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि।
ऐं ह्रीं श्रीं सर्वरञ्जिनीशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि।
ऐं ह्रीं श्रीं सर्वोन्मादिनीशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि।
ऐं ह्रीं श्रीं सर्वार्थसाधिनीशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि।
ऐं ह्रीं श्रीं सर्वसम्पत्तिपूरणीशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि।
ऐं ह्रीं श्रीं सर्वमन्त्रमयीशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि।
ऐं ह्रीं श्रीं सर्वदु:खक्षयंकरीशक्तिश्रीपादुकां पूजयामि।

चक्र के आगे—ऐं ह्रीं श्रीं सर्वसौभाग्यदायकचतुर्दशारचक्राय नम:।
हैं हक्लीं हसौ: त्रिपुरवासिनीचक्रनायिकाश्रीपादुकां पूजयामि।
इसके दक्षिण में ऐं ह्रीं श्रीं ब्लूं सर्ववशंकरीमुद्राश्रीपादुकां पूजयामि नम:।
इसके बाँयें भाग में ऐं ह्रीं श्रीं ईशित्वादिसिद्धिश्रीपादुकां पूजयामि।

सांख्य-मीमांसा-न्यायदर्शनेभ्यो नम:

सर्वसौभाग्यदायकचतुर्दशारचक्रे त्रिपुरवासिनीचक्रनायिकाधिष्ठिते एता: सर्वसंक्षोभिण्याख्या: शक्तय: सम्प्रदाययोगिन्य: समुद्रा: ससिद्धय: सायुधा: सपरिवारा: सर्वोपचारै: पूजितास्तर्पिता: सन्तु। अर्घ्यजल से पूजा मूल देवी को समर्पित करे। तब ब्लूं मन्त्र बोलकर सर्ववशंकरी मुद्रा दिखावे। इसके बाद अर्घ्योदक से तीन बार तर्पण करे—ऐं आत्मतत्त्वाय स्वाहा। क्लीं विद्यातत्त्वाय स्वाहा। सौ: शिवतत्त्वाय स्वाहा।

पंचम आवरण बहिर्दशार चक्र के अग्र भाग से आरम्भ करके वामावर्त क्रम से पश्चिम से दक्षिण तक इनका पूजन करे—

ऐं ह्रीं श्रीं सर्वसिद्धिप्रदादेवीश्रीपादुकां पूजयामि।
ऐं ह्रीं श्रीं सर्वसम्पत्प्रदादेवीश्रीपादुकां पूजयामि।
ऐं ह्रीं श्रीं सर्वप्रियंकरीदेवीश्रीपादुकां पूजयामि।
ऐं ह्रीं श्रीं सर्वमंगलकरीदेवीश्रीपादुकां पूजयामि।
ऐं ह्रीं श्रीं सर्वकामप्रदादेवीश्रीपादुकां पूजयामि।
ऐं ह्रीं श्रीं सर्वदु:खविमोचिनीदेवीश्रीपादुकां पूजयामि।
ऐं ह्रीं श्रीं सर्वमृत्युप्रशमिनीदेवीश्रीपादुकां पूजयामि।
ऐं ह्रीं श्रीं सर्वविघ्ननिवारिणीदेवीश्रीपादुकां पूजयामि।

ऐं ह्रीं श्रीं सर्वांगसुन्दरीदेवीश्रीपादुकां पूजयामि।

ऐं ह्रीं श्रीं सर्वसौभाग्यदायिनीदेवीश्रीपादुकां पूजयामि।

चक्र के अग्रभाग में सर्वार्थसाधकबहिर्दशारचक्राय नमः।

ऐं ह्रीं श्रीं हसैं हसक्लीं हसौः त्रिपुराश्रीचक्रनायिकाश्रीपादुकां पूजयामि। इसके दाँयें भाग में ऐं ह्रीं श्रीं सः सर्वोन्मादिनीमुद्राश्रीपादुकां पूजयामि। इसके बाँयें भाग में ऐं ह्रीं श्रीं वशित्वादिसिद्धिश्रीपादुकां पूजयामि।

ब्राह्मयवैद्यकदर्शनाय नमः

सर्वार्थसाधके बहिर्दशारचक्रे त्रिपुरानायिकधिष्ठिते एताः सर्वसिद्धिप्रदादेव्यः कुल-कौलिनीयोगिन्यः समुद्राः ससिद्धयः सायुधाः सवाहनाः सपरिवाराः सर्वोपचारैः पूजिताः तर्पिताः सन्तु नमः। अर्घ्यजल से मूलदेवी को पूजा समर्पित करे।

'सः' बोलकर सर्वोन्मादिनी मुद्रा दिखावे। अर्घ्यजल से तीन बार तर्पण करे—ऐं आत्मतत्त्वाय स्वाहा। क्लीं विद्यातत्त्वाय स्वाहा। सौः शिवतत्त्वाय स्वाहा।

षष्ठ आवरण अन्तर्दशार चक्राग्र से प्रारम्भ करके वामावर्त पश्चिम से दक्षिण तक इन देवियों का पूजन करे—

ऐं ह्रीं श्रीं सर्वज्ञादेवीश्रीपादुकां पूजयामि।

ऐं ह्रीं श्रीं सर्वशक्तिमयीदेवीश्रीपादुकां पूजयामि।

ऐं ह्रीं श्रीं सर्वैश्वर्यप्रदायिनीदेवीश्रीपादुकां पूजयामि।

ऐं ह्रीं श्रीं सर्वज्ञानमयीदेवीश्रीपादुकां पूजयामि।

ऐं ह्रीं श्रीं सर्वव्याधिविनाशिनीदेवीश्रीपादुकां पूजयामि।

ऐं ह्रीं श्रीं सर्वाधारस्वरूपिणीदेवीश्रीपादुकां पूजयामि।

ऐं ह्रीं श्रीं सर्वपापहरादेवीश्रीपादुकां पूजयामि।

ऐं ह्रीं श्रीं सर्वानन्दमयीदेवीश्रीपादुकां पूजयामि।

ऐं ह्रीं श्रीं सर्वरक्षास्वरूपिणीदेवीश्रीपादुकां पूजयामि।

ऐं ह्रीं श्रीं सर्वेप्सितफलप्रदादेवीश्रीपादुकां पूजयामि।

चक्र के अग्रभाग में—ऐं ह्रीं श्रीं सर्वरक्षाकरान्तर्दशारचक्राय नमः। ह्रीं क्लीं ब्लूं त्रिपुरमालिनीचक्रनायिकाश्रीपादुकां पूजयामि। इसके दाँयें भाग में ऐं ह्रीं श्रीं क्रों महां-कुशमुद्राश्रीपादुकां पूजयामि। इसके बाँयें भाग में ऐं ह्रीं श्रीं प्राकाम्यसिद्धिश्रीपादुकां पूजयामि।

ऐं ह्रीं श्रीं सौरदर्शनाय नमः

सर्वरक्षाकर अन्तर्दशारचक्रे त्रिपुरमालिनीचक्रनायिकाधिष्ठिते एताः सर्वज्ञाद्या देव्यो निगर्भयोगिन्यः समुद्राः ससिद्धयः सायुधाः सवाहनाः सपरिवाराः सर्वोपचारैः पूजितास्तर्पिताः

कएईलह्रीं अग्निचक्रे कामगिरिपीठे मित्रेशनाथात्मके रुद्रात्मशक्तिकामेश्वरीदेवीश्रीपादुकां पूजयामि नम:।

हसकहलह्रीं सूर्यचक्रे जालन्धरपीठे षष्ठीशनाथात्मके विष्ण्वात्मशक्तिवज्रेश्वरीदेवीश्रीपादुकां पूजयामि।

सकलह्रीं सोमचक्रे पूर्णगिरिपीठे उड्डीशनाथात्मके ब्रह्मात्मशक्तिश्रीभगमालिनीदेवीश्रीपादुकां पूजयामि।

चक्र के अग्रभाग में ऐं ह्रीं श्रीं सर्वसिद्धिप्रदाद्यचक्राय नम:।

हस्रैं हस्क्लरीं हस्रौ: त्रिपुराम्बानित्याश्रीपादुकां पूजयामि।

इसके दाँयें भाग में ऐं ह्रीं श्रीं हसौ: बीजमुद्राश्रीपादुकां पूजयामि। इसके बाँयें भाग में ऐं ह्रीं श्रीं इच्छासिद्धिश्रीपादुकां पूजयामि।

शक्तिदर्शनाय नम:

सर्वसिद्धिप्रदाद्यचक्रे वाण-चाप-पाश-अंकुश-भूषितान्तराले त्रिपुराम्बाचक्रनायिकाधिष्ठिते एता: कामेश्वर्याद्या: अतिरहस्ययोगिन्य: समुद्रा: ससिद्धय: सायुधा: सवाहना: सपरिवारा: सर्वोपचारै: पूजितास्तर्पिता: सन्तु।

अर्घ्यजल से मूल देवी को पूजा समर्पित करे। हसौ: बोलकर बीजमुद्रा प्रदर्शित करे। इसके बाद तीन बार तर्पण करे—ऐं आत्मतत्त्वाय स्वाहा। क्लीं विद्यातत्त्वाय स्वाहा। सौ: शिवतत्त्वाय स्वाहा।

नवम आवरण बिन्दु में—

ऐं ह्रीं श्रीं कएईलह्रीं हसकहलह्रीं सकलह्रीं श्रीमहात्रिपुरसुन्दरीनित्याश्रीपादुकां पूजयामि। तीन बार पूजन करे।

चक्र के आगे—सर्वानन्दमयवैन्दवचक्राय नम:।

कएईलह्रीं हसकहलह्रीं सकलह्रीं श्रीमहात्रिपुरसुन्दरीचक्रनायिकाश्रीपादुकां पूजयामि। इसके दाँयें भाग में योनिमुद्राश्रीपादुकां पूजयामि। बाँयें भाग में ऐं ह्रीं श्रीं मोक्षसिद्धिश्रीपादुकां पूजयामि।

शैवदर्शनाय नम:

कुलोड्डीश में कथन है कि मूल मन्त्र का उच्चारण करके महात्रिपुरसुन्दरी का पूजन देवता के रूप में करे। फिर इन्हीं का पूजन चक्रेश्वरी के रूप में करे। नवरत्नेश्वर का कथन है कि बौद्ध, ब्राह्म, सौर, वैष्णव, शैव, शाक्त—षड्दर्शन का पूजन यहाँ पर करना चाहिये। रुद्रयामल में भी लिखा है कि बौद्ध दर्शन के चार भेद हैं। ब्राह्म दर्शन के सोलह भेद हैं। शैव दर्शन के चौदह भेद हैं। सौर दर्शन के आठ भेद हैं। शाक्त के दश भेद हैं। इसलिये चतुरस्त्र में बौद्ध, षोड़श दल में ब्राह्म दर्शन, चतुर्दशार में शैव दर्शन, अष्टार में सौर दर्शन और दोनों दशारों में शाक्तदर्शन पूज्य है।

सर्वानन्दमये वैन्दवचक्रे परब्रह्मस्वरूपिणी परापरशक्तिमहात्रिपुरसुन्दरीसमस्तचक्र-नायिकासंवित्तिरूपचक्रनायिकाधिष्ठिते त्रैलोक्यमोहन-सर्वाशापरिपूरक-सर्वसंक्षोभकारक-सर्वसौभाग्यदायक-सर्वार्थसाधक-सर्वरक्षाकर-सर्वरोगहर-सर्वसिद्धिप्रद-सर्वानन्दमय-श्रीचक्रसमुन्मीलितसमस्तप्रकट-गुप्त-गुप्ततर-सम्प्रदाय-कुलकौलिनी-निगर्भ-रहस्य-अति-रहस्य-परापररहस्य-समस्तयोगिनीपरिवृतश्रीत्रिपुरा-त्रिपुरेशी-त्रिपुरसुन्दरी-त्रिपुरवासिनी-त्रिपुरा-श्रीत्रिपुरमालिनी-त्रिपुरसिद्धा-त्रिपुराम्बा-तत्तन्नायिकावन्दितचरणकमल-श्रीमहात्रिपुरसुन्दरी-नित्या-देवी सर्वचक्रेश्वरी-सर्वमन्त्रेश्वरी-सर्वविद्येश्वरी-सर्वपीठेश्वरी-सर्वकामेश्वरी-सर्वतत्त्वेश्वरी-सर्व-वीरेश्वरी-त्रैलोक्यमोहिनी-जगदुत्पत्तिमातृकासर्वचक्रमयी तत्तच्चक्रनायिकासहिता: समुद्रा: ससिद्धय: सायुधा: सवाहना: सपरिवारा: सर्वोपचारैः श्रीमहात्रिपुरसुन्दरी-परापरया सपर्यया पूजिता-स्तर्पिता: सन्तु। विशेषार्घ्य अक्षतकुसुमैः प्रधानदेव्या: वामहस्ते समर्पयेत्। तब नव मुद्राओं को दिखावे। तब अर्घ्यजल से तीन बार तर्पण करे—ऐं आत्मतत्त्वाय स्वाहा। क्लीं विद्या-तत्त्वाय स्वाहा। सौ: शिवतत्त्वाय स्वाहा। इसके बाद गन्ध-पुष्प-अक्षत-दूर्वा-माला इत्यादि प्रदान करे। ऐं बोलकर घंटा बजावे। मूल मन्त्र पढ़कर—

ॐ वनस्पतिरसो दिव्यो गन्धाढ्यो गन्ध उत्तम:।
आघ्रेय: सर्वदेवानां धूपोऽयं प्रतिगृह्यताम्।।

इस मन्त्र से धूप प्रदान करे। मूल मन्त्र बोलकर—

ॐ सुप्रकाशो महादीप: सर्वतस्तिमिरापह:।
सवाह्याभ्यन्तरं ज्योति: दीपोऽयं प्रतिगृह्यताम्।।

इस मन्त्र से दीपक-दान करे। मूल मन्त्र बोलकर नैवेद्य निवेदन करे—मूल मन्त्रोच्चारण-पूर्वक श्रीमहात्रिपुरसुन्दर्यै नैवेद्यं कल्पयामि नम: से नैवेद्य निवेदन करे। इसके बाद नित्य हवन करे। जैसे—भूमि का परिसिंचन करके मूल मन्त्रोच्चारण करके ॐ प्राणाय स्वाहा। ॐ अपानाय स्वाहा। ॐ समानाय स्वाहा। ॐ उदानाय स्वाहा। ॐ व्यानाय स्वाहा। षडंग मन्त्र से भी छ: आहुति प्रदान करे।

और भी—तब भूमि का परिसेचन करके नित्य हवन करे। मूल मन्त्र से पाँच आहुति क्रमश: देवे। प्राण-अपान-समान-उदान-व्यान के स्वरूप में पाँच आहुति देवे। षडंग मन्त्रों से छ: आहुति देवे। यही नित्य हवन होता है। अपने बाँयें भाग में त्रिकोण, वृत्त, चतुरस्र बनाकर 'ऐं ह्रीं श्रीं व्यापकमण्डलाय नम:' से मण्डल का पूजन करे। उस मण्डल पर अर्द्धान्न पूर्ण जल भाजन कलश स्थापित करे। कला-वर्ण मन्त्र का तीन बार पाठ करके वहाँ पर बलि प्रदान करे। बलि मन्त्र है—ॐ ह्रीं सर्वविघ्नकृद्भ्य: सर्वभूतेभ्य: हूं स्वाहा। यह बलि सामान्य अर्घ्योदक से प्रदान करे। तब तत्त्वमुद्रा प्रदर्शित करे।

इसके बाद वटुकादि को बलि प्रदान करे। ईशान-वायव्य-नैर्ऋत्य-आग्नेय कोणों में त्रिकोण वृत्त से मण्डल बनाकर उनमें क्रमश: इन मन्त्रों से बलि प्रदान करे—वां वटुकाय

नमः। यां योगिनीभ्यां नमः। गां गणपतये नमः। क्षां क्षेत्रपालाय नमः। तब पाद्यादि से पूजन करके उन द्रव्यपूर्ण पात्रों को निक्षिप्त करके बलि प्रदान करे। वटुक आदि के बलिमन्त्र निम्न प्रकार के हैं—

वटुक का बलिमन्त्र—एह्येहि देवीपुत्र वटुकनाथ कपिलजटाभारभास्वरत्रिनेत्रज्वालामुख सर्वविघ्नान् नाशय सर्वोपचारसहितं बलिं गृह्ण गृह्ण स्वाहा। वामांगुष्ठ-अनामिका-योग से मुद्रा दिखावे।

योगिनी बलिमन्त्र—

ऊर्ध्वं ब्रह्माण्डतो वा दिवि गगनतले भूतले निष्कले वा
पाताले वा तले वा पवनसलिलयोर्यत्र कुत्रस्थिता वा।
क्षेत्रे पीठोपपीठादिषु च कृतपदा धूपदीपादिकेन
प्रीता देव्यः सदा नः शुभबलिविधिना पान्तु वीरेन्द्रवन्द्याः।।

यां योगिनीभ्यां स्वाहा। सर्वयोगिनीभ्यः हुं फट् स्वाहा। वामहस्तांगुष्ठ-तर्जनी-मध्यमानामा से योन्याकार मुद्रा बनाकर दिखावे।

क्षेत्रपाल का बलिमन्त्र—क्षां क्षीं क्षूं क्षैं क्षौं क्षः क्षेत्रस्थाने क्षेत्रपाल-धूपादिसहितबलिं गृह्ण गृह्ण स्वाहा। वाम मुट्ठी से तर्जनी को सीधा करके मुद्रा दिखावे।

गणेश का बलि मन्त्र—गां गीं गं गणपतये वरवरद सर्वजनं मे वशमानय बलिं गृह्ण गृह्ण स्वाहा। बाँयीं मुट्ठी से मध्यमा को सीधी करके मुद्रा दिखावे। भैरवी विद्या में भी इन चार बलियों को देना चाहिये। सबके अन्त में सर्वमूल बलि देनी चाहिये।

तन्त्र में बलि का अधिकार—जो वटुकादिकों को बलि दिये विना चण्डिका का पूजन करता है, उसकी पूजा विफल होती है और देवी शाप देती है।

इसके बाद मूल देवी को आचमनीय आदि देकर सुगन्धित ताम्बूल प्रदान करे।

नीराजन—कांसे की थाली में कुंकुमादि से बालाचक्र बनाकर कर्पूरगर्भिणी बत्ती घीपूर्ण दीपकों में रखकर चक्र के आठ त्रिकोणों में आठ दीपकों को रक्खे। मध्य में पिष्टक से बने महादीपक को रक्खे। तब श्रीं ह्रीं ग्लूं स्लूं म्लूं प्लूं ल्लूं ह्रीं श्रीं मन्त्र से अर्चन करे। उस पात्र को पैरों से मस्तक तक दिखाकर नीराजन करे।

ज्ञानार्णव में कथन है कि आरार्तिक सब कुछ कामनासिद्धि के लिये करे। सोने-चाँदी-ताम्बे-कांसे के थाल में नवयोन्यात्मक मण्डल कुंकुम से बनाकर उसमें चन्द्राकार चरु रखकर उसमें मस्तक बनावे। वहाँ पर एक दीपक रखकर आठ कोनों में आठ दीपकों को रक्खे। यव, गेहूँ, मूँग के आटे, शक्कर मिलाकर दीपक बनावे। उन्हें घी से भरे। नवरत्नेश्वर से उसे अभिमन्त्रित करे। नवरत्नेश्वर में श्रीबीज श्रीं, पराबीज सौः, ग्सौः,

नमः। यां योगिनीभ्यां नमः। गां गणपतये नमः। क्षां क्षेत्रपालाय नमः। तब पाद्यादि से पूजन करके उन द्रव्यपूर्ण पात्रों को निक्षिप्त करके बलि प्रदान करे। वटुक आदि के बलिमन्त्र निम्न प्रकार के हैं—

वटुक का बलिमन्त्र—एह्येहि देवीपुत्र वटुकनाथ कपिलजटाभारभास्वरत्रिनेत्रज्वालामुख सर्वविघ्नान् नाशय सर्वोपचारसहितं बलिं गृह्ण गृह्ण स्वाहा। वामांगुष्ठ-अनामिका-योग से मुद्रा दिखावे।

योगिनी बलिमन्त्र—

ऊर्ध्वं ब्रह्माण्डतो वा दिवि गगनतले भूतले निष्कले वा
पाताले वा तले वा पवनसलिलयोर्यत्र कुत्रस्थिता वा।
क्षेत्रे पीठोपपीठादिषु च कृतपदा धूपदीपादिकेन
प्रीता देव्यः सदा नः शुभबलिविधिना पान्तु वीरेन्द्रवन्द्याः।।

यां योगिनीभ्यां स्वाहा। सर्वयोगिनीभ्यः हुं फट् स्वाहा। वामहस्तांगुष्ठ-तर्जनी-मध्यमानामा से योन्याकार मुद्रा बनाकर दिखावे।

क्षेत्रपाल का बलिमन्त्र—क्षां क्षीं क्षूं क्षैं क्षौं क्षः क्षेत्रस्थाने क्षेत्रपाल-धूपादिसहितबलिं गृह्ण गृह्ण स्वाहा। वाम मुट्ठी से तर्जनी को सीधा करके मुद्रा दिखावे।

गणेश का बलि मन्त्र—गां गीं गं गणपतये वरवरद सर्वजनं मे वशमानय बलिं गृह्ण गृह्ण स्वाहा। बाँयीं मुट्ठी से मध्यमा को सीधी करके मुद्रा दिखावे। भैरवी विद्या में भी इन चार बलियों को देना चाहिये। सबके अन्त में सर्वमूल बलि देनी चाहिये।

तन्त्र में बलि का अधिकार—जो वटुकादिकों को बलि दिये विना चण्डिका का पूजन करता है, उसकी पूजा विफल होती है और देवी शाप देती है।

इसके बाद मूल देवी को आचमनीय आदि देकर सुगन्धित ताम्बूल प्रदान करे।

नीराजन—कांसे की थाली में कुंकुमादि से बालाचक्र बनाकर कर्पूरगर्भिणी बत्ती घीपूर्ण दीपकों में रखकर चक्र के आठ त्रिकोणों में आठ दीपकों को रक्खे। मध्य में पिष्टक से बने महादीपक को रक्खे। तब श्रीं ह्रीं ग्लूं स्लूं म्लूं प्लूं ल्लूं ह्रीं श्रीं मन्त्र से अर्चन करे। उस पात्र को पैरों से मस्तक तक दिखाकर नीराजन करे।

ज्ञानार्णव में कथन है कि आरार्तिक सब कुछ कामनासिद्धि के लिये करे। सोने-चाँदी-ताम्बे-कांसे के थाल में नवयोन्यात्मक मण्डल कुंकुम से बनाकर उसमें चन्द्राकार चरु रखकर उसमें मस्तक बनावे। वहाँ पर एक दीपक रखकर आठ कोनों में आठ दीपकों को रक्खे। यव, गेहूँ, मूँग के आटे, शक्कर मिलाकर दीपक बनावे। उन्हें घी से भरे। नवरत्नेश्वर से उसे अभिमन्त्रित करे। नवरत्नेश्वर में श्रीबीज श्रीं, पराबीज सौः, ग्सौः,

म्ला:, लूं, सौ:, ग्सौ:, म्ला:, लूं—ये नव बीज होते हैं। इन्हीं बीजों को नवरत्नेश्वर कहते हैं।

तब मूल मन्त्र का उच्चारण करके 'समस्तचक्रचक्रेशि शुभे देवि नवात्मिके आरार्तिकमिदं देवि गृहाण मम सिद्धये' से आरती करे। चक्रमुद्रा प्रदर्शित करे। इसके बाद विसर्जन तक के सभी कर्म करे। इतनी ही श्रीविद्या है।

प्रचण्डचण्डिकामन्त्राः

प्रचण्डचण्डिकां वक्ष्ये सर्वकामफलप्रदाम् ।
यस्याः प्रसादमात्रेण सदाशिवो भवेन्नरः ॥
अपुत्रो लभते पुत्रमधनो धनवान् भवेत् ।
कवित्वञ्च सुपाण्डित्यं लभते नात्र संशयः ॥

विश्वसारे यामले च—

लक्ष्मीं लज्जां ततो मायां मात्रां द्वादशिकामपि ।
वज्रवैरोचनीये द्वे माये फट् स्वाहया युतः ॥
लक्ष्मीबीजं यदाद्यं स्यात्तदा श्रीः सर्वतोमुखी ।
लज्जाबीजेन चाद्येन वश्यतां यान्ति योषितः ॥
मायाबीजेन चाद्येन महापातकनाशनम् ।
मात्रां द्वादशिकां बीजमाद्यं स्यान्मुक्तिदायकम् ॥
भैरवोऽस्य ऋषिर्देवि सम्राट् छन्द उदीरितम् ।
छिन्नमस्ता स्मृता देवि बीजं कूर्चद्वयं पुनः ।
स्वाहा शक्तिरभीष्टार्थे विनियोग उदाहृतः ॥

अत्र लज्जापदं कामबीजपरम्। तथा च—

अत्र लज्जापदे देवि कामबीजं वितन्यते ।
महाकालमतं ज्ञेयं मन्त्रोद्धारं शुभावहम् ॥

पूर्वमायापदेति पाठे मायायाः पूर्वं लज्जाबीजं तस्मिन्नित्यर्थः। तथा च—
पूर्वमायापदेन लज्जाबीजमुच्यते; अन्यथा तापिन्यादिविरोधः । तथा च—

कामाद्यां वाग्भवाद्यां वा मायाद्यां वा जपेत् सुधीः ।
लक्ष्म्याद्यां वा जपेद्विद्यां चतुर्वर्गफलप्रदाम् ॥

अन्येषाञ्च मुनीनां मते सर्वत्र मायापदं कूर्चपरम्। तत्रैव—

वान्तं वह्निसमायुक्तं रतिविन्दुसमन्वितम् ।
लक्ष्मीबीजमिदं प्रोक्तं सर्वकामार्थसिद्धिदम् ॥

वामाक्षिवह्निसंयुक्तं विन्दुनादविभूषितम् ।
शिवबीजं महेशानि लज्जाबीजमुदाहृतम् ॥
ईशानमुद्धृत्य पुरारिबीजं सविन्दुकं नादविभूषितञ्च ।
सवामकर्णं परितः प्रकल्प्य मायां वदन्तीह मनीषिणस्ताम् ॥
द्वादशस्वरवर्णं स्यान्नादविन्दुविभूषितम् ।
वाग्भवं बीजमित्युक्तं सर्ववाक्यविशुद्धये ॥

इति मन्त्रचतुर्बीजव्याख्यानात्। अयन्तु समीचीनः। भैरवमते तु माया भुवनेश्वर्येव—

लक्ष्मीः प्रथमबीजेऽस्ति लज्जाबीजे मनोभवः ।
तृतीयेऽस्मिन् सदा देवी महापातकनाशिनी ॥
चतुर्थे तु गुणातीता मुक्तिविद्याप्रदायिका ।
वकारे वरुणः साक्षाज्जकारे तु सुराधिपः ॥
रेफे हुताशनो देवो वकारे वसुधाधिपः ।
ऐकारे त्रिपुरादेवी रेफे त्रिपुरसुन्दरी ।
त्रैलोक्यविजया देवि सदैवौकारसंस्थिता ॥
चकारे चन्द्रमा देवी नकारे हि विनायकः ।
ईकार कमला साक्षात् येकारे च सरस्वती ॥
मायायुग्मे सदा देवी प्रकृत्या सह सङ्गता ।
वैखरी चैव फट्कारे स्वाकारे कुसुमायुधः ।
हाकारे च रतिस्तिष्ठेदेवं मन्त्रसमुच्चयः ॥

इति व्याख्यानाच्च।

अथ पूजाप्रयोगः—प्रातःकृत्यादिकं कृत्वा मन्त्राचमनं कुर्यात्। यथा—

लक्ष्मीमायाकूर्चबीजैस्त्रिभिः पीत्वाम्बु साधकः ।
वाग्भवेनोष्ठौ सम्मृज्य मायाभ्याञ्च द्विरुन्मृजेत् ॥
कूर्चेन क्षालयेत् पाणी एभिर्मन्त्रैश्च विन्यसेत् ।
श्रीमायाकूर्चवाक्कामत्रिपुटाभगवर्णकैः ॥
कामकलाङ्कुशाभ्याञ्च वक्त्रनासाक्षिश्रोत्रयोः ।
नाभिहृन्मस्तकञ्चांसौ स्पृष्ट्वा शम्भुर्भवेत् क्षणात् ।
आचम्यैवं छिन्नमस्तां वत्सरात्तां प्रपश्यति ॥

प्रचण्डचण्डिका (छिन्नमस्ता) मन्त्र—जिसकी कृपा से मनुष्य सदाशिवत्व को प्राप्त करता है, पुत्रहीन व्यक्ति पुत्रवान और निर्धन धनवान होता है और जिसके अनुग्रह

से कवित्व तथा पांडित्य का लाभ होता है, उसी सर्वफलदायिनी प्रचण्डचण्डिका के मन्त्र का वर्णन करता हूँ। इन्हीं को छिन्न- मस्तिका भी कहते हैं।

विश्वसार और रुद्रयामल में वर्णन है कि श्री काम माया बिन्दुयुक्त द्वादशाक्षर ऐं वज्रवैरोचनीये मायाद्वय फट् स्वाहा को एकत्र करने पर जो मन्त्र बनता है, वह इस प्रकार का है—श्रीं क्लीं ह्रीं ऐं वज्रवैरोचनीये ह्रीं ह्रीं फट् स्वाहा।

उक्त मन्त्र के प्रारम्भ में यदि श्रीबीज रहेगा तो उससे सभी सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं। यदि आदि में कामबीज रहेगा तो उससे नारी वशीभूत होती है। आदि में यदि मायाबीज रहेगा तो उससे सभी पाप दूर होंगे। यदि प्रारम्भ में द्वादश स्वर ऐं रहेगा तो वह मन्त्र मोक्षदायक होगा। इस प्रकार मन्त्र के चार रूप क्रमशः इस प्रकार के होते हैं—

१. श्रीं क्लीं ह्रीं ऐं वज्रवैरोचनीये ह्रीं ह्रीं फट् स्वाहा।
२. क्लीं श्री ह्रीं ऐं वज्रवैरोचनीये ह्रीं ह्रीं फट् स्वाहा।
३. ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं वज्रवैरोचनीये ह्रीं ह्रीं फट् स्वाहा।
४. ऐं श्रीं क्लीं ह्रीं वज्रवैरोचनीये ह्रीं ह्रीं फट् स्वाहा।

'महाकालसंहिता' 'तापिनी' और 'भैरवतन्त्र' के मतों से मन्त्रार्थ यह है कि श्रीं बीज से लक्ष्मी का, क्लीं बीज से कामदेव का, ह्रीं बीज से महापातकनाशिनी देवी का, ऐं बीज से त्रिगुणातीता भुक्ति-मुक्तिप्रदायिनी वाग्देवी का, व से वरुण का, ऐ से त्रिपुरा देवी का, र से त्रिपुरभैरवी का, ओ से त्रैलोक्यविजया का, च से चन्द्रमा का, न से गणेश का, ई से कमला का, ये से सरस्वती का, ह्रीं बीजद्वय से प्रकृति संगता देवी का, फट् से वैखरी शक्ति का, स्वा से कामदेव का और हा से रति का बोध होता है।

इनकी पूजनविधि इस प्रकार है—इस ग्रन्थ के द्वितीय परिच्छेद में वर्णित सामान्य पूजा पद्धति से प्रातःकृत्यादि करे। तब श्रीं ह्रीं हूं से तीन बार आचमन करे। ऐं से दोनों होठों को मार्जन करे। ह्रीं से होठों को शुद्ध करे। हूं से दोनों हाथ साफ करे। तब मन्त्रवर्णन्यास करे।

श्रीं से मुख का, ह्रीं से दक्ष नासा का, हूं से वाम नासा का, ऐं से दक्ष नेत्र का, क्लीं से वामनेत्र का स्पर्श करे। श्रीं ह्रीं क्लीं से दक्ष कर्ण का, ऐं से वाम कर्ण का, ॐ से नाभि का, क्लीं से हृदय का, ईं से मस्तक का और क्रीं से दोनों कंधो का स्पर्श करे। आचमन की इस प्रक्रिया से साधक शिवस्वरूप होता है। उक्त प्रकार से आचमन करके छिन्नमस्ता देवी की आराधना करने से एक वर्ष के अन्दर देवी का दर्शन होता है।

ततः प्राणायामान्तं विधाय षोढान्यासं कुर्यात्—

मन्त्रषोढां ततः कुर्यात् त्रैलोक्यवशकारिणीम् ।
श्रीबालात्रिपुटायोनिप्रासादप्रणवैस्तथा ॥

कालीवध्वङ्कुशैः कामकलाकूर्चास्त्रकैः क्रमात् ।
षोडशीमनुवर्णैश्च　　　पृथगष्टादशाक्षरैः ॥
एभिर्बीजैर्मातृकार्णान् स्वेषु स्थानेषु विन्यसेत् ।
एषा ब्रह्मस्वरूपा हि बीजषोढा प्रकीर्तिता ॥
अस्याश्च न्यसनात्सर्वे वज्रदेहा भवन्ति हि ।
सर्वैश्वर्ययुतास्ते हि जीवन्मुक्ता दशाब्दतः ॥

ततः ऋष्यादिन्यासं कुर्यात्। अस्य मन्त्रस्य भैरव-ऋषिः सम्राट् छन्दश्छिन्नमस्ता देवता हूङ्कारद्वयं बीजं स्वाहा शक्तिरभीष्टार्थसिद्धये विनियोगः।

यथा—शिरसि भैरवाय ऋषये नमः। मुखे सम्राट्छन्दसे नमः। हृदि छिन्नमस्तायै देवतायै नमः। गुह्ये हूं हूं बीजाय नमः। पादयोः स्वाहा शक्तये नमः।

ततः कराङ्गन्यासौ—ॐ आं खड्गाय हृदयाय स्वाहा इति कनीयसि। ॐ ईं सुखड्गाय शिरसे स्वाहा इति अनामापवित्रांगुल्योः। ॐ ऊं सुवज्राय शिखायै स्वाहा इति मध्यमयोः। ॐ ऐं पाशाय कवचाय स्वाहा इति तर्जन्योः। ॐ औं क्रों नेत्रत्रयाय स्वाहा इति अंगुष्ठयोः। ॐ अः सुरक्षासुरक्षायास्त्राय फट् इति करतलकरपृष्ठयोः। एवं हृदयादिषु। तदुक्तं भैरवतन्त्रे—

उच्चरेत् पूर्वमाकारं विन्दुलाञ्छितमस्तकम् ।
खड्गाय हृदयायेति स्वाहायुक्तं कनीयसि ॥
ईकारञ्च ततो देवि चन्द्रकोटिसमप्रभम् ।
सुखड्गाय ततो वाच्यं शिरसे तदनन्तरम् ॥
स्वाहायुक्तं ततो वाच्यं पवित्रांगुलिसंयुतम् ।
ऊकारञ्च ततो वाच्यं विन्दुलाञ्छितमस्तकम् ॥
सुवज्राय ततो वाच्यं शिखायै तदनन्तरम् ।
स्वाहान्तं मध्यमायाञ्च विन्यसेत्तदनन्तरम् ॥
मात्रां द्वादशिकां देवीं विन्यसेच्च ततः परम् ।
पाशायेति समुच्चार्य प्रवदेत् कवचाय च ॥
स्वाहान्तं विन्यसेन्मन्त्रं तर्जन्यां तदनन्तरम् ।
औङ्कारञ्च ततो देवि चाङ्कुशं तदनन्तरम् ॥
नेत्रत्रयाय स्वाहान्तमङ्गुष्ठे करयोर्द्वयोः ।
अकारञ्च विसर्गान्तं सुरक्षाक्षरसंयुतम् ॥
असुरक्षाय संयुक्तमस्त्रायेति ततः परम् ।
कडक्षरसमायुक्तं विन्यसेत् करयोर्द्वयोः ॥

अङ्गन्यासस्य प्रमाणम्—

हृदि मूर्ध्नि शिखायाञ्च कवचे नेत्रमण्डले ।
यावदस्त्रं चतुर्दिक्षु विदिक्षु च यथाक्रमम् ॥

त्रिशक्तितन्त्रे भैरववाक्यम्—

उच्चरेत्प्रणवं पूर्वमाकारं विन्दुसंयुतम् ।

इत्यादिवाक्यात्कराङ्गेषु प्रणवसंवलितो न्यासः । ततो मूलेन मस्तकादिपादपर्यन्तं पादादिमस्तकान्तं वारत्रयं न्यसेत्। ततो ध्यानम्—

स्वनाभौ नीरजं ध्यायेच्छुद्धं विकसितं सितम् ।
तत्पद्मकोषमध्ये तु मण्डलं चण्डरोचिषः ॥
जवाकुसुमसङ्काशं रक्तबन्धूकसन्निभम् ।
रजःसत्त्वतमोरेखायोनिमण्डलमण्डितम् ॥
मध्ये तु तां महादेवीं सूर्यकोटिसमप्रभाम् ।
छिन्नमस्तां करे वामे धारयन्तीं स्वमस्तकम् ॥
प्रसारितमुखीं भीमां लेलिहानोग्रजिह्विकाम् ।
पिबन्तीं रौधिरीं धारां निजकण्ठविनिर्गताम् ॥
विकीर्णकेशपाशाञ्च नानापुष्पसमन्विताम् ।
दक्षिणे च करे कर्त्रीं मुण्डमालाविभूषिताम् ॥
दिगम्बरीं महाघोरां प्रत्यालीढपदे स्थिताम् ।
अस्थिमालाधरां देवीं नागयज्ञोपवीतिनीम् ॥
रतिकामोपविष्टाञ्च सदा ध्यायन्ति मन्त्रिणः ।
सदा षोडशवर्षीयां पीनोन्नतपयोधराम् ॥
विपरीतरतासक्तौ ध्यायेद्रतिमनोभवौ ।
डाकिनीवर्णिनीयुक्तां वामदक्षिणयोगतः ॥
देवीगलोच्छलद्रक्तधारापानं प्रकुर्वतीम् ।
वर्णिनीं लोहितां सौम्यां मुक्तकेशीं दिगम्बरीम् ॥
कपालकर्त्तृकाहस्तां वामदक्षिणयोगतः ।
नागयज्ञोपवीताढ्यां ज्वलत्तेजोमयीमिव ॥
प्रत्यालीढपदां दिव्यां नानालङ्कारभूषिताम् ।
सदा द्वादशवर्षीयामस्थिमालाविभूषिताम् ॥
डाकिनीं वामपार्श्वस्थां कल्पसूर्यानलोपमाम् ।
विद्युज्जटां त्रिनयनां दन्तपंक्तिबलाकिनीम् ॥

दंष्ट्राकरालवदनां पीनोन्नतपयोधराम् ।
महादेवीं महाघोरां मुक्तकेशीं दिगम्बरीम् ॥
लेलिहानमहाजिह्वां मुण्डमालाविभूषिताम् ।
कपालकर्तृकाहस्तां वामदक्षिणयोगतः ॥
देवीगलोच्छलद्रक्तधारापानं प्रकुर्वीतम् ।
करस्थितकपालेन भीषणेनातिभीषणाम् ।
आभ्यां निषेव्यमाणां तां ध्यायेद्देवीं विचक्षणः ॥

पिबन्तीमिति तेन मुखेनेति शेषः। तथा च—

स्वमस्तकं सखर्परं रक्तधाराभिपूरितम् ।
ललज्जिह्वं महाभीमं धृतं वामभुजे तथा ॥

इति भैरवतन्त्रे पाठः । ध्यानस्यावश्यकत्वमाह तन्त्रे—

प्रचण्डचण्डिकामेवमध्यात्वा यस्तु पूजयेत् ।
सद्यस्तस्य शिरश्छित्त्वा देवी पिबति शोणितम् ॥

पूजाप्रयोग—पूर्वोक्त विधि से प्राणायाम तक की क्रिया करके षोढ़ा न्यास करे— श्रीं ऐं क्लीं सौः श्रीं ह्रीं क्लीं, ऐं हौं ॐ क्रीं क्रीं क्रीं ईं हुं फट् और षोडशी विद्या के अष्टादशाक्षर मन्त्र—ऐं एईकलह्रीं क्लीं हसकहलह्रीं सौः सकलह्रीं दोनों मिलाकर १६ + १८ = ३४ बीजों से प्रत्येक मातृकावर्ण अ आ······ल क्ष ५१ वर्ण को सम्पुटित करके मातृका वर्ण के स्थान में न्यास करे। इस न्यास का नाम बीज षोढ़ा है। यह ब्रह्म- स्वरूप है। इस न्यास से साधक का शरीर वज्र के समान हो जाता है। दस वर्ष तक इस न्यास को करने से साधक सभी ऐश्वर्यों से युक्त होकर जीवन्मुक्त हो जाता है। यह न्यास इस प्रकार से होता है—

(श्री) श्रीं अं श्रीं ललाटे श्रीं आं श्रीं मुखे······श्रीं क्षं श्रीं हृदयादिमूर्धान्तम्। ५१ वर्ण
(ऐ) ऐं अं ऐं ललाटे ऐं आं ऐं मुखे······ऐं क्षं ऐं हृदयादिमूर्धान्तम्। ५१ वर्ण
(क्लीं) क्लीं अं क्लीं ललाटे क्लीं आं क्लीं मुखे······क्लीं क्षं क्लीं हृदयादिमूर्धान्तम्। ५१ वर्ण
(सौः) सौः अं सौः ललाटे सौः आं सौः मुखे······सौः क्ष सौः हृदयादिमूर्धान्तम्। ५१ वर्ण
(श्रीं) श्रीं अं श्रीं ललाटे श्रीं आं श्रीं मुखेश्रीं क्षं श्रीं हृदयादिमूर्धान्तम्। ५१ वर्ण
(ह्रीं) ह्रीं अं ह्रीं ललाटे ह्रीं आं ह्रीं मुखे······ह्रीं क्षं ह्रीं हृदयादिमूर्धान्तम्। ५१ वर्ण
(क्लीं) क्लीं अं क्लीं ललाटे क्लीं आं क्लीं मुखे······क्लीं क्षं क्लीं हृदयादिमूर्धान्तम्। ५१ वर्ण

इसी प्रकार (ऐं) (हौं) (ॐ) (क्रीं) (क्रीं) (क्रीं) (ई) (हुं) (फट्) (ऐ) (ए) (ई) (क) (ल) (ह्रीं) (क्लीं) (ह) (स) (क) (ह) (ल) (ह्री) (सौ:) (स) (क) (ल) (ह्रीं) से इक्यावन मातृकावर्णों को पुटित करके न्यास करे।

विनियोग—अस्य मन्त्रस्य भैरवऋषि: सम्राट छन्द: छिन्नमस्ता देवता हूं हूं बीजम्, स्वाहा शक्ति अभीष्टार्थसिद्धये विनियोग:।

ऋष्यादि न्यास—शिरसि भैरवाय ऋषये नम:। मुखे सम्राट् छन्दसे नम:। हृदि छिन्नमस्तायै देवतायै नम:। गुह्ये हूं हूं बीजाय नम:। पादयो: स्वाहाशक्तये नम:।

करांग न्यास—ॐ आं खड्गाय हृदयाय स्वाहा कनिष्ठयो:। ॐ ईं सुखड्गाय शिरसे स्वाहा अनामापवित्रांगुल्यो:। ॐ ऊं सुवज्राय शिखायै स्वाहा मध्यमयो:। ॐ ऐं पाशाय कवचाय स्वाहा तर्जन्यो:। ॐ औं क्रों नेत्रत्रयाय स्वाहा अंगुष्ठयो:। ॐ अ: सुरक्षाऽसुरक्षायास्त्राय फट् करतलकरपृष्ठयो:। इसी क्रम से हृदय, मस्तक, शिखा, कवच, नेत्र और अस्त्र में न्यास करे। भैरवतन्त्र में भी इसी प्रकार के न्यास का वर्णन है। त्रिशक्तितन्त्र में भी भैरवकथन से इसी प्रकार के न्यास का समर्थन होता है। इसके बाद मूल मन्त्र से मस्तक से पैरों तक और पैरों से मस्तक तक तीन बार व्यापक न्यास करे। तब निम्नवत् ध्यान करे—

अपनी नाभि में अर्द्ध विकसित श्वेत कमल की कल्पना करे। इस कमल के कोष के मध्य में अड़हुल और बन्धूकपुष्पों के समान लाल रंग के रज-सत्त्व-तमसंज्ञक तीन रेखारूप योनिमण्डल में सुशोभित सूर्यमण्डल की भावना करे। इसी मण्डल के मध्य में कोटि सूर्यों की प्रभा वाली महादेवी छिन्नमस्ता विराजमान हैं। उनके बाँयें हाथ में उनका कटा हुआ मस्तक है। उनका मुख खुला हुआ भयावना है। भयानक जीभ से बार-बार ओठों को चाट रही हैं। अपने कण्ठ से निकलती हुई धारा को पी रही हैं। केश बिखरे हुए हैं और विविध पुष्पों से सज्जित हैं। दाँयें हाथ में कैंची और गले में मुण्डमाला है। नग्न हैं, आकृति डरावनी है। दाहिना पैर कुछ आगे है और बाँयाँ पैर कुछ पीछे है। हड्डियों की माला और साँपों का यज्ञोपवीत है। विपरीत रति में आसक्त रति काम के ऊपर स्थित हैं। दोनों स्तन स्थूल और उन्नत हैं। उनकी बाँईं और दाँईं ओर डाकिनी और वर्णिनी नाम की दो नायिकायें हैं। देवी के गले से निकलती हुई रक्तधार को वे भी पी रही हैं।

वर्णिनी की आकृति सौम्य, वर्ण लाल और केश खुले हुए हैं। यह भी नंगी हैं। बाँयें हाथ में नरमुण्ड और दाँयें हाथ में कैंची है। गले में साँपों का यज्ञोपवीत है। जाज्वल्यमान तेज से उनका स्वरूप पूर्ण है। इनका बाँयाँ पैर कुछ पीछे है। ये विविध आभूषणों और हड्डियों की माला से सज्जित षोडश वर्षीया हैं।

देवी के बाईं ओर डाकिनी है। वह प्रलयकालीन द्वादश सूर्यों और अग्नि के समान

उज्ज्वल वर्ण की है। इसका जटाजूट बिजली के समान चमकदार है। इसके तीन नेत्र हैं। दाँत बहुत ही शुभ्र हैं। खुले मुख में कराल दाँत हैं। इससे मुख बड़ा भयानक लग रहा है। दोनों स्तन बहुत स्थूल और उन्नत हैं। आकृति बड़ी भयंकर है। केश विखरे हुए हैं। शरीर नग्न है। लोल जीभ बहुत बड़ी है। मुण्डमाला गले में है। बाँयें हाथ में नरमुण्ड और दाँयें हाथ में कैंची है। देवी के गले से निकलने वाली रक्तधार का पान यह भी कर रही है। डाकिनी और वर्णिनी दोनों देवी छिन्नमस्ता की सेवा करती हैं। तन्त्र में वर्णित है कि ध्यान के विना जो छिन्नमस्ता का पूजन करता है, उसका शिर काट कर देवी रक्तपान करती हैं।

अस्याः पूजायन्त्रं तत्रैव—

सितं कुर्याद्दलं पूर्वमाग्नेय्यां रक्तवर्णकम् ।
याम्यं कृष्णमतः पीतं शुक्लं रक्तं सितासितम् ॥
ततः पीतां प्रकुर्वीत कर्णिकां तस्य मध्यगाम् ।
तन्मध्ये तु प्रकुर्वीत मण्डलं चण्डरोचिषः ।
रजःसत्त्वतमोरेखा रक्तशुक्लासिताः क्रमात् ॥
मायायुग्मं ततो न्यस्य फडक्षरसमन्वितम् ।
वाह्यं तस्य च चक्रस्य कुर्यात्प्राकारवेष्टितम् ॥
पूर्वं रक्तं ततः कृष्णं सितं पीतं यथाक्रमात् ।
चतुर्द्वारसमायुक्तं क्षेत्रपालैरधिष्ठितम् ॥

इत्यस्याः पूजायन्त्रम्। अथवा—

त्रिकोणं विन्यसेदादौ तन्मध्ये मण्डलत्रयम् ।
तन्मध्ये विन्यसेद्योनिं द्वारत्रयसमन्वितम् ॥
बहिरष्टदलं पद्मं भूविम्बत्रितयं पुनः ।
कूर्चजीजं लिखेन्मध्ये त्रिकोणे फट्समन्वितम् ॥

यथा च—

अपरञ्च प्रवक्ष्यामि शृणु देवि यथाक्रमम् ।
स्वनाभौ नीरजं ध्यायेद्भानुमण्डलसन्निभम् ॥
योनिचक्रसमायुक्तां गुणत्रितयसंश्रिताम् ।
तत्र मध्ये महादेवीं छिन्नमस्तां स्मरेद्यतिः ॥
प्रदीपकलिकाकारामद्वितीयव्यवस्थिताम् ।
योनिमुद्रासमायुक्तां हृदयस्थितलोचनाम् ।
ध्येयमेतद् यतीनाञ्च गृहस्थानं निशामय ॥

यथा—

अन्तरे स्वशरीरस्य नाभिनीरजसङ्गताम् ।
निर्लेपां निर्गुणां सूक्ष्मां बालचन्द्रसमप्रभाम् ॥
समाधिनात्रगम्यान्तु गुणत्रितयवेष्टिताम् ।
कलातीतां गुणातीतां मुक्तिमात्रप्रदायिनीम् ॥

एवं ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्य तारिणीवच्छङ्खस्थापनं कुर्यात्।

पूजनयन्त्र—पहले अष्टदल पद्म बनावे। पूर्व दल श्वेत, आग्नेय दल लाल, दक्षिण दल काला, नैर्ऋत्य दल पीला, पश्चिम दल श्वेत, वायव्य दल लाल, उत्तर दल श्वेत और ईशान दल काला बनावे। मध्य कर्णिका को पीला बनावे। कर्णिकामध्य में सूर्यमण्डल बनावे । सत्त्व-रज-तमोगुणात्मक श्वेत, लाल और काले तीन रेखाओं से त्रिकोण अंकित करे। उसके मध्य में 'ह्रीं ह्रीं फट्' मन्त्र लिखे। इस चक्र के बाहर प्राकार बनाकर पूर्वादि चारो दिशाओं में क्रमश: लाल, काले, श्वेत और पीले रंग के चार दरवाजों की रचना करे। द्वारदेश में क्षेत्रपालगण अधिष्ठित रहते हैं।

प्रचण्डचण्डिका पूजनयन्त्र (१)
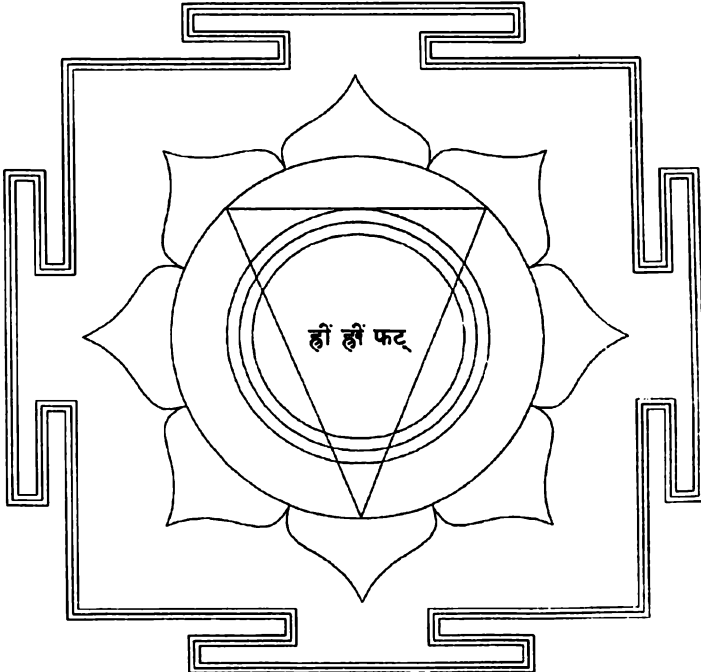
दूसरे प्रकार के यन्त्र का रूप निम्नांकित होता है। पहले त्रिकोण बनावे। उसके मध्य में मण्डलाकार तीन रेखाएँ खींचे। इस मण्डल के मध्य में तीन द्वारों वाला त्रिकोण बनावे। त्रिकोण के बाहर अष्टदल बनावे। उसके बाहर चार द्वारों वाले तीन भूपुर बनावे, त्रिकोण के मध्य में हूं फट् लिखे।
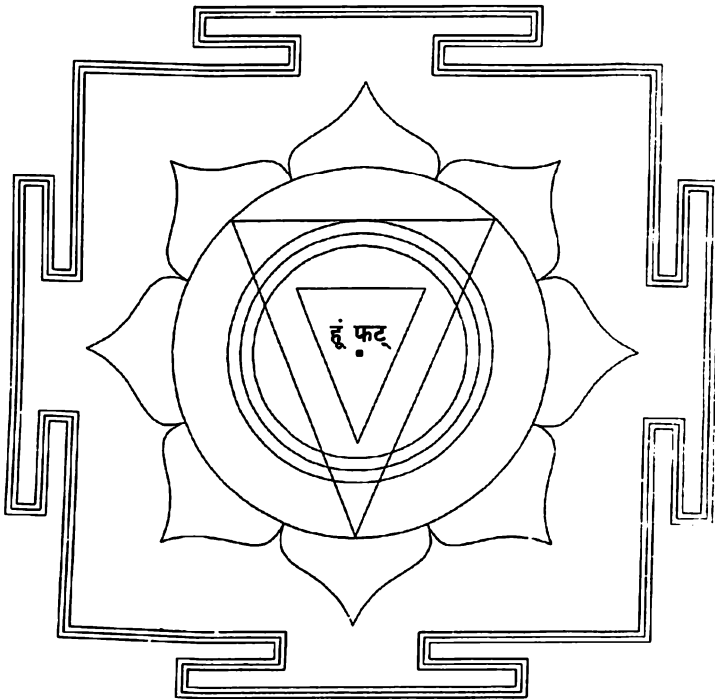
यतिगण उक्त मण्डल के मध्य में छिन्नमस्ता देवी का ध्यान करते हैं कि देवी प्रदीपकलिका आकृति की हैं। अद्वितीया योनिमुद्रा से युक्त हैं। इनके नेत्र हृदय प्रदेश में स्थित हैं।

गृहस्थों के लिये ध्यान दूसरे प्रकार का है। देवी अपने शरीर के मध्य में नाभिपद्म मणिपुर में स्थित हैं। निर्लिप्ता, निर्गुणा, सूक्ष्मा, बालचन्द्र के समान प्रभा वाली हैं। सत-रज-तम तीनों गुणों से वेष्टित कलानीता त्रिगुणातीत हैं। मोक्षदात्री हैं। यह केवल समाधि में ही ज्ञेय हैं। सामान्य दृष्टि से इसे नहीं समझा जा सकता है।

उपरोक्त प्रकार का ध्यान करके मानसोपचारों से पूजा करे। फिर तारा देवी की पूजा पद्धति से शङ्ख स्थापित करे।

ततः पीठपूजा—आधारशक्तये, प्रकृतये, कूर्माय, अनन्ताय, पृथिव्यै, क्षीरसमुद्राय, रत्नद्वीपाय, कल्पवृक्षाय; तदधः स्वर्णसिंहासनाय, आनन्दकन्दाय, संविन्नालाय, सर्वतत्त्वात्मकपद्माय, सं सत्त्वाय, रं रजसे, तं तमसे, आं आत्मने, अं अन्तरात्मने, पं परमात्मने, ह्रीं ज्ञानात्मने। नमः सर्वत्र। पद्ममध्ये रतिकामाभ्याम्। भैरवमते तु—

आधारशक्तिं कूर्मञ्च नागराजमतःपरम्।
पद्मनालञ्च पद्मञ्च पूजयेन्मन्त्रविन्नरः॥
मण्डलं चतुरस्रञ्च रजः सत्त्वं तमस्तथा।
रतिकामौ च सम्पूज्य शक्तिपूजा समाचरेत्॥ इति।

रतिकामोपरि वज्रवैरोचनीये देहि देहि एहि एहि गृह्ण गृह्ण स्वाहा मम सिद्धिं देहि देहि मम शत्रून् मारय मारय करालिके हुं फट् स्वाहा इति पीठमन्त्रः। सर्वत्र प्रणवादिनमोऽन्तेन पूजयेत्। ततः पुनर्ध्यात्वा आवाहयेत्।

यथा—सर्वसिद्धिवर्णिनीये सर्वसिद्धिडाकिनीये वज्रवैरोचनीये इहावह पुनस्तन्मन्त्रमुच्चार्य इह तिष्ठ तिष्ठ इह सन्निधेहि इह सन्निरुध्यस्व इत्यनेनावाह्य आं ह्रीं क्रों हंसः इत्यनेन प्राणप्रतिष्ठां कृत्वा ॐ आं खड्गाय हृदयाय स्वाहा इत्यादिना षडङ्गं विन्यस्य यथाशक्ति पूजां कृत्वा बलिं दद्यात्। यथा—

वज्रवैरोचनीये देहि देहि एहि एहि गृह्ण गृह्ण इमं बलिं मम सिद्धिं देहि देहि मम शत्रून् मारय मारय करालिके हुं फट् स्वाहा इति मन्त्रेण। ततो देव्या दक्षिणे वर्णिन्यै नमः। वामे ॐ डाकिन्यै नमः। ततो देव्यङ्गे षडङ्गं सम्पूज्य, दक्षिणे ॐ शङ्खनिधये नमः, वामे ॐ पद्मनिधये नमः। पूर्वादिदिक्षु लक्ष्मीं लज्जां मायां वाणीञ्च पूजयेत्। विदिक्षु ब्रह्मविष्णुरुद्रेश्वरान्। मध्ये सदाशिवम्। सर्वत्र प्रणवादिनमोऽन्तेन पूजयेत्। ततः पञ्चपुष्पाञ्जलीन् दत्त्वा आवरणान् पूजयेत्। अग्नीशासुरवायुषु मध्ये दिक्षु च ॐ आं खड्गाय हृदयाय स्वाहा इत्यादिना षडङ्गानि सम्पूज्य, अष्टपत्रेषु पूर्वादिक्रमेण ॐ ह्रीं काल्यै नमः। एवं वर्णिन्यै डाकिन्यै भैरव्यै महाभैरव्यै इन्द्राक्ष्यै पिङ्गाक्ष्यै संहारिण्यै। सर्वत्रैव प्रणवादिनमोऽन्तेन पूजयेत्। यथा—

एकां नामाभिधां कालीं वर्णिनीं डाकिनीं तथा।
भैरवीञ्च महापूर्वां भैरवीं तदनन्तरम्॥
इन्द्राक्षीञ्च सपिङ्गाक्षीं ततः संहारकारिणीम्।
पूर्वादिके दले पूज्याः शक्तयश्च यथाक्रमम्।
प्रणवादिनमोऽन्तेन लज्जाबीजं समुच्चरन्॥

पद्ममध्ये हुं फट् नमः। स्वाहायै नमः। देव्या दक्षिणे सम्राट्छन्दसे नमः। देव्या उत्तरे सर्ववर्णेभ्यो नमः। पुनर्दक्षिणे बीजशक्तिभ्यां नमः। पत्राग्रेषु पूर्वादिक्रमेण ब्राह्म्यै माहेश्वर्यै कौमार्यै वैष्णव्यै वाराह्यै इन्द्राण्यै चामुण्डायै महालक्ष्म्यै। सर्वत्र प्रणवादिनमोऽन्तेन पूजयेत्। ततश्चतुर्दिक्षु द्वारेषु ॐ करालाय नमः। ॐ विकरालाय; एवं अतिकरालाय महाकरालाय। यथा भैरवीये—

पूर्वद्वारे करालञ्च विकरालञ्च दक्षिणे।
पश्चिमेऽतिकरालञ्च महाकरालमुत्तरे॥

ततो धूपादिविसर्जनान्तं कर्म समापयेत्। विजसर्जने त्वयं विशेषः— संहारमुद्रां प्रदर्श्य अञ्जलावारोप्य वामनासापुटेन—

योनिमुद्रासमारूढां प्रदीपकलिकोज्ज्वलाम्।
कृष्णपक्षे विधुमिव क्रमेण क्षीणतां गताम्।
इमं मन्त्रं समुच्चार्य चण्डरश्मौ निवेशयेत्॥

मन्त्रस्तु—

उत्तरे शिखरे देवि भूम्यां पर्वतवासिनी।
ब्रह्मयोनिसमुत्पन्ने गच्छ देवि ममान्तरम्॥

अस्य पुरश्चरणं लक्षजपः सिद्धविद्यात्वात्।

बलिदाने तु भैरवीये—

रात्रौ बलिः प्रदातव्यो मत्स्यमांससुरादिभिः।
अथवा मधुपानाद्यैर्मधुरैर्विभवक्रमैः॥

मन्त्रस्तु—

उच्चरेत्प्रणवं पूर्वं सर्वसिद्धिप्रदेऽन्वितम्।
वर्णिनीये ततो वाच्यं सर्वसिद्धिप्रदे ततः॥
डाकिनीये ततो वाच्यं देवीनाम ततः परम्।
एह्येहीति ततो वाच्यम् इमं बलिमनन्तरम्॥
गृह्ण गृह्ण ततः प्रोक्त्वा मम सिद्धिमनन्तरम्।
देहि देहीति माये च ततः फट् स्वाहया युतः।
बलिमन्त्रः समाख्यातः पूजितोऽयं सुरेश्वरी॥ इति।

शंख-स्थापन के पश्चात् इस प्रकार पीठ पूजा करे—ॐ आधारशक्तये नमः। ॐ प्रकृतये नमः। ॐ कूर्माय नमः। ॐ अनन्ताय नमः। ॐ पृथिव्यै नमः। ॐ क्षीरसमुद्राय नमः। ॐ रत्नद्वीपाय नमः। ॐ कल्पवृक्षाय नमः। ॐ स्वर्णसिंहासनाय नमः। ॐ

आनन्दकन्दाय नम:। ॐ संविन्नालाय नम:। ॐ सर्वतत्त्वात्मकपद्माय नम:। ॐ सं सत्त्वाय नम:। ॐ रं रजसे नम:। ॐ तं तमसे नम:। ॐ आं आत्मने नम:। ॐ अं अन्तरात्मने नम:। ॐ पं परमात्मने नम:। ॐ ह्रीं ज्ञानात्मने नम:। पद्ममध्ये ॐ रतिकामाभ्यां नम:।

भैरव के मत से आधारशक्ति, कूर्म, नागराज, पद्मनाल, पद्ममण्डल, चतुरस्र, रज, सत्व, तम, रति, काम की पूजा करके शक्तिपूजा करे। रति काम के ऊपर इस मन्त्र से पूजा करे—वज्रवैरोचनीये देहि देहि एहि एहि गृह्ण गृह्ण स्वाहा मम सिद्धिं देहि देहि मम शत्रून् मारय मारय करालिके हुं फट् स्वाहा।

इसके बाद पुन: ध्यान करके निम्न मन्त्र से आवाहन करे—सर्वसिद्धिवर्णनीये, सर्वसिद्धिडाकिनीये वज्रवैरोचनीये इहावह। सर्वसिद्धिवर्णनीये सर्वसिद्धिडाकिनीये वज्रवैरोचनीये इह तिष्ठ इह तिष्ठ। इह सन्निधेहि, इह सन्निरुद्धस्व। इनके पहले भी वर्णिनी डाकिनी वज्रवैरोचनीये आदि, इसके बाद आं ह्रीं कों हंस: से प्राणप्रतिष्ठा करे। इसके बाद षडंग पूजन करे।

ॐ आं खड्गाय हृदयाय स्वाहा। ॐ ईं सुखड्गाय शिरसे स्वाहा। ॐ ऊं सुवज्राय शिखायै स्वाहा। ॐ ऐं पाशाय कवचाय हुं। ॐ औं अंकुशाय नेत्रत्रयाय वौषट्। ॐ अ: सुरक्षाऽसुरक्षाय अस्त्राय फट्। तब यथाशक्ति उपचारों से पूजा करे। अन्त में निम्न मन्त्र से बलि प्रदान करे—वज्रवैरोचनीये देहि देहि ऐहि ऐहि गृह्ण गृह्ण इमं बलिं मम सिद्धिं देहि देहि शत्रून् मारय मारय करालिके हुं फट् स्वाहा।

तब देवी के दाहिनी ओर ॐ वर्णिन्यै स्वाहा से और बाँईं ओर ॐ डाकिन्यै नम: से पूजा करे। तब देवी के अंग में षडंग पूजा करे। दाहिनी ओर ॐ शंखनिधये नम: से और बाँईं ओर ॐ पद्मनिधये नम: से पूजा करे।

अष्टदल में पूर्वादि क्रम से पूजा करे—ॐ लक्ष्म्यै नम:। ॐ लज्जायै नम:। ॐ मायायै नम:। ॐ वाण्यै नम:। कोणदलों में ॐ ब्रह्मणे नम:। ॐ विष्णवे नम:। ॐ रुद्राय नम:। ॐ ईश्वराय नम:। मध्य में ॐ सदाशिवाय नम:। तब पाँच पुष्पाञ्जलियाँ देकर आवरणपूजा करे।

प्रथम आवरण—ॐ आं खड्गाय हृदयाय नम:। ॐ ईं सुखड्गाय शिरसे स्वाहा। ॐ ऊं वज्राय शिखायै वषट्। ॐ ऐं पाशाय कवचाय हुं। ॐ औं अंकुशाय नेत्रत्रयाय वौषट्। ॐ अ: सुरक्षा असुरक्षाय अस्त्राय फट्।

द्वितीय आवरण—अष्टदल में पूर्वादि क्रम से ॐ ह्रीं काल्यै नम:। ॐ ह्रीं वर्णिन्यै नम:। ॐ ह्रीं डाकिन्यै नम:। ॐ ह्रीं भैरव्यै नम:। ॐ ह्रीं महाभैरव्यै नम:। ॐ ह्रीं इन्द्राक्ष्यै नम:। ॐ ह्रीं पिङ्गाक्ष्यै नम:। ॐ ह्रीं संहारिण्यै नम:।

तृतीय आवरण—इसके बाद पद्ममध्य में हूं फट् नम: और स्वाहायै नम: से पूजा करे। देवी के दाँयें भाग में सम्राट् छन्दसे नम: से, उत्तर ओर सर्ववर्णेभ्यो नम: से, दक्षिण तरफ बीजशक्तिभ्यां नम: से पूजा करे।

चतुर्थ आवरण—पद्मदलों के अग्रभाग में पूर्वादि क्रम से पूजा करे—ॐ ब्राह्मयै नम:। ॐ माहेश्वर्यै नम:। ॐ कौमार्यै नम:। ॐ वैष्णव्यै नम:। ॐ वाराह्यै नम:। ॐ इन्द्राण्यै नम:। ॐ चामुण्डायै नम:। ॐ महालक्ष्म्यै नम:।

पञ्चम आवरण—चारो दिशाओं के द्वारों में इनका पूजन करे—ॐ करालाय नम:। ॐ विकरालाय नम:। ॐ अतिकरालाय नम:। ॐ महाकरालाय नम:।

इसके बाद धूपादि से विसर्जन तक के कर्म करके विसर्जन करे।

विसर्जन में विशेषता यह है कि पहले संहारमुद्रा दिखावे। तब अपनी अंजलि में वाम नासापुट से योनिमुद्रासमारूढ़ा प्रदीपकलिकाकारा समुज्ज्वल और कृष्ण पक्ष के चन्द्रमा के समान क्रमश: क्षयशीला इष्टदेवता का ध्यानपूर्वक आरोपण कर सूर्यमण्डल में निम्न मन्त्र से समर्पण करे—

उत्तरे शिखरे देवि भूम्यां पर्वतवासिनि।
ब्रह्मयोनिसमुत्पन्ने गच्छ देवि ममान्तरम्।।

भगवती छिन्नमस्ता सिद्धविद्या हैं। अत: इनके मन्त्र का पुरश्चरण एक लाख जप से होता है। इनके बलिदान के विषय में भैरवीतन्त्र का कथन है कि रात में मत्स्य, मांस, सुरादि द्वारा या अपने सामर्थ्यानुसार मधुरादि विविध उपहारों से साधक निम्न मन्त्र से बलि प्रदान करे—

ॐ सर्वसिद्धिप्रदे वर्णनीये, सर्वसिद्धिप्रदे डाकिनीये छिन्नमस्ते देवि एह्येहि इमं बलिं गृह्ण गृह्ण मम सिद्धिं देहि देहि हीं ह्रीं फट् स्वाहा।

मन्त्रान्तरम्

भुवनेशीं कामबीजं कूर्चबीजञ्च वाग्भवम् ।
भुवनेशीं कूर्चबीजं वाग्भवं तदनन्तरम् ।
वज्रवैरोचनीये च हूं फट् स्वाहा ततः परम् ॥

अस्य पूजाप्रयोगः—न्यासपूजादिकं षोडशीवत्कार्यम्।

हृल्लेखा मादनं लक्ष्मी वाग्भवं कूर्चमेव च ।
अस्त्रान्ता छिन्नमस्ता या महाविद्या प्रकीर्त्तिता ॥
अस्यास्तु सदृशी विद्या जगत्स्वपि न विद्यते ।
षड्वर्णोऽयं मनुः साक्षान्मोक्षदो नात्र संशयः ॥
अस्या ध्यानमहं वक्ष्ये शृणुष्व कमलानने ।

प्रत्यालीढपदां सदैव दधतीं छिन्नं शिरःकर्तृकां,
दिग्वस्त्रां स्वकबन्धशोणितसुधाधारां पिबन्तीं मुदा ।
नागाबद्धशिरोमणिं त्रिनयनां हृद्युत्पलालंकृतां,
रत्यासक्तमनोभवोपरि दृढां ध्यायेज्जवासन्निभाम् ॥
दक्षे चातिसितां विमुक्तचिकुरां कर्त्रीं तथा खर्परं,
हस्ताभ्यां दधतीं रजोगुणभवा नाम्नापि या वर्णिनी ।
देव्याश्छिन्नकबन्धतः पतदसृग्धारां पिबन्तीं मुदा,
नागाबद्धशिरोमणिर्मनुविदा ध्येया सदा सा सुरैः ॥
वामे कृष्णतनूस्तथैव दधती खड्गं तथा खर्परं,
प्रत्यालीढपदा कबन्धविगलद्रक्तं पिबन्ती मुदा ।
सैषा या प्रलये समस्तभुवनं भोक्तुं क्षमा तामसी,
शक्तिः सापि परात्परा भगवती नाम्ना परा डाकिनी ॥

इति ध्यानम्। अस्याः पूजादिकं सर्वं षोडशीवत्कार्यम्।

छिन्नमस्ता का अन्य मन्त्र—इनके चार मन्त्रों का वर्णन पहले किया जा चुका है। अन्य मन्त्र इस प्रकार हैं—माया, काम, कूर्च, वाग्भव, माया, कूर्च, वाग्भव, वज्रवैरोचनीये हूं फट स्वाहा के योग से इस प्रकार का मन्त्र बनता है—ह्रीं क्लीं हूं ऐं ह्रीं हूं ऐं वज्रवैरोचनीये हूं फट् स्वाहा। हृल्लेखा (माया), मादन (काम), लक्ष्मी श्रीं, वाग्भव ऐं, कूर्च और अस्त्र के योग से इस प्रकार मन्त्र बनता है—ह्रीं क्लीं श्रीं ऐं हूं फट्। इसमें छः अक्षर होते हैं।

पाठान्तर के अनुसार हृल्लेखा, मादन, कूर्च होने से ह्रीं क्लीं हूं ऐं हूं फट् होता है । इस षडक्षर मन्त्र के समान प्रभावशाली संसार में दूसरा कोई मन्त्र नहीं है। यह साक्षात् मोक्षदायक है। इस मन्त्र के देवता का ध्यान इस प्रकार है—देवी अपने दाँयें पैर को आगे और बाँयें पैर को पीछे रखकर स्थित हैं। हाथों में कटा सिर और खड्ग है। ये नग्न हैं और कटे गले से निकलती रक्तधार का पान कर रही हैं। मस्तक पर साँप से बँधी मणि है, तीन नेत्र हैं। वक्षःस्थल कमल की माला से सुशोभित है। ये रत्यासक्त मदन के ऊपर खड़ी हैं, इनका शरीर अड़हुल-फूल के समान लाल है। देवी के दाँईं ओर श्वेतवर्णा मुक्तकेशी कैंची और खर्पर लिये एक देवी हैं, जिनका नाम वर्णिनी है। ये देवी के गले से निकलती हुई रक्तधार का पान कर रही हैं । इनके मस्तक पर नाग से बँधी मणि है। देवी के बाँईं ओर कृष्णवर्णा खड्ग-खप्पर से युक्त दूसरी देवी हैं, जिनका नाम डाकिनी है। ये भी देवी के गले से निकलती रक्तधार का पान कर रही हैं। इनका दाँयाँ पैर आगे और बाँयाँ पैर पीछे है। ये प्रलयकाल में सारे संसार को खा जाने में समर्थ हैं। इस प्रकार ध्यान करके षोडशी प्रकरण में वर्णित पद्धति से पूजा करे।

मन्त्रान्तरम्

तारं लज्जाद्वयं वज्रवैरोचनीये हुं फट् स्वाहा। अस्यापि ध्यानपूजादिकं सर्वं षोडशीवत्कार्यम्।

वियत्सूत्रयुतं विन्दुनादयुक्तं ततः प्रिये ।
एकाक्षरी महाविद्या त्रैलोक्यवशकारिणी ॥

सूत्रं दीर्घ ऊकारः ।

ठठान्तैषा महाविद्या त्रैलोक्यमोहकारिणी ।
ताराद्यान्ता भवत्येषा चतुर्वर्गफलप्रदा ॥
वज्रवैरोचनीये च कूर्चयुग्मं सफट् ठठः ।
ताराद्यैषा महाविद्या सर्वतेजोऽपहारिणी ॥
त्रैलोक्याकर्षिणी विद्या चतुर्वर्गफलप्रदा ।
ध्यानपूजादिकं सर्वं षोडशीवत्समाचरेत् ॥

इदानीं षोडशीविद्याप्रशंसामाह—

तथा सर्वप्रयत्नेन सर्वोपास्या च षोडशी ।
लक्ष्मीबीजादिका सैव सर्वैश्वर्यप्रदायिनी ॥
लज्जाद्या स्वर्गभूनागयोषिदाकर्षिणी परा ।
कूर्चाद्या सर्वजन्तूनां महापातकनाशिनी ॥
वाग्भवाद्या यदा देवी वागीशत्वप्रदायिनी ।
एषा तु षोडशीविद्या वेद्या सप्तदशाक्षरी ॥
श्रीबीजपुटिता सा तु लक्ष्मीवृद्धिकरी सदा ।
लज्जया पुटिता विद्या त्रैलोक्याकर्षिणी परा ॥
कूर्चेन पुटिता सर्वपापिनां पापहारिणी ।
वाग्बीजपुटिता चैषा वागीशत्वप्रदायिनी ॥
चतुर्विधेति विद्यैषा प्रिये सप्तदशाक्षरी ।
ताराद्या षोडशी चान्या भवेत् सप्तदशाक्षरी ।
एषा विद्या महाविद्या भुक्तिमुक्तिकरी सदा ॥
कमला भुवनेशानी कूर्चबीजं सरस्वती ।
वज्रवैरोचनीये च पूर्वबीजानि चोच्चरेत् ।
फट् स्वाहा च महाविद्या वसुचन्द्राक्षरी परा ॥
ताराद्येकोनविंशार्णा ब्रह्मविद्यास्वरूपिणी ।
एते विद्योत्तमे देवि भुक्तिमुक्तिप्रदे शुभे ॥

लक्ष्म्यादिपुटिता पूर्वा रन्ध्रचन्द्राक्षरी भवेत् ।
चतुर्द्धा च महाविद्या चतुर्वर्गफलप्रदा ।
प्रणवाद्या यथा चैषा भोगमोक्षकरी सदा ॥

छिन्नमस्ता के अन्य मन्त्र—भगवती छिन्नमस्ता के अन्य मन्त्र निम्नवत् हैं—

प्रणव, मायाबीजद्वय वज्रवैरोचनीये हूं फट् स्वाहा से यह मन्त्र बनता है—ॐ ह्रीं ह्रीं वज्रवैरोचनीये हूं फट् स्वाहा। इस मन्त्र का ध्यान-पूजादि षोडशी मन्त्र-पद्धति के समान है।

एकाक्षर मन्त्र 'हूं' तीनों लोकों को वश में करने वाला है।

'हूं स्वाहा' की आराधना से त्रिलोक मोहित हो सकता है।

'ॐ हूं स्वाहा' के जप से धर्मार्थ-काम-मोक्षरूप चतुर्वर्ग की प्राप्ति होती है ।

प्रणव वज्रवैरोचनीये कूर्चबीजद्वय फट् स्वाहा से यह मन्त्र बनता है—ॐ वज्रवैरोचनीये हूं हूं फट् स्वाहा। यह मन्त्र सबों के तेज का अपहरण करने वाला है। इस मन्त्र से देवी की आराधना करने पर तीनों लोक आकृष्ट होता है, चतुर्वर्ग प्राप्त होते हैं।

उपरोक्त सभी मन्त्रों का ध्यान-पूजनादि षोडशी मन्त्र के समान है।

षोडशी मन्त्र के प्रथम बीज 'श्रीं' लगाने से मन्त्र बनता है—श्रीं ह्रीं हूं ऐं वज्रवैरोचनीये हूं हूं फट् स्वाहा। इसकी उपासना से सभी प्रकार का वैभव प्राप्त होता है।

षोडशी मन्त्र के प्रथम मायाबीज (ह्रीं) लगाने से 'ह्रीं श्रीं हूं ऐं वज्रवैरोचनीये हूं हूं फट् स्वाहा' मन्त्र बनता है। इससे सर्वाकर्षण होता है।

'हूं श्रीं ह्रीं वज्रवैरोचनीये हूं हूं फट् स्वाहा' सब पापों का विनाशक है।

वाग्बीज ऐं प्रथम लगाने से 'ऐं ह्रीं श्रीं हूं वज्रवैरोचनीये हूं हूं फट् स्वाहा' होता है। इसके जप से वाक्सिद्धि मिलती हैं।

उपर्युक्त चार षोडशी मन्त्रों के प्रारम्भ में श्रीं लगाने से चार प्रकार के सप्तदशाक्षर मन्त्र होते हैं। इनसे आराधना करने से लक्ष्मी की वृद्धि होती है। मायाबीज ह्रीं से पुटित करके आराधना करने से तीन लोक वशीभूत होते हैं। कूर्चबीज हूं से पुटित होने पर पापियों के पापों का विनाश होता है। वाग्बीज ऐं से पुटित होने पर वागीशत्व प्राप्त होता है।

उपर्युक्त चारो षोडशी मन्त्रों के पहले 'ॐ' लगाने से चार अन्य सप्तदशाक्षर मन्त्र बनते हैं, जिनसे भोग और मोक्ष प्राप्त होते हैं।

श्रीं माया कूर्च वाग्बीज वज्रवैरोचनीये श्रीं माया कूर्च वाग्बीज फट् स्वाहा से मन्त्र बनता है—श्रीं ह्रीं हूं ऐं वज्रवैरोचनीये श्रीं ह्रीं हूं ऐं फट् स्वाहा। इसमें अट्ठारह अक्षर हैं। इसी अष्टादशाक्षर मन्त्र में पहले 'ॐ' लगाने से उन्नीस अक्षरों का मन्त्र बनता है।

उपरोक्त दोनों में ब्रह्मविद्यास्वरूप, अति उत्तम, भोग-मोक्षदायक और मंगलमय हैं।

मन्त्रान्तरम्

विद्यान्तरं प्रवक्ष्यामि सावधानावधारय ।
हृल्लेखाकूर्चवाग्बीजवज्रवैरोचनीये हूं ॥
अस्त्रं स्वाहा महाविद्या चतुर्दशाक्षरी मता ।
सर्वैश्वर्यप्रदा चैषा सर्वमोहनकारिणी ॥
भुवनेशीत्रितत्त्वञ्च वाग्बीजं प्रणवं ततः ।
वज्रवैरोचनीये च फट् स्वाहा च तथा परा ॥
चतुर्दशाक्षरी चैषा चतुर्वर्गफलप्रदा ।
एषा विद्या महाविद्या जन्ममृत्युविनाशिनी ॥

तन्त्रान्तरे—

रमा कामस्तथा लज्जा वाग्भवं वज्र वै पदम् ।
रोचनीये लज्जाद्वन्द्वमन्त्रं स्वाहासमन्वितम् ।
इयं सा षोडशी प्रोक्ता सर्वकामफलप्रदा ॥

उक्त अष्टादशाक्षर मन्त्र को श्रीं, ह्रीं, हूं, ऐं से पुटित करने पर चार प्रकार के उन्नीसाक्षर मन्त्र बनते हैं। ये चतुर्वर्गप्रदायक हैं। अष्टादशाक्षर मन्त्र के आदि में 'ॐ' का योग करने से जो मन्त्र बनता है, उसके जप से भोग-मोक्ष दोनों प्राप्त होते हैं।

माया, कूर्च, वाग्बीज, वज्रवैरोचनीये, हूं, अस्त्रमन्त्र और स्वाहा से यह मन्त्र बनता है—ह्रीं हूं ऐं वज्रवैरोचनीये हुं फट् स्वाहा। यह चौदह अक्षरों का मन्त्र सर्वैश्वर्य-दायक और सर्वसम्मोहनकारी है।

माया प्रणव वाग्बीज प्रणव वज्रवैरोचनीये फट् स्वाहा से जो मन्त्र बनता है, वह है—ह्रीं ॐ ऐं ॐ वज्रवैरोचनीये फट् स्वाहा। यह चौदह वर्णों का मन्त्र चतुर्वर्गदायक और जन्म-मृत्यु छुड़ाकर मोक्षदायक है।

श्रीं काम लज्जा वाग्बीज वज्रवैरोचनीये मायाद्वय अस्त्रमन्त्र और स्वाहा से मन्त्र इस प्रकार का होता है—श्रीं क्लीं ह्रीं ऐं वज्रवैरोचनी ह्रीं ह्रीं फट् स्वाहा। यह षोडशाक्षर मन्त्र सभी मनोरथों को पूर्ण करता है।

कथिताः सकला विद्याः सारात्सारतराः शुभाः ।
आसां ऋषिर्भैरवोऽहं नाम्ना तु क्रोधभूपतिः ।
सम्राट् छन्दो देवता च छिन्नमस्ता प्रकीर्तिता ॥
षड्दीर्घभाक्स्वरेणैव प्रणवाद्येन सुन्दरि ।
खड्गाद्येन ठठान्तानि षडङ्गानि प्रकल्पयेत् ॥
नारिदोषादिकञ्चासां ताः सुसिद्धाः सुरासुरैः ।

सकलेषु च वर्णेषु सकलेष्वाश्रमेषु च ॥
अन्तिमेषु च वर्णेषु भुक्तिमुक्तिप्रदायिका ।
प्रणवाद्याश्च या विद्याः शूद्रादौ न समीरिताः ॥
अस्याश्चैव विशेषोऽयं योषिच्चेत्समुपासयेत् ।
डाकिनी सा भवत्येव डाकिनीभिः प्रजायते ।
पतिहीना पुत्रहीना यथा स्यात् सिद्धयोगिनी ॥
इति ते कथितं तत्त्वं रहस्यमखिलं प्रिये ।
अतिस्नेहतरङ्गेन भक्त्या दासोऽस्मि ते प्रिये ॥

एतासां ध्यानपूजादिकं षोडशीवत्कार्यम्।

नाभौ शुद्धारविन्दं तदुपरि कमलं मण्डलं चण्डरश्मेः
संसारस्यैकसारां त्रिभुवनजननीं धर्मकामोदयाढ्याम् ।
तस्मिन्मध्ये त्रिकोणे त्रितयतनुधरां छिन्नमस्तां प्रशस्तां
तां वन्दे ज्ञानरूपां निखिलभयहरां योगिनीं योगमुद्राम् ॥

इति छिन्नमस्ताप्रकरणम्

●

समस्त तत्त्वों की सारस्वरूपा मंगलकारी सारी विद्याओं का वर्णन ऊपर किया गया। इन सभी मन्त्रों के ऋषि क्रोधभैरव, छन्द सम्राट् और देवता छिन्नमस्ता हैं। इन सभी मन्त्रों के करांग न्यास आदि में प्रणव, छः दीर्घ स्वर वर्ण और खड्गाय स्वाहा लगाया जाता है। ये सभी मन्त्र सदैव सुसिद्ध हैं। इनके सम्बन्ध में अरिदोषादि का विचार नहीं किया जाता है। सभी वर्ण और सभी आश्रम के लोग, यहाँ तक कि शूद्र भी इन मन्त्रों के जप से भोग-मोक्ष प्राप्त कर सकते हैं। केवल जिन मन्त्रों के पहले 'ॐ' है, उन मन्त्रों के जप का अधिकार शूद्र को नहीं है। यदि कोई स्त्री इस मन्त्र को ग्रहण करे तो वह डाकिनी होती है एवं पति-पुत्र से रहित होकर सिद्ध योगिनी के समान विचरण करती है।

इन सभी मन्त्रों के ध्यान-पूजनादि षोड़शी मन्त्र के समान हैं। छिन्नमस्ता का एक अन्य ध्यान श्लोक इस प्रकार है—

नाभौ शुद्धारविन्दं तदुपरि कमलं मण्डलं चण्डरश्मेः
संसारस्यैकसारां त्रिभुवनजननीं धर्मकामोदयाढ्याम् ।
तस्मिन्मध्ये त्रिकोणे त्रितयतनुधरां छिन्नमस्तां प्रशस्तां
तां वन्दे ज्ञानरूपां निखिलभयहरां योगिनीं योगमुद्राम् ॥

नाभिदेश में शुभ्र वर्ण का पद्म, उसके ऊपर निर्मल सूर्यमण्डल का ध्यान करके उसके मध्य में त्रिकोण में त्रिमूर्तिधारिणी, संसार की सारभूता, त्रिलोकजननी, कर्म काम और दया से सम्पन्न, प्रशस्त ज्ञानस्वरूपा, सर्वभयनाशिनी योगिनी छिन्नमस्ता देवी की मैं वन्दना करता हूँ।

श्यामाप्रकरणम्

भैरवतन्त्रे—

अथ वक्ष्ये महाविद्याः कालिकायाः सुदुर्लभाः ।
यासां विज्ञानमात्रेण जीवन्मुक्तो भवेन्नरः ॥
नात्र चिन्ताविशुद्धिः स्यान्न वा मित्रादिदूषणम् ।
न वा प्रयासबाहुल्यं समयासमयादिकम् ।
न वित्तव्ययबाहुल्यं कायक्लेशकरं न च ॥
य एनां चिन्तयेन्मन्त्री सर्वकामसमृद्धिदाम् ।
तस्य हस्ते सदैवास्ति सर्वसिद्धिर्न संशयः ॥
गद्यपद्यमयी वाणी सभायां तस्य जायते ।
तस्य दर्शनमात्रेण वादिनो निष्प्रभां गताः ॥
राजानोऽपि च दासत्वं भजन्ते किं परे जनाः ।
दिवारात्रिव्यत्ययञ्च वशीकर्तुं क्षमो भवेत् ।
अन्ते च लभते देव्या गणत्वं दुर्लभं नरः ॥

श्यामा—भैरवतन्त्र में वर्णन है कि काली देवी के सभी महामन्त्रों के ज्ञानमात्र से मनुष्य जीवन्मुक्त हो जाता है। इन मन्त्रों की उपासना में अरि-मित्रादि का विचार नहीं किया जाता। सर्वसिद्धिदायिनी कालिका देवी का जो साधक ध्यान करता है, उसके हाथ में सारी सिद्धियाँ निरन्तर विद्यमान रहती हैं। वह गद्य-पद्यमय भाषण करने वाला होता है। उस साधक के दर्शनमात्र से शत्रुसमूह निस्तेज हो जाता है। राजा उसके दासवत् होते हैं। वह तीनों लोक को वशीभूत कर सकता है और अन्त में दुर्लभ देवीगण का पद प्राप्त करता है।

श्यामामन्त्राः

तत्र कालीतन्त्रे—

कामत्रयं वह्निसंस्थं रतिविन्दुविभूषितम् ।
कूर्चयुग्मं तथा लज्जायुगलं तदनन्तरम् ॥
दक्षिणे कालिके चेति पूर्वबीजानि चोच्चरेत् ।
अन्ते वह्निवधूं दद्याद्विद्याराज्ञी प्रकीर्तिता ॥

मन्वर्थमाह यामले—

ककाराज्जलरूपत्वात्केवलं मोक्षदायिनी ।
ज्वलनार्णसमायोगात्सर्वतेजोमयी शुभा ॥
मायात्रयेण देवेशि सृष्टिस्थित्यन्तकारिणी ।
विन्दूनां निष्फलत्वाच्च कैवल्यफलदायिनी ॥
बीजत्रया शाम्भवी सा केवलं ज्ञानचित्कला ।
शब्दबीजद्वयेनैव शब्दराशिप्रबोधिनी ॥
लज्जाबीजद्वयेनैव सृष्टिस्थित्यन्तकारिणी ।
सम्बोधनपदेनैव सदा सन्निधिकारिणी ।
स्वाहया जगतां माता सर्वपापप्रणाशिनी ॥

श्यामामन्त्र—कालीतन्त्र में लिखा है कि 'क' के बाद रेफ, ई और बिन्दु के योग से क्रीं बीज तीन, दो कूर्चबीज, दो मायाबीज, दक्षिणकालिके, तब पूर्वोक्त सात बीज और अन्त में स्वाहा लगाने से मन्त्र बनता है। मन्त्र है—क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं दक्षिणकालिके क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा। इस मन्त्र में बाईस अक्षर हैं। यह सभी मन्त्रों में श्रेष्ठ है।

'यामल' में इस मन्त्र का अर्थ इस प्रकार का है—जलरूपी ककार मोक्षप्रद है। अग्निरूपी रेफ सर्वतेजोमय है। क्रीं बीज सृष्टि-स्थिति-लयकर्ता है। बिन्दु निष्कल ब्रह्म है। यह कैवल्यदायक है। 'हूं' ज्ञानदाता है। 'ह्रीं' बीज सृष्टि-स्थिति-प्रलयकर्ता है। 'दक्षिणकालके' सम्बोधन पद है। इससे देवी का सान्निध्य प्राप्त होता है। 'स्वाहा' जगन्मातृकास्वरूप सभी पापों का नाशक है।

अस्याः पूजाप्रयोगः—प्रातःकृत्यादिकं कृत्वा मन्त्राचमनं कुर्यात्। यथा—

कालिकाभिस्त्रिभिः पीत्वा काल्यादिभिरुपस्पृशेत् ।
द्वाभ्यामोष्ठौ द्विरुन्मृज्य चैकेन क्षालयेत्करौ ॥
मुखघ्राणेक्षणश्रोत्रनाभ्युरस्कं भुजो क्रमात् ।
आचम्यैवं भवेत्काली वत्सरात्तां प्रपश्यति ॥

कं शिरः। तद्यथा—क्रीमिति त्रिराचमेत्। ॐ काल्यै नमः ॐ कपालिन्यै नमः इति ओष्ठौ द्विरुन्मृजेत्। ॐ कुल्वायै नमः इति करं क्षालयेत्। ॐ कुरुकुल्वायै नमः इति मुखे। ॐ विरोधिन्यै नमः इति दक्षिणनासायाम्। ॐ विप्रचित्तायै नमः इति वामनासायाम्। ॐ उग्रायै नमः ॐ उग्रप्रभायै नमः इति नेत्रयोः। ॐ दीप्तायै नमः ॐ नीलायै नमः इति श्रोत्रयोः। ॐ घनायै नमः इति नाभौ। ॐ बलाकायै नमः इति वक्षसि। ॐ मात्रायै नमः इति शिरसि। ॐ मुद्रायै नमः ॐ मितायै नमः इत्यंसयोः। इति मन्त्राचमनम्।

ततो भूतशुद्ध्यन्तं विधाय मायाबीजेन यथाविधि प्राणायामं कुर्यात्। ततः ऋष्यादिन्यासः। यथा—

अस्य मन्त्रस्य भैरवऋषिरुष्णिक् छन्दो दक्षिणकालिका देवता ह्रीं बीजं हूं शक्तिः क्रीं कीलकं पुरुषार्थचतुष्टयसिद्ध्यर्थे विनियोगः। तथा च कालीक्रमे—

कीलकं चाद्यबीजं स्याच्चतुर्वर्गफलप्रदम्।

शिरसि भैरवऋषये नमः। मुखे उष्णिक्छन्दसे नमः। हृदि दक्षिणकालिकायै देवतायै नमः। गुह्ये ह्रीं बीजाय नमः। पादयोः हूं शक्तये नमः। सर्वाङ्गे क्रीं कीलकाय नमः।

ततः कराङ्गन्यासौ; तदुक्तं कालीतन्त्रे—

अङ्गन्यासकरन्यासौ यथावदभिधीयते।
भैरवोऽस्य ऋषिः प्रोक्त उष्णिक्छन्द उदाहृतम्॥
देवता कालिका प्रोक्ता लज्जाबीजन्तु बीजकम्।
कीलकं चाद्यबीजं स्याच्चतुर्वर्गफलप्रदम्॥
शक्तिश्च कूर्चबीजं स्यादनिरुद्धा सरस्वती।
कवित्वार्थे नियोगः स्यात्················॥ इत्यादि।

तेन मायया षडङ्गन्यासः—

षड्दीर्घभाजा बीजेन प्रणवाद्येन कल्पयेत्।

वीरतन्त्रे—

दीर्घषट्कयुताद्येन प्रणवाद्येन कल्पयेत्।

इति वा। तद्यथा—ॐ ह्रां अंगुष्ठाभ्यां नमः। ॐ ह्रीं तर्जनीभ्यां स्वाहा। ॐ ह्रूं मध्यमाभ्यां वषट्। ॐ ह्रैं अनामिकाभ्यां हुं। ॐ ह्रौं कनिष्ठाभ्यां वौषट्। ॐ ह्रः करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्। एवं हृदयादिषु। ॐ ह्रां हृदयाय नमः इत्यादि। ॐ क्रां अंगुष्ठाभ्यां नमः इत्यादिना वा।

ततो वर्णन्यासः—अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं लृं लॄं नमः इति हृदये। एं ऐं ओं औं अं अः कं खं गं घं नमः इति दक्षिणबाहौ। ङं चं छं जं झं ञं टं ठं डं ढं नमः इति वामबाहौ। णं तं थं दं धं नं पं फं बं भं नमः इति दक्षिणपादे। मं यं रं लं वं शं षं सं हं ळं क्षं नमः इति वामपादे। विरूपाक्षमते सविन्दुरयं न्यासः। यथा वीरतन्त्रे—

अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं लृं लॄं वै हृदये न्यसेत्।

इत्यादि। कालीतन्त्रे पुनर्निर्विन्दुः; यथा—

अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ ऌ ॡ वै हृदयं स्पृशेत्।

इत्यादि। किन्तु—

सविन्दून् वा न्यसेदेतान् निर्विन्दून् वाथ वर्णकान्।

इत्याचार्यपरिगृहीतभैरवीयवाक्यादुभयमेव युक्तम्।

श्यामापूजा-पद्धति—इस ग्रन्थ के दूसरे परिच्छेद में वर्णित सामान्य पूजा पद्धति से प्रात:कृत्यादि करके मन्त्राचमन करे। कालीबीज क्रीं से तीन बार आचमन करे। ॐ काल्यै नम:, ॐ कपालिन्यै नम: से दोनों होठों का मार्जन करे। ॐ कुल्लायै नम: से दोनों हाथ स्वच्छ करे। अब अंकित मन्त्रों से अंगों का स्पर्श करे—ॐ कुरुकुल्लायै नम: से मुख, ॐ विरोधिन्यै नम: से दक्ष नासा, ॐ विप्रचितायै नम: से वाम नासा, ॐ उग्रायै नम: से दक्ष नेत्र, ॐ उग्रप्रभायै नम: से वाम नेत्र, ॐ दीप्तायै नम: से दक्ष कर्ण, ॐ लीलायै नम: से वाम कर्ण, ॐ घनायै नम: से नाभि, ॐ बलाकायै नम: से वक्ष, ॐ मात्रायै नम: से मस्तक, ॐ मुद्रायै नम: से दक्ष स्कन्ध और ॐ मितायै नम: से वाम स्कन्ध का स्पर्श करे।

सामान्य पूजापद्धति से भूतशुद्धि तक के कर्म करे। ह्रीं मन्त्र से यथाविधि प्राणायाम करे। तब विनियोग और ऋष्यादि न्यास करे।

विनियोग—अस्य मन्त्रस्य भैरवऋषि:, उष्णिक् छन्द:, दक्षिणकालिका देवता, ह्रीं बीजं, हूं शक्ति:, क्रीं कीलकं पुरुषार्थचतुष्टयसिद्ध्यर्थे जपे विनियोग:।

ऋष्यादि न्यास—शिरसि भैरवऋषये नम:। मुखे उष्णिक् छन्दसे नम:। हृदि दक्षिणकालिकायै देवतायै नम:। गुह्ये ह्रीं बीजाय नम:। पादयो: हूं शक्तये नम:। सर्वांगे क्रीं कीलकाय नम:।

कर न्यास—ॐ ह्रां अंगुष्ठाभ्यां नम:। ॐ ह्रीं तर्जनीभ्यां स्वाहा। ॐ ह्रूं मध्यमाभ्यां वषट्। ॐ ह्रैं अनामिकाभ्यां हुं। ॐ ह्रौं कनिष्ठाभ्यां वौषट्। ॐ ह्र: करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्।

षडंग न्यास—ॐ ह्रां हृदयाय नम:। ॐ ह्रीं शिरसे स्वाहा। ॐ ह्रूं शिखायै वषट्। ॐ ह्रैं कवचाय हुं। ॐ ह्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्। ॐ ह्र: अस्त्राय फट्।

इन अंगन्यासों को ॐ ह्रां ह्रीं के स्थान पर ॐ क्रां क्रीं से भी किया जा सकता है।

वर्णन्यास—अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं ऌं ॡं नम: हृदये।
एं ऐं ओं औं अं अ: कं खं गं घं नम: दक्षबाहौ।
ङं चं छं जं झं ञं टं ठं डं ढं नम: वामबाहौ।
णं तं थं दं धं नं पं फं बं भं दक्षपादे (दक्षजंघायां—पाठान्तरम्)।
मं यं रं लं वं शं षं सं हं ळं क्षं वामपादे (वामजंघायां—पाठान्तरम्)।

इस न्यास के सम्बन्ध में मतभेद है। विरूपाक्ष के मत से सविन्दु न्यास होना चाहिये; जैसा कि ऊपर वर्णित है; किन्तु कालीतन्त्र के अनुसार विना बिन्दु के न्यास करे। जैसे अ आ⋯ऌ ॡ हृदयाय नम:। आचार्य दोनों ही मतों को ठीक मानते हैं।

अथ षोडान्यास:; तदुक्तं वीरतन्त्रे—

केवलां मातृकां कृत्वा मातृकां तारसम्पुटाम् ।
मातृकापुटितं तारं न्यसेत् साधकसत्तमः ॥
श्रीबीजपुटितां तान्तु मातृकापुटितन्तु तत् ।
कामेन पुटितां देवीं तत्पुटं काममेव च ॥
शक्त्या च पुटितां देवीं शक्तिञ्च तत्पुटां न्यसेत् ।
क्रीं द्वन्द्वञ्च पुनर्न्यस्त्वा ऋ-ॠ-ऌ-ॡञ्च पूर्ववत् ॥
मूलेन पुटितां देवीं तत्पुटं मन्त्रमेव च ।
अनुमोलविलोमेन न्यस्य मन्त्रं यथाविधि ।
मूलेनाष्टशतं कुर्याद्व्यापकं तदनन्तरम् ॥

यथा—ॐ अं ॐ एवं मातृकापुटितं तारम्। एवं श्रीबीजपुटितां ताम्। तत्पुटितं श्रीबीजम्। एवं कामेन पुटितां मातृकाम्। मातृकापुटितं कामम्। एवं शक्त्या पुटितां मातृकाम्। मातृकापुटितां शक्तिं न्यसेत्। तथा क्रीं द्वन्द्वञ्च ऋ ॠ ऌ ॡञ्च पूर्ववत्। तत्पुटितां मातृकां मातृकापुटितञ्च तन्न्यसेत्। मन्त्रपुटितां मातृकां तत्पुटितं मनुम्। पुनरनुलोमविलोमेन केवलं मन्त्रं मातृकास्थाने न्यस्य मूलेनाष्टशतेन व्यापकं कुर्यात्। अयं न्यासस्ताराया अपि कार्य:—

इति गुप्तेन दुर्गाया अङ्गषोढा प्रकीर्तिता ।
ताराया: कालिकायाश्च उन्मुख्याश्च तथा परा ।
कृतेऽस्मिन्न्यासवर्ये तु सर्वं पापं प्रणश्यति ॥

षोढ़ा न्यास—वीरतन्त्र में वर्णन है कि पहले केवल मातृकान्यास करे। तब मातृकावर्णों को ॐ से पुटित करके न्यास करे। तब ॐ को प्रत्येक मातृकावर्ण से पुटित करके न्यास करे। जैसे—ललाटे ॐ अं ॐ नम:, मुखे ॐ आं ॐ नम: इत्यादि। तब अं ॐ अं नम: ललाटे। आं ॐ आं नम: मुखे।

इसी प्रकार श्रीं से मातृकावर्णों को और मातृकावर्णों से 'श्रीं' को पुटित करके न्यास करे—ललाटे श्रीं अं श्रीं नम:, मुखे श्रीं आं श्रीं नम: इत्यादि और अं श्रीं अं नम:, आं श्रीं आं नम: इत्यादि।

इसी भाँति क्लीं से न्यास करे। यथा—क्लीं अं क्लीं नम:, क्लीं आं क्लीं नम:, अं क्लीं अं नम:, आं क्लीं आं नम: इत्यादि।

इसी भाँति ह्रीं से न्यास करे; यथा—ह्रीं अं ह्रीं नम:, ह्रीं आं ह्रीं नम: इत्यादि और अं ह्रीं अं नम:, आं ह्रीं आं नम: इत्यादि।

क्रीं क्रीं दो बीजों से ऋ ॠ ऌ ॡ को और ऋ ॠ ऌ ॡ से क्रीं क्रीं को पुटित करके न्यास करे। यथा ललाटे—क्रीं क्रीं ऋं ॠं ऌं ॡं क्रीं क्रीं नम: इत्यादि।

ललाटे—ऋं ॠं ऌं ॡं क्रीं क्रीं ऋं ॠं ऌं ॡं नम: इत्यादि।

अन्त में मूल मन्त्र से मातृकावर्णों को और मातृकावर्णों से मूल मन्त्र को पुटित करके न्यास करे। यथा ललाटे क्रीं अं क्रीं नम:, अं क्रीं अं नम: इत्यादि।

इस प्रकार अनुलोम-विलोमात्मक न्यास करके मूल मन्त्र से एक सौ आठ बार व्यापक न्यास करे।

तारा देवी की पूजा में भी इसी प्रकार का षोढ़ा न्यास किया जाता है। इस न्यास से सभी पापों का विनाश हो जाता है।

ततस्तत्त्वन्यास:; यथा—मूलं त्रिखण्डं विधाय प्रथमखण्डान्ते ॐ आत्मतत्त्वाय स्वाहेति पादादि-नाभिपर्यन्तम्। द्वितीयखण्डान्ते ॐ विद्यातत्त्वाय स्वाहेति नाभ्यादि-हृदयान्तम्। तृतीयखण्डान्ते ॐ शिवतत्त्वाय स्वाहेति हृदयादिशिर:पर्यन्तं न्यसेत्। तदुक्तं स्वतन्त्रे—

मूलविद्यात्रिखण्डान्ते प्रणवाद्यैर्यथाविधि ।
आत्मविद्याशिवैस्तत्त्वैस्तत्त्वन्यासं समाचरेत् ॥

अथ बीजन्यास:; तदुक्तं कुमारीकल्पे—

ब्रह्मरन्ध्रे भ्रुवोर्मध्ये ललाटे नाभिदेशके ।
गुह्ये वक्त्रे च सर्वाङ्गे सप्तबीजं क्रमान्न्यसेत् ॥

तद्यथा—आद्यबीजं ब्रह्मरन्ध्रे। द्वितीयबीजं भ्रूमध्ये। तृतीयबीजं ललाटे। चतुर्थबीजं नाभौ। पञ्चमबीजं गुह्ये। षष्ठबीजं वक्त्रे। सप्तबीजं सर्वाङ्गे। एतत्त्रयं काम्यम्। ततो मूलेन सप्तधा व्यापकं कृत्वा यथाविधि मुद्रां प्रदर्श्य ध्यायेत्। तद्यथा कालीतन्त्रे—

करालवदनां घोरां मुक्तकेशीं चतुर्भुजाम् ।
कालिकां दक्षिणां दिव्यां मुण्डमालाविभूषिताम् ॥
सद्यश्छिन्नशिर:खड्गवामाधोर्ध्वकराम्बुजाम् ।
अभयं वरदञ्चैव दक्षिणोर्ध्वाध: पाणिकाम् ॥
महामेघप्रभां श्यामां तथा चैव दिगम्बरीम् ।
कण्ठावसक्तमुण्डालीगलद्रुधिरचर्चिताम् ॥
कर्णावतंसतानीतशवयुग्मभयानकाम् ।
घोरदंष्ट्रां करालास्यां पीनोन्नतपयोधराम् ॥
शवानां करसङ्घातै: कृतकाञ्चीं हसन्मुखीम् ।

सृक्कद्वयगलद्रक्तधाराविस्फुरिताननाम् ॥
घोररावां महारौद्रीं श्मशानालयवासिनीम् ।
बालार्कमण्डलाकारलोचनत्रितयान्विताम् ॥
दन्तुरां दक्षिणव्यापिमुक्तालम्बिकचोच्चयाम् ।
शवरूपमहादेवहृदयोपरिसंस्थिताम् ॥
शिवाभिर्घोररावाभिश्चतुर्दिक्षु समन्विताम् ।
महाकालेन च समं विपरीतरतातुराम् ॥
सुखप्रसन्नवदनां स्मेराननसरोरुहाम् ।
एवं सञ्चिन्तयेत् कालीं सर्वकामसमृद्धिदाम् ॥

शवयुग्मेति घोरवाणावतंसेति प्रेतकर्णावतंसेति च।

शकुन्तपक्षसंयुक्तवामकर्णविभूषिताम् ।
विगतासुकिशोराभ्यां कृतकर्णावतंसिनीम् ॥

इति दर्शनादुभयमेव पाठः। ध्यानान्तरं स्वतन्त्रे—

अञ्जनाद्रिनिभां देवीं करालवदनां शिवाम् ।
मुण्डमालावलीकीर्णां मुक्तकेशीं स्मिताननाम् ॥
महाकालहृदम्भोजस्थितां पीनपयोधराम् ।
विपरीतरतासक्तां घोरदंष्ट्रां शिरैः सह ॥
नागयज्ञोपवीताढ्यां चन्द्रार्द्धकृतशेखराम् ।
सर्वालङ्कारसंयुक्तां मुण्डमालाविभूषिताम् ॥
शवहस्तसहस्रैस्तु बद्धकाञ्चीं दिगंशुकाम् ।
शिवकोटिसहस्रैस्तु योगिनीभिर्विराजिताम् ॥
रक्तपूर्णमुखाम्भोजां मद्यपानप्रमत्तिकाम् ।
वह्न्यर्कशशिनेत्राञ्च रक्तविस्फुरिताननाम् ॥
विगतासुकिशोराभ्यां कृतकर्णावतंसिनीम् ।
कण्ठावसक्तमुण्डालीगलद्रुधिरचर्चिताम् ॥
श्मशान-वह्निमध्यस्थां ब्रह्मकेशववन्दिताम् ।
सद्यःकृत्तशिरःखड्गवराभीतिकराम्बुजाम् ॥

एवं ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्य अर्घ्यस्थापनं कुर्यात्।

तत्त्वन्यास—स्वतन्त्रतन्त्र में वर्णन है कि पूर्वोक्त बाईस अक्षर के मन्त्र का तीन भाग करे। पहले भाग में सात अक्षर, दूसरे भाग में छः और तीसरे भाग में नौ अक्षर रहें। इन्हीं भागों की योजना से न्यास करे। जैसे—क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं ॐ आत्मतत्त्वाय

स्वाहा—पैरों से नाभि तक स्पर्श करे। दक्षिणकालिके ॐ विद्यातत्त्वाय स्वाहा—नाभि से हृदय तक स्पर्श करे। क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा ॐ शिवतत्त्वाय स्वाहा—हृदय से मस्तक तक स्पर्श करे।

बीजन्यास—ब्रह्मरन्ध्रे क्रीं नमः। भ्रूमध्ये क्रीं नमः। ललाटे क्रीं नमः। नाभौ हूं नमः। गुह्ये हूं नमः। मुखे ह्रीं नमः। सर्वांगे ह्रीं नमः।

षोढ़ा, तत्त्व और बीज—ये तीन न्यास काम्य हैं अर्थात् नित्य पूजा में इन तीनों न्यासों को न करने से पूजा अंगहीन होती है। इसके बाद मूल मन्त्र से सात बार व्यापक न्यास करे। यथाविधि मुद्राप्रदर्शन करके ध्यान करे। मूल में ध्यान दो प्रकार का पठित है—कालीतन्त्रानुसार एवं स्वतन्त्रतन्त्रानुसार। उनमें कालीतन्त्र के अनुसार ध्यान इस प्रकार है—

दक्षिणकालिका देवी का मुख कराल है। उनकी आकृति भयंकर है। केश खुले हुए हैं। चार भुजायें हैं। गले में मुण्डमाला है। बाँयें निचले हाथ में तत्क्षण कटा हुआ मुण्ड है और ऊपरी हाथ में खड्ग है। दाँयें निचले हाथ में अभयमुद्रा है और ऊपरी हाथ में वरमुद्रा है। देवी का वर्ण घने मेघ के समान श्याम है। वे निर्वस्त्र नग्न हैं। उनके गले की मुण्डमाला से निकलती हुई रक्तधारा से उनका सारा शरीर रंजित हो रहा है। कानों में दो शिशु-शव आभूषण के रूप में लटक रहे है। इससे देवी की आकृति बड़ी भयावनी हो गयी है। दाँतों की पंक्तियाँ अति भीषण हैं। दोनों स्तन स्थूल और उठे हुए हैं। कमर शवहस्तनिर्मित करधनी से सुशोभित है। कालिका देवी के मुख पर हँसी है। उनके दोनों ओठों के किनारे से चूती हुई रक्तधार से उनका मुखमण्डल चमक रहा है। देवी का स्वर बहुत गम्भीर है। वे सदा श्मशान में रहती हैं। उनके तीन नेत्र नवोदित सूर्यमण्डल के समान समुज्ज्वल हैं। दाँतों की पंक्ति ऊँची और बाहर निकली हुई है। केशराशि दाहिनी ओर बिखरी हुई है। वे शवरूपी शिव पर विराजमान हैं। उनके चारो ओर शिवागणभयंकर शब्द कर रहे हैं। वे महाकाल के साथ विपरीत रत्यासक्त हैं। देवी का मुखकमल प्रसन्न है। हास्ययुक्त है। यह ध्यान सभी मनोरथों को पूरा करने वाला और वैभव देने वाला है।

अथवा दूसरे प्रकार का ध्यान करे। यह ध्यान स्वतन्त्रतन्त्र के अनुसार है, जिसका भाव इस प्रकार है—

कालिका देवी काजल के पहाड़ के समान काले वर्ण की हैं। विस्फारित मुख और गले में मुण्डमाला है। केश मुक्त हैं। मुखमण्डल मुस्कानयुक्त है। दोनों स्तन स्थूल और उच्च हैं। महाकाल के हृदय पर विपरीत रत्यासक्त हैं। यज्ञोपवीत साँप का है, दाँत बड़े भयावह हैं। ललाट पर अर्द्धचन्द्र है। देवी सभी प्रकार के आभूषणों और मुण्डमाला से शोभित हैं। सहस्त्र शवों के हाथों से बनी करधनी कमर में है। करोड़ों शिवायें और सहस्त्रों योगिनियाँ इनकी सेवा में लगी हुई हैं। देवी निर्वस्त्र नग्न हैं। इनका मुखमण्डल रक्तधार से परिपूर्ण है। ये सुरापान से मतवाली हैं। सूर्य-चन्द्र-अग्नि ही देवी के तीन नेत्र हैं।

मुखमण्डल रक्त वर्ण का है। कानों में दो मृत शिशुओं के कुण्डल हैं। गले की मुण्डमाला से निकलती रक्तधारा से इनका सारा शरीर रंगा हुआ है। ये सदैव श्मशान की अग्नि के मध्य में रहती हैं। ब्रह्मा और विष्णु इनकी उपासना करते हैं। इनके चार हाथों में तत्क्षण कटा मुण्ड, खड्ग, वर और अभय विद्यमान है। इस प्रकार ध्यान करके मानस पूजा करे। तब अर्घ्य का स्थापन करे।

तद्यथा—स्ववामे भूमौ हूंकारगर्भं त्रिकोणं विलिख्यार्घ्यपात्रं संस्थाप्य मूलेन शुद्धजलादिना शङ्खादिपात्रमापूर्य, गन्धादिकं दत्त्वा, ॐ गङ्गे चेत्यादिना तीर्थमावाह्य, मं वह्निमण्डलाय दशकलात्मने नमः इत्याधारं, अं सूर्यमण्डलाय द्वादशकलात्मने नमः इति शङ्खम्, उं सोममण्डलाय षोडशकलात्मने नमः इति जलं सम्पूज्य, ॐ ह्रां हृदयाय नमः, ॐ ह्रीं शिरसे स्वाहा, ॐ ह्रूं शिखायै वषट्, ॐ ह्रैं कवचाय हुं—इत्यग्नीशासुरवायुषु। अग्रे ॐ ह्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्, चतुर्दिक्षु ॐ ह्रः अस्त्राय फट् इत्यभ्यर्च्य तदुपरि मत्स्यमुद्रयाच्छाद्य मूलं दशधा जप्त्वा धेनुमुद्रयामृतीकृत्यास्त्रेण संरक्ष्य, भूतिनीयोनिमुद्रे प्रदर्श्य, तज्जलं किञ्चित्प्रोक्षणीपात्रे निक्षिप्य, मूलेन तेनोदकेनात्मानं पूजोपकरणञ्चाभ्युक्ष्य, पीठपूजामारभेत्।

अस्याः पूजायन्त्रम्—आदौ विन्दुं स्वबीजं भुवनेशीञ्च विलिख्य ततस्त्रिकोणं तद्बाह्ये त्रिकोणचतुष्टयं वृत्तमष्टदलं पद्मं पुनर्वृत्तं चतुर्द्वारात्मकं भूगृहं लिखेत्। तदुक्तं कालीतन्त्रे—

आदौ त्रिकोणमालिख्य त्रिकोणं तद्बहिर्लिखेत्।
ततो वै विलिखेन्मन्त्री त्रिकोणत्रयमुत्तमम्॥
ततो वृत्तं समालिख्य लिखेदष्टदलं ततः।
वृत्तं विलिख्य विधिवल्लिखेद्भूपुरमेककम्॥

तथा कुमारीकल्पे—

मध्ये तु वैन्दवं चक्रं बीजमायाविभूषितम्। इति।

अथ विशेषाधारो मुण्डमालायाम्—

ताम्रपात्रे कपाले वा श्मशानकाष्ठनिर्मिते।
शनिभौमदिने वापि शरीरे मृतसम्भवे।
स्वर्णे रौप्येऽथ लौहे वा चक्रं कार्यं विधानतः॥

यन्त्रान्तरमाह तन्त्रे—

शक्त्यग्निभ्याञ्च षट्कोणं शक्तिभिश्च नवात्मकम्।
पद्मे वसुदले भूमिपूश्चतुर्द्वारसंयुते॥ इति।

पूजन-विधि—अपने वाम भाग में भूतल पर हूंकार गर्भित त्रिकोण बनावे। उस पर आधारसहित अर्घ्यपात्र रखकर उसे शुद्ध जल से पूर्ण करे। जल में गन्धादि डालकर 'ॐ गंगे च०' इत्यादि मन्त्र से उसमें तीर्थों का आवाहन करे। जल की पूजा में वह्निमण्डलाय दशकलात्मने नमः से आधार की पूजा करे। अं सूर्यमण्डलाय द्वादशकलात्मने नमः से शंख की पूजा करे। उं सोममण्डलाय षोड़शकलात्मने नमः से जल की पूजा करे।

अग्नि-ईशान-नैर्ऋत्य-वायव्य कोणों में क्रमशः ह्रां ह्रदयाय नमः, ॐ ह्रीं शिरसे स्वाहा, ॐ ह्रूं शिखायै वषट्, ह्रैं कवचाय हुं से पूजा करे। मध्य में ह्रां नेत्रत्रयाय वौषट् से और चारो दिशाओं में ॐ ह्रः अस्त्राय फट् से पूजा करे। तब मत्स्यमुद्रा से अर्घ्यपात्र को ढंककर दश बार मूल मन्त्र का जप करे। धेनुमुद्रा से अमृतीकरण और अस्त्रमुद्रा से संरक्षण करे। भूतिनी और योनिमुद्रा दिखावे। इसके बाद उस जल में से थोड़ा जल प्रोक्षणी पात्र में डालकर मूल मन्त्र से जल को अपने ऊपर और पूजन सामग्री पर छिड़के, तब पीठपूजा करे।

श्यामापूजन यन्त्र (१)
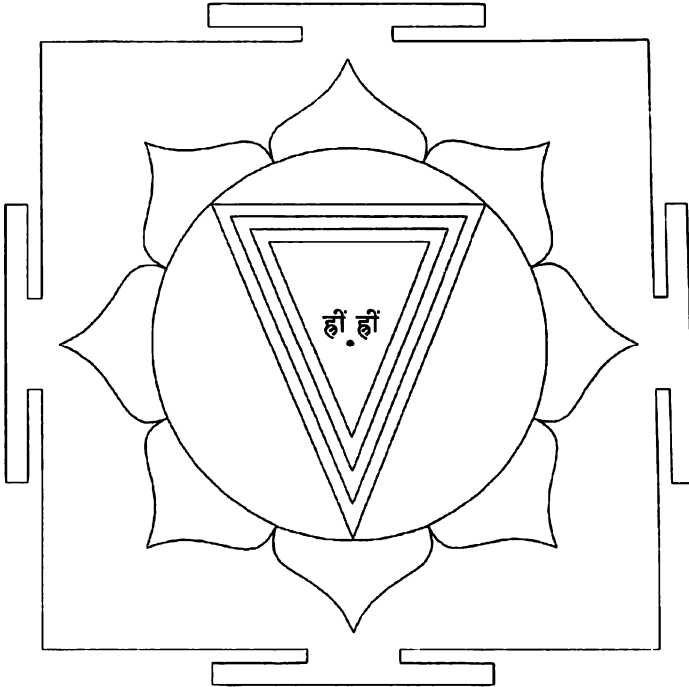
पूजन यन्त्र—पहले बिन्दु, तब 'क्री' 'ह्रीं' लिखे। इनके बाहर त्रिकोण बनावे।

त्रिकोण के बाहर और चार त्रिकोण बनावे। तब वृत्त अष्टदल पद्म और पुन: वृत्त बनावे। अन्त में चार द्वारों से युक्त भूपुर बनावे।

मुण्डमालातन्त्र में वर्णन है कि यन्त्र को ताम्रपात्र में, कपाल में, श्मशान के काष्ठ से बने पात्र में, शनि और मंगलवार में मरे मनुष्य के शरीर में, सोने-चाँदी या लोहे के पात्र में यथाविधि बनावे।

तन्त्रान्तर में दूसरे प्रकार के यन्त्र का वर्णन है। पहले अधोमुख त्रिकोण बनावे। उस पर ऊर्ध्वमुख त्रिकोण बनावे अर्थात् षट्कोण बनाकर उसके बाहर अधोमुख तीन त्रिकोण बनावे। उसके बाहर अष्टदल पद्म और चार द्वारों वाला भूपुर बनावे।

मुण्डमालातन्त्र में वर्णन है कि ताम्रपात्र में, मानवकपालास्थि में, श्मशानकाष्ठ में, शनि और भौमवार में मृत मनुष्य के शरीर में, सोना-चाँदी और लौहपात्र में यथाविधि मन्त्र बनावे। भगवती श्यामा के दूसरे प्रकार के यन्त्र में अधोमुख त्रिकोण पर ऊर्ध्वमुख त्रिकोण अंकित कर षट्कोण बनावे। इसके बाहर तीन अधोमुख त्रिकोण, अष्टदल पद्म और चार द्वार वाला भूपुर बनावे।

श्यामापूजन यन्त्र (२)
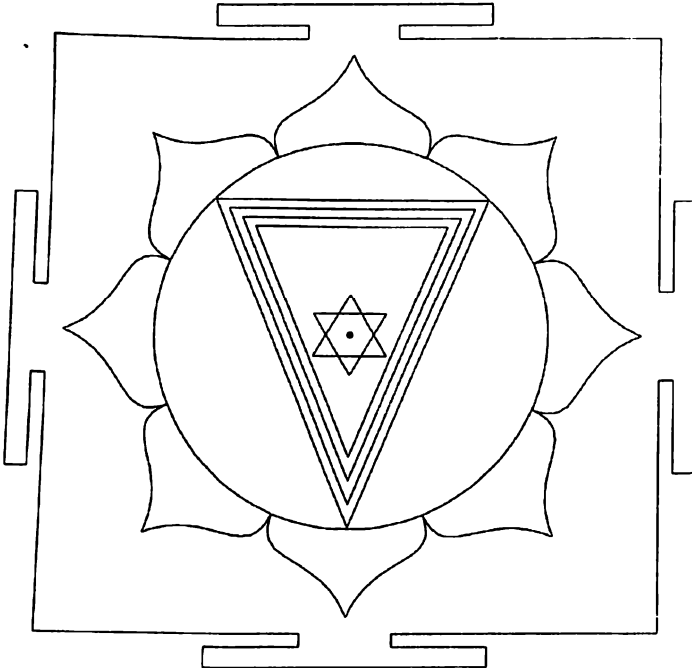
ततः पीठपूजा; कुमारीकल्पे—

पीठपूजां ततः कुर्यादाधारशक्तिपूर्वकम् ।
प्रकृतिं कमठं चैव शेषं पृथ्वीं तथैव च ॥
सुधाम्बुधिं मणिद्वीपं चिन्तामणिगृहं तथा ।
श्मशानं पारिजातञ्च तन्मूले रत्नवेदिकाम् ॥
तस्योपरि मणेः पीठं न्यसेत् साधकसत्तमः ।
चतुर्दिक्षु मुनीन् देवान् शिवांश्चैव समुण्डकाः ॥

धर्माद्यधर्मादींश्चेत्यादि ह्रीं ज्ञानात्मने नमः इत्यन्तं सम्पूज्य, केशरेषु पूर्वादिक्रमेण पूजयेत्।

इच्छा ज्ञाना क्रिया चैव कामिनी कामदायिनी ।
रती रतिप्रिया नन्दा मध्ये चैव मनोन्मनी ॥

सर्वत्र प्रणवादिनमोऽन्तेन पूजयेत्। तदुपरि ह्सौः सदाशिवमहाप्रेतपद्मासनाय नमः। पीठस्योत्तरे गुरुपंक्तिपूजा।

ततः पुनर्ध्यात्वा, पुष्पाञ्जलावानीय, मूलमन्त्रकल्पितमूर्त्तावावाहयेत्—

ॐ देवेशि भक्तिसुलभे परिवारसमन्विते ।
यावत्त्वां पूजयिष्यामि तावत्त्वं सुस्थिरा भव ॥

ततो मूलमुच्चार्यामुकि देवि इहावह इहावह इह तिष्ठ तिष्ठ इह सन्निरुध्यस्व इह सन्निहिता भव। ततो हुमित्यवगुण्ठ्याङ्गमन्त्रैः सकलीकृत्य, धेनुमुद्रया अमृतीकृत्य, परमीकरणमुद्रया परमीकृत्य, भूतिन्याकर्षिणीयोनिमुद्राः प्रदर्श्य, प्राणप्रतिष्ठां विधाय, मूलेन पाद्यादिभिः पूजयेत्। तत्र क्रमः—

आदौ मूलमुच्चार्य एतत्पाद्यं अमुकदेवतायै नमः। एवमर्घ्यं स्वाहा। इदमाचमनीयं स्वधा। स्नानीयं निवेदयामि। पुनराचमनीयं स्वधा। एष गन्धो नमः। एतानि पुष्पाणि वौषट्। ततो मूलेन पञ्चपुष्पाञ्जलिं दत्त्वा धूपदीपौ दद्यात्। वनस्पतीत्यादि पठन् मूलमुच्चार्य एष धूपो नमः। दीपमन्त्रस्तु—

सुप्रकाशो महादीपः सर्वतस्तिमिरापहः ।
सवाह्याभ्यन्तरं ज्योतिर्दीपोऽयं प्रतिगृह्यताम् ॥

मूलमुच्चार्य एष दीपो नमः। तत ॐ जयध्वनि मन्त्रमातः स्वाहेति घण्टां सम्पूज्य, वामहस्तेन वादयन्, नीचैर्धूपं दत्त्वा दृष्टिपर्यन्तं दीपं दद्यात्। ततो मूलेन पुष्पाञ्जलित्रयं दत्त्वा यथोपपन्नं नैवेद्यं दद्यात्।

तत आवरणपूजां कुर्यात्। श्रीअमुकि देवि आवरणं ते पूजयामि इत्याज्ञां

गृहीत्वा, केशरेषु अग्न्यादिकोणेषु ॐ ह्रां हृदयाय नमः। ईशाने ॐ ह्रीं शिरसे स्वाहा। नैर्ऋते ॐ ह्रूं शिखायै वषट्। वायौ ॐ ह्रैं कवचाय हुं। अग्रे ॐ ह्रौं नेत्र-त्रयाय वौषट्। चतुर्दिक्षु ॐ ह्रः अस्त्राय फट्। ततः बहिः षट्कोणे ॐ काल्यै नमः। सर्वत्र प्रणवादिनमोऽन्तेन पूजयेत्। एवं कपालिन्यै कुल्वायै कुरुकुल्वायै विरोधिन्यै विप्रचित्तायै। प्रथमत्र्यस्रे उग्रायै, उग्रप्रभायै, दीप्तायै; द्वितीयत्र्यस्रे ॐ नीलायै, एवं घनायै वलाकायै। तृतीयत्र्यस्रे एवं मात्रायै, मुद्रायै, मितायै। तथा च—

कालीं कपालिनीं कुल्वां कुरुकुल्वां विरोधिनीम् ।
विप्रचित्तां पूजयेच्च बहिःषट्कोणके बुधैः ॥
उग्रामुग्रप्रभां दीप्तां तन्मध्ये च त्रिकोणके ।
नीलां घनां बलाकाञ्च मध्ये त्रिकोणके यजेत् ।
मात्रां मुद्रां मिताञ्चैव पूजयेदपरे त्रिके ॥ इति।
सर्वाः श्यामा असिकरा मुण्डमालाविभूषिताः ।
तर्जनीं वामहस्तेन धारयन्त्यः शुचिस्मिताः ।
दिगम्बरा हसन्मुख्यं स्वस्ववाहनभूषिताः ॥

एवं ध्यात्वा अर्चयेत्। ततोऽष्टपत्रेषु पूर्वादिक्रमेण ॐ ब्राह्म्यै नमः। एवं नारायण्यै, माहेश्वर्यै, चामुण्डायै, कौमार्यै, अपराजितायै, वाराह्यै, नारसिंह्यै। एता गन्धादिभिः पूजयेत्। पत्राग्रे असिताङ्गादिभैवरान् पूजयेत्। ततो मूलेन पुष्पाञ्जलित्रयं दत्वा पाद्यादिना देव्या दक्षिणे महाकालं पूजयेत्। तस्य ध्यानम्—

महाकालं यजेद्देव्या दक्षिणे धूम्रवर्णकम् ।
विभ्रतं दण्डखट्वाङ्गौ दंष्ट्राभीममुखं शिशुम् ॥
व्याघ्रचर्मावृतकटिं तुन्दिलं रक्तवाससम् ।
त्रिनेत्रमूर्ध्वकेशञ्च मुण्डमालाविभूषितम् ।
जटाभारलसच्चन्द्रखण्डमुग्रं ज्वलन्निभम् ॥

पीठपूजा—कर्णिका में—ॐ आधारशक्तये नमः। ॐ प्रकृत्यै नमः। ॐ कमठाय नमः। ॐ शेषाय नमः। ॐ पृथिव्यै नमः। ॐ सुधाम्बुधये नमः। ॐ मणिद्वीपाय नमः। ॐ चिन्तामणिग्रहाय नमः। ॐ श्मशानाय नमः। ॐ पारिजाताय नमः।

कर्णिका के मूल में—ॐ रत्नवेदिकायै नमः। कर्णिका के ऊपर—ॐ मणिपीठाय नमः। चारो दिशाओं में—ॐ मुनिभ्यो नमः। ॐ देवेभ्यो नमः। ॐ शिवाभ्यो नमः। ॐ शिवमुण्डेभ्यो नमः। ॐ धर्माय नमः। ॐ ज्ञानाय नमः। ॐ वैराग्याय नमः। ॐ ऐश्वर्याय नमः। ॐ अधर्माय नमः। ॐ अज्ञानाय नमः। ॐ अवैराग्याय नमः। ॐ अनैश्वर्याय नमः। ह्रीं ज्ञानात्मने नमः।

केशर में पूर्वादि क्रम से—ॐ इच्छायै नम:। ॐ ज्ञानायै नम:। ॐ क्रियायै नम:। ॐ कामिन्यै नम:। ॐ कामदायिन्यै नम:। ॐ रत्यै नम:। ॐ रतिप्रियायै नम:। ॐ नन्दायै नम:। मध्य में—ॐ मनोन्मन्यै नम:। उसके ऊपर ह्सौ: सदाशिवमहाप्रेतपद्मासनाय नम:।

पीठ के उत्तर—ॐ गुरुभ्यो नम:। ॐ परमगुरुभ्यो नम:। ॐ परापरगुरुभ्यो नम:। ॐ परमेष्ठिगुरुभ्यो नम: से पूजन करे। पुन: ध्यान कर पुष्पाञ्जलि लेकर मूल मन्त्र से कल्पित मूर्ति में इस मन्त्र से आवाहन करे—

ॐ देवेशि भक्तसुलभे परिवारसमन्विते।
यावत्त्वां पूजयिष्यामि तावत्त्वं सुस्थिर भव।।

मूल मन्त्र अमुक देवि इहावह इहावह इह तिष्ठ इह तिष्ठ इह सन्निरुद्धस्व इह सन्निहिता भव। तब 'हुं' से अवगुण्ठन, अंगन्यासमन्त्र से सकलीकरण, धेनुमुद्रा से परमीकरण करे। भूतिनी, आकर्षिणी, योनिमुद्रायें दिखाकर प्राणप्रतिष्ठा करके मूल मन्त्र से पाद्यादि उपचारों से पूजन करे। यथा—मूलमन्त्र एतत्पाद्यं अमुकदेवतायै नम:। इसी प्रकार अर्घ्यं स्वाहा, इदमाचमनीयं स्वधा। स्नानीयं निवेदयामि। पुनराचमनीयं स्वधा। एष गन्धो नम:। एतानि पुष्पाणि वौषट्।

मूल मन्त्र से पाँच पुष्पाञ्जलियाँ प्रदान करे। 'वनस्पति' इत्यादि मन्त्र पढ़ कर मूलं एष धूपो नम: से धूप देवे। दीप इस मन्त्र से दिखावे—

सुप्रकाशो महादीप: सर्वतस्तिमिरापह:।
सवाह्याभ्यन्तरं ज्योतिर्दीपोऽयं प्रतिगृह्यताम्।।

मूल एष दीपो नम:।

ॐ जय ध्वनि मन्त्र मात: स्वाहा से घण्टा-पूजन करके उसे बाँयें हाथ से बजाता रहे। धूप नीचे मुख करके और दीपक नेत्र तक ऊपर उठाकर प्रदान करे; तब मूल मन्त्र से तीन पुष्पाञ्जलियाँ देकर नैवेद्य निवेदन करे।

यन्त्र-पूजन—श्री अमुकि देवी आवरणं ते पूजयामि नम: से आज्ञा लेकर पद्मकेशर में षडंग पूजा करे। आग्नेय में ॐ ह्रां हृदयाय नम:। ईशान में ॐ ह्रीं शिरसे स्वाहा। नैर्ऋत्य में ॐ ह्रूं शिखायै वषट्। वायव्य में ॐ ह्रैं कवचाय हुं। आगे ॐ ह्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्। चारो दिशाओं में ॐ ह्रः अस्त्राय फट्।

षट्कोण में ॐ काल्यै नम:। ॐ कपालिन्यै नम:। ॐ कुल्लायै नम:। ॐ कुरुकुल्लायै नम:। ॐ विरोधिन्यै नम:। ॐ विप्रचित्तायै नम: से पूजन करे। प्रथम त्रिकोण में ॐ उग्रायै नम:, ॐ उग्रप्रभायै नम:, ॐ दीप्तायै नम:। द्वितीय त्रिकोण में ॐ नीलायै नम:, ॐ घनायै नम:, ॐ बलाकायै नम:। तृतीय त्रिकोण में ॐ मात्रायै नम:, ॐ मितायै नम:, ॐ मुद्रायै नम:।

सभी श्याम वर्ण की हैं। सबों के हाथों में तलवार, गले में मुण्डमाला, बाँयें हाथ में तर्जनी और मुख में मुस्कान है। सभी नग्न वेश में अपने वाहन पर विराजमान हैं।

अष्टदल पद्म में पूर्वादि क्रम से ॐ ब्राह्म्यै नमः। ॐ नारायण्यै नमः। ॐ माहेश्वर्यै नमः। ॐ चामुण्डायै नमः। ॐ कौमार्यै नमः। ॐ अपराजितायै नमः। ॐ वाराह्यै नमः। ॐ नारसिंह्यै नमः से पञ्चोपचार पूजन करे।

पद्मदलों के अग्रभाग में—ॐ असितांगभैरवाय नमः। ॐ रुरुभैरवाय नमः। ॐ चण्डभैरवाय नमः। ॐ क्रोधभैरवाय नमः। ॐ उन्मत्तभैरवाय नमः। ॐ कपालीभैरवाय नमः। ॐ भीषणभैरवाय नमः। ॐ संहारभैरवाय नमः से पूजा करके मूल मन्त्र से तीन पुष्पाञ्जलियाँ देकर देवी के दाँयें महाकाल भैरव का निम्नवत् ध्यान करे—

महाकालं यजेद्देव्या दक्षिणे धूम्रवर्णकम्।
विभ्रतं दण्डखट्वाङ्गौ दंष्ट्राभीममुखं शिशुम्।।
व्याघ्रचर्मावृतकटिं तुन्दिलं रक्तवाससम्।
त्रिनेत्रमूर्ध्वकेशञ्च मुण्डमालाविभूषितम्।
जटाभारलसच्चन्द्रखण्डमुग्रं ज्वलन्निभम्।।

देवी के दाँयें भाग में धूम्रवर्ण महाकाल की पूजा करे। इनके हाथों में दण्ड और खट्वांग है। भयानक दाँतों के कारण इनका मुख भयंकर है। कमर में व्याघ्रचर्म है। उदर अतिस्थूल है। वस्त्र लाल है। तीन नेत्र हैं। इनका केश ऊर्ध्वमुख है। गले में मुण्डमाला है। मस्तक पर जटायें हैं। वे चारो ओर बिखरी हुई हैं। कपाल अर्द्धचन्द्र से प्रकाशित है। स्वरूप उग्र है। देहकान्ति अग्नि के समान उज्ज्वल है।

तथा च कुमारीकल्पे—

देव्यास्तु दक्षिणे भागे महाकालं प्रपूजयेत्।

हूं क्ष्रौं यां रां लां वां आं क्रों महाकालभैरवं सर्वविघ्नान्नाशय नाशय ह्रीं श्रीं फट् स्वाहा। इत्यनेन पाद्यादिभिराराध्य त्रिस्तर्पयित्वा मूलेन देवीं पञ्चोपचारैः पूजयेत्। तथा च कालीतन्त्रे—

महाकालं यजेद्यत्नात्पश्चाद्देवीं प्रपूजयेत्।

कालीकल्पे—

कवचं क्ष्रौं समुद्धृत्य यां रां लां वां आं क्रोन्ततः।
महाकालभैरवेति सर्वविघ्नान्नाशयेति च॥
नाशयेति पुनः प्रोच्य मायां लक्ष्मीं समुद्धरेत्।
फट्स्वाहया समायुक्तो मन्त्रः सर्वार्थसाधकः॥

ततो देव्या अस्त्रं पूजयेत्। तथा च कालीहृदये—

देवीवामोर्ध्वाधोहस्ते खड्गं मुण्डञ्च पूजयेत् ।
देव्या दक्षहस्तोर्ध्वाधः पूजयेदभयं वरम् ॥

ततो देवीं ध्यात्वा यथाशक्ति जप्त्वा गुह्यातीत्यादिना देव्या वामहस्ते जपं समर्प्य आत्मसमर्पणं कुर्यात्। तथा च स्वतन्त्रे—

ततः पुनर्मूलदेवीं मुद्रातर्पणपूजनैः ।
अर्चयित्वा जपं कृत्वा नत्वा विसर्जयेद्हृदि ॥

ततः स्तुत्वा, प्रदक्षिणीकृत्याष्टाङ्गप्रणामं कृत्वा, श्रीजगन्मङ्गलं नाम कवचं पठेत्। तत आवरणदेवता देव्या अङ्गे विलाप्य, संहारमुद्रया अमुकि देवि क्षमस्व इति विसृज्य, तत्तेजःपुष्पेण समं स्वहृद्यारोपयेत्।

ॐ उत्तरे शिखरे देवि भूम्यां पर्वतवासिनि ।
ब्रह्मयोनिसमुत्पन्ने गच्छ देवि ममान्तरम् ॥

इति मन्त्रेण। ततस्तन्नैवेद्यं किञ्चिदुच्छिष्टचाण्डालिन्यै नमः इत्यैशान्यां दिशि दत्त्वा, शेषमिष्टेभ्यो दत्त्वा, किञ्चित् स्वीकृत्य, पादोदकं पीत्वा, निर्माल्यं शिरसि विधृत्य, यथेच्छं विहरेदिति। ततो यन्त्रलेपं वामहस्ते कृत्वा सव्यहस्त-कनिष्ठया मायाबीजं विलिख्य तया तिलकं कुर्यात्। तथा च—

वामे कृत्वा यन्त्रेलपं मायां सव्यकनिष्ठया ।
विलिख्य तिलकं कुर्यान्मन्त्रेणानेन साधकः ॥
यंयं स्पृशामि पादाभ्यां यो मां पश्यति चक्षुषा।
स एव दासतां यातु राजानो दुष्टदस्यवः ॥

जपकाले च कर्पूरयुक्ता जिह्वा कार्या। तथा च—

कर्पूराढ्या सदा जिह्वा कर्त्तव्या जपकर्मणि ।

इति विश्वसारवचनात्। इदं काम्यजप एवेति।

ततो मूलेनाष्टोत्तरशताभिमन्त्रितं पुष्पं चन्दनञ्च धृत्वा त्रैलोक्यं वशमानयेत्। सर्वसिद्धियुतो भूत्वा भैरवो वत्सराद्भवेत्। अस्य पुरश्चरणं लक्षद्वयजपः। तथा च कालीतन्त्रे—

लक्षमेकं जपेन्मन्त्री हविष्याशी दिवा शुचिः ।
रात्रौ ताम्बूलपूरास्यः शय्यायां लक्षमानतः ॥

व्यवस्थामाह स्वतन्त्रे—

दिवा लक्षं शुचिर्भूत्वा हविष्याशी जपेन्नरः ।
ततस्तत्तद्दशांशेन होमयेद्धविषा प्रिये ॥

अत्राङ्गस्य कालान्तरमाह नीलसारस्वते—

लक्षमेकं जपेन्मन्त्रं हविष्याशी दिवा शुचिः ।
अशुचिश्च तथा रात्रौ लक्षमेकं तथैव च ।
दशांशं होमयेन्मन्त्री तर्पयेदभिषेचयेत् ।।

इति साम्प्रदायिकाः। वस्तुतस्तु कुमारीकल्पे—

लक्षमेकं जपेद्विद्यां हविष्याशी दिवा शुचिः ।
रात्रौ ताम्बूलपूरास्यः शय्यायां लक्षमानतः ।।
एवं लक्षद्वयं जप्त्वा तद्दशांशेन मन्त्रवित् ।
अयुतं होमयेद्देवि दिवारात्रिविभेदतः ।।

तेन दिवा लक्षं जप्त्वा तद्दशाशं होमं कुर्यात्। रात्रौ लक्षं जप्त्वा रात्रौ तद्दशांशं होमं कुर्यादिति रहस्यार्थः।

रात्रिजपे तु कालो मुण्डमालायाम्—

गते तु प्रथमे यामे तृतीयप्रहरावधि ।
निशायान्तु प्रजप्तव्यं रात्रिशेषे जपेन्न हि ।।

ध्यान के बाद देवी के दाँयें भाग में महाकाल की इस मन्त्र से पूजा करे—हूं क्ष्रौं यां रां लां वां आं क्रों महाकालभैरव सर्वविघ्नान् नाशय नाशय ह्रीं श्रीं फट् स्वाहा। इस मन्त्र से पाद्यादि उपचारों द्वारा यथाविधि पूजन करे। तीन बार तर्पण करे। इसके बाद मूल मन्त्र से गन्धादि उपचारों से देवी की पूजा करे। तब देवी का ध्यान करते हुए मूल मन्त्र का यथाशक्ति जप करे। जप का समर्पण देवी के बाँयें हाथ में ॐ गुह्यातिगुह्यगोप्त्री त्वं इत्यादि मन्त्र से करे। जप के समय मुख में कपूर का टुकड़ा रख ले। विशेष कर काम्य जप में ऐसा करना आवश्यक है। तब आत्मसमर्पण करके कर्पूरादि स्तोत्र का पाठ करे। फिर प्रदक्षिणा करके अष्टांग प्रणाम करे। जगन्मंगल नामक कवचे पढ़े। तब देवी के अंगों में आवरण-देवताओं को विलीन होने की भावना करे। संहारमुद्रा से 'ॐ अमुकि देवि क्षमस्व' कहकर विसर्जन करे। देवी के तेज को पुष्प के साथ निम्न मन्त्र से अपने हृदय में आरोपित करे—

ॐ उत्तरे शिखरे देवि भूम्यां पर्वतवासिनि।
ब्रह्मयोनिसमुत्पन्ने गच्छ देवि ममान्तरम्।।

इसके बाद निवेदित नैवेद्य का कुछ अंश लेकर 'ॐ उच्छिष्टचाण्डालिन्यै नमः' से ईशान कोण में बलि प्रदान करे। निर्माल्य को मस्तक पर धारण करके विहार करे। इसके बाद यन्त्र पर लगे हुए चन्दन को बाँयें हाथ में लेकर उसमें दाहिने हाथ की कनिष्ठा अंगुलि से ह्रीं लिखकर उस चन्दन से निम्न मन्त्र पढ़ता हुआ ललाट पर तिलक लगावे—

ॐ यं यं स्पृशामि पादाभ्यां यो मां पश्यति चक्षुषा।
स एव दासतां यातु राजानो दुष्टदस्यवः।।

तब १०८ बार जप से अभिमन्त्रित पुष्प और चन्दन धारण करे। इस प्रकार एक वर्ष तक देवी की उपासना करने से साधक सर्वसिद्धियों से समन्वित होकर भैरव के समान हो जाता है और तीनों लोकों को अपने वश में करने में समर्थ हो जाता है। इस मन्त्र का पुरश्चरण दो लाख जप से होता है। दिन में हविष्याशी रहकर एक लाख जप करे। रात में पान मुख में रखकर शय्या पर बैठकर एक लाख जप करे। दिन में जपसंख्या पूर्ण होने पर उसका दशांश घी से हवन करे। रात्रिजप के बाद दश हजार हवन करे। रात्रिजप के बारे में विशेष नियम यह है कि दूसरे प्रहर से लेकर तीसरे प्रहर तक जप करे। रात्रि के अन्त काल में जप न करे।

अस्य पुरश्चरणं लक्षजपश्च पूर्णानन्दमतेन। अत्रेदं बोध्यं विप्राणान्तु दिवा लक्ष-जपमात्रेणैव पुरश्चरणम्। तथा च फेत्कारीये—

द्विजातीनाञ्च सर्वेषां दिवाविधिरिहोच्यते ।
शूद्राणाञ्च तथा प्रोक्तं रात्राविष्टं महाफलम् ।।

कालीरहस्येऽपि—

दिवैव प्रजपेन्मन्त्रं लक्षमेकं शुचिर्द्विजः ।

पूर्णानन्दमतेन लक्षजपे पुरश्चरणं तत् सन्दिग्धमतं, नानातन्त्रे लक्षद्वयदर्शनात् लक्षद्वयेनैव पुरश्चरणं सिद्धमिति। अन्यत्र च—

दिवैव प्रजपेन्मन्त्रं न तु रात्रौ कदाचन ।

श्यामायाः पुरश्चरणाङ्गब्राह्मणभोजनं हविष्यान्नेन कारयितव्यम् ।

तथा च विश्वसारे—

लक्षमेकं जपेद्विद्यां हविष्याशी दिवाशुचिः ।
ततस्तु तद्दशांशेन होमयेद्धविषा प्रिये ।।
तर्पयेत्तद्दशांशेन तीर्थतोयेन पार्वतीम् ।
मधुना वा सितामिश्रतोयेन परमेश्वरि ।।
देवीञ्चाभिषिञ्चेत्तोयैस्तर्पणस्य दशांशतः ।
तद्दशांशं हविष्यान्नैर्भक्तितो भोजयेद् द्विजान् ।।
कालीमन्त्रविदो मन्त्री दक्षिणां गुरवे दिशेत् ।
पाशवं कथितं कल्पं शृणु वीरं ततः प्रिये ।।
रात्रौ ताम्बूलपूरास्यः शय्यायां लक्षमानतः ।
जप्त्वा समाहितो मन्त्री होमयेत् कल्पितानले ।।

कालीकुलार्णवे—

पाशवेन तु कल्पेन लक्षं जप्यात् समाहितः ।
दिव्यगुरुमुखाल्लब्ध्वा कालिकां दिव्यरूपिणीम् ।
लक्षं जप्यात्सदा मन्त्री वीरकल्पेन साधकः ॥

विश्वसारे—

प्रजपेत् परया भक्त्या लक्षमेकं दिवानिशम् ।

यत्तु कुमारीकल्पे—

लक्षमेकं जपेन्मन्त्रं हविष्याशी दिवा शुचिः ।
रात्रौ ताम्बूलपूरास्यः शय्यायां लक्षमानतः ।
एवं लक्षद्वयं जप्त्वा तद्दशांशेन मन्त्रवित् ॥

इति वचनात् लक्षद्वयस्य विशिष्टस्य पुरश्चरणमिति। तन्न, पूर्वोक्तवचनविरोधात्। एतद्वचनस्य पुरश्चरणद्वये तात्पर्यम्।

पूर्णानन्द के मत से इस मन्त्र का पुरश्चरण एक लाख जप से ही हो जाता है। फेत्कारीतन्त्र में वर्णन है कि ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य के लिये दिन में एवं शूद्र के लिये रात में हवन करना प्रशस्त है। अन्य देवताओं के पुरश्चरण में दिन में ही जप करे; रात में कदापि जप न करे। इन देवताओं के पुरश्चरण के अंग ब्राह्मणभोजन में हविष्यान्न खिलावे।

विश्वसारतन्त्र में लिखा है कि जप का दशांश हवन, हवन का दशांश तर्पण, तर्पण का दशांश मार्जन करे। अभिषेक और तर्पण तीर्थजल, मधु अथवा शर्करामिश्रित जल से करे। मार्जन का दशांश ब्राह्मणभोजन करावे। अन्त में गुरुदेव को दक्षिणा देकर अपने पुरश्चरण को पूर्ण करे।

अब तक का वर्णन पशुकल्प में हुआ है। अब वीरकल्प का वर्णन करता हूँ। रात में ताम्बूलपूरित मुख से शय्या पर एक लाख जप करे। समाहित चित्त से कल्पित अग्नि में हवन करे।

कालीकुलार्णव के अनुसार पशुकल्प में समाहित चित्त से एक लाख जप करे। दिव्य गुरु के मुख से प्राप्त कालिका दिव्यरूपिणी होती है। वीर कल्प से एक लाख जप ही प्रशस्त है।

विश्वसार के अनुसार परम भक्ति से दिन-रात में एक लाख जप करे। कुमारीकल्प के अनुसार दिन में एक लाख जप करे।

कुमारीकल्प के अनुसार पवित्र और हविष्याशी रहकर दिन में एक लाख जप करके

रात में ताम्बूलपूरित मुख से शय्या पर बैठ कर एक लाख जप करे। दशांश हवन करे। इस प्रकार के मतवैभिन्न्य में दो लाख जप ही विशिष्ट माना जाता है।

मन्त्रभेदा:

वर्गाद्यं वह्निसंयुक्तं रतिविन्दुविभूषितम् ।
एकाक्षरो महामन्त्रः सर्वकामफलप्रदः ।
त्रिगुणा तु विशेषेण सर्वशास्त्रप्रबोधिनी ॥

अनयोः पूजाप्रयोगः—प्रातःकृत्यादिप्राणायामान्तं विधाय, पूर्वोक्तऋषि-च्छन्दोदेवता विन्यस्य, वर्णन्यासं कृत्वा, कराङ्गन्यासौ कुर्यात्। यथा—

ॐ क्रां अंगुष्ठाभ्यां नमः। ॐ क्रीं तर्जनीभ्यां स्वाहा इत्यादि। एवं ॐ क्रां हृदयाय नमः इत्यादि। तथा च वीरतन्त्रे—

दीर्घषट्कयुताद्येन प्रणवाद्येन कल्पयेत् ।
षडङ्गानि मनोरस्य जातियुक्तेन देशिकः ॥

अन्यत् सर्वं पूर्ववत् कार्यम्। एकाक्षरस्य ध्यानं सिद्धेश्वरतन्त्रे—

शवारूढां महाभीमां घोरदंष्ट्रां वरप्रदाम् ।
हास्ययुक्तां त्रिनेत्राञ्च कपालकर्तृकाकराम् ॥
मुक्तकेशीं ललज्जिह्वां पिबन्तीं रुधिरं मुहुः ।
चतुर्बाहुयुतां देवीं वराभयकरां स्मरेत् ॥

अनयोः पुरश्चरणं लक्षजपः। तथा च सिद्धेश्वरतन्त्रे—

एवं ध्यात्वा जपेन्मन्त्रं लक्षमेकं विधानतः ।
तद्दशांशविधानेन होमयेत् साधकोत्तमः ॥

कुलचूडामणौ—

एवं ध्यात्वा जपेन्मन्त्रं हविष्याशी दिवा शुचिः ।
लक्षं रात्रौ तथा लक्षं महाशौचपरायणः ।
रात्रौ जपैकमात्रेण दक्षिणा सिद्धिदा भवेत् ॥

अन्य मन्त्र—'क्रीं'—इस एकाक्षर महामन्त्र से सभी मनोरथ पूर्ण होते हैं। 'क्रीं क्रीं क्रीं'—इस त्र्यक्षर मन्त्र का उपासक सभी शास्त्रों का ज्ञाता हो जाता है।

दोनों मन्त्रों की पूजा-पद्धति इस प्रकार की है। प्रातःकृत्य से प्राणायाम तक की क्रिया करके पूर्वोक्त ऋष्यादि न्यास और वर्णन्यास करे। ॐ क्रां अंगुष्ठाभ्यां नमः इत्यादि एवं ॐ क्रां हृदयाय नमः इत्यादि से क्रमश करांगन्यास करे। अन्य सभी पूजन कर्म पूर्व-लिखित विधि से करे। वीरतन्त्र के अनुसार दीर्घ षट्कयुक्त आद्य बीज के पहले ॐ

लगाकर षडंग न्यास करे। अन्य सभी पूर्ववत् हैं।

विशुद्धेश्वर तन्त्र के अनुसार एकाक्षर मन्त्र का ध्यान है—

शवारूढां महाभीमां घोरदंष्ट्रां वरप्रदाम् ।
हास्ययुक्तां त्रिनेत्राञ्च कपालकर्तृकाकराम् ।।
मुक्तकेशीं ललज्जिह्वां पिबन्तीं रुधिरं मुहुः ।
चतुर्बाहुयुतां देवीं वराभयकरां स्मरेत् ।।

देवी शवारूढ़ा हैं। आकृति बड़ी भयंकर है। भयानक दाँत हैं। वरदान दे रही हैं। हास्यमुखी और त्रिनयना हैं। हाथों में कपाल और कैंची है। केश बिखरे हुए हैं। जीभ चञ्चल है। ये बार-बार रक्त का पान कर रही हैं। चार हाथों में नरमुंड, खड्ग, वर और अभयमुद्रा है।

इन दोनों मन्त्रों का पुरश्चरण एक लाख जप से होता है। सिद्धेश्वरतन्त्र के अनुसार ध्यान करके एक लाख जप विधिवत् करे। उसका दशांश दस हजार हवन करे। 'कुलचूड़ामणि' के अनुसार ऐसा ध्यान करके हविष्याशी रहकर दिन में एक लाख और रात में एक लाख जप करे। रात के जप से ही दक्षिणा काली सिद्धिदा होती है।

मन्त्रान्तरम्

कालीतन्त्रे—

विद्यारत्नं प्रवक्ष्यामि शृणुष्व कमलानने ।
मायाद्वयं कूर्चयुग्ममैन्द्रान्तं मादनत्रयम् ।
मायाविन्द्वीश्वरयुतं दक्षिणे कालिके पदम् ।।
संहारक्रमयोगेन बीजसप्तकमुद्धरेत् ।
एकविंशाक्षरो ज्ञेयस्ताराद्यः कालिकामनुः ।।

इन्द्रस्य समीपं ऐन्द्रं रेफः। तथा च तन्त्रे—

माये क्रोधौ त्रयः कामा वह्न्यन्ते रतिसंयुताः ।
विन्दुयुक्ता महेशानि सम्बोधनपदद्वयम् ।
सप्तबीजानि संहारैः स्वाहान्तः प्रणवादिकः ।।

इत्यत्र स्फुटमाह। तथा च—

प्रणवं मायाद्वयं कूर्चद्वयं निजबीजत्रयं दक्षिणे कालिके निजबीजत्रयम्। कूर्चद्वयं मायाद्वयम् इत्येकविंशाक्षरः। अस्याः पूजादिकं दक्षिणावत् कार्यम्। पुरश्चरणन्तु लक्षजपः तन्त्रोक्तत्वात्। होमस्तु तद्दशांशतः। विश्वसारे—

स्वाहान्तश्च त्रयोविंशत्यक्षरो मन्त्रराजकः ।
विना प्रणवं देवेशि द्वाविंशत्यक्षरी भवेत् ।।

स्वाहा विना चैकविंशत्यक्षरः कामदो मनुः ।
विंशत्यर्णा महाविद्या स्वाहाप्रणववर्जिता ।
ध्यानपूजादिकं सर्वं दक्षिणावदुपाचरेत् ॥

भैरवतन्त्रे—

कामबीजद्वयं देवि दीर्घहूङ्कारमेव च ।
त्र्यक्षरी सा महाविद्या चामुण्डा कालिका स्मृता ॥

तन्त्रे—

अथ वक्ष्ये महाविद्यां सिद्धविद्यां महोदयाम् ।
भैरवेण पुरा प्रोक्ता कालीहृदयसंज्ञिता ।
अस्या ज्ञानप्रभावेण कलयामि जगत्त्रयम् ॥
प्रणवं पूर्वमुद्धृत्य हृल्लेखाबीजमुद्धरेत् ।
रतिबीजं समुद्धृत्य पञ्चमभगान्वितम् ।
ठद्वयेन समायुक्ता विद्याराज्ञी प्रकीर्तिता ॥

रतिबीजं निजबीजम्। तथा च चामुण्डातन्त्रे—

रत्याद्या कालिका पातु द्वाविंशाक्षररूपिणी ।

इति चामुण्डातन्त्रस्थकवचप्रतिपादनात्। तेन प्रणवो मायाबीजं निजबीजं पञ्चमो मकारः भग एकारः वह्निवल्लभा।

मन्त्रान्तर—विद्यारत्न अर्थात् सर्वश्रेष्ठ मन्त्र इक्कीस अक्षरों का है। यह सर्वकाम-फलप्रदायक है। मन्त्र है—ॐ ह्रीं ह्रीं हूं हूं क्रीं क्रीं क्रीं दक्षिणकालिके क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं। इसका पुरश्चरण एक लाख जप से होता है। तन्त्रान्तरों में भी मन्त्र इसी प्रकार का वर्णित है।

विश्वसारतन्त्र के अनुसार तेईस अक्षरों का मन्त्र है—ॐ ह्रीं ह्रीं हूं हूं क्रीं क्रीं क्रीं दक्षिणे कालिके क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा।

बाईस अक्षरों का मन्त्र है—ह्रीं ह्रीं हूं हूं क्रीं क्रीं क्रीं दक्षिणे कालिके क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा। इसके पहले ॐ नहीं है।

बीस अक्षरों का मन्त्र है—ह्रीं ह्रीं हूं हूं क्रीं क्रीं क्रीं दक्षिणे कालिके क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं।

उपर्युक्त चारो मन्त्रों के ध्यान-पूजनादि दक्षिणकालिका की पद्धति के अनुसार होते हैं।

क्री क्रीं हूँ—त्र्यक्षर मन्त्र चामुण्डा काली की साधना में प्रशस्त है।

भैरवतन्त्र और मुण्डमाला के अनुसार कालीहृदय नामक सिद्धविद्या के बल से ही

भगवान् शिव ने तीनों लोकों की सृष्टि की है। मन्त्र है—ॐ ह्रीं क्रीं मे स्वाहा। इसे विद्या-राज्ञी कहते हैं।

अस्य पूजाप्रयोगः—प्रातःकृत्यादि प्राणायामान्तं कर्म विधाय ऋष्यादिन्यासं कुर्यात्। यथा—

अस्य मन्त्रस्य भैरवऋषिर्विराट्छन्दः सिद्धकाली ब्रह्मरूपा भुवनेश्वरी देवता निजबीजं बीजं लज्जाबीजं शक्तिः। वर्णन्यासकराङ्गन्यासौ च दक्षिणावत्। ध्यानन्तु—

खड्गोद्भिन्नेन्दुखण्डस्रवदमृतरसाप्लाविताङ्गी त्रिनेत्रा,
सव्ये पाणौ कपालाद् गलदसृजमथो मुक्तकेशी पिबन्ती।
दिग्वस्त्रा बद्धकाञ्ची मणिमयमुकुटाद्यैर्युता दीप्तजिह्वा,
पायान्नीलोत्पलाभा रविशशिविलसत्कुण्डलालीढपादा॥

एवं ध्यात्वा दक्षिणावत् सर्वं कार्यम्। पुरश्चरणन्तु एकविंशतिसहस्रजपः। तदुक्तं कालीतन्त्रे—

जपेद्विंशतिसाहस्र्यं सहस्रैकेन संयुतम्।
होमयेत्तद्दशांशेन मृदुपुष्पेण मन्त्रवित्॥

मन्त्रान्तरं विश्वसारे—

मूलबीजं ततो माया लज्जाबीजं ततः परम्।
महाविद्या महाकाल्या महाकालेन भाषिता॥
वर्गाद्यं वह्निसंयुक्तं रतिबिन्दुसमन्वितम्।

एतत्त्रयं वह्निवल्लभा। निजबीजत्रयं फट् वह्निवल्लभा। निजबीजत्रयं कूर्चं लज्जा पुनस्तान्येव वह्निवल्लभा। वाग्भवं नमो मूलबीजं पुनस्तदेव कालिकायै वह्निवल्लभा।

एतासां पूजाप्रयोगः—प्रातःकृत्यादिप्राणायामान्तं विधाय ऋष्यादिन्यासं कुर्यात्। यथा—दक्षिणामूर्त्तिर्ऋषिः पंक्तिश्छन्दः कालिका देवता। शिरसि दक्षिणामूर्त्तिऋषये नमः। मुखे पंक्तिच्छन्दसे नमः। हृदि कालिकायै देवतायै नमः। ततो ध्यानम्—

चतुर्भुजा कृष्णवर्णा मुण्डमालाविभूषिता।
खड्गञ्च दक्षिणे पाणौ विभ्रतीन्दीवरद्वयम्॥
कर्त्रीञ्च खर्परञ्चैव क्रमाद्वामेन विभ्रती।
द्यां लिखन्तीं जटामेकां विभ्रती शिरसा स्वयम्॥
मुण्डमालाधरा शीर्षे ग्रीवायामथ चापरम्।
वक्षसा नागहारञ्च विभ्रती रक्तलोचना॥

कृष्णवस्त्रधरा कट्यां व्याघ्राजिनसमन्विता ।
वामपादं शवहृदि संस्थाप्य दक्षिणं पदम् ॥
विलाप्य सिंहपृष्ठे तु लेलिहाना शवं स्वयम् ।
साट्टहासा महाघोररावयुक्ता सुभीषणा ॥

एवं ध्यात्वा अन्यत् सर्वं दक्षिणावत् कुर्यात्। पूर्वोक्तानां मन्त्राणां सर्वं दक्षिणावत् कार्यम्। अस्य पुरश्चरणं लक्षद्वयजपः। अन्यासां मन्त्रवर्णसंख्यलक्षजपः।

इस मन्त्र की पूजाविधि इस प्रकार है। सामान्य पूजापद्धति से प्रातःकृत्य से प्राणायाम तक की क्रिया करके ऋष्यादि न्यास करे।

ऋष्यादि न्यास—शिरसि दक्षिणामूर्तिऋषये नमः। मुखे पंक्तिच्छन्दसे नमः। हृदये सिद्धकाली ब्रह्मरूपायै भुवनेश्वरी देवतायै नमः। गुह्ये क्रीं बीजाय नमः। पादयोः ह्रीं शक्तये नमः। तब दक्षिणकालिका की पद्धति से वर्णन्यास और करांगन्यास करके निम्नवत् ध्यान करे—

खड्गोद्भिन्नेन्दुखण्डस्त्रवदमृतरसाप्लाविताङ्गी त्रिनेत्रा,
सव्ये पाणौ कपालाद् गलदसृजमथो गुक्तकेशी पिबन्ती ।
दिग्वस्त्रा बद्धकाञ्ची मणिमयमुकुटाद्यैर्युता दीप्तजिह्वा,
पायान्नीलोत्पलाभा रविशशिविलसत्कुण्डलालीढपादा ।।

खड्गोद्भिन्न चन्द्रमण्डल से झरते हुए सुधारस से शरीर तर है। तीन नेत्र हैं। बाँयें हाथ में नरकपाल है। उससे गिरते हुए रक्त का पान देवी कर रही हैं। केश बिखरे हुए हैं। नंगे वदन हैं। कमर में कांजीवरम् की रेशमी साड़ी है। शिर पर मणियों का मुकुट है। जीभ उज्ज्वल है। शरीर का वर्ण नीलकमल के समान नीला है। दोनों कानों में कुण्डल चन्द्र-सूर्य के समान शोभित हैं। देवी आलीढ़ पद पर खड़ी हैं; ऐसी देवी हमारी रक्षा करें। इसके बाद दक्षिणकालिका की पद्धति से सारी पूजा करे। इस मन्त्र का पुरश्चरण इक्कीस सहस्र जप से होता है। जप का दशांश २१०० हवन शिरीष के फूलों से करे।

विश्वसारतन्त्र में महाकाल के द्वारा कथित त्र्यक्षर मन्त्र है—क्रीं हूं ह्रीं।

क्रीं क्रीं क्रीं स्वाहा—यह पञ्चाक्षर मन्त्र है।

क्रीं क्रीं क्रीं फट् स्वाहा—यह षडक्षर मन्त्र त्रैलोक्यमोहक है।

क्रीं हूं ह्रीं क्रीं हूं ह्रीं स्वाहा—यह अष्टाक्षर मन्त्र चतुर्वर्गफलदायक है।

ऐं नमः क्रीं क्रीं कालिकायै स्वाहा।

उपर्युक्त पाँचों मन्त्रों की विधि है कि पहले प्रातःकृत्य से प्राणायाम तक की क्रिया करके ऋष्यादि न्यास करे। मस्तके दक्षिणामूर्ति ऋषये नमः। मुखे पंक्तिछन्दसे नमः। हृदये कालिकायै देवतायै नमः। इसके बाद निम्नवत् ध्यान करे—

चतुर्भुजा कृष्णवर्णा मुण्डमालाविभूषिता ।
खड्गञ्च दक्षिणे पाणौ विभ्रतीन्दीवरद्वयम् ।।
कर्त्रीञ्च खर्परञ्चैव क्रमाद्वामेन विभ्रती ।
द्यां लिखन्तीं जटामेकां विभ्रती शिरसा स्वयम् ।।
मुण्डमालाधरा शीर्षे ग्रीवायामथ चापरम् ।
वक्षसा नागहारञ्च विभ्रती रक्तलोचना ।।
कृष्णवस्त्रधरा कट्यां व्याघ्राजिनसमन्विता ।
वामपादं शवहृदि संस्थाप्य दक्षिणं पदम् ।।
विलाप्य सिंहपृष्ठे तु लेलिहाना शवं स्वयम् ।
साट्टहासा महाघोररावयुक्ता सुभीषणा ।।

देवी चतुर्भुजा, कृष्णवर्णा और मुण्डमालाधारिणी हैं। दोनों दाँयें हाथों में खड्ग और दो नीलकमल है। दोनों बाँयें हाथों में कैंची और खर्पर है। देवी की दो जटाओं में से एक गगनस्पर्शी है। शिर और गले में दो मुण्डमालायें हैं। वक्ष पर नागहार है। आँखें लाल हैं। कमर में काला वस्त्र और व्याघ्रचर्म है। शव के हृदय पर बाँयाँ पैर और सिंह की पीठ पर दाँयाँ पैर रखकर ये विराजमान हैं। मद्यपान, अट्टहास और भीषण शब्द कर रही हैं। इनकी आकृति भयानक है।

इसके बाद दक्षिणकालिका की पद्धति से पूजा करे। इसका पुरश्चरण दो लाख जप से होता है। ग्यारह अक्षरों वाले मन्त्र को छोड़कर अन्य मन्त्रों में जितने वर्ण हैं, उतने लाख जप से उनका पुरश्चरण होता है।

निजबीजद्वयं मायाद्वयं दक्षिणकालिके वह्निवल्लभा। निजं कूर्चं लज्जा दक्षिणे कालिके फट्। मूलबीजद्वयं कूर्चद्वयं लज्जाद्वयं दक्षिणे कालिके पूर्वषड्बीजानि वह्निवल्लभा।

एतासां पूजाप्रयोगः—प्रातःकृत्यादिप्राणायामान्तं विधाय ऋष्यादिन्यासं कुर्यात्। एतासां दक्षिणामूर्त्तिऋषिः पंक्तिश्छन्दः दक्षिणकालिका देवता। अन्यत् सर्वं दक्षिणावत्।

क्रीं ह्रीं ह्रीं दक्षिणे कालिके स्वाहा—यह ग्यारह अक्षर का मन्त्र चतुर्वर्गफलदायक है।

क्रीं हूं ह्रीं दक्षिणे कालिके फट्—यह दशाक्षर मन्त्र भी चतुर्वर्गफलप्रद है।

क्रीं क्रीं हूं हूं दक्षिणे कालिके क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा।

इन तीनों मन्त्रों की पूजाविधि इस प्रकार की है—प्रातःकृत्य से प्राणायाम तक के कर्म करके ऋष्यादि न्यास करे—शिरसि दक्षिणामूर्तिऋषये नमः। मुखे पंक्तिछन्दसे नमः। हृदये दक्षिणे कालिके देवतायै नमः। अन्य पूजन कर्म दक्षिणकालिका के समान करे।

निजबीजं वह्निवल्लभा। भैरवोऽस्य ऋषिः। निजबीजद्वयं कूर्चद्वयं लज्जायुगं वह्निवल्लभा। निजबीजं कूर्चं लज्जा वह्निवल्लभा। अस्य पञ्चवक्त्र ऋषिः। मूल-त्रयं कूर्चद्वयं लज्जाद्वयं वह्निवल्लभा। मूलबीजं दक्षिणे कालिके वह्निवल्लभा। निज-बीजं कूर्चद्वयं मायां पुनस्तानि वह्निवल्लभा। मूलद्वयं कूर्चद्वयं लज्जाद्वयं पुनस्तान्येव वह्निवल्लभा। निजबीजत्रयं लज्जाद्वयं कूर्चद्वयं पुनस्तान्येव वह्निवल्लभा। हृदयं वाग्भवं मूलद्वयं कालिकायै ठद्वयम्। हृदयं पाशद्वयं अंकुशद्वयं फट् स्वाहा कालिके कूर्चम्। एतासां ऋष्यादिकं पूजादिकञ्च दक्षिणावत्। पुरश्चरणं लक्षजपः।

एतासां विद्यानां प्रमाणं विश्वसारे—

अथ पञ्चाक्षरीं वक्ष्ये शृणुष्व कमलानने।
प्रजापतिं समुद्धृत्य वह्न्यारूढं ततः प्रिये॥
चतुर्थस्वरसंयुक्तं नादविन्दुविभूषितम्।
बीजत्रयं क्रमेणैव तदन्ते वह्निसुन्दरी॥
पञ्चाक्षरी महाविद्या कथिता पद्मयोनिना।
षडक्षरीं महाकालीं वक्ष्यामि शृणु पार्वति॥
बीजत्रयं समुद्धृत्य अस्त्रमन्त्रं समुद्धरेत्।
वह्निजायावधिः प्रोक्ता विद्या त्रैलोक्यमोहिनी॥
अष्टाक्षरी महाविद्या कथ्यते परमेश्वरि।
बीजत्रयं क्रमेणैव पुनर्बीजत्रयं सुधीः॥
स्वाहान्ता कथिता विद्या चतुर्वर्गफलप्रदा।
एकादशाक्षरी विद्या कथ्यते परमेश्वरि॥
वाग्भवं हृदयं पश्चाद्वह्न्यारूढं प्रजापतिम्।
चतुर्थस्वरसंयुक्तं विन्दुनादविभूषितम्॥
द्विगुणञ्च ततः कृत्वा ङेऽन्तञ्च कालिकापदम्।
स्वाहान्ता कथिता विद्या प्रिये एकादशाक्षरी॥
ऋषिः स्याद्दक्षिणामूर्त्तिश्छन्दः पंक्तिरुदाहृतम्।
परात्परतरा शक्तिः कालिका देवता स्मृता॥
एकादशाक्षरी विद्या कालिकायाः सुदुर्लभा।
लक्षद्वयं जपेद्विद्यां पुरश्चरणकर्मणि।
अन्यासां वर्णलक्षं स्यात्कथितं पद्मयोनिना॥

अन्यासामुक्तपञ्चाक्षरीप्रभृतीनाम्। अस्याः ध्यानम्—चतुर्भुजां कृष्णवर्णा-मित्यादि।

क्रीं स्वाहा।

क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा।

क्रीं हूं ह्रीं स्वाहा।

क्रीं क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा।

क्रीं दक्षिणे कालिके स्वाहा।

ह्रीं हूं ह्रीं क्रीं हूं ह्रीं स्वाहा।

क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा।

क्रीं क्रीं क्रीं ह्रीं ह्रीं हूं हूं क्रीं क्रीं क्रीं ह्रीं ह्रीं हूं हूं स्वाहा।

नमः ऐं क्रीं क्रीं कालिकायै स्वाहा।

नमः आं क्रों आं फट् स्वाहा कालि कालिके हूं।

विश्वसारतन्त्र में भी इन मन्त्रों का वर्णन है। इन सभी मन्त्रों का ऋष्यादि न्यास और पूजन दक्षिणकालिका की पद्धति से करे। एक लाख जप से इनका पुरश्चरण होता है।

मूलबीजं ततो मायां लज्जाबीजं ततः परम् ।
दक्षिणे कालिके चेति तदन्ते वह्निसुन्दरी ।
एकादशाक्षरी काली चतुर्वर्गफलप्रदा ॥
दशाक्षरी महाविद्या चतुवर्गफलप्रदा ।
कवचं मूलबीजाद्यं तदन्ते भुवनेश्वरी ।
दक्षिणे कालिके चेति अस्त्रान्ता समुदीरिता ॥
अथापरां प्रवक्ष्यामि विद्यां विंशतिवर्णिकाम् ।
यस्याः प्रसादमात्रेण भवेद्भूमिपुरन्दरः ।
मूलबीजद्वयं ब्रूयात्ततः कूर्चद्वयं ददेत् ।
लज्जाद्वयं समुद्धृत्य सम्बुद्ध्यन्तपदद्वयम् ।
पूर्ववत्षट् तथा बीजान्यन्ते च वह्निसुन्दरी ॥
ऋषिः स्याद्दक्षिणामूर्त्तिः पंक्तिश्छन्द उदाहृतम् ।
देवता कथिता सद्भिः काली दक्षिणपूर्विका ॥
अथापरां प्रवक्ष्यामि विद्यां त्रिभुवनेश्वरीम् ।
निजबीजं समुद्धृत्य तदन्ते वह्निसुन्दरी ।
भैरवोऽस्य ऋषिः प्रोक्तः सर्वतन्त्रसमन्वितः ॥
अष्टाक्षरी तु या प्रोक्ता सर्वतन्त्रेषु गोपिता ।
निजबीजद्वयं कूर्चद्वयं लज्जाद्वयं ततः ।
स्वाहान्ता कथिता विद्या सर्वकामफलप्रदा ॥

निजं कूर्चं तथा लज्जा तदन्ते वह्निसुन्दरी ।
पञ्चाक्षरी महाविद्या पञ्चवक्त्रऋषिः स्मृतः ॥
नवाक्षरीं महाविद्यां शृणुष्व कमलानने ।
निजबीजत्रयं कूर्चयुग्मं लज्जायुगं ततः ।
स्वाहान्ता कथिता विद्या सर्वसम्पत्करी मता ॥
अथापरां प्रवक्ष्यामि विद्यां ताञ्च नवाक्षरीम् ।
मूलबीजं समुद्धृत्य सम्बुद्ध्यन्तपदद्वयम् ।
स्वाहान्ता कथिता विद्या सर्वशत्रुक्षयङ्करी ॥
अथ चाष्टाक्षरीं विद्यां शृणुष्व कमलानने ।
निजबीजं ततः कूर्चं ततो मायां समुद्धरेत् ।
पुनस्तानि समुद्धृत्य स्वाहान्ता मोक्षदायिनी ॥
अथापरां प्रवक्ष्यामि दशतत्त्वसमन्विताम् ।
मूलद्वयं कूर्चयुग्मं तथा लज्जाद्वयं ततः ॥
पुनस्तान्येव बीजानि तदन्ते वह्निसुन्दरी ।
चतुर्दशाक्षरी विद्या चतुर्वर्गफलप्रदा ॥
ब्रह्मत्रयं समुद्धृत्य रतिवह्निसमन्वितम् ।
नादविन्दुसमायुक्तं लज्जाकूर्चद्वयं ततः ॥
पुनः क्रमेण चोद्धृत्य वह्निजायावधिर्मनुः ।
षोडशीयं समाख्याता विद्या कल्पद्रुमोपमा ॥

मायातन्त्रे—

हृदयं वाग्भवं देवि निजबीजयुगं ततः ।
कालिकायै पदं चोक्त्वा तदन्ते वह्निसुन्दरी ॥

तन्त्रान्तरे—

नमः पाशाङ्कुशौ द्वेधा फट् स्वाहा कालि कालिके ।
दीर्घतनुच्छदं कालीमनुः पञ्चदशाक्षरः ॥
एतासां पूजनं देवि दक्षिणावत्सुरेश्वरि ।
लक्षसंख्यं जपं कुर्यात्पुरश्चरणसिद्धये ॥

इन मूलोक्त श्लोकों में उपर्युक्त मन्त्रों को ही विस्तारपूर्वक बतलाया गया है एवं उन्हें विभिन्न ग्रन्थों का उद्धरण देकर प्रमाणित किया गया है।

एतासां पूजायन्त्रं कालीतन्त्रे—

आदौ त्रिकोणं विन्यस्य त्रिकोणं तद्बहिर्न्यसेत् ।
ततो वै विलिखेन्मन्त्री त्रिकोणत्रयमुत्तमम् ॥

ततो वृत्तं समालिख्य लिखेदष्टदलं ततः ।
वृत्तं विलिख्य विधिवल्लिखेद्भूपुरमेककम् ॥

कुमारीकल्पे—

मध्ये तु वैन्दवं चक्रं बीजमायाविभूषितम् ।

इन सभी मन्त्रों का पूजायन्त्र इस प्रकार का होता है। पहले एक त्रिकोण बनावे। उसके बाहर एक और त्रिकोण बनावे। तब तीन त्रिकोण बनावे। पाँच त्रिकोणों के बाहर एक वृत्त, उसके बाहर अष्टदल पद्म, तब भूपुर बनावे। मध्य में बिन्दु अंकित कर उसमें क्रीं और ह्रीं अंकित करे। यन्त्र ऊपर अंकित है।
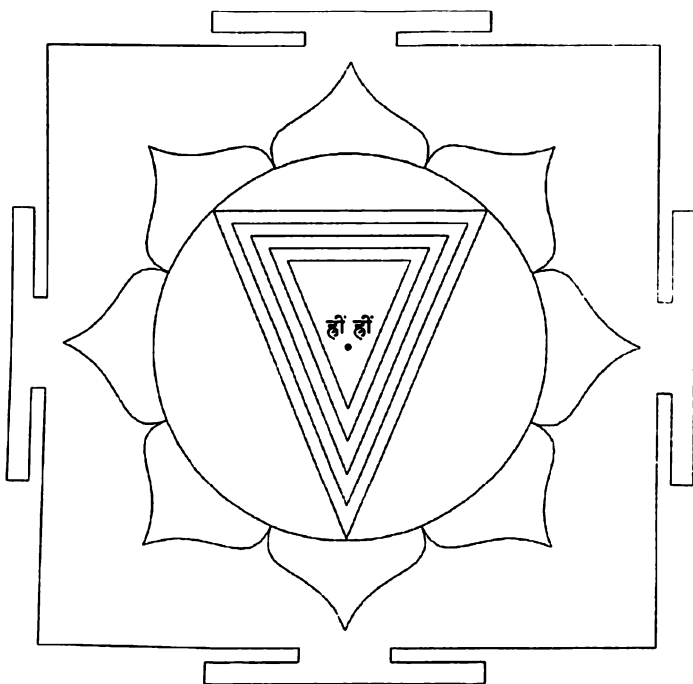
गुह्यकाली

विश्वसारे—

अथ वक्ष्ये महेशानि विद्यां सर्वफलप्रदाम् ।
चतुर्वर्गप्रदां साक्षान्महापातकनाशिनीम् ॥

सर्वसिद्धिप्रदां नित्यां भुक्तिमुक्तिप्रदायिनीम् ।
गुह्यकालीं महाविद्यां त्रैलोक्ये चातिदुर्लभाम् ॥
इन्द्रादिरूढं वर्गाद्यं रतिविन्दुसमन्वितम् ।
त्रिगुणञ्च ततः कृत्वा ईशानञ्च समुद्धरेत् ॥
षष्ठस्वरसमायुक्तं नादविन्दुकलान्वितम् ।
द्विगुणञ्च ततः कृत्वा ईशानद्वयमुद्धरेत् ॥
वामाक्षिवह्निसंयुक्तं नादविन्दुकलायुतम् ।
तद्गुह्ये कालिके प्रोक्त्वा चाथवा दक्षिणे वदेत् ॥
सप्तबीजं ततः पूर्वं क्रमेण योजयेत्ततः ।
वह्निजायावधिः प्रोक्ता विद्या त्रैलोक्यमोहिनी ॥

अथवेति गुह्ये कालिके बीजद्वयं दक्षिणे कालिके वा मन्त्रः ।

कामबीजं ततः कूर्चं तदन्ते भुवनेश्वरी ।
गुह्ये च कालिके चेति तथा बीजद्वयं भवेत् ॥
स्वाहान्ता कथिता विद्या सर्वतन्त्रेषु गोपिता ।
एषा तु षोडशी प्रोक्ता चतुर्वर्गफलप्रदा ॥

अस्यार्थः—आदौ निजबीजं ततः कूर्चं माया ततः सम्बोधनपदद्वयम्। ततो निजबीजद्वयं कूर्चद्वयं मायाद्वयं वह्निवल्लभा।

कामबीजद्वयं हित्वा भवेद्विद्या चतुर्दशी ।

अस्य मन्त्रस्येति शेषः।

सप्तबीजं पुरा प्रोक्तं गुह्येऽन्ते कालिके पुनः ।
स्वाहान्ता कथिता विद्या सर्वतन्त्रेषु गोपिता ॥

एषापि चतुर्दशाक्षरी। अस्या नामादिपदं हित्वा चेत्तदा दक्षिणे पञ्चदशाक्षरी। तथा च—

दक्षिणे पदमाभाष्य भवेत् पञ्चदशाक्षरी ।

तथा—

कामबीजं परित्यज्य अथवा षोडशाक्षरी ।

एतेन षोडशाक्षरी विद्यायाः कामबीजाभावेन पञ्चदशाक्षरी भवति।

कामबीजं समुद्धृत्य सम्बुद्ध्यन्तपदद्वयम् ।
पुनः कामं तदन्ते च दद्याद्वह्नेश्च सुन्दरीम् ॥
एषा नवाक्षरी विद्या गुह्यकाल्याः समीरिता ।

दक्षिणे पदमाभाष्य भवेद्विद्या दशाक्षरी ॥

एतासां पूजनन्तु तत्रैव।

पूर्ववन्न्यासवर्गन्तु पूर्ववत्पूजयेच्छिवाम् ।
पूर्ववच्च जपेद्विद्यां सर्वं पूर्ववदेव हि ॥

बलिदानं पूर्ववत्परिकल्पयेत्। बलिमन्त्रस्तु—एह्येहि जगन्मातर्जगतां जननि गृह्ण गृह्ण मम बलिं सिद्धिं देहि देहि शत्रुक्षयं कुरु कुरु हूं हूं ह्रीं ह्रीं फट् फट् ॐ कालिकायै नमः फट स्वाहा। यद्वा गुह्यकाल्या अयं बलिमन्त्रः—एह्येहि गुह्यकालि मम बलिं गृह्ण गृह्ण मम शत्रून् नाशय नाशय खादय खादय स्फुर स्फुर छिन्दि छिन्दि सिद्धिं देहि हूं फट् स्वाहा। तथायं वा आसनमन्त्रः—ॐ सदाशिवमहाप्रेताय गुह्यकाल्यासनाय नमः।

गुह्यकाली—सर्वफलप्रदा, चतुर्वर्गप्रदायिनी, महापातकनाशिनी, सर्वसिद्धिदात्री, सनातनी, भुक्ति-मुक्तिदायिनी महाविद्या गुह्य काली त्रिलोक में दुर्लभ हैं। इनके मन्त्र इस प्रकार के हैं—

क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं गुह्ये कालिके क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा।
क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं दक्षिणे कालिके क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा।
क्लीं हूं ह्रीं गुह्ये कालिके क्लीं क्लीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा—षोडशाक्षर है।
क्लीं हूं ह्रीं गुह्ये कालिके हूं हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा—चतुर्दशाक्षर है।
क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं गुह्ये कालिके स्वाहा—चतुर्दशाक्षर है।
क्लीं हूं ह्रीं दक्षिणकालिके हूं हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा—पञ्चदशाक्षर है।
हूं ह्रीं गुह्ये कालिके क्लीं क्लीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा—पञ्चदशाक्षर है।
क्लीं गुह्ये कालिके क्लीं स्वाहा—नवाक्षर है।
क्लीं दक्षिणे कालिके क्लीं स्वाहा—दशाक्षर है।

दक्षिण काली के समान पूजा करके बलि प्रदान करे। बलिमन्त्र है—एह्येहि जगन्मा-तर्जगतां जननि गृह्ण गृह्ण मम बलिं सिद्धि देहि शत्रुक्षयं कुरु कुरु हूं हूं ह्रीं ह्रीं फट् फट् कालिकायै नमः फट् स्वाहा। गुह्यकाली का बलिमन्त्र है—एह्येहि गुह्यकालि मम बलिं गृह्ण गृह्ण मम शत्रून् नाशन नाशय खादय खादय स्फुर स्फुर छिन्दि छिन्दि सिद्धिं देहि हूं फट् स्वाहा। आसनमन्त्र है—ॐ सदाशिवमहाप्रेताय गुह्यकाल्यासनाय नमः।

भद्रकालीमन्त्रा:

भद्रकाल्यादयो विद्याः कथ्यन्ते शृणु पार्वति ।
कामबीजादिकं बीजं सर्वं पूर्वापरे यजेत् ॥
भद्रकालीं तथा ङेऽन्तां बीजमध्ये नियोजयेत् ।

स्वाहान्ता कथिता विद्या विंशद्वर्णात्मिका परा।
चतुर्वर्गप्रदा विद्या भद्रकाली शुभावहा॥
सप्तबीजं समुद्धृत्य श्मशानकालि चेत्तथा।
पुनर्बीजं क्रमेणैव स्वाहान्ता सर्वसिद्धिदा।
विंशत्येकाधिका विद्या श्मशानकालिका मता॥
बीजानि चोच्चरेत्पूर्वं महाकालिपदं ततः।
तदन्ते सप्तबीजानि स्वाहान्ता सर्वसिद्धिदा।
विंशत्यर्णा महाविद्या महाकाल्याः प्रकीर्तिता॥

एतासां पूजनं जपञ्च दक्षिणावत्। विशेषस्तु भूपुरे इन्द्रादीन् वज्रादींश्च पूजयेत्। भूपुरस्य पूर्वादि चतुर्द्वारि ॐ विष्णवे नमः, ॐ शिवाय नमः, ॐ सूर्याय नमः, ॐ गणेशाय नमः इति पूजयेत्। तद्यथा—

भूगृहे लोकपालांश्च तदस्त्राणि च तद्बहिः।
भूपुरे च चतुर्दिक्षु पूजयेत् क्रमतः सुधीः।
विष्णुं शिवं तथा सूर्यं गणेशं पूजयेत्ततः॥

पूजायन्त्रम्—

त्रिकोणञ्चैव षट्कोणं नवकोणं मनोहरम्।
त्रिवृत्तं साष्टपत्रञ्च सकिञ्जल्कसमन्वितम्॥
भूपुरत्रितयारूढं योनिमण्डलमण्डितम्।
त्रिपञ्चारमिदं प्रोक्तं सर्वतन्त्रे प्रकीर्तितम्॥

त्रिकोणं त्रिकोणाकारमित्यर्थः। ध्यानन्तु—

महामेघप्रभां देवीं कृष्णवस्त्रपिधायिनीम्।
लोलजिह्वां घोरदंष्ट्रां कोटराक्षीं हसन्मुखीम्॥
नागहारलतोपेतां चन्द्रार्द्धकृतशेखराम्।
द्यां लिखन्तीं जटामेकां लेलिहानासवं स्वयम्॥
नागयज्ञोपवीताङ्गीं नागशय्यानिषेदुषीम्।
पञ्चाशन्मुण्डसंयुक्तवनमालां महोदरीम्॥
सहस्त्रफणसंयुक्तमनन्तं शिरसोपरि।
चतुर्दिक्षु नागफणावेष्टितां गुह्यकालिकाम्॥
तक्षकसर्पराजेन वामकङ्कणभूषिताम्।
अनन्तनागराजेन कृतदक्षिणकङ्कणाम्॥
रागेन रशनाहारकल्पितां रत्ननूपुराम्।

वामे शिवस्वरूपन्तत्कल्पितं वत्सरूपकम् ॥
द्विभुजां चिन्तयेद्देवीं नागज्ञोपवीतिनीम् ।
नरदेहसमाबद्धकुण्डलश्रुतिमण्डिताम् ।
प्रसन्नवदनां सौम्यां नवरत्नविभूषिताम् ॥
नारदाद्यैर्मुनिगणैः सेवितां शिवमोहिनीम् ।
अट्टहासां महाभीमां साधकाभीष्टदायिनीम् ॥

द्यां लिखन्तीं जटामेकां इति धारयन्तीमिति शेषः। अनन्तं शिरसोपरि दधतीमिति शेषः। गुह्येत्युपलक्षणम्।

इति श्यामाप्रकरणम्

●

श्मशानकाली/ भद्रकाली मन्त्र—क्लीं क्लीं क्लीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं भद्रकाल्यै क्लीं क्लीं क्लीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा। इस बीस अक्षरों के मन्त्र की उपासना से चतुर्वर्ग का फल प्राप्त होता है।

हौं कालि महाकालि किलि किलि फट् स्वाहा। इस मन्त्र से भद्रकाली की पूजा करके १०८ बार मन्त्रजप करे। भद्रकाली देवी का ध्यान करने से सभी भय दूर होते हैं।

सामान्य पूजापद्धति से भूतशुद्धि से प्राणायाम तक के कर्म करके शिवलिंग पर गन्ध-पुष्प-धूप-दीप और नैवेद्य से पूजा करके मूलोक्त ध्यान करे; जिसका भाव यह है—

देवी की प्रभा महामेघ के समान है। वस्त्र काले हैं। लपलपाती जीभ और दाँत भयंकर हैं। आँखें कुछ धँसी हुई हैं। मुख पर हास्य है। गले में नागहार है। ललाट में चन्द्रमा है। एक जटा आकाशस्पर्शी है। नाग का जनेऊ है। नागों की शय्या पर विराजती हैं। गले में पचास मुण्डों की वनमाला है। हजार फणों वाले अनन्त नाग शिर पर हैं। चारो दिशाओं में महाकाली नागफणों से वेष्टित हैं। बाँयें हाथ में कंगन तक्षक नाग का है। अनन्त नागराज का दक्षहस्त का कंगन है। नागों से ही कल्पित रत्ननूपुर है। उनके वाम भाग में वत्सरूप में शिव जी हैं। देवी की दो भुजायें है और नागों का यज्ञोपवीत है। कानों में नरदेह का कुण्डल है। प्रसन्नमुखी सौम्य नवरत्नों से विभूषित हैं। शिवमोहिनी नारदादि मुनिगणों से सेवित हैं। भयंकर अट्टहास करती हैं। साधकों के मनोरथ पूर्ण करती हैं।

भूपुर में इन्द्रादि और वज्रादि का पूजन करे। चारो द्वारों पर ॐ विष्णवे नमः, ॐ शिवाय नमः, ॐ सूर्याय नमः, ॐ गणेशाय नमः से पूजन करे।

श्मशान काली का मन्त्र—क्लीं क्लीं क्लीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं श्मशानकालि क्लीं क्लीं क्लीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा। यह मन्त्र इक्कीस अक्षरों का है।

महाकाली का मन्त्र—क्लीं क्लीं क्लीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं महाकालि क्लीं क्लीं क्लीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा—यह बीस अक्षरों का मन्त्र है।

गुह्यकाली-भद्रकाली-श्मशानकाली-महाकाली-पूजायन्त्र
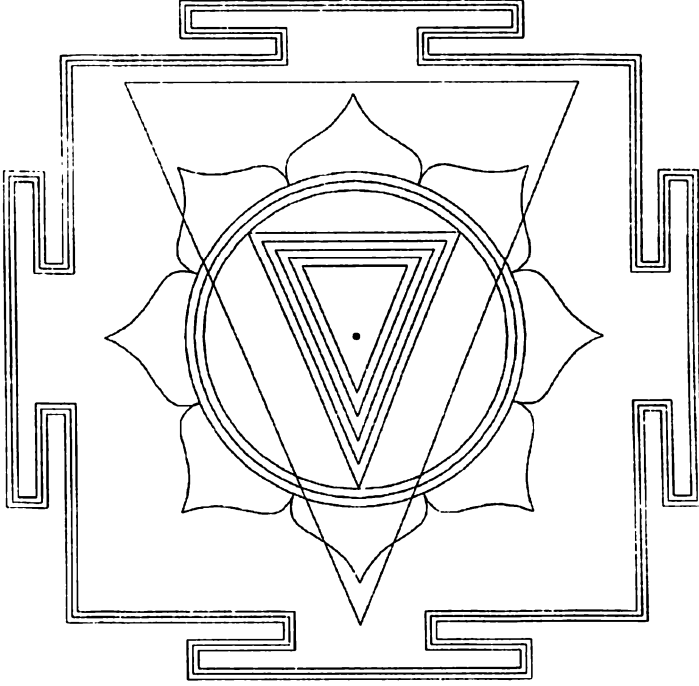
तारामन्त्राः

अथ मन्त्रान् प्रवक्ष्यामि तारिण्याः सर्वसिद्धिदान्।
येषां विज्ञानमात्रेण जीवन्मुक्तस्तु साधकः॥
कवितां लभते शुद्धामनर्गलविजृम्भिणीम्।
पाण्डित्यं सर्वशास्त्रेषु धनैर्धनपतिर्भवेत्॥
राजद्वारे सभायाञ्च विवादे व्यवहारके।
सर्वत्र जयमाप्नोति बृहस्पतिरिवापरः॥
मायाबीजं समुद्धृत्य तकारं वह्निसंयुतम्।
मायाविन्द्वीश्वरयुतं द्वितीयं बीजमुद्धृतम्॥
कूर्चबीजं तृतीयं स्यात् फट्कारस्तदनन्तरम्।

सम्पूर्णसिद्धमन्त्रस्तु　　रश्मिपञ्चकसंयुतः ॥

रश्मिपञ्चकं वर्णपञ्चकमित्यर्थः। तथा—

लीलया वाक्प्रदा चेति तेन नीलसरस्वती ।
तारकत्वात् सदा तारा सुखमोक्षप्रदायिनी ।
उग्रापत्तारिणी यस्मादुग्रतारा प्रकीर्तिता ॥

तारार्णवे—

वसिष्ठाराधिता विद्या न तु शीघ्रफला यतः ।
अतस्तेनापि मुनिना शापो दत्तः सुदारुणः ।
ततः प्रभृति विद्येयं फलदात्री न कस्यचित् ॥

शापोद्धारमाह—

चन्द्रबीजं त्रपान्तस्थबीजोपरि नियोजितम् ।
ततः प्रभृति विद्येयं वधूरिव यशस्विनी ।
फलिनी सर्वविद्यानां जयिनी जयकांक्षिणाम् ॥
विषक्षयकरी विद्या अमृतत्वप्रदायिनी ।
मन्त्रस्य ज्ञानमात्रेण विजयी भुवि जायते ॥

एकवीराकल्पे—

लज्जाबीजं वधूबीजं कूर्चबीजं तथा हि फट् ।
एवं पञ्चाक्षरी विद्या पञ्चभूतप्रकाशिनी ॥

वधूबीजं स्त्रींकारः। तथा च विश्वसारे—

सतरीञ्च महेशानि वधूबीजं प्रकीर्तितम् ।

तथा एकवीराकल्पे—

षोडशं व्यञ्जनं वह्निवामाक्षिविन्दुभूषितम् ।
चन्द्रबीजसमारूढं वधूबीजमिदं स्मृतम् ॥

चन्द्रः सकारः। नीलतन्त्रे—

ताराद्या पञ्चवर्णेयं तथा नीलसरस्वती ।
सर्वभाषामयी शुद्धा सर्वाम्नायैर्नमस्कृता ॥

तारार्णवे—

अणूत्तरं समुद्धृत्य मायोत्तरमतः परम् ।
पञ्चमसमारूढं　　पञ्चरश्मिप्रकीर्तितम् ॥
जीवनीमध्यगा पश्चादेकाक्षी तदनन्तरम् ।

उग्रदर्पं ततो दद्यादस्त्रं देवि प्रकाशितम् ॥

एकाक्षी स्त्रीं तेन सर्वत्र शापोद्धारः। पञ्चाक्षरीमधिकृत्य तन्त्रे—

श्रीबीजाद्या यदा विद्या तदा श्रीः सर्वतोमुखी ।
एषैव हि महाविद्या मायाद्या सकलेष्टदा ॥
वाग्भवाद्या यदा विद्या वागीशत्वप्रदायिनी ।
वितारैकजटा चैषा महामुक्तिकरी सताम् ॥
तारास्त्ररहिता त्र्यर्णा महानीलसरस्वती ।
कुल्लुकेयं समाख्याता सर्वतन्त्रेषु गोपिता ॥

जीवनीमध्यगा माया।

तारामन्त्र—अब सर्वसिद्धिदायक तारा के मन्त्र का वर्णन किया जाता है, जिसके ज्ञानमात्र से ही साधक जीवन्मुक्त हो जाता है। कविता करने की शक्ति प्राप्त होती है। अनर्गल वक्ताओं का जृम्भण होता है। सभी शास्त्रों में पांडित्य प्राप्त होता है। धन में कुबेर के समान होता है। राजदरबार में, सभा में, विवाद में, व्यवहार में सर्वत्र जीत होती है और वह बृहस्पति के समान हो जाता है।

एकवीराकल्प के अनुसार मायाबीज, वधू-बीज, कूर्चबीज और फट् से यह मन्त्र बनता है; जो 'ह्रीं स्त्रीं हूं फट्' पञ्चवर्णात्मक है।

लीला से ही वाक्प्रदा होने के कारण इसका नाम नीलसरस्वती है। संसार-सागर से पार करके मोक्षानन्द देने के कारण यह तारा है। उग्र आपत्तियों से बचाती है, इसलिये यह उग्रतारा है।

तारार्णव के अनुसार वसिष्ठ के द्वारा आराधित विद्या शीघ्र सिद्ध नहीं हुई तब वसिष्ठ ने दारुण शाप दिया। इसलिये यह विद्या फलदात्री नहीं होती। बाद में ऋषिवर ने इसका शापोद्धार किया। उन्होंने 'ह्रीं त्रीं हूं फट्' से देवी की आराधना की थी। शापोद्धार करते समय त्रीं में स जोड़कर 'ह्रीं स्त्रीं हूं फट्' से साधना करने का निर्देश दिया। तब से यह देवी वधू के समान यशस्विनी हो गयी। यह विद्या सब विद्याओं का फल देने वाली, जयार्थी को जयदात्री एवं विषपीड़ित का विषहरण करने वाली मृत्युहारिणी हो गई। इस मन्त्र को जानने-मात्र से विजय प्राप्त होती है।

एकवीराकल्प में वर्णन है कि मायाबीज, वधूबीज, कूर्चबीज और फट् से मन्त्र बनता है—ह्रीं स्त्री हूं फट्। यह विद्या पञ्चभूतप्रकाशिनी है। वधूबीज अर्थात् स्त्रीं। विश्वसार तन्त्र में वर्णन है कि वधूबीज 'स्त्रीं' है।

एकवीराकल्प के अनुसार षोडश व्यंजन = त के साथ वह्नि वामाक्षि बिन्दुभूषितम् चन्द्रबीज = स समारूढ वधूबीज स्त्रीं होता है। नीलतन्त्र के मत से ॐ ह्रीं स्त्रीं हूं फट्—

यह नीलसरस्वती का अति पवित्र पञ्चाक्षर मन्त्र है। इस मन्त्र की उपासना से साधक सभी शास्त्रों का अधिकारी होता है। यह सभी वेदों में प्रशंसित है। तारार्णव के अनुसार इसका शापोद्धार 'स्त्रीं' बीज से होता है।

पञ्चाक्षर मन्त्र ॐ ह्रीं स्त्रीं हूं फट् में ॐ के स्थान पर श्रीं लगाने से सर्वतोमुखी श्री की प्राप्ति होती है। इसके पहले ह्रीं लगाने से सर्वविध अभीष्ट प्राप्त होते हैं। प्रारम्भ में वाग्बीज ऐं लगाने से वागीशत्व का लाभ होता है। प्रणवशून्य होने पर यह मुक्तिदायक एकजटामन्त्र बनता है। प्रणव और फट् का त्याग करने पर यह त्र्यक्षर महानील सरस्वती का मन्त्र बनता है, इसे कुल्लुका भी कहते हैं। इस प्रकार जो मन्त्र बनते हैं, वे हैं—१. ॐ ह्रीं स्त्रीं हूं फट्। २. श्रीं ह्रीं स्त्रीं हूं फट्। ३. ह्रीं ह्रीं स्त्रीं हूं फट्। ४. ऐं ह्रीं स्त्रीं हूं फट्। ५. ह्रीं स्त्रीं हूं फट्। ६. ह्रीं स्त्रीं हूं।

यथा सङ्केतचन्द्रोदये—

हृल्लेखा भुवनेश्वरी च भुवना देवीश्वरी ह्रीं महा
माया जीवनमध्यगा त्रिजगतां धात्री परेशी परा । इति।
एषा क्रमागता प्राप्ता मतभेदादनेकधा ।

एषा पञ्चाक्षरी। तदेवाह—

पञ्चाक्षरी एकजटा ताराभावे महेश्वरी ।
ताराद्या तु भवेद्देवि श्रीमन्नीलसरस्वती ।
उग्रतारा त्र्यक्षरी च महानीलसरस्वती ॥

अन्यासां विद्यानां एकजटैव देवता प्रकृतित्वात्। एतासां विद्यानां साधनस्थानं नीलतन्त्रे महाफेत्कारीये च—

एकलिङ्गे श्मशाने वा शून्यागारे चतुष्पथे ।
शवस्योपरि मुण्डे वा जले वा कण्ठपूरिते ॥
संग्रामभूमौ यानौ वा स्थले वा विजने वने ।
तत्रस्थः साधयेद्योगी विद्यां त्रिभुवनेश्वरीम् ॥

तत्रैव—

पञ्चक्रोशान्तरे यत्र न लिङ्गान्तरमीक्षते ।
तदेव लिङ्गमाख्यातं तत्र सिद्धिरनुत्तमा ॥

अन्यत्रापि—

उज्जटे पर्वते वापि निर्जने वा चतुष्पथे ।
देवागारे च शून्ये च निर्जनैकान्तवेश्मनि ॥

वीरतन्त्रेऽपि—

शून्यागारे श्मशाने यदि जपति जडस्त्वेकलिङ्गे तडागे,
गङ्गागर्भे गिरौ वा शुचिरमलमतिः सर्वदा भक्तियुतः ।
विद्यां श्रीनीलवाण्या भुवनजनपतिः सर्वशास्त्रार्थवेत्ता,
देहान्ते योगमुख्यः परमसुखपदं ब्रह्मनिर्वाणमेति ।।

संकेतचन्द्रोदय में वर्णन है कि यही हृल्लेखा, भुवनेश्वरी, भुवनादेवी, ईश्वरी, ह्रीं, महामाया, जीवनमध्यगा, जगत्त्रयधारणकर्त्री और परापरेशी हैं। यह पञ्चाक्षरी विद्या मतभेदानुसार नाना प्रकार की है।

यह महेश्वरी पञ्चाक्षरी ॐकारविहीन एकजटा हो जाती है। ॐकारसहित उग्रतारा और त्र्यक्षरा होकर महानीलसरस्वती नाम से प्रसिद्ध होती है। अन्य सभी विद्याओं का नाम एकजटा है। कहा भी है कि एकजटा ही इस देवता की प्रकृति है।

नीलतन्त्र और महाफेत्कारिणी तन्त्र में इन मन्त्रों के साधनास्थलों का वर्णन है। एकलिंग शिवमन्दिर, श्मशान, सूना घर, चौराहा, शवासन, मुंडासन, आकंठ जल, रणभूमि, योनिमण्डल और निर्जन वन में बैठकर साधक त्रिलोकेश्वरी तारादेवी के मन्त्र की साधना करे। उन तन्त्रों में यह भी लिखा है कि जिस शिवलिंग से पाँच कोस की सीमा के अन्दर कोई दूसरा शिवलिंग न हो, उसी लिंग को एकलिंग कहते हैं। उस स्थान में साधना करने से सहज ही मन्त्रसिद्धि मिलती है।

तन्त्रान्तर के अनुसार जनशून्य गृह, पर्वत, निर्जन स्थान, चौराहा, जनशून्य, देव-मन्दिर एवं सूना घर साधना के लिये प्रशस्त है। वीरतन्त्र में लिखा है कि शुद्ध बुद्धि, भक्तिमान और शुद्ध मन होकर शून्य गृह, श्मशान, एकलिंग शिवमन्दिर, जलाशय, गंगागर्भ अथवा पर्वत में रहते हुए श्रीनीलसरस्वती के महामन्त्र का जप करने से साधक त्रिलोककर्ता एवं सर्वशास्त्रज्ञ होकर मरणोपरान्त परमसुख मोक्ष पद को प्राप्त करता है।

अथ ताराचमनम्। भैरवतन्त्रे—

ताराभेदैस्त्रिभिः पीत्वा मायया क्षालयेत्करम् ।
स्त्रीं हूमोष्ठौ द्विरुन्मृज्य फट्कारैः क्षालयेत्करम् ।।
आस्यनासेक्षण-श्रोत्र-नाभिवक्षःशिरोभुजान् ।
वैरोचनादिभिः स्पृष्ट्वा सर्वपापैः प्रमुच्यते ।
आचम्य भैरवो भूत्वा वत्सरात्तां प्रपश्यति ।।

ताराभेदैरिति उग्रतारैकजटानीलसरस्वतीभेदैः। वैरोचनादयस्तु—वैरोचन-शङ्ख-पाण्डव-पद्मनाभासिताभ-नामक-मामक-तावक-(पाण्डर-असिताभ)-पद्मान्तक-यमान्तक-विघ्नान्तक-नरान्तकाः। सचतुर्थीप्रणवादिनमोऽन्तकाः।

तारा उपासना में आचमन—उग्रतारा मन्त्र ह्रीं श्रीं हूं, एकजटा मन्त्र ह्रीं श्रीं हूं फट्, नीलसरस्वती मन्त्र ह्रीं श्रीं हूं के द्वारा आचमन करे। अथवा ॐ उग्रतारायै नम:, ॐ एकजटायै नम:, ॐ नीलसरस्वत्यै नम: से तीन वार जल पीकर 'ह्रीं' से हाथ धोये। स्त्रीं हूं से ओठ पोंछे और फट् से फिर हाथ धोकर निम्न मन्त्रों से निर्दिष्ट स्थानों का स्पर्श करे—

ॐ वैरोचनाय नम: मुखे। ॐ शंखाय नम: दक्षनासायाम्। ॐ पांडवाय नम: वामनासायाम्। ॐ पद्मनाभाय नम: दक्षनेत्रे। ॐ असिताभाय नम: वामनेत्रे। ॐ नामकाय नम: दक्षकर्णे। ॐ मामकाय नम: वामकर्णे। ॐ तावकाय नम: नाभौ। ॐ पद्मान्तकाय नम: वक्षे। ॐ यमान्तकाय नम: शिरसि। ॐ विघ्नान्तकाय नम: दक्षस्कन्धे। ॐ नरान्तकाय नम: वामस्कन्धे। इस प्रकार के आचमन से सभी पापों का नाश होता है। एक वर्ष तक इस आचमन को करने से साधक स्वयं भैरवतुल्य होकर देवी का दर्शन प्राप्त करता है।

अथास्या: पूजाप्रयोग:—प्रात:कृत्यादिस्नानान्तं समाप्य यागस्थानं गत्वा, ॐ वज्रोदके हूं फट् स्वाहेति मन्त्रेण जलमधिष्ठाय, तज्जलं पूजार्थं विधाय, विकिञ्चदन्यजले नि:क्षिप्य, तेनैव वारिणा ॐ ह्रीं विशुद्धसर्वपापानि शमयाशेषविकल्पमपनय हूं फट् स्वाहेति हस्तौ पादौ च प्रक्षाल्य कुलकुशान् सुवर्णरजतरूपान् यथाक्रमं तर्जन्यनामासु दत्त्वा ॐ ह्रीं स्वाहेत्याचम्य पीठं चिन्तयेत्। विशेष: कुमारीतन्त्रे—

स्नानाच्च तीर उत्थाय वस्त्रे द्वे परिधाय च ।
तिलकं कुलवत्कृत्वा आचम्यैवं सुरेश्वरि ।।

तथा—

जलशङ्खं करे कृत्वा गत्वा द्वारि महेश्वरि ।
क्षालयेद्धस्तपादौ च वक्ष्यमाणेन वर्त्मना ।।

मत्स्यसूक्ते—

तारं वज्रोदके हूं फट् स्वाहा जलमधिष्ठितम् ।

तथा—

तारं लज्जाविशुद्धान्ते सर्वपापानि चैव हि ।
शमयान्ते स्वशेषान्ते विकल्पपदमुच्चरेत् ।।
अपनयान्ते धर्मं फट् स्वाहा पदविशुद्धये ।
तारं माया च वह्निजाया स्मृतमाचमने मनु: ।।

कुलकुशास्तु—

सुवर्णं रजतञ्चैव जपपूजादिकर्मसु ।
कुशकार्यकरं प्रोक्तं न तु वन्या: कुशा: कुशा: ।

तर्जन्या रजतं धार्यं स्वर्णं धार्यमनामया ॥

पीठं यथा—

श्मशानं तत्र सञ्चिन्त्य तत्र कल्पद्रुमं स्मरेत् ।
तन्मूले मणिपीठञ्च नानामणिविभूषितम् ॥
नानालङ्कारभूषाढ्यं मुनिदेवैश्च भूषितम् ।
शिवाभिर्बहुमांसास्थिमोदमानाभिरन्ततः ॥
चतुर्दिक्षु शवमुण्डचिताङ्गारास्थिभूषितम् ।
तन्मध्ये भावयेद्देवं यथोक्तध्यानयोगतः ॥

इति ध्यात्वा ॐ मणिधरि वज्रिणि महाप्रतिसरे रक्ष रक्ष हूं फट् स्वाहा इति शिखां बध्नीयात्। ॐ रक्ष रक्ष हूं फट् स्वाहेति जलसेकाद्भूमिं शोधयेत्। ॐ सर्वान् विघ्नानुत्सारय हूं फट् स्वाहेति नाराचमुद्रया अक्षतप्रक्षेपेण त्रिविधविघ्नान् दिव्यान्तरीक्षभौमानुत्सारयेत्। ॐ पवित्रवज्रभूमे हूं फट् स्वाहा इति भूमिमभिमन्त्र्य तत्र कम्बलकोमलविष्टराद्यासनानि यथासाधनान्यास्तीर्य, ॐ आः सुरेखे वज्ररेखे हूं फट् स्वाहेति पुष्पादिना तदभ्यर्च्य, स्वस्तिकादिक्रमेण तत्रोपविशेत्। तदुक्तं मत्स्यसूक्ते—

मृदुकोमलमासीनश्चान्येषु कम्बलेषु च ।
विष्टरं वा समासीनः साधयेत्सिद्धिमुत्तमाम् ॥

कोमलादिलक्षणमाह श्रीक्रमे—

पञ्चवर्षान्तरं यावन्मृतं बालमचूडकम् ।
षण्मासानन्तरं यावद्दशमासाच्च पूर्वतः ॥
गर्भयुतं मृतं बालं गर्भाष्टमपुरःसरम् ।
एतत्कोमलमित्याहुर्विष्टरेषु कुशेषु वा ॥

तथा च नीलतन्त्रे—

निवृत्तचूडको बालो हीनोपनयनः पुमान् ।
यो मृतः पञ्चमे वर्षे तमेव कोमलं विदुः ॥

पञ्चमे वर्षे पञ्चमवर्षपूर्णे। आसनपरिमाणमाह—

एकहस्तं द्विहस्तं वा चतुरस्रं समन्ततः ।
विशुद्धे आसने कुर्यात्संस्कारं पूजनं ततः ॥

कृष्णसारव्याघ्राद्यजिनमप्यासनम्। तदुक्तं तन्त्रे—कृष्णसारद्वीपिचर्म अचूडम् इत्यादि। विष्टरेष्वित्यादि। कुशपत्रशतेन वटुकं निर्माय तत्र शवप्राणप्रतिष्ठां कुर्यात्। तथा—

ओङ्कारम् आः सुरेखे वज्ररेखे ततः परम् ।
हूं फट् स्वाहेति कुर्यात्तु मण्डलन्तु शवासने ॥
वीरासनेनोपविश्य सम्पूज्यासनमेव च ।
चतुरस्रं चतुर्द्वारमेवं मण्डलमालिखेत् ॥

ततः ॐ मणिधरि वज्रिणि महाप्रतिसरे रक्ष रक्ष हूं फट् स्वाहा इति वस्त्रान्ते रक्षाग्रन्थिं बन्धयेत्। ॐ आः हूं फट् स्वाहा इति व्यापकतया कायवाक्चित्तं शोधयेत्। ॐ पुष्पकेतुराजार्हते शताय सम्यक्सम्बन्धाय ॐ पुष्पे पुष्पे महापुष्पे सुपुष्पे पुष्पभूषिते। पुष्पचयावकीर्णे हूं फट् स्वाहेति पुष्पमभिमन्त्रयेत्।

ततः सुवर्णादिपीठे गोरोचनाकुङ्कुमादिलिप्ते ॐ आः सुरेखे वज्ररेखे हूं फट् स्वाहेति मन्त्रेणाधोमुखत्रिकोणगर्भाष्टदलपद्मं वृत्तं चतुरस्रं चतुर्द्वारयुक्तं यन्त्रमुद्धरेत्। पद्मस्य पूर्वादिदले मन्त्राक्षराणि लिखेत्। तथा च कुलचूडामणौ—

ततः कुलरसेनैव पीठं निर्माय यत्नतः ।
आः सुरेखे वज्ररेखे हुं फट् स्वाहासमन्वितम् ॥
मन्त्रेणानेन संलिख्य वसुपत्रं मनोरमम् ।
चतुरस्रं चतुर्द्वारमेवं मण्डलमालिखेत् ॥

कुलरसेन स्वयम्भूरसेन। वर्णलिखनप्रकारमाहफेत्कारीये—

स्वयोनिं चन्दनेनाष्टदलं वृत्तं लिखेत्ततः ।
मृद्वासनं समासाद्य मायां पूर्वदले लिखेत् ॥
मध्यबीजं द्वितीये फमुत्तरे पश्चिमे तु टम् ।
मध्ये बीजं लिखेत्तारं भूतशुद्धिमथाचरेत् ॥

द्वितीये दक्षिणे तारं हूकारं ताराप्रणवत्वात्। टं पश्चिमे भागे कूर्चं पत्रान्ते भूपुरद्वयमिति भैरवीयवाक्याच्च। मध्ये षट्कोणान्वितपद्ममिति केचित्। तदुक्तम्—

षट्कोणान्तर्गतं पद्मं भूविम्बद्वितयं पुनः ।
चतुरस्रं चतुर्द्वारमेवं वा यन्त्रमालिखेत् ॥

बीजलिखनन्तु पूर्ववत्। नीलतन्त्रेऽपि सारस्वतार्थिनां विशेषयन्त्रमाह—

व्योमेन्द्वौ रसनार्णकर्णिकमचां द्वन्द्वैः स्फुरत्केशरं,
वर्गोल्लासिवसुच्छदं वसुमतीगेहेन संवेष्टितम् ।
ताराधीश्वरवारिवर्णविलसद्दिक्कोणसंशोभितं,
यन्त्रं नीलतनोः परं निगदितं सर्वार्थसिद्धिप्रदम् ॥

एवं वा यन्त्रं विलिख्य पीठमर्चयेत्।

तारा की पूजापद्धति—प्रातःकृत्य से स्नान तक की क्रिया करके पूजास्थल पर जाय। वहाँ 'ॐ वज्रोदके हूं फट् स्वाहा' से जल का शोधन करके उसे पूजा के लिये सुरक्षित रक्खे। उस जल से कुछ जल लेकर अन्य जल में डालकर उससे निम्न मन्त्र द्वारा हाथ-पैर धोये—

ॐ ह्रीं विशुद्धसर्वपापानि शमयाशेषविकल्पमपनय हूं फट् स्वाहा। सोना और चाँदी के स्वरूप 'कुलकुश' तर्जनी और अनामिका में पहन कर 'ॐ ह्रीं स्वाहा' मन्त्र से आचमन करे तब पीठ का ध्यान करे।

तारायन्त्र (१)
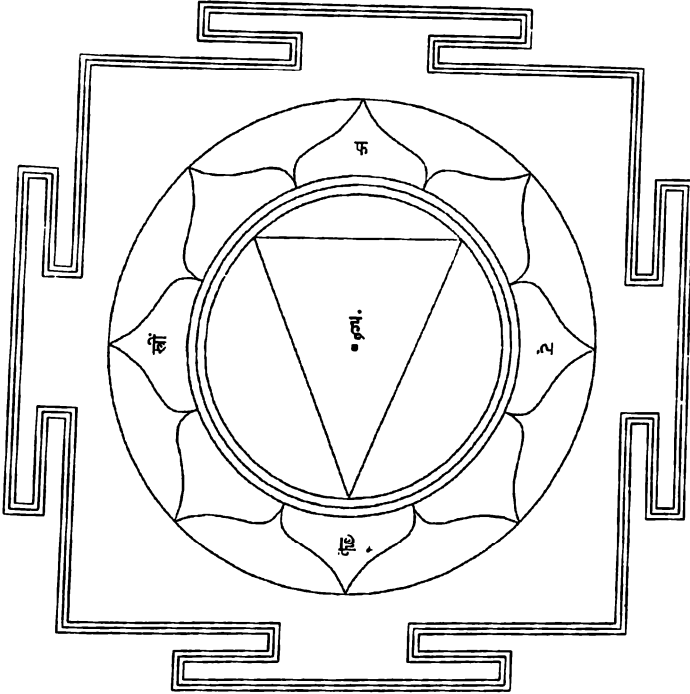
कुमारीतन्त्र में वर्णन है कि स्नान के बाद किनारे आकर धुले हुए दो वस्त्रों को धारण करे। फिर कौलिक पद्धति से त्रिकोणाकार तिलक लगाकर आचमन करे। तदनन्तर हाथ में जलपूर्ण शंख लेकर द्वारदेश में जाय और हाथ-पैर धोये।

मत्स्त्यसूक्त में लिखा है कि 'ॐ वज्रोदके हूं फट् स्वाहा' से जल का शोधन करे। शोधित जल द्वारा 'ॐ ह्रीं विशुद्धसर्वपापानि शमयाशेषविकल्पमपनय हूं फट् स्वाहा' से

पैर धोये। 'ॐ ह्रीं स्वाहा' से आचमन करे। पूजन और जप में सुवर्ण और रौप्यरूप कुल-कुश ही प्रशस्त होता है। तन्त्रविहित कर्म में वन्य कुश निषिद्ध है। तर्जनी में रौप्य और अनामा में स्वर्ण की अंगूठी धारण करके तान्त्रिकी क्रिया करे। इसके बाद पीठ का ध्यान करे।

पहले श्मशानभूमि का ध्यान करे। उसमें कल्पवृक्ष का ध्यान करे। उसके मूल देश में मणिपीठ है, जो नाना रत्नों से जटित है, विविध भूषणों से विभूषित है। मुनि और देववृन्द से सेवित है। उक्त श्मशान भूमि में गीदड़ियाँ मांस और अस्थि के लोभ में आनन्दित होकर विचरण कर रही हैं। शवमुण्ड और चिता के अंगार इधर-उधर बिखरे पड़े हैं। इस प्रकार के पीठ की कल्पना करके उक्त मणिपीठ के मध्य में वर्णित ध्यान के अनुसार ध्यान करे। इसके बाद निम्न मन्त्र से शिखाबन्धन करे—

ॐ मणिधरि वज्रिणि महाप्रतिसरे रक्ष रक्ष हूं फट् स्वाहा।

निम्न मन्त्र से जल छिड़ककर भूमि का शोधन करे—

ॐ रक्ष रक्ष हूं फट् स्वाहा।

तब 'ॐ सर्वान् विघ्नानुत्सारय हूं फट् स्वाहा' से नाराच मुद्रा द्वारा अक्षत फेंककर दिव्य, अन्तरिक्ष और भूमि में स्थित तीनों प्रकार विघ्नों का उत्सारण करे। 'ॐ पवित्रवज्रभूमे हूं फट् स्वाहा' से भूमि का अभिमन्त्रण करे। उस भूमि पर कम्बलासन, कोमलासन या विष्टरासन स्थापित करे। 'आः सुरेखे वज्ररेखे हूं फट् स्वाहा' से पुष्पादि द्वारा आसन की पूजा करके स्वस्तिकादि क्रम से उस पर बैठे।

मस्त्यसूक्त में वर्णन है कि कोमलासन, कम्बलासन, विष्टरासन या किसी पवित्र आसन पर बैठकर देवता की उपासना करे।

श्रीक्रम में वर्णन है कि पाँच वर्ष तक के अकृतचूड़ शिशु की मृत्यु होने पर उसके शव को अथवा छः मास और दस मास के पहले गर्भस्राव होने पर उसके शव को कोमलासन कहते हैं। कुश से बने आसन का नाम विष्टरासन है।

नीलतन्त्र के मत से कृतचूड़ और अनुपनीत पूरे पाँचवें वर्ष में मृत शिशु के शव का ही नाम कोमलासन है। आसन एक हाथ लम्बा अथवा दो हाथ लम्बा चतुरस्र के आकार का होना चाहिये। पवित्रासन पर बैठकर ही पूजन करना चाहिये। पूजनादि कर्म में कृष्णसारचर्म व्याघ्रचर्मासन भी फलप्रद है। विष्टरासन रखना हो तो सौ कुशपत्रों द्वारा वटुक बनाकर उसमें शव की प्राणप्रतिष्ठा करके उस पर बैठे। तब ॐ 'आः सुरेखे वज्र-रेखे हूं फट् स्वाहा' से शवासन के ऊपर चतुरस्र चार द्वारयुक्त मण्डल बनाकर आसन की पूजा करके आसन पर बैठे। तब 'मणिधरि वज्रिणि महाप्रतिसरे रक्ष रक्ष हूं फट् स्वाहा' से वस्त्रछोर में रक्षाग्रन्थि बाँधे। तब 'ॐ आः हूं फट् स्वाहा' से व्यापक न्यास द्वारा काय, वाक् और चित्त का शोधन करे। तब निम्न मन्त्र से पुष्पों का शोधन करे—

ॐ पुष्पकेतु राजार्हते शवाय सम्यक् सम्बद्धाय। ॐ पुष्पे पुष्पे महापुष्पे सुपुष्पे पुष्पभूषिते पुष्पचयावकीर्णे हूं फट् स्वाहा।

इसके बाद स्वर्णादि पीठ पर गोरोचन या कुंकुमादि का लेप लगाकर 'ॐ आः सुरेखे वज्ररेखे हूं फट् स्वाहा' से अधोमुख त्रिकोण, उसके बाहर वृत्त, उसके बाहर अष्टदल कमल, उसके बाहर वृत्त और उसके बाहर चार द्वारयुक्त चतुरस्र यन्त्र बनावे। उस यन्त्र के पद्मदलों में पूर्वादि क्रम मन्त्राक्षर लिखे।

कूलचूड़ामणि के मत से स्वर्णादि पीठ पर कुलरस द्वारा पीठ बनाते हुए 'ॐ आः सुरेखे वज्ररेखे हुं फट् स्वाहा' से मनोहर अष्टदल कमल बनावे। उसे चतुर्द्वारयुक्त चतुरस्र से युक्त करे। कुलरस अर्थात् स्वयम्भू रस अर्थात् कन्या का प्रथम रजःस्राव।

तारायन्त्र (२)
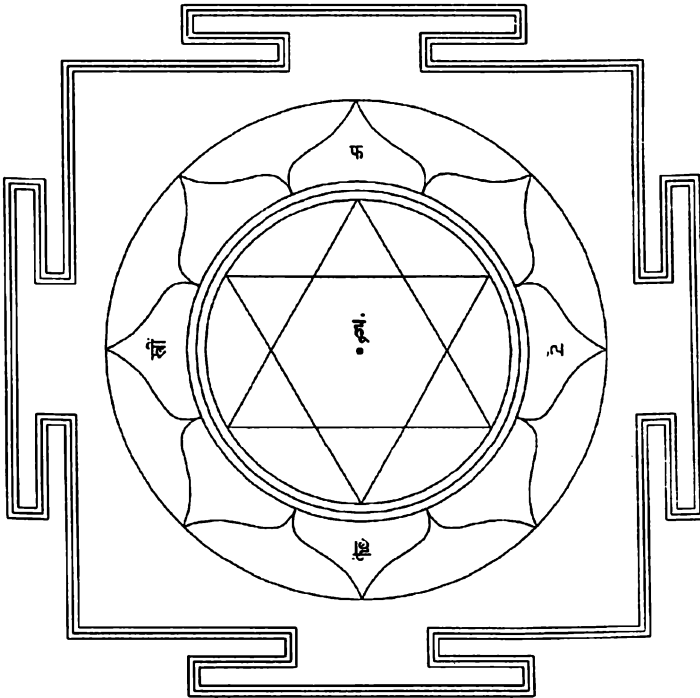
फेत्कारिणी तन्त्र में वर्णन है कि चन्दन से योनियुक्त त्रिकोण बनावे। उसके बाहर वृत्त और अष्टदल कमल बनावे। पद्म के पूर्व दल में ह्रीं, दक्षिण में स्त्रीं, उत्तर में फ, पश्चिम में ट और त्रिकोण के मध्य में हूं लिखे। तब भूतशुद्धि करे। हूँ बीज ही तारा-प्रणव है।

भैरवतन्त्र में लिखा है कि पश्चिम दल में ट एवं त्रिकोण के मध्य में हृं बीज लिखे। दल के बाहर दो भूपुर बनावे। मतान्तर है कि यन्त्र के मध्यस्थ त्रिकोण के स्थान पर षट्-कोण बनाकर पूर्ववत् यन्त्र बनावे। यन्त्र में पूर्ववत् मन्त्राक्षर लिखे।

नीलतन्त्र में वर्णन है कि विद्याकामी के लिये यन्त्र-निर्माण की विधि इस प्रकार की है। 'हसौः' को कर्णिकामध्य में लिखकर सोलह स्वरों में से दो-दो स्वरों को आठ केशरों में लिखे। वृत्त बनाकर अष्टदल कमल बनावे। पद्म के आठ दलों में क ख ग घ ङ, च छ ज झ ञ, ट ठ ड ढ ण, त थ द ध न, प फ ब म भ म, य र ल व, श ष स और ह ळ क्ष लिखे। उसके बाहर चतुर्द्वारयुक्त चतुरस्र बनावे। चारो द्वारों में 'वं' लिखे और चारों कोनों में 'ठं' लिखे। नीलसरस्वती के इस यन्त्र से सर्वार्थ सिद्ध होते हैं। इस प्रकार यन्त्र बनाकर पीठन्यास करे।

कामना के अनुसार पूर्व में अंकित दोनों यन्त्रों में से किसी भी यन्त्र को बनाकर पीठन्यास करना चाहिये।

तथा च कुमारीकल्पे—

ततोऽर्घ्यपात्रं विन्यस्य द्वारपालान् समर्चयेत् ।
गांबीजाद्यं गणेशानं वामाद्यं वटुकं तथा ॥
क्षामाद्यं क्षेत्रपालञ्च यामाद्यां योगिनीं तथा ।
पूर्वे पश्चिमे दक्षिणे उत्तरे पूजयेत् सुधीः ॥

सर्वत्र प्रणवादिनमोऽन्तेन पूजयेत्। तन्त्रे—

ते सर्वे ध्रुवदीर्घाढ्याः शक्तिबीजपुरःसराः ।

यथा—पीठस्य पूर्वद्वारे ॐ ह्रीं गां गणेशाय नमः, पीठस्य दक्षिणे ॐ ह्रीं वां वटुकाय नमः, पीठस्य पश्चिमे ॐ ह्रीं क्षां क्षेत्रपालाय नमः। पीठस्योत्तरे ॐ ह्रीं यां योगिनीभ्यो नमः। मध्ये ॐ श्मशानाय नमः, ॐ कल्पवृक्षाय नमः। तन्मूले मणिपीठाय नमः। एवं नानालङ्कारेभ्यो नमः। नानामुनिभ्यः, नानादेवेभ्यः, बहुमांसास्थिमोदमानशिवाभ्यः। चतुर्दिक्षु शवमुण्डचिताङ्गारास्थिभ्यः। ततोऽ-ग्न्याद्यष्टदलेषु ॐ लक्ष्म्यै नमः। एवं सरस्वत्यै रत्यै प्रीत्यै कीर्त्यै शान्त्यै तुष्ट्यै पुष्ट्यै; मध्ये हसौः सदाशिवमहाप्रेतपद्मासनाय नमः। तदुक्तं सिद्धसारस्वते—

लक्ष्मीः सरस्वती चैव रतिः प्रीतिस्तथैव च ।
कीर्तिः शान्तिश्च तुष्टिश्च पुष्टिरित्यष्टशक्तयः ।
देव्या नीलसरस्वत्याः पीठशक्तय ईरिताः ॥

वीरतन्त्रे—

तन्मध्ये पूजयेद्देव्या वाहनं शवमेव च ॥

ततो भूतशुद्धिं कुर्यात्। तद्यथा—

स्वाङ्के उत्तानौ करौ कृत्वा हंस इति मन्त्रेण कुलकुण्डलिनीं जीवात्मानं वैलोम्येन चतुर्विंशतितत्त्वानि सुषुम्नावर्त्मना शिरोऽवस्थिते परमात्मनि परमशिवे संयोज्य, ह्रींकारं रक्तवर्णं नाभौ ध्यायन्, पूरकेण तस्य षोडशवारजपेन तदुद्भूते-नाग्निना लिङ्गशरीरं सन्दह्य, स्त्रींकारं, पीतवर्णं हृदि विचिन्त्य, कुम्भकेन तस्य चतुःषष्टिवारजपेन तदुद्भूतेन वायुना भस्म प्रोत्सार्य, हूंकारं श्वेतवर्णं शिरसि विचिन्त्य, रेचकेण तस्य द्वात्रिंद्वारजपेन तदुद्भूतेनामृतेन तदस्थि प्लावितं कृत्वा, समस्तमपगतव्यथं विश्वं शरीरमाप्लावयेत्। तथा च श्रुतिः—षट्त्रिंशत्तत्त्वानि शरीरमिति।

तत आत्मानमपगतव्यथं निर्मलं देवताऽभेदेन विचिन्तयेत्। तस्मिन् विश्वव्यापके वारिणि आः कराद्रक्तपङ्कजं तदुपरि टाङ्काराच्छ्वेतपङ्कजं तदुपरि नीलसन्निभं हूंकारं ध्यात्वा तदुपरि हूंकारभूषितां कर्तृकां ध्यायेत्। तदुपरि देवतां ध्यात्वा, आं ह्रीं क्रों स्वाहेत्येकादशवारं जपन् प्राणान् प्रतिष्ठाप्य ध्यायेत्। तदुक्तं फेत्कारीये—

मायां नाभौ रक्तवर्णं ध्यात्वा तज्जातवह्निना।
शुक्लं कर्मात्मकं देहं दग्धं सञ्चिन्तयेत्ततः॥
स्त्रीङ्कारं हृदि पीताभं तदुद्भूतेन वायुना।
भस्म प्रोत्सारितं कृत्वा ललाटे चिन्तयेत्ततः॥
कूर्चं तुषारवर्णाभं तदुद्भूतामृतेन च।
तदस्थि प्लावितं कृत्वा तदात्मानं विचिन्तयेत्॥
सर्वव्यथाविनिर्मुक्तं निर्मलं देवतामयम्।
भूतशुद्धिं विधायेत्थं शून्यं विश्वं विचिन्तयेत्॥
निर्लेपं निर्गुणं शुद्धमात्मानं देवतामयम्।
अन्तरीक्षे ततो ध्यायेदाकाराद्रक्तपङ्कजम्॥
भूयस्तस्योपरि ध्यायेत् टाङ्कारात् श्वेतपङ्कजम्।
तस्योपरि पुनर्ध्यायेत् हूंकारं नीलसन्निभम्॥
ततो हूंकारजां पश्येत् कर्तृकां बीजभूषिताम्।
कर्तृकोपरि ध्यायेदात्मानं तारिणीमयम्॥
प्रत्यालीढपदां घोरां मुण्डमालाविभूषिताम्।
खर्वां लम्बोदरीं भीमां व्याघ्रचर्मावृतां कटौ॥
नवयौवनसम्पन्नां पञ्चमुद्राविभूषिताम्।
चतुर्भुजां ललज्जिह्वां महाभीमां वरप्रदाम्॥

खड्गकर्तृसमायुक्तसव्येतरभुजद्वयाम् ।
कपालोत्पल-संयुक्त-सव्यपाणि-युगान्विताम् ।।
पिङ्गोग्रैकजटां ध्यायेन्मौलावक्षोभ्यभूषिताम् ।
बालार्कमण्डलाकारलोचनत्रयभूषिताम् ।।
ज्वलच्चितामध्यगतां घोरदंष्ट्रां करालिनीम् ।
सावेशस्मेरवदनां स्त्र्यलङ्कारविभूषिताम् ।।
विश्वव्यापकतोयान्तःश्वेतपद्मोपरि स्थिताम् ।
अक्षोभ्यो देवीमूर्द्धन्यस्त्रिमूर्त्तिनागरूपधृक् ।।

पञ्चमुद्रा विभूषितामिति ललाटे श्वेतास्थिपट्टिकाचतुष्टयान्वितकपालपञ्चक-भूषितामित्यर्थः। श्वेतास्थिपट्टिकायुक्तकपालपञ्चकशोभितामिति तन्त्रचूडामणौ। श्रीशङ्कराचार्येणाप्युक्तम्—

विचित्रास्थिमालां ललाटे करालां कपालञ्च पञ्चान्वितं धारयन्तीम् ।

ततः प्राणायामः—वामनासपुटे मूलं चतुर्वारं जप्त्वा वायुं पूरयेत्। तदनु नासापुटौ धृत्वा षोडशवारेण कुम्भयेत्। तदनु दक्षिणनासापुटेन वाराष्टकावर्तेन रेचयेत्। पुनर्दक्षिणेनापूर्य कुम्भयित्वा वामेन रेचयेत्। पुनर्वामेनापूर्य कुम्भयित्वा दक्षिणेन रेचयेत्। इति प्राणायामत्रयं भवति।

कुमारीकल्प के अनुसार सामान्यार्घ्य स्थापन करके द्वारपालों की पूजा करे।
पीठ के पूर्व द्वार में—ॐ ह्रीं गं गणेशाय नमः।
पीठ के दक्षिण द्वार में—ॐ ह्रीं वां वटुकाय नमः।
पीठ के पश्चिम द्वार में—ॐ ह्रीं क्षां क्षेत्रपालाय नमः।
पीठ के उत्तर द्वार में—ॐ ह्रीं यां योगिनीभ्यो नमः।

पीठ के मध्य में—ॐ श्मशानाय नमः। ॐ कल्पवृक्षाय नमः। कल्पवृक्ष के मूल में—मणिपीठाय नमः। नाना अलंकारेभ्यो नमः। नानामुनिभ्यो नमः। नानादेवेभ्यः नमः। बहुमांसास्थिमोदमानशिवाभ्यः नमः। चारो दिशा में—शवमुण्डचितांगारास्थिभ्यः नमः।

अग्न्यादि अष्टदलों में—ॐ लक्ष्म्यै नमः। ॐ सरस्वत्यै नमः। ॐ रत्यै नमः। ॐ प्रीत्यै नमः। ॐ कीर्त्यै नमः। ॐ शान्त्यै नमः। ॐ तुष्ट्यै नमः। ॐ पुष्ट्यै नमः।

मध्य में—हसौः सदाशिवमहाप्रेतपद्मासनाय नमः।

सिद्धसारस्वत में नीलसरस्वती की पीठशक्तियाँ आठ ही मानी गयी हैं, जैसे—लक्ष्मी, सरस्वती, रति, प्रीति, कीर्ति, शान्ति, तुष्टि और पुष्टि। वीरतन्त्र में लिखा है कि उनके मध्य में देवी-वाहन शव की पूजा करे। इसके बाद भूतशुद्धि करे। साधक अपनी गोद में दोनों हाथों को उत्तान रखकर पद्मासन में बैठे। 'हंस' मन्त्र से सुषुम्ना मार्ग में

कुलकुंडलिनी को जीवात्मा और चौबीस तत्त्वों के साथ ऊर्ध्व गति से ले जाकर मस्तक में स्थित सहस्रार पद्म में परमशिव के साथ संयुक्त करा दे। नाभि में रक्त वर्ण के ह्रीं बीज का ध्यान करके सोलह बार जप के पूरक से उत्पन्न अग्नि द्वारा पूरे लिंगदेह के भस्मीभूत होने की भावना करे। तब स्त्रीं बीज का हृदय में ध्यान करके चौंसठ बार जप के कुम्भक से उत्पन्न वायु से उस भस्म को बाहर उड़ा देने की भावना करे। तब शुक्ल वर्ण 'हूं' बीज का ध्यान शिर में करके बतीस बार जप के रेचक से उत्पन्न अमृत द्वारा भस्मीभूत अस्थि को आप्लावित समझकर देह को स्वस्थ समझे।

श्रुति में वर्णन है कि छत्तीस तत्त्व ही शरीर है। इस प्रकार स्वस्थ शरीर को देवता से अभिन्न समझे। विश्वव्यापक अमृतजल में 'आ:' से रक्तपद्म, उसके ऊपर 'टाँ' से श्वेत पद्म, उसके ऊपर नीलकमल के समान 'हूं' का ध्यान करके उसके ऊपर हूंकार भूषित कर्तृका का ध्यान करे। उस कर्तृका के ऊपर देवता का ध्यान करके 'आं ह्रीं क्रों स्वाहा' का जप ग्यारह बार करते हुए हृदय में प्राणप्रतिष्ठा करे और ध्यान करे।

भूतशुद्धि के सम्बन्ध में फेत्कारी तन्त्र का मत है कि नाभिदेश में रक्तवर्ण 'ह्रीं' की भावना करके उससे उत्पन्न अग्नि के द्वारा कर्ममय शरीर को सुखाते हुए दग्ध कर दे। तब हृदय में पीत वर्ण स्त्रीं बीज का ध्यान करके उससे उत्पन्न वायु के द्वारा देह के भस्म को बाहर उड़ा दे। तब ललाट में वर्फ वर्ण के कूर्चबीज हूं की कल्पना करके उससे उत्पन्न अमृत से भस्म में पड़ी देह की अस्थियों को आप्लावित करे। यह समझे कि आत्मा व्यथाशून्य होकर विमल देवतामय हो गयी है। इस प्रकार भूतशुद्धि करके अखिल विश्व को शून्य एवं अपनी आत्मा को निर्लेप, विमल, गुणातीत, निर्गुण, देवतामय समझते हुए अन्तरिक्ष में 'आ' वर्ण को रक्त कमल के समान मानकर ध्यान करे कि रक्त कमल पर 'टाँ' वर्ण श्वेत कमल के समान है। उसके ऊपर हूं बीज नीलकमल के समान है। उसके ऊपर हूं बीज से उत्पन्न बीजभूषित कर्तृका का ध्यान करे। कर्तृका के ऊपर आत्मा को तारिणी के रूप में इस प्रकार ध्यान करे—

देवी प्रत्यालीढ़पदा, भीषण आकृति वाली, नाटी और लम्बोदरी हैं। उनके गले में नरमुण्डों की माला है। कमर में व्याघ्रचर्म लिपटा हुआ है। ये नवयुवती हैं। श्वेत अस्थि से निर्मित चार पट्टिकाओं से युक्त पाँच नरकपालों की पञ्चमुद्रा से विभूषित हैं। चतुर्भुजी, लपकती जीभ वाली, अति भयंकर रूप की वरदायिनी हैं। दाँयें दो हाथों में खड्ग और कर्तृका एवं बाँयें दो हाथों में नरमुण्ड और कमल हैं। उनके शिर पर पिङ्गल वर्ण की एकजटा है। कपाल पर नागरूपधारी त्रिमूर्ति अक्षोभ्य ऋषि हैं। नवोदित चन्द्रमण्डल के समान देहप्रभा है। तीन नेत्र हैं। प्रज्ज्वलित चिता के मध्य में देवी विराजमान हैं। उनकी दन्तपंक्ति अति भयंकर है। अपने भावावेश में वे हास्यमुखी हैं। स्त्रियोचित विविध अलंकारों से विभूषित हैं। विश्वव्यापक जल के मध्य में श्वेत पद्म पर अवस्थित हैं।

शंकराचार्य ने भी कहा है कि अस्थिमाला विचित्र है। ललाट में कराल पांच कपालों से युक्त पञ्चमुद्रा है।

इसके बाद प्राणायाम करे। चार बार मूल मन्त्र का जप करते हुए वाम नासा में पूरक, सोलह मूल मन्त्र जपते हुए कुम्भक और मूल मन्त्र का आठ जप करते हुए दाहिनी नासा से रेचक करे। पुनः इसी प्रकार दाहिनी नासा से पूरक, कुम्भक और बाँयीं नासा से रेचक करे। इस प्रकार तीन प्राणायाम करे।

ततः ऋष्यादिन्यासः—शिरसि अक्षोभ्यऋषये नमः। मुखे वृहतीच्छन्दसे नमः। हृदि श्रीमदेकजटायै नमः। मूलाधारे हूं बीजाय नमः। पादयोः फट् शक्तये नमः। शेषाण्यक्षराण्युच्चार्य सर्वाङ्गे कीलकाय नमः। तथा च वीरतन्त्रे—

अक्षोभ्यऋषिरेतस्या वृहतीच्छन्द ईरितम्।
नीलसरस्वती देवी त्रिषु लोकेषु गोपिता।
हूं बीजं मन्त्रशक्तिः स्याच्चतुर्वर्गफलप्रदा ॥

ततः कालीतन्त्रोक्तमातृकान्यासः। तथा चोक्तम्—

यथा काली तथा नीला तत्क्रमान्मातृकां न्यसेत्।

तद्यथा—अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं लृं ॡं नमो हृदि। एं ऐं ओं औं अं अः कं खं गं घं नमो दक्षभुजे। ङं चं छं जं झं ञं टं ठं डं ढं नमो वामभुजे। णं तं थं दं धं नं पं फं बं भं नमो दक्षिणजङ्घायाम्। मं यं रं लं वं शं षं सं हं लं क्षं नमो वामजङ्घायाम्।

ततः कराङ्गन्यासौ—ह्रां अखिलवाग्रूपिण्यै अंगुष्ठाभ्यां नमः। ह्रीं अखण्ड-वाग्रूपिण्यै तर्जनीभ्यां स्वाहा। ह्रूं ब्रह्मवाग्रूपिण्यै मध्यमाभ्यां वषट्। ह्रैं विष्णुवाग्रू-पिण्यै अनामिकाभ्यां हूं। ह्रौं रुद्रवाग्रूपिण्यै कनिष्ठाभ्यां वौषट्। ह्रः सर्ववाग्रूपिण्यै करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्। एवं हृदयादिषु। अंगुलिनियमस्तु पूर्व एवोक्तः। अयन्तु नीलसरस्वतीपक्षे। तथा च तामधिकृत्य सिद्धसारस्वते—

अखिलवाग्रूपिणीं प्रोच्य हृदयाय नमो वदेत्।
अखण्डवाग्रूपिणीति शिरसे वह्निवल्लभा ॥
ब्रह्मवाग्रूपिणीमुक्त्वा शिखायै वषडित्यपि।
विष्णुवाग्रूपिणीं प्रोच्य कवचाय हूमुच्चरेत् ॥
रुद्रवाग्रूपिणीं नेत्रत्रयाय वौषडित्यपि।
सर्ववाग्रूपिणीमुक्त्वा अस्त्राय फडिति स्मरेत् ॥
षड्दीर्घभाजबीजान्ते ङेऽन्तं नामाभियोजयेत्।

अयन्तु नीलसरस्वतीपक्षे। अन्यत्र तु ह्रां एकजटायै अंगुष्ठाभ्यां नमः। ह्रीं तारिण्यै तर्जनीभ्यां स्वाहा। ह्रूं वज्रोदके मध्यमाभ्यां वषट्। ह्रैं उग्रजटे अनामिकाभ्यां हुम्। ह्रौं महाप्रतिसरे कनिष्ठाभ्यां वौषट्। ह्रः पिङ्गोग्रैकजटे करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्। एवं हृदयादिषु। तथा च एकजटामधिकृत्य नीलतन्त्रे—

बीजान्ते एकजटायै हृदयं परिकीर्तितम्।
तारिण्यै शिरसे तद्वद्वज्रोदके शिखा तथा॥
उग्रजटे तु कवचं महाप्रतिसरे तथा।
पिङ्गोग्रैकजटे तद्वन्नेत्रास्त्रे परिकीर्तिते॥
षड्दीर्घभाजबीजान्ते ङेऽन्तं नामाभियोजयेत्॥

अनुक्तत्वादत्र पीठन्यासमातृकान्यासौ न लिखितौ। तथा च फेत्कारीये—

अत्रोक्तमाचरेत् सम्यक् नान्यत् सञ्चारयेद्बुधः।

ततः फलार्थिना ताराषोढान्यासः कर्त्तव्यः।

ताराषोढां प्रवक्ष्यामि सर्वतन्त्रेषु गोपिताम्।
सर्वविघ्नोपशमनीं सर्वपापप्रणाशिनीम्॥
महादारिद्र्यशमनीं सर्वसम्पत्प्रदायिनीम्।
सर्वकामप्रदां नित्यां सर्वसाम्राज्यदायिनीम्॥
शिष्याय भक्तियुक्ताय विनीताय महात्मने।
वदान्याय कुलीनाय शुद्धाचाररताय च॥
एवं विधाय देवेशि साधकाय प्रकाशयेत्।
अन्यथा सिद्धिहानिः स्यादित्याज्ञा शङ्करैः कृता॥
रुद्रैस्तु प्रथमो न्यासो द्वितीयस्तु ग्रहैर्मतः।
लोकपालैस्तृतीयः स्याच्छिवशक्त्या चतुर्थकः॥
तारादिभिः पञ्चमः स्यात् षष्ठः पीठैर्निगद्यते।
एकेन सहिता रुद्राः पञ्चाशत् परिकीर्तिताः॥
विन्दुयुक्तैर्मातृकार्णैस्त्र्यक्षरीबीजपूर्वकैः।
ङेन्तैर्नमोऽन्तैर्देवेशि विन्यसेत्तान् क्रमात् सुधीः॥
तारिणी त्र्यक्षरी प्रोक्ता भवबन्धविनाशिनी।
नीलवर्णां त्रिनयनां शवासनसमायुताम्॥
विभ्रतीं विविधां भूषां मौलावक्षोभ्यभूषिताम्।
एवं ध्यात्वा तारिणीन्तु समाहितमनाश्चिरम्॥

तत्पश्चात् ऋष्यादि न्यास करे—शिरसि अक्षोभ्यऋषये नमः। मुखे बृहतीछन्दसे नमः। हृदि श्रीमदेकजटायै नमः। मूलाधारे हूं बीजाय नमः। पादयोः फट् शक्तये नमः। सर्वांगे स्त्रीं कीलकाय नमः।

वीरतन्त्र के अनुसार इस मन्त्र के ऋषि अक्षोभ्य, छन्द बृहती, देवता त्रिभुवनगुप्ता नील सरस्वती, बीज हूंकार, शक्ति फट् और विनियोग चतुर्वर्गलाभ है।

इसके बाद कालीतन्त्रोक्त मातृका न्यास करे; क्योंकि काली का जो रूप है, वही नीला का भी है। अतः नीला की पूजा में काली पूजा-पद्धति से ही न्यास करना चाहिये।

अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं लृं ॡं नमो हृदि।
एं ऐं ओं औं अं अः कं खं गं घं नमो दक्षभुजे।
ङं चं छं जं झं ञं टं ठं डं ढं नमो वामभुजे।
णं तं थं दं धं नं पं फं बं भं नमो दक्षिणजंघायाम्।
मं यं रं लं वं शं षं सं हं ळं क्षं नमो वामजंघायाम्।

करांग न्यास	हृदयादि न्यास
ह्रां अखिलवाग्रूपिण्यै अंगुष्ठाभ्यां नमः।	हृदयाय नमः।
ह्रीं अखण्डवाग्रूपिण्यै तर्जनीभ्यां स्वाहा।	शिरसे स्वाहा।
ह्रूं ब्रह्मवाग्रूपिण्यै मध्यमाभ्यां वषट्।	शिखायै वषट्।
ह्रैं विष्णुवाग्रूपिण्यै अनामिकाभ्यां हुं।	कवचाय हुम्।
ह्रौं रुद्रवाग्रूपिण्यै कनिष्ठाभ्यां वौषट्।	नेत्रत्रयाय वौषट्।
ह्रः सर्ववाग्रूपिण्यै करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्।	अस्त्राय फट्।

उपर्युक्त न्यास नीलसरस्वती की पूजा के लिये है। एकजटा के लिये यह न्यास इस प्रकार है—

करन्यास	हृदयादि न्यास
ह्रां एकजटायै—अंगुष्ठाभ्या नमः।	हृदयाय नमः।
ह्रीं तारिण्यै—तर्जनीभ्यां स्वाहा।	शिरसे स्वाहा।
ह्रूं वज्रोदके—मध्यमाभ्यां वषट्।	शिखायै वषट्।
ह्रैं उग्रजटे—अनामिकाभ्यां हुं।	कवचाय हुं।
ह्रौं महाप्रतिसरे—कनिष्ठाभ्यां वौषट्।	नेत्रत्रयाय वौषट्।
ह्रः पिंगोग्रैकजटे—करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्।	अस्त्राय फट्।

तारामन्त्र के लिये पीठन्यास और मातृकान्यास का उल्लेख नहीं है। अतः इनका करना आवश्यक नहीं है। फलकामी को तारा षोढ़ा न्यास करना आवश्यक है। सभी तन्त्रों का मत है कि गोपनीय तारा षोढ़ा न्यास से महादारिद्र्य भी दूर होता है। सभी सम्पत्ति

प्राप्त होती है। सभी अभीष्ट पूरे होते हैं। सर्वसाम्राज्य की प्राप्ति होती है। जो शिष्य विनीत, सदाशय, भक्तियुक्त, महात्मा, दानी, सत्कुलोत्पन्न और सदाचारी हो, उसी को यह न्यास बतावे।

महादेव का आदेश है कि इसके विपरीत अन्य किसी को यह न्यास बतलाने से मन्त्रसिद्धि की हानि होती है।

षोढ़ा न्यास में छ: प्रकार के न्यास होते हैं; जैसे—१. रुद्रन्यास, २. ग्रहन्यास, ३. लोकपालन्यास, ४. शिवशक्तिन्यास, ५. तारादि न्यास तथा ६. पीठन्यास।

ह्रीं स्त्रीं हूं के बाद सानुस्वार अकारादि वर्ण युक्त करके चतुर्थी विभक्त्यन्त देवता का नाम उल्लिखित करके अन्त में नम: लगाकर न्यास करना होता है। तारा देवी के उक्त तीन बीज वाले मन्त्र से न्यास करने से पुनर्जन्म नहीं होता है। निम्न प्रकार का ध्यान करके न्यास करे—

नीलवर्णां त्रिनयनां शवासनसमायुताम्।
विभ्रतीं विविधां भूषां मौलावक्षोभ्यभूषिताम्।।

तारा देवी नीलवर्णा हैं, त्रिनेत्रा हैं, शवासनारूढ़ा हैं, विविध अलंकारों से विभूषित हैं। उनके शिरोदेश में अक्षोभ्य ऋषि अवस्थित हैं।

अथ रुद्रन्यासः—ह्रीं स्त्रीं हूं अं श्रीकण्ठेशाय नमः—इत्यादिना मातृकान्न्यसेत्। ह्रीं स्त्रीं हूं आं अनन्तेशाय नमः, ह्रीं स्त्रीं हूं इं सूक्ष्मेशाय नमः, ह्रीं स्त्रीं हूं ईं त्रिमूर्तीशाय नमः, ह्रीं स्त्रीं हूं उं अमरेशाय नमः। ह्रीं स्त्रीं हूं ऊं अर्घीशाय नमः। एवं ३ ऋं भारभूतीशाय, ३ ॠं अतिथीशाय, ३ लृं स्थाणुकेशाय, ३ ॡं हरेशाय, ३ एं झिण्टीशाय, ३ ऐं भौतिकेशाय, ३ ओं सद्योजातेशाय, ३ औं अनुग्रहेशाय, ३ अं अक्रूरेशाय, ३ अः महासेनेशाय, ३ कं क्रोधीशाय, ३ खं चण्डेशाय, ३ गं पञ्चान्तकेशाय, ३ घं शिवोत्तमेशाय, ३ ङं एकरुद्रेशाय, ३ चं कूर्मेशाय, ३ छं एकनेत्रेशाय, ३ जं चतुराननेशाय, ३ झं अजेशाय, ३ ञं सर्वेशाय, ३ टं सोमेशाय, ३ ठं लाङ्गलीशाय, ३ डं दारुकेशाय, ३ ढं अर्द्धनारीश्वरेशाय, ३ णं उमाकान्तेशाय, ३ तं आषाढीशाय, ३ थं दण्डीशाय, ३ दं अद्रीशाय, ३ धं मीनेशाय, ३ नं मेषेशाय, ३ पं लोहितेशाय, ३ फं शिखीशाय, ३ बं छगलण्डेशाय, ३ भं द्विरण्डेशाय, ३ मं महाकालेशाय, ३ यं बालीशाय, ३ रं भुजङ्गेशाय, ३ लं पिनाकीशाय, ३ वं खड्गीशाय, ३ शं वकेशाय, ३ यं श्वेतेशाय, ३ सं भृग्वीशाय, ३ हं नकुलीशाय ३ लं शिवेशाय, ३ क्षं संवर्तकेशाय।

इति रुद्रन्यासः।

देवी तारा का षोढ़ा न्यास इस प्रकार का होता है—

रुद्रन्यास—

ह्रीं स्त्रीं हूं अं श्रीकण्ठेशाय नमः ललाटे।
ह्रीं स्त्रीं हूं आं अनन्तेशाय नमः मुखे।
ह्रीं स्त्रीं हूं इं सूक्ष्मेशाय नमः दक्षनेत्रे।
ह्रीं स्त्रीं हूं ईं त्रिमूर्तीशाय नमः वामनेत्रे।
ह्रीं स्त्रीं हूं उं अमरेशाय नमः दक्षकर्णे।
ह्रीं स्त्रीं हूं ऊं अर्घीशाय नमः वामकर्णे।
ह्रीं स्त्रीं हूं ऋं भारभूतीशाय नमः दक्षनासायाम्।
ह्रीं स्त्रीं हूं ॠं अतिथीशाय नमः वामनासायाम्।
ह्रीं स्त्रीं हूं एं झिंटीशाय नमः ऊर्ध्वौष्ठे।
ह्रीं स्त्रीं हूं ऐं भौतिकेशाय नमः अधरोष्ठे।
ह्रीं स्त्रीं हूं ओं सद्योजातेशाय नमः ऊर्ध्वदन्तपंक्तौ।
ह्रीं स्त्रीं हूं औं अनुग्रहेशाय नमः अधोदन्तपंक्तौ।
ह्रीं स्त्रीं हूं अं अक्रूरेशाय नमः ब्रह्मरन्ध्रे।
ह्रीं स्त्रीं हूं अः महासेनेशाय नमः मुखे।
ह्रीं स्त्रीं हूं कं क्रोधीशाय नमः दक्षबाहुमूले।
ह्रीं स्त्रीं हूं खं चण्डेशाय नमः दक्षकूर्परे।
ह्रीं स्त्रीं हूं गं पञ्चान्तकाय नमः दक्षमणिबन्धे।
ह्रीं स्त्रीं हूं घं शिवोत्तमेशाय नमः दक्षकरांगुलिमूले।
ह्रीं स्त्रीं हूं ङं एकरुद्रेशाय नमः दक्षकरांगुल्यग्रे।
ह्रीं स्त्रीं हूं चं कूर्मेशाय नमः वामबाहुमूले।
ह्रीं स्त्रीं हूं छं एकनेत्रेशाय नमः वामकूर्परे।
ह्रीं स्त्रीं हूं जं चतुराननेशाय नमः वाममणिबन्धे।
ह्रीं स्त्रीं हूं झं अजेशाय नमः वामकरांगुलिमूले।
ह्रीं स्त्रीं हूं ञं सर्वेशाय नमः वामकरांगुल्यग्रे।
ह्रीं स्त्रीं हूं टं सोमेशाय नमः दक्षोरुमूले।
ह्रीं स्त्रीं हूं ठं लांगलीशाय नमः दक्षजंघामूले।
ह्रीं स्त्रीं हूं डं दारुकेशाय नमः दक्षपादमूलसन्धौ।
ह्रीं स्त्रीं हूं ढं अर्द्धनारीश्वराय नमः दक्षपादांगुलिमूले।
ह्रीं स्त्रीं हूं णं उमाकांतेशाय नमः दक्षपादांगुल्यग्रे।
ह्रीं स्त्रीं हूं तं आषाढीशाय नमः वामोरुमूले।

ह्रीं स्त्रीं हूं थं दण्डीशाय नमः वामजंघामूले।
ह्रीं स्त्रीं हूं दं अद्रीशाय नमः वामपादमूलसन्धौ।
ह्रीं स्त्रीं हूं धं मीनेशाय नमः वामपादांगुलिमूले।
ह्रीं स्त्रीं हूं बं मेघेशाय नमः वामपादांगुल्यग्रे।
ह्री स्त्रीं हूं पं लोहितेशाय नमः दक्षपार्श्वे।
ह्रीं स्त्रीं हूं फं शिखीशाय नमः वामपार्श्वे।
ह्रीं स्त्रीं हूं बं छगलण्डेशाय नमः पृष्ठे।
ह्रीं स्त्रीं हूं भं द्विरण्डेशाय नमः नाभौ।
ह्रीं स्त्रीं हूं मं महाकालेशाय नमः उदरे।
ह्रीं स्त्रीं हूं यं बालीशाय नमः वक्षे।
ह्रीं स्त्रीं हूं रं भुजंगेशाय नमः दक्षस्कन्धे।
ह्रीं स्त्रीं हूं लं पिनाकीशाय नमः ककुदस्थाने।
ह्रीं स्त्रीं हूं वं खड्गीशाय नमः वामस्कन्धे।
ह्रीं स्त्रीं हूं शं वकेशाय नमः हृदयादिदक्षहस्ते।
ह्रीं स्त्रीं हूं षं श्वेतेशाय नमः हृदयादिवामहस्ते।
ह्रीं स्त्रीं हूं सं भृग्वीशाय नमः हृदयादिदक्षपादे।
ह्रीं स्त्रीं हूं हं नकुलीशाय नमः हृदयादिवामपादे।
ह्रीं स्त्रीं हूं लं शिवेशाय नमः हृदयादि उदरे।
ह्रीं स्त्रीं हूं क्षं संवर्तकेशाय नमः हृदयादि मुखे।

अथ ग्रहन्यासः—

स्वरैर्हृदि न्यसेदर्कं रक्तं त्र्यक्षरपूर्वकैः ।
भ्रुवोर्मध्ये अवर्गेण सोमं शुक्लन्तु विन्यसेत् ॥
नेत्रत्रये कवर्गेण लोहितं मङ्गलं न्यसेत् ।
हृन्मण्डले तथा श्यामं चवर्गेण बुधं न्यसेत् ॥
कण्ठकूपे पीतवर्णं टवर्गेण बृहस्पतिम् ।
पाण्डराभं तवर्गेण शुक्रन्तु गलदेशके ॥
नाभिदेशे नीलवर्णं पवर्गेण शनैश्चरम् ।
यवर्गेण धूम्रवर्णं राहुं वक्त्रे न्यसेत्ततः ।
लक्षाभ्यां गुददेशे च केतुं धूम्रं वरानने ॥

प्रयोगस्तु—हृदि रक्तवर्णं सूर्यं ध्यात्वा ह्रीं स्त्रीं हूं अं १६ सूर्याय नमः। भ्रूमध्ये शुक्लवर्णं सोमं ध्यात्वा ३ यं रं लं वं सोमाय नमः। नेत्रत्रये लोहितं मङ्गलं ध्यात्वा ३ कं खं गं घं ङं मङ्गलाय नमः। हृदयमण्डले श्यामं बुधं ध्यात्वा

३ चं ५ बुधाय नमः। कण्ठकूपे पीतवर्णं बृहस्पतिं ध्यात्वा ३ टं ५ बृहस्पतये नमः। गलदेशे पाण्डरं शुक्रं ध्यात्वा ३ तं ५ शुक्राय नमः। नाभिदेशे नीलवर्णं शनैश्चरं ध्यात्वा ३ पं ५ शनैश्चराय नमः। मुखे धूम्रवर्णं राहुं ध्यात्वा ३ यं रं लं वं शं षं सं हं राहवे नमः। गुदे धूम्रवर्णं केतुं ध्यात्वा ३ लं क्षं केतवे नमः। इति ग्रहन्यासः।

ग्रहन्यास—
ह्रीं स्त्रीं हूं अं आं·····अं अः रक्तवर्णसूर्याय नमः हृदये।
ह्रीं स्त्रीं हूं यं रं लं वं शुक्लवर्णसोमाय नमः भ्रूमध्ये।
ह्रीं स्त्रीं हूं कं खं गं घं ङं लोहितवर्णमंगलाय नमः नेत्रत्रये।
ह्रीं स्त्रीं हूं चं छं जं झं ञं श्यामवर्णबुधाय नमः हृन्मण्डले।
ह्रीं स्त्रीं हूं टं ठं डं ढं णं पीतवर्णबृहस्पतये नमः कण्ठकूपे।
ह्रीं स्त्रीं हूं तं थं दं धं नं पाण्डुवर्णशुक्राय नमः गलदेशे।
ह्रीं स्त्रीं हूं पं फं बं भं मं नीलवर्णशनैश्चराय नमः नाभौ।
ह्रीं स्त्रीं हूं शं षं सं हं धूम्रवर्णराहवे नमः मुखे।
ह्रीं स्त्रीं हूं ळं क्षं धूम्रवर्णकेतवे नमः गुह्ये।

हृदय में रक्तवर्ण सूर्य का, भ्रूमध्य में शुक्ल वर्ण सोम का ध्यान करे। इसी प्रकार सभी ग्रहों का ध्यान करके यथोक्त स्थानों में उनके मन्त्रों से न्यास करे।

अथ लोकपालन्यासः—

इन्द्रमग्निं यमं रक्षो वरुणं पवनं विभुम् ।
ईशानमात्मनो मूर्ध्नि दिक्षु चाष्टास्वनुक्रमात् ॥
अधोऽनन्तमूर्ध्वदेशे ब्रह्माणञ्च ततो न्यसेत् ।
ह्रस्वदीर्घस्वरैश्चाष्टवर्गैस्त्र्यक्षरपूर्वकैः ॥

आत्मनो मूर्ध्नि देशेऽष्टदिक्ष्वधोर्ध्वञ्च विन्यसेत्।

तत्र प्रयोगः—ह्रीं स्त्रीं हूं अं आं कं ५ इन्द्राय नमः। नमः सर्वत्र। ३ इं ईं चं ५ अग्नये। ३ उं ऊं टं ५ यमाय। ३ ऋं ॠं तं ५ निर्ऋतये। ३ ऌं ॡं पं ५ वरुणाय। ३ एं ऐं यं रं लं वं वायवे। ३ ओं औं शं षं सं हं कुबेराय। ३ अं अः लं क्षं ईशानाय। ३ अधः अनन्ताय। ३ ऊर्ध्वं ब्रह्मणे। इति लोकपालन्यासः।

लोकपालन्यास—
अपने मस्तक की आठो दिशाओं में क्रमशः आठ लोकपालों का न्यास करे—
ह्रीं स्त्रीं हूं अं आं कं खं गं घं ङं इन्द्राय नमः।
ह्रीं स्त्रीं हूं इं ईं चं छं जं झं ञं अग्नये नमः।

ह्रीं स्त्रीं हूं उं ऊं टं ठं डं ढं णं यमाय नमः।
ह्रीं स्त्रीं हूं ऋं ॠं तं थं दं धं नं निर्ऋताय नमः।
ह्रीं स्त्रीं हूं ऌं ॡं पं फं बं भं मं वरुणाय नमः।
ह्रीं स्त्रीं हूं एं ऐं यं रं लं वं वायवे नमः।
ह्रीं स्त्रीं हूं ओं औं शं षं सं हं कुवेराय नमः।
ह्रीं स्त्रीं हूं अं अः ळं क्षं ईशानाय नमः।
ह्रीं स्त्रीं हूं अनन्ताय नमः अधोदेशे।
ह्रीं स्त्रीं हूं ब्रह्मणे नमः ऊर्ध्वदेशे।

अथ शिवशक्तिन्यासः—

ब्रह्मा विष्णुश्च रुद्रश्च ईश्वरश्च सदाशिवः ।
ततः परशिवो देवि षट्शिवाः परिकीर्तिताः ॥
मूलाधारे तु ब्रह्माणं डाकिनीसहितं न्यसेत् ।
सर्वत्र त्र्यक्षरीमुक्त्वा वादिसान्तं सविन्दुकम् ॥
स्वाधिष्ठानाख्यचक्रेण सविष्णुं राकिणीं तथा ।
वादिलान्तं प्रविन्यस्य नाभौ तु मणिपूरके ॥
डादिफान्तार्णसहितं रुद्रञ्च लाकिनीन्तथा ।
अनाहते कादिठान्तमीश्वरं काकिनीं न्यसेत् ॥
विशुद्धाख्यमहाचक्रे षोडशस्वरसंयुतम् ।
सदाशिवं शाकिनीन्तु विन्यसेत्पूर्ववत्ततः ॥
आज्ञाचक्रे तु देवेशि हक्षवर्ण-समन्वितम् ।
परं शिवं ब्रह्मरूपं हाकिनीसहितं न्यसेत् ॥

अथ प्रयोगः—मूलाधारे ह्रीं स्त्रीं हूं वं शं षं सं डाकिनीसहितब्रह्मणे नमः। स्वाधिष्ठाने ३ बं भं मं यं रं लं वं राकिणीसहितविष्णवे नमः। मणिपूरे ३ डं ढं णं तं थं दं धं नं पं फं लाकिनीसहितरुद्राय नमः। अनाहते ३ कं खं गं घं ङं चं छं जं झं ञं टं ठं काकिनीसहितेश्वराय नमः। विशुद्धाख्ये ३ अं १६ शाकिनीसहितसदाशिवाय नमः। आज्ञाचक्रे ३ हं क्षं हाकिनीसहितपरशिवाय नमः। इति शिवशक्तिन्यासः।

शिवशक्तिन्यास—
ह्रीं स्त्रीं हूं वं शं षं सं डाकिनीसहितब्रह्मणे नमः मूलाधारे।
ह्रीं स्त्रीं हूं बं भं मं यं रं लं राकिनीसहितविष्णवे नमः स्वाधिष्ठाने।
ह्रीं स्त्रीं हूं डं ढं णं तं थं दं धं नं पं फं लाकिनीसहितरुद्राय नमः मणिपूरे।

ह्रीं स्त्रीं हूं कं खं गं घं ङं चं छं जं झं ञं टं ठं काकिनीसहित ईश्वराय नमः अनाहते।

ह्रीं स्त्रीं हूं अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं लृं लॄं एं ऐं ओं औं अं अः शाकिनीसहितसदाशिवाय नमः विशुद्धे।

ह्रीं स्त्रीं हूं हं क्षं हाकिनीसहितपरशिवाय नमः आज्ञाचक्रे।

अथ तारादिन्यासः—

तारा चोग्रा महोग्रा च वज्रा काली सरस्वती।
कामेश्वरी च चामुण्डा इत्यष्टौ तारिणी मता॥
सर्वादौ तारिणीवर्णं समुच्चार्य क्रमेण तु।
स्वरादिवसुवर्गेण भूषितेन च विन्दुना।
ङेऽन्ता नमोऽन्ता न्यस्तव्यास्ताराद्या ध्यानपूर्विकाः॥
ब्रह्मरन्ध्रे ललाटे च भ्रूमध्ये कण्ठगह्वरे।
हृदये नाभिदेशे च लिङ्गे चाधारके न्यसेत्॥

प्रयोगस्तु—ब्रह्मरन्ध्रे ह्रीं स्त्रीं हूं अं १६ तारायै नमः। ललाटे ३ कं ५ उग्रायै नमः। भ्रूमध्ये ३ चं ५ महोग्रायै नमः। कण्ठगह्वरे ३ टं ५ वज्रायै नमः। हृदये ३ तं ५ काल्यै नमः। नाभिदेशे ३ पं ५ सरस्वत्यै नमः। लिङ्गे ३ यं रं लं वं कामेश्वर्यै नमः। मूलाधारे ३ शं षं सं हं लं क्षं चामुण्डायै नमः। इति तारादिन्यासः।

तारादि न्यास—

ह्रीं स्त्रीं हूं अं आं इं ईं उ ऊं ऋं ॠं लृं लॄं एं ऐं ओं औं अं अः तारायै नमः ब्रह्मरन्ध्रे।

ह्रीं स्त्रीं हूं कं खं गं घं ङं उग्रायै नमः ललाटे।

ह्रीं स्त्रीं हूं चं छं जं झं ञं महोग्रायै नमः भ्रूमध्ये।

ह्रीं स्त्रीं हूं टं ठं डं ढं णं वज्राय नम. कण्ठगह्वरे।

ह्रीं स्त्रीं हूं तं थं दं धं नं काल्यै नमः हृदये।

ह्रीं स्त्रीं हूं पं फं बं भं मं सरस्वत्यै नमः नाभिदेशे।

ह्रीं स्त्रीं हूं यं रं लं वं कामेश्वर्यै नमः लिंगे।

ह्रीं स्त्रीं हूं शं षं सं हं ळं क्षं चामुण्डायै नमः मूलाधारे।

अथ पीठन्यासः—

मूलाधारे कामरूपं हृदि जालन्धरं तथा।
ललाटे पूर्णगिर्याख्यं उड्डीयानं तदूर्ध्वके॥
वाराणरीं भ्रुवोर्मध्ये ज्वलन्तीं लोचनत्रये।
मायावतीं मुखवृत्ते कण्ठे मधुपुरीं ततः॥
अयोध्यां नाभिदेशे च कट्यां काञ्चीं विनिर्दिशेत्।

दशैतानि प्रधानानि पीठानि क्रमशो विदुः ॥
ह्रस्वदीर्घस्वरैर्भिन्नैर्नमोऽन्तैः क्रमतो न्यसेत् ।

अथ प्रयोगः—मूलाधारे ह्रीं स्त्रीं हूं अं आं कं ५ कामरूपपीठाय नमः। हृदि ३ ई ईं चं ५ जालन्धरपीठाय नमः। ललाटे ३ उं ऊं टं ५ पूर्णगिरिपीठाय नमः। ललाटोर्ध्वे ३ ऋं ॠं तं ५ उड्डीयानपीठाय नमः। भ्रुवोर्मध्ये ३ ऌं ॡं पं ५ वाराणसीपीठाय नमः। लोचनत्रये ३ एं ऐं यं रं लं वं ज्वलन्तीपीठाय नमः। मुखवृत्ते ३ ओं औं शं षं सं हं मायावतीपीठाय नमः। कण्ठे ३ अं अः लं क्षं मधुपुरीपीठाय नमः। नाभिदेशे ३ अयोध्यापीठाय नमः। कट्यां ३ काञ्चीपीठाय नमः।

इति षोढा प्रकथिता ताराया: सर्वसिद्धिदा ।
अक्षोभ्यः सर्वजन्तूनां न्यासस्यास्य प्रसादतः ॥

इति रुद्रयामले ताराषोढा समाप्ता

●

पीठन्यास—
ह्रीं स्त्रीं हूं अं आं कं खं गं घं ङं कामरूपपीठाय नम: मूलाधारे।
ह्रीं स्त्रीं हूं इं ईं चं छं जं झं ञं जालन्धरपीठाय नम: हृदि।
ह्रीं स्त्रीं हूं उं ऊं टं ठं डं ढं णं पूर्णगिरिपीठाय नम: ललाटे।
ह्रीं स्त्रीं हूं ऋं ॠं तं थं दं धं नं उड्डीयानपीठाय नम: ललाटोर्ध्वे।
ह्रीं स्त्रीं हूं ऌं ॡं पं फं बं भं मं वाराणसीपीठाय नम: भ्रुवोर्मध्ये।
ह्रीं स्त्रीं हूं एं ऐं यं रं लं वं ज्वलन्तीपीठाय नम: नेत्रत्रये।
ह्रीं स्त्रीं हूं ओ औं शं षं सं हं मायावतीपीठाय नम: मुखवृत्ते।
ह्रीं स्त्रीं हूं अं अ: ळं क्षं मधुपुरीपीठाय नम: कण्ठे।
ह्रीं स्त्रीं हूं अयोध्यापीठाय नम: नाभिदेशे।
ह्रीं स्त्रीं हूं कांचीपीठाय नम: कट्यां।

इस प्रकार रुद्रयामलोक्त सर्वसिद्धिप्रद षोढ़ा न्यास का यह विवरण है। प्रत्येक मन्त्र के आदि में ह्रीं स्त्रीं हूं का उच्चारण करे और अन्त में नम: कहे। इस षोढ़ा न्यास के करने से साधक सर्वत्र अक्षोभ्य रहता है।

प्रकारान्तरं कालीतन्त्रे—

मन्त्रेणान्तरितान् कृत्वा षड्धा च मातृकां न्यसेत्।
क्रमोत्क्रमाद्वरारोहे ताराषोढा प्रकीर्तिता ॥
कृतेऽस्मिन्न्यासवर्ये च सर्वं पापं प्रणश्यति ।

योगिनीनां भवेत्पूज्यः न देवो स तु मानुषः ॥
यं नमन्ति महेशानि षोढापुटितविग्रहाः ।
अल्पायुः स भवेत्सद्यो देवता कम्पते भिया ।
नास्त्यस्य पूज्यो लोकेषु पितृमातृमुखोज्ज्वलः ॥

तदुक्तं तन्त्रान्तरे—

न्यसेत्सर्गान्वितां सृष्ट्यां हृत्यां विन्द्वन्तिकां न्यसेत् ।
विन्दुसर्गान्वितां न्यस्येत् डाद्यर्णान् स्थितिवर्त्मना ॥
संहृतेर्दोषसंहारः सृष्टेस्तु सुतपुष्टयः ।
स्थितेस्तु शान्तिविन्यासस्तस्मात्कार्यस्त्रिधा मतः ॥
न्यासः संहारान्तो मस्करिवैखानसेषु विहितोऽयम् ।
स्थित्यन्तो गृहमेधिषु सृष्ट्यन्तो वर्णितामिति प्राहुः ॥
वैराग्ययुजि गृहस्थे संहारान्तं केचिदाहुराचार्याः ।
सहजानौ वनवासिनि स्थितिञ्च विद्यार्थिनां सृष्टिम् ॥

एतेन सृष्टिस्थितिसंहृतिक्रमेण कर्त्तव्यम्। षड्धा चेति सृष्टिस्थितीत्याद्युत्क्रमेणेत्यर्थः। सृष्टिरकारादिक्षकारान्तः। स्थितिर्डादिठान्तः। संहृतिः क्षकाराद्यकारान्तः।

अथ षोढान्तरं; तदुक्तं यामले—

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि गुह्यषोढा त्वियं प्रिये ।
न प्रकाश्यमिदं क्वापि मन्त्रिणः कायशोधने ।
प्रणवं मातृकावर्णैः पुटितं मातृकास्थले ॥
तेनैव पुटितं वर्णं न्यसेत्तत्रैव पार्वति ।
मायाबीजं तथा देवि विन्यस्तव्यं प्रयत्नतः ॥
वधूबीजं तथा चैव विन्यसेत्सुसमाहितः ।
कूर्चबीजं तथा देवि न्यसनीयमशेषतः ॥
अस्त्रं चैव तथा न्यस्त्वा सकलं तदनन्तरम् ।
गुह्यषोढा त्वियं देवि न प्रकाश्या कदाचन ।
अवश्यं प्रत्यहं कार्या न पूजा न जपस्तथा ॥

अथवा कालीषोढा कर्तव्या। तदुक्तं यामले—

गुह्यषोढा सदा कार्या तारिण्या मन्त्रसिद्धये ।
कालीषोढाथवा देवि न पूजा न जपस्तथा ॥

ततो मूलमुच्चार्य शिरआदि पादपर्यन्तं पादादि शिरोऽन्तं हृदादि मुखपर्यन्तं व्यापकत्रयं न्यसेत्। अथवा प्रणवपुटितमूलेन व्यापकन्यासं सप्तधा पञ्चधा वा कुर्यात्। तदुक्तं फेत्कारीये—

ओंकारपुटितं कृत्वा मनुना व्यापकं न्यसेत् ॥

कालीतन्त्र में दूसरे प्रकार के षोढ़ा न्यास का वर्णन है। अ से क्ष तक के पचास मातृकावर्ण में से प्रत्येक को मूल मन्त्र से पुटित करके मातृकान्यासोक्त अंग-प्रत्यंग में न्यास करे। अनुलोम-विलोम से छ: बार न्यास करे। इससे षोढ़ा न्यास सम्पन्न होता है। जैसे—

ललाट में—ह्रीं स्त्रीं हूं फट् अं ह्रीं स्त्रीं हूं फट् नम:।

मुख में—ह्रीं स्त्री हूं फट् आं ह्रीं स्त्रीं हूं फट् नम:।

इसी प्रकार क्षं तक के न्यास को अनुलोम न्यास कहते हैं।

हृदयादि मुख में ह्रीं स्त्रीं हूं फट् क्षं ह्रीं स्त्रीं हूं फट् नम:। मुखादि ब्रह्मरन्ध्र में ह्रीं स्त्रीं हूं फट् ळं ह्रीं स्त्रीं हूं फट् नम: इत्यादि रूप से न्यास करने से विलोम न्यास होता है।

इस न्यास से सभी पाप नष्ट होकर साधक योगिनीगण का पूज्य होकर देवतुल्य होता है। ऐसा साधक मनुष्य नहीं कहा जाता। षोढ़ा-विशिष्ट व्यक्ति जिसे नमस्कार करता है, वह अल्पायु होता है। उस साधक से देवगण भी डरते हैं। जो प्रतिदिन यह षोढ़ा न्यास करता है, उसका पूजनीय कोई नहीं होता है। इसका साधक माता-पिता आदि गुरुजनों का मुख उज्ज्वल करता है।

तन्त्रान्तर में लिखा है कि यह न्यास सृष्टि-स्थिति और संहारक्रम से करे। सृष्टि- न्यास में विसर्ग, संहारन्यास में बिन्दु और स्थितिन्यास में बिन्दु और विसर्ग दोनों को लगाकर न्यास किया जाता है। संहारन्यास से सभी दोष नष्ट होते हैं। सृष्टिन्यास से सन्ततिवृद्धि होती है और स्थितिन्यास से शान्ति प्राप्त होती है। संन्यासी, वानप्रस्थ और गृहस्थाश्रमी तीनों को तीनों न्यास विहित हैं। गृहस्थ को सृष्टि और स्थिति तथा ब्रह्मचारी को केवल सृष्टिन्यास करना चाहिये। सपत्नीक वनवासी स्थितिन्यास और विद्यार्थी सृष्टिन्यास करे। इस प्रकार अधिकारभेद से तीनों न्यासों की व्यवस्था है। सृष्टिन्यास में अ से क्ष तक, स्थितिन्यास में ड से ठ तक और संहारन्यास में क्ष से अ तक के वर्णों का न्यास होता है।

यामल में दूसरे प्रकार का षोढ़ा न्यास बतलाया गया है। इसे गुह्य षोढ़ा कहते हैं। इस न्यास को सदा गुप्त रक्खे। इससे देहशुद्धि होती है। प्रणव को 'अ' से 'क्ष' तक के वर्णों से पुटित करके मातृकान्यास के स्थानों में न्यास करे। इसके बाद अ से क्ष तक के प्रत्येक वर्ण को ॐ से पुटित करके यह न्यास करे। जैसे—

ललाटे अं ॐ अं नम:, मुखे आं ॐ आं नम: इत्यादि। ललाटे ॐ अं ॐ नम:, ॐ आं ॐ नम: इत्यादि। इसी प्रकार 'ह्रीं' को अकारादि वर्ण से पुटित करके और

अकारादि वर्ण को ह्रीं से पुटित करके न्यास करे। यथा—ह्रीं अं ह्रीं नमः ललाटे। अं ह्रीं अं नमः इत्यादि। इसके बाद 'स्त्रीं' को अकारादि वर्णों से पुटित करके और अकारादि को स्त्रीं से पुटित करके मातृकास्थानों में न्यास करे। यथा—ललाटे अं स्त्रीं अं नमः, स्त्रीं अं स्त्रीं नमः इत्यादि। इसके बाद 'हूं' को अकारादि वर्ण से पुटित करके और अकारादि वर्ण को हूं से पुटित करके पूर्ववत् न्यास करे। जैसे—ललाटे अं हूं अं नमः, मुखे आं हूं आं नमः इत्यादि। ललाटे हूं अं हूं नमः, मुखे हूं आं हूं नमः इत्यादि। इसके बाद अस्त्रबीज फट् को अकारादि वर्ण से पुटित करके और अकारादि को फट् वर्ण से पुटित करके पूर्ववत् न्यास करे। जैसे—ललाटे अं फट् अं नमः, मुखे आं फट् आं नमः, ललाटे फट् अं फट् नमः, मुखे फट् आं फट् नमः। इसके बाद ॐ ह्रीं स्त्रीं हूं फट् को अकारादि वर्णों द्वारा पुटित करके और ॐ ह्रीं स्त्रीं हूं फट् सभी बीजों द्वारा अकारादि वर्णों को पुटित करके पूर्ववत् न्यास करे। यथा—ललाटे अं ॐ ह्रीं स्त्रीं हूं फट् अं नमः इत्यादि और ललाटे ॐ ह्रीं स्त्रीं हूं फट् अं ॐ ह्रीं स्त्रीं हूं फट् नमः इत्यादि।

इसी को गुह्य षोढ़ा कहते हैं। षोढ़ा न्यास सदैव गोपनीय है। देव-दैत्य-मनुष्य सभी इस न्यास से सिद्धिलाभ करते हैं। यह न्यास प्रतिदिन करना चाहिये। इस न्यास के करने से पूजा और जप करने की आवश्यकता नहीं रहती। तारा षोढ़ा न्यास करने में असमर्थ हो तो काली षोढ़ा न्यास करने से भी पूजा और जप आवश्यक नहीं रहते।

इसके बाद मूल मन्त्र का उच्चारण करके मस्तक से पैरों तक और पैरों से मस्तक तक एवं हृदय से मुख तक तीन बार व्यापक न्यास करे। अथवा प्रणवपुटित मूल मन्त्र द्वारा सात या पाँच बार व्यापक न्यास करे। ऐसा फेत्कारी तन्त्र में लिखा है।

ततोऽर्घ्यस्थापनं यथा—स्ववामे त्रिकोणवृत्तचतुरस्रमण्डलं कृत्वा तत्र साधारं पात्रं निधाय मूलविद्यया जलादिनापूर्य जलमन्त्रेण जलमधिष्ठाय रक्तचन्दन-बिल्वपत्रादीन्निक्षिप्य अर्घ्यस्याग्नीशासुरवायुषु मध्ये दिक्षु च ह्रीं अखिलवाग्रूपिण्यै हृदयाय नमः इत्यादिना ह्रां एकजटायै इत्यादिना वा षडङ्गानि विन्यस्य अर्घ्यपात्रं मत्स्यमुद्रयाच्छाद्य मूलं दशधा जपेत्। तथा च कालीतन्त्रे—

दशकृत्वो जपेद्विद्यां देवताभावसिद्धये।

ततोऽस्त्रेण संरक्ष्य धेनुयोनिमुद्रे प्रदर्श्य तेजोमयं तज्जलं विभाव्य किञ्चि-त्प्रोक्षणीपात्रे निक्षिप्य तेनोदकेनात्मानं पूजोपकरणञ्चाभ्युक्ष्य पूजामारभेत्। भूतशुद्ध्यनन्तरं वा। तथा च फेत्कारीये—

भूतशुद्धिं विधायाथ अर्घ्यादिस्थापनञ्चरेत्।
प्राणायामं ततः कृत्वा ऋष्यादिन्यासमाचरेत्॥

ततः पुष्पाञ्जलिं विरच्यात्माभेदेन देवतां ध्यायेत्। यथा—

प्रत्यालीढपदार्पितांघ्रिशवहृद्घोराट्टहासा परा,
खड्गेन्दीवरकर्तृखर्परभुजा हूङ्कारबीजोद्भवा।
खर्वा नीलविशालपिङ्गलजटाजूटैकनागैर्युता,
जाड्यं न्यस्य कपालके त्रिजगतां हन्त्युग्रतारा स्वयम्॥

एवं विभाव्य करकलितदूर्वाक्षतरक्तचन्दनमिलितदिनकरकिरणारुणकुसुमाञ्जलौ मातृकायन्त्रं ध्यात्वा हृदयान्मूलमन्त्रतेजोमयीं शुद्धज्ञानचैतन्यमयीं षट्चक्रभेदेन शिरःस्थितसहस्रदलकमलकर्णिकान्तर्गतपरमशिवं प्रापय्य क्रियासमभिव्याहारेण तदमृताम्बुधौ विश्राम्य तदमृतलोलीभूतां चैतन्यानन्दमयीं तां प्रवहन्नासापुटादानीय मूलेन कल्पितमूर्तावावाहयेत्। तथा च तन्त्रान्तरे—

देवीं सुषुम्नामार्गेण चानीय ब्रह्मरन्ध्रकम्।
वहन्नासापुटे ध्यात्वा निर्यान्तीं स्वाञ्जलिस्थिताम्।
पुष्पे आरोप्य तत्पुष्पं प्रतिमादौ निधापयेत्॥
ॐ देवेशि भक्तिसुलभे परिवारसमन्विते।
यावत्त्वं पूजयिष्यामि तावत्त्वं सुस्थिरा भव॥

पूर्वोक्तक्रमेण आवाहनादिकं कृत्वा योन्यादिपञ्चमुद्रा बीजसहिता दर्शयेत्। आवाहनादिमुद्राभिः पञ्चमुद्राः प्रदर्शयेत्—इति भैरवीये आह। तास्तु मुद्राप्रकरणे अनुसन्धेया। आं ह्रीं क्रों स्वाहेति प्राणप्रतिष्ठां कृत्वा मूलमुच्चार्य श्रीमदेकजटे वज्रपुष्पं प्रतीच्छ हूं फट् स्वाहेति षोडशोपचारेण पञ्चोपचारेण वा पूजयेत्।

अस्याः प्रयोगस्तु—आदौ मूलं तत एतन्मन्त्रमुच्चार्य इदं द्रव्यममुकदेवतायै नमः। तथा च फेत्कारिण्याम्—

श्रीमदेकजटे उक्त्वा वज्रपुष्पं प्रतीच्छ च।
तारादिवह्निजायान्तमुदीर्य यजनं चरेत्॥

तारः कूर्चं तदादि हूं फडित्यर्थः। स च वह्निजायान्तश्चेति। कस्याञ्चित् प्राचीनपद्धतौ ॐ भगवत्येकजटे ह्रीं विशुद्धधर्मगात्रि सर्वपापानि शमय सर्वविकल्यानपनय हूं फट् स्वाहा पाद्यं नमः। ॐ तारिणि ह्रीं इदमाचमनीयं स्वधा। ॐ ह्रीं मणिधरि वज्रिणि महाप्रतिसरे इदमर्घ्यं स्वाहा। ॐ ह्रीं कपालिके मधुपर्कः स्वधा। श्रीमदेकजटे इदमाचमनीयं सुगन्धिजलं नमः। गन्धपुष्पयोर्विशेषस्त्वयं—

ॐ परमानन्दसौरभ्यपरिपूर्णदिगन्तरम्।
गृहाण परमं गन्धं कृपया परमेश्वरि।

श्रीमदेकजटे एष गन्धो नमः। एवं—

ॐ तुरीयवनसम्भूतं नानागुणमनोहरम् ।
आनन्दसौरभं पुष्पं गृह्यतां परमेश्वरि ।

इयं वचोरचना विद्याधराचार्यसम्मता।

अर्घ्य-स्थापन—साधक अपने वाम भाग में त्रिकोण वृत्त चतुरस्रयुत एक मण्डल बनावे। उस मण्डल पर आधारसहित अर्घ्यपात्र स्थापित करके मूल मन्त्र का उच्चारण करते हुए उसे जल से भरे। तब 'गंगे च यमुने चैव' इत्यादि मन्त्र से उस जल का शोधन करके उसमें लाल चन्दन, बेलपत्र छोड़े। अर्घ्यपात्र के अग्नि, ईशान, नैर्ऋत्य और वायु कोणों में, मध्य में और दिशाओं में ह्रां अखिलवाग्रूपिण्यै हृदयाय नम: इत्यादि पूर्वोक्त मन्त्रों से षडंग पूजन करे। तब मत्स्यमुद्रा से अर्घ्यपात्र को ढंककर दस बार मूल मन्त्र का जप करे। फट् मन्त्र से अर्घ्यपात्र का संरक्षण करे। योनि और धेनुमुद्रा दिखाकर अर्घ्यजल का ध्यान तेजोस्वरूप करे। तब अर्घ्यपात्र का कुल जल प्रोक्षणी पात्र से लेकर प्रोक्षणी पात्र के जल से अपने शरीर और पूजा सामग्री का अभ्युक्षण करके पूजा प्रारम्भ करे।

फेत्कारिणी तन्त्र के मत से भूतशुद्धि के बाद अर्घ्यस्थापन, प्राणायाम और ऋष्यादि न्यास करे। तब पुष्पाञ्जलि लेकर अपनी आत्मा से अभिन्न समझते हुए देवता का निम्नवत् ध्यान करे—

प्रत्यालीढपदार्पितांघ्रिशवहृद्घोराट्टहासा परा
खड्गेन्दीवरकर्तृखर्परभुजा हूङ्कारबीजोद्भवा ।
खर्वा नीलविशालपिङ्गलजटाजूटैकनागैर्युता
जाड्यं न्यस्य कपालके त्रिजगतां हन्त्युग्रतारा स्वयम् ।।

तारा देवी प्रत्यालीढ़ स्थिति में शवरूपी शिव के हृदय पर दोनों पैर रखकर खड़ी हैं। वे अति भयंकर उच्च स्वर से हँस रही हैं। चार हाथों में खड्ग, नीलकमल, कर्तृका और खप्पर है। वे हूंकार बीज से उद्भूत हैं। उनकी आकृति नाटी है, वर्ण नीला है। उनके मस्तक पर अति विशाल एक जटा है और उग्र रूप है। ऐसी उग्रतारा देवी तीनों लोकों की जड़ता का नाश स्वयं करती हैं।

तब दूर्वाक्षत रक्त चन्दनसंयुक्त सूर्यरश्मिवत् लोहित वर्ण हस्तस्थ पुष्पांजलि में मातृका यन्त्र की भावना करे। मूल मन्त्र से षट्चक्रभेदन करते हुए चैतन्य देवी को सहस्रार कमल की कर्णिकामध्य में विराजमान परमशिव से संयोजित करे। तब सहस्रार-स्थित सुधासागर में विश्राम के लिये स्थापित करे। तब अमृतलोभी चैतन्यमयी देवी को प्रवह-मान नासापुट द्वारा पूर्वोक्त पुष्पांजलि अर्पित करते हुए कल्पित मूर्ति का आवाहन करे।

तन्त्रान्तर में वर्णन है कि अंजलि के पुष्पों में देवी का आवाहन करके उस पुष्प को यन्त्र में स्थापित करे और यह प्रार्थना करे—

ॐ देवेशि भक्तिसुलभे परिवारसमन्विते।
यावत्त्वां पूजयिष्यामि तावत्त्वं सुस्थिरा भव।।

तब योनि आदि पाँच मुद्राओं को दिखावे। तब आं ह्रीं क्रों इत्यादि मन्त्र से यन्त्र में प्राणप्रतिष्ठा करे। मूल मन्त्र उच्चारणपूर्वक निम्न मन्त्र से षोड़शोपचार अथवा पञ्चोपचार से पूजन करे—

स्त्रीं ह्रीं हूं फट् श्रीमदेकजटे वज्रपुष्पं प्रतीच्छ हूं फट् स्वाहा इदं आसनं श्रीमदेकजटायै नमः।

इसी प्रकार अन्य उपचारों से पूजा करे। किसी प्राचीन पद्धति के अनुसार यह पूजाक्रम इस प्रकार भी है—

१. ॐ भगवत्येकजटे ह्रीं विशुद्धधर्मगात्रि सर्वपापानि शमय सर्वविकल्पानपनय हूं फट् स्वाहा पाद्यं नमः।

२. ॐ तारिणी ह्रीं इदमाचमनीयं स्वधा।

३. ॐ ह्रीं मणिधरि वज्रिणि महाप्रतिसरे इदमर्घ्यं स्वाहा।

४. ॐ ह्रीं कापालिके मधुपर्कं स्वधा।

५. ॐ श्रीमदेकजटे इदमाचमनीयं सुगन्धिजलं नमः।

६. ॐ परमानन्दसौरभ्यपरिपूर्णदिगन्तरं गृहाण परमं गन्धं कृपया परमेश्वरि श्रीमदेकजटे एष गन्धो नमः।

७. ॐ तुरीयवनसम्भूतं नानागुणमनोहरं आनन्दसौरभं पुष्पं गृह्यतां परमेश्वरि।

ये वाक्य विद्याधराचार्य-सम्मत हैं।

तारिणीनिर्णये—

प्रणवं भगवत्येकजटे माया ततः परम्।
विशुद्धधर्मगात्रितः सर्वपापानि तत्परम्॥
शमय सर्वविकल्पानपनय हूं फट् शिरः।
अयं पाद्यमनुर्देवि आचमनीयमनुं शृणु॥
तारं वज्रिणि मायेति तारो माया ततः परम्।
मणिधरि वज्रिणीति महाप्रतिसरे मनुः।
माया कपालिके मन्त्रो मधुपर्के सुरेश्वरि॥

ततो योनिमुद्रां प्रदर्श्य देवि आज्ञापय भवत्याः परिवारान् पूजयामीति प्रार्थ्य करणान् पूजयेत्। तद्यथा—

केशरेष्वग्नीशासुरवायुषु मध्ये दिक्षु च षडङ्गानि पूजयेत्। यथा—ह्रां एकजटायै हृदयाय नमः। ह्रीं तारिण्यै शिरसे स्वाहा। ह्रूं वज्रोदके शिखायै वषट्। ह्रैं उग्रजटे

कवचाय हुं। ह्रौं महाप्रतिसरे नेत्रत्रयाय वौषट्। चतुर्दिक्षु ह्रः पिङ्गोग्रैकजटे अस्त्राय फट्। नीलसरस्वतीपक्षे तु ह्रीं अखिलवाग्रूपिण्यै हृदयाय नमः इत्यादिना षडङ्गानि सम्पूज्य देव्या मौलौ अक्षोभ्यवज्रपुष्पं प्रतीच्छ हूं फट् स्वाहेति मन्त्रेणाक्षोभ्यं पूजयेत्।

ततः पीठस्योत्तरे वायव्यादीशानपर्यन्तं गुरुपंक्तिः पूजयेत्। यथा—ऊर्ध्वकेशानन्दनाथ वज्रपुष्पं हूं फट् स्वाहेति। तथा चोक्तं फेत्कारीये—

वज्रपुष्पं प्रतीच्छेति हूं फट् स्वाहेति मन्त्रतः ।
एतन्मन्त्रे नाममात्रं भिन्नञ्चैव न संशयः ।
अनेन मनुना सर्वान् परिवारान् समर्चयेत् ॥

एवं व्योमकेशानन्दनाथ-नीलकण्ठानन्दनाथ-वृषध्वजानन्दनाथान् पूजयेत्। एते दिव्यौघाः। वसिष्ठानन्दनाथ-कूर्मनाथानन्दनाथ-मीननाथानन्दनाथ-महेश्वरानन्दनाथ-हरिनाथानन्दनाथान् पूजयेत्। एते सिद्धौघाः। एवं तारावत्यम्बा-भानुमत्यम्बा-जयाम्बा-विद्याम्बा-महोदर्यम्बा-सुखानन्दनाथ-परानन्दनाथ-पारिजातनन्दनाथ-कुलेश्वरानन्दनाथ-विरूपाक्षानन्दनाथ-फेरव्यम्बाः पूजयेत्। एते मानवौघाः। तथा च तारातन्त्रे—

अथ तारागुरून् वक्ष्ये दृष्टादृष्टाफलप्रदान् ।
ऊर्ध्वकेशो व्योमकेशो नीलकण्ठो वृषध्वजः ॥
दिव्यौघाः सिद्धिदा वत्स सिद्धौघान् शृणु तत्त्वतः ।
वसिष्ठः कूर्मनाथश्च मीननाथो महेश्वरः ॥
हरिनाथो मानवौघान् शृणु वक्ष्यामि तद्गुरून् ।
तारावती भानुमती जया विद्या महोदरी ॥
सुखानन्दः परानन्दः पारिजातः कुलेश्वरः ।
विरूपाक्षः फेरवी च कथितं तारिणीकुलम् ॥
आनन्दनाथशब्दान्ता गुरवः सर्वसिद्धिदाः ।
स्त्रियोऽपि गुरुरूपास्तु अम्बान्ताः परिकीर्तिताः ॥
अशक्तश्चेदक्षोभ्यमात्रं पूजयेत् ।
मम मौलिस्थितं देवमवश्यं परिपूजयेत् ॥

इति फेत्कारीये देवीवाक्यात्। ततः पूर्वादिदले—

महाकाल्यथ रुद्राणी उमा भीमा तथैव च ।
घोरा च भ्रामरी चैव महारात्रिश्च सप्तमी ।
अष्टमी भैरवी प्रोक्ता योगिनीस्ताः प्रपूजयेत् ॥

ततः पूर्वादि चतुर्दले वामावर्तेन वैरोचन-शङ्ख-पाण्डव-पद्मनाभानसिताभान् पूजयेत्। अग्न्यादिकोणदलेषु नामक-मामक-पाण्डव-तारकान् पूजयेत्। पूर्वादिद्वारचतुष्टयेषु वामावर्तेन पद्मान्तक-यमान्तक-विघ्नान्तक-नरान्तकान् वज्रपुष्पेत्यादिना पूजयेत्। तथा च सिद्धसारस्वते—

वैरोचनं तथा शङ्खं पाण्डवं पद्मनाभकम्।
असिताभं यजेन्मन्त्री दिक्ष्विन्द्रश्च चतुर्दले ॥
नामकं मामकञ्चैव पाण्डवं तारकं तथा।
वह्न्यादिकचतुष्कोणे मन्त्रैः स्वैः स्वैः क्रमाद्यजेत् ॥

नीलतन्त्रे—

वामावर्तक्रमेणैव पूजयेदङ्गदेवताः।
द्वारपूर्वादितस्तद्वै पद्मान्तकयमान्तकौ।
विघ्नान्तकमथाभ्यर्च्य पूजयेन्नरकान्तकम् ॥ इति।

तारिणीनिर्णय में भी ऐसा ही निर्देश मिलता है। इसके बाद योनिमुद्रा दिखाकर देवी की आज्ञा लेकर आवरणदेवताओं का पूजन करे— देवि आज्ञापय भवत्याः परिवारान् पूजयामि।

केशर के अग्नि, ईशान, वायु, नैर्ऋत्य में, मध्य में और चतुर्दिक षडंग पूजा करे।

षडंगपूजन—ह्रां एकजटायै हृदयाय नमः। ह्रीं तारिण्यै शिरसे स्वाहा। ह्रूं वज्रोदके शिखायै वषट्। ह्रैं उग्रजटे कवचाय हुं। ह्रौं महाप्रतिसरे नेत्रत्रयाय वौषट्। ह्रः पिङ्गोग्रैकजटे अस्त्राय फट्।

नीलसरस्वती के सम्बन्ध में मत है कि ह्रां अखिलवाग्रूपिण्यै हृदयाय नमः इत्यादि मन्त्र से षडंग पूजा करे। देवी की मौलि में अक्षोभ्य ऋषि की पूजा इस मन्त्र से करे— ॐ अक्षोभ्यः वज्रपुष्पं प्रतीच्छ हूं फट् स्वाहा अक्षोभ्यऋषये नमः।

पीठ के उत्तर भाग में वायु कोण से ईशान कोण तक गुरुपंक्ति की पूजा करे—
वायुकोण में—ॐ ऊर्ध्वकेशानन्दनाथवज्रपुष्पं प्रतीच्छ हुं फट् स्वाहा।
नैर्ऋत्य कोण में—ॐ व्योमकेशानन्दनाथवज्रपुष्पं प्रतीच्छ हुं फट् स्वाहा।
अग्निकोण में—ॐ नीलकण्ठानन्दनाथवज्रपुष्पं प्रतीच्छ हुं फट् स्वाहा।
ईशानकोण में—ॐ वृषभध्वजानन्दनाथवज्रपुष्पं प्रतीच्छ हुं फट् स्वाहा।

ऊपर वर्णित दिव्य गुरु हैं। इसके बाद पाँच सिद्धगुरुओं की पूजा करे। उत्तर में वशिष्ठानन्दनाथ, वायव्य में कूर्मनाथानन्दनाथ, नैर्ऋत्य में मीननाथानन्दनाथ, अग्नि में महेश्वरानन्दनाथ और ईशान में हरिनाथानन्दनाथ की पूजा करे।

इसके बाद दश मानवगुरुओं की पूजा करे। इनमें पाँच स्त्रीगुरु हैं और पाँच पुरुषगुरु हैं। उत्तर, वायव्य, नैर्ऋत्य, अग्नि, ईशान में क्रमशः तारावत्यम्बा, भानुमत्यम्बा, जयाम्बा, विद्याम्बा और महोदर्यम्बा स्त्रीगुरुओं की पूजा करे। इसी प्रकार सुखानन्दनाथ, परानन्दनाथ, पारिजातानन्दनाथ, कुलेश्वरानन्दनाथ, विरूपाक्षानन्दनाथ और फेरव्यम्बा की पूजा करे। स्त्रीगुरु का पूजामन्त्र है—तारावत्यम्ब वज्रपुष्पं प्रतीच्छ हूं फट् स्वाहा।

तारातन्त्र में उल्लिखित है कि ऊर्ध्वकेश, व्योमकेश, नीलकण्ठ, वृषध्वज—ये दिव्यौघ गुरु हैं। वशिष्ठ, कूर्मनाथ, मीननाथ, महेश्वर और हरिनाथ—ये सिद्धौघ गुरु हैं। तारावती, भानुमती, जया, विद्या, महोदरी, सुखानन्द, परानन्द, पारिजात, कुलेश्वर, विरूपाक्ष और फेरवी—ये मानवौघ गुरु हैं। तारादेवी के ये कुलगुरु हैं। सभी गुरुओं के नाम के अन्त में आनन्दनाथ शब्द लगाना होता है। गुरु स्त्रियों के नाम के अन्त में अम्बा शब्द जोड़ें। ये सभी दृष्टादृष्ट फल के दाता हैं। इन सबकी पूजा करने में अशक्त हो तो केवल अक्षोभ्य ऋषि की पूजा करे। फेत्कारिणी तन्त्र में देवी का वचन है कि मेरे मस्तक पर स्थित अक्षोभ्य ऋषि का पूजन अवश्य करें।

इसके बाद अष्टदल के दलमूलों में पूर्वादि क्रम से महाकाली, रुद्राणी, उग्रा, भीमा, घोरा, भ्रामरी, महारात्रि और भैरवी का पूजन करे। पूजामन्त्र है—ॐ महाकाल्यै नमः इत्यादि। इसी प्रकार पूर्वादि चार दलों में वामावर्त्त से वैरोचन, शंख, पांडव, पद्मनाभ और असिताभ—इन पाँच देवताओं की पूजा करे। फिर आग्नेयादि कोणों के दलों में नामक, मामक, पांडव और तारक की पूजा करे। चार द्वारों में वामावर्त्तक्रम से पद्मान्तक, यमान्तक, विघ्नान्तक, नरकान्तक की पूजा करे। 'वज्रपुष्पं प्रतीच्छ हूं फट् स्वाहा' मन्त्र से ही इन देवगणों की पूजा करे। ऐसा 'नीलतन्त्र' और 'सिद्धसारस्वत' का मत है।

ततो बलिदानं; तदुक्तं फेत्कारीये—

पूजान्ते भोजनादौ च बलिं मन्त्रेण दापयेत् ।

तत्र क्रमः—स्ववामे त्रिकोणवृत्तचतुरस्रमण्डलं कृत्वा पुष्पैस्तमभ्यर्च्य तत्र विहितबलिद्रव्यभरितं साधारं पात्रं निधाय तद्वामांगुष्ठानामिकाभ्यां धृत्वा ॐ ह्रीं एकजटे महायक्षाधिपतये मयोपनीतं बलिं गृह्ण गृह्ण गृह्णापय गृह्णापय मम सर्वशान्तिं कुरु कुरु परविद्यामाकृष्याकृष्य त्रुट त्रुट छिन्धि छिन्धि सर्वजगद्वशमानय ह्रीं स्वाहा इति त्रिः पठित्वा बलिं दद्यात्। तदुक्तं मत्स्यसूक्ते—

इति सम्पूज्य वामे च व्यापकं मण्डलं लिखेत् ।
कुसुमैरर्चयेतत्तु तत्र पात्रं निधाय च ॥
पात्रे विनिहितं द्रव्यं निधाय साधकोत्तमः ।
अंगुष्ठानामिकाभ्यान्तु बलिं दद्यात् प्रयत्नतः ॥ इति।

तथा च सिद्धसारस्वते—

प्रणवं पूर्वमुद्धृत्य हृल्लेखाञ्च ततः परम् ।
एकजटे पदान्ते च महाशब्दमुदीरयेत् ॥
यक्षाधिपदमाभाष्य पतये पदतो मया ।
उपनीतं पदं चोक्त्वा बलिं गृह्णेति च द्विधा ॥
गृह्णापय द्विधा प्रोक्त्वा मम सर्वपदं तथा ।
शान्तिं कुरु पदद्वन्द्वं परविद्यामनन्तरम् ॥
द्विधाकृष्येति च ब्रूयात् त्रुट छिन्धीति च द्विधा ।
सर्वादि च ततो जगद्वशमानय शब्दतः ।
मायया स्वाहया युक्तो मन्त्रो बलिविधौ स्मृतः ॥

ततो रहस्यमालया निगदेनोपांशुना मानसेन वा अष्टोत्तरसहस्रं शतं वा जपेत्। तथा च—

अष्टोत्तरशतं जाप्यं यावज्जीवितसंख्यया ।
सहस्रं वा जपेद्देवि नित्यपूजाविधौ पुनः ।

अशक्तश्चेद्विंशत्या न्यूनं न जपेत्। तथा च—

सहस्रं शतं विंशं वा जपेद्रहस्यमालया ।

बलिदान-विधि—फेत्कारिणी तन्त्र में वर्णन है कि पूजा के अन्त में भोजन द्रव्य निवेदन करने के पूर्व मन्त्रपाठ के सहित बलि प्रदान करे।

साधक अपने वाम भाग में त्रिकोण वृत्त चतुरस्र का मण्डल बनाकर फूलों से उसकी पूजा करे। मण्डल पर बलिद्रव्य से पूर्ण पात्र को आधारसहित रक्खे। बाँयें हाथ की अंगुष्ठ-अनामा अंगुलियों से पात्र को स्पर्श करके निम्न मन्त्र को तीन बार पढ़कर बलि निवेदन करे—

ॐ ह्रीं एकजटे! महायक्षाधिपतये मयापनीतं बलिं गृह्ण गृह्ण, गृह्णापय गृह्णापय, मम सर्वशान्तिं कुरु कुरु परविद्यामाकृष्याकृष्य त्रुट त्रुट छिन्दि छिन्दि सर्वं जगद् वशमानय ह्रीं स्वाहा।

इसके बाद रहस्यमाला द्वारा वाचिक, उपांशु या मानसिक प्रकार से १०८ या १००८ बार मूल मन्त्र का जप करे। इतना जप करने में अशक्त हो तो बीस बार जप करे।

तत्र जपरहस्यं यथा—मूलाधारस्वाधिष्ठानमणिपूरकेषु यथाक्रमं बीजत्रयव्याप्तिं तडित्कोटिभास्वरां परस्परानुस्यूतां विभाव्य सर्वतेजोमयं फट्कारं विश्रान्तिमयं हृदि ध्यात्वा उच्चरेत्। तथा नीलतन्त्रे—

मन्त्रध्यानं प्रवक्ष्यामि जपात् सार्वज्ञदायकम् ।
मन्त्रध्यानान्महेशानि शुध्यते ब्रह्महा यत: ॥
मूलचक्रे तु हृल्लेखां सूर्यकोटिसमप्रभाम् ।
स्वाधिष्ठाने पीतवर्णं द्वितीयन्तु विभावयेत् ॥
नाभौ जीमूतसङ्काशं कूर्चबीजं महाप्रभम् ।
अस्त्रबीजं हृदि ध्यायेत् कालाग्निसदृशप्रभम् ॥
मूलादिब्रह्मरन्ध्रे तु सर्वां विद्यां विभावयेत् ।
सूर्यकोटिप्रतीकाशां योगिभिर्दृष्टपूर्विकाम् ॥

एवं यथाशक्ति जप्त्वा जपसमर्पणादिविसर्जनान्तं कर्म समापयेत्।

जपसमर्पणक्रमस्तु फेत्कारीये—

ततश्चार्घ्योदकेनैव देव्याश्च वामहस्तके ।
जपं समर्पयेद्धीमान् गुह्यातिगुह्यमन्त्रकै: ॥

अस्य पुरश्चरणं लक्षजप:। तथा च—

एवं कृत्वा हविष्याशी जपेल्लक्षमनन्यधी: ।

तथा—

रहस्यमालामादाय लक्षमेकं सदा जपेत् ॥

रहस्यमाला यथा—

अकस्माद्विहिता सिद्धिर्महाशङ्खाख्यमालया ।
पञ्चाशन्मणिभिर्माला निर्मिता सर्वसिद्धिदा ॥

तथा—

कान्तेन रचिता सिद्धिर्महाशङ्खाख्यमालया ।

महाशङ्खाभावे स्फाटिकी माला कर्त्तव्या। तथा च—

महाशङ्खेऽप्यशक्तश्चेत् स्फाटिकी मालया जपेत् ।

महाशङ्खस्तु तन्त्रान्तरे—

नृललाटास्थिखण्डेन रचिता जपमालिका ।
महाशङ्खमयी माला ताराविद्याजपे प्रिया ।
कर्णनेत्रान्तरस्थास्थि महाशङ्ख: प्रकीर्तित: ॥
तुलसीगोमयस्पृष्टं तथा गङ्गोदकेन च ।
अस्पृश्यं तच्च जानीयात् शालग्रामशिलादिभि: ॥

तारामन्त्रेषु कुल्लुकाज्ञानमावश्यकम्। तथा च मत्स्यसूक्ते—

कुल्लुकां यो न जानाति महामन्त्रं जपेन्नरः !
पञ्चत्वं जायते तस्य अथवा वातुलो भवेत् ॥

तारा देवी के मन्त्रजप की विधि—मूलाधार, स्वाधिष्ठान और मणिपूर तीन चक्रों में ह्रीं स्त्रीं हूं का जप करे। जप करते समय बीजत्रय का ध्यान करे। ये करोड़ों बिजलियों के समान उज्ज्वल परस्पर ग्रथित रूप में व्याप्त हैं। फिर भावना करे कि हृदय में सर्वतेजोमय विश्रान्तिस्वरूप 'फट्' विद्यमान है।

नीलतन्त्र में वर्णन है कि ध्यानपूर्वक मन्त्रजप करने से सर्वज्ञता प्राप्त होती है। साधक ब्रह्महत्या जैसे पापों से मुक्त हो जाता है। मूलाधार में कोटिसूर्यवत् प्रभा वाली ह्रीं बीज, स्वाधिष्ठान में पीत वर्ण स्त्रीं बीज, नाभिदेश में मेघवर्ण हूं बीज और हृदय में कालाग्नि के समान ज्योतिष्मती तथा केवल योगियों द्वारा दर्शनीय मूल देवता के ध्यान करते-करते मूल मन्त्र का जप करे।

'फेत्कारिणी तन्त्र' में वर्णन है कि 'गुह्यातिगुह्यगोप्त्रीत्वं' इत्यादि मन्त्र से अर्घ्योदक द्वारा देवी के वाम हस्त में जप को समर्पित करे।

एक लाख जप से इस मन्त्र का पुरश्चरण होता है। पूर्वोक्त ढंग से मन्त्र का ध्यान करके हविष्याशी साधक अनन्य मन से एक लाख जप करे। रहस्यमाला से मन्त्रजप करना चाहिये।

'महाशंखमाला' से जप करने पर मन्त्र शीघ्र सिद्ध होता है। प्रवालादि के पचास मनकों की माला से जप करने पर सर्वार्थ सिद्ध होते हैं। महाशंख के अभाव में स्फटिक-माला से जप करे।

तन्त्रान्तर में लिखा है कि मनुष्य की ललाटास्थि से निर्मित माला का नाम महाशंख-माला है। मतान्तर से ताराविद्या के जप में यही माला प्रशस्त है। महाशंखमाला से तुलसी, गोमय, गंगाजल और शालग्रामशिला का स्पर्श न करावे।

तारामन्त्र के जप में कुल्लुका का ज्ञान आवश्यक है। मत्स्यसूक्त में लिखा है कि कुल्लुका को जाने विना तारामन्त्र के जप से मृत्यु अथवा उन्माद होता है।

मायातन्त्रे—

कुल्लकां धारयेच्छीर्षे लिखित्वा भूर्जपत्रके ।
राजद्वारे सभायाञ्च विजयो भवति ध्रुवम् ॥ इति।
एवमुक्तेन जप्त्वा तु तद्दशांशेन होमयेत् ।
तर्पणञ्चाभिषेकञ्च दशांशं विप्रभोजनम् ॥
तर्पयेच्च परां देवीं तत्प्रकार इहोच्यते ।

तथा च सिद्धसारस्वते—

एवं जपं पुरा कृत्वा दशांशमसितोपलैः ।
आज्याक्तैर्जुहुयान्मन्त्री तद्दशांशेन तर्पणम् ॥

तत्रैव—

एवं जपं पुरा कृत्वा दशांशमसितोपलैः ।
आज्याक्तैर्जुहुयान्मन्त्री बिल्वैर्वा जुहुयात्ततः ॥
कालागुरुद्रवोपेतैर्विमलैर्गन्धवारिभिः ।
तर्पयेच्च परां देवीं तत्प्रकार इहोच्यते ॥
जले चावाह्य विधिवत् पाद्याद्यैरुदकात्मकैः ।
सन्तर्प्य विधिवद्देवीं परिवारान् पृथक्पृथक् ॥

अभिषेको यथा—

देवीबुद्ध्या स्वमात्मानं सम्पूज्य साधकोत्तमः ।
तारिणीं सिञ्चयामीति जलं मूर्ध्नि विनिक्षिपेत् ॥

मायातन्त्र में लिखा है कि भोजपत्र पर कुल्लुका मन्त्र को लिखकर मस्तक पर धारण करने से राजद्वार में और सभा में विजय मिलती है।

पुरश्चरण-क्रिया में पूर्वोक्त ढंग से जप और मार्जन कर दशांश ब्राह्मणभोजन कराना चाहिये। सिद्धसारस्वत के मत से जप के अन्त में दशांश संख्या में घी-मिश्रित बेल या नीलकमल से हवन करे। तब कालागुरु और चन्दनयुक्त निर्मल जल से होम का दशांश तर्पण करे। इसके लिये विधिवत् देवी का आवाहन कर केवल जपरूप पाद्यादि उपचारों से पूजन करे। फिर यथाविधि मूल देवी का तर्पण कर परिवारदेवों का एक-एक बार तर्पण करे। इसके बाद मार्जन करे। अपनी आत्मा को देवीस्वरूपा मानकर 'तारिणीं अभिसिंचामि' से अपने शिर पर जल-निक्षेप करे।

मन्त्रभेदाः

एकवीराकल्पे—

लिखेत् खं कूर्चसंयुक्तं रौद्रं त्रैगुण्यमेव च ।
विधिविष्णुमहेशानां स्वशक्त्या क्रमयोगतः ।
एषा विद्या महाविद्या सर्वसिद्धिप्रदा मता ॥

अस्यार्थः—खं खस्वरूपं न त्वाकाशबीजम्। तथा च तन्त्रे—

ऋद्धिसंज्ञं समुद्धृत्य विन्दुनादविभूषितम् ।

इति वचनात्। रौद्रं प्रासादं, त्रैगुण्यं प्रणवं, विधिशक्तिर्वाग्भवं विष्णुशक्तिः रमाबीजं महेशशक्तिर्भुवनेशीबीजम्।

ध्यानार्चनप्रकारश्च तारिण्याः पूर्ववद्भवेत् ।

प्रणवं भुवनेश्वरीं हां कूर्चबीजं नमस्तारायै सकलदुस्तरं तारय तारय प्रणवयुग्मं वह्निजाया। तथा च नीलतन्त्रे—

प्रणवं पूर्वमुद्धृत्य हृल्लेखाबीजमुद्धरेत् ।
गगनं शेषसंयुक्तं विन्दुनादविभूषितम् ॥
कूर्चबीजञ्च हृदयं तारायै च समुद्धरेत् ।
सकलदुस्तरं तारय तारयेति ततः पुनः ॥
तारयुग्मं वह्निजाया मन्त्रोऽयं सुरपादपः ।
ध्यानपूजादिकं सर्वं पूर्ववत्समुपाचरेत् ॥

अस्य पुरश्चरणं चतुर्लक्षजपः। तदुक्तं तत्रैव—

चतुर्लक्षजपेनास्याः सिद्धयोऽष्टौ भवन्ति हि ।

मायातन्त्रे—श्रीभगवानुवाच—

तारा चोग्रा महोग्रा च वज्रा काली सरस्वती ।
कामेश्वरी भद्रकाली इत्यष्टौ तारिणी स्मृता ॥

एतासां मन्त्रमाह—

उष्मवर्णगतोऽजीवो निगमस्वरसंयुतः ।
नादविन्दुसमाक्रान्तस्तत्त्वरश्मिसमन्वितः ।
कपिलो वामकर्णस्थो नादाढ्यो विन्दुशेखरः ॥
पार्श्वान्तञ्च तथा आन्तं शरान्तं परिकीर्तितम् ॥
मध्यादिमायाकवचं द्वितीयं मन्त्रमुद्धृतम् ।
विपरीतं त्रिधा ज्ञेयं कूर्चाद्यञ्च तुरीयकम् ॥
मायादिकवचान्तञ्च पञ्चमं परिकीर्तितम् ।
मायामध्यगतं षष्ठं द्वितीयान्तञ्च सप्तमम् ॥
अष्टमं कवचं मध्यमेकं भेदाष्टकं भवेत् ।

अस्यार्थः—उष्मवर्णो रेफः, अजीवो हकारः, निगमस्वर ईकारः, तत्त्वरश्मिर्वधूबीजं, कपिलो हकारः, पार्श्वः पकारः, तस्यान्तः फकारः, आन्तष्टकारः, शरान्तं फडन्तं तेन पञ्चाक्षरः प्रकृतिः। मध्यादीति तेन वधूर्माया कूर्चं फट्। विपरीतमिति आद्यन्तबीजयोर्वैपरीत्यमत्र। तेन कूर्चं वधूर्माया फट्। कूर्चेति कूर्चं माया वधूः फट्। मायादीति। तेन माया वधूः फट् कूर्चम्। मायेति तेन वधूर्माया फट् कूर्चम्। द्वितीयेति तेन माया कूर्चं वधूः फट्। अष्टमेति वधूः कूर्चं माया फट्।

ऋषि स्यादष्टकश्छन्दोऽनुष्टुप् च देवता तथा ।
शम्भुपत्नी महेशानि चतुवर्गेषु योजयेत् ।।
काललक्षं जपेन्मन्त्रमेवमुक्तेन वर्त्मना ।
ध्यानपूजादिकं सर्वं पूर्ववत्समुपाचरेत् ।।
त्र्यक्षरस्यैव भेदोऽयं फटौ यत्र न तत्र वै ।
जप्ये तु त्र्यक्षरं ज्ञेयं न्यासे सर्वं प्रतिष्ठितम् ।।

तारामन्त्रावली—एकवीराकल्प में उल्लिखित है कि 'खं हूं हौं ॐ ऐं श्रीं ह्रीं' इस सप्ताक्षर मन्त्र से देवी की उपासना करने से सभी सिद्धियाँ मिलती हैं। ध्यान-पूजा-पुरश्चरण पूर्ववत् है।

नीलतन्त्र के अनुसार मन्त्र है—ॐ ह्रीं हां हूं नमस्तारायै सकलदुस्तरं तारय तारय ॐ ॐ स्वाहा। यह मन्त्र कल्पवृक्ष के समान है। पूजनादि पूर्ववत् है।

चार लाख जप से इसका पुरश्चरण होता है। इस मन्त्र से उपासना करने पर आठो प्रकार के ऐश्वर्य प्राप्त होते हैं।

मायातन्त्र में लिखा है कि तारिणी देवी के आठ रूप हैं—तारा, उग्रा, महोग्रा, वज्रा, नीला, सरस्वती, कामेश्वरी और भद्रकाली। इनमें से प्रत्येक के मन्त्र हैं, जो कुल आठ हैं। जैसे—१. तारा—ह्रीं स्त्रीं हूं फट्, २. उग्रा—स्त्री ह्रीं हूं फट्। ३. महोग्रा—हूं स्त्री हीं फट्। ४. वज्रा—हूं हीं स्त्रीं फट्। ५. नीला—ह्रीं स्त्रीं फट् हूं। ६. सरस्वती—स्त्रीं ह्रीं फट् हूं। ७. कामेश्वरी—स्त्रीं हूं स्त्रीं फट्। ८. भद्रकाली—स्त्रीं हूं ह्रीं फट्।

इस आठो मन्त्रों के ऋषि अष्टक, छन्द अनुष्टुप्, देवता शम्भुपत्नी और विनियोग चतुर्वर्ग-प्राप्ति है।

पूर्वोक्त प्रकार से छः लाख जप से इनका पुरश्चरण होता है। ध्यान और पूजा पूर्वोक्त प्रकार का है। ह्रीं स्त्रीं हूं त्र्यक्षर मन्त्र जप में और ह्रीं स्त्री हूं फट् न्यासादि में प्रशस्त है।

मन्त्रान्तरम्

प्रणवं तारे तु तारे तत्ता वह्निवल्लभा ।

तदुक्तं गान्धर्वे—

प्रणवं पूर्वमुद्धृत्य तारे तु तारे तथा ।
तत्ता स्वाहेति मन्त्रोऽयं दशाक्षर उदाहृतः ।।

अस्या ध्यानं स्वतन्त्रतन्त्रे—

श्यामवर्णां त्रिनयनां द्विभुजां वरपङ्कजे ।
दधानां बहुवर्णाभिर्बहुरूपाभिरावृताम् ।।

शक्तिभिः स्मेरवदनां स्मेरमौक्तिकभूषणाम् ।
रत्नपादुकयोर्न्यस्तपादाम्बुजयुगां स्मरेत् ॥

अस्य पूजादिकं पूर्ववत्कार्यम्। पुरश्चरणन्तु दशलक्षजपः। तदुक्तं तत्रैव—

वर्णलक्षं जपेद्धीमान्नियमेन यथाविधि ।
दशांशं जुहुयान्मन्त्री घृताक्तै रक्तपुष्पकैः ॥

वाग्भवं भुवनेशानी प्रणवं पुनर्वाग्भवः भुवनेश्वरी फट् स्वाहा। तदुक्तं मातृकार्णवे—

वाग्भवं कुलदेवीञ्च तारकं वाग्भवं तथा ।
हृल्लेखा चास्त्रमन्त्रान्ते वह्निजायावधिर्मनुः ।
अष्टाक्षरो मनुः प्रोक्तो वेदमातुरनुत्तमः ॥
पञ्चाङ्गान्यस्य मन्त्रस्य पञ्चबीजैः प्रकल्पयेत् ।
अस्त्रं शेषाक्षरैर्न्यस्य कृतकृत्यो भवेन्नरः ।
ध्यानपूजादिकं सर्वं पूर्ववच्च समाचरेत् ॥

मत्स्यसूक्ते—

प्रणवं पूर्वमुद्धृत्य पद्मे युग्मं तथैव च ।
महापद्मे पदं ब्रूयात्पद्मावति पदं ततः ।
माये स्वाहेतिमन्त्रोऽयं प्रोक्तः सप्तदशाक्षरः ॥
पूर्ववदुद्दिष्टा अर्द्धरात्रे चतुष्पथे ।
जपमस्याश्चरेद्यस्तु स स्याद्द्रुतकविस्तथा ॥

हंसः प्रणवं माया वधूबीजं कूर्चबीजं हंसः। तदुक्तं स्वच्छन्दसंग्रहे—

शिवबीजं महेशानि शक्तिबीजं ततः परम् ।
विन्दुसर्गसमायुक्तं वेदाद्यं तदधः क्रमात् ॥
माया स्त्री वर्मबीजान्ते हंसबीजमुदाहृतम् ।
एषा अष्टाक्षरी विद्या कथिता भुवि दुर्लभा ॥
पञ्चाक्षरी च या विद्या हिंसाद्यन्ता महोदया ।
केवलं त्वत्प्रसादेन तव स्नेहात् प्रकीर्तिता ।
अनयोर्जपपूजादीन् पञ्चाक्षरीवदाचरेत् ॥

तन्त्रान्तरे—

लज्जायुगं वधूबीजं ततो दीर्घतनुच्छदम् ।
सारस्वतोऽपरो मन्त्रः सम्प्रोक्तश्चतुरक्षरः ।

तदन्ते यदि फट्कारो मनुः पञ्चाक्षरो भवेत् ॥

तथा—

तारशक्तिवधूबीजान्यन्ते दीर्घतनुच्छदम् ।
अस्त्रमग्निवधूरन्ते मनुः सप्ताक्षरो भवेत् ॥
मन्त्रमात्रेष्वयं प्रोक्तस्तथा दीर्घेण वर्मणा ।
पुटितश्च वधूबीजमपरोऽसौ गुणाक्षरः ॥

गन्धर्वतन्त्रोक्त दशाक्षर मन्त्र है—ॐ तारे तु तारे तत्ता स्वाहा। स्वतन्त्र-तन्त्र के अनुसार इसका ध्यान इस प्रकार का है—

श्यामवर्णां त्रिनयनां द्विभुजां वरपङ्कजे ।
दधानां बहुवर्णाभिर्बहुरूपाभिरावृताम् ।।
शक्तिभिः स्मेरवदनां स्मेरमौक्तिकभूषणाम् ।
रत्नपादुकयोर्न्यस्तपादाम्बुजयुगां स्मरेत् ।।

तारा देवी का वर्ण श्याम है। तीन नेत्र और भुजायें दो हैं। एक हाथ में वरमुद्रा और दूसरे हाथ में कमल है। देवी के चारो ओर नाना रूप की नाना वर्ण की शक्तियाँ हैं। सभी हास्यवदना हैं। समुज्ज्वल मोतियों से विभूषित हैं। देवी के दोनों चरणकमल रत्नजटित पादुकाओं पर हैं। ध्यान-पूजनादि पूर्ववत् हैं। पुरश्चरण दस लाख जप से होता है। जप का दशांश घीमिश्रित रक्तपुष्पों से हवन होता है।

'मातृकार्णवतन्त्र' अनुसार अष्टाक्षर मन्त्र है—ॐ ह्रीं ॐ ऐं ह्रीं फट् स्वाहा। इसका अंगन्यास इस प्रकार का है—ऐं हृदयाय नमः। ह्रीं शिरसे स्वाहा। ॐ शिखायै वषट्। ऐं कवचाय हुं। ह्रीं नेत्रत्रयाय वौषट्। ॐ अस्त्राय फट्। इसी प्रकार करन्यास भी करे। ध्यान-पूजादि पूर्वोक्त पद्धति से करे।

मत्स्यसूक्त के अनुसार सप्तदशाक्षर मन्त्र यह है—ॐ पद्मे पद्मे महापद्मे पद्मावति ह्रीं ह्रीं स्वाहा। इसकी पूजा भी पूर्ववत् है। आधी रात में चौराहे पर इस मन्त्र का जप करने से शीघ्र कवित्व-लाभ होता है।

हंसः ॐ ह्रीं स्त्रीं हूं हंसः—यह अष्टाक्षर मन्त्र स्वच्छन्दतन्त्र के अनुसार है। यह भूतल में दुर्लभ है।

हंसः ह्रीं स्त्रीं हूं फट् हंसः मन्त्र महा अभ्युदयकारक है। इन दोनों मन्त्रों की पूजा पूर्वोक्त पञ्चाक्षर मन्त्र के समान करे।

९. ह्रीं ह्रीं स्त्रीं हूं—चतुरक्षर मन्त्र विद्यादायक है।

१०. ह्रीं ह्रीं स्त्रीं हूं फट्—यह पञ्चाक्षर मन्त्र है।

११. ॐ ह्रीं स्त्रीं हूं फट् स्वाहा—यह सप्ताक्षर मन्त्र है।

१२. हूं स्त्री हूं—यह त्र्यक्षर मन्त्र है।

रहस्यपुरश्चरणं यथा—

अशक्तानाञ्च मे देव पुरश्चरणमुच्यताम्।
अथवान्यप्रकारेण पुरश्चरणमुच्यते ॥
कुजे वा शनिवारे वा नरमुण्डं समाहृतम्।
पञ्चगव्येन मिलितं चन्दनाद्यैर्विशेषतः।
निक्षिप्य भूमौ हस्तार्द्धमानतः कानने वने ॥
तत्र तद्दिवसे रात्रौ सहस्त्रं यदि मानतः।
एकाकी प्रजपेन्मन्त्री स भवेत् कल्पपादपः ॥
अथवान्यप्रकारेण पुरश्चरणमिष्यते।
शवमानीय तद्वारे तेनैव परिखन्यते ॥
तद्दिनात्तद्दिनं यावत्तावदष्टोत्तरं शतम्।
स भवेत् सर्वसिद्धीशो नात्र कार्या विचारणा ॥
अथवान्यप्रकारेण पुरश्चरणमिष्यते।
अष्टम्याञ्च चतुर्दश्यां पक्षयोरुभयोरपि ॥
सूर्योदयं समारभ्य यावत् सूर्योदयान्तरम्।
तावज्जप्त्वा निरातङ्कः सर्वसिद्धीश्वरो भवेत् ॥
अथवान्यप्रकारेण पुरश्चरणमिष्यते।
शरत्काले चतुर्थ्यादि नवम्यन्तं विशेषतः।
भक्तितः पूजयित्वा तु रात्रौ तावत् सहस्त्रकम् ॥
जपेदेकाकी विजने केवलं तिमिरालये।
अष्टम्यादिनवम्यन्तमुपवासपरो भवेत् ॥

मुण्डमालातन्त्रे—

कृष्णाष्टमीं समारभ्य यावत्कृष्णाष्टमी भवेत्।
सहस्त्रसंख्यजप्तेन पुरश्चरणमिष्यते ॥
कृष्णां चतुर्दशीं प्राप्य नवम्यन्तं महोत्सवे।
अष्टमी-नवमीरात्रौ पूजां कुर्याद्विशेषतः ॥
दशम्यां पारणं कुर्यान्मत्स्यमांसादिभिर्युतम्।
षट्सहस्त्रं जपेन्नित्यं भक्तिभावपरायणः ॥
चतुर्दशीं समारभ्य यावदन्या चतुर्दशी।

तावज्जप्ते महेशानि पुरश्चरणमिष्यते ।
केवलं जपमात्रेण मन्त्राः सिद्धा भवति हि ।।
सूर्योदयं समारभ्य यावत् सूर्योऽस्तगो भवेत् ।
तावज्जप्त्वा महेशानि पुरश्चरणमिष्यते ।।

रहस्य पुरश्चरण—देवि ने पूछा कि हे देव! असमर्थ व्यक्ति किस प्रकार पुरश्चरण करे। भगवान् शिव ने पुरश्चरण की विधि इस प्रकार की बताई। मंगल या शनिवार को एक नरमुंड लाकर उसे पञ्चगव्य से सिक्त करके चन्दनचर्चित करे। तब दूर या समीप के वन में आधा हाथ नीचे भूमि के अन्दर उसे गाड़ दे। रात में अकेले उसी स्थान पर बैठकर एक हजार मन्त्र जप करने से पुरश्चरण पूरा हो जाता है। इस पुरश्चरण से साधक कल्पवृक्ष के समान हो जाता है।

मतान्तर से पुरश्चरण विधि—मंगल या शनिवार को एक शव लाकर उक्त पद्धति से द्वारदेश में आधे हाथ भूमि के नीचे उसे स्थापित करे। तब उसके ऊपर बैठकर मन्त्र का जप करे। जिस दिन पहले पहल जप करे, उस दिन से पुन: उसी दिन तक प्रतिदिन १०८ बार जप करे। इस प्रकार अष्टाह जप होने से पुरश्चरण होता है। इस पुरश्चरण से साधक सभी सिद्धियों का स्वामी हो जाता है।

प्रकारान्तर पुरश्चरण—शुक्ल पक्ष अथवा कृष्णपक्ष की अष्टमी या चतुर्दशी तिथि के सूर्योदयकाल से प्रारम्भ करके पुन: सूर्योदय तक जप करे। इस प्रकार के पुरश्चरण से साधक निर्भीक और अणिमादि अष्ट सिद्धियों का स्वामी होता है।

अन्य प्रकार का पुरश्चरण—शरत्काल की चतुर्थी तिथि से नवमी तिथि तक प्रतिदिन निशाकाल में भक्तिपूर्वक देवी का पूजन करके एक हजार बार मन्त्रजप करे। जनशून्य अन्धकारपूर्ण गृह में एकाकी बैठकर जप करना चाहिये। अष्टमी और नवमी में उपवास रहकर जप करे।

मुण्डमालातन्त्र में लिखा है कि कृष्णाष्टमी से प्रारम्भ कर पुन: कृष्णाष्टमी तक प्रतिदिन एक हजार जप करे। इस प्रकार एक माह तक जप करने से पुरश्चरण सिद्ध होता है।

वीरसाधनम्

तदुक्तं वीरतन्त्रे—

अष्टम्याञ्च चतुर्दश्यां पक्षयोरुभयोरपि ।
कृष्णपक्षे विशेषेण साधयेद्वीरसाधनम् ।।
तत्सार्द्धप्रहरे यामे गते च सुरसुन्दरि ।
शवं वापि चितां वापि नीत्वा गत्वा यथासुखम् ।

साधयेत् स्वहितं मन्त्री मन्त्रध्यानपरायणः ॥
भयं नैव तु कर्तव्यं हास्यं तत्र विवर्जयेत् ।
चतुर्दशीं न वीक्षेत मन्त्रमेवं समभ्यसेत् ॥

अथ पूजाद्रव्यम्—

सामिषान्नं गुडं छागं सुरापायसपिष्टकम् ।
नानाफलञ्च नैवेद्यं स्वस्वकल्पोक्तसाधितम् ॥
चितास्थानं समानीय सुहृद्भिः शस्त्रपाणिभिः ।
समामगुणसम्पन्नैः साधयेद्वीतभीः स्वयम् ॥

तथा च योगिनीहृदये—

बल्यर्थं सामिषान्नञ्च गुडं छागं तथा मधु ।
पिष्टकं परमान्नञ्च पयो मूलं फलं तथा ॥
सप्तपात्रं बलिं कृत्वा चतुःपात्रं चतुर्दिशि ।
पात्रत्रयं सदा मध्ये स्थापयेन्मनुनामुना ॥
गुरुं वा भ्रातरं वापि ब्राह्मणान् वापि सुव्रतान् ।
अन्यानपि च रक्षार्थं किञ्चिद्दूरे निवेशयेत् ॥

चितालक्षणं यथा—

असंस्कृता चिता ग्राह्या न तु संस्कारसंस्कृता ।
चाण्डालादिषु सम्प्राप्ता केवलं शीघ्रसिद्धिदा ॥

अथाधिकारिलक्षणं यथा—

महाबलो महाबुद्धिर्महासाहसिकः शुचिः ।
महास्वच्छो दयावांश्च सर्वभूतहिते रतः ॥

ततः सामान्यार्घ्यं विधाय स्वस्तिवाचनपूर्वकं सङ्कल्पं कुर्यात्। यथा—ओमद्येत्यादि अमुकगोत्रः श्रीअमुकदेवशर्मा अमुकमन्त्रसिद्धिकामः श्मशानसाधनमहं करिष्ये। इति सङ्कल्प्य—

वस्त्रालङ्कारभूषद्यैर्भूषितः पूर्वदिङ्मुखः ।
अस्त्रान्तमूलमन्त्रेण प्रोक्षणं यागभूमिषु ॥
मूलमन्त्रेण फट्कारान्तेनेत्यर्थः ।
गुरुपादरजो ध्यात्वा गणेशं वटुकं तथा ।
योगिनीं मातृकाञ्चैव वामपादपुरःसरम् ॥

तथा च—गणेशादिकं सम्पूज्य अस्त्रमन्त्रेणात्मानं संरक्ष्य। तथा च—

अस्त्रमन्त्रेण मन्त्रज्ञो रक्षामात्मनि कारयेत् ।

ततः पुष्पाञ्जलित्रयं चितायां क्षिपेत्। तदुक्तं वीरतन्त्रे—

ये चात्र संस्थिता देवा राक्षसाश्च भयानकाः ।
पिशाचाः सिद्धयो यक्षा गन्धर्वाप्सरसां गणाः ।
योगिन्यो मातरो भूताः सर्वाश्च खेचरा स्त्रियः ॥
सिद्धिदास्ता भवन्त्यत्र तथा च मम रक्षकाः ।
प्रणम्य मनुनानेन पुष्पाञ्जलित्रयं क्षिपेत् ॥

वीरसाधना—वीरतन्त्र में लिखा हैं कि कृष्ण अथवा शुक्लपक्ष की अष्टमी या चतुर्दशी में वीरसाधना करनी चाहिये। डेढ़ प्रहर रात बीत जाने पर चितास्थान में एक शव लाकर मन्त्रध्यानपरायण होकर अपने हितसाधन का कार्य करे। इस साधनकाल में किसी प्रकार से भयभीत न हो। हँसे नहीं। किसी ओर देखे विना एकाग्र मन से केवल मन्त्र का जप करता रहे।

वीरसाधन के लिये आवश्यक सामग्री है—सामिषान्न, गुड़, तीन छाग, सुरा, पायस, बड़ा, विविध फल और अपने कल्प के विहित नैवेद्य। इन सभी पदार्थों को श्मशान में लाकर निर्भीक हृदय हो समान गुण वाले बन्धुगण के साथ वीरसाधन करे।

योगिनीहृदय में लिखा है कि बलि के लिये सामिषान्न, गुड़, छाग, मधु, बड़ा, परमान्न, दूध, फल, मूल—कुल नव पदार्थों को संगृहीत करे। बलिद्रव्य को सात पात्रों में रक्खे। चार पात्रों को चार दिशाओं में रक्खे। मध्य में तीन पात्रों को रखकर मन्त्र-पाठसहित उन्हें निवेदित करे। गुरु, भाई या व्रतशील ब्राह्मण को आत्मरक्षा के लिये कुछ दूरी पर स्थित रक्खे। वीरसाधन के लिये असंस्कृत चिता प्रशस्त है। जलसिंचन आदि द्वारा परिष्कृत चिता में वीरसाधन न करे। चांडाल आदि की चिता से वीरसाधन कार्य में शीघ्र सफलता मिलती है। जो व्यक्ति बड़ा बलवान हो, अति बुद्धिमान हो, अति साहसी हो, पवित्र सरल मन, दानी और सभी प्राणियों का हितैषी हो, वही वीरसाधन करने का अधिकारी है।

उक्त प्रकार का अधिकारी साधक सामान्य अर्घ्य स्थापित करके स्वशाखोक्त स्वस्ति-वाचनपूर्वक निम्न प्रकार का संकल्प करे—ॐ अद्येत्यादि अमुकगोत्रः श्री अमुकदेवशर्मा अमुकमन्त्रसिद्धिकामः (अथवा अमुकसिद्धिकामः) श्मशानसाधनमहं करिष्ये।

इसके बाद विविध वस्त्राभूषण से सुसज्जित होकर पूर्व की ओर मुख करके बैठे। मूल मन्त्र के अन्त में फट् जोड़कर यागस्थान का प्रोक्षण करे। गुरुचरण का ध्यान करके गणेश वटुक योगिनी मातृकाओं का पूजन करके बाँयें पैर को आगे करके चितास्थल में प्रवेश करे। तब फट् से आत्मरक्षा करके निम्न मन्त्र से प्रणाम कर तीन पुष्पाञ्जलियाँ अर्पण करे।

ये चात्र संस्थिता देवा राक्षसाश्च भयानका:।
पिशाचा: सिद्धयो यक्षा गन्धर्वाप्सरसां गणा:।।
योगिन्यो मातरो भूता: सर्वाश्च खेचरा: स्त्रिय:।
सिद्धिदास्ता भवन्त्यत्र तथा च मम रक्षका:।।

श्मशानाधिपतिं पश्चाद्भैरवं कालभैरवम् ।
महाकालं यजेत् पश्चात् पूर्वादिदिक्चतुष्टये ॥
शब्दबीजं ततः पश्चात् श्मशानाधिप तत्परम् ।
इममन्ते सामिषान्नबलिं गृह्ण ततः परम् ॥
गृह्ण गृह्णापयद्वन्द्वं विघ्ननिवारणं ततः ।
कुरु सिद्धिं ममान्तञ्च प्रयच्छ स्वाहयान्वितम् ॥
प्रणवाद्येन मनुना प्रथमो बलिरीरितः ।
मायास्ते भैरवात् पश्चाद्भयानक ततः परम् ॥
पूर्ववद्बलिमुद्धृत्य दक्षिणे बलिमाहरेत् ।
पश्चिमे कालदेवाय प्रणवाद्येन कल्पयेत् ॥
शवान्ते कालशब्दान्ते भैरवेति ततः परम् ।
श्मशानाधिप इत्येवं पूर्ववच्चोत्तरे हरेत् ॥
हूमन्ते च महाकालात्पश्चात् पूर्ववदुच्चरेत् ।
श्मशानाधिप इत्येवः पूर्ववद्बलिमाहरेत् ।
पाद्यादिभिश्च मन्त्रज्ञो बलिं पश्चान्निवेदयेत् ॥

तद्यथा—श्मशानाधिपतिं पञ्चोपचारैः सम्पूज्यानेन मन्त्रेण बलिं दद्यात्। तद्यथा—ॐ हूं श्मशानाधिप इमं सामिषान्नबलिं गृह्ण गृह्ण गृह्णापय गृह्णापय विघ्ननिवारणं कुरु सिद्धिं मम प्रयच्छ स्वाहा। ततो भैरवं पूर्ववत् सम्पूज्य दक्षिणस्यां ह्रीं भैरव भयानक इमं सामिषान्नबलिमित्यादि। ततः पश्चिमे कालभैरवं सम्पूज्य हूं कालभैरव श्मशानाधिप इमं सामिषान्नबलिमित्यादि। उत्तरे महाकाल-मभ्यर्च्य हूं महाकाल श्मशानाधिप इमं सामिषान्नबलिमित्यादि।

चितामध्ये ततो दद्याद्बलित्रयमनुत्तमम् ।
कालरात्रि महाकालि कालिके घोरनिःस्वने ॥
गृहाणेमं बलिं मातर्देहि सिद्धिमनुत्तमाम् ।
कालिकायै बलिं दत्त्वा भूतनाथाय दापयेत् ॥
शब्दान्ते भूतनाथान्ते श्मशानाधिप इत्यपि ।
प्रणवाद्येन मनुना दापयेद्बलिमुत्तमम् ॥

शब्दान्ते तु सर्वगणनाथान्ते चाधिपाय च ।
श्मशानमस्तके दत्त्वा पूर्ववच्च समुद्धरेत् ॥
ताराद्येन बलिं दत्त्वा पञ्चगव्येन सुन्दरि ।
अद्भिश्च प्रोक्षणं कृत्वा पीतवस्त्रं न्यसेत्ततः ॥
भूर्जे वा वटपत्रे वा तत्र पीठमनुं न्यसेत् ।
पीठमास्तीर्य तस्मिन् वै बद्धवीरासनस्ततः ।
वीरार्दनेन मनुना रक्षां दिक्षु प्रकल्पयेत् ॥

अस्यार्थः—श्मशानास्थ्यादिकं पञ्चगव्येन सम्प्रोक्ष्य, भूर्जपत्रादौ तत्तत्कल्पोक्तपीठमन्त्रं लिखित्वा तत्र व्याघ्रचर्मादिपीठमास्तीर्य तत्र वीरासनक्रमेणोपविश्य, वीरार्दनेन मन्त्रेण चतुर्दिक्षु रक्षां कुर्यात् ।

वीरार्दनमन्त्रस्तु—हूं हूं ह्रीं ह्रीं कालिके घोरदंष्ट्रे प्रचण्डे चण्डनायिके दानवान् दारय हन हन शवशरीरे महाविघ्नं छेदय छेदय स्वाहा हूं फडिति।

अनेन मन्त्रितं लोष्ट्रं दशदिक्षु विनिक्षिपेत् ।
तन्मध्ये भैरवो देवो न विघ्नैः परिभूयते ॥

नीलतन्त्रे—

कूर्चद्वयं ततो देवि मायायुग्मं ततः परम् ।
कालिके घोरदंष्ट्रे च प्रचण्डे चण्डनायिके ॥
दानवान् दारयेत्युक्त्वा हनेति द्वितयं पुनः ।
शवशरीरे महाविघ्नं छेदय द्वितयं पुनः ।
द्विठान्तो वर्म चास्त्रान्तो वीरार्दनमनुर्मतः ॥
यदि प्रमादाद्देवेशि साधको भयविह्वलः ।
ततस्तैस्तैः सुहृद्वर्गैं रक्षितो नाभिभूयते ॥

सितार्ककर्पूरसितवाट्यालकतूलैर्वर्त्तिकां निर्माय, तत्र प्रदीपं संस्थाप्य, देव्यस्त्रेभ्यो नमः इत्यस्त्रं सम्पूज्य, अधस्थाज्ज्वलत्प्रदीपं निखनेत्। तथा च—

अर्केन्दुसितवाट्यालतूलैर्निर्मितवर्तिकाम् ।
प्रदीपं तत्र संस्थाप्य अस्त्रं तत्र प्रपूजयेत् ॥
हते तस्मिन् महादीपे विघ्नैश्च परिभूयते ।
तदधश्चास्त्रमन्त्रेण निखनेत्कुलदीपकम् ॥

ततस्तत्कल्पोक्तभूतशुद्ध्यादिन्यासजालं विधाय इष्टदेवतां सम्पूज्य, सङ्कल्पमन्त्रं जपेत्। सङ्कल्पस्तु—

अद्येत्यादि अमुकगोत्रः श्रीअमुदेवशर्मा अमुकमन्त्रसिद्धिकामः अमुकमन्त्रस्यामुकसंख्यकजपमहं करिष्ये इति सङ्कल्प्य देवताध्यानपुरःसरं मन्त्रं जपेत्। तथा च—

तत्तत्कल्पविधानेन भूतशुद्ध्यादिकं चरेत् ।
षोढां वा तारकं वापि विन्यस्य पूजयेत्ततः ।
मन्त्रध्यानपरो भूत्वा जपेन्मन्त्रमनन्यधीः ॥

पूर्व दिशा में श्मशानाधिपति की पूजा करे। 'ॐ हूं श्मशानाधिप इमं सामिषान्नं बलिं गृह्ण गृह्ण गृह्णापय गृह्णापय विघ्ननिवारणं कुरु सिद्धिं मम प्रयच्छ स्वाहा' से उन्हें बलि अर्पित करे। दक्षिण दिशा में भैरव की पूजा करके बलि प्रदान करे। बलिमन्त्र है—'ॐ ह्रीं भैरव भयानक इमं सामिषान्नं बलिं गृह्ण गृह्ण गृह्णापय गृह्णापय विघ्ननिवारणं कुरु सिद्धिं मम प्रयच्छ स्वाहा'। इसके बाद पश्चिम दिशा में कालभैरव की पूजा करके बलि प्रदान करे। इनका बलिमन्त्र है—'ॐ हूं कालभैरव श्मशानाधिप इमं समिषान्नं बलिं गृह्ण गृह्ण गृह्णापय गृह्णापय विघ्ननिवारणं कुरु सिद्धिं प्रयच्छ स्वाहा' उत्तर दिशा में महाकाल की पूजा करके उनको बलि प्रदान करे। बलिमन्त्र है—'ॐ हूं महाकाल श्मशानाधिप इमं समिषान्नं बलिं गृह्ण गृह्ण गृह्णापय गृह्णापय विघ्ननिवारणं कुरु सिद्धिं मम प्रयच्छ स्वाहा'। इसके बाद चिता के मध्य में शेष तीन बलियाँ क्रमशः निम्न मन्त्रों से प्रदान करे—

१. ॐ कालरात्रि महाकालि इमं सामिषान्नं बलिं गृह्ण गृह्ण गृह्णापय गृह्णापय विघ्ननिवारणं कुरु सिद्धिं मम प्रयच्छ स्वाहा।

२. ॐ हूं भूतनाथ श्मशानाधिप इमं सामिषान्नं बलिं गृह्ण गृह्ण गृह्णापय गृह्णापय विघ्ननिवारणं कुरु सिद्धिं मम प्रयच्छ स्वाहा।

३. ॐ हूं सर्वगणनाथ श्मशानाधिप इमं सामिषान्नं बलिं गृह्ण गृह्ण गृह्णापय गृह्णापय विघ्ननिवारणं कुरु सिद्धिं मम प्रयच्छ स्वाहा।

इसके बाद श्मशानस्थित अस्थि आदि का प्रोक्षण पञ्चगव्य और जल से करे। उस पर पीला वस्त्र बिछाकर वटपत्र या भोजपत्र पर पीठमन्त्र लिखकर पीले वस्त्र पर स्थापित करे। उसके ऊपर बाघम्बर आदि चर्मासन बिछाकर उस पर वीरासन से बैठकर निम्नलिखित वीरार्दन मन्त्र से अभिमन्त्रित लोष्ट्र को दशो दिशाओं में फेंकते हुए दिक्-रक्षण करे—हूं हूं ह्रीं ह्रीं कालिके घोरदंष्ट्रे प्रचण्डे चण्डनायिके दानवान् दारय हन हन शव शरीरे महाविघ्नं छेदय छेदय स्वाहा हुं फट्।

इस प्रकार दशो दिशाओं में रक्षाविधान करके उनके मध्य में बैठकर पूजा करने से भैरवदेव का आगमन होता है। किसी प्रकार की विघ्न-बाधा नहीं होती। साधनकाल में साधक यदि भयभीत हो तो पूर्वोक्त बन्धुवर्ग को सतर्क होकर उसके भय को दूर करना चाहिये।

इसके बाद कर्पूरयुक्त श्वेतार्क की रूई की बत्ती बनाकर दीपक जलाकर रक्खे। उस दीपक के ऊपर ॐ देव्यस्त्रेभ्यो नम: से अस्त्रपूजा करके साधक अपने अधोभाग में फट् मन्त्र से गड्ढा बना कर उक्त प्रज्ज्वलित दीपक को उसमें रक्खे। इस दीपक के बुझने से साधना में विघ्न पड़ता है। अत: वह वायु से बुझे नहीं, इसी से उसे गड्ढे में रखने का विधान है। तदनन्तर संकल्प करे—अद्येत्यादि अमुकगोत्र: श्रीअमुकदेवशर्मा अमुक-मन्त्रसिद्धिकाम: अमुकमन्त्रस्यामुक-संख्यकजपमहं करिष्ये।

स्वकल्पोक्त विधान से भूतशुद्धि आदि करके षोढ़ा या प्रणव न्यास करके पूजा करे। मन्त्रचिन्तनपूर्वक अनन्य चित्त से जप करे।

जपनियमस्तु—

एकाक्षरी यदि भवेद्दिक्सहस्रं ततो जपेत् ।
द्व्यक्षरेऽष्टसहस्रं स्यात्त्र्यक्षरे चायुतार्द्धकम् ।।
अतः परन्तु मन्त्रज्ञो गजान्तकसहस्रकम् ।
निशायां वा समारभ्य उदयान्तं समाचरेत् ।।

गजान्तकमिति अष्टोत्तरसहस्रमित्यर्थः। यद्यसह्यभयं जायते कर्णे नेत्रे वस्त्रेण बन्धयेत्।

ततोऽर्द्धरात्रिपर्यन्तं यदि किञ्चिन्न लक्ष्यते ।
जयदुर्गाख्यमनुना तेनैव सर्षपान् क्षिपेत् ।।

जयदुर्गामन्त्रस्तु—ॐ दुर्गे दुर्गे रक्षणि स्वाहा ।

ॐ तिलोऽसि सोमदेवत्यो गोसवस्तृप्तिकारकः ।
पितॄणां स्वर्गदाता त्वं मर्त्यानां मम रक्षकः ।
भूतप्रेतपिशाचानां विघ्नेषु शान्तिकारकः ।।

इति पठित्वा ईशानादिचतुर्दिक्षु तिलांश्च निक्षिपेत्। ततः सप्तपदं गत्वा तत्रैव संविशेत्। पुनर्देवतां सम्पूज्य जपेत्। ततो यदि वरं वरयेति वदेत्तदा सत्यं कारयेत्। तथा च—

वरं वरय चेत्युक्ते साधकः स्थिरमानसः ।
सत्यन्तु कारयित्वा च वरयेद्वरमुत्तमम् ।।
जपादौ तु बलिं दत्त्वा पश्चादपि बलिं हरेत् ।
जपान्ते जपमध्ये वा देहि देहीति भाषिते ।
तदापि च बलिं दद्यान्महिषं वापि छागलम् ।।

बलिञ्च यवपिष्टमयेन।

यदा बलिं प्रार्थयते नरं कुञ्जरमेव वा ।

दिनान्तरेऽपि दास्यामि स्वीकृत्य स्वगृहं व्रजेत् ।
अपरेऽह्नि ततो दद्यात्पिष्टेन नरकुञ्जरान् ॥

पिष्टेनेति यवधान्योद्भवेनेत्यर्थः। तथा च तन्त्रान्तरे—

यवक्षोदमयं वापि शालिक्षोदमयन्तथा ।
चन्द्रहासेन विधिवत्तत्तन्मन्त्रेण घातयेत् ॥

योगिनीहृदये—

जपान्ते तु बलिं दद्याद्देवतायै यथाविधि ।
महिषं छागलं वापि गृहीत्वा वरमेव च ।
गृहं गच्छेत्स्वसुहृदा सार्द्धं संहृष्टमानसः ॥

ततो दक्षिणां दद्यात्।

समाप्य साधनं देवि दक्षिणां विभवावधि ।
गुरवे गुरुपुत्राय तत्पत्न्यै वा निवेदयेत् ॥

जपनियम—जप का नियम यह है कि एकाक्षर मन्त्र का दस हजार, द्व्यक्षर का आठ हजार, त्र्यक्षर का पाँच हजार और चतुरक्षर आदि मन्त्र का एक हजार आठ जप करे। अथवा रात से प्रारम्भ करके सूर्योदय तक जप करे।

महा भय से यदि साधक व्याकुल हो जाय तो वस्त्र से साधक के कानों और नेत्रों को बन्द कर दे। जिससे वह न कुछ सुन सके और न देख सके। आधी रात तक जप करने पर भी जब कुछ न देखे तब निम्नलिखित जयदुर्गा मन्त्र पढ़कर ईशानादि चारो कोनों में सरसो और तिल फेंके—

ॐ दुर्गे दुर्गे रक्षिणि स्वाहा। ॐ तिलोऽसि सोमदेवत्यो गोसवस्तृप्तिकारकः। पितृणां स्वर्गदाता त्वं मर्त्यानां मम रक्षकः। भूतप्रेतपिशाचानां विघ्नेषु शान्तिकारकः।

तब पूर्वोपवेशन स्थान से सात कदम चलकर उसी स्थान पर बैठकर देवता का पुन: पूजन करके जप करे। जपकाल में कोई आकर यदि कहे कि वर ग्रहण करो तो देवता को प्रतिज्ञाबद्ध करके अभिलषित वर ग्रहण करे।

जप के प्रारम्भ, मध्य और अन्त में बलि प्रदान करे। जप के आदि, मध्य अथवा अन्त में यदि कोई देवी 'दो-दो' कहकर बलि माँगे तो यवपिष्टनिर्मित महिष अथवा छाग की बलि प्रदान करे। देवी नर या गजबलि माँगे तो अगले दिन बलि दूँगा—यह प्रतिज्ञा करके अपने घर जाय। अगले दिन यवपिष्ट द्वारा नर या गज की मूर्ति बनाकर उसकी बलि प्रदान करे।

तन्त्रान्तर में लिखित है कि यवचूर्ण या तण्डुलचूर्ण द्वारा बलि तैयार करके देवता के बलिदान मन्त्र से खड्ग द्वारा उसका छेदन करके बलि प्रदान करे।

योगिनीहृदय में वर्णन है कि जप समाप्त होने पर महिष या गज की बलि देकर वरग्रहणपूर्वक बन्धुवर्ग के सहित प्रसन्न मन से अपने घर जाय। अपनी सामर्थ्य के अनुसार गुरु, गुरुपुत्र और गुरुपत्नी को दक्षिणा दे।

शवसाधनम्

तत्र स्थाननियममाह भावचूडामणौ—

शून्यागारे नदीतीरे पर्वते निर्जनेऽपि वा।
बिल्वमूले श्मशाने वा तत्समीपे वनस्थले॥
अष्टम्याञ्च चतुर्दश्यां पक्षयोरुभयोरपि।
भौमवारे तमिस्रायां साधयेत् सिद्धिमुत्तमाम्॥
माषभक्तञ्च बल्यर्थं धूपदीपादिकन्तथा।
तिलाः कुशाः सर्षपाश्च स्थापनीयाः प्रयत्नतः॥

ततः पूर्वोक्तान्यतमस्थानं गत्वा सामान्यार्घ्यं विधाय, पूर्वमुखो मूलान्ते फट्कारं दत्त्वा, यागभूमिं सम्प्रोक्ष्य, गुरुं गणेशं वटुकं योगिनीञ्च चतुर्दिक्षु पूर्वादितः सम्पूज्य, पूर्वोक्तवीरार्दनमन्त्रं भूमौ विलिख्य, ये चात्रेत्यादिपूर्वोक्तक्रमेण पुष्पाञ्जलित्रयं दत्त्वा प्रणम्य श्मशानाधिपतिभ्यः पूर्वोक्तक्रमेण पूर्ववद्बलिं दत्वा अघोरमन्त्रेण शिखाबन्धनं विधाय, सुदर्शनमन्त्रान्ते आत्मानं रक्ष रक्षेति हृदि हस्तं दत्त्वा आत्मरक्षां कुर्यात्। अघोरसुदर्शनमन्त्रौ तु—

ॐ ह्रीं स्फुर स्फुर प्रस्फुर प्रस्फुर घोर घोरतर तनुरूप चट चट प्रचट प्रचट कह कह वम वम बन्ध बन्ध घातय घातय हूं फट् ॐ सहस्रारे हूं फट्।

ततः पूर्वोक्तक्रमेण भूतशुद्धिं न्यासजालञ्च विधाय, जयदुर्गामन्त्रेण दिक्षु सर्षपान्विकीर्य तिलोऽसीति मन्त्रेण तिलांश्च विकीर्य विहितशवसमीपं गच्छेत्। विहितशवो यथा भावचूडामणौ—

यष्टिविद्धं शूलविद्धं खड्गविद्धं जले मृतम्।
वज्रविद्धं सर्पदष्टं चाण्डालञ्चाभिभूतकम्॥
तरुणं सुन्दरं शूरं रणे नष्टं समुज्ज्वलम्।
पलायनविशून्यन्तु सम्मुखे रणवर्त्तिनाम्॥

भैरवतन्त्रेऽपि—

यष्टिप्रभृतिविद्धं वा चाभिभूतं जले मृतम्।
शवमानीय कर्तव्यं नाहरेत्स्वेच्छया मृतम्॥
स्त्रीवश्यं पतितास्पृश्यं नयवर्जं हि तूवरम्।
अव्यक्तलिङ्गं कुष्ठिं वा वृद्धभिन्नं शवं हरेत्॥

न दुर्भिक्षमृतञ्चापि न पर्युषितमेव वा ।
स्त्रीजनञ्चेदृशं रूपं सर्वथा परिवर्जयेत् ॥

कालीतन्त्रेऽपि—

ब्राह्मणं गोमयं त्यक्त्वा साधयेद्वीरसाधनम् ।
महाशवाः प्रशस्ता स्युः प्रधाने वीरसाधने ।
क्षुद्रप्रयोगकर्तॄणां प्रशस्ताः सर्वसिद्धये ॥

एवमुक्तं शवं गृहीत्वा मूलमन्त्रेण पूजास्थानमानयेत्। तत्समीपं गत्वा ॐ फट् इति शवमभ्युक्ष्य ॐ हूं मातृकाय नमः फडिति पुष्पाञ्जलित्रयं दत्त्वा शवं स्पृष्ट्वा प्रणमेत्। तदुक्तं भावचूडामणौ—

प्रणवाद्यस्त्रमन्त्रेण शवस्य प्रोक्षणञ्चरेत् ।
प्रणवं कूर्चबीजञ्च मृतकाय नमश्च फट् ।
पुष्पापञ्जलित्रयं दत्त्वा प्रणमेत् स्पर्शपूर्वकम् ॥

प्रणाममन्त्रस्तु—

वीरेश परमानन्द शिवानन्द कुलेश्वर ।
आनन्दभैरवाकार देवीपर्यङ्कशङ्कर ॥
वीरोऽहं त्वां प्रपद्यामि उत्तिष्ठ चण्डिकार्चने ।
अनेन शवमन्त्रेण प्रणम्य क्षालयेच्छवम् ॥

ॐ हूं मृतकाय नमः अनेन क्षालयित्वा, सुगन्धिजलेन स्नापयित्वा, वाससा जलमुत्तोल्य, धूपैर्धूपयित्वा चन्दनादिना शवं प्रलिप्य, शवस्य कटिदेशं धृत्वा, पूजास्थानं समानयेत्। तदुक्तं कालीतन्त्रे—

तारं शब्दं मृतकाय नमोऽन्तं मन्त्रमुच्चरेत् ।
शवस्य स्नानमन्त्रोऽयम्·················॥ इत्यादि।

भावचूडामणौ—

धूपेन धूपितं कृत्वा गन्धादिना विलिप्य च ।
रक्ताक्तो यदि देवेशि भक्षयेत्कुलसाधकम् ॥

ततः कुशशय्यां कृत्वा पूर्वशिरसं कृत्वा शवं स्थापयेत्। तदुक्तं तत्रैव—

कुशशय्यां परिष्कृत्य तत्र संस्थापयेच्छवम् ।

ततः—

एला-लवङ्ग-कर्पूर-जाती-खदिरमार्द्रकम् ।
ताम्बूलं तन्मुखे दत्त्वा शवं कुर्यादधोमुखम् ॥

तत्पृष्ठं चन्दनेनापि विलिप्य प्रयतः सुधीः ।
बाहुमूलादिकट्यन्तं चतुरस्रं विधाय च ।।
मध्ये पद्मं चतुर्द्वारं दलाष्टकसमन्वितम् ।
पीठमन्त्रं लिखेन्मध्ये तत्तत्कल्पविधानतः ।।

ततः ॐ ह्रीं फडिति मन्त्रेण तत्तत्कल्पोक्तपीठमन्त्रं लिखेत्तदुपरि कम्बलाद्यासनं न्यसेत्। तन्त्रान्तरे—

गत्वा शवस्य सान्निध्यं धारयेत्कटिदेशतः ।
यद्युपद्रावयेत्तस्य दद्यान्निष्ठीवनं शवे ।
पुनः प्रक्षालनं कृत्वा जपस्थाने समानयेत् ।।

ततो द्वादशांगुलयज्ञकाष्ठानि दशदिक्षु पूर्ववत् संस्थाप्य, इन्द्रादिदशदेवताः सम्पूज्य सामिषान्नेन बलिं दद्यात्। तदुक्तं तन्त्रान्तरे—

द्वादशांगुलमानानि यज्ञकाष्ठानि दिक्षु च ।
संस्थाप्य पूजयेत्तत्र क्रमादिन्द्रादिदेवताः ।।

शवसाधन—भावचूड़ामणि में उल्लेख है कि शून्य गृह, नदीतट, पर्वत, निर्जन देश, बिल्वमूल, श्मशान और श्मशान के समीपस्थ वनप्रदेश में शवसाधन करना प्रशस्त है। कृष्ण या शुक्ल पक्ष की अष्टमी या चतुर्दशी तिथि में मंगलवार की रात में उक्त साधना करने से साधक परम सिद्धि को प्राप्त करता है। माषभक्त बलि के लिये तिल, कुश, सरसो और धूप-दीपादि पूजा की सभी सामग्री का संग्रह साधक को करना चाहिये।

इसके बाद पूर्वोक्त किसी स्थान को चुनकर वहाँ जाय और सामान्यार्घ्य स्थापन करके पूर्वमुख होकर 'मूलं फट्' से यागस्थान का अभ्युक्षण करे। तब पूर्व में गुरु का, दक्षिण में गणेश का, पश्चिम में वटु का और उत्तर में योगिनी का पूजन करके भूमि पर पूर्वोक्त वीरार्दन मन्त्र लिखे।

तत्पश्चात् पूर्वोक्त 'ये चात्र' इत्यादि मन्त्र से पूर्ववत् तीन पुष्पाञ्जलियाँ देकर प्रणाम करे। तब पूर्वोक्त विधि से श्मशानाधिपतिगण को बलि देकर निम्नलिखित अघोर सुदर्शन मन्त्र से शिखाबन्धन करे—

ॐ ह्रीं स्फुर स्फुर प्रस्फुर प्रस्फुर घोर घोरतर तनुरूप चट चट प्रचट प्रचट कह कह वम वम वन्ध वन्ध घातय घातय हूं फट् ॐ सहस्रारे हूं फट्।

अब अपने हृदय पर हाथ रखकर अघोर सुदर्शन मन्त्र के अन्त में 'आत्मानं रक्ष रक्ष' जोड़कर मन्त्रजपपूर्वक आत्मरक्षा करे। तब पूर्वोक्त रूप से भूतशुद्धि और विविध न्यास करके जयदुर्गामन्त्र से चारो दिशाओं में सरसो फेंककर 'तिलोऽसि' इत्यादि मन्त्र से तिल विकीर्ण करके विहित शव के समीप जाए।

भावचूड़ामणि में लिखित है कि जो व्यक्ति यष्टि-शूल-खड्ग की चोट से प्राण छोड़ता है; जल में डूबने से, वज्रपात अथवा साँप के काटने से जिसके प्राण छूटते हैं, उस प्रकार के चांडाल जाति के व्यक्ति की मृत देह को इस कार्य के लिये शव बनाए। इस शव को तरुण, वयस्क और सुन्दर अंगों वाला होना चाहिये। जो सम्मुख युद्ध में न मरा हो और युद्ध में प्राणत्याग किया हो, उसका देह भी शवसाधन के लिये प्रशस्त है।

भैरवतन्त्र के अनुसार यष्टि आदि की चोट से मृत अथवा जल में डूबने से मृत व्यक्ति का देह प्रशस्त है। स्वेच्छा से मृत व्यक्ति का शरीर ग्राह्य नहीं है। स्त्री के वशीभूत, पतित, अस्पृश्य, दुर्नीतियुक्त, श्मश्रुहीन, नपुंसक, कोढ़ी, अकाल में मृत अथवा बूढ़े का शव छोड़ देना चाहिये। सद्योमृत शव ही विहित है। पर्युषित शव से साधन करने से कार्य सिद्ध नहीं होता। अत: इस प्रकार के शव और स्त्रीशव को शवसाधन में ग्रहण न करे।

कालीतन्त्र का मत है कि ब्राह्मण और गार्भार शव को छोड़कर अन्य शव से साधन करे। वीरसाधन कार्य में सद्योमृत व्यक्ति का ही देह प्रशस्त है। अन्य साधारण कार्य में पशु का शव भी ग्राह्य है।

इस प्रकार सुलक्षण शव को लेकर जप करता हुआ पूजास्थल में जाय। शव के पास बैठकर ॐ फट् से शव के ऊपर अभ्युक्षण करे। फिर ॐ हूं मृतकाय नम: फट् से तीन पुष्पांजलि देकर शव का स्पर्श करते हुए निम्न मन्त्र से प्रणाम करे—

वीरेश परमानन्द ! शिवानन्द कुलेश्वर।
आनन्दभैरवाकार देवीपर्यंकशंकर।
वीरोऽहं त्वां प्रपद्यामि उत्तिष्ठ चंडिकार्चने।।

हे वीरेश! हे परमानन्द! हे शिवानन्द! हे कुलेश्वर! तुम आनन्दभैरवस्वरूप और देवी के पर्यंक शंकरस्वरूप हो। वीरभाव से देवी के अर्चनार्थ तुमको मैं प्रणाम करता हूँ। तुम उठो।

इस प्रकार प्रणाम करके ॐ हूं मृतकाय नम: से शव का प्रक्षालन करे। सुगन्धित जल से उसे स्नान करावे। तब वस्त्र से शरीर का मार्जन, धूप से शोषण करके चन्दनादि का लेप लगावे। तब उसकी कमर पकड़कर उसे पूजास्थल में ले आवे।

इसके बाद कुश की शय्या बनाकर पूर्व की ओर शव का शिर रखते हुए उसे स्थापित करे। शव के मुख में जायफल और कत्थायुक्त पान देकर शव को अधोमुख करे। शव के पीठ पर चन्दनादि का लेप लगाकर बाहुमूल से कटि प्रदेश तक के स्थान में एक चतुरस्र मण्डल बनावे। चतुरस्र के मध्य में अष्टदल पद्म और चतुर्द्वार बनाकर पद्म के मध्य में ॐ ह्रीं फट् के साथ कल्पोक्त पीठमन्त्र लिखे। उसके ऊपर कम्बल आदि का आसन बिछाए।

तन्त्रान्तर में लिखा है कि शव के पास जाकर उसके कटिदेश को धारण करे। इस पर यदि शव किसी प्रकार का उपद्रव करे तो उसके देह पर थूक निक्षेप कर पुनः प्रक्षालनपूर्वक उसे जपस्थल में ले आये।

इसके बाद जपस्थल की दशो दिशाओं में बारह अंगुल के बराबर अश्वत्थादि यज्ञीय काष्ठों का कील पूर्ववत् स्थापित करे। पूर्वादि क्रम से इन सभी कीलों पर इन्द्रादि दश दिक्पालों की पूजा करके मांससहित अन्न से उन्हें बलि प्रदान करे।

तत्रायं क्रमः—ॐ लां इन्द्राय सुराधिपतये ऐरावतवाहनाय वज्रहस्ताय सशक्तिपारिषदाय सपरिवाराय नमः, इति पाद्यादिभिः सम्पूज्य बलिं दद्यात्।

बीजमिन्द्राय संलिख्य सुराधिपतये ततः ।
इमं बलिं गृह्ण-युग्मं गृह्णापययुगं ततः ॥
विघ्ननिवारणं कृत्वा सिद्धं प्रयच्छ ठद्वयम् ।
अनेन मनुना पूर्वे बलिं दद्याच्च सामिषम् ॥
स्वस्वनामादिकं कृत्वा पूर्ववद्बलिमाहरेत् ।
सर्वेषां लोकपालानां ततः साधकसत्तमः ॥

ॐ लां इन्द्राय सुराधिपतये इमं बलिं गृह्ण गृह्ण गृह्णापय गृह्णापय विघ्ननिवारणं कृत्वा मम सिद्धिं प्रयच्छ स्वाहा। एष माषभक्तबलिः ॐ लां इन्द्राय स्वाहा। ॐ रां अग्नये तेजोऽधिपतये मेषवाहनाय सपरिवाराय शक्तिहस्ताय सायुधाय नमः इति सम्पूज्य ॐ रां अग्नये तेजोऽधिपतये इत्यादिना बलिं दद्यात्। ॐ यां यमाय प्रेताधिपतये दण्डहस्ताय महिषवाहनाय सायुधायेत्यादिना सम्पूज्य ॐ यां यमाय प्रेताधिपतये बलिं दद्यात्। ॐ क्षां निर्ऋतये रक्षोऽधिपतये असिहस्ताय सवाहनाय सपरिवाराय इत्यादिना सम्पूज्य ॐ क्षां निर्ऋतये रक्षोऽधिपतये इत्यादिना बलिं दद्यात्। ॐ वां वरुणाय जलाधिपतये पाशहस्ताय मकरवाहनाय सायुधाय इत्यादिना सम्पूज्य ॐ वां वरुणाय जलाधिपतये इत्यादिना बलिं दद्यात्। ॐ यां वायवे प्राणाधिपतये हरिणवाहनायांकुशहस्ताय इत्यादिना सम्पूज्य ॐ यां वायवे प्राणाधिपतये इत्यादिना बलिं दद्यात्। ॐ कुबेराय यक्षाधिपतये गदाहस्ताय नरवाहनाय सपरिवाराय इत्यादिना सम्पूज्य ॐ कुबेराय यक्षाधिपतये इत्यादिना बलिं दद्यात्। ॐ हां ईशानाय भूताधिपतये शूलहस्ताय वृषवाहनाय सपरिवाराय इत्यादिना पूर्ववत् सम्पूज्य ॐ हां ईशानाय भूताधिपतये इत्यादिना बलिं दद्यात्। इन्द्रेशानयोर्मध्ये ॐ आं ब्रह्मणे प्रजाधिपतये हंसवाहनाय पद्महस्ताय सपरिवाराय इत्यादिना सम्पूज्य ॐ आं ब्रह्मणे प्रजाधिपतये हंसवाहनाय इत्यादिना बलिं दद्यात्। नैर्ऋतवरुणयोर्मध्ये ॐ अं अनन्ताय नागाधिपतये चक्रहस्ताय

रथवाहनाय सपरिवाराय इत्यादिना सम्पूज्य ॐ अं अनन्ताय नागाधिपतये इत्यादिना बलिं दद्यात्। ततः सर्वभूतबलिं दद्यात्। सर्वत्र सामिषान्नेन। ततः—

अधिष्ठातृदेवताभ्यो बलिञ्च स्मारयेत्ततः ।
चतुःषष्टियोगिनीभ्यो डाकिनीभ्योऽपि सन्दिशेत् ॥

१. पूर्व कील में 'ॐ लां इन्द्राय सुराधिपतये ऐरावतवाहनाय वज्रहस्ताय सशक्तिपारिषदाय सपरिवाराय नमः' मन्त्र से पाद्यादि से पूजा करके सामिष बलि इस मन्त्र से दे—ॐ लां इन्द्राय सुराधिपतये इमं बलिं गृह्ण गृह्ण गृह्णापय गृह्णापय विघ्ननिवारणं कृत्वा मम सिद्धिं प्रयच्छ स्वाहा एष माषभक्तबलिः ॐ लां इन्द्राय स्वाहा।

इसी प्रकार पूजनमन्त्रों से पाद्यादि पूजन और बलिमन्त्रों से सबको सामिष बलि प्रदान करे।

२. आग्नेय कोण में 'ॐ रां अग्नये तेजोऽधिपतये मेषवाहनाय सपरिवाराय शक्तिहस्ताय सायुधाय नमः' से पूजा करे। 'ॐ रां अग्नये तेजोऽधिपतये इमं बलि गृह्ण गृह्ण गृह्णापय गृह्णापय विघ्ननिवारणं कृत्वा मम सिद्धिं प्रयच्छ स्वाहा एष माषभक्तबलिः ॐ रां अग्नये स्वाहा' से बलि प्रदान करे।

३. दक्षिण में यम की पूजा करे—ॐ यां यमाय प्रेताधिपतये दण्डहस्ताय महिषवाहनाय सायुधाय नमः। इस मन्त्र से बलि दे—ॐ यां यमाय प्रेताधिपतये इमं बलिं गृह्ण गृह्ण गृह्णापय गृह्णापय विघ्ननिवारणं कृत्वा मम सिद्धिं प्रयच्छ स्वाहा एष माषभक्तबलिः ॐ यां यमाय स्वाहा।

४. नैर्ऋत्य कोण में निर्ऋति की पूजा करे—ॐ क्षां निर्ऋतये रक्षोऽधिपतये असिहस्ताय सवाहनाय सपरिवाराय नमः। बलिमन्त्र से बलि दे—ॐ क्षां निर्ऋतये रक्षोऽधिपतये इमं बलिं गृह्ण गृह्ण गृह्णापय गृह्णापय विघ्ननिवारणं कृत्वा मम सिद्धिं प्रयच्छ स्वाहा एष माषभक्तबलिः ॐ क्षां निर्ऋतये स्वाहा।

५. पश्चिम में वरुण की पूजा करे—ॐ वां वरुणाय जलाधिपतये पाशहस्ताय मकरवाहनाय सायुधाय नमः। बलिमन्त्र से बलि दे—ॐ वां वरुणाय जलाधिपतये इमं बलिं गृह्ण गृह्ण गृह्णापय गृह्णापय विघ्ननिवारणं कृत्वा मम सिद्धिं प्रयच्छ स्वाहा एष माषभक्तबलिः ॐ वरुणाय स्वाहा।

६. वायव्य कोण में वायु की पूजा करे—ॐ यां वायवे प्राणाधिपतये हरिण-वाहनाय अंकुशहस्ताय नमः। बलिमन्त्र से बलि दे—ॐ यां वायवे प्राणाधिपतये इदं बलिं गृह्ण गृह्ण गृह्णापय गृह्णापय विघ्ननिवारणं कृत्वा मम सिद्धिं प्रयच्छ स्वाहा एष माषभक्तबलिः ॐ यां वायवे स्वाहा।

७. उत्तर में कुवेर की पूजा करे—ॐ कुवेराय नमः यक्षाधिपतये गदाहस्ताय

कथयति, तदा त्वं अमुक इति सत्यं कुरु। कृते सत्ये वरं प्रार्थयेत्। यदि कदाचिदपि सत्यं न करोति वरं वा न प्रयच्छति तदा पुनर्जपेत्। तथा च—

सत्ये कृते वरं लब्ध्वा सन्त्यजेच्च जपादिकम् ।
फलं जातमिति ज्ञात्वा जुटिकां मोचयेत्ततः ॥
शवं प्रक्षाल्य संस्थाप्य मोचयेत्पादबन्धनम् ।
पादचक्रं मोचयित्वा पूजाद्रव्यं जले क्षिपेत् ॥
शवं जले तु गर्त्ते वा निक्षिप्य स्नानमाचरेत् ।
ततस्तु स्वगृहं गत्वा बलिं दद्याद्दिनान्तरे ॥

बलिमन्त्रस्तु अग्रिमरात्रौ—

येषां यजमानोऽहं ते गृह्णन्त्विमं बलिम् ।
अथ यैर्याचितानश्वान् नरकुञ्जरशूकरान् ।
दत्त्वा पिष्ठमयानन्ते कर्तव्यं समुपोषणम् ॥

इसके बाद पट्टसूत्र से शव के दोनों पैरों को बाँधकर मूलमन्त्र से शव को दृढ़तापूर्वक बाँधे। निम्न मन्त्र से शव के पादमूल में त्रिकोण बनाये और निम्न मन्त्र बोले—

ॐ मद्वशो भव देवेश ! वीरसिद्धिकृतास्पद।
भीम भीरुभयाभाव भवमोचन भावुक।
त्राहि मां देवदेवेश शूराणामधिपाधिप।

इसके बाद शव के ऊपर बैठकर उसके दोनों हाथों को दोनों पार्श्वों में फैलाकर उस पर कुश बिछाए। बिछे हुए कुश पर अपने दोनों पैर स्थापित करे। तीन प्राणायाम करे। सहस्रार में गुरुदेव का और हृदय में देवी का ध्यान करते हुए दोनों होठों को सम्पुट करके विहित माला से मौन होकर निर्भय मन से श्मशानसाधन का क्रमानुसार जप करे। जप करते-करते यदि आधी रात तक कुछ दिखाई न दे तो पूर्ववत् सरसो और तिल विखेर कर अधिष्ठित स्थान से सात कदम आगे चलकर जप करे। जपकाल में भय उत्पन्न होने पर आकाश में किसी के द्वारा कुंजरादि बलि माँगने पर निम्न मन्त्र का पाठ करे—

यत् प्रार्थय बलिन्तेन दातव्यं कुंजरादिकम्।
दिनान्तरे च दास्यामि स्वनाम कथयस्व मे।।

अगले दिन तुमको गजादि बलि प्रदान करूँगा। अपना नाम मुझे बताओ। ऐसा कहकर पुनः निर्भय होकर जप में लग जाय। यदि वह मधुर शब्दों में अपना नाम बताए तो साधक कहे कि 'त्वं अमुक इति सत्यं कुरु' अर्थात् तुम अमुक हो, प्रतिज्ञा करो कि मुझे अभीष्ट वर दोगे। इस प्रकार उसे प्रतिज्ञाबद्ध करके साधक उससे वर माँगे। यदि वह प्रतिज्ञाबद्ध न हो और वर न दे, तो पुनः एकाग्र मन से जप आरम्भ करे; किन्तु प्रतिज्ञा

करके वर दे दे तो जप करना छोड़ दे। अभीष्ट वर पाने के बाद समझे कि मेरा काम हो गया। शव की जूटिका खोलकर उसका प्रक्षालन करे। तब दूसरे स्थान में उसे स्थापित करके पैरों के वन्धन खोल दे। पूजासामग्री को जल में फेंककर शव को जल में या भूगर्भ में डालकर स्नान करे। इसके बाद साधक अपने घर जाए और अगले दिन-रात पूर्व प्रतिज्ञा के अनुसार गजादि की वलि प्रदान करे। बलिमन्त्र इस प्रकार का है—

येषां यजमानोऽहं ते गृह्णन्त्विमं बलिम्।

देवता ने हाथी, घोड़ा, नर या शूकर जो बलि मांगी हो, उसी के अनुसार अन्नपिष्ट से बलिपशु बनाकर बलि प्रदान करे। साधक उपवास रहे।

ततः परेऽह्नि नित्यक्रियां कृत्वा पञ्चगव्यं पिवेत्। पञ्चविंशतिसंख्यकानपि ब्राह्मणान् भोजयेत्। यथा—

परेऽह्नि नित्यमाचर्य पञ्चगव्यं पिवेत्ततः ।
ब्राह्मणान् भोजयेत्तत्र पञ्चविंशतिसंख्यकान् ॥
सप्तपञ्चविहीनान् वा क्रमेणैव दशावधि ।
ततः स्नात्वा च भुक्त्वा च निवसेदुत्तमस्थले ॥
यदि न स्याद्विप्रभोज्यं तदा निर्धनतां व्रजेत् ।
तेन चेन्निर्धनत्वं स्यात्तदा देवी प्रकुप्यति ।
त्रिरात्रं वाथ षड्रात्रं नवरात्रन्तु गोपयेत् ॥
स्त्रीशय्यां यदि गच्छेत्तु तदा व्याधिं विनिर्दिशेत् ।
गीतं श्रुत्वा च वधिरो निश्चक्षुर्नृत्यदर्शनात् ।
यदि वक्ति दिने वाक्यं तदास्य मूकता भवेत् ॥
पञ्चदशदिनं यावद्देहे देवस्य संस्थितिः ।
न स्वीकार्ये गन्धपुष्पे बहिर्याति यदा तदा ।
तदा वस्त्रं परित्यज्य गृह्णीयाद्वसनान्तरम् ॥
गोब्राह्मणविनिन्दाञ्च न कुर्याच्च कदाचन ।
दुर्जनं पतितं क्लीवं न स्पृशेच्च कदाचन ॥
देवगोब्राह्मणादींश्च प्रत्यहं संस्पृशेच्छुचिः ।
प्रातर्नित्यक्रियान्ते च बिल्वपत्रोदकं पिवेत् ॥
ततः स्नात्वा तु गङ्गायां प्राप्ते षोडशवासरे ।
स्वाहान्तं मन्त्रमुच्चार्य तर्पणान्ते ममः पदम् ॥
एवं शतत्रयादूर्ध्वं देवान् सन्तर्पयेज्जलैः ।
स्नानतर्पणशून्यस्य न स्याद्देवस्य तर्पणम् ॥

नरवाहनाय सपरिवाराय नम:। इस मन्त्र से बलि दे—ॐ कुवेराय यक्षाधिपतये इदं बलिं गृह्ण गृह्ण गृह्णापय गृह्णापय विघ्ननिवारणं कृत्वा मम सिद्धिं प्रयच्छ स्वाहा ॐ कुवेराय स्वाहा।

८. ईशान कोण में ईशान की पूजा करे—ॐ हां ईशानाय भूताधिपतये शूल-हस्ताय वृषवाहनाय सपरिवाराय नम:। बलि इस मन्त्र से दे—ॐ हां ईशानाय भूताधिपतये इदं बलिं गृह्ण गृह्ण गृह्णापय गृह्णापय विघ्ननिवारणं कृत्वा मम सिद्धिं प्रयच्छ स्वाहा ॐ हां ईशानाय स्वाहा।

९. पूर्व और ईशान के मध्य में ब्रह्मा की पूजा करे—ॐ आं ब्रह्मणे प्रजाधिपतये हंसवाहनाय पद्महस्ताय सपरिवाराय नम:। बलिमन्त्र से बलि दे—ॐ आं ब्रह्मणे प्रजाधिपतये हंसवाहनाय इमं बलिं गृह्ण गृह्ण गृह्णापय गृह्णापय विघ्ननिवारणं कृत्वा मम सिद्धिं प्रयच्छ स्वाहा ॐ आं ब्रह्मणे स्वाहा।

१०. नैर्ऋत्य और पश्चिम के मध्य में अनन्त की पूजा करे—ॐ अं अनन्ताय नम: नागाधिपतये सायुधाय चक्रहस्ताय रथवाहनाय सपरिवाराय नम:। इस मन्त्र से बलि प्रदान करे—ॐ अं अनन्ताय नागाधिपतये सायुधाय इमं बलिं गृह्ण गृह्ण गृह्णापय गृह्णापय विघ्ननिवारणं कृत्वा मम सिद्धिं प्रयच्छ स्वाहा अं अनन्ताय स्वाहा।

इसके बाद सर्वभूतबलि प्रदान करे। अधिष्ठात्री देवता चतु:षष्टि योगिनियों को बलि प्रदान करे।

अथ पूजासामग्रीं समीपे दूरे चोत्तरसाधकं संस्थाप्य, मूलान्ते ह्रीं फट् शवा-सनाय नमः इति शवं सम्पूज्य, ह्रीं फडन्तमूलमुच्चार्य, अश्वारोहणक्रमेण शवोपर्यु-पविश्य, स्वपदतले कुशान् दत्त्वा शवकेशान् प्रसार्य, जुटिकां बद्ध्वा, गुरुं गणपतिं देवञ्च नमस्कृत्य प्राणायामषडङ्गन्यासौ कृत्वा, पूर्ववत् वीरार्दनमन्त्रेण दशदिक्षु लोष्ट्रान्निक्षिप्य सङ्कल्पं कुर्यात्। अद्येत्यादि अमुकगोत्रः श्रीअमुदेवशर्मा अमुकदेवतायाः सन्दर्शनकामः अमुकमन्त्रस्यामुकसंख्यजपमहं करिष्ये—इति सङ्कल्प्य ॐ ह्रीं आधारशक्तिकमलासनाय नमः इत्यासनं सम्पूज्य, स्ववामतः शवसमीपे अर्घ्यपात्रादिकं संस्थाप्य, शवजूटिकायां पीठपूजां कृत्वा, षोडशो-चारैर्दशोपचारैः पञ्चोपचारैर्वा देवीं सम्पूज्य, शवमुखे देवीं गन्धादिना सन्तर्पयेत्। ततः शवादुत्थाय सम्मुखे गत्वा मन्त्रं पठेत्—ॐ वशो मे भव देवेश मम वीरसिद्धिं देहि देहि महाभाग कृताश्रयपरायण।

तदनन्तर साधक अपने निकट पूजाद्रव्य और कुछ दूरी पर उत्तर में शव को स्थापित करके 'मूलं ह्रीं फट् शवासनाय नम:' से शव की पूजा करे। तब 'मूलं ह्रीं फट्' का उच्चारण करके अश्वारोहणक्रम से शव के पीठ पर बैठकर अपने चरणतल में कुछ कुश रक्खे। तब शव के केशों को फैलाकर जूटिकाबन्धन कर गुरु, गणेश और देवी को प्रणाम

करे। तब प्राणायाम और षडंग न्यास करके पूर्वोक्त वीरार्दन मन्त्र से दशो दिशाओं में कंकड़ों को फेंके और निम्नवत् संकल्प करे—

ॐ अद्येत्यादि अमुकगोत्र: श्री अमुकदेवशर्मा अमुकदेवताया: सन्दर्शनकाम: अमुक-मन्त्रस्यामुकसंख्यकजपमहं करिष्ये।

इसके बाद 'ॐ ह्रीं आधारशक्तिकमलासनाय नम:' से आसन-पूजन कर बाँईं ओर शव के निकट अर्घ्यपात्रादि स्थापित कर शवजूटिका पर पीठपूजा करके षोडश, दश या पञ्चोपचारों से इष्टदेवता की पूजा करे। शव के मुख में सुगन्धित जल डालकर देवी का तर्पण करे। इसके बाद शव के ऊपर से उठकर शव के सम्मुख खड़े होकर यह मन्त्र पढ़े— ॐ वशो मे भव देवेश मम वीरसिद्धिं देहि देहि महाभाग कृताश्रयपरायण।

हे देवेश तुम मेरे वशीभूत होकर मुझे वीरसिद्धि प्रदान करो। हे महाभाग! तुम अपनी शरण में लेने वाले व्यक्ति के प्रति निष्ठा रखते हो।

ततः शवचरणौ पट्टसूत्रेण बद्ध्वा मूलेन दृढं बन्धयेत्।

ॐ मद्वशो भव देवेश वीरसिद्धिकृतास्पद ।
भीम भीरुभयाभाव भवमोचन भावुक ।
त्राहि मां देवदेवेश शूराणामधिपाधिप ॥

इत्यनेन शवस्य पादमूले त्रिकोणं यन्त्रं लिखेत्। ततः शवोपर्युपविश्य हस्तद्वयं पार्श्वयोः प्रसार्य, तदुपरि कुशान् दत्वा, तत्र स्वपादौ निधाय पुनः प्राणायामत्रयं कृत्वा, शिरसि गुरुं विभाव्य, हृदये देवीं ध्यात्वा, ओष्ठौ सम्पुटौ कृत्वा, विहित-मालया मौनी भूत्वा विगतभीर्जपेत्। अत्र श्मशानसाधनक्रमेण जपः कार्यः। यद्यर्द्ध-रात्रपर्यन्तं किञ्चिन्न लक्ष्यते, तदा पूर्ववत्सर्षपतिलविकिरणं सप्तपदगमनञ्च कृत्वा जपं कुर्यात्। भये जाते सति एवं पठेत्।

चलच्छवाद्भयं नास्ति भये जाते वदेत्ततः ।
यत्प्रार्थय बलित्वेन दातव्यं कुञ्जरादिकम् ॥
दिनान्तरे च दास्यामि स्वनाम कथयस्व मे ।
इत्युक्त्वा संस्कृतेनैव निर्भयश्च पुनर्जपेत् ॥
ततश्चेन्मधुरं वक्ति वक्तव्यं मधुरं ततः ।
ततः सत्यं कारयित्वा वरञ्च प्रार्थयेत्ततः ॥
यदि सत्यं न कुरुते वरं वा न प्रयच्छति ।
तदा पुनर्जपेद्धीमानेकाग्रमानसस्तथा ॥

अस्यार्थः—यदि जपकाले आकाशगत्या कुञ्जरादिकं प्रार्थयते तदा दिनान्तरे दास्यामि मम स्थाने स्वनाम कथय इत्युक्त्वा पुनर्जपेत्। यदि स्वनाम मधुरं

इत्यनेन विधानेन सिद्धिं प्राप्नोति साधकः ।
इह भुक्त्वा वरान् भोगानन्ते याति हरेः पदम् ॥

ततो दक्षिणां दत्त्वाच्छिद्रावधारणं कुर्यात्।

इति शवसाधनम्

दूसरे दिन प्रातःकृत्यादि नित्य कर्म करके पञ्चगव्य का पान करे और पच्चीस ब्राह्मणों को भोजन कराए। इसमें यदि समर्थ न हो तो अपनी सामर्थ्य के अनुसार ब्राह्मणभोजन कराए।

तदनन्तर स्नानपूर्वक भोजन करके उत्तम स्थान में निवास करे। ब्राह्मणभोजन नहीं कराने से साधक दरिद्र होता है। देवी रुष्ट हो जाती है।

इस प्रकार से मन्त्र सिद्ध होने पर तीन, छः या नौ रात तक इस तथ्य को गुप्त रक्खे। किसी भी प्रकार अपनी सिद्धि की बात को प्रकट न करे।

मन्त्रसिद्धि के बाद तुरन्त स्त्री-शय्या पर जाने से साधक व्याधिग्रस्त होता है। गीत सुनने से बहरा होता है। नृत्य देखने से अन्धा होता है। दिन के समय किसी के साथ कथा-वार्ता करने से गूंगा होता है।

अतएव पन्द्रह दिनों तक साधक को इस प्रकार के सभी कर्मों से दूर रहना चाहिए; क्योंकि साधक के देह में पन्द्रह दिनों तक देवी का निवास रहता है। इस एक पक्ष की अवधि में साधक गन्ध या पुष्प ग्रहण न करे। यदि बाहर जाय तो अन्य वस्त्र पहनकर जाय। गाय और ब्राह्मण की निन्दा कदापि न करे। दुर्जन, पतित और नपुंसक व्यक्ति का स्पर्श न करे। प्रतिदिन पवित्र होकर देवता, गाय, विप्रादि का स्पर्श करे। प्रातःकाल नित्य कर्म करके बिल्वपत्रोदक का सेवन करे।

मन्त्रसिद्धि के सोलहवें दिन गंगास्नान करे। 'मूलं स्वाहा अमुकदेवतां तर्पयामि नमः' से देवी का जल से तीन सौ से अधिक तर्पण करे। स्नान और तर्पण के विना देवता को तृप्ति नहीं होती। इस प्रकार करने से साधक सिद्धि पाकर विविध भोगों को भोगकर मोक्ष प्राप्त करता है। अन्त में दक्षिणा देकर अच्छिद्रावधारण करना चाहिये।

चण्डोग्रशूलपाणिमन्त्राः

अथ विद्याभेदाः कुब्जिकातन्त्रे—

प्रणवञ्च ततो मायां कूर्चबीजं समुद्धरेत् ।
शिवायेति फडन्तञ्च चण्डोग्रोऽयं महामनुः ।
चण्डोग्रशूलपाणेश्च मन्त्रः सर्वार्थसाधकः ॥

अस्य ब्रह्मा ऋषिर्गायत्रीच्छन्दो माया बीजं देवश्चण्डोग्र ईरितः।

षड्दीर्घभाजा बीजेन ताराद्येन षडङ्गकम् ।

ध्यानन्तु—

शुद्धस्फटिकसङ्काशं चतुर्बाहुं किरीटिनम् ।
शूलं कपालं दक्षे तु वामे तु पाशमंकुशम् ।
सुरापानरसाविष्टं साधकाभीष्टदायकम् ॥
ध्यात्वा सम्पूज्य देवेशं पञ्चसहस्रं जपेन्मनुम् ।
दशांशं संस्कृते वह्नौ हुनेद्रक्तोत्पलेन च ॥

अथात्र प्रयोगः—

त्रिमध्वक्तेन लभते कवितां धनभाग्भवेत् ।
रक्तपद्मस्य होमेन महतीं श्रियमाप्नुयात् ॥
पायसेन तु होमेन शत्रून् नाशयतेऽचिरात् ।
कुसुम्भतैलहोमेन रिपून् हन्यान्न संशयः ॥
करवीरस्य होमेन वाक्स्तम्भो जायते ध्रुवम् ।
शुक्लपद्मस्य होमेन मोहयेदखिलं जगत् ॥
षट्कोणाष्टदलं पद्मं मध्ये मूलं प्रपूजयेत् ।
केवलं शुद्धभावेन हविष्याशी दिवा जपेत् ॥
अस्य पुरश्चरणमात्रेण न च विघ्नैर्विलिप्यते ।
अस्यैव जपमात्रेण सर्वसिद्धिमुपालभेत् ॥

इति चण्डोग्रशूलपाणिप्रकरणम्

●

चण्डोग्रशूलपाणिमन्त्र—कुब्जिकातन्त्र में वर्णन है कि प्रणव, मायाबीज, कूर्चबीज और शिवाय फट् अर्थात् 'ॐ ह्रीं हूं शिवाय फट्' चण्डोग्र का सप्ताक्षर मन्त्र है। यह मन्त्र सर्वार्थसिद्धिदायक है। इस मन्त्र के ऋषि ब्रह्मा, छन्द गायत्री, देवता चंडोग्रशूलपाणि हैं। अंगन्यास इस प्रकार करे—

मन्त्र	करन्यास	षडंगन्यास
ॐ ह्रां	अंगुष्ठाभ्यां नम:	हृदयाय नम:
ॐ ह्रीं	तर्जनीभ्यां स्वाहा	शिरसे स्वाहा
ॐ ह्रूं	मध्यमाभ्यां वषट्	शिखायै वषट्
ॐ ह्रैं	अनामिकाभ्यां हुं	कवचाय हुं
ॐ ह्रौं	कनिष्ठाभ्यां वौषट्	नेत्रत्रयाय वौषट्
ॐ ह्र:	करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्	अस्त्राय फट्

'शुद्धस्फटिकसङ्काशं' आदि श्लोक इसका ध्यान है, जिसका भाव निम्नवत् है—

चण्डोग्रशूलपाणि विशुद्ध स्फटिक के समान उज्ज्वल वर्ण के हैं। उनकी चार भुजायें हैं। माथे पर मुकुट है। दाहिने हाथों में शूल और नरकपाल है। बाँयें हाथों में पाश और अंकुश है। ये सदैव सुरापान के मद से आनन्दमग्न रहते हैं। साधकों को इच्छित फल प्रदान करते हैं। ऐसे सर्वार्थसिद्धिदायक चंडोग्रशूलपाणि का मैं ध्यान करता हूँ।

ध्यान के बाद यथाविधि पूजन करे। पाँच हजार जप से इसका पुरश्चरण होता है। जप का दशांश रक्तकमलों से हवन करे। घी, मधु और शक्कर मधुरत्रय से युक्त लाल कमलों से हवन करने पर साधक को कवित्वशक्ति प्राप्त होती है। उसके घर में सम्पत्ति की वृद्धि होती है।

पायस और कुसुम्भतैल से हवन करने पर शीघ्र ही शत्रु का नाश होता है। कनैल-कुसुमों से हवन करने पर शत्रु का वाक्स्तम्भन और श्वेत कमलों के हवन से संसार मोहित होता है।

इस देवता के पूजनयन्त्र में षट्कोण अष्टदल पद्म बनाकर षट्कोण के मध्य में मूल मन्त्र लिखे।

चण्डोग्रशूलपाणियन्त्र
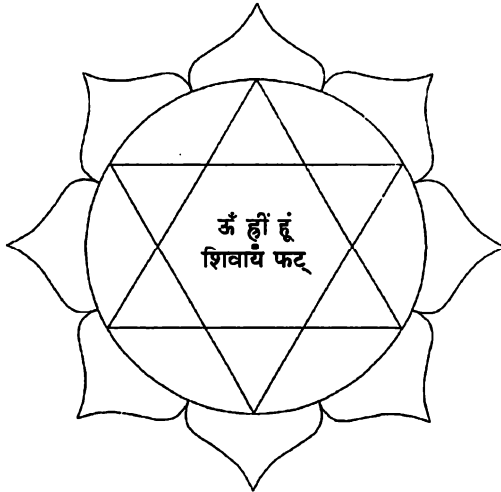
इस निर्धारित यन्त्र में ही पूजन करे और हविष्याशी रहता हुआ दिन के समय में ही जप करे। इस मन्त्र के पुरश्चरण से सभी विघ्न दूर होते हैं। इस मन्त्र के जप से सभी विषयों की सिद्धि प्राप्त होती है।

मातङ्गीमन्त्रः

वामकेश्वरतन्त्रे—

अथ वक्ष्ये महादेवीं मातङ्गीं सर्वसिद्धिदाम् ।
अस्योपासनमात्रेण वाक्सिद्धिं लभतेऽचिरात् ॥
प्रणवञ्च ततो मायां कामबीजञ्च कूर्चकम् ।
मातङ्गी ङेयुता चास्त्रं वह्निजायावधिर्मनुः ॥
ऋषिः स्याद्दक्षिणामूर्त्तिर्विराट्छन्दः प्रकीर्तितम् ।
मातङ्गी देवता देवी सर्वकार्यप्रदायिनी ॥
अङ्गन्यासकरन्यासौ कुर्यान्मन्त्री समाहितः ।
षड्दीर्घभाजा बीजेन प्रणवाद्येन कल्पयेत् ॥

अस्या यन्त्रं यथा—

षट्कोणाष्टदलं पद्मं लिखेद्यन्त्रं मनोहरम् ।
तत्र पूजा प्रकर्तव्या जवापुष्पेण मन्त्रवित् ॥
अष्टशक्तीश्चाष्टदले पूजयेत् सुसमाहितः ।
रतिः प्रीतिर्मनोभवा क्रिया श्रद्धा च शक्तयः ॥
अनंगकुसुमानङ्गमदना मदनालसा ।
इत्यष्टशक्तीः सम्पूज्य उपहारसमन्वितः ।
ततो देवीं परां ध्यायेत् साधकः स्थितमानसः ॥

तद्यथा—

श्यामाङ्गीं शशिशेखरां त्रिनयनां रत्नसिंहासनस्थिताम् ।
·············वेदैर्बाहुदण्डैरसिखेटकपाशाङ्कुशधराम् ॥
एवं ध्यात्वा महादेवीं गन्धपुष्पैर्मनोरमैः ।
नैवेद्यन्तु महादेव्यै पायसं शर्करान्वितम् ॥
पुरश्चरणकाले तु षट्सहस्रं मनुं जपेत् ।
तद्दशांशं हुनेदाज्यैः शर्करामधुभिः सह ॥
ब्रह्मवृक्षोद्भवैः काष्ठैः साधकः शक्तिभिः सह ।
एवं पुरस्क्रियां कृत्वा प्रयोगविधिमाचरेत् ॥
चतुष्पथे श्मशाने वा कलामध्ये च मान्त्रिकः ।
मत्स्यं मांसं पायसञ्च दद्याद्धूपञ्च गुग्गुलुम् ।
रात्रियोगेन कर्तव्यं सदा पूर्णश्च साधकः ॥
एवं प्रयोगमात्रेण कविता जायते ध्रुवम् ।

अग्निस्तम्भं जलस्तम्भं वाक्स्तम्भं कारयेद् ध्रुवम् ।।
मन्त्री जयति शत्रूंश्च ताक्ष्यों भोगिकुलं यथा ।
शास्त्रे वादे कवित्वे च वृहस्पतिरिवापर: ।।
अनेनैव विधानेन मातङ्गी सिद्धिदायिनी ।
नूनं तद्गृहमागत्य कुवेरैर्दीयते वसु ।
विना मत्स्यैर्विना मांसैर्नार्चयेत् परदेवताम् ।।

मातङ्गी-मन्त्र—वामकेश्वर तन्त्र में उल्लेख है कि सभी सिद्धियों को देने वाली मातंगी देवी की उपासना से शीघ्र वाक्सिद्धि प्राप्त होती है।

प्रणव, मायाबीज, कामबीज, कूर्चबीज, मातंग्यै, अस्त्र और स्वाहा को एकत्र करने से मन्त्र बनता है—ॐ ह्रीं क्लीं हूं मातंग्यै फट् स्वाहा। यह महामन्त्र है।

इस मन्त्र के ऋषि दक्षिणामूर्त्ति, छन्द विराट् और देवता मातंगी देवी है। अंगन्यास निम्न प्रकार से करे—

करन्यास—ॐ ह्रां अंगुष्ठाभ्यां नम:। ॐ ह्रीं तर्जनीभ्यां स्वाहा। ॐ हूं मध्यमाभ्यां वषट्। ॐ ह्रैं अनामिकाभ्यां हुं। ॐ ह्रौं कनिष्ठाभ्यां वौषट्। ॐ ह्र: करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्।

षडंग न्यास—ॐ ह्रां हृदयाय नम:। ॐ ह्रीं शिरसे स्वाहा। ॐ हूं शिखायै वषट्। ॐ ह्रैं कवचाय हुं। ॐ ह्रौं नेत्रत्रयाय वौषट। ॐ ह्र: अस्त्राय फट्।

पूजा यन्त्र—पहले षट्कोण बनावे। उसके बाहर अष्टदल बनावे। षट्कोण के मध्य में मूलमन्त्र लिखे। बाहर भूपुर बनावे। (चित्र अगले पृष्ठ पर द्रष्टव्य है)

इस यन्त्र में अड़हुल के फूलों से देवी की पूजा करे। अष्ट दलों में मनोभवा, रति, प्रीति, क्रिया, श्रद्धा, अनंगकुसुमा, अनंगमदना और मदनालसा—इन आठ शक्तियों की पूजा करे। एकाग्र चित्त से देवी का ध्यान करे—

श्यामाङ्गीं शशिशेखरां त्रिनयनां रत्नसिंहासनस्थिताम् ।
..................वेदैर्बाहुदण्डैरसिखेटकपाशाङ्कुशधराम् ।।

देवी मातंगी का वर्ण श्याम है। मस्तक पर अर्द्धचन्द्र है। तीन नेत्र हैं। चार भुजाओं में खड्ग, खेटक, पाश और अंकुश है। रत्नजटित सिंहासन पर विराजमान हैं। उनका मैं ध्यान करता हूँ।

ध्यान के बाद मनोहर गन्ध-पुष्पादि से पूजा करे। नैवेद्य में शर्करायुक्त पायस अर्पित करे। छ: हजार जप से इसका पुरश्चरण होता है। जप का दशांश हवन होता है। हवन त्रिमधुरक्त पलाश की समिधा से करे। आठ शक्तियों के नाम से भी हवन करे। इस प्रकार मन्त्रसिद्धि होने पर प्रयोग करे।

चतुष्पथ अथवा श्मशान अथवा स्त्रियों के समूह में साधक मत्स्य, मांस और पायंस देकर गुग्गुल का धूप प्रदान करे। यह प्रयोग रात में करे। ऐसा करने से देवी साधक की मनोकामना पूर्ण करती हैं। वह कवित्व शक्ति प्राप्त करता है। उक्त प्रयोग से साधक में अग्नि, जल और वाक्स्तम्भन की शक्ति उत्पन्न होती है। जिस प्रकार गरुड़ सर्पों का नाश करता है, उसी प्रकार मातंगी देवी की उपासना के फलस्वरूप साधक भी अपने शत्रुओं का नाश करने में समर्थ होता है। मातंगी देवी की उपासना से साधक शास्त्र-ज्ञान में, वाद-विवाद में और कवित्व में दूसरे बृहस्पति के समान हो जाता है। मातंगी देवी साधक को सभी सिद्धियाँ प्रदान करती हैं। कुबेर के समान धनी व्यक्ति उसके घर आकर उसे धन प्रदान करते हैं। मत्स्य-मांस के विना मातंगी देवी की पूजा न करे।

मातंगी यन्त्र
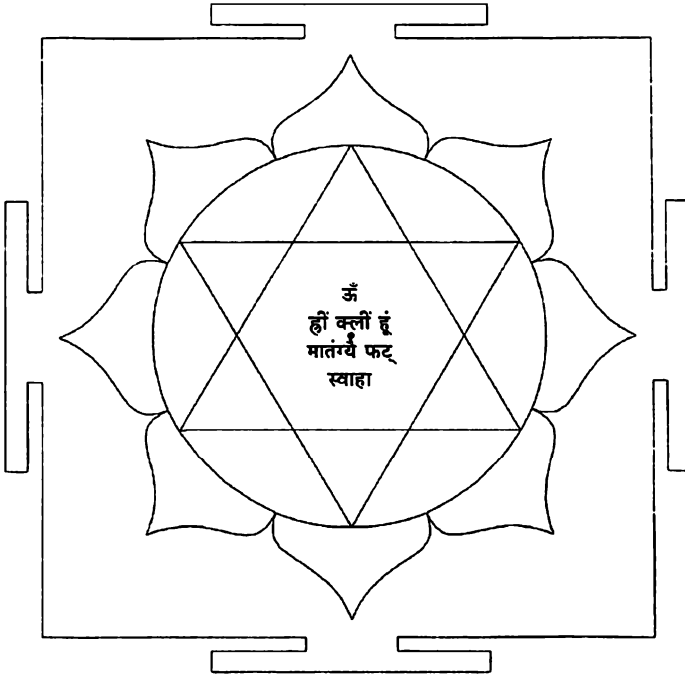
उच्छिष्टचाण्डालिनी-मन्त्रा:

उच्छिष्टचाण्डालिनी सुमुखी देवी महापिशाचिनी लज्जाबीजं ठं: ठं: ठं:।
तदुक्तं फेत्कारिण्याम्—

उक्त्वा उच्छिष्टशब्दन्तु तथा चाण्डालिनीति च ।
सुमुखी तु ततो देवीं कीर्तयेत्तदनन्तरम् ॥
महापिशाचिनीं पश्चाल्लज्जाबीजं ततः परम् ।
नादविन्दुसमाक्रान्तं ठकारत्रितयं पुनः ।
सविसर्गं महादेवि सर्वसिद्धिप्रदायकम् ॥

मन्त्रान्तरम्—उच्छिष्टचाण्डालि मातङ्गि सर्ववशङ्करि नमः स्वाहा। तदुक्तं तन्त्रान्तरे—

अथवोच्छिष्टचाण्डालि मातङ्गिपदमीरयेत् ।
ततः सर्ववशं चान्ते करि हृद्वह्निवल्लभा ।
एकोनविंशत्यर्णोऽयं सर्वाभीष्टकरो भवेत् ॥

मन्त्रान्तरं मन्त्रदेवप्रकाशिकायाम्—वाग्भवं माया कामः सौः ऐं ज्येष्ठमातङ्गि नमामि उच्छिष्टचाण्डालि त्रैलोक्यवशंकरि स्वाहा।

इमां विद्यां महेशानि चापरां हूं-समन्विताम् ।
इयं विद्या महाविद्या सर्वपापापहारिणी ॥
सुखदा मोक्षदा चैव राज्यसौभाग्यदायिका ।
यां यां प्रार्थयते सिद्धिं हठात्तां तामवाप्नुयात् ॥
विधानञ्च प्रवक्ष्यामि शृणु देवि वरानने ।
भोजनानन्तरं देवि विनैवाचमने कृते ॥
बलिं दद्यात् प्रथमतो मूलमन्त्रेण साधकः ।
ततो मन्त्रं जपेद्ध्यात्वा देवीं तामिष्टसिद्धये ॥

बलिमपि उच्छिष्टेन। तथा च—

न तिथिर्न च नक्षत्रं न चाङ्गन्यासमेव च ।
नारिदोषे न वा विघ्नं नाशौचं नियमो न च ।
यस्य तिष्ठति मन्त्रोऽयं न च विघ्नैः स बाध्यते ॥

ध्यानन्तु—

शवोपरि समासीनां रक्ताम्बरपरिच्छदाम् ।
रक्तालङ्कारसंयुक्तां गुञ्जाहारविभूषिताम् ॥
षोडशाब्दाञ्च युवतीं पीनोन्नतपयोधराम् ।
कपालकर्तृकाहस्तां परां ज्योतिःस्वरूपिणीम् ॥
वामदक्षिणयोगेन ध्यायेन्मन्त्रविदुत्तमः ।
उच्छिष्टेन बलिं दत्त्वा जपेत्तद्गतमानसः ॥

उच्छिष्टेन तु कर्तव्यो जपोऽस्या: सिद्धिमिच्छता ।
उच्छिष्टे जपमानस्य जायन्ते सर्वसिद्धय: ॥
अपरञ्च प्रवक्ष्यामि शृणु देवि फलप्रदम् ।
होमञ्च तर्पणञ्चैव सर्वकामार्थसिद्धये ॥
स्थण्डिले मण्डलं कृत्वा चतुरस्रं समन्तत: ।
पूजयेन्मण्डलं देवि मूलमन्त्रेण साधक: ॥

ततो मूलमुच्चार्य मण्डलाय नम: इति मन्त्रेण वह्निस्वरूपां देवतां ध्यात्वा होमयेत्। तथा च—

ततो देवीं समाधाय वह्निस्वरूपां व्यवस्थिताम् ।
देवीं ध्यात्वा चरेद्धोमं दधिसिद्धार्थतण्डुलै: ।
सहस्रमात्रहोमेन राजा च वशगो भवेत् ॥
मार्जारस्य तु मांसेन देव्या होमं समाचरेत् ।
स प्राप्नोति परां विद्यां सर्वशास्त्रवशीकृताम् ॥
कुर्याच्छागस्य मांसेन होमं मधुसमन्वितम् ।
सहस्रैकविधानेन भवन्ति कुलसिद्धय: ॥
विद्याकामश्चरेद्धोमं शर्करायुतपायसै: ।
नूनं तस्य भवन्त्येव सद्यो विद्याश्चतुर्दश ॥
बिल्वपत्रैस्त्रिमध्वक्तैर्मासमेकं समाहित: ।
वन्ध्यापि लभते पुत्रं चिरजीविनमुत्तमम् ॥
कर्कन्धुकुसुमं हुत्वा छागरक्तसमन्वितम् ।
दुर्भगाया हठाद्देवि सौभाग्यं शुभदायकम् ॥
रजस्वलाया वस्त्रेण मधुना पायसेन च ।
होमं कृत्वा महादेवि त्रैलोक्यं वशमानयेत् ॥
इत्येषा कथिता देवि सर्वपापप्रणाशिनी ।
मन्त्रस्योच्चारणाद्देवि सर्वपापप्रणाशिनी ।
उच्छिष्टदूषणं त्यक्त्वा स पवित्रो जपेद् ध्रुवम् ॥

अस्य यद्यपि पुरश्चरणं नोक्तं तथापि अष्टोत्तरसहस्रजप:। तद्दशांशेन होमादिकं बोध्यम्। तथा च—

येषां जपे च होमे च संख्या नोक्ता मनीषिभि: ।
तेषामष्टसहस्रन्तु संख्या स्याज्जपहोमयो: ॥

इत्यभिधानात्। अष्टसहस्रमष्टोत्तरसहस्रमिति सम्प्रदाय:। वस्तुतस्तु आसां सिद्धविद्यात्वात् पुरश्चरणं नास्तीति निबन्धकारा:।

उच्छिष्टचाण्डालिनी-मन्त्र—फेत्कारिणी तन्त्र में उल्लेख है कि उच्छिष्ट शब्द के बाद चांडालिनी सुमुखी कहकर देवी महापिशाचिनी कहे। तब मायाबीज, चन्द्रबिन्दु और विसर्गयुक्त तीन ठकारों का उच्चारण करे। इस प्रकार यह मन्त्र बनता है—उच्छिष्टचांडालिनी सुमुखी देवी महापिशाचिनी ह्रीं ठ: ठ:। यह मन्त्र सर्वसिद्धिदायक है।

उन्नीस अक्षरों का सर्वाभीष्टप्रद मन्त्र यह है—उच्छिष्टचांडालि मातंगि सर्ववशंकरि नम: स्वाहा।

मन्त्रदेवप्रकाशिका नामक ग्रन्थ में लिखा है कि—ऐं ह्रीं क्लीं सौ: ऐं ज्येष्ठमातंगि नमामि उच्छिष्टचांडालिनि त्रैलोक्यवशंकरि स्वाहा। इस मन्त्र के आदि में हूं बीज जोड़ने से अन्य चौथा मन्त्र बनता है। इससे आराधना करने पर सब प्रकार के पाप नष्ट होते हैं।

यह विद्या महाविद्या है। सुख, मोक्ष, राज्य, सौभाग्य प्रदान करती है। इस मन्त्र के साधक को इच्छानुसार सिद्धियाँ तत्काल प्राप्त होती हैं। साधनाविधि निम्नलिखित है—

भोजन के बाद विना मुख धोये मूल मन्त्र से बलि अर्पित करे। हृदय में देवी का ध्यान करते हुए अपने अभीष्टसिद्धि के लिये मन्त्रजप करे। उच्छिष्ट द्रव्य की बलि देना ही इसमें प्रशस्त है। इस साधना में तिथि और नक्षत्रादि का विचार आवश्यक नहीं है। सभी समय यह साधना की जा सकती है। इसमें अंगन्यासादि की भी आवश्यकता नहीं है और दोषादि का विचार भी इसमें नहीं किया जाता। अशौच आदि दोषों से इस साधना में कोई बाधा नहीं पड़ती। अन्य किसी भी नियम का इसमें प्रतिबन्ध नहीं है। इस मन्त्र के अभ्यासी साधक के सामने कोई विघ्न नहीं आता। इसका ध्यान इस प्रकार है—

शवोपरि समासीनां रक्ताम्बरपरिच्छदाम्।
रक्तालङ्कारसंयुक्तां गुञ्जाहारविभूषिताम्।।
षोडशाब्दाञ्च युवतीं पीनोन्नतपयोधराम्।
कपालकर्तृकाहस्तां परां ज्योति:स्वरूपिणीम्।।

देवी उच्छिष्टचांडालिनी शवासन पर बैठी हैं। वस्त्र लाल रंग के हैं। आभूषण भी लाल रंग के हैं। गुंजाहार से शोभित सोलह वर्ष की युवती हैं। दोनों उरोज समुन्नत हैं। बाँयें हाथ में नरकपाल और दाँयें में कैंची है। ये ज्योतिस्वरूपा हैं।

ऐसा ध्यान करके साधक उच्छिष्ट पदार्थ की बलि देकर एकाग्र चित्त से जप करे। मन्त्रसिद्धि के लिये उच्छिष्ट पदार्थ से हवन करे। इस मन्त्र के जप से सभी सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं।

साधना की दूसरी विधि यह है कि सभी इच्छाओं की पूर्ति के लिये साधक हवन और तर्पण करे। स्थण्डिल में चतुरस्र मण्डल बनाकर उस मण्डलमध्य में मूल मन्त्र से देवी

की पूजा करे। पहले मूलमण्डलाय नम: से मण्डल का पूजन करे। तब अग्निस्वरूपा देवी का ध्यान करके हवन करे।

तन्त्र में लिखा है कि देवी का ध्यान अग्निस्वरूप में करके दही और श्वेत सरसो युक्त चावल से हवन करे। इस प्रकार का एक हजार हवन करने से राजा वश में होता है। मार्जार के मांस से हवन करने से साधक सभी शास्त्रों में पारंगत हो जाता है। मधुयुक्त छागमांस से हवन करने पर साधक के कुलदेवता सिद्ध होते हैं। विद्याकामी साधक शक्करयुक्त खीर से हवन करे। इससे साधक चौंदह विद्याओं का ज्ञाता हो जाता है। घी, मधु और शक्करयुक्त वेलपत्रों से एक महीने तक एकाग्र मन से हवन करने पर बाँझ स्त्री को भी चिरंजीवी पुत्र प्राप्त होता है। मधुयुक्त रक्त वदरीपुष्प के हवन से भाग्यहीन नारी भी सौभाग्यवती हो जाती है। रजस्वला के वस्त्र के टुकड़े-टुकड़े करके उन्हें मधु और खीर से युक्त करके हवन करने से तीन लोक वशीभूत होते हैं।

यह मन्त्र सभी पापों का विनाशक है। इसके उच्चारणमात्र से पापराशि भस्म हो जाती है। उच्छिष्ट दोष को छोड़कर पवित्र भाव से इस मन्त्र का जप करना चाहिये।

इस मन्त्र के पुरश्चरण में जपादि की संख्या का कोई उल्लेख नहीं है, तथापि एक हजार आठ मन्त्रजप और जप का दशांश १०८ हवन करना विधेय है; किन्तु बृहत् तन्त्र-सार निबन्धकार का मत है कि यह सिद्धविद्या है; अत: इसकी सिद्धि के लिये पुरश्चरण आवश्यक नहीं है।

धूमावती मन्त्रा:

फेत्कारिण्याम्—

दान्तावर्घीशविन्द्वन्तौ बीजं धूमावती द्विठः ।
धूमावतीमनुः प्रोक्तो वैरिनिग्रहकारकः ॥

अस्याः पूजा—प्रातःकृत्यादिकं कृत्वा भूतशुद्ध्यादिप्राणायामौ च कृत्वा ऋष्यादिन्यासं कुर्यात्। यथा—शिरसि पिप्पलादऋषये नमः, मुखे निवृच्छन्दसे नमः, हृदि धूमावत्यै देवतायै नमः।

ततः कराङ्गन्यासौ—धां अंगुष्ठाभ्यां नमः, धीं तर्जनीभ्यां स्वाहा इत्यादि। एवं धां हृदयाय नमः इत्यादि। ततो ध्यानम्—

विवर्णा चञ्चला रुष्टा दीर्घा च मलिनाम्बरा ।
विवर्णकुन्तला रूक्षा विधवा विरलद्विजा ॥
काकध्वजरथारूढा विलम्बितपयोधरा ।
सूर्पहस्तातिरूक्षाक्षी धूतहस्ता वरान्विता ॥

प्रवृद्धघोणा तु भृशं कुटिला कुटिलेक्षणा ।
क्षुत्पिपासार्दिता नित्यं भयदा कलहप्रिया ॥

विरलद्विजा विरलदन्ता।

जपेत् कृष्णाचतुर्दश्यां पुरश्चरणसिद्धये ।
उपवासरतो मन्त्री शून्यागारे दिवानिशम् ॥
श्मशाने विपिने वापि जपेल्लक्षञ्च वाग्यतः ।
सोष्णीषाः आर्द्रवासाश्च पुरश्चरणकर्मणि ।
आख्योपरि लिखेन्मन्त्रं तस्मिन् स्थाप्य शिवं यजेत् ॥

तथा च—

अवष्टभ्य शिवं शत्रुनाम्ना तु प्रजपेन्मनुम् ।
सहस्रस्यार्द्धतः शत्रुर्ज्वरेण परिगृह्यते ।
पञ्चगव्येन शान्तिः स्याज्ज्वरस्य पयसापि वा ॥

ततः पूर्ववत् पञ्चोपचारैः सम्पूज्य जपेत्। तथा—

कृत्वा मन्त्रे रिपोराख्यामारण्ये यामिनीदले ।
उत्सादो जायते शत्रोर्मनोरयुतजापतः ॥
दग्ध्वा काकं श्मशानाग्नौ तद्भस्मादाय मन्त्रितम् ।
विरोधिनामष्टाशासु सद्य उच्चाटनं रिपोः ॥

मन्त्रितमित्यष्टोत्तरशतमिति। अष्टाशासु क्षिपेदित्यर्थः।

श्मशानभस्मना कृत्वा शिवं तस्योपरि न्यसेत् ।
विरोधिनामसंरुद्धं कृष्णपक्षे समर्चयेत् ॥
महिषीक्षीरधूपञ्च यद्यच्छक्रविपत्करम् ।
महिषीरूपमासाद्य स्वप्ने शत्रुं विनाशयेत् ॥
मन्त्रेणानेन निखेनत्तद्भस्म रिपुमन्दिरे ।
शत्रूनुच्चाटयेन्नूनं नात्र कार्या विचारणा ॥
श्मशानभस्मना लिङ्गं कृत्वा पुष्पादिनार्चयेत् ।
भगवन्निति समाभाष्य मनसा कर्म चिन्तयन् ॥
निम्बकाकच्छदावेकीकृत्य चाष्टशतं जपेत् ।
दद्याद्धूपं साध्यनाम्ना सद्यो विद्वेषयेदरीन् ॥

अस्यार्थः—निम्बकाकच्छदावेकीकृत्य तदुपरि अष्टोत्तरशतं जप्त्वा तेन द्रव्येणामुकं द्वेषय द्वेषय। मूलमुच्चार्य धूपं दद्यात्। तथा च—

चितिकाष्ठानले क्षीरहोमाच्छान्तिः सदा भवेत् ।

तथा च—

रजोधूपप्रदानेन गृध्ररूपेण कालिका ।
मारयत्यरिमागत्य शान्तिर्निर्माल्यधूपतः ॥
वराहकर्णधूपेन हन्याच्छूकररूपिणी ।
अश्वत्थपत्रधूपेन शान्तिर्भवति नान्यथा ॥
शान्तिः सर्वाभिचारस्य पञ्चगव्येन जायते ।
क्षीरेण वापि देवेशि मधुरत्रितयेन वा ॥
कीले क्षीरतरोर्विदर्ध्य विलिखेन्मन्त्रेण नामाक्षरं,
जप्त्वालिख्य पदद्वये तु निखनेदुच्चाटनं विद्विषाम् ।
तत्पादद्वयधूलिकीर्णहविषा दद्याद्द्विजेभ्यो बलिं,
तज्जप्त्वा चितिभस्मकीलितमरेर्गेहे तदुच्चाटनम् ॥

इत्यादिप्रयोगः।

धूमावती-मन्त्र—फेत्कारिणीतन्त्र में वर्णन है कि 'धूं धूं धूमावती स्वाहा' मन्त्र शत्रुओं का नाशक है।

इसकी पूजा-पद्धति यह है कि प्रातःकृत्यादि करने के बाद भूतशुद्धि एवं प्राणायाम करके न्यास करे।

ऋष्यादि न्यास—पिप्पलादऋषये नमः शिरसि। निवृच्छन्दसे नमः मुखे। धूमावती देवतायै नमः हृदि।

मन्त्र	करन्यास	षडंगन्यास
धां	अंगुष्ठाभ्यां नमः	हृदयाय नमः।
धीं	तर्जनीभ्यां स्वाहा	शिरसे स्वाहा।
धूं	मध्यमाभ्यां वषट्	शिखायै वषट्।
धैं	अनामिकाभ्यां हुं	कवचाय हुं।
धौं	कनिष्ठिकाभ्यां वौषट्	नेत्रत्रयाय वौषट्।
धः	करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्	अस्त्राय फट्।

इसके बाद निम्नवत् ध्यान करे—

विवर्णा चञ्चला रुष्टा दीर्घा च मलिनाम्बरा ।
विवर्णकुन्तला रूक्षा विधवा विरलद्विजा ॥
काकध्वजरथारूढा विलम्बितपयोधरा ।
सूर्पहस्तातिरूक्षाक्षी धूतहस्ता वरान्विता ॥

प्रवृद्धघोणा तु भृशं कुटिला कुटिलेक्षणा ।
क्षुत्पिपासार्दिता नित्यं भयदा कलहप्रिया ।।

भगवती धूमावती विवर्ण हैं चंचल, क्रोधी और विशालकाय हैं। वस्त्र मैले हैं। केश विवर्ण और रूखे हैं। दाँत विरल और म्लान लटके हुए हैं। विधवा का रूप है। कौवे की पताका से युक्त रथ पर बैठी हैं। इनकी आँखें एवं हाथ काँपते रहते हैं। एक हाथ में सूप और दूसरे में वरमुद्रा है। नाक बहुत लम्बी है स्वभाव और दृष्टि में कुटिलता है। ये भूख और प्यास से व्याकुल, सदा भयंकर रूप वाली और कलहप्रिया है।

इस प्रकार ध्यान करने के बाद पूजा करे।

पुरश्चरण के लिये कृष्ण पक्ष की चतुर्दशी को उपवास करे। किसी सूने घर, श्मशान या वन-प्रदेश में दिन-रात मौन रहते हुए एक लाख मन्त्र जप करे। पुरश्चरण काल में शिर पर पगड़ी, आर्द्र वस्त्र धारण करना आवश्यक है। तब शत्रु के नाम के ऊपर मूल मन्त्र लिखकर उसके ऊपर शिवलिंग स्थापित करे। पूजन करके जप करे।

अन्यत्र वर्णन है कि शिवलिंग का निर्माण 'अमुकं मारय' में अमुक के स्थान पर शत्रु का नामनिर्देशपूर्वक जप करे। यथा 'रामम् मारय' इस प्रकार पाँच सौ जप करने पर शत्रु ज्वरग्रस्त होता है। पञ्चगव्य या दूध से हवन करने पर उसका ज्वर छूट सकता है। उसके बाद पञ्चोपचारों से देवी की पूजा करके जप करे।

हल्दी के पत्ते पर शत्रु का नाम लिखकर किसी वन के बीच में गाड़कर उसके ऊपर उक्त मन्त्र का दश हजार जप करे। इससे शत्रु का उच्चाटन होता है। श्मशान की अग्नि में कौए को जलाकर उसका भस्म लेकर उसे उक्त मन्त्र के १०८ जप से अभिमन्त्रित करे। इस भस्म को शत्रु का नामोच्चारण करते हुए आठों दिशाओं में फेंके। इससे भी शत्रु का उच्चाटन होता है।

कृष्णपक्ष में श्मशान के भस्म से शिवलिंग बनावे। उस पर शत्रुनामसहित उक्त मन्त्र लिखकर पूजा करे। भैंस के दूध से धूप देकर जो-जो पदार्थ शत्रु के अमंगलसूचक हो, उन्हीं द्रव्यों को प्रदान करे। इस प्रकार पूजन करने से देवी भैंस का रूप धारण करके साधक के शत्रु का शीघ्र विनाश करती है।

श्मशानभस्म से शिवलिंग बनाए। पुष्पादि से उसकी पूजा करे। 'हे भगवन्' से उन्हें सम्बोधित करके मन ही मन कर्तव्य की चिन्ता करते हुए नीम और काकपक्ष एकत्र लेकर उसके ऊपर एक सौ आठ मन्त्र का जप करे। तब 'अमुकं द्वेषय द्वेषय' कहकर मूल मन्त्र का उच्चारण करते हुए धूप प्रदान करे। इस प्रयोग से शत्रुवर्ग में परस्पर महान् द्वेष उत्पन्न होगा। इस विद्वेष की शान्ति के लिये चिताकाष्ठ लाकर उसकी अग्नि बनाए। उस अग्नि में दूध से हवन करे।

रजस्वला के रक्ताक्त वस्त्र द्वारा निर्मित धूप जलाकर यदि निवेदन करे तो कालिका गीध रूप में आकर शत्रु का नाश करती है। निर्माल्य पत्र-पुष्पादि द्वारा धूप देने से इस प्रयोग की शान्ति होती है।

वराहकर्ण से धूप देने पर देवी रात के समय शूकर के रूप में आकर शत्रु का नाश करती है।

अश्वत्थपत्र का धूप देकर पञ्चगव्य अथवा केवल दूध अथवा घी-मधु-शक्कर त्रिमधुर से हवन करने से सभी प्रकार के अभिचार की शान्ति होती है।

गूलर आदि दूध वाले वृक्ष की कील बनाकर उसके ऊपर शत्रुनामसहित धूमावती का मन्त्र लिखे। तब इस कील के ऊपर मूल मन्त्र का जप करके शत्रु के दोनों पैरों के भूमि में कील द्वारा जटित होने की भावना करे। इससे शत्रु का उच्चाटन होता है।

शत्रु के दोनों पैरों की धूल और घी सहित पक्षियों की बलि देकर चिताभस्म के ऊपर मूल मन्त्र का जप करे। तब उस भस्म को शत्रु के घर के अन्दर गुप्त रूप से पहुँचाये। इससे शत्रु का उच्चाटन होता है।

भद्रकालीमन्त्रः

प्रासादबीजमुद्धृत्य कालीतिपदमुद्धरेत् ।
महाकालिं-पदं चोक्त्वा किलियुग्ममतः परम् ।
अस्त्रमग्निप्रियान्तोऽयं भद्रकालीमहामनुः ॥
आराध्य प्रजपेन्नित्यमष्टोत्तरशतं जपेत् ।
जपमाला विधातव्या अष्टोत्तरशतेन च ।
ध्यातव्येयं महादेवी भद्रकाली भयापहा ॥

आराध्येति भूतशुद्ध्यादिप्राणायामौ कृत्वा पञ्चोपचारैः शिवलिङ्गे सम्पूज्येत्यर्थः। ध्यानं यथा—

क्षुत्क्षामा कोटराक्षी मसिमलिनमुखी मुक्तकेशी रुदन्ती
नाहं तृप्ता वदन्ती जगदखिलमिदं ग्रासमेकं करोमि ।
हस्ताभ्यां धारयन्ती ज्वलदनलशिखासन्निभं पाशयुग्मं
दन्तैर्जम्बूफलाभैः परिहरतु भयं पातु मां भद्रकाली ॥
प्रयोगमात्रं कर्तव्यं वैरिनिग्रहकारकम् ।
इयं देवी महादेवी शत्रुनिग्रहकारिणी ।
यथेष्टचिन्तया चिन्त्या धर्मकामार्थसिद्धिदा ॥

अस्य पुरश्चरणादिकं दक्षिणकालीमन्त्रवदिति केचित्, वस्तुतस्तु पुरश्चरण-मष्टोत्तरसहस्रजपः।

भद्रकाली मन्त्र—आरम्भ में प्रासाद बीज ह्रौं, तब कालि, तब महाकालि, तब किलिकिलि, अन्त में फट् स्वाहा के योग से भद्रकाली का मन्त्र बनता है। जैसे—ह्रौं कालि महाकालि किलि किलि फट् स्वाहा। यह भगवती भद्रकाली का महामन्त्र है।

इस मन्त्र से भद्रकाली की पूजा करे। प्रति दिन एक सौ आठ मन्त्र जप करे। जप के लिये १०८ दाने की जपमाला का प्रयोग करे। भगवती भद्रकाली के ध्यान करने से वह अपने भक्तों का सभी दुःख दूर कर देती हैं।

भूतशुद्धि से प्राणायाम तक की सारी क्रियायें करके शिवलिंग में गन्ध-पुष्प-धूप-दीप और नैवेद्य पञ्चोपचारों से पूजा करे। तदनन्तर देवी का इस प्रकार ध्यान करे—

क्षुत्क्षामा कोटराक्षी मसिमलिनमुखी मुक्तकेशी रुदन्ती
नाहं तृप्ता वदन्ती जगदखिलमिदं ग्रासमेकं करोमि ।
हस्ताभ्यां धारयन्ती ज्वलदनलशिखासन्निभं पाशयुग्मं
दन्तैर्जम्बूफलाभैः परिहरतु भयं पातु मां भद्रकाली ।।

भूख के कारण क्षीण शरीर वाली, धँसी हुई आँखों वाली, स्याही के समान श्याम-मुखी, बिखरे केशों वाली, रुदनशीला हैं। मैं तृप्त नहीं हूँ, इस सारे संसार को मैं अपना एक ग्रास बनाऊँगी—यह कहने वाली, दोनों हाथों में प्रज्ज्वलित अग्निशिखा के समान दो पाश धारण करने वाली, दाँतों से जामुनफल जैसी प्रभा फैलाने वाली भगवती भद्रकाली मेरे भय को दूर करें। मेरी रक्षा करें।

देवी भद्रकाली की उपासना से शत्रु का शीघ्र ही दमन हो जाता है। जो साधक जिस कामना से शत्रुनिग्रहकारिणी भद्रकाली की उपासना करता है, उसकी वह कामना पूरी होती है।

कुछ का मत है कि इन देवी के पुरश्चरण में दक्षिणकालिका की पुरश्चरण पद्धति से कार्य करे। इनके मन्त्र का पुरश्चरण एक हजार आठ जप से ही हो जाता है।

उच्छिष्टगणेशमन्त्रः

ॐ हस्तिपिशाचि लिखे ठद्वयम्। तन्त्रान्तरे—

हस्तिपदं समुच्चार्य पिशाचीतिपदं ततः ।
देवराजं सनेत्रञ्च कान्तमीशस्वरान्वितम् ।
वह्निजायावधिर्मन्त्रस्ताराद्यः सर्वकामदः ।।

प्रणवस्थाने गमिति केचित्। हस्तिपिशाचि लिखेऽग्निवनिता गं तदादित इति तत्त्वबोधात्। तथा—

सारभूतमिदं मन्त्रं न देयं यस्य कस्यचित् ।
गुह्यं सर्वागमेष्वेव हितबुद्ध्या प्रकाशितम् ।।

तथा च—

न तिथिर्न च नक्षत्रं नोपवासो विधीयते।
यथेष्टचिन्तया मन्त्रः सर्वकामफलप्रदः॥

अस्य पूजाप्रयोगः—प्रातःकृत्यादि प्राणायामान्तं विधाय ऋष्यादिन्यासं कुर्यात्। शिरसि सुधीरऋषये नमः, मुखे निवृद्गायत्रीच्छन्दसे नमः, हृदि उच्छिष्टगणपतये देवतायै नमः। ततः प्रणवेन कराङ्गन्यासौ कृत्वा ध्यायेत्। ध्यानं यथा—

रक्तमूर्त्तिं गणेशञ्च सर्वाभरणभूषितम्।
रक्तवस्त्रं त्रिनेत्रञ्च रक्तपद्मासने स्थितम्॥
चतुर्भुजं महाकालं द्विदन्तं सस्मिताननम्।
इष्टञ्च दक्षिणे हस्ते दन्तञ्च तदधःकरे॥
पाशांकुशौ च हस्ताभ्यां जटामण्डलवेष्टितम्।
ललाटचन्द्ररेखाढ्यं सर्वालङ्कारभूषितम्॥

एवं ध्यात्वा करस्थपुष्पैर्मूलेन शिरसि सम्पूज्य बहिःपूजामारभेत् (अष्टदलपद्मं लिखित्वा पूजयेत्)। तत्र प्रथमं मूलेनार्घ्यं संस्थाप्य दशधा मूलं प्रजप्य, तेनोदकेनात्मानं पूजोपकरणञ्चाभ्युक्ष्य, पुनर्ध्यात्वा, अष्टदलपद्ममध्ये स्थापयेत्। ततः पञ्चोपचारैः सम्पूज्य पत्रेषु पूर्वादि ॐ वक्रतुण्डाय स्वाहा। एवं एकदन्ताय स्वाहा, लम्बोदराय विकटाय विघ्नेशाय गजवक्त्राय विनायकाय गणपतये, मध्ये हस्तिमुखाय। सर्वत्र स्वाहान्तता। पुनर्देवं त्रिः सम्पूज्य, यथाशक्ति जपं कृत्वा समर्प्य, बलिरूपनैवेद्यमुपनीय, ॐ उच्छिष्टगणेशाय महाकालाय एष बलिर्नमः इति बलिं दत्त्वा, आचमनीयादिकं दद्यात्। विशेषफलाकांक्षिभिः पुनः ॐ ह्रां ह्रीं ह्रैं ह्रूं फट् स्वाहा इत्यनेन बलिं दद्यात्। ततः पुष्पमेकं दक्षिणदिशि क्षिप्त्वा क्षमस्वेति विसर्जयेत्। अस्य पुरश्चरणं षोडशसहस्रजपः। तथा च—

कृष्णां चतुर्थीमारभ्य यावच्छुक्लचतुर्थिका।
सहस्रं हि जपेन्नित्यं योषिन्नियमपूर्वकम्॥
स्नापयेन्मधुना नित्यं नैवेद्यं गुडपायसम्।
भुक्तोच्छिष्टो जपेन्नित्यं गणेशोऽहं सदा प्रियः॥
श्वेतार्केणाकृतिं कृत्वा रक्तचन्दनकेन वा।
अंगुष्ठमात्रं प्रतिष्ठाप्य द्विजाग्निगुरुसन्निधौ।
जप्त्वा षोडशसाहस्र्यं सिद्धमन्त्रो भवेद् ध्रुवम्॥

योषिदिति योषिदुपगमने नियमपुरःसरमित्यर्थः, न तु त्यागनियमः। अप्रसङ्गादनौचित्यादनाचान्त इति दर्शनात्।

उच्छिष्टश्चाशुचिर्भूत्वा जपपूजनमाचरेत् ।
अनुच्छिष्टे न सिध्येत तस्मादेवं समाचरेत् ।।

इति तन्त्रान्तरवचनाच्च। केषाञ्चिन्मते पूजा नास्ति मनसा जपेत्। केषाञ्चिन्मते कराङ्गन्यासौ न स्तः गणेशोऽहमिति। पूर्वोक्तं चिन्तयेत्। गर्गमते विजने वने स्थित्वा रक्तचन्दनानुलिप्तताम्बूलमुखोच्छिष्टमुखो जपेत्। केषाञ्चिन्मते सर्वालङ्कारभूषितः सर्वावस्थानु जपेत्। अन्यमते सम्पूज्य मोदकं चर्वयन्, भृगुमते फलमश्नन्। विभीषणमते मांसनैवेद्यं दत्वा तदेव खादयन्। अथ विशेषप्रयोगः—

राजद्वारे तथारण्ये सभायां गोत्रसंसदि ।
विवादे व्यवहारे च संग्रामे शत्रुसङ्कटे ।।
नौकायां विपिने वापि द्यूते च व्यसने तथा ।
ग्रामदाहे चौरविद्धे सिंहव्याघ्रादिसङ्कटे ।।
स्मरणादेव देवस्य सर्वं वै विद्रुतं भवेत् ।
तत्सर्वं नश्यति क्षिप्रं सूर्येणैव तमो यथा ।।

उच्छिष्टगणेशमन्त्र—'ॐ हस्ति पिशाचि लिखे स्वाहा' अथवा 'गं हस्ति पिशाचि लिखे स्वाहा' दो मन्त्र सभी मन्त्रों में सारभूत है। उच्छिष्ट गणेश का उक्त मन्त्र साधारण व्यक्ति को नहीं देना चाहिये। सभी तन्त्रों में इसे गोपनीय बतलाया गया है। संसार की हितकामना से इसे प्रकाशित किया गया है।

इस मन्त्र का पुरश्चरण सोलह हजार जप से होता है। विशेष नियम यह है कि कृष्ण पक्ष की चतुर्थी तिथि तक नारीसहयोगपूर्वक अर्थात् स्त्रीसंग नियमित रखते हुए प्रतिदिन एक हजार जप करे। प्रतिदिन देवता को मधु से स्नान कराकर गुड़-पायस का नैवेद्य अर्पित करे। भोजन के बाद विना आचमन के जूठे मुंह से इस देवता के मन्त्र का जप करे। जप करते समय मन में यह विचार करे कि मैं गणेश हूँ, मै सर्वदा सन्तुष्ट हूँ।

श्वेत मदार या रक्त चन्दन की अंगूठे के बराबर उच्छिष्टगणेश की प्रतिमा बना ले। उस मूर्ति में प्राणप्रतिष्ठा करके विप्र, वह्नि तथा गुरु के समीप सोलह हजार मन्त्र-जप करे। इससे शीघ्र सिद्धि मिलती है। उच्छिष्ट मुख और अपवित्र भाव से इस देवता का मन्त्रजप-पूजादि करना चाहिये।

मतान्तर से शुद्ध मुख से भी जप-पूजादि का विधान है। कुछ का मत है कि इस देवता की उपासना में पूजा की आवश्यकता नहीं है। केवल मानसिक जप ही करना चाहिये।

करांगन्यास न करके 'मैं ही स्वयं गणेशस्वरूप हूँ' का चिन्तन करते हुए जप करे। गर्ग मुनि के मत से निर्जन जंगल में रक्तचन्दन लगाकर ताम्बूल चबाते हुए जप करे।

तन्त्रान्तर में लिखा है कि साधक विविध आभूषणों से सुसज्जित होकर निरन्तर जप करे। कुछ का कथन है कि देवता की पूजा करके लड्डू चबाते हुए जप करे।

भृगु मुनि का कथन है कि उच्छिष्ट गणेश की उपासना में फल खाते हुए जप करे। विभीषण के मत से मांस का नैवेद्य अर्पित कर उसी नैवेद्य को खाते हुए जप करे।

उच्छिष्ट गणेश का विशेष प्रयोग यह है कि राजद्वार, वनभूमि, सभा, गोत्र-समाज, विवाद, व्यवहार, संग्राम, शत्रुसंकट, नौका, कानून, जूआ, विपत् काल, ग्रामदाह, चौरभय और सिंह-व्याघ्रादि भय में इस देवता का मन्त्र स्मरण करने से सभी विघ्न वैसे ही समाप्त हो जाते हैं, जैसे सूर्योदय पर अन्धेरा दूर हो जाता है।

तथा—

सद्योच्छिष्टगणेशानो यक्षराजेन धीमता ।
आराधितं सोपहारैः सम्यगिष्टफलप्रदः ।
एवं कृत्वा व्यवस्थान्तु तद्धनेश्वरतां गतः ॥
अपामार्गसमिद्धोमे सौभाग्यं लभते ध्रुवम् ।
अष्टोत्तरशतैर्मन्त्री मूलमन्त्राभिमन्त्रितम् ॥

तथा—

वानरास्थिसमुद्भूतं कीलकञ्चाभिमन्त्रितम् ।
निखनेन्मन्दिरे यस्य भवेदुच्चाटनं परम् ॥
अथ वीथ्यां खनेद्यस्य क्रयविक्रयणं हरेत् ।
निखनेच्छौण्डिकागारे तन्मद्यं विकृतं भवेत् ॥
वेश्यागृहे तु निखनेद्ग्राहकं लभते न सा ।
कन्यागृहे तु निखनेन्न विवाहो भवेद् ध्रुवम् ॥
मानुषास्थिसमुद्भूतं कीलकञ्चाभिमन्त्रितम् ।
निखनेन्मन्दिरे यस्य मरणं तस्य निश्चितम् ॥
उद्धृते तु भवेत्स्वास्थ्यमिति सर्वस्वसम्मतम् ।
यस्य नाम्ना जपेन्मन्त्रं सहस्रं स वशो भवेत् ॥
पञ्चसहस्रहोमेन उद्वहेत वरां स्त्रियम् ।
सहस्रदशहोमेन राजा सद्यो वशो भवेत् ॥
लक्षजापेन राजैव द्विलक्षे राजपंक्तयः ।
दशलक्षेण तद्राष्ट्रं वश्यं तस्य च सर्वथा ॥
अणिमादिमहासिद्धिः कोटिजापान्न संशयः ।
खेचरत्वं भवेन्नित्यं सर्वज्ञत्वञ्च जायते ॥

मन्त्रं लिखित्वा शिरसि कण्ठे वा धारयेद्यदि ।
सौभाग्यं सर्वरक्षा च भवेत्तत्र सुनिश्चितम् ।।

यक्षपति कुबेर ने विविध उपहारों से इन्हीं उच्छिष्ट गणेश की उपासना की थी, जिससे उन्होंने अपना अभीष्ट प्राप्त करके धनेश्वरत्व का पद प्राप्त किया।

मूलमन्त्र के १०८ जप से अभिमन्त्रित अपामार्ग की समिधा से हवन करने से साधक सौभाग्यशाली हो जाता है।

वानरास्थि से निर्मित कील को उच्छिष्ट गणेश के मन्त्र से अभिमन्त्रित करके जिसके घर में स्थापित किया जाय, उस व्यक्ति का उच्चाटन होता है। इस कील को किसी दुकान में रख दिया जाय तो वहाँ क्रय-विक्रयादि व्यवसाय बन्द हो जाता है। सौंडिक, मद्य-व्यवसायी के घर में उक्त कील को रख देने से उस घर में विद्यमान मद्य विकृत हो जायगा। वेश्यालय में यदि उस कील को रख दिया जाय तो वेश्या को ग्राहक नहीं मिलेंगे। किसी अविवाहिता कन्या के घर में कील रखने से उसका विवाह नहीं होता। मनुष्यास्थि-निर्मित कील को उक्त मन्त्र से अभिमन्त्रित करके जिसके घर में रक्खा जायगा, उसकी मृत्यु शीघ्र हो जायगी।

उक्त कील को उठाकर फेंक देने से सभी दोष शान्त हो जाते हैं। जिस व्यक्ति का नाम लेकर इस मन्त्र का एक हजार जप किया जायगा, वह व्यक्ति अवश्य वशीभूत होता है। इसमें सन्देह नहीं है।

विवाहार्थी व्यक्ति पाँच हजार हवन करे तो उत्तम पत्नी प्राप्त करता है। दश हजार हवन करने से शीघ्र ही राजा वशीभूत होता है।

उक्त मन्त्र का एक करोड़ जप करने से साधक अष्टसिद्धियों का स्वामी होता है। आकाश-गमन की शक्ति उसे प्राप्त होती है। वह सर्वज्ञ हो जाता है।

इस मन्त्र को भोजपत्र पर लिखकर कण्ठ या मस्तक में धारण करने से साधक के सौभाग्य की वृद्धि होती है। सभी प्रकार से उसकी रक्षा होती है। इसमें सन्देह नहीं है।

धनदामन्त्र:

तु-तूर्यं विन्दुसंयुक्तं लज्जाबीजं समुद्धरेत् ।
लक्ष्मीबीजं ततो देवि सम्बोध्या च रतिप्रिया ।
वह्निजायावधिः प्रोक्तो मन्त्रराजोत्तमोत्तमः ।।

तन्त्रान्तरे—

तु-तूर्यं विन्दुसंयुक्तं लक्ष्मीप्रणवमेव च ।
मायाबीजं समुद्धृत्य सम्बोध्या च रतिप्रिया ।

वह्निजायावधिः प्रोक्तो मन्त्रराजोत्तमोत्तमः ॥

लक्ष्मीप्रणवं श्रीबीजं कुबेरानुमतोऽयं मन्त्रः।

अस्य पूजा—प्रातःकृत्यादि प्राणायामान्तं कृत्वा ऋष्यादिन्यासं कुर्यात्। शिरसि कुबेरऋषये नमः, मुखे पंक्तिछन्दसे नमः, हृदि धनदायै देवतायै नमः। ततः कराङ्गन्यासौ—ह्लां अंगुष्ठाभ्यां स्वाहा इत्यादि। एवं हृदयादिषु। ततो ध्यानम्—

कुङ्कुमोदरगर्भाभां किञ्चिद्यौवनशालिनीम् ।
मृणालकोमलभुजां केयूराङ्गदभूषणाम् ॥
तुलाकोटिपरिभ्रान्तपादपद्मद्वयान्विताम् ।
माणिक्यहारमुकुटकुण्डलादिविभूषिताम् ॥
नीलोत्पलदृशं किञ्चिदुद्यत्कुचविराजिताम् ।
कराभ्यां भ्राम्यत्कमलां रक्तवस्त्राङ्गरागिणीम् ॥
हेमप्राकारमध्यस्थां रत्नसिंहासनोपरि ।
ध्यायेत्कल्पतरोर्मूले देवतां धनदायिकाम् ॥

एवं ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्य बहिःपूजामारभेत्। पूजायन्त्रम्—

नवयोन्यात्मकं चक्रं विलिखेत्कर्णिकोपरि ।
दिग्दलं पद्ममालिख्य चतुरस्रं लिखेद्बहिः ।
कोणेषु वज्रान् संलिख्य मध्ये बीजं समुल्लिखेत् ॥

ततोऽर्घ्यस्थापनम्—फडिति पात्रं प्रक्षाल्य, नमः इत्यनेन जलेनापूर्य, तत्र प्रणवेन गन्धपुष्पे निक्षिप्य, तीर्थमावाह्य, धेनुमुद्रां प्रदर्श्य, तदुपरि मूलं दशधा जप्त्वा, तज्जलं किञ्चित्प्रोक्षणीपात्रे निक्षिप्य, तेनोदकेनात्मानं पूजोपकरणञ्च मूलेन त्रिरभ्युक्ष्य, आधारशक्त्यादि ह्रीं ज्ञानात्मने नमः इत्यन्तं पीठपूजां विधाय, ॐ पद्मासनाय नमः इति मध्ये सम्पूज्य पुनर्ध्यात्वावाह्य पञ्चोपचारैः पूजयेत्।

ततो योनिमुद्रां प्रदर्श्य, केशरेष्वग्न्यादिकोणेषु मध्ये दिक्षु च ह्लां हृदयाय नमः इत्यादिना षडङ्गेन पूजयेत्। ततो दलेषु पूर्वादि ॐ लक्ष्म्यै नमः, एवं पद्मायै पद्मालयायै श्रियै हरिप्रियायै तारायै कमलायै चञ्चलायै अजायै लोलायै, मध्ये देवीञ्च पुनः पूजयेत्। ततो यथाशक्ति जप्त्वा जपं समर्प्य, क्षमस्वेति विसर्जयेत्।

अस्य पुरश्चरणं लक्षजपः। तथा च—

प्रजपेदक्षसूत्रेण रत्नादिकृतकेन तु ।
लक्षे जप्ते मन्त्रसिद्धिं पुरश्चर्यां समाचरेत् ॥
विनियोगान् यथा कुर्यात्साधकः सुमनोहरान्।
रात्रौ चेज्जप्यते चाष्टसहस्रं सप्तवासरान् ।

एतेनैव सुसिद्धः स्यात् पुरश्चर्यादिको विधिः ॥
किमिह दुर्लभं देवि साधयेद्यदि मानवः ।
भुक्त्वा वाप्यथवाभुक्त्वा पायसान्नं प्रदाय च ॥
दशकृत्तोऽथवा शौचमकृत्वा वा कुचेलताम् ।
यः स्मरेद्देवि विद्यां तां दारिद्र्यैर्नाभिभूयते ॥
कामदेवं यजेत् पार्श्वे देव्याः प्रत्यहमादरात् ।
तेन देव्यां महाप्रीतिर्वाञ्छितार्थं ददाति च ॥
पूजान्ते च समायाति रात्रौ देवी धनेश्वरी ।
सर्वालङ्कारमुत्सृज्य दत्वा याति निजालयम् ॥
धनञ्च विपुलं दत्वा साधकस्य मनोरथान् ।
पूरयित्वा महेशानि वशगा जायते शुभा ॥
यद्वा भक्त्या महेशानि चन्दनेनानुलेपनम् ।
दातव्यं सर्वदा तस्मै नित्यं दारिद्र्यशान्तये ॥
पूजा कार्या महादेव्याश्चन्दनेनानुलेपिता ।
नैवेद्यञ्च प्रदातव्यं नित्यं दारिद्र्यशान्तये ॥
यक्षिणी स्वयमाहेति यो मां स्मरति मानवः ।
तस्य दाद्रियसंन्यासं दासीवत् करवाण्यहम् ॥
सहस्रं सप्तभिर्यावत् पुरश्चरणमिष्यते ।
तथा घृतेन खण्डेन मधुना च दशांशतः ।
होमोऽपि च विधातव्यः क्षणाद्दारिद्र्यशान्तये॥
पूजा कार्या महादेव्याश्चन्दनेनानुलेपिते ।
ताम्रपात्रे तथा कार्यं मण्डलं सुमनोहरम् ॥
तत्र पूजा विधातव्या देव्या एवं मनीषिणा ।
कुतो दारिद्र्यशङ्कास्य स हि कोटीश्वरो भवेत् ॥
अङ्गन्यासकरन्यासौ चाङ्गे चैवास्य देवता ।
कुबेरस्य मतेनास्याः पूजादि क्रियते सदा ॥

धनदा-मन्त्र—हे देवि! विन्दुसमन्वित तवर्ग का चौथा वर्ण (धं), मायाबीज, श्रीबीज सम्बोधनान्त रतिप्रिया, स्वाहा से 'धं ह्रीं श्रीं रतिप्रिये स्वाहा' मन्त्र बनता है। इसी मन्त्र से धनदा देवी की उपासना करे। यह मन्त्र सर्वश्रेष्ठ है धं श्रीं ह्रीं रतिप्रिये स्वाहा—यह इस मन्त्र का दूसरा रूप है। कुवेर ने इसी मन्त्र को मान्यता दी है।

प्रातःकृत्य से प्राणायाम तक के कर्म करके ऋष्यादि न्यास करे—कुवेरऋषये नमः शिरसि। पंक्तिछन्दसे नमः मुखे। धनदायै देवतायै नमः हृदि। तब करन्यास और षडंगन्यास करे—

मन्त्र	करन्यास	षडंगन्यास
ॐ ह्रां	अंगुष्ठाभ्यां नमः	हृदयाय नमः
ॐ ह्रीं	तर्जनीभ्यां स्वाहा	शिरसे स्वाहा
ॐ ह्रूं	मध्यमाभ्यां नमः	शिखायै वषट्
ॐ ह्रैं	अनामिकाभ्यां हुं	कवचाय हुं
ॐ ह्रौं	कनिष्ठाभ्यां वौषट्	नेत्रत्रयाय वौषट्
ॐ ह्रः	करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्	अस्त्राय फट्

इसके बाद निम्नवत् ध्यान करे—

कुङ्कुमोदरगर्भाभां किञ्चिद्यौवनशालिनीम् ।
मृणालकोमलभुजां केयूराङ्गदभूषणाम् ।।
तुलाकोटिपरिभ्रान्तपादपद्मद्वयान्विताम् ।
माणिक्यहारमुकुटकुण्डलादिविभूषिताम् ।।
नीलोत्पलदृशं किञ्चिदुद्यत्कुचविराजिताम् ।
कराभ्यां भ्राम्यत्कमलां रक्तवस्त्राङ्गरागिणीम् ।।
हेमप्राकारमध्यस्थां रत्नसिंहासनोपरि ।
ध्यायेत्कल्पतरोर्मूले देवतां धनदायिकाम् ।।

नवयौवना धनदा देवी का वर्ण कुंकुमकोष के भीतरी भाग के समान है। दोनों भुजाएँ मृणालवत् कोमल हैं। केयूर और अंगदादि आभूषणों से शोभित हैं। दोनों चरणकमलों में सुन्दर नूपुर गुंजायमान है। माणिक्यहार, मुकुट और कुंडलादि से अलंकृत हैं। दोनों आँखें नीलकमल के समान सुन्दर हैं। दोनों स्तन उन्नत हैं। दोनों हाथों में कमल है, जिन्हें वे घुमा रही हैं। शरीर का अनुलेप लाल रंग का है। वस्त्र लाल हैं।

स्वर्णप्राकार के मध्य में स्थित कल्पवृक्ष की जड़ में विद्यमान रत्नजटित सिंहासन पर बैठी हैं। इस प्रकार की धनदा देवी का ध्यान करना चाहिये। इसके बाद मानसिक पूजा करके बाह्य पूजन करे।

धनदा देवी के पूजन यन्त्र में पहले नवयोन्यात्मक यन्त्र बनाए। उसके बाहर अष्टदल कमल बनावे। उसके बाहर चतुरस्र भूपुर बनावे। चतुरस्र के चारो कोणों में वज्रचिह्न बनाकर कमल के मध्य के बिन्दु में 'धं' बीज लिखे। (चित्र अगले पृष्ठ पर अंकित है)

इसके बाद अर्घ्य-स्थापन करे। ध्यान-आवाहन करके पञ्चोपचार पूजन करे। अर्घ्य-स्थापन की विधि यह है कि 'फट्' मन्त्र से अर्घ्यपात्र को धोकर 'नमः' से जल भरे। 'ॐ' से गन्ध-पुष्प छोड़े। 'ॐ गंगे च यमुने' से उसमें तीर्थों का आवाहन करे।

तब धेनुमुद्रा दिखाकर अर्घ्यपात्र पर हाथ रखकर मूलमन्त्र का जप दश बार करे।

तब अर्घ्यपात्र का कुछ जल प्रोक्षणी पात्र में लेकर उस जल से मूल मन्त्र द्वारा पूजा
और अपने शरीर का तीन बार अभ्युक्षण करे।

इसके बाद 'आधारशक्तये नम:' से लेकर 'ॐ ह्रीं ज्ञानात्मने नम:' तक पी
करके 'ॐ पद्मासनाय नम:' कहकर मध्य में पूजा करे। तब योनिमुद्रा दिखाकर
में, अग्न्यादि कोणों में, मध्य में और चारो दिशाओं में ह्रां हृदयाय नम:, ह्री शिरसे स्
हूं शिखायै वषट्, हैं कवचाय हुं, ह्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्, ह्र: अस्त्राय फट् से षडंग
करे। तब पूर्व दल से प्रारम्भ करके आठ दलों में निम्न प्रकार से पूजा करे—ॐ
नम:। ॐ पद्मायै नम:। ॐ पद्मालयायै नम:। ॐ श्रियै नम:। ॐ हरिप्रियायै
ॐ तारायै नम:। ॐ कमलायै नम:। ॐ चञ्चलायै नम:। ॐ अब्जायै नम:।
लोलायै नम:।

धनदायन्त्र
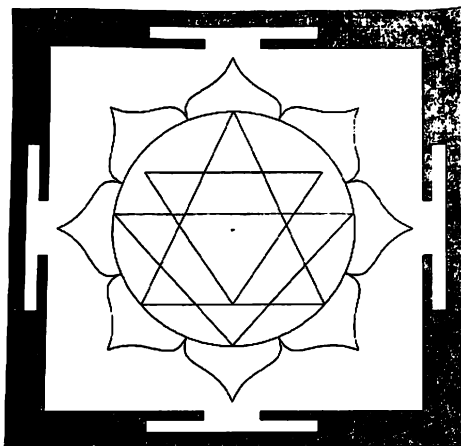
इसके बाद मध्य में पुन: धनदा देवी की पूजा करे। तब यथाशक्ति मूल मन्त्र क
करे। जपसमर्पणपूर्वक 'क्षमस्व' मन्त्र से विसर्जन करे।

इस मन्त्र का पुरश्चरण एक लाख जप से होता है। रत्नादि की माला से एक लाख जप करने से मन्त्र सिद्ध हो जाता है। एक सप्ताह तक प्रतिदिन आठ हजार जप करे तो पुरश्चरण सम्पन्न होता है। इससे साधक को कोई वस्तु दुर्लभ नहीं रहती। भोजन के बाद अथवा विना भोजन के पायसान्न की बलि प्रदान करे। जो व्यक्ति पवित्र या अपवित्र किसी भी अवस्था में धनदा मन्त्र को दश बार जपता है, उसकी दरिद्रता नष्ट हो जाती है।

देवी के पार्श्व भाग में प्रतिदिन कामदेव की पूजा करने से धनदा देवी को बहुत प्रसन्नता होती है। वे साधक को अभीष्ट पदार्थ प्रदान करती हैं।

इस प्रकार धनदा की पूजा की समाप्ति पर निशाकाल में धनेश्वरी साधक के पास आती है और अपने शरीर का आभूषण छोड़कर वापस चली जाती है। देवी साधक को अपार धन देकर उसकी मनोकामनाओं को पूर्ण करती है और उसके वश में रहती है।

हे महेशि ! साधक को अपने दारिद्र्य-निवारण के लिये प्रतिदिन भक्तिपूर्वक चन्दनादि अनुलेपन अर्पित करना चाहिये। प्रतिदिन देवी को चन्दनादि लगाकर नैवेद्यादि से उनका पूजन करे।

यक्षिणी देवी स्वयं कहती है कि जो व्यक्ति मेरी पूजा करता है, मैं उसके निकट दासी के समान रहकर उसकी दरिद्रता दूर करती हूँ।

एक सप्ताह तक एक हजार आठ जप करके जप का दशांश हवन घी-शक्कर-मधु से करे। इससे पुरश्चरण सिद्ध होकर दारिद्र्य का शीघ्र नाश हो जाता है।

ताम्रपात्र में चन्दन का लेप लगाकर उसमें मनोहर मण्डल अंकित करके मण्डल में देवी की पूजा करे। इससे दारिद्र्य का दोष कभी नहीं होता और साधक करोड़पति हो जाता है।

श्मशानकालीमन्त्रः

कालीतन्त्रे—

वाणीं मायां ततो लक्ष्मीं कामबीजमतः परम्।
कालिके सम्पुटत्वेन चतुष्कं बीजमालिखेत्।
एकादशार्णा देवेशि चतुर्वर्गप्रदायिनी ॥

अस्या यन्त्रम्—

पद्ममष्टदलं वृत्तं तद्बाह्ये धरणीतलम्।
चतुर्द्वारसमायुक्तं मध्ये मूलं समालिखेत् ॥
दलेष्वष्टसु विलिखेत् कवर्गाद्यष्टवर्गकम्।
धरण्यां विलिखेदाद्यं चतुष्कञ्च चतुष्कके।

पूर्वादि-उत्तरान्तञ्च मध्ये देवीं प्रपूजयेत् ।।

पूजाक्रमः—प्रातःकृत्यादि प्राणायामान्तं कर्म कृत्वा ऋष्यादिन्यासं कुर्यात्। शिरसि भृगुऋषये नमः, मुखे निवृच्छन्दसे नमः, हृदि श्मशानकालिकायै देवतायै नमः, गुह्ये वाग्बीजाय नमः, पादयोः ह्रीं शक्तये नमः, सर्वाङ्गे कामबीजकीलकाय नमः।

ततः कराङ्गन्यासौ—ऐं अंगुष्ठाभ्यां नमः, ह्रीं तर्जनीभ्यां स्वाहा, श्रीं मध्यमाभ्यां वषट्, क्लीं अनामिकाभ्यां हुं, कालिके कनिष्ठाभ्यां वौषट्। क्लीं आदिवाग्भवान्तं करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्। एवं हृदयादिषु। ततो ध्यानम्—

अञ्जनाद्रिनिभां देवीं श्मशानालयवासिनीम् ।
रक्तनेत्रां मुक्तकेशीं शुष्कमांसातिभैरवाम् ।।
पिङ्गाक्षीं वामहस्तेन मद्यपूर्णं समांसकम् ।
सद्यःकृत्तशिरो दक्षहस्तेन दधतीं शिवाम् ।।
स्मितवक्त्रां सदा चाममांसचर्वणतत्पराम् ।
नानालङ्कारभूषाङ्गीं नग्नां मत्तां सदासवैः ।।
एवं ध्यात्वा जपेद्देवीं श्मशाने तु विशेषतः ।
गृहे वापि गृहस्थोऽपि मत्स्यमांससुभोजनैः ।
नग्नो भूत्वा महापूजां कुर्याद्रात्रौ विशेषतः ।।

पूजनन्तु—ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्यार्घ्यस्थापनं कुर्यात्। पुनर्ध्यात्वा पञ्चोपचारैः सम्पूज्य पत्रेषु ब्राह्म्यादिकाः पूजयेत्। तद्बहिरसिताङ्गादिभैरवान् पूजयेत्। अस्याः पुरश्चरणं एकादशलक्षजपः। तथा च—

वर्णलक्षं जपेन्मन्त्रं तद्दशांशेन होमयेत् ।

मन्त्रान्तरं तत्रैव—

कामबीजं समालिख्य कालिकायै समालिखेत् ।
नमोऽन्तेन च देवेशि सप्तार्णो मनुरुत्तमः ।
षडङ्गं कालिकादेव्या अन्यत् सर्वन्तु पूर्ववत् ।।

कालिका देव्या इति निजबीजेन इत्यर्थः।

श्मशानकाली-मन्त्र—कालीतन्त्र के अनुसार वाग्बीज, मायाबीज, श्रीबीज, कामबीज, कालिके और उसके बाद चारो बीज विलोम क्रम से एकत्र करने पर श्मशानकाली का यह मन्त्र बनता है—ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं कालिके क्लीं श्रीं ह्रीं ऐं। इसमें ग्यारह अक्षर हैं। इसी मन्त्र से श्मशानकाली की उपासना करे। यह मन्त्र देवी-साधक को चतुर्वर्ग फल प्रदान करता है।

श्मशानकाली का पूजन यन्त्र अष्टदल पद्म वृत्त-चार द्वारयुक्त चतुरस्त्र भूपुर से बनता है। पद्म के मध्य में देवी का मूल मन्त्र लिखकर आठ दलों में कवर्ग चवर्ग टवर्ग तवर्ग पवर्ग यवर्ग शवर्ग और लवर्ग को लिखे। भूपुर के चारो कोनों में ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं चारो बीजों को लिखकर यन्त्र पूरा करे।

श्मशानकालीयन्त्र

सामान्य पूजापद्धति से प्रात:कृत्यादि से प्राणायाम तक करके न्यास करे।

ऋष्यादि न्यास—शिरसि भृगुऋषये नम:। मुखे निवृच्छन्दसे नम:। गुह्ये ऐं बीजाय नम:। पादयो: ह्रीं शक्तये नम:। सर्वांगे क्लीं कीलकाय नम:।

करन्यास—ऐं अंगुष्ठाभ्यां नम:। ह्रीं तर्जनीभ्यां स्वाहा। श्रीं मध्यमाभ्यां वषट्। क्लीं अनामिकाभ्यां हुं। कालिके कनिष्ठाभ्यां वौषट्। क्लीं श्रीं ह्रीं ऐं करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्।

षडंग न्यास—ऐं हृदयाय नम:। ह्रीं शिरसे स्वाहा। श्रीं शिखायै वषट्। क्लीं कवचाय हुं। कालिके नेत्रत्र्याय वौषट्। क्लीं श्रीं ह्रीं ऐं अस्त्राय फट्।

न्यासोपरान्त ध्यान करे, जो निम्नवत् है—

अञ्जनाद्रिनिभां देवीं श्मशानालयवासिनीम्।
रक्तनेत्रां मुक्तकेशीं शुष्कमांसातिभैरवाम्॥
पिङ्गाक्षीं वामहस्तेन मद्यपूर्णं समांसकम्।
सद्य:कृत्तशिरो दक्षहस्तेन दधतीं शिवाम्॥
स्मितवक्त्रां सदा चाममांस्चर्वणतत्पराम्।
नानालङ्कारभूषाङ्गीं नग्नां मत्तां सदासवै:॥

श्मशान काली गाढ़े अंजन के समान काले वर्ण की है। श्मशानरूपी गृह में निवास करती हैं। नेत्रों का वर्ण पिंगल है। केश खुले हैं। देह शुष्क और अति भयंकर है। बाँयें हाथ में मांससहित मद्य से भरा पात्र है। दाँयें हाथ में तुरत का कटा हुआ शिर है। मुख पर सदैव मुस्कान रहती है। कच्चा मांस चबाती रहती है। विविध आभूषणों से शरीर सुसज्जित है। नग्न है। आसव पीकर सदैव मत्त रहती है।

श्मशान भूमि में पूजा करे। गृहस्थ घर में बैठकर मत्स्य, मांस और मद्य ग्रहण करके निशा में नग्न होकर महापूजा करे।

पुनः पूर्वोक्त ध्यान करके मानसोपचारों से पूजन करे। अर्घ्य स्थापित करे। पुनः ध्यान करे। सामान्य विधि से आवाहन करके गन्ध-पुष्प-धूप-दीप और नैवेद्य से देवी की पूजा करे। अष्टदलों में ब्राह्मी आदि आठ शक्तियों और असितांग आदि आठ भैरवों की पूजा करे।

ग्यारह लाख जप से इसका पुरश्चरण होता है। जप का दशांश हवन होता है। 'क्लीं कालिकायै नमः' श्मशान काली का सप्ताक्षर मन्त्र है। इस मन्त्र का षडंग न्यास आदि पूजा-विधान पूर्ववत् है।

बगलामुखीमन्त्र

तदुक्तं तन्त्रान्तरे—

ब्रह्मास्त्रं सम्प्रवक्ष्यामि सद्यः प्रत्ययकारकम् ।
साधकानां हितार्थाय स्तम्भनाय च वैरिणाम् ।
यस्याः स्मरणमात्रेण पवनोऽपि स्थिरायते ॥
प्रणवं स्थिरमायाञ्च ततश्च बगलामुखि ।
तदन्ते सर्वदुष्टानां ततो वाचं मुखं पदम् ॥
स्तम्भयेति ततो जिह्वां कीलयेति पदद्वयम् ।
बुद्धिं नाशय पश्चात्तु स्थिरमायां समालिखेत् ॥
लिखेच्च पुनरोङ्कारं स्वाहेति च पदन्ततः ।
षट्त्रिंशदक्षरी विद्या सर्वसम्पत्प्रदायिनी ॥

स्थिरयमायां ह्लीं। तथा च—

वह्निहीनेन्द्रयुङ्माया स्थिरमाया प्रकीर्त्तिता ।

तन्त्रान्तरे—

वह्निहीनेन्द्रयुङ्माया बगलामुखि सर्वयुक् ।
दुष्टानां वाचमित्युक्त्वा मुखं स्तम्भय कीर्तयेत् ।
जिह्वां कीलय बुद्धिन्तु विनाशयपदं वदेत् ॥

पुनर्बीजं ततस्तारं वह्निजायावधिर्भवेत्।
तारादिका चतुस्त्रिंशदक्षरा बगलामुखी ॥

इत्यपि मन्त्रान्तरम्।

अनयोः पूजा—प्रातःकृत्यादि प्राणायामान्तं विधाय ऋष्यादिन्यासं कुर्यात्। यथा—शिरसि नारदऋषये नमः, मुखे तृष्टुप्छन्दसे नमः, हृदि बगलामुख्यै देवतायै नमः, गुह्ये ह्लीं बीजाय नमः, पादयोः स्वाहा शक्तये नमः।

नारदोऽस्य ऋषिमूर्ध्नि तृष्टुप्छन्दश्च तन्मुखे।
श्रीवगलामुखीं देवीं हृदये विन्यसेत्ततः।
ह्लीं बीजं गुह्यदेशे तु स्वाहाशक्तिस्तु पादयोः ॥

ततः कराङ्गन्यासौ—ॐ ह्लीं अंगुष्ठाभ्यां नम, बगलामुखि तर्जनीभ्यां स्वाहा, सर्वदुष्टानां मध्यमाभ्यां वषट्, वाचं मुखं स्तम्भय अनामिकाभ्यां हुं, जिह्वां कीलय कीलय कनिष्ठाभ्यां वौषट्, बुद्धिं विनाशय ह्लीं ॐ स्वाहा करतलकर-पृष्ठाभ्यां फट्। एवं हृदयादिषु। तथा च दिव्यतन्त्रे—

युग्मबाणेषुसप्ताहिशेषार्णैश्च मनूद्भवैः।
करशाखासु तलयोः कराङ्गन्यासमाचरेत् ॥

ततो मूलान्ते आत्मतत्त्वव्यापिनीबगलामुखीश्रीपादुकां पूजयामि इति मूलाधारे। मूलान्ते विद्यातत्त्वव्यापिनीबगलामुखीश्रीपादुकां पूजयामि इति शिरसि। मूलान्ते सर्वतत्त्वव्यापिनीबगलामुखीश्रीपादुकां पूजयामि इति सर्वाङ्गे। तथा च—

मूर्ध्नि भाले दृशोः श्रोत्रे गण्डयोर्नसयोः पुनः।
ओष्ठयोर्मुखवृत्ते च दक्षिणांसे च कर्पूरे ॥
मणिबन्धेऽङ्गुलेर्मूले गले च कुचयोर्हृदि।
नाभौ कट्यां गुह्यदेशे वामांसे कूर्परे तथा ॥
मणिबन्धेऽङ्गुलेर्मूले ततश्च विन्यसेत्पुनः।
दक्षवामे चोरुजान्वोर्गुल्फे चांगुलिमूलके।
क्रमेण मन्त्रवर्णास्तु न्यस्य ध्यायेद्यथाविधि ॥

ततो ध्यानम्—

मध्ये सुधाब्धिमणिमण्डपरत्नवेदीसिंहासनोपरिगतां परिपीतवर्णाम्।
पीताम्बराभरणमाल्यविभूषिताङ्गीं देवीं स्मरामि धृतमुद्गरवैरिजिह्वाम् ॥
जिह्वाग्रमादाय करेण देवीं वामेन शत्रून् परिपीडयन्तीम्।
गदाभिघातेन च दक्षिणेन पीताम्बराढ्यां द्विभुजां नमामि ॥

एवं ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्य बहि:पूजामारभेत्। तत्र प्रथमतोऽर्घ्यस्थापनम्। यथा—अष्टांगुलं चतुरस्रं विधाय ईशानादिकोणेषु पूर्वादिदिक्षु च कुसुमाक्षत-रक्तचन्दनैः ग्लौं गणपतये नमः इत्यनेन गजदानेन सम्पूज्य तेन मधुना वा अर्घ्य-पात्रमापूरयेत्। ततो वारत्रयं मूलविद्यया सम्पूज्याङ्गानि विन्यसेत्। ततो धेनुयोनिमुद्रां प्रदर्श्य तेनोदकेनात्मानं पूजोपकरणञ्चाभ्युक्षयेत्।

बगलामुखी-मन्त्र—बगलामुखी मन्त्र ब्रह्मास्त्रस्वरूप है। शत्रुस्तम्भन करने वाले इस मन्त्र से सबों को स्तम्भित किया जा सकता है। इसके स्मरणमात्र से पवन की भी गति रुक जाती है।

मन्त्र इस प्रकार के हैं—

१. ॐ ह्लीं बगलामुखि सर्वदुष्टानां वाचं मुखं स्तम्भय जिह्वां कीलय कीलय बुद्धिं नाशय ह्लीं ॐ स्वाहा। यह छत्तीस अक्षर का मन्त्र सर्वसम्पत्तिदायक है।

२. ॐ ह्लीं बगलामुखि सर्वदुष्टानां वाचं मुखं स्तम्भय जिह्वां कीलय बुद्धिं विनाशय ह्लीं ॐ स्वाहा।

सामान्य पूजापद्धति से प्रातःकृत्य से प्राणायाम तक करके निम्न प्रकार से न्यास करे—

ऋष्यादि न्यास—शिरसि नारदऋषये नमः। मुखे तृष्टुप्छन्दसे नमः। हृदि बगलामुखिदेवतायै नमः। गुह्ये ह्लीं बीजाय नमः। पादयोः स्वाहा शक्तये नमः।

करन्यास—ॐ ह्लीं अंगुष्ठाभ्यां नमः। बगलामुखि तर्जनीभ्यां स्वाहा। सर्वदुष्टानां मध्यमाभ्यां वषट्। वाचं मुखं स्तम्भय अनामिकाभ्यां हुं। जिह्वां कीलय कीलय कनिष्ठाभ्यां वौषट्। बुद्धिं विनाशय ह्लीं ॐ स्वाहा करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्।

हृदयादि न्यास—ॐ ह्लीं हृदयाय नमः। बगलामुखि शिरसे स्वाहा। सर्वदुष्टानां शिखायै वषट्। वाचं मुखं स्तम्भय कवचाय हुं। जिह्वां कीलय कीलय नेत्रत्रयाय वौषट्। बुद्धिं विनाशय ह्लीं ॐ स्वाहा अस्त्राय फट्।

तत्वन्यास—मूलं आत्मतत्त्वव्यापिनी बगलामुखिश्रीपादुकां पूजयामि नमः मूलाधारे। मूलं विद्यातत्त्वव्यापिनी बगलामुखिश्रीपादुकां पूजयामि नमः शिरसि। मूलं सर्वतत्त्वव्यापिनी बगलामुखिश्रीपादुकां पूजयामि नमः सर्वांगे।

मन्त्रवर्णन्यास—

मस्तके ॐ नमः	दक्षकर्णे लं नमः	दक्षनासिकायां वं नमः
कपाले ह्लीं नमः	वामकर्णे मुं नमः	वामनासायां दुं नमः
दक्षनेत्रे वं नमः	दक्षगण्डे खिं नमः	ऊर्ध्वोष्ठे ष्टां नमः
वामनेत्रे गं नमः	वामगण्डे सं नमः	अधरोष्ठे नां नमः

मुखे वां नमः	हृदि ह्लां नमः	दक्षोरौ ह्लिं नमः
दक्षस्कन्धे चं नमः	नाभौ कीं नमः	दक्षजानौ नां नमः
दक्षकूर्परे मुं नमः	कटिदेशे लं नमः	दक्षगुल्फे शं नमः
दक्षमणिबन्धे खं नमः	गुह्ये यं नमः	दक्षपादांगुलिमूले यं नमः
दक्षहस्तांगुलिमूले स्तं नमः	वामस्कन्धे कीं नमः	वामोरौ ॐ नमः
गले म्भं नमः	वामकूर्परे लं नमः	वामजानौ ह्लीं नमः
दक्षस्तने यं नमः	वामनणिबन्धे यं नमः	वामगुल्फे स्वां नमः
वामस्तने जिं नमः	वामहस्तांगुलिमूले बुं नमः	वाम्पादांगुलिमूले हां नमः

इसके बाद निम्नवत् ध्यान करे—

मन्त्रे सुधाब्धिमणिमण्डपरत्नवेदीसिंहासनोपरिगतां परिपीतवर्णाम् ।
पीताम्बराभरणमाल्यविभूषिताङ्गीं देवीं स्मरामि धृतमुद्गरवैरिजिह्वाम् ।।
जिह्वाग्रमादाय करेण देवीं वामेन शत्रून् परिपीडयन्तीम् ।
गदाभिघातेन च दक्षिणेन पीताम्बराढ्यां द्विभुजां नमामि ।।

सुधासागर के मध्य में मणिमय मण्डप है। उसके मध्य में रत्नों की वेदी पर सिंहासन है। उस पर भगवती वगलामुखी बैठी हैं। उनका वर्ण पीला है। पीले वस्त्र, पीले आभूषण और पीली माला से उनका शरीर विभूषित है। उनके एक हाथ में मुद्गर और दूसरे हाथ में शत्रु की जीभ हैं। ये बाँयें हाथ से शत्रु की जीभ पकड़ कर दाँयें हाथ से गदा की चोट से शत्रु को पीड़ित कर रही हैं। उनका वस्त्र पीला है। उनके दो हाथ हैं। उन्हें मैं नमस्कार करता हूँ।

ध्यान के बाद मानस पूजा करके बाह्य पूजा करे। पहले अर्घ्य स्थापन करे। आठ अंगुल का चतुरस्र मण्डल वनाकर उसके चारों कोणों और पूर्वादि दिशाओ में रक्त-चन्दनयुक्त पुष्पाक्षत द्वारा 'ग्लौं गणपतये नमः' से पूजन करे गजमद या मधु से अर्घ्य-पात्र को पूर्ण करे। मूल मन्त्र से तीन बार पूजा करके पूर्वोक्त प्रकार से षडंग न्यास करे तब धेनुमुद्रा और योनिमुद्रा दिखाकर अर्घ्यपात्र के जल से अपने शरीर और पूजा की सामग्री का प्रोक्षण करे।

अस्या यन्त्रम्—त्र्यस्रं षडस्रं वृत्तमष्टदलपद्मं भूपुरान्वितम्। ततो मूलमुच्चार्य ॐ आधारशक्तिकमलासनाय नमः। एवं शक्तिपद्मासनाय नमः। ततः पूर्ववद्ध्यात्वा पीठे आवाह्य षडङ्गानि विन्यसेत्। ततो मुद्राः प्रदर्श्य, पुरतः षडङ्गेन मण्डलं यजेत्। ततो मूलेन मन्त्रयित्वा धेनुयोनिमुद्रे प्रदर्श्य, आत्मविद्याशिवैस्तत्त्वैर्विन्दुत्रयं मुखे क्षिप्त्वा तर्जन्यांगुष्ठयोगेन साङ्गावरणां बगलामुखीं तर्पयेत्।

ततो यथासम्भवमुपचारैः सम्पूज्यावरणपूजामारभेत्। षट्कोणेषु पूर्वे ॐ

सुभगायै नमः, एवमग्निकोणे भगसर्पिण्यैः, ईशाने भगवहायै, पश्चिमे भगसिद्धायै, नैर्ऋते भगनिपातिन्यै, वायौ भगमालिन्यै। ततोऽष्टदलपत्रेषु ब्राह्म्याद्याः पूज्याः, पत्राग्रेषु ॐ जयायै नमः। एवं विजयायै अजितायै अपराजितायै स्तम्भिन्यै जम्भिन्यै मोहिन्यै आकर्षिण्यै। ततो द्वारेषु ॐ भैरवाय नमः। तद्बाह्ये इन्द्रादीन् वज्रादींश्च पूजयेत्। ततो धूपादिकं दत्त्वा यथाशक्ति जपं विधाय, त्रिशूलमुद्रां प्रदर्श्य, पुष्पाञ्जलित्रयं दत्त्वा, देव्यै योनिमुद्रां प्रदर्शयेत्। ततो भैरवाय बलिं दद्यात्। ततो विसर्जनान्तं कर्म समापयेत्। अस्य पुरश्चरणं लक्षजपः; तथा च—

पीताम्बरधरो भूत्वा पूर्वाभिमुखसंस्थितः ।
लक्षमेकं जपेन्मन्त्रं हरिद्राग्रन्थिमालया ॥
ब्रह्मचर्यरतो नित्यं प्रयतो ध्यानतत्परः ।
प्रियंगुकुसुमेनापि पीतपुष्पैश्च होमयेत् ॥

बगलामुखी-पूजनयन्त्र—पूजन यन्त्र में पहले त्रिकोण, उसके बाहर षट्कोण, उसके बाहर वृत्त और अष्टदल कमल बनावे। उसके बाहर भूपुर बनावे।

बगलामुखी यन्त्र
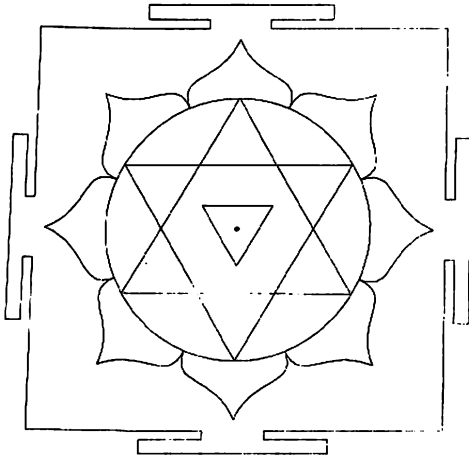
इसके बाद 'मूलं ॐ अधारशक्तिकमलासनाय नमः' एवं 'शक्तिपद्मासनाय नमः' से पूजा करें।

तब पूर्ववत् ध्यान करके पीठ मे देवी का आवाहन करके षडंग न्यास करे। तब मुद्रा दिखाकर सामने षडंग मन्त्रों से पूजा करे।

तब मूल मन्त्र से अभिमन्त्रित करके धेनु और योनिमुद्रा दिखाकर ॐ आत्मतत्त्वाय स्वाहा, ॐ विद्यातत्त्वाय स्वाहा, ॐ शिवतत्त्वाय स्वाहा से जल के तीन बिन्दु अपने मुख में छोड़े।

अंगुष्ठ-तर्जनी की मुद्रा से 'मूलं सांगावरणं वगलामुखीं तर्पयामि नमः' से तर्पण करे। इसके बाद यथाशक्ति यथा-सम्भव उपचारों से देवी की पूजा करे।

षट्कोणों में—पूर्व में ॐ सुभगायै नमः। अग्निकोण में ॐ भगसर्पिण्यै नमः ईशान मे ॐ भगवहायै स्वाहा। पश्चिम में ॐ भगसिद्धयै नमः। नैर्ऋत्य ॐ भगनिपातिन्यै नमः। वायव्य में ॐ भगमालिन्यै नमः।

अष्टदलों में ब्राह्मी आदि आठ शक्तियों की पूजा करके दलों के अग्रभाग में इनकी पूजा करे—ॐ जयायै नमः। ॐ विजयायै नमः। ॐ अजितायै नमः। ॐ अपराजितायै नमः। ॐ स्तम्भिन्यै नमः। ॐ जृम्भिण्यै नमः। ॐ मोहिन्यै नमः। ॐ आकर्षिण्यै नमः।

द्वारदेश में ॐ भैरवाय नमः से पूजा करे। उसके बाहर भूपुर में इन्द्रादि दिक्पालो और उनके आयुधों की पूजा करे।

इसके बाद देवी को धूपादि देकर मूल मन्त्र का जप करे। त्रिशूल मुद्रा दिखाकर तीन पुष्पाञ्जलियाँ प्रदान करे। तब योनिमुद्रा दिखावे। तब भैरव को बलि देकर विसर्जन तक के कर्म करे।

इस मन्त्र का पुरश्चरण एक लाख जप से होता है। साधक पूर्वमुख बैठकर पीले वस्त्र पहन कर हरिद्राग्रन्थि की माला से एक लाख जप करे।

ब्रह्मचर्य का पालन करे। शान्त चित्त रहे। देवी का ध्यान करता रहे। प्रतिदिन प्रियंगुपुष्प या किसी पीले फूल से हवन करे।

द्वितीयमन्त्रे न्यासादिकं सर्वं पूर्ववत्। ध्यानन्तु—

गम्भीराञ्च मदोन्मत्तां स्वर्णकान्तिसमप्रभाम् ।
चतुर्भुजां त्रिनयनां कमलासनसंस्थिताम् ॥
मुद्गरं दक्षिणे पाशं वामे जिह्वाञ्च वज्रकम् ।
पीताम्बरधरां देवीं दृढपीनपयोधराम् ॥
हेमकुण्डलभूषाञ्च पीतचन्द्रार्द्धशेखराम् ।
पीतभूषणभूषाञ्च रत्नसिंहासनस्थिताम् ॥

अथ प्रयोगः—

कुरुते वाग्गतिस्तम्भं दुष्टानां बुद्धिनाशनम् ।
जपहोमप्रयोगे च मन्त्रं चाप्ययुतं जपेत् ॥
हरिद्राहरितालाभ्यां लवणं जुहुयान्निशि ।
स्तम्भयेत्परसैन्यानि नात्र कार्या विचारणा ॥
अथवा पीतपुष्पैश्च त्रिमध्वक्तैश्च होमयेत् ।
स्तम्भनेषु च सर्वेषु प्रयोगः प्रत्ययावहः ॥

यन्त्रस्तु—

ॐकारयोः सम्मुखयोरूर्ध्वाधः शिरसो लिखेत् ।
मध्यगं नाम साध्यस्य तद्वाह्ये चाक्षरत्रयम् ॥
बीजं द्वितीयवर्गस्य तृतीयं विन्दुभूषितम् ।
चतुर्दशस्वरोपेतं संलिखेत्पृथिवीगतम् ॥
ठकारेण समावेष्ट्य चतुष्कोणपुटं बहिः ।
तत्कोणरेखासंसक्तैः शूल्यैर्वज्राष्टकं लिखेत् ॥
त्रिशूलमध्यरेखाग्रः पृथिवीबीजानि पार्श्वयोः।
अष्टस्वपि च कोणेषु तद्वहिर्बगलां लिखेत् ॥
पृथिव्यन्तरितं बाह्ये मातृकापरिमण्डलम् ।
आवेष्ट्य चाष्टधा पश्चात्तद्बाह्ये स्थिरमायया ॥
निरुद्धांकुशबीजेन नादसम्मिलितांघ्रिणा ।
लिखेत्पूर्ववदावेष्ट्य पश्चाच्च बगलामुखीम् ॥
पट्टे पाषाणपट्टे वा हरिद्रोन्मत्ततालकैः ।
दिव्यस्तम्भे मुखस्तम्भे लिखित्वा गाढमाक्रमेत् ॥
विवादे यन्त्रमालिख्य भूर्जे तैरेव वस्तुभिः ।
कुम्भकारस्य चक्रस्य भ्रमतो विपरीततः ॥
मृत्तिकां समुपादाय वृषभं कारयेत्ततः ।
यन्त्रं तस्योपरि न्यस्य तालकेन विलिप्य च ।
तन्नासायां विनिक्षिप्य पीतरज्जुं निजे गृहे ॥
अर्चयेत्तं चतुष्कोणं नित्यं पीतोपचारतः ।
दुष्टस्य स्तम्भत्येव मुखं वाचस्पतेरपि ॥

विश्वसारे—

काली तारा महाविद्या षोडशी भुवनेश्वरी ।

भैरवी छिन्नमस्ता च विद्या धूमावती तथा ।।
बगला सिद्धिविद्या च मातङ्गी कमलात्मिका ।
एता दश महाविद्या सिद्धविद्याः प्रकीर्त्तिताः ।।

इति कृष्णानन्दभट्टाचार्यविरचिते तन्त्रसारे
द्वितीयः परिच्छेदः

बगलामुखी के दूसरे मन्त्र की न्यासादि पूजाविधि पूर्ववत् है। ध्यान इस प्रकार है—

गम्भीराञ्च मदोन्मत्तां स्वर्णकान्तिसमप्रभाम् ।
चतुर्भुजां त्रिनयनां कमलासनसंस्थिताम् ।।
मुद्गरं दक्षिणे पाशं वामे जिह्वाञ्च वज्रकम् ।
पीताम्बरधरां देवीं दृढपीनपयोधराम् ।।
हेमकुण्डलभूषाञ्च पीतचन्द्रार्द्धशेखराम् ।
पीतभूषणभूषाञ्च रत्नसिंहासनस्थिताम् ।।

भगवती बगलामुखी गम्भीर और मदोन्मत्त हैं। उनके शरीर की प्रभा स्वर्णिम है। चार भुजायें और तीन नेत्र हैं। स्तन दृढ़ और स्थूल हैं। पीले रंग के वस्त्राभूषण हैं। कानों में सोने के कुंडल हैं। रत्नसिंहासन पर पद्मासन में बैठी हैं मस्तक पर पीत वर्ण अर्द्धचन्द्र है। दाँयें दोनों हाथों में मुद्गर और पाश हैं। बाँयें दोनों हाथों में शत्रुजिह्वा और वज्र है।

रात के समय उक्त मन्त्र का दश हजार जप करके हल्दी और हरतालसहित नमक से हवन करे। इससे शत्रु का वाक्स्तम्भन और बुद्धिनाश होता है। अथवा घी, मधु और शक्करयुक्त पीले फूलों से हवन करे। स्तम्भन में यही नियम है। यह प्रयोग शीघ्र फलदायक है।

एक यन्त्र बनाकर यह कार्य करे। ऊर्ध्वाधः क्रम से परस्पर मुख संयुक्त दो ॐ लिखे। दोनों ॐकार के मध्य में साध्य का नाम लिखे। उनके बाहर दोनों ॐकारों के दोनों पार्श्वभागों में जौं लिखे। फिर ठकार द्वारा वेष्टित करके दो चतुष्कोणों से पुटित करे। इन दोनों चतुष्कोणों के आठ कोनों में आठ वज्र अंकित करे। उन वज्रों के साथ एक-एक त्रिशूल बनावे। इन त्रिशूलों के मध्य की रेखा के दोनों पार्श्वों में लं बीज लिखे। तब उसके बाहर ॐ ह्लीं बगलामुखि सर्वदुष्टानां वाचं मुखं स्तम्भय जिह्वां कीलय बुद्धिं विनाशय ह्लीं ॐ स्वाहा—यह मन्त्र वृत्ताकार में लिखे। उसके बाहर एक वृत्त बनाकर मातृकावर्णों से एक बार वेष्टित करे। उसके बाहर ह्लीं बीज से आठ बार वेष्टित करके अंकुश १२१बीज क्रों से एक बार वेष्टित करे। फिर बगलामुखी से आठ बार वेष्टित करे।

इसी प्रकार किसी धातुफलक या पाषाणखण्ड में यन्त्र बना कर पूजा करे। हल्दी, धतूर का रस या हरताल से यन्त्र बनाए। देवस्तम्भन या शत्रुगण के मुखस्तम्भन कार्य में उक्त यन्त्र बनाकर प्रगाढ़ आक्रमण करे। .अवाद में विजय के लिये बगलामुखी की उपासना में हरिद्रादि पूर्वोक्त द्रव्य से भोजपत्र पर यन्त्र लिखकर विपरीत भाव से घूमते हुए कुम्हार के चाक से मिट्टी लाकर उस मिट्टी से वृष बनाए। उस वृष की पीठ के ऊपर उक्त यन्त्र को रखकर हरताल का लेप करे। तब उस वृष की नासिका में पीले रंग का धागा डालकर अपने घर में प्रतिदिन पीले उपचारों से उसकी पूजा करता रहे इससे दुष्ट लोगों का मुखस्तम्भन होता है।

विश्वसारतन्त्र में वर्णन है कि काली, तारा, षोडशी, भुवनेश्वरी, भैरवी, छिन्नमस्ता, धूमावती, बगला, मातंगी और कमला को दश महाविद्या माना जाता है। इनका नाम सिद्धविद्या है।

द्वितीय परिच्छेद सम्पूर्ण